॥ ॐ अनादिश्रीकृष्णनारायणाय नमः ॥

महामहोपाध्याय श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज

॥ अभिनंदन ग्रंथ ॥

विद्वानो कृत अभिनंदनानि

(संस्कृत, अंग्रेजी, हिन्दी, गुजराती)

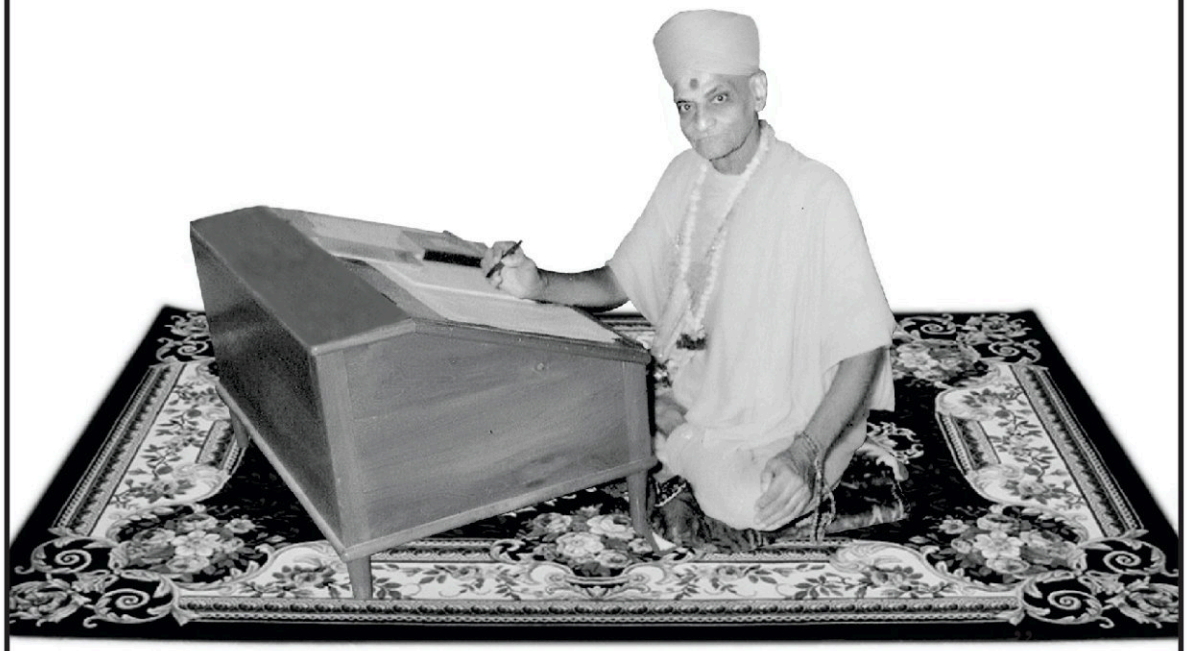

-: लेखक :-

प्रगट भगवान श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज

(M.A., Ph.D., D.Phil, D.Litt)

श्रीवैष्णवविद्वत्सार्वभौम, महामहोपाध्याय, भारतभुषण, दार्शनिकपंचानन, षड्दर्शनाचार्य, नव्यन्यायाचार्य, न्यायवैषेशिकशास्त्री, साहित्यमनिषी, सांख्ययोगतीर्थ, वेदान्ततीर्थ, मीमांसातीर्थ, दार्शनिकमार्तण्ड, तार्किकवाचस्पति, भारत महागुजरात राज्य बहुसन्मानीत, उत्तरप्रदेश भारतराज्य विशेष सन्मानित, देश-विदेशना ६०० जेटला विद्वान पंडितोना अभिनंदनपत्रो द्वारा विशेष सन्माननीत तेमज सतावन शास्त्रोना रचयिता **श्रीश्वेतायन व्यास हरि.**

-: प्रकाशक :-

प्रगट श्रीहरिशरणागति मंडळ - जूनागढधाम.
प्रकाशन तिथी : वि.सं.२०८२ अषाढ सुद पुनम
ता.२९-७-२०२६ बुधवार (गुरुपूर्णिमा)

श्रीश्वेतायन बाग ट्रस्ट : श्रीकृष्णप्रकाश स्वामी
परमधाम स्मृतिमंदिर, मो.९९७४३ ६२१०८
ग्रंथ प्रतः १००० - किंमत : अमूल्य

© आ ग्रंथना प्रकाशनना तमाम हक्क प्रकाशक ने आधिन छे.



:: શ્રી પ્રગટ ભગવાન રચિત શરણાગતિ મહામંત્ર ::

૧ કાલ માયાપાપ્મશત્રુભ્યઃ કુહ્મલ્યાત્
શલ્યમીનધ્વજધનુશ્મ ક્રસ્વસ્તિવાન્ સર્વ,
૨ અનાદિશ્રીકૃષ્ણનારાયણઃ સ્વામી પતિશ્ચ મે,
૩ શ્રીહરિઃ શરણં મમ

:: શ્રી પ્રગટ ભગવાન રચિત શ્રીજીરક્ષા મહામંત્ર ::

सम्पादकीय

जब किसी देश का पूर्व-सञ्चित पुण्य-पुञ्ज प्रतिस्पन्दित होने लगता है तब वहाँ, विद्या, शौर्य, चारित्र्य, ज्ञान, धर्म और सुसंस्कार का असामान्य वैभव लेकर ऐसे महापुरुष अवतरित होते हैं जो अपने निष्कलुष चरित्र, अलौकिक प्रतिभा और अनन्त ज्ञान-गरिमा से अपने देश और समाज को सदा के लिये पुण्य-भावित कर जाते हैं। वे ऐसे जङ्गम तीर्थ होते हैं कि जो भी प्राणी स्वल्प काल के लिये भी उनके पावन सम्पर्क में आ जाता है वह तत्काल धर्म-वर्चस्व और ज्ञान-वर्चस्व का अलौकिक आलोक प्राप्त करके अयस् से स्वर्ण बने बिना नहीं रह पाता।

स्वामी नारायण मन्दिर, जूनागढ़ के वैष्णव विद्वत्सार्वभौम, दार्शनिक पञ्चानन, षड्दर्शनाचार्य, नव्यन्यायाचार्य, सांख्य-योग-वेदान्त-मीमांसा-तीर्थ, काव्य-रचना-कुशल, लोक-वन्द्य श्रीमत् स्वामी कृष्ण-वल्लभाचार्यजी भी उसी उदात्त सात्त्विक परम्परा के मूर्धन्य पुरुष-रत्न हैं। आपने अपनी इस ७१ (इतहत्तर) वर्ष की प्रौढ अवस्था तक चवालीस (४४) विद्वत्तापूर्ण मौलिक ग्रन्थों, समीक्षात्मक टीकाओं तथा लाक्षणिक कृतियों के अन्तर्गत सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उस लक्ष्मीनारायण-संहिता (श्वेतायन-संहिता) नामक महाकाव्य की भी रचना की है जिसके १२६००० (एक लाख छब्बीस सहस्र) श्लोकों में आपने भारतीय दर्शन, तत्त्वज्ञान, परमार्थ-चिन्तन, वेद, शास्त्र, उपनिषद् आदि समग्र भारतीय ज्ञान-विज्ञान का दोहन करके कृतयुग-सन्तान, त्रेतायुग-सन्तान, द्वापर-युग-सन्तान तथा तिष्य-युग-सन्तान नामक चार खण्डों में समस्त भारतीय इतिहास और दर्शन को गागर में सागर के समान ला भरा है। महाभारत के सम्बन्ध में जो उक्ति प्रसिद्ध है वही इस महाकाव्य के विषय में भी कही जा सकती है–'यदिहास्ति तदन्यत्र, यन्नेहास्ति न कुत्रचित्।' (जो इसमें है वही अन्यत्र भी है और जो इसमें नहीं है वह कहीं भी नहीं है)। भगवान् बादरायण व्यास के महाभारत के पश्चात् इस धरित्री के समस्त देशों में इतना सशक्त और विशालकाय महाकाव्य दूसरा नहीं लिखा गया जिसके छन्द-छन्द में काव्य-कौशल की सम्पूर्ण गरिमा अप्रतिम माधुर्य और अर्थ गाम्भीर्य के साथ समाहित कर दी गई है।

परम वन्दनीय श्रीमत् श्री कृष्णवल्लभाचार्यजी ने जिन अनेक पाण्डित्यपूर्ण ग्रन्थों की रचना की है उनके सम्यक् अनुशीलन से यह अनुमान लगाने में कोई असुविधा नहीं होती कि सम्पूर्ण ज्ञान-विज्ञान को आत्मसात् करके स्वामीजी ने ऐसी सर्वबोध्य रीति से उसका प्रतिपादन किया है कि सामान्य से सामान्य व्यक्ति भी हस्तामलकवत् उसका समस्त तत्त्व भली-भाँति ग्रहण कर सकता है।

हमारे यहाँ नीति-शास्त्र में कहा गया है :—

अपूज्या यत्र पूज्यन्ते पूज्यानां च व्यतिक्रमः।
त्रीणि तत्र विवर्द्धन्ते दारिद्र्यं मरणं भयम्।

(जिस देश या समाज में पूज्य महापुरुषों की पूजा नहीं की जाती और अपूजनीयों का आदर किया जाता है वहाँ जनता की कृतघ्नता के कारण दारिद्र, मरण और भय का क्लेश निरन्तर व्याप्त रहता है।)

यही कारण है कि इतने धुरन्धर विद्वान्, सर्वशास्त्र-मर्मज्ञ, तात्त्विक शिरोमणि और उद्भट महाकवि श्री स्वामी कृष्णवल्लभाचार्यजी की सर्वतोमुखी विलक्षण प्रतिभा के प्रति अपने धर्म का निर्वाह करते हुए सात्त्विक कृतज्ञता प्रकट करने के लिए ही यह सार्वजनिक पुण्य समारम्भ आयोजित किया गया है। यह अभिनन्दन केवल औपचारिक प्रदर्शन या बाह्याडम्बर मात्र न होकर भारत भर के सभी लब्धप्रतिष्ठ मनीषियों के उस समन्वित सत्संकल्प का परिणाम है जिसके कारण इतने महान् विद्यावर्चस्व-युक्त महानुभाव की सारस्वत सपर्या करने का यह समायोजन ठाना गया है क्योंकि विद्वान् पुरुष के जो जो लक्षण–सत्य, तप, ज्ञान, अहिंसा, विद्वानों का आदर और सुशीलता–बताए गए हैं वे सभी सुलक्षण श्री स्वामीजी में स्वभावतः प्रत्यक्ष विद्यमान हैं :—

सत्यं तपो ज्ञानमहिंसता च विद्वत्प्रणामश्च सुशीलता च।
एतानि यो धारयते स विद्वान्न केवलं यः पठते स विद्वान्॥

'विद्या विनयेन शोभते' के तो वे साक्षात् प्रमाण हैं। इतना अतुलनीय अद्भुत् सारस्वत वैभव पास होते हुए भी स्वामीजी को विद्या का अभिमान छू तक नहीं गया। वे अपने स्वाभाविक विनय से सदा इतने विनीत हुए रहते हैं कि विनय भी उनके आगे लज्जित हो बैठता है। उनके सम्बन्ध में यह निःसंकोच कहा जा सकता है :—

विद्याविनयोपेता हरति न चेतांसि कस्य मनुजस्य।
काञ्चन-मणि-संयोगो नो जनयति कस्य लोचनानन्दम्॥

संयोगवश भारतीय सन्तों, महात्माओं, तपस्वियों और साधकों की महनीय परम्परा के अनुसार स्वामीजी भी जूनागढ़-जैसे सुदूर एकान्त स्थल में भी साधना-रत रहे हैं इसीलिये उनके समान तेजस्वी विद्वान् की जैसी व्यापक प्रसिद्धि होनी चाहिए थी और उन्हे जैसा सार्वजनिक सम्मान प्राप्त हो जाना चाहिए वह नहीं हो सका। यदि वे काशी जैसे सिद्धपीठ में निवास करते होते तो बहुत पहले ही उनकी धवलकीर्ति दिग्दिगन्त में व्याप्त हो गई होती और अबतक उनकी गणना विश्वविश्रुत मनीषियों में अग्रणी के रूप में होने लगती। किन्तु जिस प्रकार उस एकान्त स्थान में समाधिस्थ होकर उन्होंने इतने महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों की रचना कर डाली वह संभवतः उतने वेग, गति और परिमाण में काशी में न हो पाती। अभी भी कुछ विलम्ब नहीं हुआ है और हमें विश्वास है कि भारत के महापुरुषों और विद्वानों ने जिस प्रकार इस पुण्य कार्य में सहयोग दिया है वह स्वामीजी की यशःपताका दूर दूर देशों तक पहुँचा सकने में निश्चय ही सफल होगा।

जिन अनेक महानुभावों ने महती कृपा करके अत्यन्त तत्परता, मनोयोग तथा आत्मीयता के साथ इस अभिनन्दन ग्रन्थ के सम्पादन, सामग्री-सञ्चयन और प्रकाशन में हार्दिक सहयोग देकर हमें कृतार्थ किया है उन सभी के प्रति हम हृदय से कृतज्ञता व्यक्त करते हैं।

अन्त में हम स्वामीजी की परमायु के लिये वैदिक वाणी में यही कामना करते हैं :—

त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम्।
यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्ते अस्तु त्र्यायुषम्॥

बेनियाबाग, वाराणसी

गुरुपूर्णिमा, संवत् २०३८

सीताराम चतुर्वेदी

स्वामि श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी अभिनन्दनग्रन्थ

संयोजक सम्पादकश्च

(१) श्री मधुसूदन भट्टाचार्य, कलकत्ता
(२) डॉ० अशोक चटर्जी शास्त्री, कलकत्ता
(३) डॉ० ए० एन० जानी, बड़ौदा
(४) डॉ० गोपालचन्द्र मिश्र, वाराणसी
(५) डॉ० एम० वी० शाह, कुंकावाव
(६) डॉ० सत्यव्रत शास्त्री, दिल्ली

सम्पादकमण्डल :—

(१) पं० बद्रीनाथ शुक्ल, वाराणसी
(२) डॉ० कालीकुमार दत्त, कलकत्ता
(३) स्वामी ब्रह्मानन्दजी, बम्बई
(४) म० म० पांडुरंग शास्त्री, पूना
(५) डॉ० वी० राघवन, मद्रास
(६) पं० लाभशङ्कर शास्त्री, मोरबी
(७) पं० महाशङ्करन त्रिवेदी, जामनगर
(८) पं० राजनारायण शास्त्री, वाराणसी
(९) डॉ० लल्लनजी गोपाल, वाराणसी
(१०) डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, वाराणसी
(११) डॉ० पी० एन० पट्टाभिराम शास्त्री, वाराणसी
(१२) डॉ० एम्टलर, बम्बई
(१३) डॉ० राममूर्ति त्रिपाठी, उज्जैन
(१४) डॉ० सू० ना० व्यास, उज्जैन
(१५) पं० गणपति त्रिपाठी, उज्जैन
(१६) पं० सीताराम चतुर्वेदी, वाराणसी
(१७) स्वामि श्री हरिप्रकाश जी, जामनगर
(१८) डॉ० मनुभाई जी शाह, कुंकावाव
(१९) शास्त्री भक्तिप्रियदास जी, गढ़डा
(२०) डॉ० प्रभाकर डोंगरे, बड़ौदा
(२१) डॉ० बी० सी० सीमेच छाबरा, उत्ताकामंड
(२२) डॉ० विश्वनाथ बनर्जी, शान्तिनिकेतन
(२३) पं० परशुराम शास्त्री, जम्मू
(२४) डॉ० सत्यव्रत शास्त्री, दिल्ली
(२५) पं० नीलकण्ठ ओझा, वाराणसी
(२६) पं० राजेश्वरशास्त्री द्रविड, रामनगर
(२७) पं० मूलशङ्करशास्त्री, वाराणसी
(२८) डॉ० शिवमङ्गल सिंह सुमन, उज्जैन
(२९) डॉ० रामनाथ वेदालङ्कार, हरद्वार
(३०) डॉ० आर० आर० वर्मा, लखनऊ
(३१) डॉ० जी० के० भाई, कोचीन

सम्पादक :—

डॉ. एम. बी. शाह, एम. ए. (अं.), एम. ए. (हिन्दी), एम. एड., पी-एच. डी., साहित्यरत्न, रा. भा. रत्न, प्रिंसिपल, के. बी. हायर सेकंडरी कुंकावाव, जि० अमरेली, गुजरात

पं० सीताराम चतुर्वेदी, एम. ए. (त्रितय), बी. टी., उत्तर बेनिया बाग, वाराणसी

संयोजकसम्पादकश्च :—

(१) **श्री मधुसूदन भट्टाचार्य**, न्यायाचार्य, भारतीय दर्शन के अनुसंधानाचार्य, पी. जी. टी. केन्द्र, संस्कृत कालेज, कलकत्ता

(२) **डॉ. अशोक चटर्जी शास्त्री**, एम. ए., डी. फिल्., डी. लिट्., संस्कृत विभागाध्यक्ष, कलकत्ता यूनिवर्सिटी, कलकत्ता

(३) **डॉ. ए. एन. जानी**, एम. ए., पी-एच. डी., डी. लिट्., निदेशक, ओरिएण्टल रिसर्च इंस्टिट्यूट, एम. एस. यूनिवर्सिटी, बड़ौदा

(४) **डॉ. गोपालचन्द्र मिश्र**, एम. ए., पी-एच. डी., आचार्य–अध्यक्ष वेद-धर्मशास्त्र-मीमांसा, सम्पूर्णानन्द विश्वविद्यालय, वाराणसी

(५) **डॉ. एम. बी. शाह**, एम. ए. (अं.), एम. ए. (हि.), एम. एड., साहित्यरत्न, पी-एच. डी., प्रिंसिपल, के. बी. हायर सेकेंडरी, कुंकाबाव

(६) **डॉ. सत्यव्रत शास्त्री**, व्याकरणाचार्य, एम. ए., एम. ओ. एल., पी-एच.डी., संस्कृत विभागाध्यक्ष, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

सम्पादकमण्डलम् :—

(१) **पं. बद्रीनाथ शुक्ल**, आचार्य-अध्यक्ष, न्याय-वैशेषिक विभाग, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी

(२) **डॉ. कालीकुमार दत्त**, एम. ए., शास्त्री, डी. फिल., काव्यसांख्यतीर्थ, संस्कृत साहित्य विभागाध्यक्ष, पी. जी. टी. सेन्टर, कलकत्ता

(३) **स्वामि ब्रह्मानंदजी महाराज**, महामण्डलेश्वर, वेदान्ताचार्य, सन्यासाश्रम, बम्बई ।

(४) **महामहोपाध्याय पांडुरङ्गशास्त्री गोस्वामी**, डेक्कन कालेज, पूना–६

(५) **डॉ. वी. राघवन**, डी. लिट्., संस्कृत विभागाध्यक्ष, मद्रास युनिवर्सिटी, मद्रास

(६) **पं. लाभशंकर शास्त्री**, व्याकरणाचार्य, वेदान्ताचार्य, मोरबी

(७) **पं. महाशंकरन त्रिवेदी**, वेदान्तशास्त्री, काव्य-सांख्ययोगतीर्थ, जामनगर

(८) **श्री राजनारायण शास्त्री**, मंत्री, काशीविद्वत्परिषद्, शास्त्रार्थमहाविद्यालय, दशाश्वमेघ घाट, वाराणसी

(९) **प्रो. डॉ. ललनजी गोपाल**, एम. ए., डी. फिल, पी-एच. डी. (लन्दन), एफ. आर. ए. एस., विभागाध्यक्ष, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

(१०) **डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी**, डी. लिट्., हिन्दी विभागाध्यक्ष, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

(११) **डॉ. पी. एन. पट्टाभिरामशास्त्री**, विद्यासागर, वाचस्पति शास्त्ररत्नाकर, ४।७ हनुमानघाट, वाराणसी

(१२) **डॉ. एस्टलर**, पी-एच. डी., डी. लिट्., सेंट जेवियर कालेज, बम्बई

(१३) **पद्मभूषण डॉ. सू. ना. व्यास**, डी. लिट्., भारती भवन, उज्जैन

(१४) **डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी**, एम. ए., पी-एच. डी., डी. लिट्., अध्यक्ष, हिन्दी अध्ययन केन्द्र, डीन, कला संकाय, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन

(१५) **पं. गणपति त्रिपाठी**, उज्जैन

(१६) **पं. सीताराम चतुर्वेदी**, एम. ए. (त्रितय), बी. टी., उत्तर बेनियाबाग, काशी

(१७) **स्वामि हरिप्रकाश**, ऋग्वेदशास्त्री, शास्त्राचार्य, एम. ए, गांधीनगर (गुजरात)

(१८) **डॉ. मनुभाई बी. शाह**, एम. ए. (अं.), एम. ए. (हिन्दी), एम. एड., साहित्यरत्न, प्रिन्सिपल, के. बी. हायर सेकंडरी कालेज, कुंकावाव

(१९) **शास्त्री भक्तिप्रिय दासजी**, सांख्ययोगतीर्थ, वेदान्ततीर्थ, साहित्यरत्न, स्वामिनारायण मंदिर गढ़डा, (गुजरात)

(२०) **डॉ. प्रभाकर के. डोंगरे**, एम. ए., एम. एड., पी-एच. डी., प्रिन्सिपल, संस्कृत महाविद्यालय, बड़ौदा

(२१) **डॉ. बी. सी. छाबरा**, एम. ए., एम. ओ. लल., पी-एच. डी., एफ. ए. एस., उत्ताकामंड

(२२) **डॉ. विश्वनाथ बनर्जी**, डी. फिल., डी. लिट्., विभागाध्यक्ष, संस्कृत-पालि-प्राकृत, विश्वभारती शांतिनिकेतन

(२३) **विद्यारत्न परशुराम शास्त्री**, व्याकरणाचार्य, भूतपूर्व राजपंडित जम्मूकाश्मीर, प्रधानाचार्य, रघुनाथ संस्कृत महाविद्यालय, जम्मू

(२४) **डॉ. सत्यव्रतजी शास्त्री**, व्याकरणाचार्य, एम. ए., एम. ओ. एल., पी-एच. डी., संस्कृत विभाग, दिल्ली युनिवर्सिटी, दिल्ली

(२५) **पं. नीलकण्ठ ओझा सिहाल**, ज्योतिषाचार्य, एम. ए., तीर्थ प्राध्यापक, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी

(२६) **पण्डितराज महामहोपाध्याय पं. राजेश्वरशास्त्री द्रविड**, राजपुरोहित, रामनगर, वाराणसी

(२७) **पं. मूलशंकर शास्त्री**, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

(२८) **डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुमन'**, कुलपति, विक्रम युनिवर्सिटी, उज्जैन

(२९) **डॉ. रामनाथ वेदान्तकार**, डी. लिट्., कुलपति, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरद्वार

(३०) **डॉ. आर. आर. वर्मा**, डी. फिल., डी. लिट्., दर्शनविभागाध्यक्ष लखनऊ, युनिवर्सिटी, लखनऊ

(३१) **डॉ. जी. के. भाई**, डाइरेक्टर, शुकरोद्र ओरियन्टल रिसर्च इंस्टीट्यूट, कोचीन

(स्वामिश्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी नां वंश-वेलानो चार्ट)

सङ्कलन : श्री लक्ष्मण भगवान पटेल

सरपञ्च मोटी कुंकावाव, १९१९

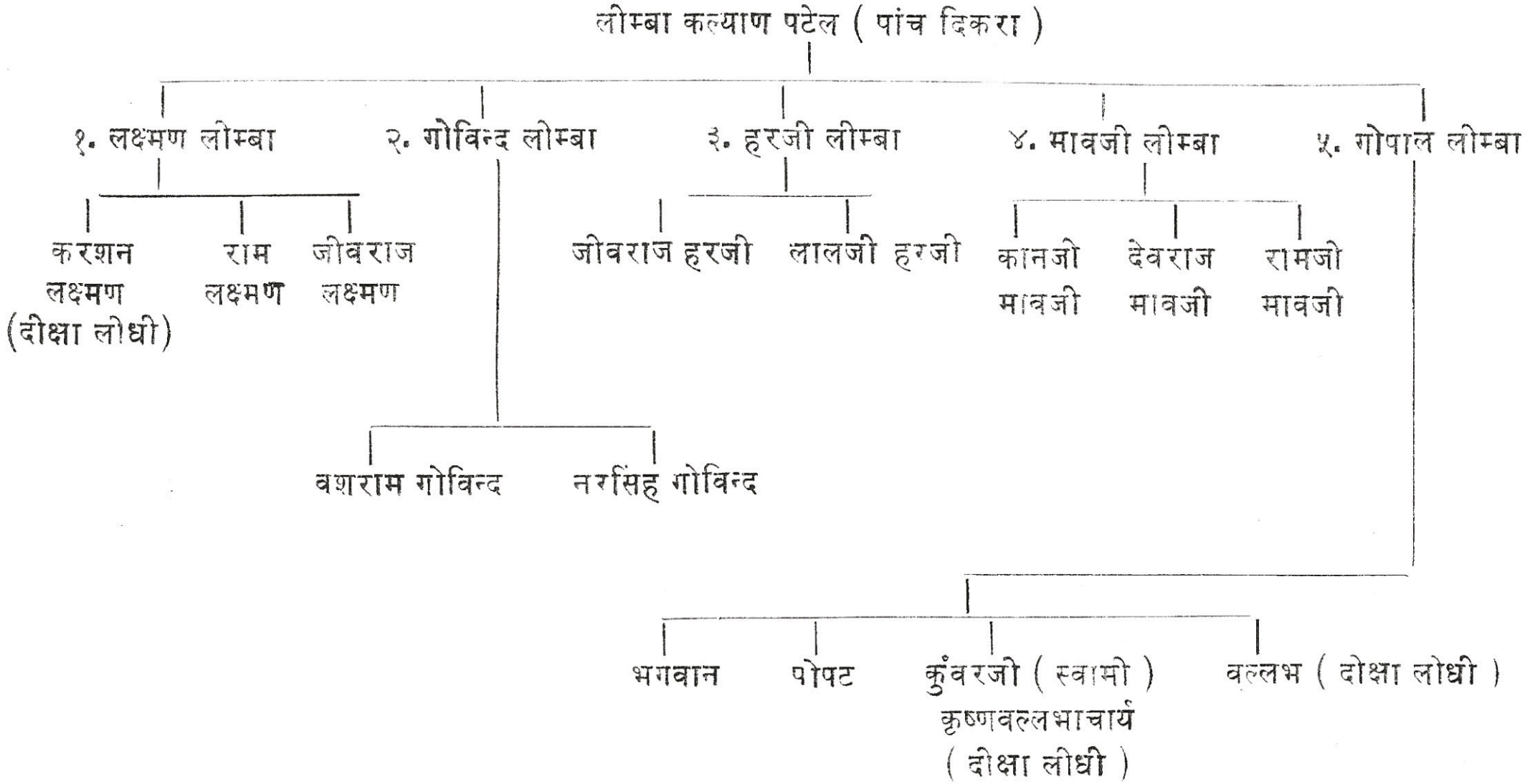

LETTERS OF APPRECIATION, APPROBATION and TRIBUTE

(अनुशंसा, अनुमोदन तथा अभिनंदन के पत्र)

I

Dr. Mainkar, Bombay University १
M. T. Buch, Jamnagar १
D. K. Ladva. Gujarat २
Prof. Dr. M. V. Joshi, Surendranagar ३
N. J. Trivedi, Veraval ३
R. V. Pandya, Junagadh ४
T. V. Vyas, Gujarat ५
L. B. Thaker, Jamnagar ५
Dr. Satya Swarup Misra, Varanasi ६
Vice-Chancellor, Sri Venkateswara University, Tirupati ६
Mukund R. Dave, Rajkot ७
Dr. T. M. P. Mahadevan, Madras ७
Dr. V. Raghavan, Madras ८
H.T. Dave, Bombay ११
Vice-Chancellor, Jaipur University ११
Dr. Prabhakar K. Dongre, Baroda १२
श्रीधर शास्त्री, प्रयाग १२
Swami Abhedananad, Bombay १२
श्रीविनायकशास्त्री टिल्लुः, मुंबई १३
पं० रतिनाथ शास्त्री १५
सुधीरकुमार गुप्तः, जयपुर १७
स० व्र० जोशी, सुरेन्द्रनगरम् । (गुजरात) १८
केशवरामः, अहमदाबाद १८
श्री १००८ श्रीशंकराचार्यः स्वामीश्री, द्वारका १९
पं० जे० एल० के० जलाली, श्रीनगर १९
शोभानन्द झा, द्वारका २०
छबिलालयोरत्रेल, पुरनिया २०
डॉ० जगपूर्णदासशास्त्री, जम्मू तवी २१
शास्त्री महाशङ्करः, जामनगर २२
धर्मेन्द्रकुमारगुप्तः २६
रामकृष्णशास्त्री 'अव्यय' २६
राष्ट्रपति, नई दिल्ली २७
डॉ० हिरण्मय, बेंगलोर २७
रामसिंह तोमर, शान्तिनिकेतनं २८
C. L. Shastri, Ahmedabad २८
राम सुरेश त्रिपाठी, अलीगढ़ २९
डॉ० वेदप्रकाश शर्मा, जयपुर २९
संपादकीय वक्तव्य ३०
एस. भास्करन नायर, होशियारपुर ३२
युग परिवर्तन, श्रीकृष्णवल्लभाचार्य ३३
डॉ० राममूर्ति त्रिपाठी, उज्जैन ३६
अनन्तराम रावल, अहमदाबाद ३७
म० म० छज्जुरामशास्त्री, दिल्ली ३७
सूर्यनारायण मिश्र, अयोध्या ३७
डॉ० ईश्वरलाल र० दवे ३८
महामण्डलेश्वर स्वामी गणेशानन्दजी, कनखल ३८
गुजरात के राज्यपाल, अहमदाबाद ३८
श्रीकृष्णशास्त्री, इन्दौर ३९
उपेन्द्र पण्ड्या, राजकोट ३९
शास्त्री गोपालचरण दास, चराडवा ३९
दे० क० परेख (उपसचिव), गांधीनगर ३९
यू० एन्० ढेवर, राजकोट ४०
कविराज हरिशंकर शर्मा, कुंकावाव ४०
पं० शुखलालजी, अहमदाबाद ४०
स्वामी श्री श्याम० ना०, होशियारपुर ४०

डॉ० जयमन्त मिश्रः, विहार विश्वविद्यालय	१	राजेश्वरशास्त्री द्राविड, वाराणसी	३५
स्वामी रामस्वरूप जी महाराज, हरिद्वार	२	अयोध्यानाथशास्त्री, वर्धमान	३६
परशुरामशास्त्री, जम्मू	३	श्रीमोहनतर्कवेदान्ततीर्थशर्मा, कलकत्ता	३७
डॉ० सत्यव्रत शास्त्री, दिल्ली	४	आशुतोष भट्टाचार्य, कलकत्ता	३८
डॉ० धर्मेन्द्रकुमार गुप्त, पटियाला	५	मंछारामोद्विवेदी, मुंबादेवी	३९
जगद्गुरु श्रीशङ्कराचार्य, बदरिकाश्रम	६	देवस्वरूपमिश्र, वाराणसी	४०
शुकदेव शास्त्री, जम्मू	७	भक्तिप्रियदास, बम्बई	४१
डॉ० जगपूर्णदास शास्त्री, जम्मू तवी	८	क० न० वरदराजय्यङ्गार्य, मैसूर	४२
डॉ० रुद्रदेव त्रिपाठी, नई दिल्ली	९	बटुकनाथशास्त्री खिस्ते, वाराणसी	४३
अनन्तलालदेवशर्मठाकुर, पाटलिपुत्र	१०	डॉ० श्रीगोपालचन्द्रमिश्र	४४
गुंटूरि भानुमूर्ति शास्त्री, राजमंद्री	११	कालीप्रसादमिश्र, काशी	४५
पं० माधवाचार्य शास्त्री, दिल्ली	१२	बदरीनाथ शुक्ल, वाराणसी	४६
लालजी ना० मोढा, जामनगर	१३	ए० सुब्रह्मण्यशास्त्री, काशी हिन्दू विश्वबिद्यालय	४७
मीठालाल हिंमतराम ओझा, वाराणसी	१४	मूलशङ्कर शास्त्री, वाराणसी	४८
डॉ० मनोहर लाल द्विवेदी, वाराणसी	१५	केदारनाथ त्रिपाठी, वाराणसी	४९
सुरेन्द्रनाथ शास्त्री, वाराणसी	१६	कमलेशदत्त त्रिपाठी, वाराणसी	५०
डॉ० श्रीकृष्ण देव, वाराणसी	१७	रामप्रसाद त्रिपाठी, वाराणसी	५१
डॉ० शिवप्रसाद भारद्वाज, होशियापुर	१८	राजनारायण शास्त्री, वाराणसी	५२
सत्यनारायण मिश्र, बैद्यनाथधाम	१९	पी० एन० पट्टाभिराम शास्त्री, वाराणसी	५३
भगवान् दत्त मिश्र, राँची	२०	भूपेन्द्रपति त्रिपाठी, वाराणसी	५०
शि० द० जोशी, पूना	२१	जगन्नाथोपाध्याय, वाराणसी	५१
H. V.Nagaraja Rao, Mysore	२२	रामकृष्ण शास्त्री 'अव्यय', जम्मू	५६
ब्रजलाल नानजी त्रिवेदी	२३	करुणापति त्रिपाठी, वाराणसी	५७
महाशङ्कर त्रिवेदी, जामनगर	२४	विश्वनारायण शास्त्री, नई दिल्ली	५८
पं० ब्रजकान्त झा, अहमदाबाद	२५	कान्तिलाल याज्ञिक, खेड़ा, गुजरात	५९
पं० हंसराजतोलारामकाव्यतीर्थ, कलकत्ता	२६	डॉ० जयनारायण रा. पाठक, बड़ौदा	६०
शास्त्रिश्वेतवैकुण्ठदास, नडीआद	२७	डॉ० राजमणि पाण्डेय, इलाहाबाद	६१
श्रीशङ्करप्रसादव्यानार्जी, मेदिनीपुर	२८	वि० वेंकटाचलम्, जूनागढ़	६२
स्वामी रामेश्वरानन्दाचार्य, अहमदाबाद	२९	प० शोभितमिश्र, वटपत्तनम	६३
रामप्रपन्नाचार्ययोगीन्द्र, शृङ्गपुर	३०	कृष्ण लाल, दिल्ली	६४
वासुदेवशास्त्री, खेडा	३१	डॉ० श्रीधरभास्कर वर्णेकर, नागपुर	६५
गोविन्दप्रसादशर्मा सुवेदी, वाराणसी	३३	स्वामीकरपात्रीजी, वाराणसी	६७
मधुसूदन भट्टाचार्य, कलकत्ता	३४	आद्याप्रसादशर्मा, इलाहाबाद	६८

बहादुरचन्द्र छाबड़ा, ऊटाकामण्ड ६९
दयाशङ्कर वाजपेयी, माधवनगर, उज्जैन ७०
रेवाप्रसाद द्विवेदी, वाराणसी ७१
विनायक शास्त्री टिकुः, उज्जयिनी ७२
महोपाध्यायवासुदेववेङ्कटराजशर्मा, त्रिवेन्द्रम् ७३
लक्ष्मीशङ्कर गौ० शुक्लः, वटपत्तनम् ७४
डॉ० अमरनाथ पाण्डेय, वाराणसी ७५
बलवन्तराय शास्त्री, भावनगर ७६
शास्त्रीकेशवशर्म्मा, खेड़ा ७७
डॉ० वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी ७८
नर्मदाशङ्कर शास्त्री ७९
ढुण्डिराज शास्त्री, इन्दौर ८०
कृष्णशास्त्री कानिटकरः, इन्दौर ८१
डॉ० के० रा० जोशी, नागपुर ८२
पं० नन्दकिशोर शास्त्री, उज्जैन ८४
पं० वंशीधरो वासिष्ठः, उज्जयिनी ८५
गुण्डम्मट्टतेलङ्गः, उज्जैन ८६
लाभशङ्कर शास्त्री, मोरबी ८७
डॉ० पी० आनन्द, अलीगढ़ ८८
सदादिव ए० डांगे, बम्बई ८९
सुब्रह्मण्य शास्त्री, वाराणसी ९०
बालकृष्णमिश्रः, काशी ९१
हरिरामशुक्लः, काशी ९२
शङ्करचैतन्य भारती, काशी ९३
पं० श्रीपूर्णचन्द्राचार्यः, काशी ९४
म० म० गोपीनाथ कविराज, बनारस ९५
त्र्यम्बकरामशास्त्री, काशी ९६
माधवशास्त्री भण्डारी, काशी ९७
दामोदरशास्त्री, काशी ९८
पं० शिवदत्तमिश्रः, काशी ९९
पं० व्रजकान्त झा, श्रीनगरम् १००
विजयकुमार शास्त्री, नेपाल १०१
हरिप्रकाशशास्त्री, काशी १०२
श्रीश्वेतवैकुण्ठ शास्त्री, काशी १०३
श्रीस्वयम्प्रकाशदास कोठारी, जूनागढ़ १०४
सद्गुरुस्वामी अक्षरपुरुषदास, जूनागढ़ १०५
श्रीगुरुलिङ्गन्यायाचार्य, तामिलनाडः १०६
श्रीकृष्णकुमार शास्त्री, मैसूर १०७
देवकीनन्दन शास्त्री, काशी १०८
चन्द्रमणि शास्त्री, अमृतसर १०९
कृष्णदेवः, मिरजापुर ११०
विश्वेश चतुर्वेदी, बर्मा १११
ज्वालाप्रसादगौड़ः, वाराणसी ११२
का० चे० त्रिवेदी, वडोदा ११३
मुकुन्दमाधव शर्मा, गौहाटी ११४
डॉ० रुद्रदेव त्रिपाठी, नई दिल्ली ११५
ओम्प्रकाश, दिल्ली ११६
वेदानन्द झा, नई दिल्ली ११७
चन्द्रकिशोर गोस्वामी, वनस्थली ११८
राममूर्ति, विशाखपट्टणम् ११९
लाभशङ्कर शास्त्री, मोरबी १२०
श्री स्वामीस्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज, ज्योतिर्मठ (बदरिकाश्रम) १२४
श्री शृङ्गेरी जगद्गुरु, शारदापीठ १२५
हरिशङ्कर शर्मा, जामनगरम् १२६
रामजी उपाध्यायः, सागर १२७
वि० बालकृष्ण शास्त्री १२८
कीर्त्यानन्द झा शास्त्री विद्यालङ्कार, बोटाद १२९
वि० ज० ठाकुर, जामनगर १३२
शिव चरण ध्यानी, जामनगर १३३
स्वामी हंस प्रकाश, देहरादून १३४
डॉ रामनाथ वेदालङ्कार, सहारनपुर १३५
डॉ० कपिलदेव शास्त्री, कुरुक्षेत्र १३६
दर्शन सिंह, होशियारपुर १३७
श्रीनिवास शास्त्री, कुरुक्षेत्र १३८
गिरीशचन्द दीक्षित, जामनगर १३९
जयराज शास्त्री, जम्मू तवी १४०
डॉ० कर्णसिंह, मेरठ १४१
डॉ० हरि मोहन मिश्र, भागलपुर १४२
धर्मेन्द्र नाथ शास्त्री, कुरुक्षेत्र १४३
श्री गोविन्द महाराज, नाथद्वारा १४४
डॉ० व्रजविहारी चौबे, होशियारपुर १४५

ऐन० के० देवराज, वाराणसी	१४६	डॉ० अमरनाथ पाण्डेय, वाराणसी	१८५
रामनारायण त्रिपाठी, लखनऊ	१४७	दयाकृष्ण, जयपुर	१८६
डॉ० शिवप्रसाद भारद्वाज, होशियारपुर	१४८	डॉ० रामचन्द्र, बिल्लौर, इन्दौर	१८७
डॉ० श्रीउमारमण झा	१४९	उपेन्द्र ठाकुर, बोधगया	१८८
रघुनाथ ऐरी	१५०	डॉ० विजयेन्द्र स्नातक, दिल्ली विश्वविद्यालय	१८९
नारायण श्रीधरशास्त्री वारे, नासिक	१५१	बाबूलाल शुक्ल, उज्जैन	१९०
हुकम चन्द पट्याल, पूना	१५२	रामजी उपाध्याय, सागर	१९१
रामनरेश शर्मा, वाराणसी	१५३	डॉ० प्रभाकर नारायण कवठेकर, इन्दौर	१९२
बैजनाथपुरी, लखनऊ	१५४	गोपिकामोहन भट्टाचार्य, कुरुक्षेत्र	१९३
गङ्गादत्त शास्त्री, जम्मू	१५५	डॉ० रामनाथ वेदालङ्कार, सहारनपुर	१९४
विनोद चन्द सिंहा, हरद्वार	१५६	वैद्य त्रिलोकचन्द्र जैन, जामनगर	१९५
अजय मिश्र शास्त्री, नागपुर	१५७	मणिशंकर वसंतराम उपाध्याय, बडोदरा	१९६
बलजिन्नाथ पण्डित, शिमला	१५८	स्वामी ब्रह्मानन्दजी महाराज महामण्डलेश्वर, बम्बई	१९७
प्रो० जे. डी. लडू, श्रीनगर	१५९	पाण्डुरङ्गशास्त्री गोस्वामी, पुणे	१९८
डॉ० रवीन्द्र भ्रमर, अलीगढ़	१६०	सीताराम चतुर्वेदी, काशी	१९९
डॉ० रामचन्द्र पाण्डेय, जम्मू	१६१	डॉ० राममूर्ति त्रिपाठी, उज्जैन	२००
स्वामी भागवतानन्दजी, वाराणसी	१६२	डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, वाराणसी	२०१
स्वामी महेश्वरानन्द, बम्बई	१६३	डॉ० सू० ना० व्यास, उज्जैन	२०२
डॉ० गोवर्धन नाथ शुक्ल, अलीगढ़	१६४	डॉ० शिवमङ्गल सिंह 'सुमन', उज्जैन	२०३
डॉ० रामचन्द्र द्विवेदी, उदयपुर	१६५	श्री० भा० वर्णेकर, नागपुर	२०४
हरीन्द्र भूषण जैन, उज्जैन	१६६	डॉ० कृष्णकान्त चतुर्वेदी	२०५
स्वामी पूर्णानन्द गिरि, कनखल	१६७	डॉ० भोलानाथ तिवारी, दिल्ली	२०३
स्वामी कैवल्यानन्द सरस्वती, कनखल	१६९	सत्यकाम विद्यालङ्कार, बाम्बे	२०७
स्वामी गोपाल दत्त शास्त्री, आरा	१७०	हुकम चन्द्र पट्याल, पूना	२०८
स्वामी रघुनाथ गिरि, हरिद्वार	१७१	कर्ण सिंह, मेरठ	२०९
कृष्णकान्त चतुर्वेदी, जबलपुर	१७२	डॉ० वि० श्रीवाकणकर, उज्जैन	२१०
प्रभुदत्त ब्रह्मचारी, झूसी	१७४	डॉ० ब्रजमोहन चतुर्वेदी, दिल्ली	२११
महाबीरदास जैन, जबलपुर	१७५	डॉ० नरेन्द्रनाथ शर्मा, सिवनी	२१२
प्रेमलता शर्मा, वाराणसी	१७६	डॉ० भगीरथ मिश्र, सागर	२१३
जगद्गुरु शङ्कराचार्य जी महाराज, जगन्नाथपुरी	१७७	R. R. Verma, Lucknow University	२१४
रामचन्द्र द्विवेदी, उदयपुर	१७८	Dr. Kalicharan Das, Gauhati	२१५
पं० धीरजधारी शास्त्री, मथुरा	१७९	Dr. Sitanath Goswami, Calcutta	२१६
विनोदचन्द सिन्हा, हरिद्वार	१८०	Dr. K. Kunjunni Raja, Madras	२१७
डॉ० रमेशकुमार शर्मा, श्रीनगर	१८१	J. P. Tacker, Barodara	२१८
डॉ० सत्यव्रत सिंह, लखनऊ	१८२	A. N. Jani, Baroda	११९
शास्त्री हरिप्रकाश, गांधीनगर	१८३	A. G. Javadekar, Baroda	२२०
डॉ० अभेदानन्द शास्त्री, हरिद्वार	१८४	G. Marurasiddaiah, Mysore	२२१

Swami Chidananda Puri, Bankura, W. Bengal २२२
G. M. Kale, Goa २२३
Asoke Chatterjee Shastri, Calcutta २२४
H. D. Sankalia, Poona २२५
Dr. M. A. Mehendale, Poona २२६
M. D. Balasubrahmanyam, Tirupati २२७
A. M. Shastri, Nagpur २२८
Dr. G. K. Pai, Cochin २२९
S. N. Ghosal, Calcutta २३०
Dr. U. N. Dhal, Bhubaneswar २३१
M. A. Dhaky, Varanasi, २३२
K. V. Sarma, Punjab University २३३
Dr. Ram Gopal, Punjab University २३४
Dr. Krushna Prasad Mishra, Orissa २३५
Dr. V. I. Subramoniam, Kerala २३६
Dr. Biswanath Banerjee, Santiniketan २३७
B. Subbarayan, Madras २३८
Dr. Kali Kumar Dutta, Calcutta २३९
K. T. Pandurangi, Bangalore २४०
R. R. Tripathi, Varanasi २४१
Lallanji Gopal, Varanasi २४२
Biswanarayan Shastri, Delhi २४३
Dr. S. G. Kantawala, Baroda २४४
Dr. D. C. Sircar, Calcutta २४४
Dr. K. Krishnamoorthy, Dharwar २४६
S. A. Upadhyaya, Bombay २४७
Dr. Esteller, Bombay २४८
Dr. Prabhakar K. Dongre, Baroda २४९
Satya Vrat, Delhi २५०
J. L. K. Jalali, Srinagar, २५१
Dr. G. K. Bhat, Poona २५२
George Cardona, Philadephia २५३
Dr. R. S. Betal २५४
S. S. Raghavachar, Mysore २५५
Dr. S. P. Singh, Bodhgaya २५६
Suresh Chandra Srivastava, Allahabad २५७
नाथालाल दूबे, भावनगर २५८
Kalyan Kumar Das Gupta, Calcutta २५९
S. Venkitasubramonia Iyer, University of Kerala २६०
Dr. G. C. Nayak, Bhubaneswar २६१
Trilochan Singh Bindra, Hoshiarpur २६२
M. M. Gopinath Kaviraja, Varanasi २३३
Dr. R. S. Shivaganesha Murthy २६४
Prof. Veluri Subba Rao, Waltair २६५
Mansukhalal A. Mehta, Junagadh २६६
विपिन झवेरी, ढोलका २६७
डॉ० हरिवल्लभ भायाणी, अहमदाबाद २६८
धर्मजीवन दास, भुजकच्छ २६९
शास्त्री गोपालचरण स्वामी, राजकोट २७०
शास्त्री भगवत स्वरूप, राजकोट २७१
डॉ० भोगीलाल ज. सांडेसरा, बडौदा २७२
राजारामचन्द्राचार्य भण्डारी, गुजरात २७३
गोस्वामी श्री ब्रजभूषणलाल, जोधपुर २७४
भक्तिप्रियदास, जूनागढ़ २७५
लाभशङ्कर शास्त्री, मोरबी २७६
बदरीनाथ काशीनाथ शास्त्री, बड़ौदा २७८
डॉ० दलसुख भाई मालवाणिया, अहमदाबाद २७९
डॉ० वसंत गि० परीख, अमरेली २८०
डॉ० तपस्वी नांदी, अहमदाबाद २८१
मावदानजी भी. रत्नु, जामनगर २८२
हरसुखभाई सन्धवी, राजकोट २८४
डॉ० अेसोर सोलोमन, अहमदाबाद २८५
नर्मदाशङ्कर शास्त्री, भावनगर २८६
कृष्णशङ्कर शास्त्री, अहमदाबाद २८७
शास्त्री महाशङ्कर न. त्रिवेदी, जामनगर २८८
डॉ० ना० म० कंसारा, अहमदाबाद २८९
लक्ष्मण भाई पटेल २९०

महेन्द्र पंड्या, भोपाल २९१
अेम. टी. बुच, जामनगर २९२
सी. वी. ठकराल, पोरबंदर २९३
मनहर लाल शास्त्री २९४
भक्ति प्रिय दास, गढपुर २९५
डॉ० महेन्द्र पंड्या, भोपाल २९७
डॉ० अेम० टी० बुच, जामनगर ,,
सो० वी० ठकराल, पोरबंदर २९८
मनहरलाल महाराज, २९९
भक्ति प्रियदास, गढपुर ३००

SWĀMĪ ŚRIKṚṢṆAVALLABHĀCĀRYA AS KNOWN TO ELITE, DEVOTEE AND LAYMAM

(विद्वानों, भक्तों और साधारण लोगों की दृष्टि में स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी)

पू० स्वामी श्री एक भारतीय आत्मा के रूप में, जोहान वर्ग, मेल्वार्न ३०१
द्वैपायनव्यासोत्तर व्यासमूर्ति श्रीस्वामीजी साक्षात् व्यासजी, पण्डितसूरचैतन्य, गुंटुकल ३०२
स्वामी कृष्णवल्लभाचार्यजी का जीवन दर्शन, पं० रामशरण त्रिवेदी, बेंगलोर ३०५
पू० स्वामी श्री भारत के महान् तत्त्वचिन्तक, पं० कुमारदत्त कानडी, कोलंबो ३०७
स्वामीश्री का व्याकरण काव्य धर्मशास्त्र न्याय वेदान्त सांख्य योग मीमांसा पुराण साहित्य आदि में पूर्णपाण्डित्य, अमिताभचौंखापा चांगसे, चीन ३१२
भारतीय दर्शन के युगप्रतिनिधि–स्वामी श्रीकृष्ण-वल्लभाचार्य जी, ज्ञानप्रकाशदासशास्त्री, भावनगर ३१३
वेदान्तवादी स्वामीजी सर्वविध बेदान्तमूर्ति है, पं० श्रीप्रणवानन्दजी, धर्मारण्य ३१९
भारतीय गौरवमूर्ति सन्तरूप में, स्वामी मीनाक्षी भास्कराचार्य, चिदम्बरम्, कर्नाटक ३२२
संस्कृत साहित्य में स्वामीजी का स्थान, पं० शान्तानन्दजी, नादिया ३२५
पू० स्वामीश्री एक तेजस्वी स्कोलर प्रतिभाशाली विद्वान्, पं० कृष्णकेशव शास्त्री, बृत्तालय ३२९
श्रीस्वामीजी की भक्ति व तप, भगवत्प्रपन्नाचार्य, शिमला ३२८
अभिनन्दन, वेलजी रवजी चौहाण, पूना ३३२
पू० स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी के जीवन के अनुभव तथा गुणग्राहिता, पं० हरिहरा-चार्य, अमरावती ३७३
पण्डितवर्य स्वामीजी एक दैवी पुरुष, उनके सद्गुण आदि, एम्. बी शाह, कुंकावाव ३४०
श्रीस्वामीजी द्वारा संस्कृत-हिन्दी-गुजराती-साहित्य-सेवा, स्वामिहरिसिंहजी, काशी ३४४
श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी एक बड़े तपस्वी है, बुद्धिप्रकाशस्वामी, देहरादून ३४७
श्रीस्वामी महाराज की दृष्टि में अन्य धर्म, परिमल सतीशा भट्टाचार्य, देहरादून ३५०
भारतीय विद्यालयों को श्रीस्वामीश्वर की देन, डॉ० सुषमा सक्सेना, प्रयागराज ३५१
अभिनन्दन, भरतकुमार रतिलालभाई कामदार, जामनगर ३५४
अभिनन्दन, केशवजी हरिभाई दुबई, ओमन ३५६
अभिनन्दन, हरिलालवेलजीभाई, मुम्बई ३५७
स्वामीश्री के ग्रन्थों की विशेषताएँ, पं० सत्यव्रत-कौण्डिन्य, विजयानगरम् ३५८
भारतीय संस्कृतिस्तथा आचार्य स्वामी श्रीकृष्ण-वल्लभाचार्यजी, भागवताचार्य, कनखल ३६३
श्रीस्वामिमहोदयानां मेधावित्वम्, प्रभाकरदेवर्षि, मांडले ३६५
शुभमभिनन्दनम्, माईकल लोरेन्स, टन्झानिया ३६७

सर्वाऽभिनन्दनम्, जहाँशाद्दीनूर, अरेबिया ३९८
प्रकृष्ट विद्वानों के बीच श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी का स्थान, पं० तारानाथ चटर्जी, मणिपुर ३९९
विविध तुलनात्मकम् जलन्धरवर्णनम्, डॉ० श्याम लाल शर्मा, होशियारपुर ४७०
तत्त्वमुक्ताकलापस्य भूमिका, कमलनयनाचार्य्यः, मैसूर ४९२
श्वेतायनसंहिता भूमिका, डॉ० पं० महेन्द्राचार्य्यः ४९३
तर्कसंग्रहदीपिकाकिरणावली भूमिका, श्रीगिरीश-शुक्लो न्यायाचार्यः, वाराणसी ४९६
वचनामृत भूमिका व वार्ताग्रन्थों की प्रशस्ति, पं० रामआधार पाण्डे, मिरजापुर ४९७
न्यायसिद्धान्तमुक्तावलीकिरणावल्या भूमिका, पद्मनाभशास्त्री, काशी ४९८
अखिलभूमण्डलीय साम्प्रदायिक मुक्तिव्यवस्था, पं० देवीप्रसाद, काशी ४९९
विद्वद्वर्य श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहोदयानां न्यायादि-सर्वशास्त्राऽभ्यासादिः परिचयश्च, श्रीहरि-भाईशास्त्री, नवानगरम् ५००
अखिल भूमण्डलीय साम्प्रदायिक मुक्तिव्यवस्था भुमिका, चुन्नीलाल तुलसीदास, मुंबई ५०२
मीमांसकदैवत्यमन्त्रणम्, रामनन्दन झा, जूनागढ़ ५०१
श्रीलक्ष्मीनारायणसंहिता (श्वेतायनसंहिता) एक भव्य ग्रन्थ, कान्तिलालशास्त्री, पूना ५०९
पण्डित श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी का परिचय, पं० रामनन्दन झा, जूनागढ़ ५१२
श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी विरचित ग्रन्थों के परिचय, ब्रजलाल शास्त्री, काशी ५१५
स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी का संक्षिप्त परिचय, एम. बी. शाह ५४०
भगवान् महर्षि श्वेतायनव्यास, स्वामि हरि-प्रकाश, गांधीनगर ५५१
स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्याश्च तेषां प्रदानम्, बलवन्तराय चुन्नीलाल द्विवेदी, भावनगर ५५२
अभिनन्दनकुसुमाञ्जलि, डॉ० श्यामलाल शर्मा, होशियारपुर ५५६
श्रीस्वामिनारायणो विजयतेतमाम्, स्वामि श्वेत-वैकुण्ठदास, वृत्तालय ५५७
प्रशस्ति, डॉ० ब्रजनन्दन मिश्र, होशियारपुर ५५१
श्रीकृष्णवल्लभाचार्य के विषय में कतिपय श्लोक ५६२
अभिनन्दनपत्रिका, खंभात ५६३
पण्डितसमानिमन्त्रणपत्रम , केदारनाथशास्त्री, वाराणसी ५३४
वैदिकवसन्तपूजानिमन्त्रणपत्रम् , केदारनाथशास्त्री, वाराणसी ५६४
स्वामिश्रीकृष्णवल्लभाचार्याभिनन्दनग्रन्थाभिप्राय-विशेषविमर्शः, नरहरिशास्त्रिणां, ५६५
स्वामिश्रीकृष्णवल्लभाचार्याभिनन्दनग्रन्थविमर्श पं० प्रेमवल्लभ शर्मा, ५६६
अभिनन्दन, भक्तिप्रियदास, भावनगर ५६७
जूनागढ़ श्रीस्वामिमंदिरमां, पं० जीवराज, आणंद, कावरीया ६६८
साहित्य नी दृष्टि अे श्रीबल्लभाचार्यजी, बी. अेम० बधेका, गुजरात ५७०
अभिनन्दनम् , महंत शांतिप्रसाद, जामनगर ५७३
श्रीकृष्णवल्लभाचार्यशास्त्रीजी, अेम. बी. शाह, कुंकावाव ५७७
अभिनन्दन, शांतिलाल मटुलाल व्यास, जूनागढ़ ५७६
पटेल लीम्बा देवाणी, लक्ष्मण जी भगत, कुंकावाव ५८१
श्रीकृष्णवल्लभाचार्य परोपकारी मानव जीवन, अेम्. बी. शाह, कुंकावाव ८२१
अभिनन्दनपत्रिका, यमुनाशंकर-देवशंकर-शास्त्री, खंभात ५९९
विद्वत्सम्मानपत्रम् , वासुदेवद्विवेदी शास्त्री, काशी ५००
Śri Krishnavallabhacharya Maharaj Shree. Satsangis of Surat. ५०१
मान पत्र, राजाराम पुरुषोत्तम भट ५०२
सन्मान पत्र, माणावदर नगर पंचायत ५०३

MISCELLANY

(विविधा)

विशिष्टन्यायशास्त्रस्य तत्त्वप्रभावल्याः हार्दं मननम् (भूमिका), टी० गणपतिशास्त्री, त्रिवेन्द्रम् ५०५

योगदर्शनस्वामिनारायभाष्यभूमिका, पं० शिवदत्त शर्मा, लाहौर ५०६

सांख्यकारिकायाः प्राक्पत्रम् , डॉ० पीताम्बरदत्त बडथ्वाल, वाराणसी. ५११

सत्संग वर्तमान, ली. पटेल गोविंद नाथाभाई ५१२

काव्यशास्त्रे वस्तु-चित्रण-कल्पः, डॉ० शिवप्रसाद भारद्वाज, होशियारपुर ५१३

पञ्चरात्राऽऽगम–रामानन्द व कबीर-सम्प्रदाय, पं० दूलेराम वेदान्ती, फैजाबाद ५२२

पञ्चरात्रागम–रामानुज सम्प्रदाय, पं० रामशरणशास्त्री, बेंकाक ५२५

सामवेद, पंचरात्रागम, श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदाय, पं० हरिशरण द्विवेदी, पटना ५२८

वेद–उपनिषत्–शांकरसम्प्रदाय, श्री धर्मानन्द स्वामी, डिब्रूगढ़ ५३१

शैवागम–पाशुपतमत, गुरुलिंगस्वामी, काशी ५३३

अथर्ववेद और उसकी रहस्यमयी शक्ति, क्षीरस्वामी देवदत्त शास्त्री, अलहाबाद ५४१

श्रुतितात्पर्यनिर्णय–समीक्षण ्, पं० ब्रजकान्त झा, अलहाबाद ५४५

आचार्याणां समतायोगः, प्रजाराज्य विज्ञानालय, मोस्को ५५१

शब्दब्रह्म-पाणिनीय का मत, पं० रमानाथ वैष्णव इण्डोनेशिया ५५२

वेदान्तों के विचार में से पृथक् हुए न्यायदर्शन, पं० नेमचन्द्र सूरि, सप्ततीर्थ, भामो ५५४

वेद-उपनिषद् भागवताधार-वैष्णव सम्प्रदाय, वल्लभचरण, वृन्दावन ५५६

पुष्टिमार्गीय भक्ति, डॉ० गोवर्धननाथ शुक्ल, अलीगढ़ ५६१

भारतीय संत, रामकृष्ण शर्मा, जम्म ५७१

नाट्य-प्रयोक्ता, पं० सीताराम चतुर्वेदी, वाराणसी ५७५

सन्त कवि नानकदेव, त्रिलोचन सिंह बिन्दरा, होशियारपुर ५७८

आर्यों के जन्मस्थान विषयक विभिन्न मत, डॉ० कृष्ण लाल, दिल्ली ५८३

'स्वामी श्रीजी' श्री सहजानन्दपादपांसवो विजयन्तेतमाम् , डॉ० नारायण भगत, मुंबई ५८८

सुधासिन्धोः ब्रह्मरसायनभाष्यस्य भूमिका, स्वामी श्री चिदानन्दपुरी, बाँकुरा ५९२

The Authenticity of the Uttarakāṇḍa of Vālmiki's Rāmāyaṇa, Jagannath Agrawala Hoshiarpur ५९३

The New Philosophy of Time, Shrimati Soma Mirza ५९८

Vedic Concept of Māyā and its later Development, Dr. B. B. Chaubey, Hoshiarpur ६०२

Gītā as a Guide to Conduct in Everyday Life, K. V. Sarma, Hoshiarpur. ६१२

भगवान् महावीर विषयक दुर्लभ हस्तलिखित ग्रन्थ, डॉ० सुरेन्द्र कुमार आर्य, उज्जैन ६१७

पं० श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी के विषय में प्रत्यभिनन्दन ६१८

पं० श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी के विषय में संस्कृत प्रत्यभिनन्दनम् , पं० रामनन्दन झा, जूनागढ़ ६५२

श्रीकृष्णश्वेतायन व्यास में श्रीकृष्णद्वैपायनव्यास की सरखामणी, मनुभाई शाह, कुंकावाव, ६६१

निमन्त्रणपत्रिका, गिरधरलाल रामजी दोशी, कुंकावाव ६६४

श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी : संक्षिप्त सालवार वृत्तान्त ६६७

श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज आजकल बांचते हुए व्यासासन में विराजमान है।

Dr. Mainkar.

M. A:, Ph. D., D. Litt.

Head of the Dept. of Sankrit,

Bombay University

Swami Sri Krishnavallabhacharyaji is not only a saint and spiritual leader but an obidientially great scholar, philosopher and darshnacharya of high order. To honour such a great soul and Acharya, a learned scholar of repute, is not and should not be the concern of limited body of his followers, but of all Indians for whom he is a symbol of all round greatness, as a spiritual guide and teacher.

He is also a holy teacher and his life and works provide illumination for the religious and spiritual guidance of mankind. To honour and worship such a great Guru, a holy person, and a benevolent guide is our worthy obligation.

I wish you all success and pray for long life.

Mainkar

डॉ० एम्० टी० बूच

एम. ए., पी-एच. डी.

वी० एम० मेहता म्युनि० आर्टस और कॉमर्स कालेज, जामनगर

A tribute

I consider myself extremely fortunate in paying my respects to the most revered Swamiji Krishnavallabahcharyaji maharaj, a doyen of Sanskrit learning. His unfathomable Śāstric learning, extent and depth of scholarship in all the recognised branches of knowledge, great magnitude of his invaluable literary contribution to Sanskrit literature, vastness of his vision, his versatile genius and many qualities of his heart command our respect and admiration for him. His great and glorious literary contritution viz.' Laxmīnārāyaṇa Saṃhitā' is epoch-making and extremely valuable. Swamiji is really 'वेदव्यास' of the moderndays.

Many eminent scholars have paid their tributes to this illustrious son of Mother India and to these, I add my humble one at his sacred feet.

M. T. Bach

D. K. Ladva, M. A.

Assistant Director

S. S. Finance deptt,

Gujarat Government

Swami shastriShri Krishnavallabhacharyaji is beacon torch of knowledge, light to the present generation. His unique original contribution through his various eastern philosophical Dorks and religious volumes will not only be land-mark in the history of religion and philosophy both in the eastern and western world but will also go down to generations to come, who will draw inspiration, light and peace from the same.

In fact his rich and luxuriant contribution to our oriental and eastern philosophical and religious literature is so immense and boundless that its intensity extends beyond eastern horizon and has easily interested western philosophers and scholars, with great reverence, honour and tribute to this great scholar to whom barriers of time, place, country and trend are irrelevent, impertinent, immaterial.

He is glory, he is grace. He is originality, he is erudition, he is therefore accepted, recognised, and honoured as such, by one and all philosophers, scholars as such.

His most chaste. pure. transparent and simple and disciplined and devotional dedicated living exemplifies the true life of a seer and saint at a time.

Such great man of glory and grace, is born once in thousand years.

He is pride, honour, and glory of India. and Indians are proud of the great son, born on Indian soil.

My humblest salutation to the great man.

Prof. Dr. M. V. Joshi, M. A., PH. D.
Professor of Sanskrit,,
Head of the Sanskrit Deptt. &
Guide for Ph. D. in Sanskrit,
M. P. Shah Arts & Science College,

Surendranagar.
Dated the 20th December, 1976.

It is a matter of great pleasure that the lovers of oriental learning, particularly Sanskrit, and Indian culture are going to honour Swami Shastri Shri Krishna Vallabhacharya, a versatile scholar, well-versed in multifarious Śāstras and a Navya Naiyāyika of very wide reputation. He is a scholar-poet (Śāstra-Kavi) in the true sense and has a vast literature to his credit.

His unique and original conribution to Navya Nyāya has brought him everlasting fame and laurels have been showered on him.

I extend my heartiest congratulations for all his unique achievements and wish him health and long life for his 'Vāñmaya Tapas' and expect that many more scholarly and original works will be coming from his pen.

My sincerest and heart-felt pranams.

M. V. Joshi

"Pavka Naḥ Sarasvatī"

N. J. Trivedi
Principal
Shree Somnath College
Veraval Dt. 15-11-75

Dear Dr. Shah,

With reference to your letter dated 10th November, 1976, I am to state that as I understand the Board of Sanskrit has yet not submitted their report on the constribution of Swami Shri Krishnavallabhacharyaji and therefore the academic officer, who should have directed my attention to and asked my opinion on the matter has yetremained silent.

We should write to the Chairman of the Broad of Sanskrit to expedite the matter so that favourable consideration on it can be reported in time.

I, therefore, request you to write to Professor Savitaben Solanki, Dharmendrasihji College Rajkot and Professer K. S. Shukla, Samaldas College Bhavanagar also who, I hope will certainly move the matter immediately.

To me it is clear that the university will get more honour by honouring the Swamiji.

Thanking you.

Yours faithfully
N. J. Trivedi

Principal

R. V. Pandya,

Do. Bc/He/253

Office of the Principal,

Bahauddin College, Junagadh.

Dear Shri,

Mr. M. B. Shah of Kunkavav met me, sometime ago, with a letter from you, directing him to me in connection with a proposal to confer honorary D. Litt. degree upon Shri Krishnavallabhacharyaji of Junagadh Shri Shah subsequently sent me two books written by Swamiji 'न्याय सिद्धांत मुक्तावली' and 'तत्त्वप्रभावली' published in 1972 & 1976 respectively by Chaukhambha, the foremost publishers of India. Forty five books written by Swamiji are published so far, and a few more are in the press–a monumental achievement by any standards.

The two books on Navya Nyaya, I perused, have convinced me that Swamiji is a highly original scholar and has made a distinct and significant contribution to traditional Indian logic. Though he occupies an exalted position in the spiritual hierarchy, his exposition and discussion of Navya Nyaya themes conform to the highest standards of philosophical writings.

Navya Nyaya is an authentic Indian contribution to knowledge and there are only a few scholars in this subject in India. Swamiji is one of them, and one of the best.

It is my considered opinion that Saurashtra University will be honouring itself in conferring an hon. D. Litt. degree upon Swamiji, who, incidentally was born in Saurashtra. I am to request you to put up this proposal before the appropriate body of the University.

Thanking you,

Yours Sincerely

R. V. Pandya

T. V. Vyas

Vice Chancellor
Gujarat Ayurved University

Phone No. { Resi. : 4012
Office : 4422

Dhanwantari Mandir,
Telegram : "Ayu"
Jamnagar, 25-5-1976

I am indeed very glad to know that "Swami Krishnavallabhacharyajee Abhinandan Granth" is being published to felicitate a great scholar of the Sanskrit Literature and symbol of the Indian Culture.

I am sure that publication would be of a great literary value and exclusive of its kind.

I wish the "Granth" all the best.

T. V. Vyas

Gujarat Ayurveda University, Jamnagar

Phone No. Office. 2038
Jamnagar
Dated 25-5-1976

I am very happy to know that "Swami Krishnavallabhacharyajee Abhinandan Granth" is being brought out in felicitation of a world's leading scholar and a great devotee of Sanskrit Literature.

The publication of this volume would be the best dedication to Shri Swamijee.

I wish the publication all the best.

L. B. Thaker
Acting Registrar

तार : बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी

Telephone No. { P. A. B. X. 54291 { 347

BANARAS HINDU UNIVERSITY

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

कला संकाय, वाराणसी-५

Dr. Satya Swarup Misra

Head, Dept. of Lingutitics

Faculty of Arts

Varanasi—5

Dated 3. 5. 76

Dear Sir

I am glad to Know that you are bringing out a volume "Sri Krishnavallabhacharyaji Abhinandan Granth" and going to start a college in the name of this scholarly saint.

I wish your pious mission all sussess.

Yours Sincerely

Satya Swarup Misra

From

P. A. to the Vice-Chancellor,
Sri Venkateswara University,
Tirupati 517 502.

To

The Principal,
Krishna Vallabhacharya Higher Secondary,
Kunkavan, 364 450,
Dist. Amreli,
Gujarat.

Vice-Chancellor's office
Sri Venkateswara University
Tirupati-517502
Andhra Pradesh
D : 13-4-1976

Sir

The Vice-Chancellor sends his best wishes in connection with the publishing of "Abhinandan Granth" of Shri Krishnavallabhacharyaji and also for starting Shri Krishnavallabhacharyaji Arts, Science and Commerce College from 1976.

Yours faithfully,

P. A. to the Vice-Chancellor

"Vasant" Setubandh Soc.
Behind MV Mahila College,
Rajkot-360001. June 7, 76

Dear Shri Manubhai Shah,

It is very painful to read about the destruction wrought by the recent cyclonic storm in and around your area. I trust, you and yours are all safe. I shall appreciate your sending me a line or two about your well-being. My heartfelt sympathies to all those in your village who are affected by the rage of nature.

I have read with much interest the materials you gave me about the monumental missionary work of Swami Shri Krishnavallabhacharyaji. My thousand salutes to the great soul. May God give him long life and make him His choicest instrument in promoting our sacred religious culture. I would certainly love to go for his *darshan* one day and receive his blessings.

Unfortunately, alas, the programme of Srimad Bhagvat Parayan Gyan Yagya for which many of you must have worked with one-pointed dedication for several months would have to be cancelled or postponed on account of the storm. I trust, you will be able to arrange it again in near future when normalcy is restored.

With sincere good wishes for your well-being, for peace and prosperity in in your life.

Very sincerely yours.
Mukund R Dave

Grams : University Madras

UNIVERSITY OF MADRAS

Dr. T. M. P. Mahadevan

Centre of Advanced Study in Philosophy,
University of Madras, Madras-5

University Building
Madras 600 005

20 Apr 1976

Dear Principal Shah,

I send my good wishes for the success of your efforts.

Yours sincerely
T. M. P. Mahadevan

Dr. V. Raghavan

Madras

Svami Narayan (1781-1830) was a great force in the spiritual and moral regeneration of Gujarat in the 19th century when the values for which Hindu culture had stood through the centuries were being corroded by the impact of foreign domination. Among the followers of the teachings of Swami Narayan, one of the most gifted, erudite and versatile scholars to rise to propagate Sanskrit learning and the values of *Dharma* and *Bhakti* is the distinguished teacher in whose honour this volume of tributes is being brought out, Svami Sri Krishnavallabhacharya.

I have not had the pleasure and privilege of knowing personally this outstanding contemporary Sanskritist who, in his life of over seventy years, has shown himself as a true successor of the line of traditional repositories of Sanskrit scholarship who were walking encyclopaedias. But the fragrance of his fame has spread in all directions, as the Veda says.

यथा वृक्षस्य संपुष्पितस्य दूराद्गन्धो वाति, एवं पुण्यस्य कर्मणो दूराद्गन्धो वाति । Taitt. Āraṇ X. 9.

To live the time-honoured pattern of life conforming to the austerities and discipline of the ideal *Sishta, Acharya* and *Bhāgavata* is itself exacting, and at the same time a noble achievement, as practice is worth tons of preaching. But our *Acharya* Sri Krishnavallabhaji has, exemplifying the proverb of gold adding perfume to itself *(Hemnaḥ param amodaḥ)* been a prolific writer. And in his literary output, there is hardly a branch of Sanskrit which he has not illumined with his expository gifts. The tributes and titles conferred on him by various institutions of lerning bring out his manysided attainments in the fields of Indian philosophy, religion and literature. To combine mastery of *Sastras* like *Mimamsa* and *Navyanyaya* with *Kavya* and composing capacity is not easy; some disciplines are detrimental to the cultivation of literary taste and ability to write felicitous verse. Svami Krishnavallabhaji combines both these capacities.

From the accounts of his output that I have seen, I find he has written forty-four works totalling ten thousand pages. These include both critical and creative work.

In *Samkhya,* the *Acharya* has written a commentary on Gaudapada's *Bhashya* and Vachaspati Misra's *Tattvakaumudi* and another directly on the *Karikas*. In Yoga, he has written a *Bhashya* on the *Sutras* and a gloss on Bhojas commentary on the *Sutras* . In *Nyaya-Vaiseshika,* which appears to be his speciality, he has written

glosses on the *Tarkasamgraha dipika, Nyayabodhini,* and *Nayayasidhantamuktvali,* and a *Krodapatra* on the *Samanyanirukti* of Gadadhara. In *Mimamsa* he has examined and clarified with his equipment in *Navya-nyaya,* concepts like *Angatva.* In *Vedanta,* he has contributed to the elucidation of standard treatises of the schools of both Sankara and Ramanuja, the *Chitasukhi* in the former and the *Tattvamuktakalapa* in the latter.

A true scholar, he has not been content to write merely commentaries on old texts; his studies covering diverse schools had induced him to produce independent critical works on different aspects of comparative metaphysics. He has discussed the concept of *Prama* or valid knowledge and the theories of Truth and Error (*Khyati-vadas*) in the two works *Pramatvavimarṣa and Khyativimarsa.* His *Tattvaprabhavali* and *Sudhasindhu* are new approaches to the problems of philosophy, of the sources of knowledge, subject-object, categories of reality, etc. In another work, he has examined the concept of Salvation or Release (*Mukti*) according to all schools of philosophy and religions of the world.

The largest number of works devoted to a single school, written by hin, relate of course, to his own, the *Swami Narayana Sampradaya.* This *Sampradaya,* although devoted to *Vishnubhakti* cannot be identified with the school of Ramanuja. On the purely religious side, it follows the *Panchayatna-puja* and included the worship of Siva and Saivite practices. On the philosophical side, it has its own unique idea of the nature of the ultimate Godhead which although endowed with Personality *(Sakaras)* is a sort of bridge between the conceptions of *Advaita* and *Visishtadvaita.* Thus our author has analysed and shown in more than one tract of his *Sakaratva–vada, Visishta-brahmadvaita* etc.

Sri-Svami-Narayana-darsanam, Svami-Narayana-Vachanamrtani, Vachanamrita-pramanya–hetutvasutrani, Sikshapatri. Sikshapatryah Kiranavali, Darsanatattvasara and *Svami Narayana Vedantasara* are direct expositions of the philosophy of the Swami Narayana.

In another set of works he has clarified the special nature of the conception of personal God, doctrine of *Avatara* (Incarnation), the Realisation of the Godhead, etc. –*Harisvarupanirnaya* with *Bhashya, Avatara-avataritve Puranadi-vacanani, Sakshat-karasutrani,* and *Gunatitabrahmopanishad.*

On the principles of interpretation of *Sruti* (*Upanishad*) Vakyas, he has written the *Srutitatparyvnirnaya.* His *Bhaktirasasarit* elucidates the conception and tenets of Devotion.

In Biography, he wrote the life of Swami Narayana in *Satsangijivanaparayanitika; Gunatitanandasvamivarta* and the *Gopalanandasvamivarta* enlarge the biography into the wider ideas of the advent and life of holy men. These are all prodigious productions in thousands of verses.

A work of general importance is his examination of *Jati* or caste (*Jati-vimarsa*).

As a devotional poet Sri Krishnavallabhji composed several *Stotras*, including many on *Hanuman*.

In pure literature and literary criticism, he wrote a commentary on the *Mitralabha* portion of the *Hitopadesa* and the *Kavikavyagaurava* which, besides dealing with the life of the poet *Achintyananda*, discusses various questions of poetry and poetic creation.

I have left over one work of Swami Krishnavallabhaji to the end. It is his *magnum opus* the *Svetayana Samhitā* or *Lakshmi-Narayana Samhita*. The *Chaukhambha Orientalia* gave me a set of the two big volumes of this work and thereby provided my first introduction to the productions of this polymath. Sri Krishnavallabahji has tried all traditional forms of Sanskrit writing, *Upanishad, Sutra, Bhashya, Tika, Gadya* and *Padya*. Here is his stupendous effort in the style of the *Purana*. He has been occupied over its production for a period of about ten years. It runs into 1,26,000 slokes. The plan is to cover the four *Yugas* in four books called *Santanas*. The *Krita-yugasantana* alone in two volumes has so far been published. It is an astonishing production, a bold venture and a conception whose sweep is widest. All the Puranic myths and stories of all forms of Divinity, *Siva, Vishnu, Sakti, Brahma, Ganesa*, and *Kumara* are here, showing a mastery of all the major and minor *Puranas*. The diverse subjects covered in the *Puranas* like *Mahatmyas* of *Kshetra* and *Tirtha, Vratas, Sraddha*, all topics coming under Dharma, the five major subjects, Creation, Geneologias of *Parjapatis, Rishis* and Kings of the Solar and lunar dynasties, philosophical and religious doctrines, are all presented here. The author has created the personality of *Svetayana Vyasa*, one of the manifestations of *Vyasa*, to complete the Pauranic character of this work. And this *Svetayona Vyasa* is no one else but Sri Krishnavallabhjai. Without any exaggeration, we may well hail him as a modern Vyasa !

V. Raghavan

H. T. Dave

Bombay

For implementing foundational truth, fundamentally essential for the ultimate redemption, Shree Swaminarayan has introduced Akṣara, as the medium to attain ātmic bhāva. The viśistādvaita of Shree Swaminarayan is therefore conspicuously based on the relation between Akṣara and jīvas and finally on the relation between Akṣara and Puruṣottama. Since Akṣara is the sustainer of jīvas, īśvaras and māyā, Akṣara is termed as their Śarīrin. And since Puruṣottama pervades Akṣara by his all-sustaining power as is explained in the Śṛti[1] that Paramatma pervades Akṣara, who is devoid of physical form, injuries, organs, appetites and actions either good or bad, Akṣara is held as the Śarīra of Paramātmā and Paramātmā as Akṣara's Śarīrin. Shree Krishnavallabhacharya, an eminent scholar on Shree Swaminarayan's philosophy, terms Swaminarayan's philosophy as "viśiṣṭādvaite api viśiṣṭabrahmadvaitatvam".

The learned author cites various Śṛtis in support of his theory of viśiṣṭabrahmādvaitatvam.

H. T. Dave

राजस्थान विश्वविद्यालय
कुलपति
Vice-Chancellor

जयपुर (राजस्थान)

Jaipur (Rajasthan)
No. vcsi 76/940
Dated : 6-6-76

मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य अभिनन्दन ग्रंथ प्रकाशित हो रहा है। स्वामीजी की विद्वत्ता व साहित्य सेवा सुविदित है। उनके द्वारा रचित अनेक ग्रंथ जिज्ञासुओं के लिए तृप्ति प्रदान करते हैं।

आयोजन की सफलता के लिए मेरी शुभकामनाएँ।

गोविन्द चन्द्र पांडे

Dr. Prabhakar K. Dongre
M. A.. M. ED., Ph. D.
Principal, Sanskrit Mahavidyalaya
AND
Reader in Education, Faculty
of Education and Psychology,
M. S. University of Baroda,

Brahmapuri Dandia Bazaar
Baroda-390001.

पंडितवर्यश्रीकृष्णवल्लभाचार्याणां चरणकमलेषु मदीयाः सहस्त्रशो नतयः ।

प्रभाकरः

प्रिय शाह जी,

आपके ३०-५-७६ के कृपा पत्र द्वारा यह जानकर हार्दिक आह्लाद हुआ कि स्वामी कृष्ण वल्लभाचार्य अभिनन्दन ग्रंथ का प्रकाशन हो रहा है ।

आशा है स्वामी कृष्ण वल्लभाचार्यजी के अध्यात्म-साधना-सम्पन्न जोवन का दीप्त प्रकाश निरन्तर आलोक बिखेरता रहेगा ।

मैं स्वामी जी के प्रति नमन करते हुए भारती परिषद्, प्रयाग की ओर से सहज श्रद्धा ज्ञापित करता हूँ ।

भवदीय,
श्रीधर शास्त्री
महामंत्री
भारती परिषद्, प्रयाग

Swami Abhedanand
M. A. (Ind. Phil, & Rel.)

SANYAS ASHRAM
Vile Parle (West)
Bombay-56

कथापुरुष, वाग्देवतावतार श्री स्वामी कृष्ण वल्लभाचार्य जी के नाम पर कुंकावाव में एक विद्यालय बन रहा है, यह जान कर बहुत प्रसन्नता हुई । ऐसे वीत राग तपस्वी सन्त का जो भी सम्मान किया जाय, वह अल्प ही होगा ।

स्वामी अभेदानंद

आनन्दवन-विद्योति-नित्यानन्द-पदाम्बुजम् ।
वन्दे चिन्मकरन्दाय मिलिन्द इव सन्ततम् ॥

(चित्र-विचार-चर्चा)

संस्कृत भाषा-प्रचार-विषये किञ्चित्

प्रस्तोता-श्रीविनायकशास्त्री टिल्लुः 'विनयः M. A. **व्याकरणाचार्यः**

(इन्दोर-शासकीय संस्कृत महाविद्यालय (निवृत्त) आचार्यः, उज्जयिनां-मध्यप्रदेशराज्यम्)

दुर्दान्त-वादिमातङ्ग-शार्दूलेष्विव संसदः । अध्यक्ष-वर्येषु मम लसताद् नति-सन्ततिः ।

आर्य परममाननीया अध्यक्षमहोदया अन्ये च संस्कृत-प्रणयिनः !

मान्या अ-मान-मतयोऽमर-वाग्-विधेयाः स्वीकार्य एष मम वन्दन-हार-भारः ।
प्रस्तौमि किञ्चिदिह सङ्कुचितैर्वचोभिः गीर्वाण-वाक्-प्रचरणौपयिकं भवत्सु ॥

प्रचार-तन्त्राणि हि नूतनानि मुम्बापुरी-वासि-सु-संस्तुतानि ।
न किञ्चनैतान्यधिकृत्य वच्म्य-व्यापार-चेष्टामिह नाधिकुर्वे ॥

ज्ञानं समुच्चार-विचारणाभ्याम् आचारतश्चैति हि सत्-प्रचारम् ।
एतत्त्रयात् प्रागपि यः प्रचारः नूनं स साद्यस्क-युग-प्रकारः ॥

अधीति-बोधाऽऽचरणप्रचारा विद्योपयोगस्य तु साधनानि ।
तत्रापि पूर्व-त्रिकमन्तरेण न शक्यते कर्हिचिदपि प्रचारः ॥

अधीतिरुच्चारणं, विचारो बोध, स्तृतीयः कथनाऽनुसारः ।
यावन्न यत्नस्त्रितये तु तावत् कथं प्रचारः स-फलत्वमीयात् ?

समुच्यते संस्कृतिरेतदीया यत्नेन चान्याऽनुकरण-प्रवीणैः ।
साहित्यिकैरप्ययि ! देश-भाषा-भाग्यं विधातुं ह्यभिमन्यमानैः ॥

नोपेक्ष्यते, किन्तु विपर्ययंचाऽप्यापाद्यते भारतकर्ण (?) धारैः ।
'सम्भ्रान्त'-पञ्जीयनकादि-शब्द-निर्माणतोऽर्थ-स्वरसस्य हानिः ॥

केचित् 'कवी' त्यादि-पदानि दीर्घान्तान्येव शुद्धानि समामनन्ति ।
पौर्वात्यकाऽस्मादिक-पाश्चिमात्य प्रभृत्य-शब्दाऽभिनिविष्ट-चित्ताः ॥

इत्थं विपर्यास-हता तपस्वि-न्येषाऽमराणाममराऽपि वाणी ।
दीनानना प्रेक्षत आननानि नूनं दया-दान-जुष्मममीणाम् ॥

लिङ्गादि-भेद-व्यपदेशि'बिन्दून् लेख्याऽजिराद् हा ! गलहस्तयन्ति ।
सुवासिनीनां तिटिलानि मन्ये सौभाग्य-बिन्दु-द्युति-वञ्चितानि ॥

शालासु कक्षासु तयाऽग्रिमासु विकल्प्यते या ह्य-निवार्यताऽस्याः ।
भाषा-चतुष्काध्ययनोग्र-भार-भीत्याऽर्भकाणां तु विचिन्त्य चिन्ताम् ॥

यावन्न बाल्ये परिचाय्यतेऽसौ तावन्न लाभो ननु मूल-गामी ।
बाल्ये न यावत् मुखन्यत्रमेतत् स्वाभाविकं मार्दवमा-जहाति ।।

भक्ष्यादिभिः कृत्रिम-पक्तिमैर्वा म्लेच्छाऽऽदृतोच्चारण-वक्रिमाद्यैः ।
सुश्लोक-गीताऽऽदि-मिषेण तावद् विधीयतां मातृ-गणैः प्रयासः ।।

'डैडी' मर्मात्यादि-पराऽतुकृत्या विकारि-शब्दोच्चरणेषु बालाः ।
प्रेर्यन्त एते ननु कौतुकेन माता-पितृभ्यां, न किमस्ति शोच्यम् ?

यावन्नमातासुर-भारती-भा भक्ता नु तावद् बहिरङ्ग-यत्नाः ।
ख-पुष्पतुल्या वितथा भवेयुः न किं विचार्यं भगिनीभिरेतत् ?

मातृ-स्तन्य-प्राशनेनैव साकं कर्णे बालस्याऽस्ति चेत् संनिविष्टा ।
वाङ्माधुर्य-स्पष्टमुच्चार-शैली सौकर्येणाऽप्यार्ष-संस्कारनिष्ठा

संपाद्य स्यात् सर्वमेतत्, न जोषैः, व्याख्यानैर्वाऽखर्व-वाग्-गर्व-पूरैः ।।
न बाल-गीतं, नहि साहसाऽऽख्या, न मञ्जु-सम्बोधन-कौतुकानि ।

न संस्कृति-क्षीर-रसाऽशनं चेत् स्याद् भारतीयत्व-सु-भावना किम् ?
पुराऽपि गार्गीप्रभृतिः पुरन्ध्री-गणोऽपि मचकाव्य-प्रणयाऽवदातः ।

कियन्त्य एताः कविता-वितानैर् विडम्बनाप्यदधुर्बुधानाम् ।
माता सु-विद्या यदि चेदपत्यं स्वभावतस्तामनुकर्तुमीष्टे ।
पुंसोऽप्यभूमिर्यदिदेव-वाणी वशीकृता चेद् ननु नैव चिन्ता ।।

केचित् प्रचण्ड-ख-ताण्डव-डम्बराऽऽढ्याः सारल्यामिच्छति परोऽपि तु रूप-हान्या ।
दीनाऽऽनना ननु कयोरुभयोस्तपस्विन्येषाऽन्तरे हि परिवेपत आर्य-वाणी ।।

आस्तादियं चित्र-विचार चर्चा प्रासङ्गिकी काऽपि वचःप्रयुक्तिः ।
विचार्यमार्यैर्निजदृष्टि-वृष्ट्या संशोधनीया विनयोपनीता ।।

विज्ञान-विद्युदतुलोद्भटचाकचिक्यै मूढेषु चार्य-जन-चित्त-विलोचनेषु ।
येषां प्रयासत इहाऽमर-काक्-सपर्या-सक्ताऽऽर्यविज्ञ-जनसंसदियं लसन्ति ।।

'सोमार्य' नाम-महितान् धनिकोत्तमाँस्तान् हार्दाऽभिनन्दन-पदैरिह भावयामः ।
सभ्याँश्च शास्त्र-धिषणा-सुविभूषिताँस्तान् गीर्वाण-वाक् प्रणयिनः प्रति पूजयामः ।।

(विद्या-भूषणजेरे श्रीबालकृष्णबुधाऽऽज्ञया ।
सद्यःकृतःपद्यबन्धः परिषद्यनुवाचितुम् ।।)

इत्यनुनयते विद्वदनुविधेयः

श्रीविनायकशास्त्री टिल्लु विनयः

द्वारा पंडित बालकृष्णशास्त्री जेरे

४०, राममहाल, रेलवेस्टेशन समोर,

माहीम, मुंबई नं० १६

प्रशस्ति-रत्नमाला

अनवद्यासु विद्यासु विरक्तोऽपि रतोऽन्वहम् ।
श्रीकृष्णवल्लभाचार्यो जयत्यार्यशिखामणिः ।। १ ।।
यस्य ज्ञानमयं ज्योतिरीशस्नेहेन वर्धते ।
मर्मभिः पात्रतां प्राप्तं विरक्तं तमुपास्महे ।। २ ।।
या धरित्रीदृशं सिद्धं महात्मानं सुधीश्वरम् ।
प्रसूय प्रापदुत्कर्षं सहर्षं तां नुमो वयम् ।। ३ ।।
यस्य सान्निध्यमासाद्य प्रेक्षावत्क्षेमसाधिका ।
आन्वीक्षिकी समर्च्यास्ते तं वन्दे तार्किकाधिपम् ।। ४ ।।
यस्य नान्वीक्षिकी वश्या शस्या तस्य न हक्कला ।
किं शक्तिमन्तरा कश्चित् कौ शते नाभिनन्द्यते ।। ५ ।।
अतिदुर्गमशास्त्रेषु वनान्तेष्विव केसरी ।
निरातङ्को भ्रमन् वन्द्यो धन्यः कोऽस्ति भवादृशः ।। ६ ।।
सुखदे त्रासदे चापि वस्तुन्याविष्कियोन्मुखे ।
विज्ञाने सच्चिदानन्दविमर्शो भाति शर्मकृत् ।। ७ ।।
अध्यात्मविद्या विज्ञानजम्भमाणोदयेष्वपि ।
शिल्पसम्भृतहर्म्येषु दीपमालेव शोभते ।। ८ ।।
दिव्याञ्जननिभो भव्यो लोकलोचनरञ्जनः ।
जितहेमप्रभो देहो हेयश्चैतन्यमन्तरा ।। ९ ।।
संसारो लब्धविज्ञान-वैभवोऽपि न तुष्यति ।
स तु संयमिनामास्यमीक्षतेऽद्य भवादृशाम् ।। १० ।।
भवतामाननाम्भोजात् स्यन्दमाना सरस्वती ।
पङ्कलिप्तं जगत्सद्यो निर्मलं विदधात्यलम् ।। ११ ।।
गजवाजिरथोद्दीप्ते मठे पद्मालयार्चिते ।
चेन्न सारस्वतं ज्योतिरन्धकारस्तदा स्थिरः ।। १२ ।।
तावत् सञ्चीयतां पुण्यं यावल्लक्ष्मीर्न गच्छति ।
को जानाति वियत्कालमिन्दिरा कुत्र तिष्ठति ? ।। १३ ।।
भारत्यां रतिमातन्वन्न निबध्नाति यो रमाम् ।
जीवन्मुक्तः स रमते संयतोऽप्युत्तमैर्गुणैः ।। १४ ।।

एकापि रचना येन विदामग्रे निधीयते ।
मोदते पण्डितम्मन्यः समुद्रग्रीवः स संसृतौ ।। १५ ।।
भवानर्धशतप्रायान् ग्रन्थान् किन्तु विदांप्रियान् ।
निर्मायापि स्वयं धत्ते मनागपि न मानसे ।। १६ ।।

शास्त्ररत्नाकरोऽगाधो धीवरैरपि दुस्तरः ।
पीतोऽधुनापि येनेह तमगस्त्यं नवं नुमः ।। १७ ।।
दुस्तर्ककण्टकाकीर्णे सान्द्रे दर्शनकानने ।
शार्दूलक्रीडितं तन्वन् महाप्राणस्त्वमीक्ष्यसे ।। १८ ।।
अनेकानेकशास्त्राब्धिमन्थने मन्दरायितः ।
रत्नान्यनल्पमूल्यानि विबुधेभ्योऽर्पयेद् भवान् ।। १९ ।।
कृतसत्त्वसमुद्रेकं धृतरक्षाव्रतं गिरः ।
योगाभ्यासाञ्जितप्राणं भवन्तं वन्दते न कः ? ।। २० ।।

पिबन्तं स्वपदाम्भोजमकरन्दमहर्निशम् ।
गायन्तं च यशोगीतं पासि भक्तमधुव्रतम् ।। २१ ।।
आत्मकल्याणमातन्वन्नपि प्राणभृतां हितम् ।
शश्वत्सम्पादयन् कोऽन्यो भवानिव विराजते ? ।। २२ ।।

उपपत्तिप्रमाणाभ्यां गौरवं कविकाव्ययोः ।
वर्धयन् वर्धमानश्रीर्भवानेव गतिः कवेः ।। २३ ।।
जटाभिस्तापसा देशे विचरन्ति परःशताः ।
प्रकृत्या साधवो द्वित्राः किन्त्वलभ्या भवादृशाः ।। २४ ।।

सापत्न्यमुपजातापि विद्वत्ता साधुता त्वयि ।
रसते स्पर्धया शश्वदन्योऽन्यविजिगीषया ।। २५ ।।

श्रीकृष्णवल्लभपदाम्बुजचञ्चरीकं श्रोतामृतं किमपि गुञ्जति मञ्जुगीते ।
आमोदतां सुमनसां सुरभिर्दिगन्ते लब्धोदया विजयतां द्विजराजलक्ष्मीः ।। २६ ।।
पूजाक्रमे लसति सप्ततिपूर्तिकाले भाले विभाति तिलको निजदेशलक्ष्म्याः ।
संवत्सरे शततमे भवतोऽस्तु भूयःश्चूडामणिर्नवविभूतिविभूषितायाः ।। २७ ।।

रतिनाथकवेरेषा निर्मिताऽभिनवोज्ज्वला ।
नक्षत्रमालिका भूयात्कण्ठभूषा यशःश्रियः ।। ३८ ।। इति ।।

पं० रतिनाथ शास्त्री

स्वामिश्रीकृष्णवल्लभाचार्यवर्याः

परममोदस्यायं विषयो यच्छ्रीमन्तः स्वामिश्रीकृष्णवल्लभाचार्यवर्यस्याभिनन्दनग्रन्थमेकं प्रकाशयितुकामाः सन्ति। स्वामिमहाभागाः संस्कृतवाङ्मयस्य विविधेषु क्षेत्रेषु धर्मदर्शनादिषु निष्णाताः, ५४ ग्रन्थानां च लेखका वर्तन्ते। यः खलु लेखकः स परिनिष्ठो विचारकः सन् पूज्यो भवति। उक्तमस्ति ऋग्वेदे—

"उपह्वरे गिरीणां संगमे च नदीनाम्।
धिया विप्रो अजायत" ॥ (ऋ० ८. ६. २८)

एते विद्वांसोऽपि ज्ञानगाम्भीर्ये, वाचां संगमे च कर्माणि सम्पाद्यैव जगत्पूज्याः संजाताः। क एतान् न नमस्कुर्यात्।

२. ज्ञानमग्निरेव। य एतस्मिन् ज्ञाने जागर्ति, सोऽपि नूनमग्निरेव। स एवाग्रगण्यः पुरोहितश्च—

"अग्निमीळे पुराहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम् ॥" (ऋ० १. १. १)

३. वाग्ब्रह्मखलु वाचां सम्यग्ज्ञानेनानुभवेन च विबोद्धुं पार्यते। प्रत्येकस्याक्षरस्य वर्णस्य च ते ते सर्वेऽर्था भवन्त्येव ये खलु जगति विद्यन्ते कल्प्यन्ते वा। वाङ्मयमेवेदं जगत्। अत एवोक्तिरियं प्रवृत्ता—

"एकः शब्दः सम्यग्ज्ञातः सुप्रयुक्तश्च स्वर्गे लोके च कामधुग् भवतीति"। एतादृशः सुज्ञातः सुप्रयुक्तः शब्द एव ज्ञानपदाभिहितः। त एते महामनसो विशेषौदार्यशालिनो भगवत्परायणा दयामूर्तयः सर्वदर्शनज्ञास्तर्कपरायणा योगिनो न्यायमग्ना वेदान्तिनो धर्माध्यक्षाः सर्वप्रेक्ष्याः श्रद्धास्पदभूता लक्ष्मीनारायणसंहिताकारा लोकव्यवहारज्ञाः स्थितधियो वीतरागा अनुत्सेकिनः प्रज्ञायां गुरुसमा धैर्ये गाम्भीर्ये च समुद्रतुल्या ब्रह्मकल्पाश्च प्रथिताः श्रूयन्ते—

"स जातो येन जातेन याति वंशः समुन्नतिम्"।

एत आचार्या अपि स्वजन्मना न केवलं वंशमेव परं राष्ट्रमप्यलङ्कुर्वन्ति। धन्या जातेयं भारतभूरेषां जन्मना। कृतकृत्यास्ते य एषां सान्निध्यं दर्शनं च लभन्ते। विरला एतादृशा महात्मान इति संचिन्त्य तोषमल्पमेव वहति मनः। पापाक्रान्ता दुःखिजनभूयिष्ठा निर्धनजनबहुला यज्ञादिकर्मविमुखजनेयं धरा स्वकीयकल्याणायैतादृशानेवाकाङ्क्षते। नमामो वयमेतान्। भगवन्तः परमेश्वराश्च प्रार्थ्यन्ते यदेतेषां स्वामिकृष्णवल्लभाचार्यमहाभागानां जीवनं चिरस्थायि, कार्यकलापाश्च प्रतिदिनं वर्धमानाः सर्वेषां कल्याणकारिणश्च स्युः।

स० क० गुप्तः

सुधीरकुमारगुप्तः

राजस्थानविश्वविद्यालयीयसंस्कृतविभागे प्रभाषकः,
भारतीमन्दिरानुसन्धानशालाया आदरी निदेशकः,
भारतीशोधसारसंग्रहपत्रिकयोर्मुख्यः सम्पादकः
जयपुरे (राजस्थाने) पी-६.

विश्वविद्यालयपुरी-वास्तव्यः

भवदीयो

म० ब्र० जोशी

(प्रा. डो. म. ब्र. जोशी, एम. ए., पी. एच. डी.)

प्राध्यापको विभागाध्यक्षः

पी. एच. डी. पदवीमार्गदर्शकश्च,

एम. पी. शाह विनयन-विज्ञानमहाविद्यालयः,

सुरेन्द्रनगरम् । (गुजरात)

दिनांकः-११-१२-१९७६

अयि शास्त्रिश्रीकृष्णवल्लभाचार्याभिनन्दनसमितिसदस्याः, सहर्षं निवेद्यते यत्—परमादरणीय-न्यायाचार्याद्यनेकोपाधिबिभूषित-शास्त्रिश्रीकृष्णवल्लभाचार्याणामभिनन्दनार्थं ग्रन्थस्यैकस्य प्रकाशनं क्रिय इति ज्ञात्वा मौमुद्यते मनः ।

प्राच्यविद्याप्रेमिणां सुरभारतीस्नेहरसाप्लावितहृदयानां भारतीयसनातनसंस्कृत्यनुरागिणां समेषां सज्जनानामनवरतप्रयत्नैर्विविधशास्त्रपारङ्गता विद्वद्धौरेया नव्यन्यायपरिशीलनप्रथितप्रखरपाण्डित्या यथार्थतः शास्त्रकविपदभाजो नैकग्रन्थप्रणयनप्रदर्शितकौशलाः शास्त्रिश्रीकृष्णवल्लभाचार्यस्वामिनोऽभि-नन्दनीया अभिवादनीयाश्चेति परममोदावहो वृत्तान्तः । सुतरां धन्यवादार्हाः खल्वस्य सत्कर्मणः सर्वेऽपि समायोजकाः ।

श्रीमद्भ्यः शास्त्रिश्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहोदयेभ्यो मम हार्दिकान् धन्यवादान् सादरं वितरामि । प्रार्थये च भगवन्तं भवानीसमेतं भूतनाथं श्रीमतामारोग्यपूर्णदीर्घायुषे येन 'वाङ्मयं तपो' भूयोऽपि वृद्धिं गतं भवेदितोऽप्यधिकानां पाण्डित्यपरिपूर्णानां मौलिकाकरग्रन्थरत्नानां प्रणयनाय श्रीमन्तः समर्था भवेयुरिति ।

'कृष्ण'-युक्ताः सदाऽऽसक्ताः कृष्णभक्तौ विशेषतः ।
'वल्लभा'ख्या, निजानां ये वल्लभा विश्रुता भुवि ॥
प्राप्नुवन्तु परां कीर्तिमारोग्यं सौख्यमेव च ।
प्रेषिता कामना ह्येषा **मनःसुखेन** मुदा शुभा ॥

●

GUJARAT RESEARCH SOCIETY

[गुजरात संशोधन मंडल]

AHMEDABAD BRANCH

श्रीमद्दार्शनिकपञ्चानन-षड्दर्शनाचार्य-नव्यन्यायाचार्य-सांख्य-योग-वेदान्त-मीमांसातीर्थ-महामहो-पाध्याय-पण्डितवर्याणां परमभागवतानां श्रीकृष्णवल्लभाचार्याणां कृते साम्प्रतमभिनन्दनग्रन्थार्पणं विचार्यते तदत्यन्तमावश्यकमिति मन्ये । एतेषां ग्रन्थनिर्माणशक्तिं दृष्ट्वा चित्ते परमानन्दः प्रजायते । एतत्सत्यमेव यत्साम्प्रतमेतादृशानां सर्वतन्त्रस्वतन्त्राणां विदुषामल्पत्वमेव । गुर्जरदेशे तु न कोऽप्यधुना विद्वान् दृष्टिपथ-मायाति । न केवलमिमे पण्डितवर्याः, परं भगवद्भक्ता अपि । एतदप्येषां वैशिष्ट्यमेव । इमे सर्वथा वन्द्या अभिनन्दार्हाश्च । सबहुमानं प्रणम्यते श्रीमतामेतेषां चरणयोः कृतार्थीभूयते च ।

विदुषां भगवद्भक्तानां च चरणरजोलेशः

शास्त्रिकाशीरामात्मजः केशवरामः

श्रीद्वारकाशारदापीठः

श्री प. प. जगद्गुरु श्री ११०८ श्रीशंकराचार्यः स्वामीश्री
अभिनवसच्चिदानन्दतीर्थजी महाराजः
द्वारका (सौराष्ट्र)

दिनांक सं. २०३३, मार्ग. शु. १३
मुकाम कुंकावाव

नैकशास्त्रविदुषां श्रीश्रीकृष्णवल्लभाचार्याणां न्यायसिद्धान्तमुक्तावली-किरणावली, तर्कसंग्रह-दीपिका-किरणावली-प्रभृतिन्यायग्रन्था न्यायपिपठिषूणां विद्यार्थिनां परमोपकाराय कल्पन्ते ।

तादृशनैकग्रन्थकृतां प्रतिभावतां तेषां प्रभाभिस्सम्माननं न केवलं तेषामेवापि तु विद्याया अपि ।

सम्माननकर्तृभ्यः तदीयजन्मस्थानकुंकावावनिवासिभ्यः सर्वेभ्य हार्दिकाश्शुभाशीर्वादाः । इति शिवम् ।

श्रीजगद्गुरुशंकराचार्यमहाराजाः

●

महामहिमोपाध्याय कर्मयोगी पं० जे० एल० के जलाली

प्रधान सारस्वत

All India Saraswat Cultural Organisation
(अखिल भारत सांस्कृतिक संस्था जम्मू व कश्मीर प्रदेश)
jAMMU & KASHMIR REGOIN.

JALALI NIVAS
Karan Nagar, Srinagar-190010
(Kashmir)

No. AISCO/J&K.R/402/75-76 Dated 1 Spt. 1976

मानार्हा आचार्य्यवर्याः वेदान्तभूषणाः वर्धन्तां मे प्रणतयश्शतकोटिशो भवन्तु । अवाप्तं किल भावत्कं स्नेहदलं परश्चोत्तरदानेऽक्षमोऽभवम् । यतो मनुभाई शाह महाभाग इहागत्य विहितप्रतिज्ञोऽवर्तत यदसौ गुजरात प्रदेशं गत्वा लिखिष्यतीति । परमिदानीं यावत् तस्योत्तरं नैवाधिगतं मया । तदुत्तर-प्रतीक्षैव विलम्बस्य कारणं तथा हि ययाचे क्षमाम् । आशंसे अभिनन्दनग्रन्थस्तावद्भवद्भ्यः समर्पित एव भविष्यतीदानीं यावत् । इत्थं स्याच्चेत्तस्यैका प्रतिकृतिः मह्यमपि प्रेषणीयाऽनुसंधानाय । गुजराती-हिन्दी तथा संस्कृतमाश्रित्य भवद्भिः पञ्चपञ्चाशतग्रन्था लिखिताः सन्ति । तेषां प्रतयोऽवशिष्टाः स्युश्चेत् तर्हि प्रेषणीयाः । नातोऽग्रे विलम्बो भविष्यति प्रत्युत्तरदाने इति मे दृढनिश्चयः । देववाण्यामेव सर्वे ग्रन्था प्रेषणीयाः यदि कष्टकारणं न भवेत् । अत्रास्माभिः संस्कृतस्य प्रचारार्थं नितरां प्रयत्यते । कृपया अस्माकं केन्द्राय (अखिल भारतीय सारस्वत सांस्कृतिक संस्थायाः) कृतेऽपि विशेषतः संस्कृताध्ययनप्रचारार्थं आर्थिक-रूपेण किमपि योगदानं देयं भवद्भिः । आङ्गलभाषामाश्रित्य मया स्थानीयमहापुरुषाणां जीवनी प्रकाश्यते । काश्मीरीभाषायामपि इयमनूदिता वर्तते । साम्प्रतं श्रीमतः परमानन्दशास्त्रिणः सहायेन सैव संस्कृत-माश्रित्यापि अनूदिते मया स खलु समुचितरूपेण श्रीमद्विरचितग्रन्थानपि सत्कर्तुं प्रभविष्यति ।।

अन्यत्सर्वं कुशुलमेवेह । भवदभिन्नःहृदयः

जलाली

॥ श्री द्वारकाधीशो विजयते ॥

प्राध्यापक शोभानन्द झा

(व्या.-न्या.-वेदान्ताचार्य), एम. ए., पीएच. डी. मार्गदर्शक
श्री द्वारकाधीश संस्कृत विद्यापीठ रिसर्च इन्स्टीट्यूट, द्वारका (सौराष्ट्र)

दिनांक ९-१२-७६

भारतेऽस्मिन् धीमन्तः श्रीमन्तः "स्वामिकृष्णवल्लभाचार्य्याः" स्वामिनारायणपथाचार्य्याः सन्तोऽपि विश्वजनीनतद्रचितगन्थाननुसृत्य भारत्याः परिषदि भारतीयै पाश्चात्यैश्च बुधैः "अभिनवश्वेतायनव्यासः" इत्युपनाम्नाऽभिनन्द्या इत्यनुमन्ता ।

झोपनामा शोभानन्दः

रीडर इन संस्कृत, श्रीसौराष्ट्र युनिवर्सिटी
इन्डोलाजिकल रीसर्चइन्स्टीट्यूट, द्वारका

श्रीमन्तः संपादकमहोदयाः

श्रीमतां स्वामिनां कृष्णवल्लभाचार्यमहोदयानामभिनन्दनग्रन्थमुद्दिश्य तत्संपादकमण्डलेन प्रेषितं तत्परिचयपुस्तिकासहितं पत्रं प्राप्तम् । यत्र सुप्रसिद्धान्महाभारतग्रन्थादपि महाकलेवरः षड्विंशतिसहस्राधिकलक्षश्लोकात्मको महान्ग्रन्थः प्रतिभाशालिभिरुक्तविद्वद्दरैर्विरचित इति महान्हर्षविषयः । सहैवान्येऽपि चतुश्चत्वारिंशन्मिता दर्शनादिविविधविषयका ग्रन्था महान्त एव तत्रोल्लिखिता विद्यन्ते । तस्य बृहत्तरग्रन्थस्य नामापि श्वेतायनसंहिता इत्यपि ज्ञातम् ।

तादृशबृहत्तरग्रन्थस्य प्रकाशकाः कुंकावावस्य महान्तः सन्तो लक्ष्मणजो भगताश्च धन्यवादार्हाः । येषां पौरुषात्सर्वे जिज्ञासवो मानवास्तादृशग्रन्थावलोकेन लाभान्विता भवेयुः ।

यद्यपि तस्य समग्रस्य ग्रन्थस्यावलोकनमस्माकंमायुषा न संभवेदिव भाति । तथापि अवयवशोऽवलोकयितुमिच्छा वर्तते एव । एतस्य पीठस्य (महाविद्यालयस्य) अन्ये प्राध्यापका अपि दिदृक्षवो विद्यन्ते ।

तादृशानां प्रतिभाशालिनां महाविदुषां समग्रे महिमा एकेन मुखेन एकया जिह्वया, एकया लेखनसाधनभूतया लेखन्या, च न शक्यते वर्णयितुम् । तान् प्रति सादरं नमस्कुर्वन् ते स्वामिवर्याः "शतं जीवन्तु शरदः शतं शृण्वन्तु शरदः, शतं प्रब्रुवन्तु शरदः, शरदः, शतमदीनाः सन्तु शरदः" इत्येवं वैदिकानाशीर्वादान् श्रीपरमेश्वरात्प्रार्थयामि ।

अपि च मयापि नेपालीभाषायाम् "अष्टांगयोग र आदर्शव्यवहार" नामकं पुस्तकं प्रकाशितम् । तथा नानाविधानां टीकानां सारं मतभेदं स्वाभिमतमनभिमतं च प्रदर्श्य योगशास्त्रस्य तृतीयपादपर्यन्तं संस्कृतव्याख्या लिखिता । यदि बाधा न स्यात्तर्हि चतुर्थवादव्याख्याऽपि विधास्यते ।

सांख्यकारिकायास्तत्त्वकौमुद्या गौडपादभाष्यस्य च आलोचनात्मिका व्याख्या नेपाल्यां लिप्यां विद्यते । हिन्दीभाषायामपि लेखनमारप्स्यते ।

अतः सांख्यविषयकस्य योगविषयकस्य च ग्रन्थस्यापि दिदृक्षा विद्यते ।

छविलालयोरत्रेल

श्रीपिण्डेश्वरविद्यापीठ, धरान
एक्सचेंज विराटनगर
प्रो० जोगवनि, जि० पुरनिया

मानसोल्लासः

अद्य हि स्वतन्त्रभारतेऽपि स्वकीया एव केचिदनुसन्धातारः, यदा स्वपरम्परां विखण्डयितुं कटिबद्धाः सन्ति, तदा तु स्वात्मानं यथापूर्वं सर्वहिते सन्नियोज्य स्वसंस्कृतिसभ्यतयोः पुनरुज्जीवनं केषाञ्चित् सफलसाधकानामेव विदुषां अस्ति कर्मकौशलम् ।

भारतीयसन्तपरम्परा तु सर्वदा सङ्घर्षरते मानवमानसे "सत्यं शिवं सुन्दरं" साक्षात्कारयितुं सर्वभावेन सम्प्रयतते । यतो हि—

सतां वारिमुचां चैव समाना शीतला क्रिया ।
तापसन्तप्तलोकानां मानसं तर्पयन्ति ते ।।

इत्येषा सदुक्तिः कामप्यैतिह्यासिकतां समादाय प्रचलन्ती, विविधविषमतानां समाधानं कुर्वन्ती चाद्यापि अग्रेसरा वर्तते ।

साधकसन्तो विद्वत्सन्तश्चेति अनयोः द्वयोरपि रहस्यात्मिका एकता सन्दृश्यते । यदि वयं अद्यतनीयजटिलजनजीवने स्वल्पमपि समयं दत्त्वा सुविचारयामः, तदा एतद् स्पष्टतामेति यद्भारतीय-साहित्यागाधसागरे सन्तजीवनमहिम्नो नास्तिकोऽपि पारावारः । अयं प्रवाहः स्वस्वरूपेण अनादि-रनन्तश्चेति सततं सम्प्रवहमानोऽस्ति ।

स्वां तामेव उदारपरम्परामाश्रित्य, कतिपयाभिनवसम्प्रवृत्तीनां सङ्ग्रहेण प्रवर्त्तमानेऽस्मिन् युगेऽपि केचित् साधनामग्ना महन्तः सन्तः विद्वांसश्च अस्माभिः समालोक्यन्ते । एते महानुभावाः लोका-लोककराय सत्साहित्यसम्पादनाय सततं सम्प्रयतन्ते ।

परमेतावतापि सत्कार्यप्रगतिपर्यालोचनविषये अद्यापि अस्माकं संस्कृतसमाजः पश्चाद् वर्तते । इमां त्रुटिं दूरीकर्तुं एतदावश्यकमस्ति यत् कस्याः अपि दिशः योजनाबद्धः संस्कारपरिष्कारपूर्वकः कार्यक्रमः सम्प्रचलितः सम्भवेदिति ।

अहंमेतद्विज्ञाय नितरां हर्षवार्तामनुभवामि यद् विशालभारतान्तर्गतगुजरातराज्यात् केचित् संस्कृतसंस्कृतात्मानः संस्कृतिसभ्यतास्नेहिनः सभ्यसदस्याः, उपर्युक्तां समयिकामावश्यकतामनुभूय एव-सर्वसमक्षे समायाताः । विद्वद्वरेण्यानां सर्वमान्यानां सौम्यसन्तस्वभावानां श्रीस्वामिकृष्णवल्लभाचार्यवर्याणां अभिनन्दनग्रन्थसम्पादनकार्यं तु तस्याः प्रथायाः एवास्ति सर्वमंगलः श्रीगणेशः ।

उपक्रमः (२)

श्री स्वामिमहाभागानां आदर्शव्यक्तित्वे, कुशलकृतित्वे च को न धीमान् गर्वमावहति ? ।

श्रीमन्तः स्वामिमहोदयाः सर्वसाधनसम्पन्नाः भारतीयाकांक्षापरिपूरकाः सन्तो विद्वांसश्च सन्ति । एतेषामभिनन्दनकर्मणा स्वसंस्कृतिभागीरथ्याः अजस्रस्रोतः सम्प्रवहणमाप्स्यति । अनेकानेका जिज्ञासूनां नवचेतना समुदेश्यति । स्वसंस्कृति—सम्पृक्तः संस्कृतसमाजः पुनर्जागरणं लप्स्यति । स्वतन्त्रराष्ट्रभारतस्य अक्षयनिधिः संस्कृतभाषा अपि सर्वाङ्गीणप्रचारप्रसारमाप्य यथापूर्वं जगति गुरुगौरवपदं सम्प्रयास्यति ।

एवं खलु स्वल्पशब्देषु समर्थनगतिमभिनीय अहमपि इतरसमर्थकानां स्वरेषु स्वरसंगमं सम्विधाय मान्यस्वामिपादानां सत्कृतिषु नतमस्तको भूत्वा समानसोल्लासां स्वांशुभशंसां सम्प्रकाश्य समारब्ध-योजनायाः पूर्णसाफल्यं समीहे ।

डा० जगपूर्णदासशास्त्री, साहित्याचार्य, वाचस्पतिः
संगठनमन्त्री विश्वहिन्दूपरिषत् जम्मूकाश्मीरप्रदेशः
मन्दिर पुराणी मण्डी, जम्मूतवी
दिनांक २८-६-७६

मिश्रश्च ज्-ञ् (य्) उच्चारणस्थानसाम्यात् पुनः सर्वाधारोऽकारः इत्यकाराधारतामनयोर्विधाय, जनने-जात्यां-जनेषु-जानपदेषु च यो'जः' जयः ज्ञतान्तेन विधेय, इति तत्पदं द्वेधा ज्-ञ् (य्) इत्यवधार्य जकारे न केवलं जयः, अपि तु यमादिनियमेन "यँ" पदार्थवाय्वादिप्राणपरिशोधनविज्ञानकारणात्—यकारश्चान्तः-स्थतामुपगतो वाय्वर्थवाचक 'यँ' पदस्य चित्तपरिकर्मनिमित्ताच्च, ज्-ञ्-(य्) ज्ञता भवेदिति, पुनश्च श्रुत्यङ्गेषुत्तमाङ्गं शब्दशास्त्रं "शब्दात्मिका सुविमलर्ग्यजुषां निधानं—उद्गीथरम्यपदपादवतां च साम्नाम्" इति विदितचरं विधाय तच्छक्त्यापादनाय तदुद्बोधनाय-अइउणिति चातुर्दशं माहेश्वरं सूत्रजालं मनसि कृत्वा पाणिनीयप्रसङ्गेन पुनश्च "योगेन चित्तस्य पदेन वाचां" इति शास्त्रत्रयीविवेक्तारं विभक्तारं भगवन्तं पतञ्जलिञ्च स्वान्तेवासिनमिव विदधद्भिर्व्याकरणमहाभाष्यादिमहाब्धिमवगाह्याधीतिभिरेभिः श्रीस्वामि-पादैः शास्त्राचारविचारसारसरणिमुररीकृत्याच्छिद्रं कर्कशतर्कजालं सच्छिद्रं विधित्सुभिरेभिश्शास्त्रिस्वामि-चरणैष्षोढाविभक्तमङ्गव्यूहं विगाहमानैः—किं बहुना ? षट्स्वपि दर्शनशास्त्रेषु पदं निधाय पदवीं प्रथयद्भिः "षड्दर्शनाचार्यपदवीं" वाराणसीविश्वनाथक्षेत्रे विख्यातविश्वविद्यामोदमदविस्फारितनयनानेक-विद्वद्वरेण्यपण्डितप्रकाण्डमण्डलीप्रचुरे विद्याभासुरे प्राचीनतमेऽनेहसि लब्धा, किमहो ! न विदितं, विहितं, अवशिष्टं शेषितं वा शब्दादिशास्त्रपुञ्जेषु ? इयमेव स्वामिमहाशयानां "प्रखरपण्डितता" ताञ्च स्फुटी-करोति प्रथमं तदनेकविषयकनैकग्रन्थरचनासूचीसरणिश्चतुश्चत्वारिंशत् सङ्ख्यया, यथा "लक्षं व्याकरणं प्रोक्तं"—"चतुर्लक्षन्तु ज्योतिषम्" तद्वदियं सङ्ख्यापि श्लोकप्रमाणगणनया" स्यादिदं द्विचतुर्लक्षम्" सूच्यां ग्रन्थसङ्ख्यापि ४४ द्विश्चतुः ।

तदादौ सर्वथाऽसुकरेऽपि दुःखबोधे न्यायसिद्धान्तमार्गे "गोपवधूटीदुकूलचौरं श्रीकृष्णचन्द्रं विश्वे-श्वरञ्च नमस्कृत्य स्मृत्वा हृदि निधाय तद्वल्लभताञ्चोपेत्य तद्वल्लभाभरणतां गतामपि शुक्तिनिर्गतां मुक्ता-वलीमिव मुक्तावलीं वस्तुतस्तु जडांऽजडजामप्यजडां—अजडजानां भगवत्सङ्गिसङ्गानां सम्बन्धतः सूक्ति-सूत्रनद्धां सङ्ग्रथ्य "जडानप्यनुलोमार्थान् प्रवाचःकृतिनां गिरः" इतिवचनानुसारेण तज्ज्ञानभासोद्द्योतितां सर्वजनीनां किरणावलीं चाकलय्य, सप्तलोकालोकितालोचितालोडितान् सप्तैवपदार्थान् अवचाययितुं विकर्तनमण्डलवदियं किरणावली· तन्निर्गतकोटिकोटिकिरणप्रकाशेन तदंशुनांशुना दीपिकालोकतांगता अन्धेन तलसा वृतानां कतिचनाध्वनीनानां अज्ञान-अन्धतमसाध्वनि प्रकाशप्रदानेन न विदधाति किं परमोप-कारमिति न निदर्शयति किमेषां महात्मनां "प्रकाण्डप्रखरपाण्डित्यम्" इत्थञ्चापरमिदं—एभिः कृतधीभि-र्धीरधिषणैः न्यायतर्कशास्त्रकर्तृणां ·श्रीविश्वनाथपञ्चाननभट्टाचार्य्याणामन्नंभट्टसदृशानां प्रत्यक्षन्यायतर्क-स्वरूपाणामनुमानोपमानशब्दप्रमाणपरिपूर्णायामपि मुक्तावल्यां दीपिकायाञ्च तत्तन्मानसाशयसिन्धुं चुलुकी-कृत्याह्लाय उद्धृत्यकृतं तद्गतकौस्तुभकण्ठाभरणां तेजः पुञ्जपूर्णाङ्किरणावलीं विरच्य न प्रथितः प्रकाशितो वा नैजो यशोराशिः एतस्मादधिकतरं किं भवति तीव्रं देदीप्यमानं वैदुष्यम् "एवमेव यथागगनगमने समेषां खगानां गतिर्भवति तद्वत् खगेश्वरस्य वैनतेयस्य च साऽस्ति", यथा—"आहूतेषु विहङ्गमेषु मशको नायान्पुरो वार्यते" तदिवात्रापि भूयान् भेद इतरेभ्यष्टीकाकृद्भ्य इदानीन्तनेभ्यः पण्डितब्रुवेभ्यः । अन्यथा किममी विषयाः सारल्येन बालानां सहजानन्दाय बोधकृतो भवन्ति किम् ?

अथ चेश्वरावताराणां कपिलपतञ्जलिप्रभृतीनां भगवतां सौत्रीं वाचं विशद्य स्वस्वभावतस्तां सूक्तिसुधारसद्रवमुचं विधाय कथङ्कारं हृदयाम्बुजतो मुखपङ्कजान्निर्याय प्रवहन्ति । साङ्ख्ययोगौ पृथग्बालाः प्रवदन्ति न पण्डिता" इति भगवद्गीतवचनानुसारेण भिन्नयोरनुभूयमानयोरुभयोः शास्त्रयोर्भेदाभेदनिर्वचन-मुखेनाभेदापादनादि किं सुकरम् ? किमधिकेन,

धर्मतत्त्वार्थबोधाय शिक्षापत्री समीरिता ।
स्वामिश्रीसहजानन्दमुखपद्माद्विनिःसृता ॥ १ ॥

गुणातीतानन्दस्वामि-वार्ता येन सुखेरिता ।
गोपालानन्दस्वामिश्रीप्रोक्ता वार्ताऽपि वर्णिता ॥ २ ॥

तथैव चर्चास्वामिश्रीसहजानन्दवक्त्रतः ।
वचनामृतरूपस्य कृता सान्वर्थहार्दिकी ॥ ३ ॥

सर्वधर्मोक्ततत्त्वानां साम्प्रदायिकमार्गतः ।
कथं मुक्तिर्भवेत्सद्यो व्यवस्था साऽपि दर्शिता ॥ ४ ॥

सर्वमेतद् गौर्जराणां भारतानां च भाषया ।
महापुरुषहार्दोक्तं तदेतन्नावशोषितम् ॥ ५ ॥

येन बोधो भवेल्लोके जनानां मुक्तिमिच्छताम् ।
तत्तत्वं प्रकटीकर्त्री दीपिकाकिरणावली ॥ ६ ॥

भाषागिरा कृताभासा भासितं सकलं जगत् ॥
तत्त्वप्रभावली ग्रन्थे प्रमाणेभ्यः प्रमेयवाक् ।
उज्जृम्भिता नीतिपद्या निजबुद्धिप्रभावतः ॥ ७ ॥

गुणातीतं परं ब्रह्मो-पनिषद् वेद्यमित्यथ ।
प्रतिपादितमेतद्वै दैव्या वाचा समेधितम् ॥ ८ ॥

विशिष्टाद्वैततत्त्वेऽपि—अद्वैतत्वं विशेषतः ।
प्रोक्तं सिद्धान्तमार्गेण ब्रह्माद्वैतस्वरूपतः ॥ ९ ॥

ख्याति-प्रमा-जाति-तत्त्व-साकारत्वविमर्शनैः ।
स्फुटीकृतं यथारूपं वादभेदनिरासया ॥ १० ॥

वचनामृतप्रामाण्य-हेतुसूत्रविनिर्णयः ।
सम्प्रदाये शास्त्ररीत्या यथादार्ढ्यं निवेदितम् ॥ ११ ॥

श्रुतीनां वाक्यभिन्नानां ऐक्ये तात्पर्यनिर्णयः ।
विचारितोऽद्वैतगत्या विद्वज्जनमनोरमः ॥ १२ ॥

श्रीहरेः स्वस्वरूपस्य भाष्यं सत्सङ्गनिर्णयम् ।
निरणायि श्रुतेर्वर्यः पाण्डित्ये पारदर्शिना ॥ १३ ॥

सुधासिन्धौ रसो ब्रह्म भाष्यभाषाविवेचितः ।
अवतारावतारित्वे पुराणादि—वचांसि च ॥ १४ ॥

मत्स्यो यथा जले पश्यँस्तथा शास्त्राब्धिमाविशत् ।
स्तोत्राणां सङ्ग्रहस्तत्तद्—भावगर्भगिरा कृतः ।
अधिकं किं किमेतस्माद् यतो वाचो निवर्तते ॥ १५ ॥

चित्सुखाचार्यरचिता चित्सुखी छात्रदुःखदा ।
सुधियामपि दुर्बोधा टिप्पण्या सरलीकृता ॥ १६ ॥

कवीनां काव्यरचना-गौरवं प्रतिपादितम् ।।
दर्शनं देवदेवस्य स्वामिनारायणस्य यत् ।
शास्त्रेण दर्शनं दृष्ट्या दिव्यया प्रतिभासितम् ।। १७ ।।
सत्सङ्गिनां मुक्तिहेतोष्टीका पारायणीकृता ।
यत्र भागवतीगाथा रसरम्यामनोहरा ।। १८ ।।
तत्त्वप्रभावलीरूपं न्यायशास्त्रं विशेषितम् ।
तत्त्वमुक्ताकलापश्च किरणावलिरञ्जितः ।। १९ ।।
अनर्थान्तरपर्यायाद् विशिष्टाद्वैतमण्डनम् ।।
ब्रह्मचर्यबलोपेतभक्तिपूर्णस्य मारुतेः ।
हनूमतो भगवतः सर्वसिद्धिप्रदायिनः ।। २० ।।
स्तोत्राणि भावसिद्धानि विलिख्याराधितो विभुः ।
येन ब्रह्मबलं चायुर्जीवनं स्यात् फलान्वितम् ।। २१ ।।
श्रुत्युक्तपूर्वमीमांसा-कर्मस्वर्थविनिर्णयः ।
अङ्गप्रत्यङ्गभेदानां परिष्कृत्या कृतो दृढः ।। २२ ।।
सुधासिन्धोः सारदोहः दर्शनं तत्त्वसारतः ।
भक्त्या रससरिद्गूढाऽशोष्या स्वच्छा प्रवाहिता ।। २३ ।।
उक्तः सामान्यनैरुक्त्याः क्रोडो गादाधरीगतः ।
सम्पादिता स्वतश्चैषा श्रीश्वेतायनसंहिता ।। २४ ।।
नित्यनारायणाख्यस्य ब्रह्मणः परमात्मनः ।
लक्ष्म्या तथा श्रियोपेतयाचास्योरसि संस्थया ।। २५ ।।
प्रकृतेः पुरुषस्यैवं भेदाभेदौ स्वरूपतः ।
नासत्यौ संहितायां तौ सन्दर्श्येयमलङ्कृता ।। २६ ।।
अहश्चाराधनेनैवं विद्यया जपकर्मणा ।
निशाऽनिशसदुल्लेखाद्बिभेत्यघमितः सतः ।। २७ ।।
शिक्षापत्र्यादिग्रन्थानां स्मृतीनाञ्च पुनःपुनः ।
अष्टादशपुराणानां कारितं श्रवणं सदा ।। २८ ।।
आजीवनं शिवविचारविवेकबुध्या सम्पादिताजरसुरोत्तमतुल्यकीर्तिः ।
सच्छात्रवर्णनमिदं परचित्तवृत्या निर्माय मुक्तिरिह पाणिगताकृतैवम् ।।

ॐ शान्तिः ३

भवदीयः

शास्त्री महाशङ्करः

जामनगरस्थः

Dharmendra Kumar Gupta,
Vidya Vachaspati, Shastri,
M. A., M. O. L., Ph. D.,
Head, Dept. of Sanskrit & Pali.

श्रीवैष्णवविद्वत्सार्वभौमपण्डितप्रवरश्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहाभागानाम् अभिनन्दनं भवद्भिरायोज्यते शुभे वास्मिन्नवसरे तच्चरणेषु तदभिनन्दनग्रन्थसमर्पणं परिकल्प्यत इति मे परमप्रमोदहेतुः। षड्विंशत्यधिकशतसाहस्रीं लक्ष्मीनारायणसंहिताम् अन्यांश्च त्रयश्चत्वारिंशत्संख्याकान् न्याययोगतर्कदर्शनवेदान्तधर्मादिविविधविषयसंस्पृशो ग्रन्थान् विरचितवतां पण्डितवरेण्यानां समाजनं संस्कृतानुरागिणां समेषां चेतस्सु गौरवमादधीतेति स्वाभाविकमेवेतत्। शुभेऽस्मिन्नवसरे, भवतां महानयं समुद्यमः सफलः सार्थकश्च भूयादिति भूयो भूयः शुभाशंसां स्वीयां विज्ञापयामि। अवसरिमममुपलक्ष्य भवन्तः श्रीस्वामिमहाभागनामधेयपवित्रिताभिधेयमेकं कलावाणिज्यमहाविद्यालयं कुंकावावस्थानेऽनुपदमेव संस्थापयितुं व्यवस्यन्तीति भूयोऽयं मे हर्षवर्धनः समुदन्तः। सिद्धिः साध्ये सतामस्त्विति मंगलमाशासानो विरमाम्यहं पटियालास्थपंजाबीविश्वविद्यालये संस्कृतपालिविभागाध्यक्षो।

धर्मेन्द्रकुमारगुप्तः

अर्चापद्यपंचकम्

साँख्ये योगे च वेदान्ते न्यायमीमांसयोस्तथा।
भक्तिगीते च नीतौ च काव्यमर्मप्रकाशने॥ १॥
ग्रन्थरत्नान्यनेकानि विरचय्य स्वभावतः।
शास्त्रसिन्धुसुधापाते जगतामुपकारकाः॥ २॥
सर्वत्र कीर्तिमत्कर्म संप्रसार्य प्रयत्नतः।
प्रेयः श्रेयश्च संप्राप्तुं शक्नुवन्ति सुधीश्वराः॥ ३॥
श्रीकृष्णवल्लभाचार्याः गोपीवल्लभवल्लभाः।
लोकोत्तरप्रमाणज्ञाः साधकाः साधुबोधकाः॥ ४॥
गीर्वाणवाग्गुणाख्याने गण्यमान्यजनोदिताः।
कर्मणा चारुणा लोकेऽमरतामाप्नुयुः सदा॥ ५॥

भवदीयः

रामकृष्णशास्त्री 'अव्यय'

राष्ट्रपति सचिवालय,
राष्ट्रपति भवन,
नई दिल्ली-११०००४.

President's Secretariat,
Rashtrapati Bhavan,
New Delhi-110004.

पत्रावली सं० ८-एम/७६

अप्रैल २०, १९७६

प्रिय महोदय,

राष्ट्रपति जी के नाम दिनांक ११ अप्रैल, १९७६ का आपका पत्र प्राप्त हुआ। आपके प्रयास की सफलता के लिए राष्ट्रपति जी अपनी शुभकामनायें भेजते हैं।

भवदीय,

रे० वे० राघवराज

हिन्दी अधिकारी

डॉ० हिरण्मय

एम. ए. पी एच. डी., साहित्यरत्न
Reader (Rtd.), Dept. of P. G. Studies and Research in Hindi
Manasagangotri, University of Mysore
and
Ex-in-Charge of P. G. Studies in Hindi,
Jnanabharathi, Bangalore University
Bangalore-56

दिनांक २०-५-१९७६

मान्यवर,

यह जानकर अतीव प्रसन्नता हुई कि संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान तथा प्रसिद्ध संत स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य का समुचित सम्मान करने के हेतु "स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य अभिनन्दन ग्रंथ" का प्रकाशन करने का निश्चय किया गया है। इस स्तुत्य प्रयास को मैं प्रशंसा करता हूँ और आप को पूर्ण सफलता के लिए हार्दिक कामना करता हूँ।

शुभकामनाओं सहित

आपका

हिरण्मय

Visva-Bharati

Founded by
Rabindranath Tagore

Santiniketan
West Bengal, India

23-5-76

प्रिय श्री शाह,

स्वामी श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी अभिनन्दन ग्रंथ के प्रसंग में आप के यहाँ आने का मुझे स्मरण है। विश्वास है आपको अनेक अधिकारी विद्वानों के लेख ग्रंथ के लिए प्राप्त हुए होंगे। आचार्य जी के व्यक्तित्व के सभी पक्षों पर विद्वान प्रकाश डालेंगे और जो भी ग्रंथ का अध्ययन और अवलोकन करेंगे वे आचार्य जो के जीवन से प्रेरणा प्राप्त करेंगे।

आपका प्रयास सफल हो, इसके लिए मेरी शुभकामनाएँ स्वीकार करें।

आपका
रामसिंह तोमर

His Holiness Acharyashri Devendraprasadji Education Trust
SHRI SAHAJANAND ARTS & COMMERCE COLLEGE
AHMEDABAD-380015

Principal
C. L. Shastri
M. A., Sahityacharya

Resi. Phone : 847797
23, Tapovan Society.
Ahmedabad.

स्वामिनारायण संप्रदाय के दिग्गज विद्वान स्वामि श्री कृष्णवल्लभाचार्य उन विद्वानों में से हैं जिन्होने न केवल भारतीय दर्शन अपितु भारतीय व्याकरण, काव्य, पुराण, धर्मशास्त्र आदि का अविरत मनन कर अति विद्वत्तापूर्ण ग्रन्थों का निर्माण करके संस्कृत भाषा को गौरवान्वित किया है। आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास के बाद संस्कृत-सृजन कार्य शिथिल हो गया, ऐसे समय में श्री स्वामी कृष्णवल्लभाचार्यजी रचित ग्रन्थ अमूल्य महत्त्व रखते हैं। स्वामीजी के ५४ ग्रन्थ अद्वितीय हैं और संस्कृत भारती के शृंगार हैं। ऐसे आंतरराष्ट्रीय विद्वान को हम कोटिशः अभिनन्दन देकर स्वयं गौरव का अनुभव करते हैं।

राम सुरेश त्रिपाठी

अध्यक्ष, संस्कृत विभाग
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि पण्डितवर्य श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी के सम्मान में अभिनन्दन-ग्रंथ प्रकाशित किया जा रहा है। श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी ने अनेक प्रौढ़ ग्रन्थों को लिखकर भारतीय दर्शन का विकास किया है। न्यायदर्शन और सांख्यदर्शन के क्षेत्र में नूतन विचारधारा का समावेश आचार्य जी की विशेष देन है। भामतीकार वाचस्पति मिश्र के सदृश आचार्य जी सर्वतंत्र स्वतंत्र के रूप में चिन्तन करते रहे हैं। भक्ति और योग का, नारायण स्वामी के वचनामृत का आचार्य जी द्वारा ब्रह्मसायन भाष्य व्याख्यान लोक मंगल को प्रश्रय देता रहा है। ऐसे महान् आचार्य के अभिनन्दन में हम सादर अपना शिर झुकाते हैं।

डॉ. वेदप्रकाश शर्मा

ए. एम. बी. एस., एम. ए., पी-एच. डी.
प्राध्यापक–शारीर

राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान
जयपुर (राजस्थान)

जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः।
नास्ति येषां यशः काये जरामरणजं भयम् ॥

भारत के महान् सन्त, विद्वत्सार्वभौम, विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न, तपः पूत व्यक्तित्व, कर्मज्ञ मनीषी पूज्यपाद स्वामि श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी महाराज के अभिनन्दन-ग्रन्थ के प्रकाशन का संकल्प निस्सन्देह परम पुनीत कार्य है। एतदर्थ अभिनन्दन-ग्रन्थ-समिति के सदस्य महानुभाव प्रशंसा के पात्र हैं।

राष्ट्र की इन दिव्य-विभूति के प्रति श्रद्धावनत मेरा सादर प्रणाम।

प्रारम्भ से ही 'सत्यं-शिवं-सुन्दरं' के अनुशीलन में तत्पर इन महर्षि की कर्म शक्ति और गहनता का परिमापन हमारे सामर्थ्य से परे है। आप्त हृदय व प्रेरणामय ऐसे आदर्श महापुरुष अनुकरणीय एवं चरित्र निर्माण तथा मानस पटल पर श्रेष्ठ संस्कार अङ्कित करने में सक्षम हैं।

ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में श्री स्वामी जी द्वारा विरचित परम महत्त्व पूर्ण ग्रन्थ-रत्न तथा संस्थापित अनेकानेक संस्थाएँ और तपोभवन राष्ट्र की अमूल्य निधि हैं।

मनसि वचसि काये पुण्य पीयूषपूर्णा-
स्त्रिभुवनमुपकारश्रेणिभिः प्रीणयन्तः।
परगुणपरमाणून् पर्वतीकृत्य नित्यं
निजहृदि विलसन्तः सन्ति सन्तः कियन्तः ॥

प्रातः स्मरणीय श्री स्वामि जी भी इसी इसी कोटि के वन्दनीय सन्त हैं।

प्रभु इन्हें दीर्घायुष्य प्रदान करें और युगद्रष्टा मनीषी का शुभाशीर्वाद हमें प्राप्त होता रहे।

विदुषामनुचरः—
वेदप्रकाश शर्मा

संपादकीय वक्तव्य

स्वामीजी राष्ट्र के गौरव, उसकी संस्कृति, उसकी भावी पीढी व विश्वप्रसिद्ध उन विभूतियों में हैं जो किसी एक राष्ट्र के होते हुए भी समस्त विश्व के हैं। उनका ज्ञान मानव कल्याण की प्रेरणा का स्रोत हुआ करता है; उनकी वाणी विश्व बन्धुत्व व अंतर्राष्ट्रिय स्नेह और प्रेम की प्रतीक होती है। उनके स्वरों में युगवाणी मुखरित हो उठती है। विश्व की साहित्य से सेवा, भावात्मक एकता, वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना उनके प्राणों का स्वर बनकर अभिव्यक्ति का माध्यम ग्रहण कर जब साहित्य के रूप मे प्रकट होती है तब उसका कलेवर विश्वबंधुत्व, मानवता, मानवीय चेतना व अभिचिंतन का प्रतीक बाहर समस्त मानव कल्याण की प्रतिमूर्ति के रूप में स्थापित हो जाता है।

स्वामी श्री कृष्णवल्लभाचार्यजी ने अपना जीवन जगत व धर्म की सेवाक लिए अर्पित कर भारत की उस देवभाषा को अपना अभिव्यक्ति माध्यम बनाया जो भारतीय संस्कारों की धनी है, संस्कृति की पोषक है, राष्ट्रीयता की प्रतीक है और अपने आप में सुसमृद्ध होते हुये भी सुसंस्कृत है। संस्कृत भाषा ने भारतीय संस्कृति को अनुप्राणित तो किया ही, साथ साथ विश्व को ऐसी विभूतियाँ प्रदान की जो देश के गौरव हैं तथा विश्व की सर्वमान्य अलौकिक प्रतिभाएँ भी है।

संस्कृत भाषा की समृद्धि, व स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी की काव्यप्रतिभा दोनों सोने में सुगंध के समान शोभित हैं। आज संस्कृत भाषा को संघर्ष काल में सम्मानमय स्तर पर स्थिर रखने के लिए जिन विद्वानों ने महत्वपूर्ण कार्य किया है उनमें से स्वामीजी भी एक हैं।

स्वामी श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी भारत के एक प्रतिभाशाली विद्वान, अलौकिक वचनसिद्ध महापुरुष व पवित्र संत हैं जिनके जन्म से भारतभूमि तो पवित्र हुई ही गौरवान्वित भी हुई है। वे महान् योगी भी हैं, दार्शनिक भी, तत्वचिंतक भी हैं, गहन विचारक भी। वे सर्वतोमुखी प्रतिभा के धनी है।

उन्होंने स्वामीनारायण धर्म को अंगिकार किया, उसी में दीक्षित हुए किन्तु वे अपनी समन्वयवादी भावना के कारण अपनी दीक्षा की मर्यादाओं को पावन करते हुए भी संकुचित धार्मिक दायरे से बाहर निकलकर दर्शनशास्त्र की अत्यन्त तन्मयता से सेवा की है।

वे उन संतों में से हैं जो 'स्वांत सुखाय' होते हुवे भी 'परजन हिताय' होते हैं। उन्होने ज्ञान का योग माना और ज्ञानयोग की साधना में निरत रहे। वे प्रबुद्ध भारत के संस्कार गुरु हैं। स्वामीनारायण संप्रदाय उनसे शोभित है।

उनका जीवन कर्मयोग का जीवंत दृष्टान्त है। साहित्य उनके हाथों पड़कर अनुप्राणित हो उठा है। उनकी आत्मा भारतीय संस्कृति के सर्वश्रेष्ठ तत्त्वों का संकलन है। भावों में वे आत्मप्रधान हैं, भाषा में काव्यप्रधान हैं।

तत्वज्ञान के गहनसूत्रों को आपने बड़े ही सरल व सहज ढंग से संजोया है। भाषा उनकी अत्यन्त सरल है। गहन से गहन विषयों को वे अत्यन्त छोटे-छोटे सूत्रों में सर्व सुलभ बना देते हैं। उनकी रुचि हमेशा गूढ़ व गहन तत्वों में निहित गहन रहस्यों का उद्‌घाटन करने में रही है। दर्शन शास्त्र पर उनका अनूठा प्रभुत्व है। ज्ञान की प्रभुता उनके विषयों को स्पर्श करती प्रतीत होती है।

वे जो कुछ भी लिखते हैं विषय के साथ तादात्म्य स्थापित कर भावोत्कर्ष की चरमसीमा पर पहुँचाकर अपने विचारों की मर्यादा को प्रतिष्ठित करते हुए लिखते हैं। उनकी ज्ञानोपासना जीवन के गूढतम रहस्यों की प्रकट साधना है।

उनकी साधना आध्यात्मिक चेतना के स्तर पर तात्विक चिंतन की वह परम्परा है जो विद्वानों के लिए अमृतमय संस्कार की देन है। वे भक्त हैं, संत हैं, और उनके साहित्यकार के कलेवर में यही संत अपनी पवित्र मर्यादा का वाहक बनकर प्रकट हुआ है।

श्रुति व समृति में वे अलौकिक व्यक्तित्व के धनी हैं। उनकी तपस्या का प्रभाव साहित्य में पवित्रता के साथ प्रभावोत्पादकता लेकर व्यक्त हुआ है।

स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी अभिनंदन ग्रन्थ में उन सात सौ विद्वानों की शुभेच्छाएँ हैं, भावनाएँ हैं, उनकी श्रद्धांजलियाँ हैं, उनकी उदारतापूर्वक स्नेह, भक्ति, सम्मान व एक महान संत के प्रति अभिव्यक्त अनन्य प्रेम की अभिव्यक्ति है जो शायद ही किसी को प्राप्त हो सके। इन विद्वानों में सैकड़ों विद्वान ऐसे हैं जो श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी से एक या दूसरी रीत से जुड़े हुवे हैं। उनमें और स्वामीजी में भावात्मक सम्बंध उच्च कक्षा तक विकसे हुवे हैं। वे परस्पर सहृदय आत्मीय जन हैं, मित्र हैं, सह कार्य कर रहे हैं, सहयोगी रहे हैं तथा एक ही गुरु के शिष्य रहे हैं। वे सभी विद्वान स्वामीजी के लिए भी अत्यन्त सामानीय व आदरणीय रहे हैं। इस ग्रन्थ के प्रकाशन में इन सभी पवित्र महानुभावों का सहयोग है। उनके मार्ग दर्शन के बिना यह कार्य सम्पादित होता यह संदेह की बात है।

इतना तो स्पष्ट है, इस अभिनंदन ग्रन्थ से एक महत्वपूर्ण कार्य यह जरूर हुआ कि विभिन्न देश-परदेश के विद्वानों को एक साथ बैठने, परस्पर स्नेहमय एक दूसरे के प्रति हार्दिक कोमल भावनाओं को प्रकट करने का एक सुनहरा अवसर अवश्य उपस्थित हो सका। यह ग्रन्थ उनके व्यक्तित्व की, उनकी श्रद्धा-जलियों का संस्मरण मधुर प्रतोक है जो इसमें संकलित हैं।

सैंकड़ों विद्वानों के दर्शन किये, उन्होने मार्ग दर्शन दिया, उनसे मिला, ये सब मेरे जीवन के वे पवित्र व रोमांचक क्षणों में सबसे अधिक पवित्र क्षण हैं जो आजीवन आनंद प्रदान करते रहेंगे। मैं उन सभी विद्वानों का हार्दिक ऋणी हूँ जिनका सहयोग प्राप्त करने के लिए मैं भाग्यशाली बना।

इस अभिनंदन ग्रन्थ के द्वारा राष्ट्र के महानुभावों को फिर से एक बार एक साथ उपस्थित करने का सुनहरा अवसर प्राप्त हुआ।

स्वामी जी ने धर्म, दर्शन, तर्क, न्याय, योग, वेदान्त, काव्य, साहित्य, व्याकरण, सांख्य, जैसे विविध विषयों में जो प्रभुत्व प्राप्त किया है उसके कारण वे इन विभिन्न क्षेत्रों के तेजस्वी विद्वानों के परिचय में आने का सौभाग्य प्राप्त कर सके, यह आनंद का विषय है। उनकी विविध क्षेत्र की प्रतिभा विविध ज्ञान क्षेत्र के विद्वान मित्रों के साथ स्नेह पूर्ण सम्बंध स्थापित करने में उपयोगी सिद्ध हुई है।

स्वामी श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी के प्रति विद्वानों के अनन्य प्रेम का एक कारण उनकी लक्ष्मी-नारायण संहिता भी है जो आधुनिक युग का अद्भुत विशाल काय महाभारत के बाद सफल महाकाव्य है। इस अद्भुत महाकाव्य में एक लाख छब्बीस हजार (१२६०००) श्लोक हैं। इसकी रचना सम्प्रदाय की मर्यादाओं को पालते हुए श्वेतायन व्यास के नाम से की है। ये श्वेतायन व्यास और कोई अन्य व्यक्ति न होकर स्वामी श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी स्वयं ही हैं। इस बात की पुष्टि डॉ. वी राघवन ने "स्वामी श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी अभिनंदन ग्रन्थ" के संपादकीय में स्पष्ट कर दी है। अतः इस विवादास्पद बात

का अंत हो जाता है कि श्वेतायन व्यास स्वामी श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी हैं और साहित्यिक वैभव के इस धनी के पास इसके सभी प्रमाण मौजूद हैं।

गुजरात व सौराष्ट्र स्वामी श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी को संस्कृत के प्रखर विद्वान की अपेक्षा एक महान संत व सिद्ध के रूप में अधिक जानता है। आप उनके श्रद्धेय गुरु है। आप का अपने सम्प्रदाय में भी उतना सम्मान है जितना साहित्यिक जगत के चोटी के विद्वानों में।

यह अभिनंदन ग्रन्थ ऐसे ही पवित्र महात्मा, पावन संत, महान विभूति को उसके कर्मक्षेत्र की प्रभुतापूण महान सिद्धि को श्रद्धांजलि है।

राष्ट्र व साहित्य दोनों इस पावन प्रसंग से पवित्र हुए हैं। जीवन व जगत के इस महान कर्मयोगी को, ज्ञान के साधक को, विद्या की प्रतिमा को हम सबका सादर प्रणाम।

मनुभाई शाह
कुंकावाव
ता० २०।१।७७

विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध-संस्थान

(भारतीय संघ व प्रादेशिक सरकारों तथा विश्वविद्यालयों द्वारा संरक्षित)

प्रधान : प्रो. दीवान आनन्द कुमार,
M. A. (Cantab), Bar-at-Law,
भूतपूर्व उपकुलपति, पंजाब विश्वविद्यालय
उप प्रधान : डा. जी. एल. दत्ता
M. A., Ph. D.
भूतपूर्व उपकुलपति, विक्रम विश्वविद्यालय
कार्यवाहक संचालक एस, भास्करन् नायर, एम. ए.

पो. साधु आश्रम,
होशियारपुर (पंजाब, भारत)

यह अत्यधिक हर्ष का विषय है कि संस्कृत एवं भारतीय संस्कृति के मूर्धन्य विद्वान्, वाग्देवी के सतत साधक, महान मनीषी संत स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य जी के अभिनन्दनार्थ एक ग्रन्थ प्रकाशित किया जा रहा है। स्वामीजी की सारस्वत-साधना सर्व विदित है। भारतीय धर्म व दर्शन शास्त्र पर स्वामीजी ने जिन ५४ ग्रन्थ-रत्नों की रचना की है वे गुणवता एवं मात्रा दोनों की दृष्टि से एक महती उपलब्धि है। प्रस्तुत अभिनन्दन ग्रन्थ के प्रकाशन के सन्दर्भ में अपने विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान की तथा अपनी ओर से भी इस परमपुनीत प्रयास की सफलता के लिए हार्दिक शुभ-कामना करता हूँ।

शुभ भाव सहित।

विदुषां विधेय
एस. भास्करन नायर
एम. ए.

युग परिवर्तन

लेखक—श्री कृष्णवल्लभाचार्य
दार्शनिक पंचानन,
षड्दर्शनाचार्य, नव्यन्यायाचार्य,
सांख्ययोगवेदान्त-मीमांसा तीर्थः

काल नु माप शास्त्रों मा नीचे प्रमाणे—

घर मा पडतां सूर्य ना चांदरडाना प्रकाश मां कीरण मां झीणा देखाता त्रसरेण नो छट्टो भाग परमाणु मा क्रिया (moving) थाय; ए क्रियोत्पत्ति समय ने एक क्षण कहेवाय एने ए क्रिया थया पछी पोताना स्थानमा थी विभाग (विखुटुं) पडे ते विभाग ना समय ने बीजी क्षण कहे वाय ए बन्ने क्षणो नो समय एकलव कहेवाय, एवा त्रण लव एटले निमेष आँखनु मटकुं कहेवाय, एवा त्रण निमेषो ने कक्ष रहेवाय, चण कक्षो ने काष्ठा कहेवाय, त्रीश काष्ठाओ ने कणा कहेवाय, त्रीस कणाओ मुहूर्त कहेवाय, त्रीस मुहूर्तो ने मानुष दिवस अथवा सौर्य वर्ष कहेवाय, (सूर्य नु वर्ष चोवीस कलाक नु अने मनुष्यों नो दिवस पण चोबीस कलाक नो छे। एवा मानुष दिवश १५ नो पक्ष बे मांस नी रीतु, त्रण रीतुओ नुं अयन, बे पक्ष नो मास, अयन नुं मानुष वर्ष एक थाय ने सूर्य वर्ष ३६० थाय)। एवा मानुष वर्ष एक हजार नुं एक पाद थाय, (अथवा सौर्य वर्षो त्रण लाख साठ हजार नो एक पाद थाय) एवा चार पादो नो एक युग कहेवाय, आ चार पादो ना नाम—१ प्रक्रिया पाद २—अनुषंग पाद, ३—ऊपोदघात पाद, अने ४—संहार पाद, तेमां एक पाद नो समय सत्युग भोगवे छे, सत्ययुग नी आयुष्य वायु पुराण मां कही छे।

चत्वार्याब्दः सहस्त्राणि
वर्षाणां च कृतं युगम्।
तस्य तावच्छती सन्ध्या
सन्ध्यांशश्च तथा विधः॥

चार हजार मानुष वर्ष सत्युग नां छे। तेनो सन्ध्या (सन्धि) चार सो वर्षो नी एने सन्ध्यांश चार सो वर्षो ना छे। एमली चार हजार आठ सो वर्षो सत्युग नां थयां, तेनो एक पाद एटले चोथो भाग = अर्थात एक हजार अने बारसो वर्ष सत्युग आयुष भोगवे छे।

त्रेता त्रीणि सहस्त्राणि, संख्यया मुनिभिः सह।
तस्यापि त्रिशती सन्ध्या सन्ध्यां शस्त्रिशतः स्मृतः॥

त्रेतायुग त्रण हजार मानुष वर्ष नो कहेवाय एने तेनी सन्धिना त्रण सो वर्षो तथा सन्ध्यांश नां त्रण सो वर्षो मली ने त्रण हजार ६ सो मानुष वर्ष आयुष्य त्रेता युग नं थयुं, आ त्रेतायुग बे पाद भोगवे छे, एक प्रक्रिया पाद एने बीजो अनुषंगपाद, ए बे पाद ना वर्षो एने तेने हिसाबे सन्ध्या तथा सन्ध्यांशो ना वर्षो बरसो बरसो मली बे हजार चारसो वर्ष नु आयुष्य त्रेता युग भोगवे छे।

द्वापरे द्वे सहस्त्रे तु वर्षाणां संप्रकीर्तितम्।
तस्यापि द्विशती संध्या सन्ध्यांशो द्विशतस्तथा॥
ऊपोदघातस्तृतीयस्तु द्वापरे पाद उच्यते।

द्वापर युग नां वर्षों बे हजार कहया छे, अने बसो सन्धि ना तथा सन्ध्यांश नां बसो, ए मली ने बे हजार चार सो कहया छे, पण ते द्वापर युग त्रण पाद समय भोगवे छे, एक प्रकिया पाद बीजो अनुषंग पाद, एने त्रीजो ऊपोद्घात पाद ए त्रण पाद ना वर्षो एने तेने हिसाबे संध्या तथा सन्ध्यांश ना वर्षो बसो बसो एने बरसो मली त्रण हजार ६ सो वर्ष नुं आयुष्य द्वापर युग भोगवे छे।

कलिं वर्ष सहस्रन्तु प्राहुः
संख्याविदो जनाः।
तस्यापि शतिका सन्ध्या
सन्ध्यांशः शतमेव च।
संहार पादः संख्याश्चतुर्थो
वैः कलौ युगे।

कलि हजार वर्षों नो छे एने तेनी सन्धि १०० वर्षो तथा सन्ध्यांश १०० वर्षो, एम एक हजार बरसो थाय छे, पण कली चार पाद समय भोगवे छे, एक प्रक्रिया पाद बीजो अनुषंग पाद, त्रीजो ऊपोदघात पाद अने चोथो संहार पाद एम चार पाद ना ४००० तथा तेने अनुसारे सन्ध्या ना २००, २००, २००, २०० मली वर्षो चार हजार एने आठसो नु आयुष्य कलियुग भोगवे छे।

स सन्ध्यानि सहस्राणि
संगराष्ट्र शक्ति
चत्वारि तु युगानि वै।
एतद द्वादश साहस्रं
चतुर्युगं समीरितम्।

सन्ध्या एने सन्ध्यांश तथा—
युगो मली मानुष बार हजार वर्षों नी एक चोकड़ी (चतुर्युग) कहेवाय छे।
संख्या नां आंकड़ा—
मूल लेख—४८००

सत्युग	३६००
पादो—१ पाद, २ पाद	त्रेतायुग
मानुष वर्ष तेथी—१२००, २४००	
सौर्य वर्ष—४३२०००, ८६४०००,	

२४००	१२०० वर्षो
द्वापर युग	कलियुग
३ पाद,	१ पाद
३६००	४८०० आ प्रमाणे छे,
१७२८०००,	३४५६०००, मनुष दिवसे छे,

चार पाद नो एक युग होवां छतां पाद प्रमाणे युग नी ओ छी वत्ती आयुष्य ए, वायु पुराण मां अध्याय ५७ मां मानुष वर्ष, सौर्य, कौचं, सप्तर्षि, दिव्य, आदि संवत्सरो कहया छे, मनुस्मृति, वायुपुराण, भागवत।

महाभारत एने कलि पुराण मां ए प्रमाणो युगान्त कही ने युगान्तरनुं स्थापन कहेल छे, भागवत द्वादश स्कन्ध अध्याय २ माँ ज्यारे सप्तर्षि मघा नक्षत्र मां आव्या त्यारे कलियुग बेठे' एम कहेल छे, सप्तर्षि एक नक्षत्र मां सो वर्ष रहे छे, ते हिसाबे मघा थी रेवती सुधी १८ नक्षत्रो ना १८०० वर्षों, पछी अश्विनीथी रेवती सुधी ना २७ नक्षत्रो ना ३७०० वर्षों, पछी अश्विनी थी कृत्तिका सुधी ना ३ नक्षत्रो ना ३००, एमली १८०० + २७०० + ३०० = ४८०० वर्षो थया, ४००० वर्षो जतां कलि समाप्त थइ चुक्यो, त्यार बाद तेना सन्धि नां ४०० वर्षों गया, त्यार बाद तेना सन्ध्यांश नां चार सो वर्षो गया, बधा पचांगो मां कलि नां ५०४० वर्षो वीत्या नुं लखे छे, सप्तर्षि-मघा योग ना आरंभ थी गणीये तो कलियुग पुरो थता उपरान्त २४० एने सप्तर्षि मघा ना योग ना शत वर्ष ना अन्त थीं गणीये तो १४० वर्ष कलियुग ऊपरान्त चाली रह्या छे, आ ऊपरान्त ना वर्षो ने सत्युग गृह निर्माण (गर्भस्थ सत्युग) तरीके मनाय छे, ए गृह (घ) निर्माण नां वर्षों मां कलियुग ना तमाम अधर्मोनी चढ़ती एने सत्युग ना साधनो नी तैयारीओ जोइए तटला प्रमाण मां थाय छे, ए गृह निर्माण रूपो (गर्भस्थ) सत्युग नो निवास (जन्म) सप्तर्षि-रोहिणी नक्षत्र मां बेसे त्यारे भागवत मां कह्यो छे, वायु पुराण मां अध्याय ९९ मां श्लोक ४१३ मां 'यदा चन्द्रश्च सूर्यश्च तथा तिष्य वृहस्पती। एक रात्रे भविष्यन्ति तथा कृतयुगं भवेत ॥ ४१३ ॥ तथा भागवत मां–यदा चन्द्रश्च सूर्यश्च तथा तिष्य वृहस्पती एक राशौ समेष्यन्ति तदा भवति तत् कृतम्। १२२। २४।

कहेल छे जे-ज्यारे चन्द्र सूर्य पुष्य एने बृहस्पति एक रात्रि मां अर्थात् एक राशी कर्क राशिमां एक चरण मां आवशे त्यारे गर्भस्थ सत्युग नो जन्म थसे, आवो योग भारत वर्ष ना तमाम पंचागो ना हिसाबे संवत् २००० श्रावण अमावास्या मध्यान्ह १२।४४ से थाय छे, ते समये सत्युग ना जन्म पहेलां तमाम अधर्मो नो नाश करनार एने वातावरण ने पवित्र करवार कल्कि भगवान ना प्राविर्भाव (प्रगट पण) होयज ए शास्त्र सिद्ध छे। आ कल्कि भगवान नुं अस्तित्व छेल्लां २०० वर्षो प्रगट थएला महान सम्प्रदाय धर्म प्रवर्तक पुरूषो रूपे होवा नुं पोत-पोताना आश्रित वर्गों मां मानवा मां आवे छे, बंगाल मां रामकृष्ण परमहंस ने, आसाम सिन्ध आदि मां प्रणामी पंथ ना श्री जी श्री प्राणनाथ जी ने, कल्कि रूपे मानवा मां आवे छे. गुजरात काठिआवाड मां अष्टांग ब्रह्मचर्य अहिंसा सत्य आदि धर्मो पलावनारा कोली आदि ने पवित्र करावनारा श्री स्वामि नारायण भगवान ने ते कल्कि रूपे निर्देशवा माँ आव्या छे, पण कल्कि भगवाननां दिव्य कार्य, दिव्य अश्वरोहण सेना द्वारा दिव्य शस्त्रो थी असुरो ना संहार, समय पृथ्वी ना वातावरण नो फेरफार ए आदि घणा महान ग्रन्थो मां–चिन्हो पूर्णा रीते धारण करनार कल्कि भगवान संभल ग्राम मां विष्णु यश नाम ना ब्राह्मण थी सुमति स्त्री मां जन्म पाम्या थका संवत् १९९९ नी अरधी साल वीत ताज प्रगट थसे एसे एम अत्यार नी भूमंडलीय विद्वान जन समाज आशा सेवी रहेल छे, एने ए सत्य छे, लगभग पृथ्वी पर नी नगच्चर, वनचर, जणचर, पवन चर, ए प्रजा नो पचास टका सहार महायुद्ध महा रोग एने दैवी प्रकोपो थी थसे। जेमां धार्मिक सत्युगी प्राणाधारीओ जीवशे, बाकी ना सहार मां खपशे।

वायु पुराण भागवत आदि मां कला कलि ना अन्त ना चिन्हो एने सत्युग नां आरंभ ना चिन्हो अत्यारे बराबर जोवा इ रहया छे।

कलि ना अन्त ना चिन्हो वायु पुराण अध्याय ५८ श्लोक ३१ थी १२५ सुधी मां छे—भौतिक, एने आध्यात्मिक बन्ने चीन्हो—

हिंसा, असूया, असत्य, माया, तपस्विनो वध, मरकी नो रोग, भूख्या मरण, अनावृष्टि भय, देशो ना विपर्यय (नाश,) गर्भ मां मरण युवा मरण, मध्यकुमार मरण, थाय, प्रजा अधार्मिक

अनाचारी, अल्प तेजस्वी, असत्य बोलती थाय, बाह्मणों अनिष्ट इच्छनारा अभण दुराचारी कर्म दोषी थवा थी प्रजा ने भय थाय, इर्ष्या, क्रोध, अक्षमा लोभ, छेतरामली आदिक थी प्राणीओ ने भय थाय। मनुष्यो नां मन कायम क्षोभ वालां रहे ब्राह्मणो वेदो न भणे, द्वि जातियो यजन न करे, क्षत्रियो एने वैश्यो पोताना कर्त्तव्य चुके। शुद्रो एने अन्त्यज योनिना सम्बन्धो (मैथुनो) ब्राह्मणो करे चांडालो साथे शयन आसन भोजन आदि करे! राजाओ क्षुद्र वृत्ति वाला एने शुद्र थइ जाय पांखण्डो ना प्रवर्तक थाय, प्रजा बाल हत्या गर्भ हत्या करनारी थाय आयुष्य मेधा बलरूप कुलता नष्ट थाय, शूद्रो ब्राह्मण ना धंधा करे, ब्रह्मणो शूद्रो ना धंधा (शदाचारा) थाय। चोर लोको राजा ना हुक्म चलावे। पार्थिवो चोर वृत्ति वाला थाय, भृत्य लोको मित्र नाशक थाय। स्त्रियो शिलब्रत रहित, तप ब्रत रहित, पति ब्रत रहित, मद्य मांस खानारी एने माया फेलाव नारी थाय, कुलटा वधे, गायो नो नाश थाय, साधु पुरुषो थोड़ा पण न मले।

राममूर्ति त्रिपाठी

एम. ए., पीएच. डी., डी. लिट्.,
साहित्यशास्त्राचार्य

आचार्य—नवीन पीठ
अध्यक्ष—हिंदी प्राध्ययन केन्द्र
अध्यक्ष—कला संकाय

विक्रम विश्वविद्यालय,
उज्जैन ४५६-०१० (म. प्र.)
दिनांक १४-८-७६

अत्यन्त प्रसन्नता, गर्व और गौरव का विषय है कि वैष्णव विद्वत् सार्वभौम, दार्शनिक पञ्चानन, काव्य कुशल, विद्वच्छिरोमणि स्वामिवर्य श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी महाराज का शुभाभिनंदन ग्रंथ प्रकाशित हो रहा है।

अभिनन्दन कृतज्ञता का सामाजिक प्रकाशन है। इसीलिए व्यक्तिगत उपकार के प्रति ज्ञापित कृतज्ञता की अपेक्षा अभिनंदन का स्वरूप अधिक सात्त्विक और महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है। अभिनंदन उसी के प्रति समुचित है जिसमें लोकमांगलिक दिशा के मानवोय गुण असामान्य स्तर तक पहुँच चुके हों। असामान्य स्तरीय लोकमांगलिक वृत्तियों की वृष्टि से हरा-भरा समाज तथाविधवृत्तिमान् महापुरुष के प्रति अपनी सारी हार्दिक श्रद्धा उन्मुक्त भाव से उड़ेलना चाहता है उसकी अदम्य भावना का समारोहात्मक रूप अभिनन्दन है। महाराज जी जैसा महापुरुष जिस समाज के बीच प्रतिष्ठित है उस समाज की सात्त्विक वृत्तियाँ तथा तदनुरूप मानवीय कृत्य को भावना निरन्तर उद्रिक रहती है। वस्तुतः वह समाज अवरुद्ध हो जाता है, उसकी गतिशीलता मर जाती है, प्रगति निःशेष हो जाती है जिसमें अपने लोकोत्तर गुणों से आकृष्ट करने वाला श्रद्धेय और उसकी ओर आकृष्ट होने वाले श्रद्धालु निःशेष हो जाते हैं। यह हम सबका सौभाग्य है कि हम सब आज जिस समाज में है, वहाँ महाराज जी जैसा अपनी मानवीय ऊँचाई से आकृष्ट करने वाला श्रद्धेय और उस ओर आकृष्ट होने वाले श्रद्धालुओं की कमी नहीं है। यह अभिनन्दन समारोह और ग्रन्थ इन्ही सद् वृत्तियों का शुभ परिणाम है। ऐसे आयोजनों का हार्दिक स्वागत करता हूँ।

अनन्तराम रावल

भाषा साहित्य भवन
गुजरात युनिवर्सिटी, अहमदाबाद
दिनांक—११-६-७६

स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ने रचे हुए संस्कृत पुस्तकों की नामावलि देखने से उनकी शास्त्रज्ञता और विद्योपासना के प्रति अति आदर भाव उपजता है। उन्हें जो अभिनन्दन दिये जायेंगे उसमें अपना भी स्वर मिलाता हूँ ॥ इति ॥

अनन्तराम रावल

भावत्कः—

म० म० छज्जुरामशास्त्री, विद्यासागरः

दिल्ली
दिनांक—९-५-७६

जयन्तु श्रीकृष्णवल्लभाचार्याः।

श्रीमन्नशेषगुणराशिसुधासमुद्र !।
श्रीकृष्णवल्लभब्रुवेन्द्र ! भवन्निमित्तम् ॥
पद्यं मया रचितमेतदतीव हृद्यम्।
स्वीकृत्य वै सफलयाऽद्य मम श्रमं च ॥ १ ॥
विद्वभिरभिनन्द्यन्ते विश्वविख्यातकीर्तयः।
श्रीकृष्णवल्लभाऽऽचार्याः श्रुत्वा हृष्यति मन्मनः ॥ २ ॥

सूर्यनारायण मिश्र

संस्कृत विद्यालय साकेत, अयोध्या

महापण्डित स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी के अभिनन्दन ग्रन्थ के प्रकाशन में जिन जिन विद्वानों का सहयोग हो रहा है, वे सभी विद्वान् अतिप्रतिभाशाली हैं। जैसा संकल्प किया गया है, यह अभिनन्दन ग्रन्थ अद्वितीय होगा ही। बिद्वानों को श्रम-सफलता के लिये श्रीगणपति से प्रार्थी हूँ।

मेरी शुभकामना भेज रहा हूँ।

सूर्यनारायण मिश्रः

डॉ. ईश्वरलाल र. दवे

एम. ए., पी. एच., डी.
सौराष्ट्र युनिवर्सिटी राजकोट
दिनांक २०-४-७६

विषय—अभिनन्दन ग्रन्थ विषय में शुभ कामना—

पण्डितजी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी-अभिनन्दन ग्रन्थ प्रसिद्ध हो रहा है। इसके लिये मैं भी अभिनन्दन भेजता हूँ। यह प्रकाशन अत्यन्त सुसमृद्ध और चिरस्थायी बने, ऐसी मेरी शुभकामनाएँ प्रकाशित कर रहा हूँ।

स्नेहाधीन—
ईश्वरलाल र. दवे

शुभेच्छु
महामण्डलेश्वर स्वामी गणेशानन्दजी

साधनासदन, कनखल
दिनांक २८-४-७६

भारत के महान् सन्त, संस्कृत साहित्य के विश्वविख्यात तेजस्वी पण्डित स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी के अभिनन्दन-ग्रन्थ प्रकाशन का प्रयास श्लाघनीय है। इस कार्य में सफलता मिलो, यह मेरी शुभ कामना है। इस अभिनन्दन-ग्रन्थ के द्वारा उस विद्वान् पण्डित का सम्मान तो होगा ही। इस ग्रन्थ द्वारा मारतीय साहित्य की श्रीवृद्धि भी होगी।

गुजरात के राज्यपाल श्री के
सचिव, राजभवन

९।६५२।२२१६।७६
क्रमांक जी एस-७।
अमदाबाद-४
दिनांक ४-३-७६

कुंकावाव नगरी में श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी आर्टस एण्ड कोमर्स कॉलेज हो रही है, इसके बारे में श्री राज्यपालश्री ने शुभेच्छा दर्शायी है, यह उनकी आज्ञानुसार सूचित कर रहा हूँ।

आपका विश्वासु
पी. जी. वैद्य
उपसचिव

श्रीकृष्णशास्त्री

वानेरजी ! विश्वविद्यालय ।

इन्दौर

दिनांक २१-३-७६

मैं पूज्य आचार्यचरण को वाराणसी से ही जानता हूँ, मैं इस कार्यक्रम के अभिनन्दन ग्रन्थ के लिये भी अतीव इच्छुक हूँ, पूज्य आचार्यचरण को सादर प्रणाम ।

उपेन्द्र पण्ड्या का वन्दन !

श्रीधर्मेन्द्रसिंहजी आर्टस एण्ड ए, एम्, पी. लॉ कॉलेज

राजकोट

दिनांक ४-२-३६

आचार्य साहेब ! कुंकावाव में श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी के पवित्र नाम से उच्च माध्यमिक शिक्षण शाला हो रही है, यह भारी प्रोत्साहक सुघटना है । आज की नयी प्रजा के जीवन में उच्चकोटि के मूल्य युक्त सच्ची समझ जाग्रत हो और विद्यात्मक अमृतदान द्वारा नवयुवकों का जीवन निर्भर निर्वैर और निष्पक्ष बने । उक्त प्रकार में यह संस्था निज-सार्थकता करे । मैं यही स्वहृदय से चाहता हूँ ।

शास्त्री गोपालचरणदासजी

चराडवा

दिनांक ८-१२-७५

अखिलगुण-महोदधि वेदवेदांगसम्पन्न-ब्रह्मनिष्ठ-परोपकारी भगवच्छ्रीहरिसंस्थापित सद्गुणी पण्डित धुरन्धर श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज को शतशः विविधविज्ञानकलासंभृत सर्वज्ञकल्प अभिनन्दन भेज रहा हूँ । आप श्री चराडवा अनुकूल समय में दर्शन देने को अवश्य ही पधारिए । यही अभ्यर्थना ॥

दे० क० परेख (दे० कं० मेहता) उपचसचिव

गान्धीनगर

दिनांक ५-३-७६

श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी की पुण्यस्मृति में आर्टस एण्ड कोमर्स कॉलेज का प्रारंभ हो रहा है । यह जानकर मुख्य मन्त्री श्री ने आनन्द अभिव्यक्त किया है । इस प्रसंग में आचार्य श्री के सम्मान में 'अभिनन्दनग्रन्थ' प्रकाशित होने वाला है । इसके सभी प्रसंगों में मुख्य मन्त्री श्री ने सफलता होने के उद्गार पत्र रूप में भेजे हैं ।

यू. एन. ढेबर

श्रीवल्लभ कन्या केलवणी मण्डल, भक्तिनगर
राजकोट
दिनांक ५-३-७६

पं० पू० महाराज श्री के अभिनन्दन ग्रन्थ विषय में मेरी शुभकामनाएँ प्रकाशित करता हूँ। आपके सभी पुरुषार्थ सफल हों।

कविराज हरिशंकर शर्मा

दैवज्ञभूषण, भिषगाचार्य, साहित्यरत्न, डाईरेक्टर,
मेम्बर, गुजरात आयुर्वेद युनिवर्सिटी, जामनगर

भक्त पाटिल सन्त श्री लक्ष्मणजी
भगवानजी भाई सुखडिया सरपंच-
(मोटी) बड़ी कुंकावाव
दिनांक २६-५-३६

आप श्री ने हमारे परम पूज्य गुरुवर्य श्री श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी महाराज के अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशनार्थ निर्धारण किया है, यह हमारे लिये अति आनन्द का विषय है। हमारे जीवन में उन श्रीगुरुजी की निहित अमीत यादगिरी ग्रथित संस्कृतकाव्य यशःप्रद हो रहा है। आपके महत्त्वपूर्ण सत्प्रयत्नों को प्रभु श्रीहरि सम्पूर्ण शक्तिशाली बनावें यही अभ्यर्थना ।। पुरुषार्थचतुष्टय की सिद्धि का यह सोपान है। 'सतां सङ्गिः सङ्गः कथमपि हि पुण्येन भवति' हमारे गुरुजी के भक्तराज आपके उत्साह में साक्षादिव उषाकालीन झलक अभ्युदयप्रद सम्वर्धित हो रही है। श्री परमेश्वर आपके गुरु अनुवर्तन के कार्य में पूर्ण सफलता अर्पे, यह प्रार्थना करता हूँ ।।

पण्डित सुखलालजी

अमदावाद
दिनांक १२-३-७६

अभिनन्दन ग्रन्थ के लिये मेरी हार्दिक शुभेच्छा है। गुर्जर सौराष्ट्र भूमि के प्रख्यात पण्डित सन्तशिरोमणि भक्तिपूर्ण श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी को मेरे अनेक अभिनन्दन हैं।

अध्यक्ष डॉ० स्वामी श्री श्याम० ना०

साधु आश्रम, होश्यारपुर
दिनांक ४-६-७६

मान्यवर ! परमश्रद्धेय आचार्यवर्यजी के अभिनन्दन ग्रन्थ के लिये उनकी श्रीलक्ष्मीनारायण संहिता का अनुशीलन करने में मुझे अनेक आख्यानवर्णन के रसः स्वाद में आनन्द प्राप्ति हो रही है। अभिनन्दनों में उत्तम अभिनन्दन भेज रहा हूँ। आपके सत्प्रयत्न के लिये सद्भावना है।

डॉ० जयमन्त मिश्रः, एम० ए० पी-एच० डी०

व्याकरण-साहित्याचार्यः वरिष्ठ प्राध्यापक एवं अध्यक्ष,

संस्कृत विभाग, बिहार विश्वविद्यालय।

॥ श्री कृष्णो विजयते ॥

सारस्वत - महायाग - महानुष्ठान - सुव्रती।

श्रीकृष्णवल्लभाचार्यो विद्वद्वर्यः सुधीः कविः ॥ १ ॥

गहने दर्शनारण्ये पञ्चानन इवाभयः।

ब्रह्मज्ञान - सुधासिन्धु - रसपान - परायणः ॥ २ ॥

द्वैताद्वैत-विमर्शादि-ग्रन्थि-भेदे महान् पटुः।

अवतारादि-सिद्धान्त-रूपणे निपुणः सुवित् ॥ ३ ॥

विविधानां सुग्रन्थानां भाष्य-व्याख्यादिभिः पुनः।

तत्त्वप्रकाशकः ख्यातो विदुषामुपकारकः ॥ ४ ॥

प्रतिभाभ्यास-व्युत्पत्ति-त्रिवेणी यस्य मानसे।

श्रीकृष्णवल्लभाचार्यं तीर्थराजं वयन्नुमः ॥ ५ ॥

इतिशम्

दिनांक २२-६-७६

जयमन्तमिश्रः

श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ श्रीगुरुमण्डलपीठाधीश्वर

महामण्डलेश्वर श्री १०८

श्री स्वामी रामस्वरूप जो महाराज, वेदान्ताचार्य

श्री गुरुमण्डल आश्रम, हरिद्वार

न्यायसिद्धान्तनिष्णातः सांख्यासंख्यपरिश्रमी ।
कृष्णवल्लभरूपोऽसौ स्वामिनारायणान्वयी ॥ १ ॥

कृताधीतिश्चिरं काश्यां वादसंवादशेवधिः ।
सदा स्मेराननो विद्वान् विदुषां प्रणयी नयी ॥ २ ॥

सारस्वतसमुद्रोत्थः सुधांशुः प्रांशुविग्रहः ।
संविधेयाग्रहे दक्षो जीर्णदुर्गाश्रमी शमी ॥ ३ ॥

चिरं भायात् भवाशेष क्लेशनाशाय भारते ।
सौराष्ट्रे कृतसंस्थाना राष्ट्रमाणिक्यसन्निभः ॥ ४ ॥

म० म० स्वामी रामस्वरूपोवेदान्ताचार्यः

विद्यारत्न परशुरामशास्त्री, व्याकरणाचार्य

विद्याभूषण, साङ्ख्यरत्न

भूतपूर्व राजपण्डित { (१) दिवङ्गत जम्मू-कश्मीर महाराज हरिसिंह,
(२) वर्तमान जम्मू-कश्मीर महाराज डा० कर्णसिंह

लब्धावसर—प्रधानाचार्य, श्री रघुनाथ संस्कृत महाविद्यालय, जम्मू।

सम्मानित अध्यापक सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी आदि

वैष्णवविद्वत्सार्वभौम, दार्शनिकपञ्चानन, षड्दर्शनाचार्य, विश्वविद्वद्वृन्दवन्द्य, विलक्षणशेमुषीपरिमुषितशिष्यवर्गहृदन्तरालगहनान्धकार, श्रीमदाचार्यस्वामिकृष्णवल्लभाचार्यमहोदयानां विषये यत्किञ्चित् लेखनं दिवाकरप्रकाशनाय खद्योतोल्मुकप्रदर्शनोद्योगः। महाभागानामेषां विशेषवैदुष्यं तदुपज्ञानिकतन्त्रविषयकविविधग्रन्थनामभिरेव सुस्फुटम्। प्रायः सपादाधिकलक्षश्लोककलेवरा श्वेतायनसंहिता तु महाभारतमप्यतिशय्य वर्तते। नूनमेकेनैवानेन ग्रन्थेन संस्कृतसाहित्यस्य या समृद्धिर्विहिता सा वर्षपञ्चसहस्रककाले सर्वातिशायिनी।

पावनकुङ्कावावनगरे भगवत्पादस्मृतिरूपेण समारप्स्यमानः "आट्र्स, कामर्स, कालेज" नामा महाविद्यालय एषां कीर्तिपताकामाचन्द्रदिवाकरमादिग्दिगन्तं उद्धूनयिष्यतीत्याशास्यते।

नाममात्रेणैव परिचितोऽयं सेवको भगवदाचार्यपादयोः शतशो नामं नामं विरमति

दिनाङ्कः ३-७-१९७६ **परशुरामशास्त्री**

डॉ० सत्यव्रत शास्त्री

व्याकरणाचार्य, एम० ए० एम० ओ० एल० पी-एच० डी०

वरिष्ठ प्राध्यापक एवं अध्यक्ष संस्कृत विभाग तथा प्रमुख कलासंकाय

दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली ।

श्रीकृष्णवल्लभाचार्याभिनन्दनसप्तपर्णी

कृष्णः परिपालयिता
लोकस्य चराचरस्य सर्वस्य ।
वन्द्यो यदि,
तर्हि न तद्वल्लभोऽपि वन्द्यः स्यात् ॥ १ ॥
विद्वद्वराणां धुरि कीर्तनीयः
सदा सदाचारविचारचारुः ।
सौम्याकृतिः सौम्यगुणो बुधोऽयं
यत्राकृतिस्तत्र गुणा वसन्ति ॥ २ ॥
शास्त्रेष्वधीती निपुणप्रतीति-
र्यस्य प्रिया भारतभारतीति ।
प्राचामवाचां विदुषां सुवाचां-
माचामकोऽयं बुधपुङ्गवोऽस्ति ॥ ३ ॥
दिशि दिशि प्रथिता धवला गुणा
सकलविश्वगता महसां चयाः ।
बुधवरस्य कुशाग्रधियो ध्रुवं
भुवि यशःप्रकरं प्रवितन्वते ॥ ४ ॥
महाकविर्महाविद्वान् महासत्त्वो महामतिः ।
श्रीकृष्णवल्लभाचार्यो महाकीर्तिर्विराजते ॥ ५ ॥
नन्दति विश्वं विश्व-
मभिनन्दनेऽस्य विपश्चिदग्रमस्य ।
अभिलक्ष्य नन्दनमि-
त्यास्तेऽभिनन्दनपदस्यापरोऽप्यर्थः ॥ ६ ॥
नानाग्रन्थप्रणेताऽयं बुधप्राग्रहरः शुभः ।
श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः पुरुषायुषमाप्नुयात् ॥ ७ ॥

इति शुभाशंसा

दिनाङ्कः ५-६-१९७६

सुरसरस्वतीसमाराधनैकव्रतस्य

सत्यव्रतशास्त्रिणः

डॉ० धर्मेन्द्रकुमार गुप्तः

एम० ए० एम० ओ० एल० पी-एच० डी०

अध्यक्ष संस्कृत एवं पाली विभाग, पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला ।

श्रीवैष्णवविद्वत्सार्वभौमपण्डितप्रवरश्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहाभागानाम् अभिनन्दनं भवद्भिरायोज्यते शुभे चास्मिन्नवसरे तच्चरणेषु तदभिनन्दनग्रन्थसमर्पणं परिकल्प्यत इति मे परमप्रमोदहेतुः । षड्विंशत्यधिकशतसाहस्रीं लक्ष्मीनारायणसंहिताम् अन्यांश्च त्रयश्चत्वारिंशत्संख्याकान् न्याययोगतर्कदर्शनवेदान्तधर्मादिविविधविषयसंस्पृशो ग्रन्थान् विरचितवतां पण्डितवरेण्यानां सभाजनं संस्कृतानुरागिणां समेषां चेतस्सु गौरवमादधीतेति स्वाभाविकमेवैतत् । शुभेऽस्मिन्नवसरे, भवतां महानयं समुद्यमः सफलः सार्थकश्च भूयादिति भूयो भूयः शुभाशंसां स्वीयां विज्ञापयामि । अवसरिममुपलक्ष्य भवन्तः श्रीस्वामिमहाभागनामधेयपवित्रिताभिधेयमेकं कलावाणिज्यमहाविद्यालयं कुङ्कावावस्थानेऽनुपदमेव संस्थापयितुं व्यवस्यन्तीति भूयोऽयं मे हर्षवर्धनः समुदन्तः । सिद्धिः साध्ये सतामस्त्विति मङ्गलमाशासानो विरमाम्यहं पटियालास्थपञ्जाबीविश्वविद्यालये संस्कृतपालिविभागाध्यक्षो ।

दिनाङ्कः २०-५-१९७७

धर्मेन्द्रकुमारगुप्तः

अनन्त श्री विभूषित

जगद्गुरु श्री शङ्कराचार्य

श्री स्वामी शान्तानन्द सरस्वती जो महाराज

ज्योतिर्मठ बदरिकाश्रम

(हिमालय)

प्रसीदामो वयं साम्प्रतमपि भारते श्रीव्याससदृशा विद्वांसो भूयसां ग्रन्थानां प्रणेतारः सन्ति ।

अतो विश्वस्ताः स्मः, जीवति आस्माकिनी वैदिकसंस्कृतिस्तथा च प्रकाण्डपाण्डितसुधासिन्धुविन्दुभिरभिषेचनं विदधति विपश्चिदपश्चिमव्रततीतती-लताव्रातानाम् श्रीकृष्णवल्लभाः श्रीकृष्णवल्लभाः प्रियात्मानो धन्या वदान्याः सदन्याः साधुवादार्हा वरीवर्तन्ते जगतीतलेऽस्मिन्निति प्रार्थयामो भगवन्तं बदरी-विशालं भवादृशा महान्तो विद्वांसो दीर्घायुष्काः सन्तः स्वविद्ययाऽनुगृह्णन्तु ।

ज० गु०

दिनाङ्कः ९–५–७६

शङ्कराचार्यः

भावपुष्पाञ्जलिः

अष्टोत्तरशतश्रीमान् स्वाम्यसौ वल्लभो गुरुः ।
माने यशसि विद्वत्त्वे पूज्यत्वे धर्म्मकर्म्मणि । १ ॥
सुपरिव्राडयं स्वामी त्रिदण्डी त्यागशीलवान् ।
सर्वस्वमात्मनो येन त्यागहोमे हविष्कृतम् ॥ २ ॥
कारुण्यगुणसम्पन्नो दुःखितस्य वि-रक्षणे ।
शरणागतपालोऽयं वल्लभः श्रीशिवः शिविः ॥ ३ ॥
शक्तिमान् वल्लभाऽचार्य्यः—अगस्त्योऽसौ महामुनिः ।
अगाधो दुस्तरो येन पीतः शास्त्रमहोदधिः । ४ ॥
निजपक्षप्रतीकारे विश्वामित्रोऽस्ति वल्लभः ।
शास्त्रार्थकरणे येन कृतो वर्णविपर्य्ययः ॥ ५ ॥
स्वामीश्रीवल्लभाचार्य्यो वल्लभो जगतामिह ।
अलभ्यरत्नवन्मृग्यः शास्त्रिसागरमध्यतः ॥ ६ ॥
स्यमन्तकोऽस्ति मणिश्चासौ वल्लभः श्रुतविश्रुतः ।
सुवर्णभाशनिर्मुक्ता ग्रन्थरूपेण भूरिशः ॥ ७ ॥
मूर्द्धन्यो धन्य इत्याहु र्विद्वन्मार्तण्डमण्डले ।
स्वामी श्रीवल्लभाचार्य्यः शिवांशो जगतीतले ॥ ८ ॥
एवंविधैः परिव्राडभिः शून्या चेत् भारतक्षितिः ।
शून्यैव सा तदाज्ञेया संस्कृतस्यौषरीधरा ॥ ९ ॥
लेखिनीलाङ्गलैर्येऽपि लिखन्ति भारतीक्षितिम् ।
जन्मभूमेः सुतास्ते स्युर्विरला नात्र संशयः ॥ १० ॥
हा कष्टं विधुरं दैव त्यक्त्वाऽकाले धरातलम् ।
सर्वेषां वश्यतामेव त्वरैवान्तर्दधे कला ॥ ११ ॥
भारती विधवा जाता विरोदिति मुहुर्मुहुः ।
पालनाद्धिपतिः प्रोक्तः कोऽन्यस्तत्सदृशः पतिः ॥ १२ ॥
सर्वे तमभिनन्दामो जगद्रत्नं महाकविम् ।
तत्कीर्तिं स्थावरां कर्तुं ग्रन्थकोशप्रदानतः ॥ १३ ॥
उच्चैर्वदत हे लोकाः ! जयं बल्लभस्वामिनः ।
श्रद्धया दीयतां तस्मै भावपुष्पितमञ्जलिम् ॥ १४ ॥

॥ शमन्यत् ॥

महामहिमोपाध्यायः
श्री शुकदेवशास्त्री
कैनालरोड कृष्णनगर, कनीडम् । (जम्बू)

मानसोल्लासः

अद्य हि स्वराज्येऽपि केचित् स्वकीया एव यदा स्वपरंपरां विखण्डयितुं कटिबद्धाः सन्ति, तदा तु आत्मानं यथापूर्वं सर्वहिते सन्नियोज्य स्वसंस्कृतिसभ्यतयोः पुनरिहा-सम्पादनं केषाञ्चित् सफलसाधकानामेवास्ति प्रधानं कर्म कौशलम्

भारतीया सन्तपरम्परा तु सदा एव सङ्घर्षरताय मानवमनसे "सत्यं शिवं सुन्दरम्" साक्षात्कारयितुं स्वं सर्वस्वं समार्पयत् ।

"सतां विद्यावतां लोके वर्तते यादृशी गतिः
तया जीवति लोकोऽयं नान्यथास्यास्ति जीवनम्"

इत्येषा मदुक्ति स्वामैतिहासिकमहत्तामादाय प्राचलत् ।

विविध्र विषमतानां समाधानं कुर्वन्ती सा अद्यापि सम्प्रचलति ।

साधकसन्तः विद्वत्सन्तश्चेति द्वयोरपि अनयोर्मध्ये एका रहस्यात्मिका संयोगिता विद्यते । अद्यतनीये जटिलजनजीवने यदि वयं स्वल्पमपिकालं सावधानतया सम्विचारयेम, तदा एतत् सुस्पष्टं भवति यद् भारतीयसाहित्यसङ्ग्रहे सन्तजीवनमहिम्नो नास्ति कोऽपि पारावारः । अनादिरयं प्रवाहो नैरन्तर्येणाग्रे सम्प्रवहमानोऽस्ति ।

स्वकीयं तमेव आदर्शपरम्परावादमाश्रित्य कतिपयनवीनताभिः संयुक्तेऽस्मिन् सङ्क्रमणकालेऽपि वयं गणनानुगुण्येन कानपि सतो विदुषः सत्साहित्यसृजनपरान् समालोकयितुं पारयामः ।

परं स्वकार्यकलापस्य समीक्षाविषये तु अद्यापि अस्माकं संस्कृतसमाजः प्रायः पश्चाद् वर्तते । तच्च पश्चाद्भावं दूरीकर्तुं नूनमेवास्ति एतादृशी कापि नवीनावश्यकता, यत् कस्यापि दिशः योजनाबद्धः प्रकाशनप्रबन्धः समारभ्येत ।

अहमेतत् संविज्ञाय सुतरां प्रसन्नोऽस्मि यद् गुजरातराज्ये कतिपयाः संस्कृतसंस्कृति-स्नेहिनः सभ्यसदस्याः इमां सामयिकीमावश्यकतामनुभूय सम्मुखे समायाताः ।

श्रीस्वामिकृष्णवल्लभाचार्यमहोदयानामभिनन्दनग्रन्थसम्पादनं तु निश्चयेनास्ति तस्याः एव शृङ्खलायाः प्रथमावरणम् ।

महाविदुषां सतां श्रीस्वामिमहाभागानां कर्मशीले व्यक्तित्वे च को न विश्वविद्वान् गर्वमावक्षति ? इमे महानुभावाः साधनासम्पन्नानां भारतीयाकांक्षाणां सम्पूरकाः विद्वांसो गण्यन्ते । एषामभिनन्दनकर्मणा नूनमेवात्मीयसंस्कृतेरजस्रस्रोतः प्रगतिशीलं भविष्यति । अनेके जिज्ञासवो नव चेतनां प्राप्स्यन्ति । सम्मूर्छितोऽपि संस्कृतसमाजः पुनर्जीवनमधिगमिष्यति । स्वतन्त्रराष्ट्रस्य भारतस्य अक्षयो निधिसंस्कृतमपि प्रचारप्रसारमाध्यमेन यथापूर्वं जगति गौरवपदं समाप्तुं स्वं शिवसङ्कल्पं पुनरुद्घोषयिष्यति ।

एवं हि भावभरितैः स्वल्पशब्दैरेवाऽत्राहमपि अन्यान्याभिनन्दकसहचारिणां स्वरेषु स्वं स्वरं सम्मेल्य भूयो भूयः श्रीस्वामिपादानां सत्कृतिषु नतमस्तको भूत्वा समानसोल्लासं शुभाशंसनं सम्प्रकाशयामि, यदेषा शुभा सत्कारयोजना यथाशीघ्रं सम्पूर्णा सफला च भवतु ।

मन्दिर पुराणीमण्डी,
जम्मू तवी,
दिनाङ्कः १७-५-७६

डा० जगपूर्णदास शास्त्री, साहित्याचार्य,
वाचस्पति, (पी०-एच० डी०)

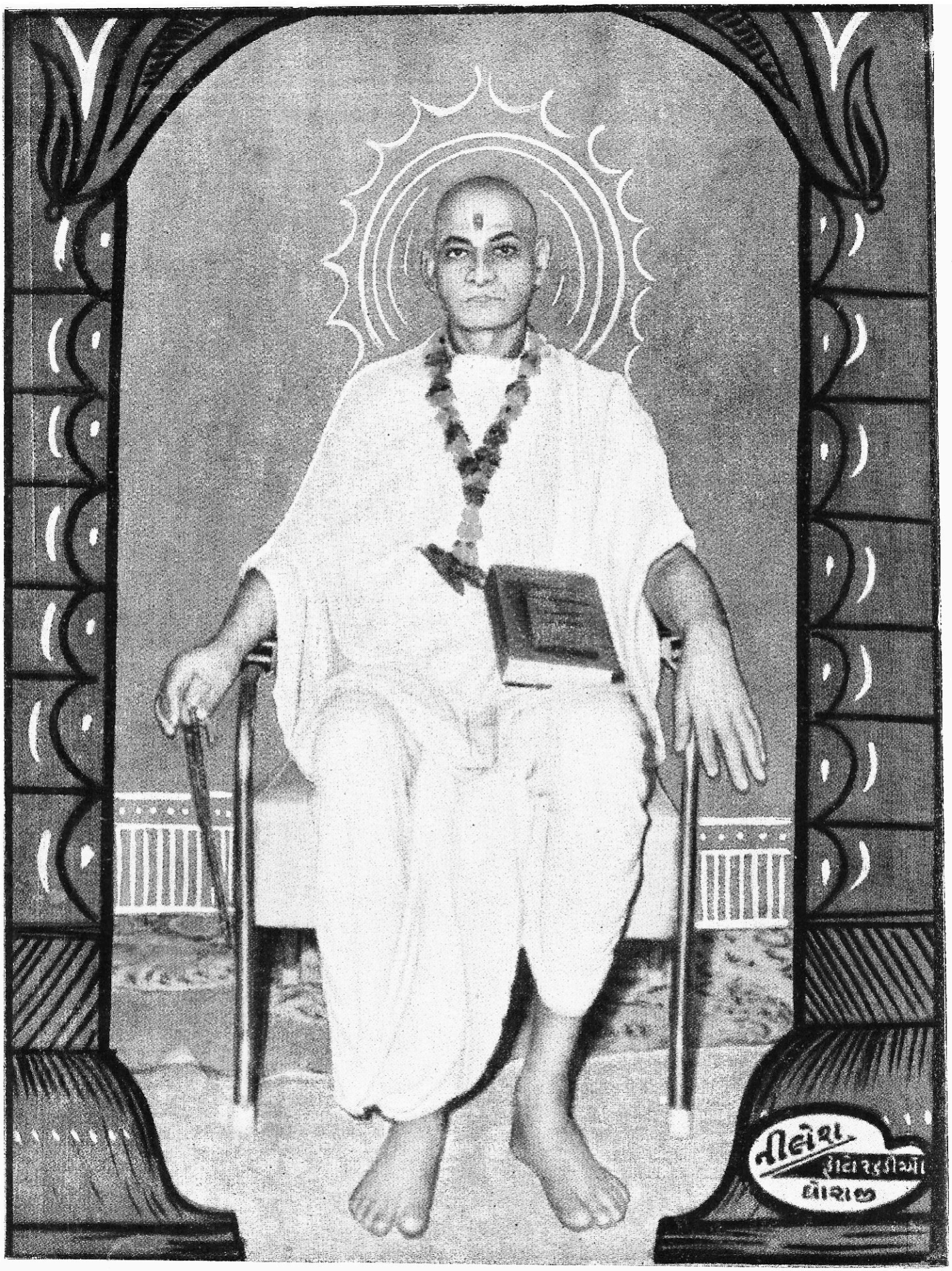

विद्वानों द्वारा अभिनन्दित—श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज, महामहोपाध्याय, भारतभूषण, वैष्णव-विद्वत्सार्वभौम, दार्शनिकपञ्चानन, षड्दर्शनाचार्य, नव्यन्यायाचार्य, सांख्य-योग-वेदान्तमीमांसातीर्थ, दार्शनिकमार्तण्ड, साहित्यमनीषी, तार्किकवाचस्पति, M. A; Ph. D; D. phil, D. Litt. निवासस्थान—श्रीस्वामिनारायणमन्दिर, भण्डार के मेडे पर, जूनागढ़, सौराष्ट्र ।

(पृष्ठ ८)

डॉ० रुद्रदेव त्रिपाठी एम० ए०, (संस्कृत-हिन्दी)
पी-एच० डी० साहित्यसांख्ययोगाचार्य
प्रवाचक-अनुसन्धान-विभाग,
श्री ला० ब० शास्त्री केन्द्रिय सं० विद्यापीठ, नई दिल्ली ।

अभिनन्दन-सन्देशः

इदमस्मभ्यं महतः प्रमोदास्पदं वृत्तान्तं यत् श्री वैष्णवविद्वत्सार्वभौम-दार्शनिकपञ्चानन-षड्दर्शनाचार्य-प्रभृति-विविधविषयावगाहिपाण्डित्यप्रतिभामण्डितानां पण्डितवर्यश्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहाभागानां शास्त्र-समाज-राष्ट्रसेवाः समभिलक्ष्य तेषां महिमशालिसमर्थनारूपं नानाविधलेख-प्रलेखादिसुसमृद्धिसमन्वितं ग्रन्थरत्नं समर्पयितुं सन्नद्धादराः संस्कृत-शिक्षादीक्षिताः सन्तीति ।

विद्यावैभववन्दिताः सुगुरवः शास्त्रेषु बद्धादराः,
पाण्डित्यप्रवणाः परोपकृतिषु प्रख्यातिमाप्ताः क्षितौ ।
वेदान्तादिविभिन्नशास्त्ररचना येषां विलोक्याखिलं,
विश्वं विस्मयमाप्य वदति श्रीकृष्णवल्लभार्यस्तवम् ॥ १ ॥

न्याये सांख्ये च योगे सुबहुविरचिताष्टीका-प्रटीकादयः,
स्वीयाचार्ये प्रतिष्ठा-प्रथनमतिधृता ग्रन्थवर्याश्च चीर्णाः ।
शिक्षापत्रीप्रसूत्यै किरणरचनया भाष्यभूषासमृद्ध्या,
लोके ज्ञानप्रकाशं शुभमिह वितरन् भासतां भारते सः ॥ २ ॥

श्रीकृष्णवल्लभगुरो विमलं चरित्रं,
भूमण्डले रविरिवातितरां पवित्रम् ।
कल्याणपूर्णरचनाविलसत्किरीटं,
विद्योततां विजयतां लभतां प्रतिष्ठाम् ॥ ३ ॥

"अभिनन्दन-मणिमाला" विलसतु कण्ठे कवीन्द्रवर्याणाम् ।
विद्वद्भावग्रथिता श्रीलकृष्णवल्लभार्याणाम् ॥ ४ ॥

जयतु यतिवरोऽसौ भूरिभक्तिप्रभावाद्-
भुवन-विदितकीर्तिर्विद्वरः कान्तमूर्तिः ।
विहितसकलशास्त्राभ्यास-विन्यास-विद्या-
मजन-सुकृत-सेवः पण्डितैरीड्यमानः ॥ ५ ॥

इत्यहं सर्वदा सर्वदातारं परमात्मानमभ्यर्थ्य तेषां दीर्घजीवित्वं नीरोगित्वं च भावये—

रुद्रदेव त्रिपाठी

सर्वतन्त्रस्वतन्त्राणां परमभागवतानां श्रीश्रीस्वामिकृष्णवल्लभाचार्यपादानां सप्ततितम जन्मस्मृतिपुण्यवासरे तदीयानुयायिभिः शिष्यैः सद्देशवासिभिश्च स्मृति ग्रन्थ प्रकाशनमभीप्सितमिति परमप्रमोदस्थानमस्माकम् । शास्त्रमूर्तीनां तादृशां स्मरणमपि पावनमेव तत्कृतानां ग्रन्थानामध्ययनाध्यापनार्थं विशेषव्यवस्था चेदधिकारिभिः क्रियेत, साधुतया तदीयस्मृतिसंरक्षणं भवेदिति मन्ये । स्मृतिग्रन्थोऽयं प्राकाश्यं नीतः करिष्यति पुण्यादर्शप्रचारं वर्धयिष्यति च धर्मनिष्ठामिति ।

पाटलिपुत्रतः
३३।३।७६

विदुषां विधेयस्य
श्रीमतोऽनन्तलालदेवशर्मठाकुरस्य
जायसवालविद्यापीठस्थस्य

Sri G. Bhanumurthy Sastry

C/o Dr. G. S. Sastry

7-28-37, Vygram Rd

RAJAHMEUNDRY 533101

ANDHRA PRADESH

॥ श्री कृष्णपरमात्मने नमः ॥

श्रीवैष्णवविद्वत्सार्वभौम, दार्शनिकपञ्चाननेत्यादि विरुदांकितैः स्वामि-श्रीकृष्णवल्लभाचार्यैः लिखितानि अमूल्यग्रन्थनामानि दृष्ट्वा शास्त्ररत्नाकरसदृशस्य तस्य दर्शनभाग्यमीहमानः कदा तद्दर्शनं भविष्यतीति सोत्कण्ठं कामयते मम मनः।

तेषां सर्वदर्शनकूलंकषत्वं विज्ञाय सर्वदर्शनज्योतिरेवेति मन्ये, तद्रचितग्रन्थ-वृन्दं पठितुं न पर्याप्तं वयः। अतः तद्दर्शनमीहे न जाने दर्शनं कदा भविष्यतीति—

नह्यम्मयानितीर्थानि न देवा मृच्छिलामयाः।
ते पुनन्त्युरुकालेन दर्शनादेव साधवः

"इत्युक्तिर्ननु लक्ष्मीनारायणसंहिता ग्रन्थं पठितुं उत्सुकता अतीव वर्तते तन्मूल्यं लिखितुं प्रार्थये"। इति

राजमंद्री—५३३१०१
दिनाङ्कः ७-७-१९७६

गुण्टूरि भानुमूर्ति शास्त्री

श्रीहरिः

शास्त्रार्थ महारथी

पं० माधवाचार्य शास्त्री

धर्मधाम, १०३ ए, कमलानगर

दिल्ली–११०००७

संस्थापक

धर्म प्रेस, माधव पुस्तकालय, सनातन धर्म,

दिग्विजयमण्डल, लोकालोक (मासिक),

गीता भवन

भूयो भूयोऽभिनन्द्यते

विद्वत्सामन्तसम्राट् कविकुलतिलकः सर्वतन्त्रस्वतन्त्रो

नानाग्रन्थान्तरालग्रथितगुरुतरग्रन्थिभेदप्रवीणः ।

नव्ये न्यायेऽथ भव्ये प्रखरतरमतिः सांख्यवेदान्तवेत्ता

मीमांसागाधसिन्धुप्रमथननिपुणः कृष्णयुग्वल्लभोऽयम् ॥ १ ॥

वैष्णवानां च विदुषां सार्वभौमपदार्पितः ।

श्रीकृष्णवल्लभाचार्यो भूयो भूयोऽभिनन्द्यते ॥ २ ॥

माधवी सरसामोदा सुमनःस्रग्धरा कृतिः ।

कृतार्थयन्ती स्वात्मानं भूयात् श्रीकृष्णवल्लभा ॥ ३ ॥

इति कामयते

गुरुपूर्णिमा
२०३३

माधवाचार्यः शास्त्री

श्रीकृष्णवल्लभाचार्या दीर्घायुःस्वास्थ्यशालिनः ।
भूतले भारतं वर्षं ख्यापयन्तु विपश्चितः ॥

समग्रशास्त्रपारावारपारङ्गतानां विद्वन्मूर्धन्यानां स्वधर्मकर्मनिरतानां स्वनामधन्यानां स्वामि श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहोदयानां वैशिष्ट्यविषयेऽनल्पोऽपि लेखोऽल्प एव स्यात् । प्रथमे वयस्येव शास्त्राधीतौ कृतभूरिश्रमा एते सद्य एव नैकेषां संस्कृतग्रन्थानां संस्कृतभाषायां टीका व्यरचयन् । तत्र तैः प्रामुख्येन न्यायसिद्धान्तमुक्तावल्या उपरियातिविस्तृता किरणावल्याख्या टीका रचिता सैकैव महोदयानेतान् प्रकाण्डपण्डितमण्डलान्तर्गणयितुं पर्याप्ता विद्यते । संस्कृतभाषासंभाषणकौशलमपि चेतोहरं तज्ज्ञानाम् । स्वाज्ञानभ्रान्तानां फलतो भृशमार्तानां संसारिणां तत्त्वोपदेशने सन्मार्गं प्रदर्श्य बहुश आर्तिमुपशमयतांमहात्मनामेतेषां तपःपूतं जीवनं, सरलः स्वभावः, विषयविरक्तता सत्कर्मसंसक्तता चैते सर्वे विद्यन्ते विशेषतो गुणाः । एतत्पर्यालोचनेन स्फुटमवगम्यते यदेतादृशानां महानुभावानां यः सत्कारः क्रियते न स केवलमेतेषां किन्तु सनातनधर्मस्य संस्कृतवाङ्मयस्य, किमधिकेन साक्षाद् भारतीयसंस्कृतेरेव क्रियत इति स्पष्टं स्वाभिप्रायमावेदयते ।

विदुषां वशंवदः
शास्त्री लालजी ना० मोढा,
वेदान्ताचार्यः प्राचार्यः
राजकीयसंस्कृतपाठशालायाः जामनगरस्य

दि० १-७-१९७६
बृहस्पतिः

मीठालाल हिंमतराम ओझा

(सिद्धान्तज्योतिषाचार्य, एम० ए०, तीर्थ)

प्राध्यापकः

वाराणसेयसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य

डी० ३/३४ मीरघाट, वाराणसी (उ० प्र०)

मम सौराष्ट्रयात्राप्रसङ्गे महामान्यानां श्रीमतां श्रीकृष्णवल्लभाचार्य-शास्त्रि-स्वामिमहोदयानां समागमोऽभवत्। "प्रियप्राया वृत्ति र्विनयमधुरो वाचिनियमः" इत्यादि भवभूतिकृतसाधुलक्षणस्य सर्वांशेन लक्ष्यभूतानां सौहार्द-सौजन्य-विद्या-तपः पूतानां जीवनादर्शं दर्शं दर्शममन्दानन्दसन्दोहाप्लावितस्य ममाऽद्यावधि-स्तत्प्रसङ्गः प्रतिक्षणं नूतन इव स्मृतिपथमवतरति। एतेषां जीवनं वाग्देवताया आराधने व्यापृतं लोकोपयोगिनोऽनेकानेकसुरभारतीनिबद्धग्रन्थान् निर्माय्य रचयच्च जनान् सन्मार्गं दर्शयति। भक्ति-विविधदर्शनशाखातिरिक्तविषयेष्वपि अपूर्वं पाण्डित्यमेषां कृतयो द्योतयन्ति। एवं विधानामेतेषां स्मृतिरूपं महाविद्यालयं समुद्घाटय स्तत्रत्याजना आत्मानं कृतकृत्यं मन्यन्ते। भगवान् भूतभावनः काशी-विश्वेश्वरोऽप्रतिमपाण्डित्यजुष्टाश्रीकृष्णवल्लभाचार्यशास्त्रिभ्यो दीर्घायुष्यं कार्य-क्षमताञ्च ददातु इति तस्यैव मङ्गलमय चरणारविन्देषु सम्प्रार्थ्य विरमामि। शम्

पी० शु० ५ भौमे २०३२

मीठालाल हिंमतराम ओझा

डा० मनोहर लाल द्विवेदी

साहित्याचार्य, बी० लिब्० एस्० सी०, एम० ए०, पी-एच्० डी०

अथर्ववेदाचार्यः

प्राध्यापकः

सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालयः

वाराणसी

श्रीगुरुःशरणम्

श्रीमतान्तत्रभवतां पण्डितप्रवराणां विविधशास्त्रपारावारपारीणानां श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदायसंरक्षणबद्धपरिकराणां श्रीश्रीकृष्णवल्लभाचार्यस्वामिपादानां विविधशास्त्रग्रन्थसम्पादनकार्यं समवलोक्य, अमन्दानन्दसन्दोहमावहति चेतो मदीयम्। एभिर्महाभागैश्चत्वारिंशदधिकग्रन्थसम्पादनमाचरितमस्ति।

एतादृक्कार्यं भारतवर्षस्य महते गौरवायेति निश्चप्रचम्। श्रीपार्वतीपरमेश्वरचरणयोः प्रार्थये यदेते भविष्येऽपि ग्रन्थसम्पादनकार्यमाचरन्तश्चिरकालं जीवन्त्विति शम्।

पौष शुक्ल पञ्चमी
भौमवासरः
सं० २०३२ वै०

मनोहरलालद्विवेदः

सुरेन्द्रनाथ शास्त्री, एम० ए०

दर्शनतीर्थ, न्यायवेदान्ताचार्य

प्राध्यापक

वाराणसेयसंस्कृतविश्वविद्यालय, वाराणसी

परमानन्दस्य विययोऽयं गुणज्ञैः ग्रामवासिभिः समजनि यत् प्रातः स्मरणीयाभिनवगौतमकल्पगुरुवरश्रीवामाचरणभट्टाचार्यमहाभागाऽवाप्तन्यायादि-दर्शनविद्यानां विविधविद्याविद्योतितान्तःकरणानां श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदायलब्ध-दीक्षानां न्यायसांख्यादिग्रन्थग्रन्थ्युद् घाटनसमर्थटीकाकर्तृणां विद्वद्वरेण्यानां श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहोदयानां नाम्ना गुर्जरप्रदेशान्तर्गतकुंकावावनामके जन्म-स्थाने महाविद्यालयस्य संस्थापनं विद्याक्षेत्रे कृतभूरिपरिश्रमाणां स्वामिवर्याणां योग्यं स्मारकमाध्यात्मिकविद्याविवर्धकमपि संपद्येत एतेषां महाविदुषां चिर-जीवितं तेन च भाविनीं महतीं लोकपरम्परां भगवतः करुणावरुणालयस्य सच्चि-दानन्दस्य चरणारविन्दयुगलं प्रार्थये इति ।

दिनांक ५–१–७६

सुरेन्द्रनाथ शास्त्री

डॉ० श्रीकृष्ण देव

धनपाठी, वेदाचार्य, पी-एच० डी०

वेदव्याख्याता

वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी

श्रीमतां पण्डितवर्याणां श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदायसंरक्षकाणां श्रुतिस्मृति-पुराणोक्तकर्मनिष्ठावतां नाना शास्त्रभाषासु कृतकार्याणां स्वनामधन्यानां श्री, श्रीकृष्णवल्लभाचार्यस्वामिपादानां, सनातनहिन्दुधर्मसंरक्षणपराणि तद्वर्धकानि-च कार्याणि बहुकालादेव सन्त्यवगतानि ।

महाभागैरेभिर्न्यायसिद्धान्तमुक्तावल्याः किरणावलीटीकातः श्वेतायनसंहि-तान्तानां, संस्कृत-हिन्दी-गुर्जरेति त्रिभाषासूत्रे ग्रथितानां त्रिचत्वारिंशद् ग्रन्थ-पुष्पाणां गूढार्थसौरभयुताऽभिनवा माला विरचिता प्रसारिता च ।

अहों ! महदिदं भाग्यं देशस्य, यदेकत्रैव-न्याय-वेदान्त-सांख्य-योग-भक्ति-सिद्धि-कर्मतत्व-ब्रह्मतत्व-काव्य-पुराण-स्तोत्रादीनां प्रकाशनं प्रसारणञ्चैक एवायं महात्माऽकारि । तदर्थं हार्दिकमूभिनन्दनम् ।

श्रीमदन्नपूर्णा विश्वेश्वरौ सम्प्रार्थये यदेते महाभागाभविष्येऽपि बहूनि समाज-शिक्षापराणि नैतिकानि स्वात्मबोधकानि हिन्दुराष्ट्र-हिन्दुधर्म-हिन्दु-संस्कृति-संव-र्धकानि च कार्याणि कुर्वन्तो यशःशरीरेण वर्धन्तु, जीवन्तु, भूयश्च शरदः शता-दिति, मनसा कामयमानो—

वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालयीयो
वेद-प्राध्यापकः
श्रीक्षेत्रकाशीनिवासी वेदमूर्तिः
वामनदेवात्मजस्त्रिवेदाचार्यो विद्यावारिधिः

श्रीकृष्णदेवः

तिथि पौषशुक्ला पञ्चमी,
विक्रम संवत् २०३२
दि० ६-१-७६

डॉ० शिवप्रसाद भारद्वाज

शास्त्री, एम.ए., एम.ओ.एल्., पीएच्. डी.

साहित्याचार्य, साहित्यरत्न

पञ्जाब विश्वविद्यालय,

होशियापुर

(वी० आई० एस० एण्ड आई० एस०)

सन्देशः

अथ सुरभारतीसततसेवैकहेवाकिनां परम-विदुषां निरन्तरस्वाध्यायप्रवचन-तपोजुषां सारस्वतसरोऽवगाहनपूतात्मनां श्रीकृष्णवल्लभाचार्यप्रवराणां चिर-कालार्जितसंस्कृतोपासनाव्रतमुदीक्ष्य तेषामभिनन्दनाय ग्रन्थः प्रकाशयिष्यमाण आस्त इति विज्ञाय नितरां मोमुदीति चेतः। सम्पादकमण्डल्याः प्रौढिमानम-न्वीक्ष्य विद्वत्तल्लजवैदुष्यसारसंभृतो ग्रन्थोऽयं नियतं महापण्डितानामनुरूपम् अभिनन्दनं भविष्यतीति दृढमाशास्ते।

दिनाङ्कः १९-७-१९७६

भवदीयः

शिवप्रसादभारद्वाजः

आचार्य **श्री सत्यनारायण मिश्र**

व्याकरणसाहित्यायुर्वेदाचार्य, विद्यालङ्कार,

अनेकस्वर्णपदकलब्ध, साहित्यरत्न,

गुरुकुल महाविद्यालय संस्कृत-विभागाध्यक्षः

वैद्यनाथधाम

श्रीमान् तत्रभवान् अप्रतिमवैदुष्यदूषितविपक्षपक्षः कलानिधिरिव प्रसादित-जगन्मण्डलः धर्मोद्धारकः करुणावरुणालयः अगाधगम्भीरशेमुषीमुष्टाखिलखलकलमषः शङ्कर इव निरस्तकृत्रिमबौद्धवादः विजयतेतराम् पूज्यस्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः ।

भारतीयसंस्कृतेस्समुद्धाराय संस्कृतस्य चास्य महात्मनः दीर्घायुष्ट्वायवर्चसे ब्रह्मवर्चसाय बलाय च जगन्नियन्ता परमात्मा प्रार्थ्यते ।

दिनाङ्क २०-७-७६

सत्यनारायणमिश्रः

भगवान् दत्त मिश्रः

प्राचार्यः

राँचीस्थगणपतिराजकीयसंस्कृतमहाविद्यालयस्य

॥ श्रीः ॥

अद्य हि परमेश्वरस्य परमानुकम्पया विद्याव्रततपः पवित्रचरित्राणां महामहिममण्डितमानसानां गहनषड्दर्शनारण्यसञ्चारपञ्चाननानां सुरभारतीयसमाराधनसम्प्राप्तविविधविद्यामहाविभूतिविद्योतितान्तःकरणानां स्वनिर्मितद्वाचत्वारिंशदधिकनानाशास्त्रीयटीकारत्नैः सुरभारतीविग्रहश्रियमधिकमातन्वतां सनातनधर्मसंरक्षणैकव्रतिनामेकाधिकसप्ततिवर्षपरिमितमायुष्कालमनवरतममरभारतीग्रन्थाध्ययनाध्यापनमहापुण्यार्जनेन क्षपितवतां भारताभिजनानां महापुण्यफलोदयेनाद्यापि धृतविग्रहाणां निजामलधवलयशोराशिभिः शुक्लीकृतदिगम्बरतलानां महामहीयसां विद्वद्अग्रगण्यानां श्रीमतां पूज्यचरणानां कृष्णवल्लभाचार्यस्वामिपादानां समुपस्थितः पूजावसर इत्यमन्दानन्दसन्दोहभरेणपरिपूर्णहृदन्तरोऽहं श्रीकृष्णवल्लभाचार्यस्वामिपादानां सप्रणतिकमभिनन्दनं कुर्वाणः परमेश्वरं संयाचे तिष्ठन्त्वत्रैवभूतले सारस्वतसमाजमस्माकंस्वयशः सौरभैः समाजयन्तः श्रीकृष्णवल्लभाचार्याः शरदां शतमिति ।

श्रावणकृष्णप्रतिपद्
२०३३ वैक्रमाब्दे

भगवान् दत्त मिश्रः

Centre of Advanced Study in Sanskrit

UNIVERSITY OF POONA

GANESHKHIND.

POONA-7.

सुगृहीत नामधेयैः श्रिया विराजितैः पण्डित श्रीकृष्ण वल्लभाचार्यैः जनता-विद्यालयद्वारा आरब्धं भारतीय परम्परासंरक्षणकार्यं दृष्ट्वा महान् संतोषः समजनि। तेषां कार्यं उत्तरोत्तरं पुष्पितं फलितं भविष्यति इति मे द्रढीयान् विश्वासः। पण्डितवर्याणामानृण्यं संपादयितुं सर्वे विद्वांसः तेभ्यः साहाय्यं विधास्यन्तीति बाढमाशासे। परमेश्वरः पण्डितवर्येभ्यः श्रीकृष्णवल्लभाचार्येभ्यः शान्ति पुष्टि तुष्टि आयुरारोग्यमैश्वर्यं वितरतु।

शि० द० जोशी

UNIVERSITY OF MYSORE

Department of Post-Graduate Studies and Research in Sanskrit

Project : DICTIONARY OF ALAṄKĀRAŚĀSTRĀ

श्रीकृष्णवल्लभाचार्याणां विश्वविख्यातविदुषां विरचितपरस्सहस्रकृतिरत्नानां प्रातः स्मरणीयानां नाम्ना विद्यालयः प्रारभ्यमाणो विद्यत इति ज्ञात्वा मोमुद्यते-ऽस्माकं चेतः । धन्या गैर्वाणी वाणी या किलैतादृशानां विपश्चिदपश्चिमानां सपर्यां स्वीकरोति । सुकार्यमिदं सर्वविधं यशः प्राप्नोतु इति सादरं सभक्ति आशास्महे । गौरवग्रन्थश्च सुन्दरतमरूपेण प्रसिद्धो भूयात् ।

इति निवेदयति

नागराजः

The absolute light illumines the world in the form great Saints, great poet or great scholar. Sri Krishnavallabhacharya is a combination of a saint, poet and scholor. Gujarat is honouring itself by honouring this great Āchārya I pay my humbli respects at his feet H. V. Nagaraja Rao.

H. V. Nagaraja Rao

Research Assistant

Oriental Research Institue

Mysore

दैवज्ञ आयुर्वेद औषधालय

वैद्य शास्त्री व्रजलाल नानजी त्रिवेदी

वैद्याचार्य-भिषग्विभूषण

नमामि सहजानन्दं सर्वाऽवतारधारिणम् ।
मङ्गलं वः सदा कुर्यात् स्वामिनारायणो हरिः ।।

परमादरणीयाः सुरभारतीसमुपासका धर्म्याचारविचारसत्कार्यकार्यपरिशीलनचतुराः असंख्यजनमनोरथपूर्तिकल्पद्रुमाः साधुजनहितकारिसद्भावनाविकसितान्तःकरणा वेदान्त-दर्शनन्यायकर्ममीमांसादिशास्त्रसम्यगधीतहृदयाः श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदायमूर्धन्याः प्रति-क्षणप्रसन्नमानसाः साधुगुणगणविभूषिता दिव्याऽतिदिव्या भव्यातिभव्या विद्वद्गुणगणमण्डिताः श्रीकृष्णवल्लभाचार्यशास्त्रिस्वामिमहाराजा विजयन्तेतराम् ।

वन्दनीयाः स्वामिनः, वयं सर्वे जानीमो यद् बाल्यादेव सरलसौम्यसात्त्विकशान्तदान्त-स्वभावेन सच्छास्त्रपरायणा अत्रभवन्तो भवन्तः श्रीमन्तो धीमन्तस्त्यागवैराग्यशमदमादि सुवाससम्भृताः, संसारभोगादि तृणवन्मिथ्या विभाव्य भागवतधर्ममवलम्ब्य अहो अहर्निशं श्रीस्वामिनारायणसिद्धान्तम् अनुसृत्याऽनेकशास्त्राणि रचितवन्तः भृशं च प्रयतन्ते, इत्यस्माकं कृतेऽतीवाऽऽनन्दास्पदम् ।

किं वाऽधिकं ब्रूमः, महानुभावाः भक्तौ उद्धवा इव, धर्मे युधिष्ठिरा इव, प्रभायां भास्करा इव, शैत्ये सुधाकरा इव, गांभीर्ये सागरा इव, स्थैर्ये हिमाचला इव, क्षमायां धरित्रीसमाः, विचरणे नारदा इव, ज्ञाने शुकदेवा इव, भगवद्गुणसंकीर्तने व्यासा इव, यथा नातिशयोक्तिः ।

श्रीश्रीस्वामिगुणानुवादनिपुणो ज्ञानस्य गङ्गाधरः ।
संतप्तान् अतिलोभकामजनितैर्दुःखैर्भवाब्धौ सदा ।।
यः संतर्पयते कथामृतरसैर्व्यासो द्वितीयो यथा ।
कृष्णोऽसौ भगवत्प्रसादितमनाः संवर्धताम् श्रेयसे ।।
काश्यां यस्य विराजते सुमहिमा यः शास्त्रसिद्धान्तविद् ।
विद्वच्छ्रेणिषु यः सतां बहुमतः श्रीस्वामिनारायण ।।
श्रीसत्सङ्गिसुजीवनाख्यपरमग्रन्थाऽर्णवस्नातधी-
र्जीयात् कृष्णसुवल्लभार्य इह सः प्रौढप्रभाभासुरः ।।

इति शुभम्

त्रिवेदी-कुलजातेन व्रजलालेन शर्म्मणा ।
प्रशस्तयस्तु रचिता वैद्याचार्येण धीमता ।।

शास्त्री महाशङ्कर न. त्रिवेदी

वेदान्तशास्त्री, सांङ्ख्ययोगतीर्थ,

जामनगर

राजकीय संस्कृत पाठशाला,

काशीविश्वनाथ रोड

विद्वन्मण्डलीमण्डनायमानाः सद्धर्मधुरन्धराः स्वामिश्रीकृष्णवल्लभाचार्य-महाशयाः अये !,

अस्मिन् जगति चराचराणामाविर्भावतिरोभावौ कृतसदसत्कर्मवशान्नियतिनियोगाच्चावश्यम्भाविनाविति दृष्टचरम् । तत्र च सत्कर्मोदयाच्छुचौ श्रीमति चान्वये प्राक्तनयोगानुयोगादेतेषां महात्मनामाविर्भावः । क्रमेण चाशैशवादद्यावधि वाराणसीमुषित्वा सदुपासनयाऽन्नपूर्णाविश्वनाथाराधनेन निसर्गयाऽप्रतिमया प्रतिभया सद्गुरूणामनुकम्पया चानेकशास्त्रविद्याः सम्पाद्य तत्र तत्र चाचार्यपदवीश्चापाद्य, तत्रैव तदानीन्तनानां विदुषां मध्ये विद्यावाचस्पतिकल्पत्वं सम्पादयन्त आसन् अपरञ्च भगवतः श्रीस्वामिनारायणस्य दीक्षाशिक्षावशाद् वचनामृतकृतपाना नित्यतृप्ता, अ ः सांसारिकीं वासनां मृगमरीचिकामिव मन्वानास्त्यागतपश्चरणबलेन ब्रह्म-चरणे परमानन्दानुभवं स्वानुभूत्यैवाजस्रं भावयन्तो नित्यसहजानन्दा जीवन्मुक्तावस्थायां विहरन्तः स्थितप्रज्ञाः सन्तः सन्ति । त एते सज्जनानां मुदे स्वप्रकाशरूपं ज्ञानं उद्द्योतयन्तः किरणावल्यादि नामभिरनेकन्यायशास्त्रादिग्रन्थानां गहनत्वमपोह्य, तदानीन्तनानां वाराणसेयानां विपश्चिदपश्चिमानां मानसेषु हंस इवानन्दप्रमोदमाविर्भावयन्तो न केवलं नाम्ना कर्मणाऽपिच श्रीकृष्ण-वल्लभत्वं शास्त्रानुसाराचारादन्वर्थमाचार्यत्वञ्च यथायथं सम्पादयन्तः—"स्वामिश्रीकृष्णवल्लभाचार्या" नित्यमुक्ता अपि सत्सङ्गाय "सतां सद्भिः सङ्गः कथमऽपि हि पुण्येन भवती"ति भवभूतेर्वचनानुसारं विश्वेषां कृते भवभूतये भवन्तु ।

इत्यनवरतम्प्रार्थये भगवन्तं श्रीस्वामिनारायणम् ।

दि० ३०–१–७६ शुक्रः
गुजरात

भवदीयः शुभाकांक्षी
शास्त्री महाशङ्करत्रिवेदी

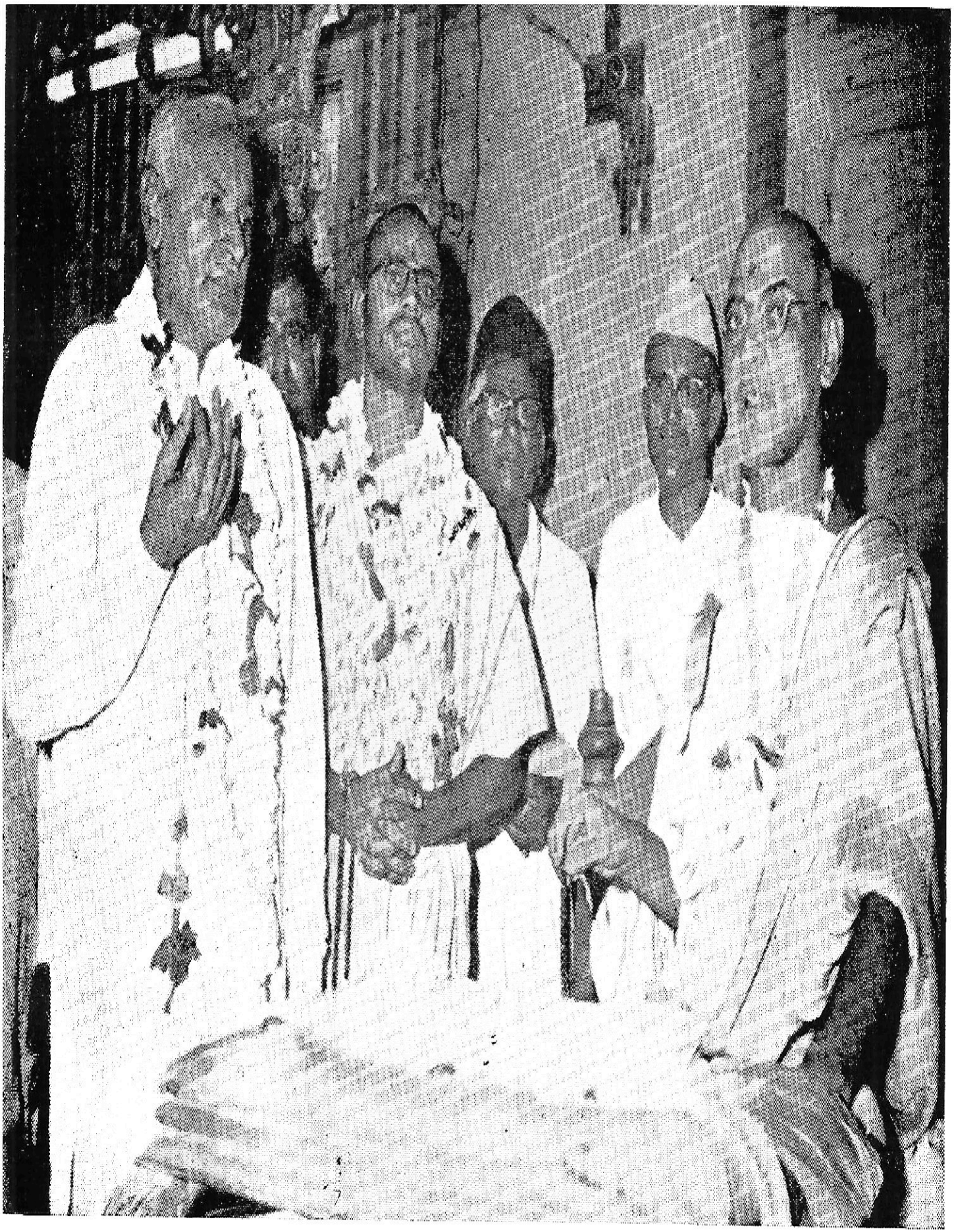

वेदमूर्ति-श्रीमहाशंकरशास्त्री यज्ञ में मन्त्रश्रावणपूर्वक श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी को अभिनन्दन दे रहे हैं
शास्त्रीजी भक्तिप्रियदासजी आदि उपस्थित हैं

(पृष्ठ २४)

पं० व्रजकान्त झा

प्रधानाचार्यः

श्रीकाशीविश्वनाथ सं० महाविद्यालयः,

एलिसब्रीज, अहमदाबाद ।

तत्रभवन्तो भगवन्त इव मान्या विविधविद्याविशारदाधिगशारदाः श्रीस्वामि-नारायणसंप्रदायप्रद्योतकाः न्या०-सि०-मु०-किरणावल्यादित्रयश्चत्वारिंशद्ग्रन्थानां निर्मातारोऽद्भुतशक्तिसम्पन्नलोकोत्तरचमत्कारकारि सहृदयहृदयसंवेद्यकाव्यनिर्माण-धिषणा अपूर्वमोक्षोपयोगिदेशनामतयो विगंस्यमानसंसृतिततयो विस्मृतवासना-संततयः सकलप्राणिहितकृतविविधप्रबन्धप्रकराः पण्डितप्रवरश्रीमत्कृष्णवल्लभा-चार्याः भारतेऽस्मिन् विश्वेषां मान्यत या पूज्यतया धन्यतया च विलसन्ति, इतिशम् ।

पं० व्रजकान्त झा

पण्डितहंसराजतोलारामकाव्यतीर्थः

आर्यज्योतिषकार्यालय, कलकत्ताः ।

श्रीस्वामिनारायणसंप्रदायना भूषणरूप पूज्यश्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ऐओ संस्कृतना प्रखर विद्वान छे, एमणे न्याय, दर्शनशास्त्र, तर्कशास्त्र, वगेरे अनेक ग्रन्थोनी टीकाओं अने टिप्पणियों करी छे अेमनी जेटली प्रशंसा करुं अेटली ओछी छे ।

"सुज्ञेषु किं बहुना"

भवदीयः

दिनाङ्कः
२७-१-७६

पण्डितहंसराजतोलारामकाव्यतीर्थः

शास्त्रिश्वेतवैकुण्ठदासः

प्राचीनन्यायाचार्य-वेदान्ततीर्थ-सांख्ययोगवारिधिः

स्वामिनारायण मन्दिर, वृत्तालय, वाया-नडीआद ।

श्रीमन्माननीय-महोदय-परमपूजनीयश्रीकृष्णवल्लभाचार्याणामेकोत्तरसप्तति-तमवर्षे शिक्षणसंस्कारमन्दिरोद्घाटनमथ चाभिनन्दनस्मृतिग्रन्थप्रकाशनं भविष्यति, तत्समये प्रसिद्धतरपण्डितानामुपस्थितिर्भविष्यति, अनेन कार्येण समग्रविद्वत्समुदायानामानंदातिशयोऽद्वितीयो भविष्यतीति मन्येऽहम् ।

जगति महासमर्थविदुषामभिप्रायप्रकाशनकार्येण महाशयानां समुत्कर्षसाधितं तत्सर्वथा योग्यमेव ।

परमपूजनीय-वन्दनीय - प्रातःस्मरणीय - समग्रवेदशास्त्रपुराणादितत्वज्ञातृत्वात्सर्वज्ञ - तुल्यविद्यमानमहाशयपण्डितप्रवरश्रीमच्छ्रीकृष्णवल्लभाचार्याणाम् सहस्रशोऽभिनन्दनं क्रियते, महनीयकीर्तिमहाशयैः न्यायसिद्धान्तमुक्तावल्याः किरणावलीतर्कसंग्रहदीपिकायाः किरणावल्याद्यारभ्य श्वेतायनसंहितापर्यन्तम् त्रिचत्वारिंशत् ग्रन्थाः सम्पादिताः, अनेन कार्येण खल्वनुमीयते "नेमे महानुभागाः मनुष्याः किन्त्वक्षरमुक्ता एव, मनुजशक्त्यतिरिक्तग्रन्थ-विचरितत्वात्, अथवाऽपरो व्यासः इव दरीदृश्यते जनसमूहैः, महानुभावानामेकोऽपि ग्रन्थः पण्डितप्रवरमण्डलीनामाश्चर्यपूर्वकाह्लादजनकः नास्तीति न, किन्तु सर्वेऽपि ग्रन्थाः तत्त्वाधायकत्वात् आबालादारभ्य महामहोपाध्यायपण्डितप्रवराणामप्यानन्दकरा एव विवादकर्तृणाम् पण्डितानामग्रेभयङ्कराः जिज्ञासूनामग्रे संशयनाशकत्वात् शान्तिकराश्च तस्मात् सूर्यचन्द्रमसाविव संतापशान्तिकराः प्रकाशन्ते महानुभावाः । विज्ञानाधिष्ठात्री-सरस्वत्याः समुपासकाः बहवः पण्डितास्सन्ति परञ्च तस्याः सारभूतं तत्त्वन्तु जीर्णदुर्गस्थ-ब्रह्मनिष्ठ-ब्रह्मचारिश्रीबालकृष्णानन्दमहाशय-वटपत्तनस्थसंस्कृतमहाविद्यालयपण्डितमहाशय-काशिस्थक्विन्सकालेजस्थपण्डितेभ्यः अहर्निशं सतताभ्यासेन समग्रशास्त्राब्धिमन्थनेन

शेषं अपरपृष्ठे द्रष्टव्यम्

दुग्धाब्धेरमृतमिव गृहीतम् श्रीमद्भिः। गृहीततत्त्वज्ञानविद्युद्दीपरूपसत्सङ्गिजीवन-वचनामृतादिग्रन्थसमुदायकथाप्रकाशनेन जगति मनुष्यसमूहानामन्तःकरणस्थाऽनाद्यविद्याजनित-महामोहान्धकारः विनाशितः, तेन धवलीकृतानि भूमण्डलानि महाशयैः। असंख्येयगुण-गणसमलंकृतानां पण्डितवर्य्यमहाशयश्रीकृष्णवल्लभाचार्य्याणाम् गुणगणनां कर्त्तुमसमर्थोऽहम् गुणानामानन्त्यात्। सर्वान्तरात्मश्रीस्वामिनारायणभगवदनन्योपासनेन भगवन्निष्ठगुणा-नामाविर्भावात् अनैकान्त्यपि कार्याणि श्रीमद्भिः क्रियन्ते। वृत्तालयश्रीलक्ष्मीनारायणदेव-पीठाधीश्वराचार्यवर्य्याणाम् पुत्रविवाहसमये पण्डितसभायां भवदीयशास्त्रजनितज्ञानविलासं दृष्ट्वा पण्डितसमूहैः "वैष्णवविद्वत्सार्वभौम" पदवी दत्ता। भवदीय "कविकाव्यगौरवम्" दृष्ट्वा वाराणसेयसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य सम्मानितप्राध्यापकश्रीमच्छ्रीन्यायाचार्य-श्रीशिवदत्तमिश्रेणाऽपि श्रीकृष्णवल्लभाचार्यशास्त्रिमहोदस्यापि अपूर्वं वैदुष्यं प्रतीतिविषयं प्रतिभाति" इति कथितम्। तद्वत् बहवः पण्डिताः भवदीय-पाण्डित्यं प्रसंशन्ति। जातौ जातौ यदुत्कृष्टं तद्धि रत्नं प्रचक्षते। पण्डितेषु पण्डितप्रवरः, साधुषु साधुशिरोमणिः, व्यवहारदक्षेषु व्यवहारनिपुणतमः, इत्याद्यसर्वगुणश्रेष्ठत्वम् भवत्सु विद्यत एव-तस्मात् भवताम् सहस्रशः धन्यवादैः सहाभिनन्दनम् करोम्यहम्।

विदुषामनुचरः

शास्त्रिश्वेतवैकुण्ठदासः

श्रीशङ्करप्रसादव्यानार्जी

न्यायतर्कवेदान्ततीर्थः देवशर्मा

खड्गपुरमहाविद्यालये संस्कृतविभागीयप्रधानाध्यापकः,

पो०—खड्गपुर, निवास स्थान—अलिगंज,

जिला—मेदिनीपुर, प० व०।

महाभागाः !

भवत्कराङ्कितां लिपिकामवाप्य अहमतिमात्रम् आनन्दितोऽस्मि। भवद्भिः सर्वशास्त्रपारङ्गतानां पण्डितश्रेष्ठानां श्रीकृष्णवल्लभाचार्याणां स्मारकरूपेण कश्चिदभिनन्दनग्रन्थः प्रकाश्यते—इति संवादपाठेन मदीयश्चेतः कीदृशं मोदते तदस्यां लिपिकायां न प्रकाशयितुं शक्नोमि। अयं खलु पण्डितप्रकाण्डो न्यायवेदान्तसांख्यमीमांसादर्शनेषु पारं गतः। दार्शनिकतत्त्वेषु साहित्यिकचमत्कारित्वसमावेशेन हृदयग्राहितया वर्णनं महाभागस्य प्रधानतमं वैशिष्ट्यम् आसीत्। यथा स्वपक्षस्थापने तथा परपक्षखण्डनेऽपि विलक्षणं परिलभ्यतेऽस्य सुनिपुणं सामर्थ्यं सर्वत्र।

भवतामेतादृश उद्योगः सर्वेषां प्रशंसास्पदम्। अहमपि सानन्दम् अभिवादये भवन्तम् इति।

निवेदयति—

श्रीशङ्करप्रसादव्यानार्जी

स्वामी रामेश्वरानन्दाचार्यः

वेदान्त-व्याकरणाचार्य-साहित्यरत्नभूषितः,

श्रीरघुवररामानन्दवेदान्तमहाविद्यालयः,

श्रीकोसलेन्द्रमठ, अहमदाबाद–७

तथा

श्रीरघुवरसंस्कृतमहाविद्यालय, विश्रामद्वारका, श्रीशेषमठ,

शींगडा (सौराष्ट्र)।

अचाक्षुषीकृता अपीमे जगति सत्सिद्धान्तानादिवैदिकविशिष्टाद्वैतमतसंरक्षण-परकानेकग्रन्थरचनाचणाश्चेतिश्रुतचराः स्वामिनारायणाश्रिताः पण्डितप्रवर-श्रीकृष्णवल्लभाचार्याः। स्वसम्प्रदायीयमतस्थापनपरका एभिः सम्पादिताः केचन-ग्रन्थाश्चाक्षुषी जाताः।

जगद्गुरुश्रीपुरुषोत्तमाचार्यबोधायनप्रवर्तित आनन्दभाष्यकारजगद्गुरुश्रीरामा-नन्दाचार्य-श्रीभाष्यकारजगद्गुरु-श्रीरामानुजाचार्यप्रभृतिसदाचार्यसम्वर्धितविशिष्टा-द्वैतमतरक्षणव्याजेन सनातनधर्मरक्षणदीक्षितानामेतेषामभिनन्दनं सामयिकतामेव भजते।

श्रैमत्कोऽभ्युदयकाम्यकामुकः—

स्वामी रामेश्वरानन्दाचार्यः

श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यः

श्रीस्वामी यतिराज रामप्रपन्नाचार्ययोगीन्द्रः

श्रीस्वामी रामानन्दपीठाधीश्वर षड्दर्शनकेसरी (शृङ्गपुर)

पो. मु. शेषमठ शींगड़ा (विश्राम द्वारका) वाया पोरबन्दर ।

पण्डितवर श्रीकृष्णवल्लभाचार्यस्वामी, स्वामिनारायणसम्प्रदाये-दार्शनिक-जगति चैकंविशिष्टं स्थानं भजते । पाश्चात्यसंस्कृति-संस्कारसमज्जनशीलेऽप्याधुनिककालेऽनादिवैदिकसत्सिद्धान्तविशिष्टाद्वैतसंरक्षणचतुरोऽनेकग्रन्थप्रणयनतत्परश्चेति - महान् प्रमोदविषयः ।

अखिलब्रह्माण्डनायकश्रीरामचन्द्रोऽस्मै दीर्घायुषंसद्धर्मसंरक्षणक्षमताञ्च प्रदद्यादिति कामये ।

आचार्यः

योगिराजः

शास्त्री वासुदेवप्रसादः त्रिभुवनशङ्करात्मजः पण्ड्या

प्राचार्यः, श्रीडाकोर संस्कृतपाठशालायाः

डाकोर, गुजरातराज्य, जि०-खेडा ।

श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदायस्थपण्डितप्रकाण्डश्रीकृष्णवल्लभशास्त्रिविषये किञ्चित् प्रत्यक्षतः प्राप्तदर्शनानां श्रीमतां 'कुङ्कावाव' स्थ हायरसेकण्डरीस्कूलप्राध्यापकाना 'म्मनु भाई' शाहमहोदयानां स्मारकहेतुत्वात् सञ्जातस्मरणोऽहम्, 'श्रीमत्कृष्णवल्लभा'चार्य-महोदयानाम्विषये प्रपतितप्राक्तनकालाध्ययनवेलाजनिततन्महाशयपूर्वाध्ययनकालिकाध्यय-नादिप्रवृत्तिप्रवृत्तमानसव्यापारविषयिणीं स्मृतिं यदा कलयामि, मन्ये पूर्वतनाध्ययनकाले वाराणस्यामेव तैः साकमेकस्थानसम्मेलन-शास्त्रीयचर्चादिव्यापारम्प्रत्यक्षीकरोमि ।

सर्वदा ते स्मितपूर्वां वाचमाकलयन्त एव अपरसहाध्यायिभिः साकम्प्रगल्भतरां वाणी-मुत्किरन्तः सन्तः सविस्मयान् व्यधुः श्रोतॄन् ।

तदानीमेव च ते अध्ययनेन साकं स्वपाण्डित्यं किरणावलीनामकटीकायुक्त-'सिद्धान्तमुक्तावली' विधानेन परिचाययन्ति स्म एतेषां सहयोगे प्रायः, ऐशवीयाब्दसप्त-१९४२ तः पूर्वमेव मद्भाग्यतो दूरीभूते, अद्य चतुस्त्रिंशदधिकवर्षाणि व्यतीतानि, स्मरणन्तु यदा कदापि भवति स्म किन्तु प्रत्यक्षविषयतामद्यापि ते न याता इति चेखिद्यते मे मनः, तथापि महाशयकृतनैकटीकासमलंकृतपुस्तकदर्शनेन, तथैव च स्वकृतटीकासमुल्लसितानि भिन्नभिन्नज्ञानप्रदपुस्तकानि मुद्रयित्वा प्राकाश्यन्नीतानि ज्ञात्वा तु तेषामेव प्रत्यक्षं दर्शन-म्मन्यमानो धन्यमात्मानम्मन्ये ।

इति अलमतिविस्तरेण, सूर्यस्य बहुगुणकथनवत् इति

निवेदकः—

वासुदेवशास्त्री

SANJEEVAN BHAWAN

(An idial institution for every medical treatment)

Dr. G. P. Sharma Suvedi H. M. A., M. A. M. S. (Honours)

Ayurved Vijñānacharya, Bhishagacharya, Vaidyaratna, Kaviraj.

(Registered by India Government)

सुगृहीतनामधेयानां पण्डितवर्यश्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहोदयानां चत्वारिंशतोऽधिकानां ग्रन्थरत्नानां समये समये प्रकाशपथमायातानां मयावलोकनमकारि।

एते महानुभावाः सुरभारतीवरिवस्यामहाव्रते बहुकालादेव दीक्षिताः सन्तीति परमसन्तोषमावहति नश्चेतसि।

एतादृशा महाभागा एतादृशानादर्शकार्यकलापान् प्रकुर्वन्तः प्रथयन्तश्च यशांसि रुचिरं मङ्गलोदयभाजो भूयासुरिति कामये।

गोविन्दप्रसादशर्मा सुवेदी

वेदभवनम्

सं० सं० वि० वि०, वाराणसी

दिनाङ्क
३-१-७६

विद्वद्वरेण्यानां श्रीमत्कृष्णवल्लभाचार्यमहोदयानां गुणावली,–
पञ्चतीर्थोपनामानः मत्परिचितास्तेषां सर्वथा सुप्रतिष्ठां कामयमानाः

श्रीसिद्धेश्वरमुखोपाध्यायदेवशर्माणः

प्राच्यविभागीयकाव्यालङ्कारशास्त्राचार्याः

राष्ट्रीयसंस्कृतमहाविद्यालयतः

विद्वद्वरेण्याः श्रीमत्कृष्णवल्लभाचार्यमहोदयाः सतीर्थरूपेणाध्ययनकालमारभ्यास्मत् सुपरिचिताः। न्यायाचार्यणामेतेषां न केवलं न्यायशास्त्रीयग्रन्थेष्वेव पाण्डित्यमपि तु सांख्यवेदान्तमीमांसाप्रभृतीनां दर्शनशास्त्राणामध्ययनाध्यापनपरम्परया तथा बहुनां दार्शनिकग्रन्थानां रचनया चानन्यसाधारणमस्य वैदग्ध्यं सर्वत्रैव भारतीयविद्वद्गोष्ठीषु प्रसृतं वर्त्तते। एतेषां महात्मनां भारतीयसंस्कृतेस्तथा शास्त्रीयसम्प्रदायपरम्परायाः परिरक्षणाय महानुद्योगः समनुभूयतेऽस्माभिः। अतः खलु जनकल्याणाय जुनागडप्रान्तीय'कुंकावाव'नामधेयजनपदे भारतीयसंस्कृतेरनुकूलायाः सच्छिक्षायाः प्रवर्तनाय कस्यचित् कलाविषयकमहाविद्यालयस्य स्थापनमत्यावश्यकमतस्तत् सम्पूर्तये भारतीयनागरिकाणां तथा राष्ट्राधिकाराणाञ्च यथा सम्यगुद्योगो भवेत्तत्र तेषां शुभदृष्टिराकृष्यते।

दिनाङ्कः
२-१-७६

श्रीमधुसूदनभट्टाचार्यः, न्यायाचार्यः
प्रोफेसर, संस्कृतकालेज, कलकत्ता।

श्रीराजेश्वरशास्त्री द्राविडः

(काशीराजगुरुः)

प्रधानाचार्यः

साङ्गवेदविद्यालयः,

रामघाट, वाराणसी ।

श्रीस्वामिनारायणसंप्रदायाचार्याः आचार्यवराः वर्णाश्रमधर्मपरिरक्षणार्थं सर्वथा बद्धपरिकराः सन्ति इति अहमदाबादनगरे जाते अखिलभारतीयवर्णाश्रम-स्वराज्यसंघस्याधिवेशने तत्रसम्मिलितानां आचार्यवराणां दर्शनेन मया समनुभूतम् । आशास्यते चाग्रे एतेषां साहाय्येन विद्यारक्षणं धर्मरक्षणं च भविष्यति । अतः एतद् संप्रदायाश्रितानामस्मत् सतीर्थ्यश्रीवामाचरणभट्टाचार्य-सविधे सम्यगधितन्यायशास्त्राणां श्रीकृष्णवल्लभाचार्याणामभिनन्दनसमप्रभः हृदयेन अनुमोद्यत इति ।

श्रीराजेश्वरशास्त्री द्राविडः*

---

* अतीव कष्टकरं वृत्तं यत् अस्य महानुभावस्य होलिकोत्सवदिवसे गोलोकवासोऽभूत् ।

अयोध्यानाथशास्त्रिव्याकरणाचार्यः

रीडर, संस्कृतविभागीयो

वर्धमानविश्वविद्यालयस्थः

श्रीमतां कृष्णवल्लभाचार्यमहाभागानां प्रथितयशस्कानां महात्मनां सौराष्ट्र-प्रदेशे गृहीतजन्मनां सर्वशास्त्रेषु विशेषतो न्यायादिदर्शनेषु समुपलब्धवैदुष्याणां विरचितविविधनिबन्धानां जनकल्याणार्थं लोकसेवार्थञ्च सततसन्नद्धानां सदिच्छया कुंकावावजनपदे के० वि० महाविद्यालयनाम्नीया संस्था स्थापिता, भाविनिकाले तदीया समृद्धिर्भवेदिति भगवन्तं मुहुर्मुहुः प्रार्थये शमिति ।

दिनाङ्कः ३।१।७६

अयोध्यानाथशास्त्रिव्याकरणाचार्यः

ॐ नमोनारायणाय

श्रीश्रीमोहनतर्कवेदान्ततीर्थशर्मा

महाचार्यविभाग–न्यायादिदर्शनाध्यापकः

कलकत्ता संस्कृत कालेज

विद्वत् कुललालामभूतानां श्रीमतां कृष्णवल्लभाचार्य महोदयानां विविध-शास्त्रेषु विशेषतः षट्सु दर्शनेषु पाण्डित्यं तथा तदीय शिक्षाप्रचारविषये नैपुण्य मुपलभ्य वयमतिमात्रं तृप्ताः स्मः। भगवत् कृपया इमे महाभागाः रुचिरं जीवन्तु जनकल्याणाय च आत्मानं समर्पयन्तु, इति प्रार्थयामहे।

कलकत्ता
२–१–१९७६

श्रीश्रीमोहनतर्कवेदान्ततीर्थशर्मा

श्रीआशुतोषभट्टाचार्यन्यायवैशेषिकाचार्यः

संस्कृत कालेज कलकत्ता

अध्यक्ष–नवद्वीप गवर्नमेंट संस्कृत कालेज

श्रुतपूर्वाणां पण्डितवर्याणां श्रीकृष्णवल्लभाचार्य–शास्त्रिमहोदयानां न्यायादि-शास्त्रेषु बहूनां ग्रन्थानां नवीनटीकाकरणेन तथा तद्ग्रन्थप्रकाशनद्वारा संस्कृतानुरागाणाम् सहायकरणेन तथा आनन्दवर्धनेन च परमप्रीतकः न्यायवैशेषिकाचार्यः आशुतोषभट्टाचार्यः भगवत्समीपे स्वामिवर्याणाम् दीर्घायुषं तथा ग्रन्थप्रकाशनाधिक-चातुर्यम् प्रार्थयतीति ।

दिनाङ्कः
२–१–७६

श्रीआशुतोषभट्टाचार्यः न्यायवैशेषिकाचार्यः

॥ श्रीस्वामिनारायणपादाम्भोजरजो विजयेतमाम् ॥

मंछारामोद्विवेदः

भारतीयविद्याभवनान्तःपाति मुंबादेवी संस्कृतमहाविद्यालय-व्याकरणादि-
प्राध्यापकः श्री अक्षरपुरुषोत्तम (स्वामिनारायण) संस्कृतपाठ-
शालीय-प्रधानाध्यापकः नव्यव्याकरणवेदान्ताचार्यश्च

नाश्रितः सहजानन्दो नदृष्टं वचनामृतम् ।
नाराधि ब्रह्मपादाब्जं वृथा तज्जन्मभूतले ॥

अभिमान्याः सकलशास्त्रपारावारीणाः, परमहंसपरिव्राजकाः श्रीकृष्णवल्लभाचार्याः !

खेलार्हे शैशवकाले विषयान् विषसमान् कृत्वा तात्पादगृहं दुःखगृहं मत्वा कषायोच्चयोत्पाटनपटीयसीं श्रीस्वामिनारायणीयां दीक्षां गृहीत्वा विशिष्ट पाण्डित्यार्थं वाराणसीमधिश्रित्य नव्यन्यायादिपारदृश्वनां महाविदुषां चरणपद्मचञ्चरीकत्वं लब्ध्वा गौतमीये काणादे पातञ्जले जैमिनीये कापिले च तन्त्रे अनेकानाचार्याद्युपाधीन् अनुपमं वैदुष्यं च करतलीकृत्य अधीतिबोधाचरणप्रचारणै "रितिसिद्धान्तमुररीकृत्य न केवलमन्तेवसतामुपकाराय अपितु महाविदुषामिष्टावाप्तये स्वोपज्ञान् तर्कसंग्रह-सांख्यतत्त्वकौमुदी-न्यायसिद्धान्तमुक्तावलिविलसत्किरणावलिटीकाग्रन्थान् वेदोदिताक्षरसिद्धान्तप्रतिपादकगुणातीत ब्रह्मोपनिषद्-ब्रह्मरसायनभाष्य-अखिलभूमण्डलमुक्तिव्यवस्थाप्रभृतीनाकरग्रन्थान् जीवेश्वरमायाब्रह्मपरब्रह्मभेदप्रतिपादनपुरस्सरविशिष्टाद्वैतेऽपि ब्रह्मविशिष्टाद्वैत-प्रतिपादकाँल्लेखविशेषान् । श्रीसहजानन्दस्वामिनां निगमोदितसर्वावतार अवतारित्वम्' इति निर्णायकान् महानिबन्धग्रन्थान् अन्याँश्च भाष्यविशेषान् प्रकाश्य समस्तस्य जगतो महोपकारमचीकरन् अत्र भवन्तो भवन्तः ।

पर्यन्ते च ऐकान्तिकधर्मप्रचाराय प्रसाराय विरञ्चिजा विस्तराय च भवद्भ्यः सनैरुज्यं दीर्घायुष्ट्वं प्रदाय भवादृक्षानन्यानपि सम्प्रदायोदयार्थं समुत्पादयेन् निखिलकल्याणगुणगणाकरश्रीहरिरितितमभ्यर्च्य विरमति ।

भवदीयो

मंछारामोद्विवेदः

देवस्वरूपमिश्रः

आचार्य एवं अध्यक्षः एवं छात्रकल्याण-संकायाध्यक्षः,

संम्पूर्णानन्द-संस्कृत-विश्वविद्यालयः, वाराणसी ।

तत्रभवतो भवतो भव्यान् श्रीमद्दार्शनिकपञ्चाननान् षड्दर्शनाचार्यान् नव्यन्यायाचार्यान् साङ्ख्ययोगवेदान्तमीमांसातीर्थान् पाण्डित्यप्रकर्षप्राप्तदिगन्तविश्रान्तधार्मिकत्वप्रयुक्तोत्कृष्टत्व-प्रकारकनानादिग्देशीयलोकसमयेतज्ञानविषयतालक्षणलक्षितकीर्तिविशिष्टान् शास्त्रार्थकला-दशान्—

वदनं प्रसादसदनं सदयं हृदयं सुधामुचो वाचः ।
करणं परोपकरणं येषां केषां न ते वन्द्याः ।। इति

वन्दनीयगुणगणगौरवविभूषितान् श्रीकृष्णवल्लभाचार्यस्वामिमहोदयानहं चिरात्परोक्षतोऽपरोक्षतश्च जानामि । तत्र 'व्याकरणेहि गुणं वृद्धिर्बाधते न सत्पुरुषेषु' इत्यभियुक्तोक्तेः पूर्णलक्ष्यता स्वामिवर्येष्वेवास्माभिर्दृष्टा । विद्यायां सत्यामपि तस्याः केचनान्येपि गुणा अपेक्षिता भवन्ति । तथा चोक्तम्—

शतेषु जायते शूरः सहस्रेषु च पण्डितः ।
वक्ता शतसहस्रेषु दाता भवति वा नवा ।। इति

कारिकोक्ता अशेषगुणस्वामिवर्येषु विराजन्तेतराम् । केचन लोकोत्तरशेमुषीका अपि वैदुष्यपण्डिता अपि लेखनकलाशून्या दरीदृश्यन्ते । किन्तु स्वामिवर्यैः नहि केवलं न्यायशास्त्रमेवैकमधिकृत्य किन्तु विविधविषयानाधिकृत्य रचितो महान् महान् निबन्धः । न्यायमुक्तावल्याः किरणावली कस्य सचेतसो न्यायसंस्कारवतो मनांसि नावर्जयति । श्रीहरिवाक्यसुधासिन्धु-ग्रन्थे भूमिका भूमिकामवति स्वामिनारायणसम्प्रदायस्य । प्रामाण्यवादस्य दुष्करस्य सर्वदार्शनिकमतभेदभिन्नस्रोतसो यादृशं स्वरूपं स्वामिवर्यैः आदित्यनाथझामहोदयानामभिनन्दनग्रन्थेऽन्यत्रा निर्दिष्टं निर्दिष्टं तेन महानुपकारः कृतो दार्शनिकलोकस्य ।

तादृशानां यत्र नियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधिसमासादितनिरन्तरनीरन्ध्रनिर्यातमणिमयूखवदेकाकाराकारितमनोवृत्तिविशेषरूपभक्तिभरितान्तःकरणानां श्रीमद्भगवच्चारुचरितचिन्तनैकतानतायामेव लोकोत्तरचमत्कारकारिविगलितवेद्यान्तरसंस्पर्शपरिपूर्णानन्दानुभूतिभाजां परोपकारैकव्रतानां संस्कृतसंस्कृतिसंरक्षणैकपरायणानां वन्दारुसंसारविद्रावणप्रदारणैकदक्षाणां स्वामिश्रीकृष्णवल्लभाचार्याणामभिनन्दनं विधायाभिनन्दनमिति स्वयमेवाभिनन्दिता भवितेति मन्ये । स्वामिवर्याणां दीर्घायुष्यं नैरोग्यञ्च भवानीजानिः श्रीभगवान्विश्वनाथः प्रददात्विति प्रार्थयन् विरमति ।

दिनाङ्कः
७-१-७६

देवस्वरूपमिश्रः

श्रीकृष्णलालजी की फ्रान्स के कार्यालय-प्रतिनिधियों से भेंटवार्ता ।

(पृष्ठ ४०)

साधुः भक्तिप्रियदासः

श्रीस्वामिनारायण (अक्षरपुरुषोत्तम) संस्कृतपाठशाला
"अक्षर भवन"
१६, लखमसी नपु रोड, दादर, (से० रेल्वे०)
बम्बई नं० १४. डी० डी०

अनन्तकल्याणगुणगणनिधयः पूर्णपुरुषोत्तमनारायणाः श्रीस्वामिनारायणाः श्रीसहजानन्दस्वामिनः सर्वोपरिभगवन्तः नैककोटिजीवानां समुद्धरणार्थं कल्याणाय च प्रकटिता इह भूमौ साक्षराः, समुक्ताः, सैश्वर्याः, सपार्श्वदाश्च । तैः सर्वोपरि सम्प्रदायः स्थापितः, सर्वोपरि आचार्याः, सर्वोपरि मन्दिराणि च प्रतिष्ठापितानि ।

भगवत्स्वामिनारायणाश्रिताः लब्धगुरुकृपाः नव्यन्यायवेदान्तसांख्यादिविषयेषु लब्धाचार्यपदविकाः षड्दर्शनाचार्या अद्वितीयाः विद्वद्वर्याः श्रीकृष्णवल्लभाचार्याः अनुपमवैदुष्येणानन्यगुणगौरवेण विख्यातनामानः । एते प्राज्ञवरा भगवत्स्वामिनारायणसिद्धान्तानुसारेण सम्प्रदायज्ञानविस्तरणार्थं विविधशास्त्राणां स्वोपज्ञान् ग्रन्थान् विरचय्य न केवलं स्वामिनारायणसम्प्रदायस्यैवापि तु विश्वसंस्कृतसमाजस्य महान्तमुपकारं व्यधुः ।

अस्माकं पाठशालायाः छात्रैः सहातिपरिचिताः श्रीकृष्णवल्लभाचार्यस्वामिनः तत्वज्ञानन्यायादिविषयाणां प्रश्नानां प्रत्युत्तराणि प्रेमपूर्वकं संतोषकारकं कुर्वन्तीति स्ववैदुष्यगुणस्य सारल्यमपरिचितानामपि पुरस्तादनायासेन प्रख्यापयन्ति ।

श्रीस्वामिपादैः तत्वज्ञानसम्बन्धिशास्त्रेषु भगवतः स्वामिनारायणस्य ब्रह्मपरब्रह्मणोः, आत्मपरमात्मनोः, अक्षरपुरुषोत्तमयोः सर्वोपरिसिद्धान्तो, रहस्यं विशिष्टाद्वैतेऽपि ब्रह्मविशिष्टाद्वैतत्वञ्च प्रतिपादितमस्तीति मुमुक्षूणां कृते महदुपकारकमस्ति ।

सम्प्रदायस्यान्येषां च कृते परमोपयोगिनीं सेवां कर्तुं भगवन्तः स्वामिनारायणाः स्वामिपादान् वर्षशतं सकुशलं स्थापयेयुरिति शुभेच्छया विरमामि ।

साधुः भक्तिप्रियदासः
(वेदान्ताचार्यः वाचस्पतिः)
प्रधानाचार्यः
श्री अक्षरपुरुषोत्तम संस्कृतपाठशाला
दादर-मुम्बापुरी–४०००१४

अक्षरभवनम्
बृहस्पतिवासरः
दिनाङ्कः १–१–१९७६

॥ धर्मो रक्षति रक्षितः ॥

क० न० वरदराजय्यङ्गार्यः

सम्पादकः—"सुधर्मा"

५६१, रामचन्द्र अग्रहारम, मैसूर—४

तच्छंयोरावृणीमहे

सुगृहीतनामधेयानां पण्डित श्रीकृष्णवल्लभाचार्याणां गीर्वाणभाषायाः अनेक-ग्रन्थरचयितृणां प्रातःस्मरणीयानां पवित्रनाम्नि तेषां जन्मभूमौ कलावाणिज्य-विद्यालयः कश्चन प्रारप्स्यत इति श्रुत्वा सोमुद्यतेऽस्माकं चेतः। संस्कृतस्वाभि-मानिनः देशेऽतीव विरलाः। ग्रन्थलेखकाः दुर्लभाः प्रकाशनं तेषां ग्रन्थानां दुरावहम्। प्रकटिता अपि ग्रन्थाः। अध्येतारः नैव सन्ति। एवं सती तत्रभवतां तेषां श्रीकृष्णवल्लभाचार्याणां पाण्डित्यं संश्लाघ्य पण्डितवर्याणां तेषां नाम्नि विद्यालस्यारम्भं, सच्चिकाप्रकाशनं चोद्दिश्यतां सदुद्देश्याः सफला भवन्तु इति भगवति श्रीकान्ते प्रार्थयामहे। सुमहति कार्येऽस्मिन् वयमपि लब्धावकाशा इति व्यवस्थापकेभ्यः हार्दं कार्तज्ञ्यं च सूचयितुमपेक्षामहे।

दिनाङ्कः २९-१२-१९७५

क० न० वरदराजय्यङ्गार्यः

श्रुतम् मे गोपाय

श्रीगुरुगणेशः

बटुकनाथशास्त्री खिस्ते

सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय

वाराणसी–२२१००२

श्रीमतां विविधविद्याम्भोधिपारदृश्वनां न्यायविद्यावाचस्पति–पण्डित-प्रवर–वामाचरणभट्टाचार्यमहाशयेभ्यः समधिगतशास्त्ररहस्यानां स्वामिनारायण-सम्प्रदायपरमाचार्याणां भगवदनुरागसंवर्धनसमनुगृहीतभक्तवृन्दानां श्रीश्रीकृष्ण-वल्लभाचार्यमहाभागानां दिगन्तदन्तावलमौलिमण्डलीमालिकामिव यशःकुसुमावलीं श्रावं श्रावं परमानन्दमेदुरीभावं बिभर्ति सकला सुरसरस्वतीसेवकमण्डली ।

गुर्जरजनमण्डनायमान 'कुंकावाव' स्थाने च तेषां वैदुष्यतपःप्रभृतिगुणगणैरा-वर्जित स्वान्तैः प्रशान्तैर्महाजनैर्महाविद्यालयोऽपि निर्मापयितुमुपक्रम्यत इति निशम्य परमं प्रमोदमनुभवामः ।

आचार्यवर्याणामेतेषां शतशो ग्रन्थनिर्माणनैपुणी व्याख्यानवैदुषी, सम्प्रदाय-समुन्नीषा च विश्वेषां भद्राय भूयो भूयादित्येव काशीपतिं भगवन्तमभ्यर्थयामहे । इति ।

दिनाङ्कः ६–१–७६ **बटुकनाथ शास्त्री खिस्ते**

डॉ० श्रीगोपालचन्द्रमिश्रः

आचार्य-वेद-धर्मशास्त्र-मीमांसा, एम्० ए०, पी-एच० डी०

प्राध्यापक एवं अध्यक्षः—वेदविभागः

श्रीस्वामिनारायणाचार्यसम्प्रदायसमाश्रितान् पण्डितवर्य-श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहाशयान् को नाम भारतीयो दार्शनिकः संस्कृतशास्त्ररसिको न जानीयात् ।

महानुभावो ह्ययं शास्त्रतत्वमर्मज्ञः स्वलेखिनीलिखितविचारसमीकृतबहुग्रन्थग्रन्थिः, वयसा वृद्धोऽपि कर्मण्यवृद्धः, अस्तमानेन्द्रियोऽपि यशसा सदाकालमनस्तमितः, धृतविरागोऽपि भगवति प्रवृद्धानुरागः, कृतन्यासोऽपि ग्रन्थसम्पादनेषु स्वीकृतबुद्धिव्यासः, स्वभावतो धीरोऽपि नवनवतत्वविस्फारणे सदा अधीरः, भारतवर्षीय विद्वद्वृन्दे भागवतभक्तजनेषु च समवाप्तादरोऽपि कृतपरलोकदरः, शरदां शतं भूमण्डलमिदं विभूषयन् संस्कृतसाहित्यं साम्प्रदायिकभक्तजनानुरागिणः समेधयेदिति हृदयेन भगवन्तं वेदपुरुषमाशंसे ।

दिनाङ्कः ६-११-७६

डॉ० श्रीगोपालचन्द्रमिश्रः

म० म० विद्यावाचस्पति पण्डितराज पण्डित सार्वभौम

श्रीकालीप्रसादमिश्रः

भूतपूर्व प्रिंसिपल संस्कृत महाविद्यालय

हि० वि० वि०, काशी

सम्मानितप्राध्यापकः

सम्पूर्णानन्द संस्कृतविश्वविद्यालयस्य

डी० १/६ सरस्वती फाटक,

वाराणसी

अभिनन्दनीयः पण्डितप्रवरः आचार्यश्रीकृष्णवल्लभनामा निजेनानवद्य-प्रखरप्रतिभाप्रभावेण परमां प्रसिद्धिं प्राप्तो विराजते ।

एष हि वादाह्वे सकलपण्डिताग्रणीर्भूत्वा विप्रतिपन्नैर्वादिभिस्समुद्भावितान् दोषगणान् समूलकाषंकषन्त्याऽलौकिककल्पनाप्रसूतविचारपद्धत्या विधूयविचार-सहृदयधुरन्धराणां माननीय मनीषिवर्य्याणामसकृत्मान्योबभूवेतिनापरोक्षं वर्तते कस्यचित्—

एतत्प्रणीतः कृतितल्लजः किरणावलीनामको ग्रन्थस्तर्ककर्कशमभीनामपि-संख्यावतां गेहे तत्तत्पाठशालीयपुस्तकालयेषु च वर्त्तमानोवलादस्यानुपमं यशोगापयति ।

काशीस्थां विनेतारोविनेयाश्चापि एतदीयगुरुवराणां महनीययशसा सहैवास्य नामापि स्तुवन्तीति अवश्याभिनन्दनीयस्यास्याभिनन्दनेन वयमपि अभिनन्दनीया-भवेमेति आशंसति—

दिनाङ्कः
७-१-७६

श्रीकालीप्रसादमिश्रः

श्रीबदरीनाथशुक्लः

आचार्य–अध्यक्षः

न्याय वैशेषिक विभाग

सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय

वाराणसी ।

इदं जानतो मे मनो नितान्तं हर्षोत्फुल्लं जायते यत् स्वामिनारायण-सम्प्रदास्य पण्डितवर्याणां श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहोदयानां सरस्वतोसमाराधनतपः-पूतं जीवनं जनतायाः प्रेरणास्रोतो विधातुं तदीयगुणगणगौरवावर्जितचेतस्कैरनेकैः सत्पुरुषैस्तदीयसम्मानवर्धकमेकं विशालं शिक्षाकेन्द्रं प्रतिष्ठाप्यमानमस्ति ।

श्रीकृष्णवल्लभाचार्या न केवलं ममैव सुपरिचिता अपित्वात्मनो गभीरैः कतिपयैः ग्रन्थैः प्रायः समग्रस्य शिक्षाजगतः सुपरिचिताः । तद्रचिता ग्रन्थास्तेषां वैदुष्यगाम्भीर्यं प्रमाणयन्तो न केवलं तदीयां कीर्तिमेव तन्वन्तो जयन्त्यपि तु सहस्रशो जिज्ञासूनां ज्ञानामृतवर्षणेन मनस्तापमपि तनूकुर्वन्तो विराजन्ते ।

धर्मसंस्कृतसंस्कृतीनां समुन्नयने समर्पितात्मनामेषां सत्कारभावनया यत् किमपि कमनीयं क्रियेत तत्रास्ति मे हार्दिकः सहयोगः । अहमेषां नैरुज्यपूर्णं दीर्घजीवनमुत्तरोत्तरं यशोविस्तारं च वाञ्छन् तन्नाम्नाऽनुष्ठीयमानस्योक्तस्य समारम्भस्य साफल्यं कामय इति ।

दिनाङ्कः
५-१-७६

विज्ञापयति–
बदरीनाथशुक्लः

ए० सुब्रह्मण्यशास्त्री

सम्मानित दर्शनप्राध्यापकः,

श्रीसाधुवेला संस्कृत महाविद्यालयः

भूतपूर्व मीमांसाविभागाध्यक्षः,

प्राच्यविद्याधर्मविज्ञानसंकायः

काशी हिन्दू विश्वविद्यालयः

श्रीमन्तः गूर्जराभिजनाः श्रीकृष्णवल्लभाचार्याः न्यायादि अनेकशास्त्र-पारदृश्वानः संस्कृतसेवकानां भूयांसि उपकाराय सरलया प्रसन्नं पदगंभीरयाभाषया विविधाः टीकाः अनेकान् मूलग्रन्थान् व्यरीरचन् इति सुविदितमेवैतत्। समेषां विदूषाम् इमे च महानुभावाः इतोऽपि उपकारकान् ग्रन्थान् प्रणयन्तः संस्कृत-ज्ञानां महतीं सेवां कुर्वाणः वेदोक्तं समग्रमायुष्यं लभमानाः चिरंविराजन्तां आरोगहागांत्राः इति भगवन्तं राधाजानिं द्वारकाधीशं समर्थयते इति।

माघ शुक्ल २,
वि० सं० २०३२

सुब्रह्मण्यशास्त्री

श्रीमूलशङ्करशास्त्री

काशी हिन्दू विश्वविद्यालयः

वाराणसी–२२१००५

तत्र भवद्भिर्भवद्भिः श्री पं० कृष्णवल्लभाचार्यमहाभागैः सह ममाध्ययन-कालादेव सौहार्दपूर्णः परिचयो विद्यते। पठनसमय एव तेषामध्ययनपाटवं महतीं प्रतिभां विभिन्नदर्शनशास्त्रीयदुरुहग्रन्थानां सम्यमुपपादनशक्तिं व्याख्यानकौशलं श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदाये दृढ भक्तिं प्रौढं काव्यनिर्माणसामर्थ्यं न्याय-साङ्ख्य-योगादिशास्त्रीयमौलिकग्रन्थानां विस्तृतव्याख्याशैलीमाङ्लभाषावैदुष्यं च दृष्ट्वा नैके विद्वांसश्चमत्कृतिमभजन्। साम्प्रतमेतन्निर्मिते व्याख्यायुतन्यायादिग्रन्थानां बहवो दार्शनिकाः साहाय्यमपेक्षन्ते।

अहं दृढं विश्वसिमि यत् गुर्जरप्रदेशे सहस्राब्दीपूर्वं सम्प्रसूत-श्रीहेमचन्द्राचार्यानपि एते नैकविधात्यन्तविस्तृतग्रन्थनिर्माणद्वारातिक्रामन्ति। परमात्मानं प्रार्थये—इमे आचार्याः सम्यक् स्वास्थ्यमनुभवन्तो दीर्घजीवितां भजन्तु, इमे न केवलं गुर्जरभुवोऽपितु समस्तभारतभुवो मस्तकमुन्नतं कर्तारो विद्यन्ते।

दिनाङ्कः २९–१–७६

मूलशङ्करशास्त्री

श्री केदारनाथ त्रिपाठी

न्माय-वेदान्त-सांख्ययोगाचार्यः, प्राच्यविद्या-धर्मविज्ञानसङ्कायः,

काशी हिन्दू विश्वविद्यालयः, वाराणसी–५

* शुभाभिनन्दनम् *

श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदायस्य विशिष्टव्याख्यातारो धर्मज्ञानवैराग्यभक्तिभिः कृतस्व रूपसदानन्दघनसाकारमूर्तिपरब्रह्मश्रीस्वामिनारायणपरमात्मरूपैकत्वसाक्षात्काराः, जीवेश्व-रमायाब्रह्मपरब्रह्मात्मक पञ्चमुख्यतत्त्वविवेचननिपुणाः किं बहुना, श्रीस्वामिनारायण-सम्प्रदायस्य सकलतत्त्वमर्मज्ञाः पूर्वे वयस्येव षड्दर्शनाचार्य-नव्यन्यायाचार्य-सांख्य-योग-वेदान्त-मीमांसा-तीर्थप्रभृत्युपाधिविभूषिताः, अतएव दार्शनिकपञ्चाननेति विरुदालंकृताः, पण्डितप्रवराः श्रीकृष्णवल्लभाचार्यस्वामिनारायणाः न केवलं भूषा स्वामिनारायणसम्प्रदाय-नभोमण्डलस्य, अपित्वन्यतमं रत्नमपि भारतदेशसागरस्येति नात्र सन्देहः ।

एते हि यथा दार्शनिकतत्त्वनिरूपणनिपुणास्तथैव काव्यकौशलभृतोऽपि राजन्त इति तदीय विविधकृतीनामवलोकनेनैव स्फुटीभवतितराम् ।

दार्शनिकक्षेत्रे नव्यन्यायमारभ्य प्रायः समस्तासु दर्शनशाखासु एभिर्विरचिता नैकशो ग्रन्थाः संस्कृतसमाजे प्रतिहस्तं विराजन्ते । एवं विधान् सर्वतः प्रसृमरसमुज्ज्वलकीर्तीन् संस्कृतसेवार्पितनिजसमस्तजीवनान् अन्वर्थनामधेयान् श्रीकृष्णवल्लभाचार्यस्वामिनारायण-महाभागान् हृदयेनाभिनन्दयंस्तेभ्यो निजश्रद्धाञ्जलीन् समर्पयति—

दिनाङ्कः ९–१–७९

केदारनाथ त्रिपाठी

कमलेशदत्त त्रिपाठी

प्रवक्ता, प्राच्यविद्याधर्मविज्ञानसङ्काये

काशी हिन्दू विश्वविद्यालयः

वाराणसी ।

श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदायाचार्याणां श्रीश्रीकृष्णवल्लभपादानां नानाशास्त्रेष्व-व्याहतं पाण्डित्यं, शास्त्रममोद्घाटनेऽकुण्ठितां मतिं, तत्त्वविचारणेऽप्रतिहतां दृष्टिञ्च तदीय–'किरणावली'–'लक्ष्मीनारायणसंहिता'-दिग्रन्थेषु विलोक्य विदुषां मनांसि तान् प्रति श्रद्धया पूरितानि भवन्ति । आचार्यचरणानां समभिनन्दनावसरे वयं प्रणतिपूर्वकं स्वकीयं हार्दिकमादरं प्रकाशयामः—

दिनाङ्कः २०–१–१९७६

कमलेशदत्त त्रिपाठी

रामप्रसाद त्रिपाठी

अध्यक्षः, प्राचीनव्याकरणदर्शनागमविभागे,

सम्पूर्णानन्द-संस्कृत-विश्वविद्यालयः,

वाराणसी ।

बहवः पण्डिता भूमौ, सन्ति विद्योपजीविनः ।
ग्रन्थग्रन्थिभिदादक्षस्त्वेको [illegible]राजानति क्वचित् ॥

स्वामिश्रीनारायणसम्प्रदायमर्यादासमुपासकानां न्याय-मीमांसा-वेदान्ताद्यनेकशास्त्रेषु विश्वविश्रुतं वैदुष्यं बिभ्रतामपूर्वानेकमौलिकग्रन्थरत्नानां निर्माणेन 'भारतस्य प्रतिष्ठे द्वे संस्कृतं संस्कृतिस्तथा' इत्युक्तिं सार्थकयतां दिगन्तव्याप्तयशोराशीनां गुर्जरजनपदाभिजनतया भारतालङ्कारभूतानां श्रीश्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहानुभावानां परिचयं के न जानन्ति सचेतसः ।

स्वसम्प्रदायसिद्धान्तानुरोधिभाष्यरचनया भाष्यकारपदवीमधिरोहद्भिरेभिर्विद्वद्वरेण्यैर्बहवो विषयगभीरा नवीना ग्रन्थाः निगूढतमाभिप्रायेषु बहुतरग्रन्थेषु नवनवायमानपरिष्कारैरुल्लसन्त्यः स्थले-स्थले सहृदयहृदयारुन्तुदशङ्कापिशाचीः समूलमुन्मूलयन्त्यो विद्वन्मनोहारिण्यष्टीकाश्चापि महता मनोयोगेन व्यरचिषत ।

अदसीयमहनीयाः कृतयो देशे विदेशे चानेकशिक्षासंस्थासु संस्कृतविद्यां भारतीयां संस्कृतिं च भृशमुपदिशन्त्यः प्रसारयन्त्यश्चानुभूयन्ते-इति परमं प्रमोदातिशयस्थानम् ।

समीचीनशरीरस्वास्थ्येन चिरायुष्येणाप्रतिमप्रतिभया च सम्पन्ना भूत्वा इमे आचार्यवर्य्या एवमेव भारतराष्ट्रस्य गौरवं सर्वातिशायिवर्धयेयुरिति भवानीपतेर्भगवतो विश्वनाथादाशास्ते—

दिनांकः
५।१।७६

रामप्रसाद त्रिपाठी

राजनारायण शास्त्री

सर्वतन्त्रस्वतन्त्र-शास्त्रार्थविद्यावतार-विश्वविश्रुत-महामहोपाध्यायादि विरुदविभूषक-
पण्डितसम्राट् प्रातःस्मरणीय **श्रीशिवकुमारशास्त्रिमिश्रप्रतिष्ठापिता**
वाराणसेयसर्वविधविद्वत्समाज-प्रतिनिधिभूता

श्रीकाशी-विद्वत्परिषत्

कार्यालयः
शास्त्रार्थमहाविद्यालयः
दशाश्वमेधः, वाराणसी

धर्मग्लान्यधर्माभ्युत्थानसङ्कटमालोच्य 'यदा यदा हि धर्मस्य' इति शाश्वत-सिद्धान्तानुसारेण प्रादुर्बभूव वैदिकसनातनधर्मरक्षैकव्रतो वेदशास्त्रप्रचाराचार-लक्ष्यो भगवान् श्रीस्वामिनारायणोऽस्मत्सरयूपारीणद्विजकुलालङ्कारः। धर्मावता-रेणाखण्डभूमण्डलाचार्येण स्वकीयं कार्यक्षेत्रं सौराष्ट्रमेव निर्द्धारितम्। तत एव श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदाय एव जगद्वन्द्यः प्रासरत्। असंख्येया महात्मानो धर्म-प्रचारका विद्वांसः शास्त्रार्थकुशला धर्ममर्यादाव्यवस्थापकाश्च समुदपद्यन्त। तेष्वेषु दैवशक्तिसमन्वितेषु वस्तुतोऽद्वितीयेषु त्यागतपोमूर्त्तयो लोककल्याणभूतयः सहृदय-शिरोरत्नानि प्रख्यातयशसः स्वामिश्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहाभागाः प्रतिदिशं स्वीयतपस्त्यागविद्यावैशिष्ट्येन सम्प्रदायदुन्दुभिमुद्घोषयन्ति। महाशयैरमीभिः समधीतान्यखिलानि शास्त्राणि विविधाश्च ग्रन्थाः प्रकाशिताः। प्रकाशितान् ग्रन्थ-निचयानालोचयतः कस्यापि विदुषो हृदये दर्शनशास्त्रावतारतया महात्मान एव उपतिष्ठन्ते।

भक्तसहृदयैर्महापुरुषाणामेषां क्रियमाणः सत्कारो भगवत्प्रसत्तय एवेति मन्ये।

तिथि : पौष शु० ७,
२०३२ वि० सं०

भावत्केष्वन्यतमः
राजनारायण शास्त्री

पी० एन० पट्टाभिरामशास्त्री

विद्यासागर, विद्यावाचस्पति,

शास्त्ररत्नाकरः

४/७ हनुमानघाट, वाराणसी ।

गूर्जरदेशीया विद्वद्वरेण्याः श्रीमन्तः कृष्णवल्लभमहेच्छास्संस्कृतजगति स्पृहणीयं कार्यमाचरन्तो विदुषां मनांसि रञ्जयन्तीति निशम्य नितरां प्रसीदामि । संस्कृतसाहित्यस्य कलेवरं नैकविधग्रन्थानां सम्पादनेन समुपबृंहयन्त इमे नूनं साधुकार्यकारिण इति विश्वसिमि । सम्प्रत्यनुसन्धानकार्ये निरताः संस्कृतसमाजसेवां विदधतीति महतः प्रमोदस्य विषय इतीमे परमां प्रतिष्ठां लभन्तामिति श्रीविश्वनाथमभ्यर्थये ।

दिनाङ्क
७।१।७६

पट्टाभिराम शास्त्री

भूपेन्द्रपति त्रिपाठी

आचार्य एवं अध्यक्ष, व्याकरण विभागः

सम्पूर्णानन्द-संस्कृत-विश्वविद्यालयः,

वाराणसी ।

पण्डितप्रवरश्रीकृष्णवल्लभशास्त्रिणः संस्कृतभाषाभारतीयसंस्कृत्योस्समुपासकाः गुर्जरप्रदेशस्य द्युमणय इव वर्चस्विनोविद्वान्सो निरन्तरं लोककल्याणाय प्रयतमानाः विराजन्ते एषां महानुभावानां सविशेषसत्कारं समायोजयन्तस्तत्रत्या विदग्धा पूतेन कर्मणा आत्मनो धर्मं सर्वथा निभालयन्ति ।

न्यायाद्यनेकशास्त्रपारदृश्वानः इमे शतायुर्भूत्वा कुर्वन्नेवेह कर्माणि इति वेदवचनं चरितार्थयन्तः ऐहिकामुष्मिकश्रेयसे स्युरिति भवानीपतिं विश्वनाथं प्रार्थयते ।

भूपेन्द्रपति त्रिपाठी

जगन्नाथोपाध्यायः

पालिविभागाध्यक्षः

सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयः

वाराणसी ।

कवि-तार्किक-चक्रवर्तित्वं भजमानानां महापण्डितानां श्रीकृष्णवल्लभाचार्य-महाभागानां प्रतिभा-वैभवं काश्यामेव स्वकैशोरे दृष्टपूर्वम् । तत आरभ्याद्ययावद् विविधविद्याप्रस्थानेषु ग्रन्थादिनिर्माणव्याजेन यत्तैः सारस्वतं महत् कौशलं प्रकटितं तदस्माभिर्विद्वद्भिः वरणीयमिति जानामि । इदानीं जरायां विगतयुवोचितोत्साहायामपि वैदग्ध्ययुवात्वं भजमानैराचार्यैः लक्षाधिकश्लोकमित-लक्ष्मीनारायण-संहितादीनां विरचनकर्मणि अनवरतं निरतैः स्वजीवनस्य चतुर्थमपि सवनं सम्यक् सफलीक्रियते इति न केवलं तेषां अर्थाय हिताय अपि तु सकलहितायेति परम-प्रमोदपरम् ।

दिनाङ्कः
१७।१।७६

जगन्नाथोपाध्यायः

रामकृष्णशास्त्री 'अव्यय'

ग्रन्थपाल,

श्रीरणवीर संस्कृतानुसन्धान पुस्तकालय

श्री रघुनाथ मन्दिर, जम्मू ।

अर्चापद्यपञ्चकम्

सांख्ये योगे च वेदान्ते न्यायमीमांसयोस्तथा ।
भक्तिगीते च नीतौ च काव्यमर्मप्रकाशने ॥ १ ॥

ग्रन्थरत्नान्यनेकानि विरचय्य स्वभावतः ।
शास्त्रसिन्धुसुधापाने जगतामुपकारकाः ॥ २ ॥

सर्वत्र कीर्तिमत्कर्म संप्रसार्य प्रयत्नतः ।
प्रेयः श्रेयश्च संप्राप्तुं शक्नुवन्ति सुधीवराः ॥ ३ ॥

श्रीकृष्णवल्लभाचार्याः गोपीवल्लभवल्लभाः ।
लोकोत्तरप्रमाणज्ञाः साधकाः साधुबोधकाः ॥ ४ ॥

गीर्वाणवाग्गुणाख्याने गण्यमान्यजनोदिताः ।
कर्मणा चारुणा लोकेऽपरतामाप्नुयुः सदा ॥ ५ ॥

दिनाङ्कः
९।२।७६

भवदीय
रामकृष्णशास्त्री

करुणापति त्रिपाठी

कुलपतिः

सम्पूर्णानन्द-संस्कृत-विश्वविद्यालयः

वाराणसी ।

अस्मिन् भौतिके वैज्ञानिके च युगे यदा मानवाः प्रकृत्या विविधप्रपञ्चेषून्मुखाः सन्ति, निखिलशास्त्रनिष्णाताः शास्त्राणामभ्यासे प्रचारे च दत्तावधानाः पण्डित-वर्याः श्रीकृष्णवल्लभाचार्या राष्ट्रीयं महदुपकारमाचरन्ति । एतद्विज्ञाय नागरिकैः यद् एतेषामभिनन्दनं समायोज्यते तत्प्रति अतीवहर्षोत्फुल्लोऽहमात्मीयां शुभाकांक्षां प्राहिणोमि ।

दिनांक ४-२-१९७६

करुणापति त्रिपाठी

विश्वनारायणशास्त्री

(लोकसभा सदस्य)

नई दिल्ली १

निरकसं विद्याव्यसनिनः पद-वाक्य-प्रमाण-पारावार-पारीणा वंशऋषि-परं-परामनुसृत्य पण्डितवर्य-स्वामिकृष्णवल्लभाचार्यपादा वादरायण-जैमिनीयेन सह गौतमनयं जिज्ञासूनां विनेयानां च गोचरीकुर्वन्तः। शेमुषी-प्रतिभाभिः स्वनाम-धन्या विराजन्ते। व्याख्यागम्यानि शास्त्राणि स्वीय-व्याख्यानैरेतैर्न केवलं सुधिया मेवोत्सवतां नीतानि परन्तु मन्दधियामपि। स्वामिपादास्तपसा श्रमेण गीर्वाण-वाणीमनुशीलयन्तः यथा तस्यां भाषायां सर्वमवदातं कृतवन्तस्तथैव गुर्जर-हिन्दी-प्रभृतिभिर्भाषाभिः शास्त्रज्ञानं सर्वेषां सुखबोध्यं सम्पादयन्ति।

अत्रभवतां स्वामिपादानां संबर्द्धनमायोजयन्तो भवन्तः पूज्यपूजाव्यतिक्रमत्वं केवलं श्रुतिमात्रपर्यवसितं कुर्वाणाः सर्वेषां धन्यवादार्हाः।

तत्रभवद्भ्यः श्रद्धाञ्जलिं रचयामहे।

विश्वनारायणशास्त्रिणाम्

शास्त्री कान्तिलालयाज्ञिकः

प्रधानाचार्यः

श्रीनाराय-णसंस्कृत-महाविद्यालयः

पेटलाद, जिला—खेड़ा (गुजरात)

परमादरणीयाः सौजन्यपूर्णा विद्वन्मतल्लिकाः स्वामिश्रीकृष्णवल्लभाचार्या न केवलं स्वामिनारायणसम्प्रदायस्यालङ्कारा अपितु समस्तविद्वन्मण्डलस्य तत्र न काप्यतिशयोक्तिः इमे पण्डितप्रवरा वाराणस्यामध्ययनकालतो ममातीवपरिचितास्तेषां गौरवाय यत्किमपि क्रियेत तन्न तेषामुपकाराय किन्तु आत्मनोऽशतऋणमुक्तये स्यादिति दृढं विश्वसिमि। अनेकदार्शनिकग्रन्थानां निर्मातारो विवृतिकाराश्च स्वामिपादाः केषां न सम्माननीया इति वक्तुं न शक्यते निखिलविश्वोपकृतिपरायणभगवान् स्वामिनारायणस्तेभ्यो नैरुज्यविशिष्टं दीर्घमायुर्देयादित्याशासे।

विद्वदनुचरः

शास्त्री कान्तिलालयाज्ञिकः

दिनाङ्कः
१०।३।७६

डॉ० जयनारायण रा. पाठकः

प्राध्यापकः

संस्कृतमहाविद्यालयस्य,

वटपुरम् (बड़ौदा)

* अभिनन्दनम् *

स्वाध्यायश्रुतसम्पन्नैः पदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणैर्विविधविरुदावलिविराजमानैः सौशील्यसौजन्यगुणगणालङ्कृतैः करुणाकलितचेतोभिर्नानागममहासागरनदीष्णैः पू० पा० श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजीस्वामिभी रचितानि प्रायः ४३ पुस्तकानि दर्शं दर्शं केषाँ पक्षपातशून्याना गुणैकपक्षपातिनां मानसं तानि नोल्लासयेयुः। स्वामिनारायणसम्प्रदायस्वामिनामेषां सप्ततिपूर्तिस्मृतिमन्दिरमहोत्सवप्रसङ्गे नानाशास्त्रसेवाबद्धपरिकराणां स्वामिवर्याणामेषां भगवान् श्रीस्वामिनारायणो नीरोगं निरुपाधिदीर्घायुर्विदध्यात्। सारस्वतीसमुपासना च प्रतिदिनमेषां प्रवर्धतामिति आशास्ते—

दिनांक २६-२-१९७७

डॉ० जयनारायण रा. पाठकः

डा० राजमणिपाण्डेय,

एम० ए०, पी-एच० डी०

२४६ ए तूलाराम बाग, इलाहाबाद

* श्रद्धाञ्जलिः *

गीर्वाणवाणीसरणिसुमहार्णवतरणिकर्णधाराणाम्
अन्तर्वाणिवरेण्यविलक्षणबुद्धिलक्षणानाम् ।
मनोहारि पाण्डित्यं सुश्रीकृष्णवल्लभाचार्याणाम्
कृष्णप्रेम्णा प्रीणितकृष्णितस्वान्तःकरणानाम् ॥ १ ॥

नानाशास्त्रविचक्षणो बुधवरो धीमान्सदा धार्मिक-
स्तर्तुं व्याकरणार्णवं सुविषमं धीरो महानार्तिकः ।
साहित्ये सरसे सरोरुहसमे भृङ्गो यथा भ्राजते
स श्रीमान्ननु कृष्णवल्लभमहाभागो बुधो राजते ॥ २ ॥

डा० राजमणिपाण्डेयः

वि० वेंकटाचलम्, एम० ए०

वेदान्त शिरोमणि वेदान्त विशारद

श्री स्वामिनारायणमन्दिरम्, जूनागढ़, सौराष्ट्र

पण्डितवर्यश्रीकृष्णवल्लभाचार्याणामभिनन्दनग्रन्थप्रसङ्गेन कुङ्कावावस्थित-विद्यालयस्य प्राचार्यैर्भूयषां विदुषां संमतयः प्रदर्शिताः अद्य मदीयमपि अभिमतं प्रार्थितम्। पूज्यानां पण्डितवर्याणां ग्रन्थेष्वेकमपि स्वयमदृष्ट्वा तत्रस्थं रसञ्चाना स्वाद्य न मे रोचतेऽभिमतप्रकटनम्। तत्प्रार्थये तदीयग्रन्थानां मध्ये निम्ननिर्दिष्टाः त्रिचतुरां ग्रन्था मह्यं प्रेषणीयाः इति।

(१) श्रुतितात्पर्यनिर्णयः
(२) साकारत्वविमर्शः
(३) अवतारावतारित्वे पुराणादिवचनानि
(४) कविकाव्यगौरवम्

एतेषां मूल्यं यदि सूच्यते, तर्हि तद्यथायथं प्रेषयिष्यामि। जिह्रेमि वक्तुमिदं यदेतेषां प्रणीतबहुतरग्रन्थानां ग्रन्थकायेनापि परिचयो न समासादितोऽनेन जनेनैतावन्तंकालमिति।

अन्यत्र समेषां ग्रन्थानां सांप्रतमुपलभ्यमानानां यदि मूल्यसूची संप्रेष्येत तर्हि अस्मदीय पुस्तकागारे तेषां क्रयणस्थापनादिकृते व्यवस्था सुसम्पाद्या भवेत्। इति सन्तु प्रणतयः।

दिनाङ्कः
२७।२।७६

विद्वद्विधेयः
वि० वेंकटाचलम्

पं० शोभितमिश्रः

प्राध्यापकः

म० स० विश्वविद्यालयः

संस्कृत महाविद्यालयः

वटपत्तनम्

श्रीमन्तो विद्वत्तल्लजाः पण्डितप्रकाण्डाः कृष्णवल्लभाचार्यमहाभागाः कोकैर्लोकबन्धुलोकं लोकनीयाः अलिभिः कमलभूषं भूषणीयाः, चातकैर्जलदचिन्तं चिन्तनीयाः चकोरैश्चन्द्रदिदृक्षं दिदृक्षणीयाः सन्ति, इमे तावत् तर्कशास्त्रतत्त्वमर्मज्ञाः न्यायशास्त्रविशारदाः वेदान्तसिद्धान्तार्णव पारावारीणाः सांख्ययोगशास्त्रपारङ्गताः षड्दर्शनपारदृश्वानः संस्कृतविद्याप्रचारप्रसारदक्षाः भारतीयसंस्कृतिसंरक्षणतत्पराः सन्तो भगवतः श्रीस्वामिनारायणस्य परमभक्ताः स्वकीयविशिष्टवैदुष्येण विनयसदाचारादिगुणैश्च समस्तानपि प्रेक्षावतो विदुषः समावर्जयन्तो विद्वन्मानसमरालाः प्रतरां विराजन्ते इति निवेदयतो मम महान् आनन्दसन्दोहसमुल्लासः समुल्लसति, एतेषां विपश्चिदविपश्चिमानां श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहाशयानां कृतिभूत-न्यायमुक्तावली-किरणावलीप्रभृतिग्रन्थानामाचूलमूलं सूक्ष्मेक्षिकयाऽवलोकनेन पूर्ण-पाण्डित्यपरिचयोऽपि स्थालीपुलाकन्यायेन जायते, किमधिकम् एतान् महाभागान् भगवान् सर्वथा चिरायुषो विदध्यादिति समीहे कुशलं च कामये इतिशम् ।

दिनाङ्कः
२१।२।७६

पं० शोभितमिश्रः

कृष्ण लाल

एम० ए०, पी-एच० डी०

प्रवाचक (रीडर), संस्कृत विभाग,

दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली ७

पण्डितवर्याः श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहोदयाः आधुनिकभारतस्य दार्शनिकेषु संस्कृतज्ञेषु चाग्रगण्याः। सर्वाण्यपि षड्दर्शनान्यधिकृत्य तैः संस्कृतभाषया महत् साहित्यं व्यरचि। अस्मिन् युगे सपादलक्षश्लोकात्मिकाया लक्ष्मीनारायणसंहितायाः प्रणयनम् आश्चर्यकरमिव प्रतिभाति।

एतादृशानामद्भुतविदुषां वाग्देव्याः स्पृहणीयसेवकानां स्मरणेनापि पुण्यं महत् लभते जनः। अतस्तेषां स्मृतौ महाविद्यालयस्थापनं स्थाने एव। तस्मिन् महाविद्यलयं संस्कृतशिक्षणस्य व्यवस्था प्रोत्साहनं च अवश्यं भविष्यतीत्याशासं अन्यथा तेषां विदुषां स्मरणसाफल्यं न स्यात्।

तान् विद्वद्वरेण्यान् पूज्यान् श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहोदयान् प्रति विनम्रश्रद्धाञ्जलिमर्पयामि।

दिनाङ्कः
२३।३।७६

कृष्ण लाल

सङ्कटेन विह्वलता माऽस्तु मानसे !

कविः—डॉ० श्रीधरभास्कर वर्णेकर

संस्कृतविभागाध्यक्षः

नागपुर विश्वविद्यालये

सङ्कटेन विह्वलता माऽस्तु मानसे ।
प्रातिकूल्यभावनया किमिति कम्पसे ॥ ध्रु० ॥

(१)

मकरालयमपि घोरं तं सुदुस्तरम् ।
असहायो लङ्घितवान् यो हि सागरम् ।
हनुमन्तं तं वीरं, बलवन्तं तं धीरम् ।
किमु न वन्दसे ॥ प्रातिकूल्यभावनया किमिति कम्पसे ॥ ध्रु० ॥

(२)

एकाकी वनवासी तं दशाननम् ।
सुदुर्जयं हि निर्जघान सकलसाधनम् ।
श्रीरामं तं वीरं, रघुनाथं तं धीरम् ।
किमु न वन्दसे ॥ प्रातिकूल्यभावनया···॥ ध्रु० ॥

(३)

छित्त्वा तत् कालियस्य घोरबन्धनम्
फणरङ्गे तस्य यश्चकार नर्तनम् ।
श्रीकृष्ण तं वीरं गोपालं तं धीरम्
किमु न वन्दसे ॥ प्रातिकूल्यभावनया··· ॥ ध्रु० ॥

शेषं अपरपृष्ठे द्रष्टव्यम्

(४)

चाणूरं मुष्टिकं च कुवलयं गजम् ।
एकाकी यो जघान मातुलं निजम् ।
श्रीकृष्णं तं वीरं, कंसान्तं तं धीरम् ।
किमु न वन्दसे ।। प्रातिकूल्यभावनया··· ।। ध्रु० ।।

(५)

दृढचक्रव्यूहस्थं रिपुबलं महत् ।
एकाकी बालकोऽपि यः समाविशत् ।
अभिमन्युं तं धीरं पार्थसुतं तं वीरं ।
किमु न वन्दसे ।। प्रातिकूल्यभावनया···।। ध्रु० ।।

(६)

वने वने परिभ्रमन् विना धनं विना बलम् ।
धिक्चकार दिल्लीशं यो महाबलम् ।
श्रीप्रतापसिंहं तं रणवीरं नरसिंहम् ।
किमु न वन्दसे ।। प्रातिकूल्यभावनया··· ।। ध्रु० ।।

(७)

पर्णारो दुर्गे वा आगरा पुरे तथा ।
रिपुबलेन कुण्ठितोऽपि निर्जगाम सर्वथा ।
शिवराजं तं वीरं, शिवभूपं तं धीरम् ।
किमु न वन्दसे ।। प्रातिकूल्यभावनया ।। ध्रु० ।।

कविः—श्रीधर भास्कर वर्णेकर

॥ श्रीहरिः ॥

श्री१०८ श्रीस्वामीकरपात्रीजीमहाराजः

अ० भा० धर्मसंघ शिक्षामण्डल,

दुर्गाकुण्ड, वाराणसी ।

पण्डितप्रवर श्रीकृष्णवल्लभाचार्यप्रणीतानां टीकाभाष्यादिपुस्तकानां सूची सूचयति तेषां प्रतिभाकिरणावलिः प्रायशः सर्वतोमुखी प्रसृतेति । महात्मनां प्रयासः स्वान्तः सुखायैव भवति तथापि तत्प्रयासेन जिज्ञासूनामप्युपकारो भवेदित्याशया नारायणाशीर्भिरभिनन्दाम इति ।

श्रीकरपात्रीजी स्वामी

महाराज श्रीकृताऽऽदेशानुसारेण प्रेषयिता

नन्दनन्दनानन्दसरस्वती

एम० ए०, एल० एल० बी०

डी २५/१८, ब्रह्मकुटीर, नारदघाट,

वाराणसी ।

आद्याप्रसादशर्मा

इलाहाबाद युनिवर्सिटी

इलाहाबाद

विभिन्नदर्शनतीर्थानां दार्शनिकपंचाननानां स्वामिश्रीकृष्णवल्लभाचार्याणां नाम्ना तत्पवित्रजन्मभूमौ उच्चतरमाध्यमिकविद्यालस्य प्रारम्भो शीघ्रमेव भविता तस्मिंश्चावसरे तत्सम्मानार्थम् अभिनन्दनग्रन्थश्च प्रकाश्यं नेष्यते इति ज्ञात्वा मोमुद्यते चेतः। अस्मिन्नवसरे वयमपि तेषां महामहिमवतां मनीषिणामभिनन्दनं कुर्मः भगवन्तं भवानीवल्लभं च प्रार्थयामहे तेषां चिरायुष्यार्थं संस्थायाश्च प्रारभमाणायाः स्थायित्वं साफल्यं च कामयामहे।

श्रीमतामेव

वयं स्मः

मिश्रोपाह्वा

आद्याप्रसादशर्माणः

दिनाङ्कः
१९।३।७६

बहादुरचन्द्र छाबड़ा

स्प्रोङ्ग ग्लेन

ऊटाकामण्ड (दक्षिण भारत)

* श्रीकृष्णवल्लभाभिनन्दनम् *

अभिनन्दयामि तमहं धन्यं श्रीकृष्णवल्लभाचार्यम् ।
पण्डितवरेण येन प्रकाशिता भूरयो ग्रन्थाः ॥ १ ॥

शास्त्रेष्विव कवितायां यस्य प्रज्ञा भृशं क्रमते ।
तेन विरचिताः कविताः प्रमाणयन्त्येव तन्मुखरम् ॥ २ ॥

संस्कृतगुर्जरहिन्दीभाषाज्ञानं प्रकाममेवास्य ।
किं बहुना वाग्देव्याः साक्षादवतार एवायम् ॥ ३ ॥

दिनांकः
२८।२।७६

बहादुरचन्द्र छाबड़ा

दयाशङ्कर वाजपेयी

एम० ए०, व्याकरण-साहित्याचार्यः

(भूतपूर्व प्राध्यापक, शासकीय महाविद्यालय, इन्दौर)

ऋषिनिवास, वररुचि-मार्ग, माधवनगर, उज्जैन

मुक्तिद्वारविघाटनोन्मुखगिरां संख्यावतामग्रणीः
प्रज्ञावैभवभूतिभावुकतया लोकोपकारव्रती ।
ग्रन्थग्रन्थिविभेदचुञ्चुविलसत्सल्लेखसम्पद्युतो
विद्वन्मण्डनकृष्णवल्लभविभो जीयास्समाः शाश्वतीः ॥ १ ॥

भूयो भवन्तु भुवि वैभवभासुरायां
युष्मादृशाः विविधदर्शनशास्त्रनिष्णाः ।
साहित्यसंस्कृतिसमभ्युदयाय येऽस्यां
पीयूषसीकरसिरं गिरमीरयन्तु ॥ २ ॥

सहस्रशः सन्त्वनवद्यविद्या-
विद्योतमाना विबुधा जगत्याम् ।
भक्तिप्रभौ लौकिककार्यदाक्ष्यं
विज्ञत्वमेकत्र समं न लभ्यम् ॥ ३ ॥

श्रीमन्तः सुरसरस्वतिसमुपासनसमुल्लासितस्वान्तः विपश्चिदपश्चिमाः भगवच्चरणारविन्दमकरन्दमिलिन्दमनसः श्रीमदाचार्यचरणाः । सभक्तिप्रहितं पद्यत्रयं सिन्धौ बिन्दुवन्न कञ्चनापि महिमानमासादयितुमलम् । परं भगवन्मन्दिरे मन्दमतिस्तुतिरिव मदुक्तिर्न बहिष्कारभाग्भविष्यति । पदवाक्यप्रमाणसांख्यवेदान्तसिद्धान्तनदीष्णाः विविधभाषावभासितमनसो मनीषिणो भवादृशाः केन विज्ञातुं विज्ञाय वा वर्णयितुं पार्यन्ते । अतः क्षमासमाधानं याचनमानो मान्यानामनुरक्तसंसदि निजनाम नेदयितुं समीहे ।

छात्राः भवल्लेखनलाभवन्तो
विज्ञा भवद्भाषण भावभाजः ।
भक्ताः भवत्प्रेरणया लभन्ता-
मध्यात्मचित्ताः हरिसन्निधानम् ॥ ४ ॥

दिनाङ्कः
११।३।७६

विदुषामाश्रवः
दयाशङ्कर वाजपेयी

रेवाप्रसाद द्विवेदी

साहित्याचार्यः, एम्० ए०, पी-एच्० डी०, डी० लिट्०
अध्यक्ष, संस्कृत-साहित्यविभाग,
काशीहिन्दूविश्वविद्यालय, वाराणसी ।

श्रीस्वामिनारायणसंप्रदायक्षीराब्धिमन्थाचल-कूर्म-मूर्तिः ।
जीयाच्चिरं संस्कृतवाङ्मय-द्रु-द्रोणाम्बुदः कश्चन 'कृष्ण'-देवः ॥ १ ॥
प्रज्ञापरव्योम-विहारि-हंसश्रीवल्लभः कश्चन सिद्धयोगी ।
स्वामी चिरं जीवतु यत्प्रकाशः प्राणायते संस्कृतवाङ्मुखेभ्यः ॥ २ ॥
वपुर्महिम्ना प्रतिभागरिम्णा तथा च पाडित्यरहस्यभूम्ना ।
गौरः सितः शुद्ध इति प्रतीतो नाम्नैव कृष्णः खलु वल्लभो नः ॥ ३ ॥
मानोन्नतेन च मतेन च पण्डितानां
गर्वं दधत्विह परे निजपण्डितिम्ना ।
श्रीकृष्णवल्लभयती तु विदां समाजे
श्रीभामतीकृदि'-व राजति लेखशुद्धचा ॥ ४ ॥

क्षुभ्यच्छास्त्रनृसिंह-सान्त्वन-कृति-प्रह्लाद-शौण्डीर्यकं
त्रुटयच्छ्रौतपरम्परासुरसरिद्-रक्षेशकापर्दकम् [1] ।
उत्प्लुष्यत्सुरगीःसमुद्ररसनोद्वाहादिकोलायितं
यो धत्ते ननु 'कृष्णवल्लभ'-इति प्रज्ञः स जीयाच्चिरम् ॥ ५ ॥

Think, you would be satisfied with these ideas of mine and convey my प्रणाम to श्रीस्वामी जी, whom I have heard at Varanasi in a पण्डितसभा, His लक्ष्मीनारायणसंहिता is one of the greatest contributions to Sanskṛts-learning. I have seen his Commentary on किरणावली also and gone through some other works too. I found him in every work round in his clasity and expression. Such a vast literature can hardly be produced by a single person unless he is blessed with some divine grace. I am impressed with Swamiji's publications too. Writing is not sufficient in this pressage and Swamiji has taken published his voluminous works too. I express my hearty and warmest gratefulness to him again.

दिनाङ्कः ९।३।७६

रेवाप्रसाद द्विवेदी

---

१. ईशस्य शिवस्य यः कपर्दः तत्कर्म । २. आदिकोक्तो भगवानादिवराहः ।

श्रीविनायकशास्त्री टिक्कः

२४, वररुचि-मार्ग, माधवनगर,

उज्जयिनी-(म० प्र०)

समयोऽयं विचित्रोऽस्ति संस्कृताऽसंस्कृतीकृतेः
एकतः संस्कृतोद्घोषो वैदेशिकविलोभनः
इतो मूलोच्छेदकरी विपर्यासावहा कृतिः
एतादृश्यामवस्थायां ये संस्कृतमयजीवनाः
विशेषतः प्राच्यशास्त्रमर्यादारक्षणेक्षणाः
कथं नैवाभिनन्द्याः स्युः संस्कृतज्ञैर्विशेषतः ?
श्रीकृष्णवल्लभाचार्या गुर्जरावनिमण्डनाः
अनेकग्रन्थकर्तारः सद्दर्शनविमर्शनाः
भगवद्भक्तिभावार्द्रहृदयाहृदयालवः
स्वनामधन्या वन्द्यन्ते 'विनये' न विदांवराः ॥
तदीयस्मृतिसातव्यसिद्धयै यो हि नियोजितः
तज्जन्मभूमौ तन्नाम्ना नव्यविद्यालयोदयः
अभिनन्दनसद्ग्रन्थ - प्रचिकाशयिषा च या
एतत्साफल्यसंसिद्धयै प्रार्थयामः परेश्वरम् ॥
किन्तु किञ्चित् सूचयामः, उक्तविद्यालयक्रमे
गीर्वाणवाणी-विज्ञानाऽवसरोऽपि सुरक्ष्यताम्
येनैतत् स्मारकं पूर्णं भवेत् संस्कृतसूरिणाम्—इति ।
सर्वत्र भारते भातु संस्कृतज्ञ-परम्परा
यदादर्शवशाद् भव्या भूयाद् भारत-संस्कृतिः—इत्याशासानः

भवदीयः

श्रीविनायकशास्त्री टीक्कः

महोपाध्यायवासुदेववेङ्कटराजशर्मा

Principal,

Sanskrit Collage, Trivandrum

Member, Academic Council.

University of Kerala.

Member, Board of Studies (Skt···)

University of Calicut.

महदिदं प्रमोदस्थानं यन्महापण्डितानां श्रीकृष्णवल्लभाचार्याणामभिनन्दन-ग्रन्थः प्रकाश्यते तत्र भवद्भिः। आचार्यवर्यैः रचितानां ग्रन्थानां चत्वारिंशतः परा-संख्यैव तेषां शास्त्रपाण्डित्यमुच्चैस्तरमुद्घोषयति : यद्यप्यस्माभिस्तेषां सर्वे ग्रन्था न दृष्टास्तथापि न्यायमुक्तावलीव्याख्या किरणावली तावत् प्राप्ता सम्यगधीता च। स्थालीपुलाकन्यायेन सैका तत्कर्तुः सर्वशास्त्रपारङ्गतत्वं स्पष्टमावेदयति। दिन-कर्याद्यनेकव्याख्यान्तर्गता विषयास्तत्र सङ्गृहीताः, अतिसरलया रीत्या प्रति-पादिताश्च। तस्याः पठनमात्रेण न्यायशास्त्रसिद्धान्ताः सर्वे ज्ञातुं शक्याः। ग्रन्थान्ते दत्तानि परिशिष्टानि तु महदुपकुर्वन्ति। न केवलं शास्त्रं प्रविविक्षूणां छात्राणा-मपि तु पण्डितानामध्यापकानामपि तेषां व्याख्या अत्यन्तमुपकारिका, तेषां सर्वेऽपि ग्रन्थाः सम्मुद्रय सर्वत्र प्रचारणीया इति भवत्स्वस्माकं प्रार्थना। दिगन्त-यशसां श्रीकृष्णवल्लभाचार्याणामायुरारोग्यसौख्यमाशास्महे।

दिनाङ्कः ३।३।७६

वासुदेववेङ्कटराजशर्मा

लक्ष्मीशङ्कर गौ० शुक्लः

व्याकरणाचार्यः, काव्यतीर्थः, साहित्योत्तमा

साहित्यप्राध्यापकः

श्री म० स० विश्व० सं० महाविद्यालयः,

वटपत्तनम्

श्रीमतां भगवद्भक्तिरतैकमानसानां ज्ञान-भक्तिवैराग्यनिधीनामनेकशास्त्र-पारावारपारङ्गतानां परमभागवतश्रीमत्सहजानन्दस्वामिनारायणभगवच्चरण-सरोरुहमिलिन्दायमानानां महासारस्वतानां 'दार्शनिकपञ्चानन-षड्दर्शनाचार्य-सांख्यवेदान्ततीर्थ-काव्यकुशल-न्यायवैशेषिकशास्त्री-वैष्णवविद्वत्सार्वभौम' - इत्याद्य-नेकपदवीविभूषितानां विद्वच्चूडामणीनां सत्सङ्गिमूर्धन्यपण्डितप्रवर-स्वामिश्री-कृष्णवल्लभाचार्यमहाराजानां सादरमभिनन्दनम् ।

अनेकजन्मसुकृतोदयानेकयत्नसम्पादितविद्यासमुपासनश्रीमत् सहजानन्द-स्वामिनारायणभगवदनुग्रहबलाज्जन्मत एवाविद्यासम्भृतेऽस्मिञ्जगति निश्चलं वैराग्यमावहमानैः स्थितप्रज्ञैरत्रभवद्भिरवधयाखिलप्रपञ्चजालं समालम्बितं सार-स्वतं समुपासनम् । संस्कारवशादचिरादुद्भूतं ज्ञानोदधिमामूलचूलमवगाह्याशेष-तत्त्वमौक्तिकचयमासाद्यानेकविद्याशास्त्रनिगमागमनिधानभूतविश्वेश्वराधिष्ठितपूतत-मसुरसरिदम्भोवायुसन्दोलितकाशीपुरीमधिष्ठाय निषेव्य गुरुचरणान् विजित्य वादिनो विविधविद्यासूराणां किरणावल्यः सन्तानितास्तत्रभवद्भिः पारेसमुद्रं-भूमण्डलं भासयन्ति भासयिष्यन्ति च प्राचीनशास्त्रगहनान्याचन्द्रतारकम् ।

दुर्बोधशास्त्रतत्त्वानि परमेण सारल्येन जिज्ञासूनामनायासेन समासादितानि स्युरिति बुद्ध्याऽत्रभवद्भिर्विविधग्रन्थटीकाटिप्पणी-विवृतिनूतनग्रन्थनिर्माणादिभिर्भू-शमुपकृतं संस्कृतवाङ्मयम् ।

भक्तिसदाचारवैराग्यादिभिर्गुणनिचयैश्च सत्सङ्गिनां श्रीस्वामिनारायण-सम्प्रदायानुयायिनां तादृशी सुषमा समपाद्यत, ययेदमखिलं भारतं सूरसहस्र-संकुलं भाति ।

भगवानक्षरपुरुषोत्तमश्चिरमायुरारोग्यं बलं सारस्वतं समुपासनञ्च समेधये-दित्याशासे ।

लक्ष्मीशङ्कर गौ० शुक्लः

डॉ० अमरनाथ पाण्डेय

एम० ए०, डी० फिल

अध्यक्ष, संस्कृत-विभाग

काशी विद्यापीठ, वाराणसी ।

श्रीकृष्णवल्लभाचार्याभिनन्दनाय कतिपयश्लोकाः

न्याये यस्य सरस्वती विचरति प्रौज्ज्वल्यसम्मार्जिता
सांख्ये चारुविलाससन्ततिमयी प्रौढ्यञ्चिता राजते ।
सब्दोधोद्धुरचिन्तनव्रततिभिः श्लिष्टा मनोहारिणी
माङ्गल्यैकनिधिर्विधिश्च महसां स्रोतस्विनी पावनी ॥ १ ॥
विद्यां लोकहितां सदाशयमयीं प्रोद्भासयन् सन्ततं
यद् वृत्तं कथितं पुरा कविवरैस्तत् स्फोरयन् निर्मलम् ।
योगे गूढमनल्पसिद्धिमहितं तत्त्वप्रकारं दिशन्
वेदार्थं विमलैर्वचोविलसितैर्व्याख्याति कृष्णः सुधीः ॥ २ ॥
काव्यं साधुपदार्थजातसुषमं योग्यैः प्रसङ्गैश्चितं
सद्ग्रन्थान् विविधान् नवान् ननु कृती निर्माय विभ्राजते ।
कल्याणं दिशति प्रसन्नवदनः सत्प्रीतिमालम्बते
विद्यारण्यविहारदत्तहृदयः कश्चिन्नवो वल्लभः ॥ ३ ॥
श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः सदाचारसमन्वितः ।
विश्रुतः कृतिभिर्लोके मानवानां हिते रतः ॥ ४ ॥
ज्ञप्त्या विभूषितः कृष्णः सदाराधनतत्परः ।
सरस्वतीनिधिं पुष्यन् शोभते शिष्यवन्दितः ॥ ५ ॥

दिनाङ्कः २४।४।७६

अमरनाथ पाण्डेयः

बलवन्तराय शास्त्री

प्राचार्यः

ग० सं० पाठशाला,

भावनगर

सानन्दंसंसूच्यते, यद्भवता दार्शनिकपञ्चाननषड्दर्शनाचार्यसांख्ययोगादि-विशिष्टपदवीधरश्रीस्वामिकृष्णवल्लभाचार्यजन्मस्थले महत्कार्यं कर्तुं निर्णीतः परञ्च तेषां महानुभावानामभिनन्दनात्मकोग्रन्थः प्रकाश्यते तदपि परं शोभास्पदमेव।

स्वामिनः यशःपताका सर्वतः सत्सङ्गसमाजे, विद्वत्समाजे स्फुरत्येव किन्तु अनेन ग्रन्थेन देशविदेशेऽपि स्फुरिष्यति, अस्मिन् ग्रन्थे भाविसंशोधकेभ्योऽपि गवेषणात्मकं साहित्यमुपलप्स्यते, तेषाम् अनेकविदुषाम् अभिप्रायाः वचनरचनादिकं महत्त्वपूर्णं निबन्धकार्यं भविष्यति, इति भवतः प्रयत्नः इति आरंभतः एव दृश्यते, भवता आरब्धमिदं श्रेष्ठकार्यं भगवत्कृपयापूर्णतां गच्छतु इति आशास्महे, अहमपि किञ्चित् स्वल्पं लेखनं प्रेषयितुम् इच्छामि, इदं संस्कारनिमार्णकार्ये व्यापृतेभ्यः सर्वकार्यकरेभ्यो धन्यवादं दत्वा विरमामि।

भवदीयः

बलवन्तराय शास्त्री

शास्त्रीकेशवशर्म्मा

डाकोर-अम्बावाडी

जिला—खेड़ा

श्रीस्वामिनारायणो विजयतेतमाम्

स्वस्तिश्रीमत्स्वामिनारायणसंप्रदायस्वीकृतदीक्षाशिक्षाविचक्षणाः न्यायादिनैकविषयशिक्षाशुद्धान्तःकरणाः पदवाक्यप्रमाणपारीवाराः श्रीमत्कृष्णवल्लभाचार्याः ।

अपारोक्ष्यमलभमाना अपि तन्महानुभावकृतनैकग्रन्थकृततत्तट्टीकाः दृष्ट्वा केषां मनः सुहृदयान्दोलनं नो लभते ।

यद्यपि नैकमहाविद्वद्वैशिष्ठ्याग्रगण्येषु, कृततत्तद्ग्रन्थटीकादिकर्तृषु महानुभावेषु सूर्यसदृशस्वीयहृद्गतज्ञानप्रकाशप्रकाशमानेषु गणना न भवेदेतेषाम्महानुभावानाम्—इति निःशङ्कं चेतो मे धन्यतामनुभवत्—धन्यतामनुभवतीति निश्चप्रचमिदम् । इति प्रणाममततयः विलसन्तु ।।

दिनांकः १०।४।७६

शास्त्रीकेशवशर्म्मा

डा० वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी-डी० लिट्०,

श्री द्वारकेशोजयति

❀ अभिनन्दनम् ❀

श्रीमन्निखिलगुणगणगौरवाणामखिलभूभुजसमर्चितसुरभारतीसमुपासकाग्रतिलकानामनेकग्रन्थग्रन्थिविदारणकुशलानाम्, श्रीस्वामिनारायणपादपद्ममधुव्रतानाम्, कविताकामिनीसौभाग्यसिन्दूरदानदेदीप्यमानदोर्दण्डयुगलानाम् षट्दर्शनाचार्याणामनवरतविद्याभ्यासपरायणजनवन्दितानाम् "विद्यादानं-विशिष्यते" विद्याहवै ब्राह्मणमाजगाम" इत्यादि-सूक्तिकदम्बप्रेरणयाकुङ्कावावग्रामे विद्यामन्दिरप्रतिष्ठापकानामनेकधार्मिकैतिहासिकग्रन्थमुद्रापण-प्रचारण-प्रसारणकुशलानाम्, संस्कृतसेवालब्धयशःशरीराणां गुर्जरदेशतिलकानां पण्डितवर्य्यश्रीकृष्णवल्लभाचार्याणाम् सप्ततिवर्षपूर्त्यवसरे मथुरास्थविद्वद्वर्गसम्मानितभारती-अनुसन्धानभवन-प्रधानामात्यवासुदेवकृष्णचतुर्वेदकृतम्-हार्दिकमभिनन्दनम् ।

मङ्गल अष्टकम्

पाणिनीये महाशास्त्रे कृतभूरिपरिश्रमम् ।
मीमांसाकानने सिंहं वेदान्तारण्यसद्गजम् ॥ १ ॥
काणादे सागरे नूनम् पोतरूपं विचक्षणम् ।
कापिलक्षीरदोग्धार दर्शनह्रदहंसकम् ॥ २ ॥
पातञ्जले पूर्णनिष्ठं वेदाङ्गगृहदीपकम् ।
स्वामिनारायणोद्दिष्ट्शास्त्रसेवापरायणम् ॥ ३ ॥
तत्सम्प्रदायमर्मज्ञं तद्भक्तपदपूजितम् ।
संस्कृतज्ञैः सदावन्द्यमनेकग्रन्थलेखकम् ॥ ४ ॥
गुजराती तथा हिन्दीभाषयोः कविशेखरम् ।
तदभिज्ञजनैरर्च्यं ज्ञानवृद्ध तपस्विनम् ॥ ५ ॥
'अमरेली'-जिलामध्ये 'कुङ्कावाव'-दिवाकरम् ।
गुर्जरप्रान्तसद्रत्नं विद्यादानरतं सदा ॥ ६ ॥
श्रीकृष्णवल्लभाचार्यं तपःपूतं मनस्विनम् ।
जयन्त्यावसरे वन्दे भारतीसमुपासकम् ॥ ७ ॥
श्रीमच्छ्रीवरपादाब्जपरागपरिलालितः ।
वासुदेवश्चतुर्वेदो मङ्गलाशासनं व्यधात् ॥ ८ ॥

डा० वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी

प्रा० नर्मदाशङ्कर शास्त्री

साहित्याचार्यः, काव्यतीर्थः,

एम० ए०, रा० भा० रत्न

❀ धन्येयं सुरभारती ❀

सौराष्ट्रमण्डलान्तर्गत—'कुंकावाव' ग्रामवास्तव्याः साम्प्रतं तु विश्वमानवाः धर्मधुरंधराचार्याः आबाल्यात् सद्विद्यासत्समागमपरिचयात् आसादितविवेक-विनय-लावण्यता-सौजन्य-सौशील्य-श्रद्धा-सद्धर्मज्ञान-वैराग्य-भक्त्यादिदैवीगुणधारकाः धर्मार्थकाममोक्षाख्यपुरुषार्थचतुष्टयसंपत्तिर्हि शब्दार्थज्ञानाधीनेति निर्विवादं मन्यमानाः षड्दर्शनाचार्याः श्रीकृष्णवल्लभाचार्याः स्वामिनः विविधेषु शास्त्रेषु प्ररूढव्युत्पत्तिप्रबुद्धमना गूढार्थं विविच्य बालबोधार्थं परान् प्रत्येषिषून् प्रत्युपदिशतीति संविदानस्य कस्य सहृदयस्य हृदयं न जरिहृषीन्ति । यथा पुस्तकनिर्माणे पटुप्रज्ञास्तथा विचारे-आचारेऽपि च अपूर्वार्थोन्मेषधिषणाः सुस्फुरत्सुप्रतिभाः विमलवाग्विन्यासेन विदुषां चेतः आनन्दयन्ति ।

श्रीमदशेषसम्मानास्पदविमलगुणगणालंकृतानां सौजन्यपरिपूरितान्तःकरणानां संस्कृतवाङ्मयसेवार्पितजीवितानां नानाशास्त्रपारङ्गतानां विकराले कलिकाले कालकल्पे भवादृक् पण्डितानां आचार्यप्रवराणां चरणकमलानां अभिवादनविषये खलु किं निगदितव्यम् ।

ईदृशेऽस्मिन् समये पाश्चात्त्यसंस्कृतिभूषितान्तःकरणानां नानाविधप्रतिभापुञ्जालोकितानां उपचरितज्ञानवतां मध्येऽपि प्राचीनतमां संस्कृतिं संस्कृतं च तत्रत्याः समुज्जीवयन्ति अन्यान् प्रेरयन्ति च ते सर्वथा स्तुत्याः समादरणीयाः सम्पूज्याः सभाजनीयाः अभिवादनार्हाश्च ।

साम्प्रतं भवादृशाः ब्रह्मविद्यापारङ्गताः तदनुकूलाचारवन्तः स्वामिनः एव भारतीयसंस्कृतेः पराविद्यायाश्च संरक्षकाः वरिवर्तन्ति इति समालोक्य भवदीयविद्यापाटवेन सम्मोदितान्तःकरणःशुभाभिनन्दनपूर्वकं यत्सङ्कल्पात् सूर्यो तपति, वायुः वाति, वह्निः समिन्धे, भूमिः धत्ते उदधिः वेलां नोल्लंघयति, सोऽयं निखिलविश्वेषामन्तरात्माऽवतीर्णः श्रीस्वामिनारायणः प्रभुः भवतां कुशलं दिशतु इति द्रव्य-भावभावनापूर्वकं प्रार्थ्य अभिवादनपत्रमिदं श्रीमच्चरणपङ्कजेषु समर्पयामि । पुनः भगवन्तं श्रीनारायणं प्रार्थयामि श्रीमतां सोत्कर्षं चिरायुः कुन्दपुर्णेन्दुशुभ्रयशः अतुलिताध्यात्मिकशक्तिश्च परिवर्धन्तामितिशम् ।

प्रा० नर्मदाशङ्करशास्त्री

दुण्डिराजशास्त्री

सप्ततीर्थः, एम ए,

❀ शुभाशंसनम् ❀

वने विविधदर्शने प्रतिविवादिदन्तावले
कुतर्कबलशालिनि प्रहरति स्वकीयं करम् ।
स्वतर्कनखरैः शितैः शमयिता समाक्रम्य तं
प्रकाशितमयं व्यधान्निजमतिस्थपञ्चाननम् ॥ १ ॥

विभिन्नान्पथो दर्शनानां सुदीर्घा-
न्विरुद्धैश्च तत्त्वैर्दृषद्भिः परीतान् ।
तमिस्रा कुतर्केण व्याप्तांस्तथैव
स्फुटं दर्शयन्दर्शनेऽयं प्रदीपः ॥ २ ॥

संख्यायां सांख्यशास्त्रीयतत्त्वेषु च विचक्षणः ।
सांख्यतीर्थपदेनायं राजते कृष्णवल्लभः ॥ ३ ॥

लब्धवेदान्ततीर्थोऽयं शुद्धाद्वैतपरोऽपि सन् ।
सेवतेऽयं समत्वेन सर्वांस्तत्त्वपथानिव ॥ ४ ॥

काव्येषु कुशलो न्याये शास्त्री वैशेषिकेऽपि च ।
विदुषां सार्वभौमोऽयं वर्तते कृष्णवल्लभः ॥ ५ ॥

विख्यातः ख्यातिवादेष्वमलमतिरयं जातिवादे तथैव ।
व्याख्याकृन्न्यायग्रन्थेष्वतनुषु च तथा चित्सुखीटिप्पणीकृत् ॥
सांख्ये योगे वितन्वन्निजमतिकिरणान् जैमिनीये तथैव ।
नम्रोऽयं स्वामिनारायणचरणयुगे वल्लभः कृष्णपूर्वः ॥ ६ ॥

प्रदेशे गुर्जरे ख्यातममरेलीसुमण्डलम् ।
कुन्काावाभिधं तत्र विद्यते पावनं पुरम् ॥ ७ ॥

महाविद्यालयस्तत्र कलावाणिज्यशाखयोः ।
आशिषा स्वामिवर्याणां चिरकालं प्रकाशताम् ॥ ८ ॥

इति निवेदयति-

दिनांकः २९-३-७६ इन्दौर,

'सप्रे' इत्युपाह्वः दुण्डिराजशास्त्री

कृष्णशास्त्री कानिटकरः

एम० ए०, व्याकरणाचार्यः

प्राध्यापकः तथा अध्यक्षः

संस्कृतविभागस्य, शासकीयकला तथा वाणिज्यमहाविद्यालयः,

इन्दौरपुरम् (मध्यप्रदेशः)

❀ शुभाशंसनम् ❀

संस्कृतहिन्दीगुर्जरभाषासु समृद्धलेखनी यस्य ।
ग्रन्थान् विविधान् लिखति स मान्यः श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः ॥ १ ॥

वेदान्तन्यायमीमांसासांख्ययोगादिषूत्तमा ।
श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमतिः सूक्ष्मार्थं दर्शिनी ॥ २ ॥

काशीपण्डितमण्डलीबुधवरैर्विद्याविनोदे स्तुतो
यः काठिन्यमपाकरोत् सुविशदव्याख्यादिभिः शास्त्रगम् ।
नूत्नग्रन्थनिबन्धनेन महितो योऽध्यापकाधीतिभिः
सोब्दान् पूरयतीति सप्ततिमितान् तन्मङ्गलं कामये ॥ ३ ॥

कुन्काबावाभिधे जन्मग्रामे प्रारभ्यते नवः ।
महाविद्यालयो यः स भूयात्तत्कीर्तिवर्द्धकः ॥ ४ ॥

भगवन्तं प्रार्थयेऽहं सरस्वत्याः प्रियः सुतः ।
श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः समाजीव्याच्छतं शतम् ॥ ५ ॥

दिनांकः २०–३–७६ **कृष्णशास्त्री कानिटकरः**

साहित्याचार्यः, डा० के० रा० जोशी एम. ए., Ph. D.

संपादकः

संस्कृत भवनम्, २ वेस्ट हाइकोर्ट रोड,

नागपुर, ४४०००१

अयि प्रेष्ठमहोदयश्रेष्ठ,

सस्नेहं प्रणम्य निवेदये यत् अनुगृहीतोऽस्मि भवत्पत्रलेखेन दि० १६-३-७६ मित्तेन यथावसरं प्राप्तेन। मम पदसंकेतविषये कयाऽपि भ्रान्त्या श्रीमता मामुद्दिश्य पत्रं प्रहितं स्यादिति पश्यामि। डॉ० के० आर० जोशी नाम्ना समुलिख्यमानः अयं जनः नागपुर-विश्वविद्यालये संस्कृतविभागे 'रीडर' पदे वर्तते।

श्रीमतां पण्डितवर्यस्वामिकृष्णवल्लभाचार्याणां विद्वत्सार्वभौमपद-भूषितानां दर्शन-शास्त्रपाण्डित्यं न केवलं विविधोपाधिभिः अपितु तैः प्रणीतैः विद्वत्परितोष-साधकैः ग्रन्थरत्नैः स्वयं स्फुटम्। 'सुकुमारवस्तुनि साहित्ये' 'दृढन्यायग्रहग्रन्थिले' तर्के च येषां भारती समं लीलायते तेषु विरलविरलेषु विशेषविद्वत्सु प्राचीन-पण्डित-परिपाटीं रक्षत्सु श्रीमतां नाम सुप्रतिष्ठितं भाति।

तेषां जन्मग्रामे 'कुन्कावाव' इत्यत्र तन्नाम्ना अङ्किता 'आर्टस् कॉमर्स इण्टर मिडिएट कॉलेज' इति विद्याशाला जून १९७६ मिते स्थाप्यते इति तोषं जनयितुम् अर्हति। परं यस्याः भारतीय-शास्त्रविद्यायाः परिपालनं स्वामिचरणैः आजीवनं क्रियते तस्याः रक्षणे संवर्धने च अस्मिन् प्रयोगे कामपि व्यवस्थां न पश्यामः। यदि तदर्थं सुदृढं प्रयतमाना काऽपि संस्था स्वामिचरणानां जन्मग्रामे स्थापिता अभविष्यत् तर्हि स्वयं स्वामिवर्याणाम् इतरेषां च विद्याप्रियाणां महते संतोषाय अवर्त्स्यत।

शेषं अपरपृष्ठे द्रष्टव्यम्

वयम् आशास्महे यत् सति संभवे भवान् सहकारिभिः उपबृंहितबलः भारतीय-विद्यानां भाविन्यायनयने बद्धपरिकरां समर्थां संस्थां प्रवर्त्य संस्कृत-साहित्यस्य शास्त्राध्ययनस्य च नवयुगानुकूलं कामपि व्यवस्थां विदधीत। तदर्थं श्रीस्वामिवराणां 'सप्तति-पूर्ति-स्मृति-मन्दिर-महोत्सव-अभिनन्दनग्रन्थः तथा अनुकूलैः तेजस्विभिः विचारैः संपन्नः स्वामिकृष्णवल्लभाचार्याणां स्मृतिं चिराय रक्षेत्। एवं व्यवस्थाविधानं नाम वस्तुतो गोसेवा। गौः नाम वाणी। तस्याः रक्षणं यथार्थतः गोरक्षणं यद्भगवता गोपाल-कृष्ण-चन्द्रस्य मनीषितम्। श्रीवल्लभाचार्यसंप्रदायम् अनुवर्तमानाः अत्र बद्धादराः अमरवाणी-कार्ये स्वग्रामे अन्यत्र च यदि क्रियया अवदध्युः तर्हि बहु नाम सिध्येत्। वयं श्रीमतां सहयोगं तदर्थं प्रार्थयामहे न वयम् आंग्लभाषाप्रधानविद्याशालानां विरोधिनः अपि तु भारतीय विद्याशालानां पक्षं समर्थयमानाः। श्रीमद्भ्यः, पण्डितवर्य-कृष्णवल्लभचार्याणां चरणयोः संस्कृतकार्ये आशीर्वाद-प्रार्थनापुरस्सरं प्रणामम् आवेदयामः।

नागपुरतः 'संस्कृतं भवितव्यं' नाम सुप्रसिद्धं संस्कृत-साप्ताहिक-पत्रं प्रकाश्यते। तत्र स्वामिचरणानां चरित्रादिकं वृत्तान्तं प्रकाशनार्थं श्रीमान् प्रेषयितुम् अर्हति। तस्य संकेतानि अधस्ताद् दीयते। अस्य पत्रस्य पञ्चविंशतिः वर्षाणि संपन्नानि। दि० ३-३-१९७६ मिते दिवसे विशेषाङ्कप्रकाशनसमारम्भः। अनेन पत्रमुखेन पं० स्वामिकृष्णवल्लभाचार्याः तत्र आशीर्भिः अनुग्रहार्थं प्रार्थ्यन्ते। इतरच्छिवम्।

भवदीयः

दिनांकः २९–३–७६

के० रा० जोशी

पं० नन्दकिशोरशास्त्री

अध्यापकः सिद्धान्त ज्योतिषाचार्यः,

शा० सं० म० विद्यालय, उज्जैन

स्वामिश्रीकृष्णवल्लभाचार्य-

सन्मानम्

श्रीमदाचार्य्यवर्य्यैर्विदुषां मुदे वेदान्तादि-विविधविषयेषु ग्रन्थरत्नानि विरच्य, विद्वद्वृन्देषु मूर्धन्यपदं समवाप्तम् ।

मुमुक्षवस्तान् ग्रन्थानधीत्य स्वजन्म साफल्यं विधास्यन्त्येतत् संचिन्त्य मदीयाभिवन्दनमिदं श्रद्धास्पद-पादपद्मेषु सुतरां विलशत्विति कामये ।

दिनांकः २७–३–७६

पं० नन्दकिशोरशास्त्री

श्रीरामश्शरणम्

पं० वंशीधरो वासिष्ठः साहित्याचार्यः

अध्यापकः, शासकीय संस्कृत महाविद्यालयः,

उज्ज्जयिनी

❀ सुभाशंसनम् ❀

विद्वद्वर्यशिरोभाजां पण्डितवर्यश्रीकृष्णवल्लभाचार्यपादानां सम्मानप्रदर्शन-प्रक्रियायां तज्जन्मभूमिवास्तव्यैः क्रियमाणस्मृतिग्रन्थप्रकाशनं विश्रुत्य परमाह्लादितं मे मनः ।

तद्रचितग्रन्थावलोडनेन निश्चितं प्रतिभाति मे, यदेभिः पण्डितवर्यैः सर्व-दर्शनशास्त्रेषु साहित्यकाव्यभक्तितत्त्वेषु च यत् प्रागल्भ्यं स्वरचनासु प्रतिष्ठापितम्, तदभिवन्दनीयं प्रामाण्यकोटिपरञ्च ।

अतोऽहं साम्प्रतं यावच्चतुश्चत्वारिंशद् ग्रन्थनिर्मातृभ्यः पण्डितप्रवरेभ्यः सौहार्द-परां प्रणतिं प्रस्तुत्य श्रीप्रभो रामचन्द्रात् तेषां दीर्घायुष्यमक्षयप्रतिष्ठां च कामये ।

विद्वद्वर्यशिरोभाजां कृष्णवल्लभधीमताम् ।
शंसनं हि शुभं कुर्यात्तद्भक्तानां शिवात्मनाम् ।।

दिनांकः २७–३–७६ **पं० वंशीधरवासिष्ठः**

गुण्डम्भट्टतेलङ्गः

प्राचार्यः

शासकीय संस्कृत महाविद्यालयः,

उज्जैन

❀ शुभसन्देशः ❀

सर्वतन्त्रस्वतन्त्रविद्वच्छिरोमणीनां पण्डितप्रवरश्रीकृष्णवल्लभाचार्यचरणानां सन्मानार्थमभिनन्दनग्रन्थः प्रकाशयिष्यत इति समाकर्ण्य नितरां मोदते मे मनः। न्याय-वेदान्त-काव्य-मीमांसादिविषयेषु एषां महाशयानां अनेका रचनाः संस्कृतभाषां परिपुष्णन्ति भारतीयसंस्कृतिञ्चाभिवर्धयन्ति। एषां पण्डित-प्रकाण्डानां कृतिषु अध्ययनाध्यापनप्रसंगेन द्वित्राः कृतयः समवलोकिताः अन्वभावि-चाचार्यमहोदयानां प्रगाढपाण्डित्यं विवेचनशैलीपाटवञ्च।

ईदृशां विद्वद्धौरेयाणामभिनन्दनावसरे मदीयांसादरप्रणतिपरम्परां प्रस्तुत्य तेषां दीर्घायुष्यं शाश्वतप्रतिष्ठाञ्च श्रीमहाकालादभ्यर्थये।

दिनांकः २७–३–७६

गुण्डम्भट्टतेलङ्गः

लाभशङ्करशास्त्री

व्याकरणाचार्यः, महेन्द्रपुरा,

मोरवी

काश्यां येन जिता सभा मतिमतां शास्त्रार्थकार्ये सदा

विद्वच्चक्रविभावसुः सुरगिरा मुग्धीकृताः पण्डिताः ।

न्यायाचार्यपदाङ्कितः प्रतिदिनं श्रीधार्मिसेवारतः

सोऽसौ वैष्णवकृष्णवल्लभमुनिर्विद्वत्प्रियो राजते ।।

लाभशङ्करशास्त्री

डा० पि० आनन्द

संस्कृत डिपार्टमेण्ट

अलीगढ़

ए० एम० यू०

विद्वद्वरैः श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहोदयैर्विविधान् दर्शनविषयानवलम्ब्य साधिकारप्रणीतैः स्वग्रन्थैस्तत्तद्विषयस्य ज्ञानसीमानो भृशं विस्तारं नीता इत्यविचिकित्सं मे बाभाति। प्रभूतानां ग्रन्थग्रन्थीनां समाधानाय महानुभावानामेतेषां भाष्याणि टिप्पण्यश्च दर्शनशास्त्रे कृतश्रमाणामाचार्याणामप्याचार्यकं विधित्सन्त्येवेति समोदमेतान् सभाजयेत विदुषामाश्रवोऽयमेवं परमानन्दः—

जाड्यं मनस्तमो व्याधिं सममेव हर्त्तुं क्षमा।
बालारुणप्रभा किं वा कृष्णवल्लभ-भारती॥

दिनांकः ३–४–७६

डा० पि० आनन्द

DR. SADASHIV A. DANGE

M. A. (Sanskrit); M. A. (Hindi);

Sahitya Ratna (Hindi); D. L. D. C.;

Ph.-D.; D. Litt. (Sanskrit).

Reader. Deptt. of Post-graduate

Studies in Sanskrit

University of Bombay, Bombay.

Phone : 297292

DR. SMT. SINDHU S. DANGE

M. A., Ph. D. (Sanskrit).

Lecturer in Sanskrit

Elphinstone College. Bombay.

श्रीकृष्णबल्लभाचार्यजी **पण्डित वल्लभ** भी हैं इसमें सन्देह नहीं है।

सांख्य-योग-तर्क भक्ति-मीमांसा इत्यादि गहन विषयों पर ही नहीं, अपि भक्तिभाव में भी आचार्यजी की वाणी माधुर्योपदेशपरिप्लुत है। संस्कृत-हिन्दी-गुजराती भाषाओं में प्रधारावाहित किया गया यह वैचारिक स्रोत पावन एवं बोधमय है।

भवदीय

दिनांक ३–४–७६

सदाशिव ए० डांगे

सुब्रह्मण्यशास्त्री

वाराणसी

न्यायसिद्धान्तमुक्तावल्याः किरणावालीटीका—'नाऽहं केवलं प्रशंसामि, तथ्यं यथार्थं यथाविद्वद्गणवर्णितं निवेदयामि,—न्यायसिद्धान्तमुक्तावल्याष्टीका किरणावली या भवता रचिता साऽधुना सर्वातिशायिनी प्रशस्यते, यत्र मौलिक-पदार्था गहनविषयास्तार्किकप्रणालीविशदीकृता नवनवीना अपि पदार्थाः संवर्णिता अध्येतृणामिवाऽध्यापकानामपि प्रसन्नतावहा आश्चर्यकरा अध्ययनार्थमौपयोगिका विशदार्था विवेचिताः मूर्धन्येयं किरणावली विजयते, किरणावलीलेखकं श्रीकृष्ण-बल्लभाचार्यं पण्डितवर्यं वीक्ष्याऽद्य सभायां मम पण्डितमण्डलस्थस्य मानसमतीव प्रहृष्यति, प्रसन्नो भवामि।

दिनांकः १०—५—७०

सुब्रह्मण्यशास्त्री

श्रीबालकृष्णमिश्रः

विश्वविद्यालयः, काशी ।

श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहोदय ! पाण्डित्यपूर्णा मुक्तावलीकिरणावली भवता निर्मिता, गौत्तमीयोत्तमीयसुप्रमीयतत्त्वंगमीयपरिष्कृतप्रज्ञाप्रक्रमीयाऽभिनवपरिष्कृतिक्रमणीयविज्ञजनवेदनीयाऽभ्याससामयिकाऽन्तःप्रवेशनीयप्रश्नोत्तरप्रशमनीयनैयायिकसुहृदादरणीयगगनाऽर्ककिरणनिभकिरणावली सम्बलनीयतर्ककर्कशशर्करीयप्राच्याऽप्राच्याऽऽविष्कृताऽर्थपरिपूरणीयाऽध्यापनाऽर्हणीयसर्वग्रहणीयविद्वत्स्पृहणीयाऽतिसर्वरमा सुरमा मदवलोकनपावनीतरङ्गमा सुगमाऽपि गहनतमाऽऽह्लादमतुलं मे जनयतीति सुप्रतिष्ठिता भवतु सर्वत्रेत्याशीर्वादं प्रहिणोमि ।

श्रीबालकृष्णमिश्रः

पण्डित हरिरामशुक्लः

साङ्गवेदविद्यालयः, काशी ।

अयि ! समनव्यन्यायकक्षाऽध्ययनस्नातक ! प्रियमित्रवर ! श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहाऽर्हन् ! शास्त्रार्थतर्कवादनिष्णातसुशक्त ! ब्रह्मचारिन् ! किमु बह्वाननैरिवैकाननेनाऽऽधिक्यमनवलम्बयित्रा मयाऽऽवेद्यते,-दीपिकाकिरणापली सर्वथाऽध्ययनकर्तृणां परमोपकारिणी तदीयसर्वतत्त्वस्फोटकारिणी हार्दार्थाऽऽवरणप्रहारिणी बालधीधारणकारिणी सर्वटीकाग्र्या वर्तते इदानीम्, श्रीमता महानुपकारः कृतः, सर्वे पदार्थाः सारल्येन विवेचिताः, सर्वाऽध्येतृवराकमण्डलोपादेया जाताऽस्तीति, अपरेऽपि न्यायग्रन्थास्तथा विवेचनीयाः, श्रीमतः प्राग्भवीया धीरेतेनाऽनुमीयते ।

विक्रम-संवत् १९९६
नागपञ्चमी तिथिः

पं० हरिरामशुक्लः

शङ्करचैतन्य भारती

ललिताघाट, काशी ।

श्रीस्वामिनारायणवैष्णवसम्प्रदायलब्धदीक्ष ! सर्वविद्यास्वन्तःप्रविष्टधीविराजित ! स्वामिसौहार्दसंभृतहृदय ! साधुसमाजानुकूलप्रवर्तनपरायण ! ब्रह्मचारिन् !

विद्वद्वरेण नैयायिकेनाऽपि भवता कृता चित्सुखी टिप्पनी गहनस्थलीयप्रतर्क्यबुद्धिप्रयोज्यप्रामाणिकताप्रधाना झटिति तत्तदर्थाऽऽयोजनायां प्रदीपप्रकाशवदुपसाहाय्यप्रदा संलिखितासा मयाऽवलोकिताऽतीव रमणीयाऽस्ति टिप्पनी टीकेव विराजते मन्ये वेदान्तेऽन्यत्र च श्रीमतोऽनीव पाण्डित्यपूर्णा गतिरस्तीति, तत्रापि यदद्वैतवेदान्ते प्रागल्भ्यं विलोक्यते भवतस्तदतीवाऽऽनन्दप्रदं भवतीति, ब्रह्माऽऽकांक्षी—

ललितामहोत्सवः
संवत् १९९५

शङ्करचैतन्य भारती

पं० श्रीपूर्णचन्द्राचार्यः

टी० म० का० गली, काशी ।

श्रीमते लक्ष्मीनारायणाय श्रीमन्नारायणाय नमोनमः ।

श्रीकृष्णवल्लभन्यायाचार्यः ! त्वया नायकसरः किरणावलीसहितोऽवलोकनार्थं प्रेषितः, मम वार्धक्यमतीव वर्तते, अशक्तिश्च, तथापि मत्सम्प्रदायस्यापि विद्वान् भवसि, अहं जीर्णदुर्गेऽध्यापकः पूर्वं, ततः काश्यामप्यस्मि, त्वया किरणावली सुशोभना न्यायरीत्या विशिष्टाद्वैतप्रसाधिका लिखिता, सम्पूर्णग्रन्थस्य लेखनीया, प्रसन्नो भवामि, अहं तु स्वल्पसमयस्य प्राघुणिकोऽस्मि, त्वं पण्डितवर्यो मां स्मरसीति प्रसीदामि, त्वया अन्यशास्त्रेष्वपि टीकाः कृताः, ता यशःप्रदायिका वर्तन्ते, यशस्वी चिरंजीवी विशेषतो भक्तिमान् भव, तव कुशलमस्तु, प्रतिकृतिं प्रेषयामि, प्राप्तिसूचना देया । इति आशीर्वादकः—

पं० श्रीपूर्णचन्द्राचार्यः

म० म० गोपीनाथकविराज,

एम० ए०

भूतपूर्व प्रिन्सिपाल, क्विन्स कालेज,

बनारस

पण्डितप्रवरः श्रीकृष्णवल्लभाऽऽचार्यजी-महोदय !

अतिवृद्धतयाऽहं न शृणोमि, न पश्यामि न च विचरामि, शय्यामलङ्करोमि, शक्तिसहितं ब्रह्म स्मरामि, पूर्वं काश्यां भवता श्रीस्वामिनारायणवेदान्तसाराख्या हस्तलिखिता प्रतिकृतिर्मह्यं सरस्वतीभवनेऽर्पिता, मया विलोकिता, नूतना श्रीस्वामिनारायणविशिष्टाद्वैतपदार्थाऽवबोधिका सुप्रमेयप्रमाणप्रक्रियामयी मुद्रणार्थं मया स्वीकृता, परं पश्चात् भवतैव स्वधनव्ययेन प्रकाशिता, सा शोभनाऽभवत्, इनानीं यावद् चतुश्चत्वारिंशत्संख्याकाः संस्कृतादिग्रन्था भवता रचिताः तदावेदकं पत्रं प्राप्तम् । सर्वशास्त्रेषु प्रकाण्डपण्डितो भवान् चिरञ्जीवतु । संस्कृतवाङ्मय-सेवको भवान् शारदाकृपापात्रं दिगन्तयशस्वी भवतु । अहन्तु ब्रह्मलोकार्थं सन्नद्धोऽस्मि । भवता 'प्रमात्वविमर्शः' संस्कृतिग्रन्थे तात्त्विको लिखितो मुद्रितः ।

सन् १९७५ **म० म० गोपीनाथकविराजः**

त्र्यम्बकरामशास्त्री

वेदान्ताचार्यः

मिश्र पोखरा, काशी

मान्यवर ! न्यायशास्त्रिन् श्रीकृष्णवल्लभाचार्यस्वामीजी ! विद्याविलासयन्त्रे **सिद्धान्तबिन्दुः** नारायणीटीकान्वितो मुद्रयते नव्यन्यायप्रणालीरचितः सः संशोधनार्थं सटीको भवत्सविधे प्रेष्यते, पूर्वरूप (प्रूफ) पत्राणि भवताऽक्षरशः पदार्थानुसन्धान-पूर्वकं संशोधनीयानि, अहमिदानीं काठिआवाडप्रदेशं गच्छामि, मासद्वयानन्तर-मागमिष्यामि, भवान् न्यायवेदान्तादिषु विद्वान् वर्तते, सम्यग् ध्यानं दत्वा संशोधनं कर्तव्यम्, न्यायमुक्तावलीकिरणावल्याद्या भवद्ग्रन्थाः प्रशंसाविषयाः विद्वत्सु छात्रे-ष्वपि च वर्तन्ते, अत एतन्मदीयं कार्यं कर्तव्यमिति निवेदकः—

श्रावण कृष्णाष्टमी

त्र्यम्बकरामशास्त्री

महामहोपाध्याय माधवशास्त्री भण्डारी

दर्शनाध्यापकः, क्वीन्स कालेज, काशी

बुद्धिमन् अन्तेवासिन् श्रीकृष्णवल्लभशास्त्रिन् ! त्वल्लिखितं योगदर्शनभाष्यं मया सूक्ष्मदृष्ट्या निरीक्षितम्, योगिवत् पारदृश्वना त्वया सर्वेऽपि लौकिका अलौकिका अपि दिव्याश्चाऽभ्यस्ता इव विषया वर्णिताः, शास्त्रीयतत्त्वविज्ञानमपि तत्तद्वादरूपेण स्पष्टीकृतम्, भाष्यं भोजवृत्तिकिरणं च पठनपाठनार्हं विकासितं, यद्वीक्ष्य योग्यं कृतमिति प्रसन्नीभूय त्वां भाविनं श्रेष्ठं विद्वांसं स्मरामि, विख्यातो विद्वान् भविष्यसीति हार्दाशिषा योजयामि ।

महामहोपाध्याय माधवराम शास्त्री

श्रीमान् माध्वाचार्यः

गोस्वामी दामोदरशास्त्री

दार्शनिकसार्वभौमः, साहित्यदर्शनाचार्यः

तर्करत्नन्यायरत्नः

॥ ॐ श्रीगौरकृष्णः शरणम् ॥

साधुगुणसम्पन्न ! विद्योपार्जनैकतानप्रतानितजीवन ! भगवदुपासक ! श्रीकृष्णवल्लभाचार्य ! अन्तेवासिन् !

त्वयाऽर्पितं मह्यं शिक्षापत्री रघुवीरभाष्यपुस्तकं वाचितं तन्मया तत्र तत्र विशेषतयाऽप्यवलोकितम्, शास्त्रीयपद्धतिना लेखनं, मायाऽऽत्मपरमात्मादितत्त्वानां दार्शनिकपूर्वपक्षोत्तरपक्षादिरीत्या सिद्धान्ताऽऽवेदनं चेति सुसमीचीनं कृतं, तत्राऽभिप्रायपत्रं चापि दास्ये, इदानीं त्वया रचिता सांख्यतत्त्वकौमुद्याः किरणावली टीका निरीक्ष्यते, न्यायरीत्या सरलभाषया च परोपकाराय कृतेति योग्यमेतत्, माठरभाष्यकिरणमपि मार्मिकं समन्वयार्थं सुरचितं, भाष्यमपि विशालं गहनार्थसंभृतया भाषया कृतमित्येतत् समवलोक्य मुधा तुष्यामि, दर्शनशास्त्रेष्वपि तव प्रख्यातिर्भविष्यति, अध्यापनं विद्यावर्धकं तत्त्वावबोधकं भवतीति विद्यार्थ्यवस्थायावैतत्कर्तव्यम्, ख्यातकीर्तिर्भव ।

काशी

गोस्वामी दामोदरशास्त्री

पं० शिवदत्तमिश्रः

नव्यन्यायाचार्यः,

गवर्नमेन्ट क्वीन्स कालेज, काशी

॥ ॐ काशीविश्वेश्वराय नमः ॥

त्यागिवर्य ! श्रीकृष्णवल्लभन्यायाचार्य ! संस्कृताऽर्थाऽर्पितसर्वस्वेन भवता परमगुरुवर्याणां श्रीवामाचरणभट्टाचार्याणां चरणौ निषेव्य समग्रं न्यायशास्त्रं क्रोडपत्राणि चाऽधीतानि, वादग्रन्था अपि सर्वेऽधीताः, विद्वत्सभासु तर्कतीर्थश्रीवामाचरणभट्टाचार्येण संस्कृते भाषणार्थमाज्ञापितो भवान् दार्शनिकतत्त्वसंभृतवाग्धाराभिर्व्याख्यानानि करोति, विद्वन्मण्डलप्रशस्तकीर्तिमान् राजतेऽधुना, अग्रेऽपि विद्वज्जनसभाजितो वृद्धिमेतु, श्रीराधाकान्तझा-गिरीशशुक्ल-सूर्यनारायणशुक्ल-पद्मप्रसादशास्त्रिप्रभृतिनव्यन्यायाचार्याणां काश्यामत्र कीर्तिवितानमिव सद्यशोवितानमाश्रित्य सुप्रतिष्ठितो भवतु, प्राचीननवीनन्यायशास्त्रविद्याप्ररक्षणकर्त्रा भवता न्यायटीकाग्रन्था गहनाऽतिगहनपदार्थविवेचनपूर्वकं स्पष्टीकृताः, येऽध्ययने परीक्षासु त्वतीवोपयोगिका भवत्कीर्तिं प्रसारयन्ति । गंगेशोपाध्यायस्य तत्त्वचिन्तामणिरिव, मैथिलवल्लभाचार्यस्य लीलावतीव, भवतोऽपि तत्त्वप्रभावलीग्रन्थो न्यायतर्कपद्धतिको लिखितसर्वप्रस्थानपदार्थकः प्रमेयप्रमाणप्रमातृप्रमितिखण्डात्मको महागौरवाऽन्वितोऽस्माभिराद्यन्तवीक्षिताऽन्वीक्षिकीविद्यासंभृतशरीरोऽधिकविशिष्टवादि - पदार्थगर्भको न्यायसिद्धान्तमुक्तावल्यतिवर्ती मुद्रणार्थं विषयीकृतो हर्षं जनयति, विदुषां विशिष्टविद्ययां नेत्रोद्घाटको भविष्यतीति मन्ये, भवान् प्रकाण्डविद्वन्मण्डलपरिगणनीयो भवति, न्यायविद्यारक्षको भवतीति महानन्दमनुभवामि ।

काशी
वि० सं० १९९६

पं० शिवदत्तमिश्रः

पं० श्रीव्रजकान्तझा

व्याकरणसाहित्याचार्यः, न्यायोत्तमोत्तीर्णः प्रधानाध्यापकः ।

(जीर्णदुर्गे)-वर्तमाने श्रीनरगम् ।

॥ श्रीसरस्वत्यै नमः ॥

श्रुतिः सर्वव्याप्ता सर्वाऽऽराध्याऽऽश्रयणीया च, भगवन्मयी सा यथार्थतात्पर्यवती, यत्र तात्पर्यं स निर्णीताऽर्थोऽभ्यस्यते धीमद्भिरिति, तथायत्नेन सर्वसहिष्णुना कल्याणकरिष्णुना विष्णुनेव सकललोकहिताय प्रबलप्रयत्नकारिणा विविधविद्यापारगामिनाऽनेकग्रन्थकारिणा दिव्याऽऽकारधारिणा श्रीमद्वैष्णवविद्वत्सार्वभौम-दार्शनिकपञ्चानन-षड्दर्शनाचार्यनव्यन्यायाचार्य-सांख्ययोगवेदान्तमीमांसातीर्थ - काव्यकुशल - पण्डितश्रीकृष्णवल्लभाऽऽचार्येण विबुधवरेण विद्वज्जनमनोरञ्जनाय **श्रुतितात्पर्यनिर्णय**-नामकोऽनवद्यग्रन्थो निरमायि, सोऽयं भागीरथीप्रवाह इव परमपवित्रः सकललोकहितावहोऽनेकसिद्धान्तसंभृतो ज्ञानातुराणां निरवद्यज्ञानविज्ञानप्रापकश्चाऽध्येतृणां विविधव्युत्पत्याधायकोऽस्तीति मन्ये। तत्र विशिष्टवैशद्याख्ये प्रथमभागे परमावश्यकजीवात्ममायेश्वरब्रह्मपरब्रह्मणां साधुविचारो विशिष्टब्रह्माऽद्वैतपरकोनिरूपितोऽस्ति। द्वितीयभागे तत्त्वानां स्वरूपवैशद्यं 'सर्वं साकारमिति'च न्यायपरिमार्जितं साधितम्। तृतीयभागे ज्ञानप्रामाण्यस्य स्वतस्त्वपरतस्त्वादि, सर्वदार्शनिकविचारास्तत्र ख्यातिविचाराश्चाऽवतारिताः, ततो जातिविमर्शो, भक्तिरसविमर्शो, रसविमर्शो, न्यायशास्त्रीयहेत्वाभासगादाधरीक्रोडपत्रं, ततश्च विविष्टाद्वैतरामानन्दमतशैवविशिष्टाद्वैतशक्तिविशिष्टाद्वैतविशिष्टब्रह्माऽद्वैतानां सारूप्यवैरूप्यनिरूपणं चेति कृतम्। ग्रन्थेऽगाधधीमता श्रीकृष्णवल्लभाचार्येण वेदानुपवेदानितिहासान्पुराणान्युपपुराणानि न्यायवैशेषिकसांख्ययोगमीमांसाविविधवेदान्तशास्त्राणि जैनबौद्धचार्वाकशास्त्राणि शैवपाशुपतलिङ्गायतरसेश्वरशाक्तशास्त्राणि काव्यशास्त्राणि च समालोड्य भक्तिज्ञानकर्मवैराग्याणां विचारो भक्तेर्विमर्श आत्मपरमात्मविमर्शस्तत्तद्दार्शनिकमतविचारो मोक्षविचारोऽपूर्वतत्त्वविचारः ख्यातिविचारः प्रामाण्यविचारो जातिविचारो भक्तिरसविचारश्चान्यवस्तून्यपि सुचारुतया सन्दृब्धानि, तदस्य ग्रन्थस्य कस्याश्चिद् विश्वविद्यालयीयपरीक्षायाम्प्रवेशः स्यात् तदा विद्यार्थिनां सहचमत्कारेण महानुपकारो भवेदिति भगवन्तमभ्यर्थ्य विरमामि मिथिलादेशवास्तव्यः—

वि० सं० २०२८

पं० श्रीव्रजकान्त झा

विजयकुमारशास्त्री

आचार्यः, पोष्टाचार्यः

दार्जीलिङ्ग, नेपाल

॥ ॐ सर्वयज्ञात्मा प्रसीदतु ॥

श्रीमतां पण्डितधुरन्धराणां श्रीकृष्णवल्लभाचार्याणां सर्वासु दार्शनिककृतिषु किमुत्प्रेक्षयितव्यम् ! पद-वाक्य-प्रमाणा-ऽलङ्कार-छन्दःप्रभृतिषु पारावारेषु पारीणानां सर्वमपि परीक्षणम् अस्थानमेव । दार्शनिकाः प्रायशः सर्वे ग्रन्था भाष्यटीकादिभिरलंकृताः, नूतना अपि न्यायवैशेषिकसांख्ययोगवेदान्तमीमांसाग्रन्था विरचिताः, वर्तमाने वाचस्पतिमिश्रस्वरूपं धारयति, मीमांसाटीका परिष्काराश्च प्रकटीकृताः, महाभारतादपि सपादगौरवभरा श्वेतायनसंहिता (श्रीलक्ष्मीनारायणसंहिता) देवमानवतिर्यगादिविषयकसर्वयुगधर्मान्विताऽनवशेषाऽऽख्यानसंभृता च विरचिता, कृतिदर्शनेन श्रीकृष्णवल्लभाचार्या नित्यसार्वज्ञधर्तृस्वरूपाः प्रभासन्ते । श्रीहरिवाक्यसुधासिन्धुग्रन्थस्य संस्कृतपद्यबद्धस्य २२५० सूत्राणि, तदुपरि पञ्चसाहस्रपृष्ठकभाष्याऽर्णवश्च ब्रह्मरसायनभाष्यात्मको महाप्रबन्धो निरमायि दिव्यविदुषा इव देवविदुषा, श्रीस्वामिनारायणदर्शनमपि सप्तमं दर्शनशास्त्रं दर्शनपद्धतिना निर्मितं कल्याणीवृत्तिसहितं दार्शनिकसिद्धान्तसंभृतम् । अथ श्रीहरिस्वरूपनिर्णयग्रन्थोऽपि सुयुक्तिकः सविप्रतिपत्तिः सत्सङ्गभाष्यसंहितः स्वयंरचितभाष्यशोभनः प्रकाशितः, वैष्णवाः शैवाः शाक्ता अन्ये च साकारोपासकाः गोलोकवैकुण्ठसाकेताऽव्याकृतक्षीरसागरबदरिकाश्रमकैलासादिधामस्थाः श्रीकृष्णश्रीरामश्रीनारायणश्रीभूमपुरुषश्रीवासुदेवश्रीपरमपुरुषश्रीनरनारायणश्रीसतीश्वरमहेश्वरादिभक्तिपरायणाः स्वेष्टं परमात्मानं धामस्थैतद्भूमिस्थस्वरूपैक्यात्मकम् भूमिस्थतत्तद्धामस्थस्वरूपैक्यात्मकं च 'एकमेवाऽद्वितीयं ब्रह्म'ति प्रमोयोपासकास्तत्सेवामुक्तिं लभन्ते,—इति सिद्धान्तिनां महानाधारस्तम्भरूपः श्रीहरिस्वरूपनिर्णयाख्यग्रन्थोऽतीवोपकारकृत् वैष्णवानामिति सोऽपि सत्सङ्गभाष्येणाऽलंकृतः श्रीकृष्णवल्लभाचार्यैः । 'एतत्प्रशंसने वाङ्विराममेति । श्रीकृष्णद्वैपायनव्यासोत्तरपञ्चसहस्राधिकवर्षसमयविगमानन्तरमयं श्रीश्वेतायनो व्यासो वर्तते इति सर्वथा वैमत्याऽनास्पदम् ।

तथ्यप्रमाता

विजयकुमारशास्त्री

हरिप्रकाशशास्त्री

वेदाद्याचार्यः, काशी,

गान्धीनगरीयगुरुकुलाऽधिष्ठाता

(महागुजरात)

॥ ॐ श्रीहरये नमः ॥

उद्भवावतारश्रीरामानन्दस्वामिना सुस्थापिते वृषात्मजेन श्रीहरिणा सुसंवर्धिते श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदाये धर्मवैराग्यमाहात्म्यज्ञानपूर्वकैकान्तिकभक्तिमार्गप्रतिष्ठिते वेदानुगेऽत्र मानुषरूपधारिणि परमात्मनि दिव्यसाकारे सर्वाकारे दिव्य-मानवैक्याकारे शाश्वते हरिस्वरूपे श्रुतिनिर्णीतेऽपि मानवधीगततथाविधनिर्णयार्थं प्रकाशितः सभाष्योऽयं श्रीहरिस्वरूपनिर्णयाख्यः प्रबन्धः सर्वेषां मूर्त्युपासकानां भगवदवतारभक्तानां तुल्योपकारकः, अयं भगवच्छ्रीस्वामिनारायणस्य प्रमुख-सच्छिष्यैर्योगकलानिधिभिर्योगीन्द्रश्रीगोपालानन्दमुनिभिर्विरचितः, स च वैष्णव-विद्वत्सार्वभौमैः पण्डितप्रवरैः श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहाभागैःसत्सङ्गभाष्येण भाषितः। भाष्यकाराणां सुनाम तु पूर्वमेव काश्यां विद्वत्संसदि सुविदितमस्ति ।

हरिप्रकाशशास्त्री

श्रीश्वेतवैकुण्ठशास्त्री

प्राचीनन्यायाचार्यः, वेदान्ततीर्थः, सांख्ययोगवारिधिः

काशी (वर्तमाने वृत्तालयस्थः)

॥ श्रीहरिं समुपास्महे ॥

भगवत्स्वरूपनिर्णये श्रुतयः स्वाऽसामर्थ्यं कथयन्ति, अपारत्वात्, किन्तु अवतार्यपि अवतरन् मानवस्वरूपो भूमावास्ते, श्रीस्वामिनारायणनाम्ना ख्यायते, दिव्यसाकारमानवाकारैक्यमिति हरिस्वरूपनिर्णयविषयः, अस्य ग्रन्थस्य सत्सङ्गभाष्यं श्रीमद्दार्शनिकपञ्चानन-षड्दर्शनाचार्य - नव्यन्यायाचार्य - सांख्ययोगवेदान्तमीमांसातीर्थ-वैष्णवविद्वत्सार्वभौम-काव्यकुशलैः श्रीकृष्णवल्लभाचार्यैःसंविरचितम् यत्र "श्रीहरेरनादिसिद्धदिव्याकृतित्वं, दिव्यत्वे मनुष्यत्वं, मनुष्यत्वे दिव्यत्वम्, दिव्यत्वे पुनर्मनुष्यत्वम्" इति श्रुत्यादिमूलकन्यायाद्यैः साधितम्, सर्वेऽपि वेदान्तादिविषयाः, विप्रतिपत्तयश्चाऽवतारिताः, सार्वभौमा दार्शनिकाः सिद्धान्ताः पूर्वोत्तरपक्षादिरचनास्वरूपाः प्रतिपादिताः, ग्रन्थोऽयं विशिष्टब्रह्माद्वैतात्मकसाम्प्रदायिकमहासिद्धान्तसागरात्मको विद्यते, सर्ववैष्णवसिद्धान्तसम्पोषकमिदं भाष्यं बहुलोपकारकं भविष्यति, पण्डितमान्या महाविद्वांसः सर्वविद्यानिधाना महासत्पुरुषाः श्रीकृष्णवल्लभाचार्याः स्वामिवर्याः पारेलक्षं धन्यवादार्हाः ।

विदुषामनुचरः

दिनांकः १०–१०–७०

श्रीश्वेतवैकुण्ठशास्त्री

श्रीस्वयम्प्रकाशदास कोठारी

ॐ

श्रीसत्सङ्गिजीवनाख्यः श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदायस्थापनादिवृत्तान्तावेदको धर्मशास्त्रात्मकोऽष्टादशसाहस्रसंहितास्वरूपो ग्रन्थः पारायणादिमहोत्सवाऽऽधारो वर्तते, सप्ताहे टीकान्तराश्रयगौरवे दैर्घ्ये पारमलभमानानां कृते भागवतचूर्णिकावत् ग्रन्थेऽत्र सारबोधिनी पारायणी टीका सरला श्रीकृष्णवल्लभाचार्यैः संरचिता, आध्यात्मिकतत्त्वानि धर्मव्रतादितत्त्वानि चमत्कारोपासनाभक्त्यादीनि दर्शनवेद्यतत्त्वान्यपि वर्णितानि, कर्मज्ञानभक्तिसत्सङ्गकाण्डा निरूपिताः । मुद्रयते सटीकः काश्यामिदानीं वर्षान्तरे एव सुसम्पन्नो भविष्यतीति—आवेदयन्ति—

शास्त्रिपञ्चसमितिः
जूनागढ़
ता० १-६-७६

श्रीस्वयम्प्रकाशदासशास्त्री
पुरुषोत्तमचरणदासशास्त्री
माधवदासशास्त्री
देवप्रकाशदासशास्त्री
सिद्धमुनिदासस्वामी



सन्त-महात्मा-सद्गुरुओं-द्वारा आशीर्वाद (पृष्ट

सद्गुरुस्वामी अक्षरपुरुषदास

श्रीस्वामिनारायणमन्दिर, जूनागढ़

॥ सद्गुरुभ्यां नमः ॥

सद्गुरु श्रीगुणातीतानन्द स्वामी नी उपदेश वार्ताओं पाँच प्रकरणों ने संस्कृत श्लोकों माँ बनावी, तेथी हूँ बहुराजी थाऊँ छूँ।

सद्गुरु श्री गोपालानन्द स्वामी जी उपदेश वार्ताओं त्रण प्रकरणों ने संस्कृत श्लोकों माँ करी तेथी पण खूब-खूबज प्रसन्न था उ छूँ बन्ने ग्रन्थों मुख्य उपदेशों ना छे, श्री गुणातीतानन्द स्वामी नी वार्ताओं ना अभ्यास बड़े ब्रह्मरूप थवाय छे, अने श्री गोपालनन्द स्वामी श्री नी वार्ताओं ना अभ्यास बड़े श्री हरि पांसे ब्रह्मलोक माँ जयाय तेम मूर्तिमां जोडावाय छे। आवा संस्कृत ना श्लोकों माँ कथा ग्रन्थो मूल स्वरूपे थया तेथी आपे श्री हरिना सत्सङ्ग नी उन्नति नी सेवा बजावी छे, तेथी श्री हरि सद्गुरु ओ अने सन्तो राजी थईए छीए ॥ आशीर्वाद ॥ अविचल कीर्तिवाले हों ॥

सद्गुरुस्वामी अक्षरपुरुषदास

श्रीगुरुलिङ्गन्यायाचार्यः

तामिलनाडः

तत्त्वप्रभावलोग्रन्थो नूतनो विशिष्टं न्यायशास्त्रं नव्यन्यायतत्त्वसंभृतम्, तत्त्वचिन्तामणिनिभतां भजते, न्यायमुक्तावली त्वत्रांऽशेषु मिलिता प्रकाशते, अत्र ग्रन्थे **प्रमेयखण्डः** प्रथमः, तत्र १—प्रथमपरिच्छेदे विशिष्टरीत्या पदार्थनिरूपणम्, २—परिच्छेदेपदार्थसाधर्म्यनिरूपणम्, ३—द्रव्यनिरूपणम्, ४—गुणनिरूपणम्, ५—तत्तद्गुणनिरूपणम्, ततो द्वितीयः **प्रमाणखण्डः,** अत्र ६—परिच्छेदे ज्ञानतत्त्वनिरूपणम्, ७—तर्कतत्त्वनिरूपणम्, ८—नवप्रमाणानां सविस्तरप्रतिपादनम्, ९—विविधा विप्रतिपत्तयः, १०—अनुमानं सपरिकरम्। ११—शब्दपरिच्छेदः, अत्र शक्तिवादव्युत्पत्तिवादशब्दशक्तिप्रकाशिकासिद्धान्तकौमुद्यादिप्रदर्शितशक्तिलक्षणाशाब्दबोधतत्कारणानां सविस्तरनिरूपणम्। ततः तृतीयः **प्रमितिखण्डः**, अत्र १२—परिच्छेदे ज्ञानप्रमितीनां सविस्तरसलक्षणविवेचनानि। ततः चतुर्थः **प्रमातृखण्डः**, अत्र १३—परिच्छेदे प्रमाताऽऽत्मा सर्वदार्शनिकपूर्वपक्षोत्तरपक्षसिद्धान्तरीत्या प्रतिपादितः, १४—परिच्छेदे जीवेश्वरमायाब्रह्मपरब्रह्मेतिपञ्चतत्त्वानि प्रतिपादितानि, एवमयं ग्रन्थो नव्यन्यायशास्त्रतनुकोऽधिकतत्त्वसन्तानको नव्यप्रणालीस्नातको विस्तृतन्यायारण्यस्य दर्शकयन्त्रवत् दर्शकः पण्डितानां त्वतीवोपकारकोऽध्येतृणामध्ययनेन शास्त्रार्थबहुज्ञताऽऽधायकः अनेकविधदर्शनख्यातीनां वैशद्यतया वर्णनपरोऽधुनाऽऽयतौ चातीवोपकारको मुद्रितः, रचयिता श्रीकृष्णवल्लभाचार्यो विद्वत्सार्वभौमो नव्यन्यायाचार्यो दार्शनिकपञ्चाननः सांख्ययोगवेदान्तमीमांसातीर्थः काव्यकुशलः।

श्रीगुरुलिङ्गन्यायाचार्यः

श्रीकृष्णकुमारशास्त्री

मीमांसाविद्याभास्करः,

प्रधानपण्डितः, म्हैसुरः

मीमांसार्थसंग्रहो ग्रन्थः जैमिनिमुनिप्रणीतवाक्यार्थनिर्णयानामनायासेन गमकानां न्यायानां सुस्पष्टसारस्वरूपोऽयम्, मूलस्वरूपोऽप्यतिस्पष्टो लौगाक्षिभास्करेण मीमांसाशास्त्रीयतत्त्वेषु प्रवेशार्थं निर्मितः, मूलस्य टीकाऽपि रामेश्वरशिवयोगिप्रणीता कौमुदीसुटीकाऽस्ति, मूलग्रन्थोऽयं पदवाक्यप्रमाणाऽलङ्कारपारावारपारीणपण्डितमूर्धन्यश्रीकृष्णवल्लभाचार्यरचितकिरणावलीटीकासहितः संस्कृतः तथा हिन्द्यनुवादसहितः प्रबलनिर्बलपेटिकाद्यात्मकः सर्वथा टीकया विशदीकृतोयागाऽपेक्षकाण्डान्वितः गहनेऽपि संलिप्तेऽपि तत्र तत्तत्त्वेषु मनो दत्वा वाचकानां विशिष्टार्थवैशद्यलाभप्रदः, परीक्षोपयोगिनोऽवश्यं ज्ञातव्या विषयाः किरणावल्यां स्पष्टीकृताः वाक्यभेदाद्या विध्याद्याश्चापि यथाऽध्ययने तथा विशदीकृताः, अङ्गत्वादिपरिष्कृतयोऽपि बुद्धिमतां कृते निवेशिताः अर्थसंग्राहकः सार्थकनामा भवति ।

श्रीकृष्णकुमारशास्त्री

देवकीनन्दनशास्त्री

प्रिन्सिपाल, टी० म० कालेज, काशी

दर्शनतत्त्वसारो ग्रन्थो दुग्धदधिनवनीतवत् यावद् दर्शनशास्त्रीयगहनाऽऽवश्यक-ज्ञानविज्ञानप्रतिभादिसमुद्भूतदार्शनिकविद्वज्जनविवेचितार्थाऽऽकर्षणसम्पन्नोऽवलोक-नार्होऽध्ययनयोग्योऽपि छात्रोपकारकः श्रीकृष्णवल्लभाचार्यदार्शनिकविद्वद्भिः संरचितः सम्यगुपादेयो वर्तते, दार्शनिकपण्डितैः जीवनकृष्णभट्टाचार्यक्षीरोदबन्धु-भट्टाचार्यसंकषर्णवेदान्ताचार्यभागवताचार्यशान्तानन्ददर्शनाचार्यरामशरणदर्शनाऽध्या-पकादिभिः मुक्तकण्ठप्रशंसितो वर्तते ।

देवकीनन्दनशास्त्री

चन्द्रमणिशास्त्री

साहित्याचार्यः, भिषग्विशारदः

अमृतसर, पञ्जाब

कविकाव्यगौरवमिति ग्रन्थः श्रीकृष्णवल्लभाचार्यैः काव्यदोहनस्वरूपो नवीनाऽऽविष्कारसंभृतः सुरचितः, उपादेयश्च साहित्यगहनभाषयामिष्टसरस्वत्या गहनार्थगर्भितया विरचितः, कवीनां दार्शनिकानां, संस्कृतत्वतृप्तानामपि क्षणमवलोकनार्हो वर्तते। काश्यां मया मम गुरुवर्येभ्यः श्रीकृष्णवल्लभाचार्येभ्यो न्यायादिग्रन्था अधीताः, एते महाविद्वांसः सन्तो नैष्ठिकव्रतिनो विद्यामूर्तयः सर्वशास्त्रप्रवीणाः। मम भ्राताऽनुजोऽपि गुरुवरकृपया सुविद्वान् सुकीर्तिश्च शोभते।

गुरुकृपाकणभाग्

चन्द्रमणिशास्त्री

कृष्णदेवः

व्याकरण-साहित्याचार्यः

संस्कृताध्यापकः, मिरजापुर (यू० पी०)

अहं काश्यां श्रीरामशरणव्याकरणाचार्याऽग्रे व्याकरणमधीतवान्, तदानीं न्यायशास्त्रं श्रीकृष्णवल्लभाचार्याऽग्रेऽधीतवान्, तदानीं राजमणिः, रामाधारपाण्डेयः, सत्यव्रतमिश्रश्चैते सहाऽध्ययनकर्तारो गौर्जरा अन्येऽपि सप्ततिसंख्याका अन्तेवासिनो भवामः विविधशास्त्राध्यापनेन लब्धकीर्तयः श्रीकृष्णवल्लभाचार्या गुरुवर्याः, प्राणनाथविद्यालये निवसन्तः पूज्याः प्रातर्ध्येयस्वरूपाः विद्या अध्याप्य शास्त्राणि विरचय्य पण्डितसभासु संस्कृते व्याख्यानानि प्रदत्वा काव्यानि कृत्वा शास्त्रार्थेषु कीर्तिपदं लब्ध्वा च विख्यातप्रकाण्डपाण्डित्योल्लसमाना वर्तन्ते। श्रीश्यामचरणशास्त्रिणामेतेषामग्रे न्यायाऽध्ययनम् ॥

कृष्णदेवः

विश्वेशचतुर्वेदी

वेदवेदान्ताचार्यः

माध्वीयमहाविद्यालयः, लाशीयो, बर्मा

ब्रह्मदेशे लाशीयो-महाविद्यालये दार्शनिकतार्किकमहाविदुषो वरण्यर्थं काश्या-महं काषायाम्बरी माध्वाश्रितः समायातः, अध्यापकस्य मार्गणार्थं भ्रमता प्रिन्सिपाल-श्रीमङ्गलदेवशास्त्रिभिरावेदिताः प्रकाण्डपण्डिताः श्रीकृष्णवल्लभाचार्या मया निरीक्षिता अध्यापने प्रवचने लब्धकीर्तयः सहस्रमुद्राभिरभिमता आवेदिताश्च काषायाम्बर-वैष्णववर्याः, पण्डितवरान् प्रदृष्ट्वैवाऽहं प्रसन्नमानसोऽभवम्, आरा-धिता अपि ब्रह्मदेशे गन्तुम् अनिच्छवः आचार्यवर्या मयाऽभिपूजिताः, तत्पुस्तका-न्यवलोकितानि, आश्चर्यचकितोऽहं नैतादृशमन्यं दिव्यं भव्यं ब्रह्मशीलं विद्यानिधिं काव्यव्याकरणदर्शनतर्कादियावच्छास्त्रसम्पन्नं कञ्चिल्लब्धवान्, नीराशो भूत्वा लाशीयोनगरं गतवान्। एतान् पण्डितप्रवरान् इदानीमपि स्मरामि मानसे पश्यामि ज्ञाने ध्यायामि श्रेयश्च विन्दामि। श्रीशिवनाथझारखण्डिपण्डितोऽपि श्रीस्वामिनं गन्तुमकथयत्, अपि तु स्वामी नाङ्गीचकार।

विश्वेशचतुर्वेदी

ज्वालाप्रसाद गौड़ः,

न्या० आ०

प्रधानाचार्यः,

श्रीसंन्यासि संस्कृत महाविद्यालय;

(सिद्धपीठ, अपारनाथ मठ), सीके ३७/१२, ढुण्ढिराज गणेश,

वाराणसी (उ० प्र०)

॥ श्रीः ॥

स्वामिनारायणसंप्रदायनिरूपितवैशिष्ट्यविशेषितानां नानाविधग्रन्थानां लेखनकर्तृणां टीकाकर्तृणाञ्च सकलशास्त्रपारङ्गत्वेऽपि मदीयदृष्टिकोणतो विशेषतस्तर्कज्ञवृन्दवरवारणवारणभ्रुणां स्वामिनारायणसद्भावप्रतिपादनपरस्य वेदस्यापि प्रामाण्यमभ्युपगन्तृणां सतां श्रीमतां श्रीकृष्णवल्लभाचार्यशास्त्रज्ञमहोदयानामिदमभिनन्दनं प्रकाश्यमानश्च भविष्यत्कालीनोऽयमभिनन्दनग्रन्थः केषां न विदुषां चतुरचेतसाञ्च चेतसि चमत्कारमाधास्यते। महान् हर्षप्रकर्षास्पदीभूतोऽपञ्चास्ति विषयो यत् श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहोदयैर्लिखिता ग्रन्थाः सर्वथा भारतीय शास्त्रीयवैशिष्ट्यपूर्णेन वैदुष्येण संस्कृतलेखननैपुण्येन च सन्ति समन्विता इति न तिरोहितमस्ति केषामपि विदुषाम्।

अहन्तु मन्ये यत् क्षणनश्वरे मृगतृष्णिकामसीवेहत्ये निर्बलेऽस्मिन् जीवलोकेऽपि दर्शनशास्त्रोद्धारधौरेयतया स्वीयं वास्तविकं जीवनसाफल्यं प्रादर्शि इत्यप्यस्त्यमन्दानन्दसन्दोहस्य विषयः।

दिनांकः ६–१–७६

ज्वालाप्रसादगौड़ः

का० चे० त्रिवेदी

आचार्यः

श्री सुरगवाला सार्वजनिक

हाईस्कूल, वडीया

❀ अभिनन्दनम् ❀

विश्ववंद्यपण्डितवर्यश्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहाराजेन विरचितानि पुस्तकानि केवलं सांप्रदायिकस्वरूपेण न, किन्तु जीवानां इह लौकिकपारलौकिकात्मसुखोन्नतिकारकाणि वर्तन्ते। छात्राणां अध्ययने एतानि पुस्तकानि यथा गिरौ सोपानमार्गः स्यात् तदेवं जायते, देवभाषायाः परमोपकारकान् आचार्यमहानुभावानभिनंदयामि।

परमश्रद्धेयः

का० चे० त्रिवेदी

श्रीमुकुन्दमाधवशर्मा

एम० ए०, पी-एच० डी०, डि० लिट्०, काव्यतीर्थो

गौहाटीविश्वविद्यालयीयसंस्कृतविभागप्रधानः

❀ श्रीकृष्णवल्लभाचार्यसदभिनन्दनम् ❀

श्रीकृष्णवल्लभाचार्याः सुधियः कीर्तिमण्डिताः ।
अशेषशास्त्रज्ञानाढ्याः गृह्णन्तु विनयाञ्जलिम् ।।
येषां धारणकार्यपुण्यविभवैर्धन्या धरित्री स्वयं
धन्यं गुर्जरराज्यमद्य नितरां येषामशेषैर्गुणैः ।
येषां सत्कविवृन्दमुख्यविदुषां पुण्ये सपर्याक्षणे
विश्वेऽस्मिन् निखिलेऽपि मान्यविबुधा गायन्त्यशेषं यशः ।।
कुङ्कावावभुवं स्वपादरजसा धन्यां नु कुर्वन्ति ये
ये चापि प्रथितस्वनाममहसा कुर्वन्ति पृथ्वीं तथा ।
येषां पुण्यतनौ विराजित इव श्रीस्वामिनारायण-
स्तेभ्यः सद्विदधातु भाग्यमखिलं श्रीस्वामिनारायणः ।।
नागग्रहवसुक्षौणीसम्मिते शाकहायने ।
गुणयुग्ममिते पुण्ये स्वाषाढे बुधवासरे ।।
प्रशस्तिर्विहिता येयं तनुवाग्विभवैरपि ।
भगवदिच्छया भूयात् सेयं लोकसुखाय शम् ।।

श्रीमुकुन्दमाधवशर्मा

डॉ० रुद्रदेव त्रिपाठी

एम० ए०, पी-एच० डी०

रीडर तथा अध्यक्ष—अनुसन्धान तथा प्रकाशन विभाग

संस्कृत विद्यापीठ

११६ शान्ति निकेतन,

नई दिल्ली

इदमभिज्ञाय मानसं ममातीव मुदमावहति यत्—स्वामिवर्यश्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहाभागानां शास्त्रसेवा-धर्मसेवा-राष्ट्रसेवाप्रभृतिगुणानभिलक्ष्य तेषामभिनन्दनाय भारतस्य विद्वांसः प्रयत्नशीला विद्यन्त इति ।

विश्वस्याङ्गुलिगणनीयेषु स्वामिनारायण-सम्प्रदायाचार्येषु महान्तो वेद-वेदान्त-न्याय-मीमांसादिशास्त्राणां प्रगाढपाण्डित्यमण्डिता आचार्यचरणाः स्वीयाभिरनेकाभिः शास्त्रीयकृतिततिभिरस्य देशस्य निश्चितमेव गौरवं वर्धितवन्तः । 'श्रीलक्ष्मीनारायणसंहिता' सदृशस्य महतो ग्रन्थराजस्य रचना तेषामपूर्वं प्रतिभावैभवं पुरस्करोति । हृद्यां विद्यामनुदिनमाराध्य नानाग्रन्थरत्नानां निर्माणपूर्वकं यादृशी साहित्यसेवा तैः सम्पादिता सा सत्यमेवापूर्वैव ।

एतादृशस्य महात्मनोऽभिनन्दनेन भारतीया विद्वांसः स्वीयं कर्तव्यपूर्तिं विदधति तत्र ममापि प्रणतिततिसहिता सम्मतिरिति । सफलमस्त्वभिनन्दनमिति ।

भवदीय एव

डॉ० रुद्रदेव त्रिपाठी

ओम्प्रकाश

एम० ए०, एल-एल० बी०, पी-एच० डी०, डी० लिट्०

हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय,

ई० १ इन्द्रप्रस्थ कॉलेज निवास,

श्यामनाथ मार्ग, दिल्ली

विद्वद्वर्यस्तपोमूर्त्तिः, काव्य-दर्शन-केसरी ।
स्वामिनारायण-दीपः, शोभते लोकश्रेयसे ॥ १ ॥

कर्त्तारः ग्रन्थरत्नस्य, तत्त्व-संग्रह-तत्परः ।
श्रीकृष्णो वल्लभो यस्तु, सुवाणी-वल्लभो यति ॥ २ ॥

विद्यानिधिस्तर्कतीर्थः, कर्मयोगी विचारवान् ।
कलौ व्यास इव ख्यातः, कृत्वा संस्कृति-संहिताम् ॥ ३ ॥

नमो विद्याविलासाय, नमो नव्यतपस्विने ।
नमो दर्शनरूपाय, नम आचारमूर्त्तये ॥ ४ ॥

नागपञ्चमी, सं० २०३३ वि० **ओम्प्रकाशः**

वेदानन्द झा

व्या० न्या० वे० सा० आचार्य, एम० ए०, हि० सा० रत्न

प्राचार्यः (प्रिंसिपाल)

श्रीमोतीनाथ संस्कृत महाविद्यालय

रमेश नगर, नई दिल्ली

❀ श्रीकृष्णवल्लभाचार्य-प्रशस्तिः ❀

न्यायाटवीगहनगह्वरगूहितार्थान् व्यद्योतयत् स दययोदयनोदिनेशः ।
कृष्णाभिधां श्रयितुमेव मुदाऽवतीर्णो मन्येऽतनोत् पुनरहो किरणावलीं सः ॥ १ ॥
मुक्तावलीं परिगता किरणावलीसान्यायाब्जजालमकरन्दगुणान् किरन्ती ।
कस्यार्थमीहितमहो विशदं दिशन्तीशश्वत् प्रमोदमतुलं न तनोति पुसः ॥ २ ॥
संक्षिप्य सांख्यविषयान्निबबन्ध पद्यैर्ह्यैस्तथापि हृदयं न मुदं समापत् ।
श्रीकृष्णवल्लभवपुः समवाप्य कृष्णः सांख्यं व्यभासयदसौ किरणावलीतः ॥ ३ ॥
वाचस्पतेः सुविततांकिल कौमुदीयासांख्याब्धितत्त्वविशदाशयभासमाना ।
साऽपि प्रकाशयति सांख्यरहस्यभावानुद्भाविताऽर्थसवितुः किरणावलीतः ॥ ४ ॥
श्रीकृष्णवल्लभबुधेश्वरवल्लभन्ते लोका न काव्यनिगमागमसिन्धुपारम् ।
सारं सुदर्शनसुदर्शनचक्रदीप्तज्ञानाम्बुराशिहरिपाणिनखाम्बुजस्य ॥ ५ ॥
श्रीकृष्णवल्लभगुणा गदितुं न शक्याः शक्याः कथं तुलयितुं कविराजहंसैः ।
मानं नु तत्र तुलामधिगन्तुमीष्टे मानं विना कथमये तुलनाऽमितानाम् ॥ ६ ॥
न्याये सांख्ये च योगे कविकुलकलिते काव्यसम्पत्कदम्बे-
मीमांसाऽर्थे गभीरे विनिहितकिरणो द्वैतशास्त्रे प्रवीणः ।
तीर्णः शिक्षापयोधिं विततरससरिद् गाहितश्रौतसारो-
विद्वत्कञ्जेषु कृष्णो जयति मधुकरस्तीर्थसन्देशहारः ॥ ७ ॥
अलंकृतो येन विदां सतां गणः सुसात्वतां भक्तिसुधासरस्वताम् ।
निपीत लक्ष्मीपतिपङ्कजश्रीः स वैष्णवः कश्चन कृष्णवल्लभः ॥ ८ ॥
जयत्यसौ वन्द्यपदारविन्दः सरस्वतीधौतमुखारविन्दः ।
प्रसादिताशेषबुधालिवृन्दो विकीर्णसच्छास्त्रकथामरन्दः ॥ ९ ॥

दिनांकः ३०-७-७६

वेदानन्दः

चन्द्रकिशोरगोस्वामी

संस्कृतविभागे व्याख्याता

३३, अरविन्द-निवासः,

वनस्थली-विद्यापीठम् (राजस्थानम्)

सकलविद्यावगाहनविशदीभूतमानसाः विबुधवर्य्याः, सादरं प्रणतितयः !

भवद्भिर्महात्मभिः "प्रकाशितं श्रीहरिसम्भवमहाकाव्यम्" कविवराचिन्त्यानन्द-विरचितं किमप्यमूल्यं निर्मूल्यमेव संस्कृतानुरागिभ्यो वितीर्यते—इति श्रुतिगोचरतां गता वार्ता। "संस्कृतसाहित्ये वात्सल्यरसः"—इति विषयमुद्दिश्य शोधकर्मपरोऽहं समध्येतुं तत् महाकाव्यं समभिलषामि। श्रूयते तव पितृ-भ्रातृ-वात्सल्यस्य काचिदपूर्वा प्रस्रविणी प्रवहमाना विद्यते। सहृदयहृदयतोषिणा भावुकभावकप्रतिभानेन रसस्य च वैदुष्यगर्भा कापि विशदा व्याख्या प्रस्तुता महात्मभिर्भवद्भिः। अतएव न स्याच्चेत् कोऽपि नियमातिचारस्तर्हि महाकाव्यस्य तस्यैकां प्रतिं संप्रेष्यावश्यमेवानुग्राह्योऽयं जनः।

अपरा चेयं प्राथना—यदि वात्सल्यरसमयं किमप्यन्यं प्रकाशितमप्रकाशितञ्च संस्कृतसाहित्यं साहित्यसमुद्रसंतरणनिष्णातानां भवतां धीमतां नयनश्रवणगतं वर्तते तर्हि तस्य सूचनयापि समनुकम्पनीयोऽयं कृपाकांक्षी इत्यस्तु शुभम्।

विदुषामनुचरः

दिनांकः २६–१–७६

चन्द्रकिशोरगोस्वामी

श्रीराममूर्तिः

आन्ध्रविश्वकला परिषद्

विशाखपट्टणम्–३

❀ सन्देशः ❀

श्रीमतां प्रथितयशसां पण्डितवर्याणां कृष्णवल्लभाचार्याणां अभिनन्दनग्रन्थ-समर्पणसमारम्भः सर्वथा प्रशंसनीयः। आचार्याः न केवलं कविताविभवेन प्रत्युत सांख्यवेदान्तादिशास्त्रव्याख्याप्रवचनद्वारा संस्कृत-हिन्दी-गुजरातीभाषामुखेन अमृतायाः अमरवाण्याः अनल्पं प्रचारं आरचरय्य कृतकृत्याः धन्याश्च प्रकाशन्ते। अध्येतृणां पण्डितानाञ्च तद्ग्रन्थपरिचयेन विशिष्टविविधरचनाद्वारेण च तदभिननन्दनग्रन्थः विराजतां तत्कीर्तिरिवाचन्द्रार्कमित्योम्।

श्रीराममूर्तिः

लाभशङ्करशास्त्री

व्याकरणाचार्यः

C/o १ महेन्द्रपुरा, मोरवी

साधवो ह्यनेके सन्ति । साधूनां वृत्तिः समाना विद्यते । यथा महासागर एक एव । यद्यपि चानेकेषां भिन्नभिन्नप्रदेशस्थानां सागराणां जलं भिन्नदेशस्थत्वेऽपि समानं भवति । तथैव सर्वसाधूनां भिन्नत्वेऽपि मनोभावना समानैव वेदितव्या ।

वाराणस्यामेके साधवो मया दृष्टा अनुभूताश्च तेषां नामधेयं कृष्णवल्लभाचार्याः । तेषां भावना तेषां मनोवृत्तिस्तेषां सर्वभूतानुकम्पा तेषां वर्तनम् इत्यादि दृष्ट्वा चातीव सम्मोदमुपगच्छामि । बहुषु वर्षेषु व्यतीतेष्वपि साम्प्रतं तेषां मनःस्वच्छत्वमनुभवामि ।

एतेषां पाण्डित्यम् , एतेषां शेमुषीप्रभावः, तथा च पण्डितसभायां तेषां वक्तृत्वशक्तिरित्यादिकं मनो मे समाह्लादयति । भगवद्भक्तिर्भगवदर्चनं प्रभाते श्रीशस्य स्तव इत्यादिकं सर्वान् जनान् भावयति ।

परिष्कृतं साधुत्वं, स्वच्छसाधुत्वं सर्वेषां जनानां हिताय भवति । सर्वेऽपि सुखिनः सन्तु इति भावनां परिबोधयति ।

सौराष्ट्रस्थित-जूनागढ मण्डलान्तर्गते कुङ्कावावग्रामे तेषां जन्म । अल्पवयस्येव श्रीस्वामिनारायणधर्मानुयायित्वेन साधुदीक्षा गृहीता । तदनन्तरं वाराणस्यामुषित्वानेकानि शास्त्राणि-न्याय-वेदान्त-मीमांसाप्रभृतीनि साहित्यादीनि च तैः पठितानि । श्लोकनिर्माणशक्तिरपि सम्पादिता । नव्यन्यायाचार्यपर्यन्ता सर्वप्रथमत्वेन परीक्षापि प्रदत्ता । केवलं गुर्जरच्छात्रेषु नहि किन्तु वाराणस्यां तेषु दिनेषु पठनं कुर्वतां दक्षिणभारतोत्तरभारत-बङ्गाल मिथिला-आसामपञ्जाबादिप्रदेशात् पठितुमागतेषु छात्रेष्वपि सम्यग्भावः प्रकाशितः ।

वाराणस्यामपि ग्रन्थलेखनं प्राकुर्वन्तः श्रीकृष्णवल्लभाचार्याः ।

परिश्रमः कस्योन्नतिं न करोति । अल्पभोजनं नक्तं जागरणं पठनपाठनक्रियायां तल्लीनत्वं च तेषां जीवने सम्मिश्रितमासीत् ।

श्रीकृष्णवल्लभाचार्याणां पाण्डित्यं मया सुनिपुणमनुभूतम् यदा काचिदपि सभा पण्डितानां भवति तदा तेषां समुपस्थितिः । पूर्वपक्षोत्तरपक्षपरिग्रहणं शास्त्रार्थकार्ये च नैपुण्यमेतत् सर्वं सुस्पष्टत्वेन प्रतीतिमदधात् । सभास्थाः पण्डिता अपि मन्त्रमुग्धा अभवन् । श्रीकृष्णवल्लभाचार्याणां वाणीप्रावीण्येन च तेषां युक्तिप्रयोगेण सर्वेऽपि सभ्या आश्चर्यचकिता अभूवन् काश्यां बह्वीषु सभासु संस्कृतधाराभिः सहस्राऽयुतपण्डिता मुग्धीकृताः ।

एकदा चानेके सभ्या मिलिताः । सभा-महती चासीत् सर्वे पण्डिताश्चासन् । वाणी-वर्धिनीसभा-इति नामधेयवती सभा प्रचलतिस्म । तस्यां सभायां सभापतिपदं ग्रहीतुं कः समर्थ इति विचारणा संजाता । तदा सर्वैरपि श्रीकृष्णवल्लभाचार्या इदमासनमङ्गीकर्तुं समर्था इति सम्मतमासीत् । सभापतिपदमलंकृते सतिअमी साधुशिरोमणयः श्रीकृष्ण-वल्लभाचार्याः स्वसंस्कृतभाषया चाविच्छिन्नधारया सर्वेषां काशीस्थविदुषामानन्दमुद्भावयन्तः समचकासन् ।

वेदान्त-न्याय-साहित्य-दर्शनशास्त्रेष्वपि कृतभूरिपरिश्रमाः सन्ति । कदाचित् तेषां पार्श्वे कमपि विषयं गृहीत्वा चर्चां कर्तुं वयमगच्छाम तदा तेषामतीव स्वच्छबुद्धित्वेन वयं मन्त्रमुग्धा अभवाम । इन्दौर नगरे प्रिन्सिपालपदं मासं यावद्विभूषितवन्तः ।

तैरनेकानि पुस्तकानि विरचितानि कानिचित् संस्कृतभाषायां कानिचिद्-हिन्दी-भाषायां कानिचन-आंग्लभाषायां वरीवृत्यन्ते । मया सहाऽऽङ्ग्लभाषा एम्० ए० पर्यन्तं काश्यामधीता च कृतेषु पुस्तकेषु न्यायसिद्धान्तमुक्तावल्याष्टीका किरणावलीतिनाम्नालंकृता सुचारुरूपेण चकास्ति । न्यायविषये तैर्लिखितो विषयस्तस्य समन्वयश्च वा साधारणजनोऽपि यो न्यायविषयमभिलषति तमपि प्रीतिपदं समारोहयति ।

किरणावली तु साक्षात् किरणानाम् आवली-एव नात्र संशयः । इदं पुस्तकमधुनापि ह्यनेके विद्वांसः साधवश्च परिपठ्य स्वं स्वं धर्मानुयायित्वं परिपाठयितुं समर्था भवन्ति । पदवाक्यप्रमाणादिशास्त्रेषु पारावारेषु पारीणाः श्रीकृष्णवल्लभाचार्या वर्तन्ते, सर्वविद्या स्थानेषु प्रख्याताः सन्ति सांख्यतत्त्वकौमुद्याष्टीकाऽपि तादृशी सांख्यतत्त्वानुसारिणी पाठकानां हृदये मुक्तावलीव प्रकाशते ।

मुक्तावल्यां मङ्गलवादमनुसृत्य किरणावलीकिरणैर्व्याप्ता विषयाश्चेतसि चमत्कृति-मादधति ।

किरणावल्या विषया अतीव मनोहराः सन्ति सरलभाषया विभूषिताः सन्ति । साधारणजनोऽपि यस्य विषयता-प्रकारता-अवच्छेदकावच्छेद्यताज्ञानं वर्तते सोऽपि जनः सम्यक्तया किरणावलीं पठित्वा निजानन्दं समनुभवति । स चान्यान् न्यायविषयकशास्त्रं पाठयितुं समर्थो भवति । किरणावलीपाठको दर्शनशास्त्रस्य गूढान् विषयान् अपि पाठयितुं शक्नोति । इयं किरणावली श्रीहरिप्रसादान्विता वर्तते ।

तथैव श्रीवचनामृतटीकापि मनोहरा विद्यते यां टीकां पठित्वा जनो वेदान्तशास्त्रस्य गूढान् विषयान् सरलमातृभाषया व्याख्यातुं समुत्साहयुतो भक्तजनो भवति । शिक्षापत्री-टीका तत्तत्स्थाने चानेकानि भावप्रधानानि व्यवहारप्रधानानि वस्तूनि प्रदर्शयति ।

एते श्रीकृष्णवल्लभाचार्या आंग्लभाषायामपि वैदुष्यं दधति । तेषाम् आंग्लभाषायां वक्तृत्वं-भाषणमतीव रमणीयं परिष्कृतं च श्रुतं मया । एम्० ए० पदधारिणो वर्तन्ते । एतेषां ग्रन्था लन्दनविश्वविद्यालये पाठ्यपुस्तकत्वेन स्वीकृताः । जर्मनाऽमेरिकादिषु प्रख्याता विद्वांस इमे, पाठ्यपुस्तकैर्लब्धकीर्तयः ।

श्रीकृष्णवल्लभाचार्याणां प्रतिदिनं विवर्धमानां शेमुषीं पर्यालोच्य निजचेतसि महानन्दं सहजानन्दमनुबोभवीमि ।

अमीषां मुनिवर्याणां चेतोऽपि स्वच्छं गङ्गाजलसमं सरलं चाभिमानरहितं सर्वजन-हितावहमानन्दप्रदं दृष्ट्वा सर्वोऽपि जनः सहृदयतां परिदधाति । मानवप्रेम-प्राणिमात्र-रुद्भावना-धर्मभावना-भक्तिभावना-पाण्डित्यादि-सम्मिश्रणं तेषु (पण्डितवर्येषु) पश्यतो मे श्रेष्ठाह्लादः प्रबोधं प्राप्नोति ।

वाराणस्यां निवासत आरभ्य चैतद्दिन-पर्यन्तं श्रीकृष्णवल्लभाचार्याणां जीवनं सहृद-यता च साधुत्वमपि साधारणजनमपि प्रमोदं जनयति । आचार्यत्वमपि यथार्थं ख्यायतेऽत्र ।

धन्योऽयं भारतदेशः । यत्र चामीदृशाः साधवः परोपकारिणो विराजन्ते । अमी साधव आर्यदेशस्य विभूषणानि सन्ति । स्वयं धर्माचरणं कुर्वन्तः परानपि तदाचरणेन मोक्षमार्गं प्रवर्तयन्ति । येषां जीवनमनुकरणीयमस्ति, येषां समुपदेशो जनान् प्रीणयति, येषां लेखः स्वपरहिताय वर्तते, ये स्वदेश-विदेशस्थानां जनानां हृदि आह्लादं समुत्पादयन्ति त एव साधवः । आम्रवृक्षः स्वयमाम्रफलानि न भक्षयति परन्तु अनेकेभ्यः स्वेभ्यः परेभ्यो मिष्टानि फलानि प्रयच्छति । सूर्यस्य प्रकाशो ह्यनेकेषां जनानां प्राणिनां च हिताय भवति । नदीनां जलं नद्यो न स्वदन्ते किन्तु परोपकारायैव वर्तते तथैव श्रीकृष्णवल्लभाचार्याः स्वजीवनं परोपकारायैव (व्यतियन्ति) व्यतिगमयन्ति । धन्या अमी साधवो धन्यममीषां जीवनम् धन्यश्च तेषां लेखः । धन्यश्चायं भारतदेशः । येन परोपकारपरायणता विवर्धने, व्यासा व्यासात्मान एवेति ध्वन्यते ।

श्रीजीपदाब्जपरिपूजनचञ्चरीक
भक्त्यां सदा समवदानमनः सुधीर ।
विद्वन्सभासु रमणीयवचःप्रयोग
हे कृष्णवल्लभ तवास्तु सदा प्रसादः ॥

पं० श्रीकृष्णवल्लभाचार्याणां स्वभावसारल्यमपि मया ह्यनुभूतम् । अस्माभिः कठिन-विषयकशास्त्रप्रश्ने कृते ते स्वकार्यपठनतल्लीना अपि स्वकार्यं प्रहाय प्रसन्नमुखमुद्रया प्रत्युत्तरं दातुं प्रेमाविरकुर्वन् । वयं सन्तोषमन्वभूम ।

कोऽपि विद्यार्थी द्रव्यहीनो भवेत् तदा श्रीकृष्णवल्लभाचार्यान्तिके गत्वा प्रसन्नो भूत्वा मनसाशीर्वचनं दत्त्वा सन्तोषमाप्नोत्। एवं यदा बुभुक्षावान् अकिञ्चन कोऽपि छात्रस्तेषां समीपे भोजनादिकमभिक्षात तदापि एते श्रीकृष्णवल्लभाचार्याः श्रीहरिप्रसादात् किञ्चित् प्रसादस्वरूपं दत्त्वा तमतोषयन्। एकदा कृष्णवल्लभाचार्या जामनगरस्थश्रीस्वामिनारायण-मन्दिरे—अध्यक्षत्वेन विराजमाना आसन् तदा खल्वहं तेषां दर्शनाय गत आसम्। मध्याह्न-समय आसीत्। महानुभावा अध्यक्षमहोदयाः (महान्तः) स्वहस्ते कुद्दालिकां खनित्रं चादाय नूतनमन्दिरगृहस्य निर्माणाय भूमिखननमकुर्वन्। मया चोक्तं भवन्तो महान्तः किमर्थमिमं परिश्रमं कुर्वन्ति। तदा तैः प्रत्युत्तरितं पण्डित! वयं साधवः, वयं सेवाकार्यपरायणाः श्रीहरि-सेवायां कटिबद्धाः स्म। अत इदमस्माकं श्रीहरिचरणसेवकानां साधूनामिदं भूषणमस्ति। एतच्छ्रुत्वा मम मनसि विचारः समायातः—अहो एतेषां सेवाभावः। अहो एतेषां निरभि-मानित्वं चाहो एते महान्तः पण्डिता अपि कीदृशं परोपकाराय परिश्रमं कुर्वन्ति ? श्रीकृष्ण-वल्लभाचार्याणां जीवनमनुकरणीयं वर्तते।

श्रीशं प्रार्थये खलु श्रीपण्डितकृष्णवल्लभाचार्या अस्मिन् भारते देशे देशान्तरे च स्वसदगुणान् शिक्षयितुं चिरं जीयासुरिति।

लाभशङ्करशास्त्री

॥ श्री हरिः ॥

अनन्त श्रीं विभूषित श्री जगद्गुरु शङ्कराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर

श्री स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज

ज्योतिर्मठ (बदरिकाश्रम) हिमालय

समादरणीयाः श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहाभागाः संस्कृतवाङ्मयाकाशे पुष्पित-फलितचन्द्रमण्डलमिव वेदान्तादिनिखिलशास्त्रजातान् प्रकाशयन्तोऽन्तेवसतां विपश्चिताञ्च मनोमोहं द्रावयन्ति ।

एतेषां महानुभावानामलौकिकं बुद्धिवैभवम्, दार्शनिकतत्त्वनिरूपणनैपुण्यम्, शब्दशास्त्रावगाहनप्राप्त-तलस्पर्शित्वम्, प्रतिवादिमण्डल-पराजय-लब्धमहा-महोपाध्यायाद्यनेकपदवीकम्, ध्यायं ध्यायं कस्यचिद् विदुषश्चित्ते मोदभरं नावहति ।

अहं विद्वद्वरेण्यानामेतेषां प्रशस्तौ यत् किमपि वक्तुमीहे, तत् सर्वमप्येतेषाम-पूर्वं वैदुष्यभरं विविधैर्बुधैः प्रायशः स्वस्वकृतौ सम्यक् प्रकाशितमेव ।

आशीराशिभिः सभाजयन् विपश्चितामेषां दीर्घायुष्यं, संस्कृतवाङ्मयप्रचार सामर्थ्यञ्च कामये ।

श्रीमतां ज्योतिष्पीठाधीश्वराणां स्वरूपानन्दसरस्वतीमहाभागानामादेशेन—

दिनांकः २०-७-१९७७

श्यामलाल शर्मा

प्रधानाचार्यः

धर्मसङ्घमहाविद्यालय

७, शङ्कराचार्य मार्ग, दिल्ली-५४

श्री श्री शृङ्गेरी जगद्गुरु महासंस्थानम्, शारदापीठम्

शृङ्गेरी कडूर् कर्नाटक राज्यम्

PRIVATE SECRETARY

To His Holiness the Jagadguru

Mahaswamigalavaru of Sringeri Math

SARADA PEETHAM

श्रीकृष्णवल्लभाचार्याभिनन्दनसमितिविषये सादराविज्ञप्तिः। न्यायादि-दर्शनेषु परं प्रावीण्यमुपगताः विद्वत्तल्लजाः श्रीकृष्णवल्लभाचार्यास्सुपरिचिताः पण्डितमण्डल्याः। तत्तादृशानां विख्यातविदुषाम् अभिनन्दनग्रन्थं कञ्चन प्रकाशयितुकामा महाजनाः काञ्चन समितिं निर्माय तन्मुखेन प्रयतन्तइत्यवेदिषुराचार्यपादाः।

श्रीकृष्णवल्लभाचार्यविरचितो लक्ष्मीनारायणसंहिताभिधो ग्रन्थः श्रीजगद्गुरुचरणैरवलोकितोऽभूत्। भक्तिप्रधानेस्मिन् ग्रन्थे अवगन्तव्यास्सन्ति विषयाः। भवदीयस्सर्वोप्ययं प्रयत्नः फलेग्रहिर्भूयादिति श्रीचरणा आशासते।

इति निवेदयिता

दिनांकः २७–५–७६

गिरिधर शास्त्री

कविराज हरिशङ्कर शर्मा दैवज्ञभूषणः
भिषगाचार्यः (सुवर्णचन्द्रकालंकृतः) आयुर्वेदप्रवीणः, साहित्यरत्नः,
एच्० पी० ए०, प्राणाचार्यः
अध्यक्षः, रसशास्त्र-भैषज्यकल्पना-द्रव्यानुसन्धान विभागः आयुर्वेदीय
स्नातकोत्तर शिक्षणान्वेषणसंस्थानम्
जामनगरम्

परमपूज्यानां प्रातःस्मरणीयानां तीर्थस्वरूपाणां श्रीमद्गुरुवर्यश्रीकृष्णवल्लभाचार्यजीमहोदयानां सेवायाम् सादरं सश्रद्धं पुनः पुनः प्रणतिततयः समर्प्यन्ते। आशासे स्वीकरिष्यन्ति भवन्तः कालक्षेपान्तरालप्राप्ताः प्रणतिततयः।

साश्चर्यं सानन्दं साभिलाषं श्रीमत् स्मृतिपटलावलीसंवलितं नामधेयं यथाकथञ्चिदुन्नेतुं यत् कार्यजातं प्राप्तं भवतामनुग्रहेण तदर्थं कृतकृत्योऽस्मीति प्रतिवचनम्।

मदीयं सौभाग्यं यदिह गुरुवर्यैः स्मृतमिदम्।
कथंकारं प्राप्तं किमपि गुरुपूजास्ववसरम्॥
न जाने किञ्चिद्वै परमिह तु जाने गुरुतरम्।
सुकर्म प्रोत्कर्षं नियमितसुशिक्षाप्रपठनम्॥ १॥

ततः कालक्षेपे जनुषि मम भूयांस्यनुदिनम्।
नवीनान्युन्मेषाण्यनुभवपथे संहृतवतः॥
पुनः किञ्चिन्नूतनं त्वनुभवमुपादाय कथितुम्।
कदा साक्षात्कारो भवति गुरुसेवातुरधिया॥ २॥

प्रतीक्षामोत्येतत् प्रभुपदयुगे प्रार्थितवतः।
हरिः सोल्लासं ते स्मरणशकलाः सम्प्रति वहन्॥
कथञ्चिद्वध्वैतान् सुमनगुणपुञ्जांश्चरणयोः।
समर्थैव श्रान्ति समधिगमनं स्यादिति मतिः॥ ३॥

क्षमां याचे त्वं चेच्चिरसमयतः किञ्चिदपि नः।
सुपत्राचारादिः कथमपि निमित्ते न भविता॥
परं पुण्योदीर्णे पुनरपि मया प्रत्ययवता।
परिप्राप्तं हेतुः स्मरणशकलायोजनधिया॥ ४॥

श्रीमच्चरणचञ्चरीकः

दिनांकः २७–५–७६

हरिशङ्कर शर्मा

रामजी उपाध्यायः

वरिष्ठ प्राध्यापकः अध्यक्षश्च संस्कृतविभागस्य,

सागरविश्वविद्यालये,

सागर

अधुना भारतस्य चारित्रिकनिर्माणाय महात्मनामुत्तरदायित्वं नितरां वर्तते। प्राचीनमहर्षीणां वेदेतिहासपुराणादिषु प्रणीतं मार्गमवलम्ब्यादर्शचरितानुसन्धानेन लोकसंग्रहपरायणा ये केचिद् विद्वांसः सन्ति तेषु स्वामिनः कृष्णवल्लभाचार्या अग्रगण्या शोभन्ते। एतेषामभिनन्दनेन समाजस्य सुपरिणतिर्विमलपथौत्सुक्यं च प्रमाण्येते इति साफल्यमायोजनस्य कामयामहे।

दिनांकः २–७–७६

रामजी उपाध्यायः

वि० बालकृष्णशास्त्री

प्राचार्यः,

THE MADRAS SANSKRIT COLLEGE & S. S. V. PATASALA

MYLAPORE

श्रीकृष्णवल्लभाचार्याणां विद्वत्तल्लजानां दर्शनेषु अप्रतिहतबुद्धिप्रचाराणां पाण्डित्यं श्रुत्वा महान् आनन्दः समजनि। तैः महापुरुषैः जनताविद्यालयद्वारा प्रारप्स्यमानं भारतीयपरंपरासंरक्षणकार्यं भगवतः परमेश्वरस्य कृपया उत्तरोत्तरं पुष्पितम् फलितं च संपत्स्यमानं भारतीयानां श्रेयसो भविता इति दृढम् विश्वसिमि।

दिनांकः ३०–१२–७५

वि० बालकृष्णशास्त्री

कीर्त्यानन्द झा शास्त्री विद्यालङ्कार

साहित्याचार्य, रत्न काव्यतीर्थ,
व्याकरण शास्त्री, राष्ट्रभाषा रत्न
बोटाद

पण्डितवर्य स्वामि श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी (श्रीमद्दार्शनिकपञ्चानन, षड्दर्शनाचार्य, सांख्य-वेदान्ततीर्थ, काव्यन्यायवैशेषिकशास्त्री, वैष्णव-विद्वत्सार्वभौम) अभिनन्दन-प्रशस्ति-पत्रम् ।

यद् अपाङ्गपरिस्पदे विश्वमेतद् व्यवस्थितम् ।
स्वामिनारायणः श्रीमान् सोऽयं विजयतेतराम् ॥

आचार्य महोदयाः !

सुरभारती जगत् में षड्दर्शन और खास कर नव्य न्याय में एवं सांख्ययोग-वेदान्तादि शास्त्र में भी "किरणावली" के द्वारा नवीन प्रकाश फैलानेवाले सूर्य के समान पं० श्रीकृष्णवल्लभाचार्य की सेवा में श्रद्धा और सत्कार, स्नेह और सौमनस्य, संभ्रम और सम्मान के दो चार कुसुम-सौरभ-लेकर अर्चना करने के लिये यह प्रशस्ति पत्र लेकर उपस्थित हो रहा हूँ। सर्वतोमुखीप्रतिभासंपन्न पण्डितवर्य श्रीमान् के लिये हमारे हृदय में जिन भावों के आन्दोलन हो उठे हैं उन्हें व्यञ्जित करने में शब्द-शक्ति कुण्ठित दिखाई देती है। ऐसी अवस्था में आपके गुणों की संपूर्ण चर्चा जो दर्शन, जीवन, कवन एवं साहित्य-साधना, तपस्या आदि द्वारा हमें पुलकित, प्रमोदित, उद्यत और उत्साहित करते रहे हैं यदि हमसे पूर्णरूपेण न हो सके तो कोई आश्चर्य नहीं ?

संस्कृत भाषा और दर्शनशास्त्र के विकास की इस परितोषक अवस्था के साथ आपकी तपस्या, साधना, विद्वत्ता, दक्षता एवं तत्परता का ऐसा अखण्ड संबन्ध स्थापित है कि इस युग की उत्कृष्ट दर्शनशास्त्र आदि की "किरणावली" रचना का इतिहास आपकी उद्यमशीलता का इतिहास है। आपके "न्यायसिद्धान्त मुक्तावली" की "किरणावली" टीका ने ग्रन्थ की ही नहीं, ग्रन्थ पढ़ने वालों की भी रचना की है। उसका मुझे "मध्यमा एवं शास्त्रिपरीक्षा बनारस" को देते समय मुक्तावली की किरणावली पढ़ते-पढ़ते अनुभव हुआ था।

आपने गुरुवर्य श्री वामाचरणभट्टाचार्य के करकमल में किरणावली समर्पण में श्लोक—

काणादं, गौतमीयं मतमुदयनदिङ्नागमिश्रादिकानां,
गांगेशं सार्वभौमं मतमपि रघुनाथस्य चान्यस्य सर्वम् ।
क्रोडं गादाधरं वा कठिनतरमथो, माथुरं जागदीशम्,
इत्येवं न्यायशास्त्रं करबदरमिवाऽऽभाति येषां समग्रम् ॥ १ ॥
ये वै सांख्ये स्मृतौ च श्रुतिशिरसि तथा योगशास्त्रे च शंब्दे,
मीमांसायां च काव्ये तदितरसुगताद्युक्तिवादे दुरूहे ।
शास्त्रार्थे, तर्कजन्याऽप्रतिहतगतयः सर्वतन्त्रस्वतन्त्राः,
विद्वद्वृन्दाऽग्रगण्याऽप्रतिमबुधवराः देशिकेन्द्राः जयन्ति ॥ २ ॥
येषां पाटवमद्वितीयमनघञ्चाध्यापने सर्वथा,
ग्रन्थानां ग्रथने चमत्कृतिकरं सामर्थ्यमाराजते ।
श्रीवामाचरणार्यवर्य्यविदुषां विद्यागुरूणामियं,
पाण्यब्जे "किरणावली" सविनयं तेषां मया चार्प्यते ॥ ३ ॥

लिखकर प्रशंसा की है उसके अभ्यास से सूचित हो जाता है कि "गुणी गुणं वेत्ति" न्याय के अनुसार आप गुणग्राही प्रकाण्ड विद्वान हैं। आपकी स्तुति करना भी "न हि कस्तूरिकामोदः शपथेन विभाव्यते" के अनुसार निरर्थक होते हुए भी स्तुति करने वालों की वाणी को पवित्र एवं प्रतिष्ठा की वृद्धि गुणानुवाद से होती ही है। गुणकस्तूरी की सुगन्ध तो अज्ञानी और ज्ञानी स्वयं अनुभव कर सकते हैं क्योंकि आपने सभी कक्षा के सत्सङ्गी पाठक के लिये यथारुचि प्रसाद का वितरण किया ही है। हितोपदेश की हिन्दी में टीका एवं शिक्षापत्री की किरणावली (संस्कृत-एवं गुजराती) इसका उदाहरण है।

जेतपुर से प्रकाशित शिक्षापत्री के "किरणावली" के मङ्गलम् में आपने लिखा है कि—

"जीवेशब्रह्ममुक्ताद्यगणितचिदचिद्व्याप्तसर्वावतारि —
श्रीमच्छ्रीस्वामिनारायणभगवति वै मुख्यतात्पर्यरूपाम् ।
व्याख्यां कुर्वे तदीयां सुविशदकिरणावल्यभिख्यां यतः स
इष्टः सर्वावतारी भवति हि भगवान् स्वामिनारायणो नः ॥ ३ ॥

और अपने दीक्षा गुरु के विषय में लिखते हैं कि—

"श्रीमन्निर्गुणमूर्त्यनन्तपुरुषैराराधितं पङ्कजं,
नित्यानन्तगुणास्पदस्यनिखिलाविर्भावहेतोर्विभोः ।
यस्य ब्रह्मण एव तस्य परमं शिष्यं सतामग्रणिम्,
श्रीमद् "बालमुकुन्ददास" मनिशं वन्दे विमुक्तिप्रदम् ॥

इन श्लोकों के द्वारा इष्टदेव की साधना, तपस्या एवं गुरुभक्ति गुरुकृपा आदि की पात्रता आप में झलक उठती है। सुज्ञेषु किं बहुना। श्रीकालिदास ने अपने रघुवंश १० वें सर्ग में भगवान् के बारे में जो कहा है कि—

"महिमानं यदुत्कीर्त्य तव संह्रियते वचः।
श्रमेण तदशक्या वा न गुणानां इयत्तया ॥"

इसके अनुसार हम भी अपने विचार का उपसंहार करते हैं।

अन्ते च साञ्जलिबन्धं नम्रेण शिरसा भक्तिप्रवणेन चेतसा प्रेमगद्गदया च वाचा प्रार्थयामो भगवन्तं श्रीसच्चिदानन्दघनं घनश्यामं परमात्मानं गोगोपगोपिकानाथं यत् परतोऽपि विद्वत्कुलेषु, स्वामिनारायणसंप्रदाये च समुत्पद्यन्तामेवंभूतास्तपस्विनो विद्वांसः येन सुरसरस्वती भगवती भारती सदा परमोन्नता परमादरणीया प्रचुरप्रचारमापन्ना भारतवर्षीयं गौरवं सर्वदा वर्धयेदेव। श्रीकालिदासीयैश्च शब्दैरभिलषामः—"सरस्वती श्रुतिर्महती महीयताम्।" इति

भवदीयः

दिनांकः ३–४–७६

श्री कीर्त्यानन्द झा

वि० ज० ठाकर

आयुर्वेदाचार्य, साहित्यशास्त्री, काव्यतीर्थ

भू० पू० उपकुलपति

गुजरात आयुर्वेद युनिवर्सिटी

जामनगर

संस्कृत भाषा के उत्कट विद्वान्, भारतीय दर्शनशास्त्र के पारङ्गत पण्डित, धर्म एवं भक्तिमार्ग के धुरन्धर आचार्य श्रद्धेय श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी के दार्शनिक एवं भक्तिमार्ग के ४४ ग्रन्थनिर्माण के भगीरथ कार्यक्रम का अभिनन्दन तथा इनके उदात्त व्यक्तित्व एवं सरस्वती सेवा के जीवनकार्य की चिरस्मृति एवं स्थायी प्रेरणास्रोतरूप अभिनन्दन-ग्रन्थ का प्रकाशन तथा आर्ट्स एवं कॉमर्स कालेज का कुङ्कावाव में निर्माण करने का आयोजन किया है तदर्थ सम्पादक मण्डल तथा सम्प्रदाय के अनुयायी भक्त एवं संस्कृत विद्यानुरागी कृतज्ञजन विशेषतया सराहनीय हैं।

आचार्यश्री के उज्ज्वल व्यक्तित्व तथा विराट् एवं अद्भुत जीवन कार्य से प्रेरणा पाकर यदि भावी छात्र न केवल इनके द्वारा स्थापित मानदण्ड (Record) को पहुँचने का, किन्तु उससे भी उच्चतर मान बनाने का उत्साह एवं योग्यता जुटावें तो वह सही माने में इनका अभिनन्दन होगा।

आचार्यश्री के प्रति हमारी हार्दिक अभिबन्दना के साथ।

भवदीय

वि० ज० ठाकर

शिव चरण ध्यानी

बी० ए०, बी० आई० एम० एस०, आयुर्वेदाचार्य,

एच० पी० ए०, अध्यक्ष-द्रव्यगुण विभाग,

स्नानकोत्तर प्रशिक्षण एवं अन्वेषण संस्थान,

गुजरात आयुर्वेद यूनिवर्सिटी,

जामनगर

मैं श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी से व्यक्तिगत रूप से तो परिचित नहीं हूँ, परन्तु आपने उनके द्वारा लिखित पुस्तकों की जो सूची भेजी है उससे एक बात स्पष्ट हो जाती है कि उनका संस्कृत वाङ्मय पर अधिकार है और वे एक उद्भट विद्वान् हैं। ऐसे विद्वानों का अभिनन्दन अवश्य किया जाना चाहिए।

मेरी ओर से श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी के दीर्घायुष्य के लिए प्रार्थनायें और उनके द्वारा भविष्य में भी ज्ञान विज्ञान के क्षेत्र में सेवाओं की आशायें रहेंगी।

श्रीकृष्णवल्लभाचार्य अभिनन्दन ग्रन्थ की सफलता की कामना करता हुआ—

भवदीय

दिनांक २५–५–७६

शिव चरण ध्यानी

हरि ॐ

रामतीर्थ मिशन

स्वामी हंस प्रकाश, वेदान्ताचार्य, एम० ए०
कृते आचार्य स्वामी गोविन्द प्रकाशजी
महाराज वेदान्ताचार्य परमा-
ध्यक्ष रामतीर्थ मिशन,
देहरादून

❀ शुभ कामना ❀

भारतीय संस्कृति के विकास में गुर्जर प्रान्त का विशिष्ट योगदान रहा है। क्यों न हो, भारतीय संस्कृति के अमर उद्घोषक भगवान् कृष्ण ने अपने स्थायी निवास से गुर्जर प्रान्त को अलंकृत किया था। उनके ही सिद्धान्त और आचार पक्ष को जनता में प्रचारित करने के लिए अयोध्या के निकट ग्राम को छोड़कर महाप्रभु स्वामिनारायणजी ने गुजरात को ही चुना था। स्वामी जी भगवान् कृष्ण के दिव्य पार्षद थे।

उन्हीं स्वामी जी की परम्परा में स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य जी एक आधिकारिक महापुरुष हैं। गुरुकृपा से दिव्यदृष्टि सम्पन्न इस महापुरुष ने सौराष्ट्रको अपने आविर्भाव से सुशोभित करके भारतवर्ष के इतिहास में एक और कड़ी जोड़ दी है। विद्वता और नम्रता में रात दिन का अन्तर है लेकिन यह बात आचार्य जी के बारे में सही नहीं उतरती। उनमें दोनों सद्गुणों का समावेश है। भारतीय संस्कृति में जीवन को सुगन्धित करने वाली वस्तु है चरित्र। सन्त का लक्षण ही यही है। जैसा कि वाल्मीकि रामायण में कहा गया—"सन्तश्चारित्र्यभूषणाः"।

इन सद्गुणों को प्राप्त करके भी आचार्यजी ने उनको अपने व्यक्तिगत जीवन तक ही सीमित नहीं रखा। उन्होंने साहित्य के माध्यम से जनता के लिए लूटा दिया। ऐसे 'सर्वभूतहिते रताः' महापुरुष का अपने जीवन काल में ही अवश्य अभिनन्दन होना चाहिए। सूर्य को अर्घ्य सूर्य के लिए नहीं दिया जाता अपितु वह दाता का कल्याण करने वाला होता है। ऐसे महान् शुभावसर पर हम परमपिता परमात्मा के श्रीचरणों में यही प्रार्थना करते हैं कि आचार्य जी को शारीरिक स्वस्थता प्रदान करते हुए सैकड़ों शरद् देखने का अवसर प्रदान करे ताकि वे अधिकाधिक जनता की सेवा कर सकें। इसी शुभ कामना के साथ

आपका

दिनांक १८–५–७६ **रामतीर्थ मिशन**

डा० रामनाथ वेदालङ्कार

आचार्य एवं उपकुलपति (प्रो-वाइसचांसलर)

गुरुकुल काङ्गड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

डाकघर : गुरुकुल काङ्गड़ी (सहारनपुर)

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आप पण्डितवर्य स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी के नाम पर उन्हीं के जन्मस्थल पर एक इन्टर कालेज की स्थापना जून १९७६ में कर रहे हैं तथा इस अवसर पर श्रीस्वामी जी के सम्मान में एक अभिनन्दन-ग्रन्थ भी प्रकाशित कर रहे हैं।

श्रीस्वामी जी द्वारा लिखित मौलिक पुस्तकों एवं प्राचीन पुस्तकों की टीकाओं की सूची के अवलोकन से यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने शिक्षा जगत् में उल्लेखनीय कार्य किया है। अतः उनकी स्मृति को चिरस्थायी बनाने के लिए जो आयोजन आप कर रहे हैं, मैं उसके लिए अपनी ओर से तथा अपनी संस्था गुरुकुल काङ्गड़ी विश्वविद्यालय की ओर से हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

भवदीय

दिनाङ्क २२–३–७६

डा० रामनाथ वेदालङ्कार

डॉ० कपिलदेव शास्त्री

(एम० ए०, साहित्याचार्य, पी-एच० डी०)

रीडर, संस्कृतविभाग, कु० वि०,

कुरुक्षेत्र

यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि भारत के परम सन्त, मेधावी एवं असाधारण विद्वान् श्री स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य जी का, पावन प्रेरणा से ओत प्रोत, अभिनन्दन-ग्रन्थ आप की संस्था से प्रकाशित होने जा रहा है। उनके इस अभिनन्दन के महान् यज्ञ में मैं अपने श्रद्धा और सम्मान का हविष्य अर्पित करता हूँ। विविध विषयों तथा क्षेत्रों से सम्बद्ध उनकी महत्त्वपूर्ण कृतियाँ संस्कृत वाङ्मय के लिये अद्भुत देन हैं।

दिनांक १२-५-७६

कपिलदेव शास्त्री

दर्शन सिंह

स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग

गवर्नमेण्ट कालेज,

होशियारपुर (पंजाब)

वस्तुतः संस्कृत भारतीय संस्कृति की वाहिका है। संस्कृत के किसी भी विद्वान् को सम्मानित करना भारतीय संस्कृति के प्रति अपनी आस्था और निष्ठा को सुदृढ़ बनाना है। स्वनामधन्य श्रद्धेय स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य जी की संस्कृत सेवा का तो कहना ही क्या ? वह तो बहुमुखी प्रतिभा के स्वामी हैं। मानवी जीवन के महत्व का कोई भी विषय उनकी ललित लेखनी से अछूता नहीं रहा। स्वामी जी द्वारा प्रणीत संस्कृत-साहित्य की विपुल राशि में उनकी सारस्वत साधना साकार हो उठी है। इस महान् कृती की कृतियों से विश्वभर के विद्वान् लाभान्वित हुए हैं, हो रहें और होंगे। इस सरस्वती के अनुपम पुत्र, मानवी मेधा के चमत्कार, सतत साधना के ज्वलन्त उदाहरण और सजग साधक के सम्मुख मैं श्रद्धावश नतमस्तक हूँ। स्वामी जी की संस्कृत-साहित्य-साधना का श्रद्धालु

आपका

दिनांक १२–६–७६

दर्शन सिंह

M. A., Ph-D., P. E. S.

श्रीनिवास शास्त्री

एम० ए०, पी-एच० डी०

संस्कृत-विभाग, बी० एन० चक्रवर्ती विश्वविद्यालय

कुरुक्षेत्र

अत्र भवन्तः श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहाभागा हि समैरपि धर्मप्राणैः षड्दर्शन-तत्त्वान्वेषकैः वेदान्तसिद्धान्तं जिज्ञासमानैः, विशेषतस्तु स्वामिनारायणमतमनु-सन्धातुकामैर्हृदयेनाभिनन्दनीयाः पुनः पुनश्च नमस्करणीयाः; ये किल षड्दर्शनेषु निष्णाताः, यान् सत्पुरुषाः सततमनुसरन्ति, यैस्तर्कं सांख्यं योगं वेदान्तं मीमांसा-ञ्चाधिकृत्य बहवो ग्रन्था विरचिताः, येभ्यः—सरस्वत्यानुगृहीताः सर्वतन्त्रस्वतन्त्रा अपि विद्वांसः स्पृहयन्ते, येभ्यश्च वेदान्तानधिगन्तुं वीतरागाः कामयन्ते, येषां वैदुष्यं ध्यायं ध्यायमुदासीना अपि भव्यतापक्षपातमातन्वते, येषु च नितरां स्निह्यन्ति प्रशस्तिप्रवणाश्च भवन्ति नो हृदयानि ।

दिनांक ९–६–७६

श्रीनिवास शास्त्री

गिरीशचन्द्र दीक्षित

दार्शनिक,

साहित्य संशोधन विभाग,

गुजरात आयुर्वेद युनिवर्सिटी,

जामनगर (गुजरात राज्य)

आचार्य श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी भारतीय दर्शनशास्त्र की सर्वोत्तम प्रतिभा के एक मात्र प्रतिनिधि हैं।

विद्यमान विद्वानों में प्राचीन विद्याशाखा की विद्वत्ता और शास्त्रीय कोटि-क्रोडपत्र-तर्कपरम्परा आदि के प्रशस्त-प्रकाण्ड और प्रामाणिक पाण्डित्य के प्रतीक श्रीस्वामी जी हार्दिक रूप से कोमल सरस स्वभाव और उदार मनोवृत्ति के द्वारा गुजरात को गौरवान्वित करते हैं।

संस्कृत विद्याध्ययन के वातावरण को पुनरुज्जीवित करने के भागवत विद्यापीठ स्थापना के समान सौराष्ट्र में भी प्रयत्न का प्रारंभ इस महापुरुष के कर कमलों के द्वारा करने से भविष्य उज्ज्वल होगा।

इन महापुरुषों के समान विद्वानों का सम्मान उनके दर्शाये मार्ग पर एक संस्कृत विद्याकेन्द्र स्थापित करना और विशुद्ध शास्त्रीय अध्ययन की सफल व्यवस्था के द्वारा शास्त्रीय प्रतिनिधित्व कायम रखना ही है। इति शम्।

विनीत

दिनांक १५-६-७६

गिरीशचन्द्र दीक्षित

जयराम शास्त्री

न्याय वेदान्ताचार्यः भूतपूर्वः महामहिमोपाध्यायः
जम्मूनगरस्थश्रीरघुनाथसंस्कृत महाविद्यालयस्य प्रधानाचार्यः
वर्त्तमान संकेत स्थानम्—रेशमघर कालोनी
प्लाट नम्बर १५ । जम्मू तवी (काश्मीर)

सौराष्ट्रेषु समुत्पन्नो ज्ञानमूर्तिः कलानिधिः ।
श्रीकृष्णवल्लभाचार्यश्चरितेनाभिनद्यते ॥

शेषाशेषसदुक्तियुक्तिकुशलो यः साहितीसारवित्,
मीमांसानयसांख्यसाररसिको वेदान्तशान्तान्तरः ।
श्रौताचारपरम्परापरिलसत्तेजोविशेषोज्वलः,
श्रीमत्स्वामिवरः सदा विजयते गीर्वाणवाणीगुरुः ॥

सत्यसनातनधर्मस्य सम्यगभ्युदयाय सद्विद्यानां प्रचाराय राष्ट्रस्य सर्वविधायाः श्रियः समधिकसंवर्धनाय च सततं सर्वथा प्रयतमानम्, धार्मिक-दार्शनिक-नैतिक-पौराणिक-साम्प्रदायिक-मौलिकतत्त्वानां विशेषतः प्रतिष्ठापनाय नैकविध-आकर प्रकरणव्याख्यानादिग्रन्थानां प्रणयनकुशलतया विविधविद्याविद्योतित-यशसम्, शास्त्रीयरहस्योद्घाटनशालित्वेन लेखनकलनकर्मसु विचक्षणतया च बहुधा बहुलसंख्यावत्संसत्सु सम्मानिततमम् स्वतन्त्रभारतसाम्राज्यश्रियः सीमन्तभूषणायमानम्, भारतीयविद्वत्समाजमहापुरुषेष्वन्यतमम्, पाखण्डखण्डन-हेतुवेदसुशास्त्रशस्त्रधारिणम्, सुधीवरम् श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहाभागम्—

स्वल्पेनाभिनववाक्यपुष्पोपहारेण सादरं सततमभिनन्दयति तत्र भवतां भवतां सततशुभसतृष्णो—

दिनांकः २२—५—७६ **जयराम शास्त्री**

डा० कर्णसिंह

चन्द्रिका, शिवाजी मार्ग,

मेरठ (उ० प्र०)

आपके पत्र के माध्यम से परम विद्वान् पण्डितवर्य स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी के कृतित्व के परिचय से उनके व्यक्तित्व का परिचय पाकर मेरा मस्तक पुनः पुनः श्रद्धा से झुक गया ।

ऐसे महान् सन्त के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को आधार बनाकर 'अभिनन्दन-ग्रन्थ' के प्रकाशन का निश्चय वस्तुतः ही स्तुत्य है ।

स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी की प्रतिभा से प्रस्फुटित विशाल साहित्य-राशि के कारण हम उन्हें सहज ही **आधुनिक व्यास** कह सकते हैं ।

मेरे श्रद्धा-सुमन स्वीकार करें ।

भवदीय

दिनांक २२–५–१९७६

डा० कर्णसिंह

डा० हरि मोहन मिश्र

POST-GRADUATE DEPTT. OF SANSKRIT

BHAGALPUR UNIVERSITY

BHAGALPUR—812007

Phone No. 350

यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि स्वामिकृष्णवल्लभाचार्य जी के नाम पर उनके गाँव में आर्ट्स, कामर्स इण्टरमिडियेट कालेज की स्थापना की जा रही है। स्वामी जी भारतवर्ष की विभूतियों में से हैं। मैं इस पावन अवसर पर हृदय से उनका अभिनन्दन करता हूँ।

भवदीय

दिनांक २६—५—७६

हरि मोहन मिश्र

D. D. N. SHASTRI

M. A., M. O. L., D. Litt.

Advisor. Institute of Indology. Daryaganj. Delhi

Ex-Dean Faculty of Arts. Agra University.

&

Ex-Director. Institute of Indic Studies

Kurukshetra University

पण्डितवर्य श्री कृष्णवल्लभाचार्य की अगाध व्यापक विद्वत्ता को देखकर कोई भी संस्कृत का प्रेमी चकित हुए विना नही रह सकता। उनका संस्कृत दर्शन क्षेत्र में चाहे वह न्याय हो या नव्य न्याय, अथवा सांख्य-योग या पूर्वमीमांसा हो या वेदान्त के चित्सुखी जैसे प्रमुख ग्रन्थ हों इन सभी व्यापक क्षेत्रों में उनकी अगाध विद्वत्ता उनके रचे ग्रन्थों से स्पष्ट प्रतीत हो रही है। इसके सिवाय उनके लिखे हुए स्तोत्र-ग्रन्थ तथा भक्ति-सम्बन्धी ग्रन्थ भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। ऐसे श्रेष्ठ विद्वान् के लिए उनके अभिनन्दन-ग्रन्थ के अवसर पर मैं श्रद्धापूर्वक प्रणाम प्रस्तुत करता हूँ।

दिनांक ३०–५–७६

धर्मेन्द्र नाथ शास्त्री

॥ श्री नाथजी ॥

सचिव

गोस्वामी तिलकायत श्री १०८

श्री गोविन्द लालजो महाराज

टेलीफोन नं० { बम्बई ५७३४५६
नाथद्वारा ६० और २१

खास दफ्तर—मोती महल,

नाथद्वारा (राजस्थान)

श्रीमानों को यह जानकर प्रसन्नता हुई कि वैष्णवविद्वत्सार्वभौम, दार्शनिक पञ्चानन, षड्दर्शनाचार्य, नव्यन्यायाचार्य, सांख्ययोगवेदान्तमीमांसातीर्थ, हिन्दी-गुजराती एवं संस्कृत के ४४ परमोपयोगी गौरवशाली ग्रन्थों विशेषकर विश्व के अद्भुत तथा महान् एक लाख २६ हजार श्लोकों से युक्त ग्रन्थ 'श्वेतायनसंहिता' के अन्तर राष्ट्रीय ख्याति के सुप्रसिद्ध मनीषी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी के एक सुन्दर अभिनन्दन-ग्रन्थ का प्रकाशन आप करने जा रहे हैं।

श्रीमान् भारत के इस मूर्धन्य विद्वान् को अपने शुभाशीर्वाद प्रदान करते हुए अपने हृदय के आनन्द को अभिव्यक्त करते हैं। श्री.....जी उन्हें शतायु करें जिससे वे माँ भारती की अधिक सेवा कर सकें—शुभकामनाओं सहित,

भवदीय

दिनांक २६–५–७६ **श्री गोविन्द लालजो महाराज**

डॉ० व्रजविहारी चौबे

एम० ए०, पी-एच० डी०, साहित्यरत्न

प्राध्यापक : विश्वेश्वरानन्द संस्कृत व भारत

भारती संस्थान, पंजाब विश्वविद्यालय

पो० साधु आश्रम, होशियारपुर

भारतीय चिन्तन की पराकाष्ठा षड्दर्शन में दिखाई पड़ती है। परम सत्ता की जो अनुपम मीमांसा यहाँ मिलती है वह अन्यत्र अप्राप्य है। विद्वद्वर्य श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी महाराज ने अत्यन्त विद्वतापूर्वक दार्शनिक ग्रन्थों के ऊपर जो प्रामाणिक भाष्य लिखे हैं इसके लिये दर्शन के विद्यार्थी उनके बहुत ही ऋणी हैं। श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी सर्वप्रतिभासम्पन्न व्यक्ति हैं। दार्शनिक तत्त्वों को आधार बनाकर मौलिक काव्यरचना में भी उनकी कवि-प्रतिभा बेजोड़ है। एक लाख छब्बीस हजार श्लोकों वाली उनकी 'श्वेतायनसंहिता' (लक्ष्मीनारायण-संहिता) वैष्णव धर्म एवं दर्शन का एक विश्वकोष है। ऐसे चतुर्मुखी प्रतिभा-सम्पन्न महान् व्यक्ति के चरणों में श्रद्धासुमन अर्पित किये बिना हम नहीं रह सकते। मैं श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी महाराज का हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ, और साथ ही अपना विश्वास प्रकट करता हूँ कि इनका व्यक्तित्व सार्वभौम पुरुष के रूप में शीघ्र ही विख्यात होगा क्योंकि—

विद्वत्वञ्च नृपत्वञ्च नैव तुल्यं कदाचन।
स्वदेशे पूज्यते राजा विद्वान् सर्वत्र पूज्यते॥

अस्तु !

दिनांक १४–५–७६

डॉ० व्रजविहारी चौबे

एन० के० देवराज

प्रोफेसर, दर्शन विभाग

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

यह बड़ी प्रसन्नता का विषय है कि महापण्डित स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य जी के आदरार्थ अभिनन्दन-ग्रन्थ का प्रकाशन किया जा रहा है। किसी देश की वास्तविक विभूति उसके सन्त, विद्वान् तथा लेखक होते हैं। स्वामी जी के शान्त एवं तेजस्वी व्यक्तित्व में उक्त तीनों कोटियों के पुरुषरत्नों की विशेषताएँ प्रतिफलित हैं। मैं स्वामीजी के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकाशित करता हूँ।

दिनांक १४–५–७६

एन० के० देवराज

रामनारायण त्रिपाठी

प्राच्यसंस्कृत विभाग,

लखनऊ विश्वविद्यालय,

लखनऊ

आपका पत्र विलम्ब से प्राप्त होने के कारण हम उचित समय पर आचार्य जी के किसी ग्रन्थ-सम्बन्धी लेख को भेज न सके। अब यह पत्र मुझे मिला इसलिये, न्यायसिद्धान्तमुक्तावली, तर्कसंग्रहदीपिका, सांख्यकारिका, सांख्य-तत्त्वकौमुदी इन चारों ग्रन्थों पर आचार्य जी की जो टीकायें हैं उससे सम्बन्धित लेख भेजने का प्रयत्न करूँगा।

भवदीय

दिनांक १४–५–७६

रामनारायण त्रिपाठी

डॉ० शिवप्रसाद भारद्वाज

शास्त्री, एम० ए०, एम० ओ० एल्०, पी-एच्० डी०

साहित्याचार्य, साहित्यरत्न

पञ्जाब विश्वविद्यालय, होशियारपुर

परम-विदुषाम् अविरत-सरस्वतीसेवैकहेवाकिनां स्वामिकृष्णवल्लभाचार्य-महाभागानाम् अभिनन्दनात्मकग्रन्थस्य प्रकाशने प्रकाशन-समितेः स्थाने यत् उदरम्भरिप्रायेऽस्मिन् युगे सुरभारत्या यथार्थसेवकानामद्यत्वे यत्सत्यम् अभाव आचार्यमहोदयानां नातो वरतरम् अभिनन्दनं सम्भवतीति ग्रन्थस्यास्य प्रकाशने कृतोत्साहा समितिरियं वधापिनमर्हतीति दृढमभिप्रयते ।

दिनांकः ४–६–७६

शिवप्रसाद भारद्वाजः

डा० श्रीउमारमण झा

एम० ए०, पी-एच० डी०, न्यायाचार्य

दर्शनविभाग

श्रीरणवीर केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, शास्त्रीनगर

जम्मूतवी (जम्मू-काश्मीर)

* अभिनन्दनीय-गुणमहनीयचरणश्रीकृष्णवल्लभाचार्यसंस्तव-सप्तकम् *

मोमुद्ये जनता करोति यस्मै सम्मानमित्यादरात्
यज्जिह्वां मधुमत्तमामधिगता गीर्वाणगीर्देवता ।
सन्तेने किरणावलीं बुधनुतां तां तत्त्वरत्नावलीं
जातिख्यातिकृते विशिष्टविषयव्याख्यां च तास्ताः कृतीः ॥ १ ॥

यस्य मतिः श्रीकृष्णे परमसतृष्णैव सत्यमासक्ता ।
प्रतिकृति ददाति साक्ष्यं प्रतिकृति सद्वैष्णवत्वस्य ॥ २ ॥

सर्वेषु शास्त्रनिचयेषु समानबोधः
न्याये तु कामपि रुचिं परमां विधत्ते ।
सोऽयं विधाय बहुशः किल शास्त्रजातं
धन्यो जनेषु यो वल्लभतामवाप ॥ ३ ॥

न्यायसिद्धान्तमुक्तानामावली किरणावली ।
प्रकाशिताऽभवत्कृष्णवल्लभाचार्यसूरिणा ॥ ४ ॥

अयं महात्मा द्विजराजपूजितो
विराजते यो बिबुधैर्निषेवितः ।
लोके ध्रुवं कृष्ण इवाति वल्लभो
विभाति सत्सङ्गतिभाष्यकौस्तुभः ॥ ५ ॥

वेदान्तसिद्धान्तमतं विचार्य
योगे दधौ चित्तमथापि सांख्ये ।
हितोपदेशं किरणावलीभि-
र्विद्योतयामास स वैष्णवाग्र्यः ॥ ६ ॥

विशिष्टाद्वैतेऽपि स्थितमतिरसौ सांख्यविषये
तथा जातिख्यात्योर्विचरति सुधासिन्धुपयसि ।
न मीनः कूर्मो वा बिबुधचयभूमीपतिरसौ
न केषां चेतांसि प्रहरति हि पञ्चानन इव ॥ ७ ॥

स्तुतिसप्तकोपहारं श्रीकृष्णचरणे समर्पयति ।
मिथिलाभूमिनिवासी सादरं श्रीउमारमणः ॥

दिनांकः ३-६-७६

डा० श्रीउमारमण झा

RAGHUNATH AIRI

M. A. (Skt. & Hindi) Ph-D., H. E. S.

Vidya Bhushan (Skt.), Senior Lecture

Head of the Dept. of Sanskrit,

Government College

स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य जी का अभिनन्दन भारतीय साहित्य-दर्शन-शास्त्र को सत्कृत करना ही है। उनकी विविध विषयों सम्बन्धी ज्ञान-विज्ञान से सम्पृक्त-समुपबृंहित रचनाओं को देखकर समस्त-संस्कृत-पाठक विशेष रूप से प्रभावित होते हैं। हिन्दू-शास्त्र-दर्शन पर उनकी विवेचनात्मक कृतियों में मौलिकता, सुबोधता और विषय-प्रवेश-क्षमता है जो प्रायः शास्त्रविवेचकों में अनुपलब्ध है। उनकी काव्य-रचनाओं में सर्वत्र भारतीयता अनुप्राणित है। स्वामी जी ने संस्कृत-महाकाव्य-परम्परा को भी आगे बढ़ा दिया है। अपने युग के वे लब्ध-प्रतिष्ठ दार्शनिक, शास्त्र-व्याख्याता तथा विवेचक हैं। गद्य-पद्य-बद्ध अनेक रचनाओं के इस प्रणेता का अभिनन्दन उदीयमान लेखकों के लिए प्रेरणा-स्रोत बनेगा। यह अभिनन्दन-ग्रन्थ हम सबको उनके व्यक्तित्व तथा कर्तृत्व की और अधिक जानकारी देगा। समय के अभाव के कारण मैं इनके किसी ग्रन्थ की विवेचना कर सकने में असमर्थ हूँ। उनके इस अभिनन्दन-ग्रन्थ में अपना नाम जोड़कर मैं स्वामी जी के अनुचरमण्डल में ही स्थान प्राप्त करने की अभिलाषा प्रकट कर रहा हूँ। उनका व्यक्तित्व और कर्तृत्व युगयुगों तक भारतीयों को प्रेरित करता रहेगा।

दिनांक ४–६–७६

रघुनाथ ऐरी

नारायण श्रीधरशास्त्री वारे.

धर्मकाण्डाचार्य, ज्योतिषाचार्य, ज्योतिषालङ्कार, वेदशास्त्रसम्पन्न

२०२२, सोमवार पेठ,

नासिक

❀ अभिप्रायः ❀

विश्वविख्यातविद्वान्महापंडितपरमपूज्यपरममाननीयपरमश्रद्धेयश्रीस्वामी - कृष्णवल्लभाचार्याणां न्यायमीमांसायोगतर्कधर्मदर्शनवेदांतादि ग्रन्थानां रचनाकार्यं अपूर्वं अद्भूतमेव परं च लक्ष्मोनारायणसंहितायाः महाग्रन्थस्य रचनाकार्यं तु अपौरुषेयमेव प्रतिभाति इतिमे मतिः ।

भवदीयः

दिनांकः ४–६–७६ **नारायण श्रीधरशास्त्री वारे.**

HUKAM CHAND PATYAL

DECCAN COLLEGE

Postgraduate and Research Institute, Poona 6

मुझे यह जानकर अपार हर्ष है कि आप बहुशास्त्रज्ञ स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य के लिए 'अभिनन्दन-ग्रन्थ' का आयोजन कर रहे हैं। इस अद्वितीय विद्वान् के लिए यह एक स्वल्प सा स्नेहोपहार है।

मैं इस अवसर पर स्वामीजी तथा आप सदृश सभी आयोजकों का हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ।

शुभ कामनाओं तथा सम्मान सहित,

भावत्कः,

दिनांक ७–६–७६

हुकम चन्द पट्यात

राम नरेश वर्म्मा

(एम० ए०, पी-एच० डी०, शास्त्राचार्य)

रीडर, हिन्दी-विभाग

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-५

बड़ी ही प्रसन्नता का विषय है कि आप श्रीमत् स्वामीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज की सप्तति पूर्ति स्मृति बड़े धूमधाम के साथ आयोजित कर रहे हैं। वास्तव में वे पण्डित सार्वभौम ही नहीं, सहृदयशिरोमणि और सदाचार के प्रतिमूर्ति भी हैं। ऐसे महापुरुष की स्मृति में अभिनन्दन-ग्रंथ के प्रकाशन के साथ साथ विद्यामंदिर की स्थापना एक महत्पुण्य का समारंभ है। विद्यालय के अध्यापक और अध्येता स्वामीजी की अक्षरमूर्ति से नित्य प्रेरणा तथा स्फूर्ति प्राप्त कर धन्य हो सकेंगे। अतः उनके चरणों में मैं अपना शत शत नमन निवेदन करता हूँ।

आपका

दिनांक २०-४-७६

राम नरेश वर्म्मा

वैजनाथपुरी

एम० ए० बी० लिट्० आक्सन, डी० फील आक्सन

५७, बादशाह बाग,

लखनऊ

श्रीकृष्णवल्लभाचार्य कृष्ण सम्प्रदाय के अद्वितीय तथा मान्यवर गुरु हैं। हिन्दू धर्म से संवर्धित इस सम्प्रदाय की उत्पत्ति तथा उत्थान श्रीकृष्णवल्लभाचार्य द्वारा हुआ जो रामानुज, माधवाचार्य तथा चैतन्य महाप्रभु की श्रेणी में रखे जाते हैं। दक्षिणी होते हुए भी उन्होंने सम्पूर्ण भारत को अपना क्षेत्र माना, तथा पश्चिमी भारत में विशेषरूप से अपना बालकृष्ण-भक्तिमार्ग प्रस्तुत किया। श्रीमद्भागवत को आधार मानकर भगवान की बाललीला को ही श्रेष्ठ स्थान प्रदान किया। यह सम्प्रदाय सरल स्वभाव का है और इसका अपना साहित्य है जिसमें गुरुओं का विशेषतया अनुदान है। श्रीकृष्णवल्लभाचार्य आधुनिक युग में इसमें प्रमुख आचार्य हैं। यह हर्ष की बात है कि उनके व्यक्तित्व और कृतियों के संदर्भ में यह अभिनन्दन ग्रन्थ अर्पित किया जा रहा है। मेरी शुभकामानाए उनके साथ है। भगवान उनको साहित्य सेवा के लिए दीर्घायु दें।

शुभकाक्षी

दिनांक ३–६–७६

वैजनाथपुरी

गङ्गादत्त शास्त्री

एम० ए० हिन्दी, संस्कृत बी० एच० यू० वाराणसी,

वेदाचार्य बी० एच० यू० वाराणसी, पी० एच० डी० (जे० यू०)

२३, मोहल्ला पहड़िया

केशरी कुटीर

जम्मू

यह पढ़ कर प्रसन्नता हो रही है कि आप विश्व विख्यात एवं संस्कृत भाषा के धुरन्धर विद्वान् तथा लेखक श्रीस्वामी कृष्णवल्लभाचार्य का अभिनन्दन-ग्रन्थ प्रकाशित करने जा रहे हैं। ऐसे मूर्धन्य विद्वान् तथा भारत को जाज्वल्यमान विभूति के प्रति इस रूप में अपने श्रद्धा सुमन प्रस्तुत करने का आप का प्रयास स्तुत्य है जिससे इस प्रकार के साधकों का साहित्य के प्रति योगदान के प्रति यत् किंचित् मूल्याङ्कन की परम्परा पड़ेगी और शेष साधकों को भी इससे प्रोत्साहन मिलेगा। पण्डितवर्य श्रीकृष्णवल्लभाचार्य ने अपने जीवन में पर्याप्त लिखा। संस्कृत के प्रगाढ़ विद्वत्तापूर्ण ग्रन्थों की रचना तथा टीकाएँ लिख कर उन्होंने संस्कृत वाङ्मय की अभूतपूर्व सेवा की है, मुक्तावली, सांख्यकारिका, सुधासिन्धु आदि कठिन ग्रन्थों पर उपयोगी टीकाएँ एवं दर्शन तत्त्व पर सार, भक्तिरस सरित् लक्ष्मीनारायण-संहिता आदि मौलिक रचनाओं द्वारा वे संसार में सदा अमर रहेंगे। उनके रचित चौवालीस ग्रन्थ संस्कृत साहित्य को महान् योगदान है। मैं आपके इस कार्य की हार्दिक प्रशंसा करता हुआ आप को बधाई भेज रहा हूँ और आशा है कि इस सम्बन्ध में मेरे योग्य कोई सेवा होने पर सद्यः सूचित करेंगे।

भवदीय

गङ्गादत्त शास्त्री

विनोद चन्द्र सिंहा

अध्यक्ष,

प्राचीन भारतीय इतिहास विभाग,

गुरुकुल-काङ्गड़ी विश्वविद्यालय

हरद्वार

यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि आप स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य अभिनन्दन-ग्रन्थ शीघ्र ही प्रकाशित करने जा रहे हैं। श्री आचार्य जी का जीवन, सेवा, त्याग तथा तपस्या का प्रतीक हो रहा है। आगे आने वाले अनेक वर्षों तक उनके आदर्शों से हमें प्रेरणा मिलेगी। इस पावन अवसर पर मैं श्री आचार्य के चरणों में श्रद्धा से नत होता हूँ।

भवदीय

दिनांक ४–६–७६

विनोद चन्द्र सिंहा

अजय मिश्र शास्त्री

प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृत तथा पुरातत्त्व विभाग,

नागपुर विद्यापीठ

अंबा बिहार,

दक्षिण अंबाझरी मार्ग,

नागपुर-४३००१०

आदरणीय स्वामिश्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी के सम्मान हेतु अभिनन्दन-ग्रन्थ प्रकाशित हो रहा हैं यह अत्यन्त आनन्द का विषय है। स्वामीजी का सामाजिक, धार्मिक एवं साहित्यिक कर्तृत्व किसी भी व्यक्ति के लिए गौरव का विषय है। अतः मैं आपके इस महान् आयोजन की सफलता की कामना करते हुए स्वामी जी के दीर्घायुष्य एवं स्वास्थ्य के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ।

अजय मिश्र शास्त्री

बलजिन्नाथ पण्डित

अस्सोशिएट प्रोफेसर,

संस्कृत-विभाग, हिमाचल प्रदेश

विश्वविद्यालय, शिमला—५

प्रिय महोदय,

नमस्कार। आप के पत्र मिले तदनुसार मैंने श्रीकृष्णवल्लभाचार्य के द्वारा निर्मित कुछ एक दर्शन शास्त्र के टीका-ग्रन्थों का अन्वेषण करके उन्हें भली भाँति देख लिया। उनकी सर्वतोमुखी प्रतिभा और उनके व्याख्यान-कौशल को जानकर मुझे अपार हर्ष हुआ। मेरी यह हार्दिक अभिलाषा है कि वे आचार्य सोमानन्द की शिवदृष्टि और आ० अभिनवगुप्त की ईश्वर प्रत्यभिज्ञाविमर्शिनो तथा आ० उत्पलदेव की सिद्धित्रयी पर गहन विमर्श करके इन उत्कृष्ट दर्शनग्रन्थों के तात्पर्य पर प्रकाश डालें। सम्भवतः भगवान् महेश्वर इन शास्त्रों के तात्पर्य को अभी रहस्य में ही रखना चाहते हैं। तभी श्री आचार्य जी की तीक्ष्ण प्रतिभा की प्रवृत्ति अभी तक इनके प्रति नहीं हुई। अस्तु !

भवदीय

दिनांक १०-६-७६

बलजिन्नाथ पण्डितः

Mahamahimopadhyaya Vidyamartand

Prof. J. D. LADOO

M. A., Shastri, M. O. L.

Nai Sarak. SRINAGAR, Kashmir.

❀ आशीर्वचन-संमतिः ❀

दार्शनिकपञ्चानन, पण्डितपुंगव, श्रीस्वामिकृष्णवल्लभाचार्यवर्य की वज्र-लेखनी से समुद्भूत, सवालाख पद्यों के कलेवर का, "श्रीलक्ष्मीनारायणसंहिता" की सुन्दर संज्ञा से संभूषित, जो महान् ग्रन्थरत्न है, उसकी उपमा वह स्वयं अपने आप है।

आपके और भी ग्रन्थरत्न हैं जो वैदुष्यपूर्ण हैं तथा हिन्दी संस्कृत-साहित्य के ललामभूत हैं।

ऐसे विश्ववंद्य महापण्डित को जो आज, अभिनन्दन-ग्रन्थ द्वारा, समभिनन्दित किया जा रहा है, वह आपके समकालीन, सदाशय, विद्वानों के अतिशय सौगुण्य, उत्कृष्टतम सौशील्य तथा अपरिमित सौजन्य का परिचायक है।

ऐसे महत्त्वपूर्ण अवसर पर, मैं एक वरिष्ठ संस्कृत प्रेमी के नाते, उन सरस्वती के वरदपुत्र की, अखण्ड यशस्विता, दीर्घायु, और सार्वदिक् आरोग्य लाभ के लिए भगवान् से प्रार्थी हूँ कि वह, उन्हें, भविष्यत् में भी वह उत्साह, वह उद्यम, वह शक्ति और वह प्रेरणा दें, जिससे उनकी लौह लेखनी के अन्तर से अन्यान्य उत्कृष्टतम ग्रन्थरत्नों का अविरत प्रादुर्भाव होता रहे।

Date 4–6–76

J. D. LADOO

डॉ० रवीन्द्र भ्रमर

हिन्दी विभाग, अलीगढ़ विश्वविद्यालय,

अलीगढ़

काव्य, न्याय, दर्शन के पुण्य श्लोक वन्दन !

धर्म-मूर्त्ति के भव्य भाल अक्षत-चन्दन !

जागृत ज्योति जगे जन-जन के जीवन में-

कृष्णवल्लभाचार्य स्वामि शत अभिनन्दन ॥

दिनांक ९–६–१९७६

डॉ० रवीन्द्र भ्रमर

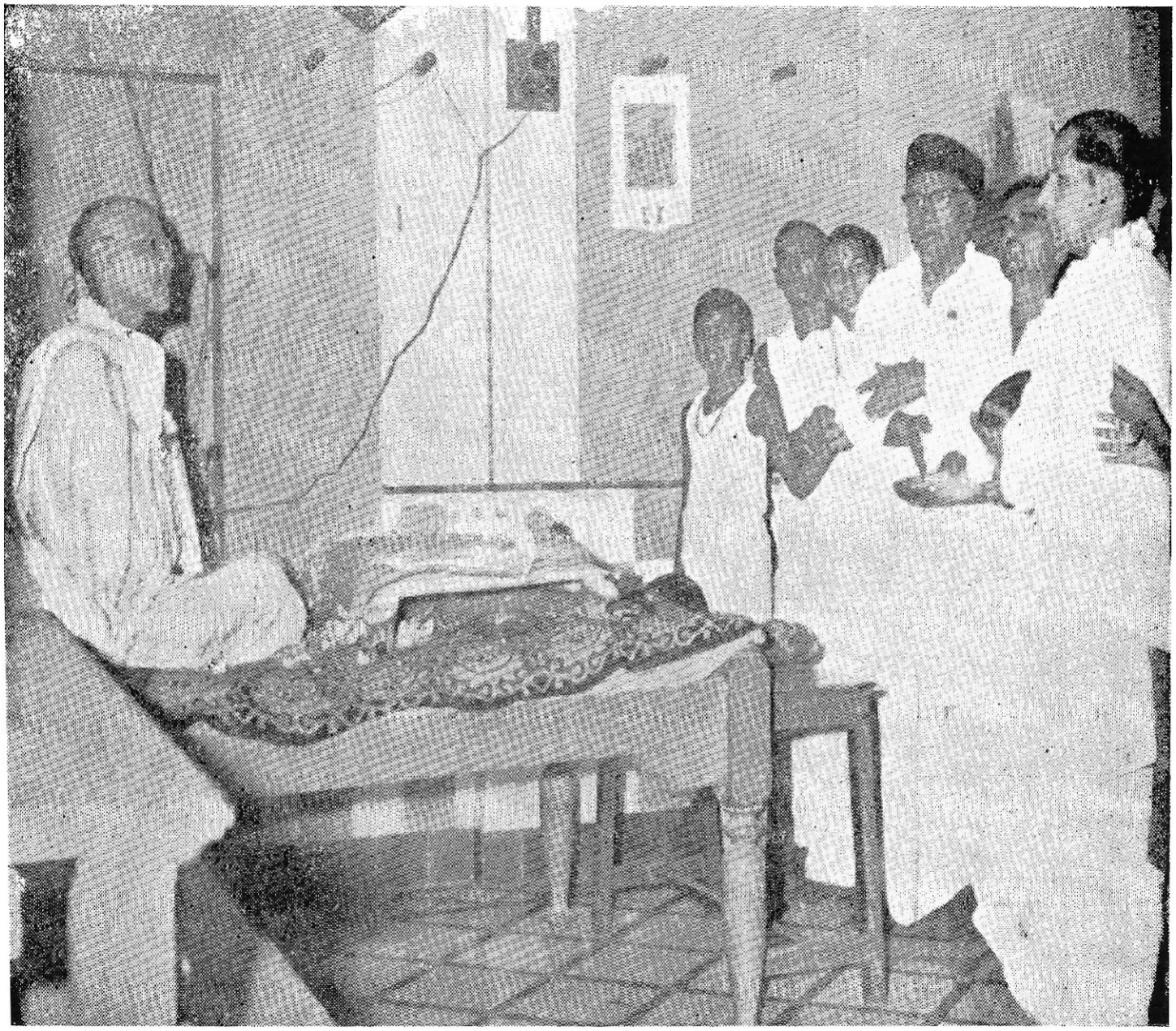

सभा में पूज्यासन में विराजित श्रीश्वेतायन व्यासजी स्वरूप उपदेशपरायण
श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज। (पृष्ठ १६१)

डा० रामचन्द्र पाण्डेय

ज्योतिषाचार्य (सि० फ०), पी-एच० डी०

व्याख्याता (ज्योतिष)

श्री रणवीर केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ

जम्मू (काश्मीर)

संस्कृतवाङ्मय के अपार पारावार में ज्ञानसेतु-स्वरूप कलियुग में वेदव्यास-स्वरूप महामनीषी श्रीकृष्णवल्लभाचार्य का मैं हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ जिनकी अधिकांश कृतियों ने दर्शन की गूढग्रन्थियों को शिथिल कर जिज्ञासुओं को सुगम मार्ग दिखाया।

रामचन्द्र पाण्डेय

श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य्य श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठ

श्रीमान् १०८ श्री स्वामी भागवतानंदजी महाराज

महामंडलेश्वर, काव्य, साङ्ख्य, योग, न्याय, वेद, वेदान्तादितीर्थ,

वेदान्तवागीश, मीमांसाभूषण, वेदरत्न, दर्शनाचार्य

भारतीयविद्यालय	काशीदेवी के पास मठ	मणकीवाला संन्यास आश्रम
पो० मु० कनखल (हरिद्वार)	६२।१४५	गोमतीपुर
जि० सहारनपुर (यू० पी०)	मु० सप्तसागर, वाराणसी	अहमदाबाद २१

❀ सम्मति-पत्र ❀

श्रीवैष्णवविदूत्सार्वभौम - दार्शनिकपञ्चानन - षड्दर्शनाचार्य - नव्यन्यायाचार्य-सांख्ययोग-वेदान्त-मीमांसातीर्थ-काव्यकुशलादि उपाधिभूषित-श्रीमान् पण्डितवर्य श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज भारतीय विद्वानों में उच्चकोटि के प्रतिभाशाली विद्वान् हैं, आपने अनेक उच्चकोटि के ग्रन्थों पर टीका-टिप्पणियाँ की हैं। आपके रचित तथा व्याख्यात ग्रन्थों का विद्वत्समाज में पठन-पाठन प्रचलित है। आपने प्रशंसनीय अपनी रचनाओं द्वारा संस्कृत साहित्य की अपूर्व समृद्धि की है और लक्ष्मीनारायण-संहिता नामक अपूर्व ग्रन्थरत्न के प्रकाशन द्वारा संस्कृत साहित्य की अपूर्व शोभा बढ़ायी है। आपकी रसना पर सरस्वती नृत्य करती है, यह आपके ग्रन्थों की रचना से प्रतीत होता है। हम श्री नारायण से यह प्रार्थना करते हैं कि आपको दीर्घायु करें जिससे आप अनेक ग्रन्थ रचना द्वारा सरस्वती भण्डार को बढ़ाते रहें।

भवदीय

स्वामी भागवतानन्दजी

His Holiness Reverend M. A. (Eng.), Darshan-Vedantacharya, Mahamandaleshwar

SHRI 108 SWAMI MAHESHWARANAND PURIJI MAHARAJ

SANNYAS ASHRAM, SANNYAS ROAD, KANKHAL-249408

(HARDWAR) (U. P.)

Vadant Kutir, 'Vipul'. 173, Garodia Nagar, Ghatkopar, Bombay 400077

वस्तुतः विद्वान् किसी देशकाल जाति सम्प्रदाय की सीमाओं में नहीं बंधता। उसकी दृष्टि सर्वांगीण होती है तथापि वह अपने असीम ज्ञान को देशकाल की आवश्यकताओं के साथ समन्वित करके प्रसारित करता है। आज राष्ट्र को इसी समन्वय की, एकता की आवश्यकता है। सभी धर्मों का, सभी दर्शनों का, सभी वादों का, परम सत्य को दृष्टि में रखकर लघु विभिन्नताओं को गौणकर समन्वय स्थापित करने की आज परमावश्यकता है। इस तथ्य को अत्यन्त सरल भाषा में जनता के सम्मुख स्थापित करें, यह मेरी हार्दिक इच्छा है।

श्रीस्वामीकृष्णवल्लभाचार्य जी के ग्रन्थों से, उनकी विद्वत्ता एवं सरल सुबोध शैली से मैं परिचित भी हूँ और प्रभावित भी। विश्वास है कि उनसे जनता को समुचित मार्ग-दर्शन प्राप्त होता रहेगा। मैं उनका हृदय से अभिनन्दन करता हूँ। इस परम सन्त की दीर्घायु की कामना के साथ—

भवदीय

स्वामी महेश्वरानन्द

डा० गोवर्धन नाथ शुक्ल

आचार्य एवं अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग

अलीगढ़ मु० विश्वविद्यालय, शुक्ल सदन,

अलीगढ़

पूज्यपाद स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य जी के उच्चकोटि के साधुत्व एवं वैदुष्य से आज सम्पूर्ण राष्ट्र परिचित है। उन्होंने भारतीय साहित्य एवं संस्कृति की रक्षा ही नहीं की अपितु उसके उन्नयन समुच्चयन में महान् योगदान दिया है। स्वामीजी ने विशेष रूप से दर्शन और अध्यात्म के क्षेत्र में जो गुरुतम गम्भीर कार्य किया है वह सुखद आश्चर्य का विषय है। संस्कृत भाषा पर उनका असाधारण अधिकार है। ऐसे उत्कृष्ट ग्रन्थों की रचना के लिए स्वामी जी पौनः पौन्येन सविनय प्रणम्य हैं।

भवदीय

दिनांक १५–६–७६

गोवर्धन नाथ शुक्ल

डा० रामचन्द्र द्विवेदी

अध्यक्ष

प्रोफेसर संस्कृत, उदयपुर विश्वविद्यालय

उदयपुर

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि विश्वविख्यात संस्कृत के विद्वान् एवं भारतीय परम्परा के सिद्ध महापुरुष एवं सन्त श्रीस्वामी जी का अभिनन्दन-ग्रन्थ के माध्यम से किया जा रहा है।

भारतीय दर्शन एवं संस्कृत साहित्य को स्वामी जी ने अपनी प्रतिभा से आलोकित किया है। उनका अभिनन्दन हमारे लिये प्रेरणा का कार्य करेगा एवं भविष्य के पथ को आलोकित करेगा !

आपका

दिनांक ५-७-७६

रामचन्द्र द्विवेदी

हरीन्द्र भूषण जैन

विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन

❀ अभिमत ❀

संस्कृत भाषा के प्रकाण्ड पण्डित, भारतीय दर्शनों के अभिनव व्याख्याता, विद्वत् शिरोमणि, स्वामीकृष्णवल्लभाचार्य भारत की एक अमूल्य निधि हैं। उन्होंने संस्कृत भाषा में अनेक मौलिक ग्रन्थों का प्रणयन कर सरस्वती के भण्डार को समृद्ध किया है। ऐसे महान् सन्त का अभिनन्दन अत्यन्त उचित एवं प्रशंसनीय है

भारतीय संस्कृति के उन्नायक इस महर्षि को मैं अपनी प्रणामाञ्जलि भेंट करता हूँ।

दिनांक २–७–१९७६

हरीन्द्र भूषण जैन

श्री १०८ महामण्डलेश्वर स्वामी पूर्णानन्द गिरि जी महाराज

श्री कृष्ण निवास आश्रम, कनखल (हरिद्वार)

(जि० सहारनपुर) उत्तर प्रदेश

❀ भारत के युगीन ऋषि की प्रशस्ति में दो शब्द ❀

भारत भूमि राम, कृष्ण की जननी है। इसकी गोद में गौतम, कणाद, पतञ्जलि जैमिनी आदि ऋषियों ने ज्ञानगङ्गा प्रवाहित की। इसी पावन भूमि पर कृष्ण द्वैपायन व्यास अवतरित हुए, जिन्होंने बिखरे ज्ञान का सङ्कलन वेदों सहित किया। पुराण, महाभारत, वेदान्तदर्शन आदि ग्रन्थों का सर्जनकर विश्व के मानव का पथ प्रदर्शन किया। जब इस देश में ज्ञानदीपक टिमटिमाने लगता है तथा अपनी अन्तिम सीमा पर पहुँच जाता है तब वह ईश्वरीय शक्ति किसी न किसी रूप में अवतरित होती है।

आज हम श्री स्वामीकृष्णवल्लभाचार्य जी के रूप में उसी ईश्वरीय शक्ति का प्रत्यक्ष दर्शन करते हैं। जिन्होंने अपनी दैनिक शक्ति का प्रदर्शन अनेक ग्रन्थों के सङ्कलन में किया है जो विश्व में अभूतपूर्व है। महाभारत के समकक्ष ग्रन्थ का सर्जन साधारण मानवीय शक्ति का काम नहीं है यही ईश्वरीय शक्ति है। आज का मानव इनके नाम पर प्रारम्भ होने वाले विद्यालय के स्वरूप को समझाने का प्रयास करेगा। शिक्षा-प्रणाली ही मानव निर्माण करती है।

प्राचीन भारत में धर्म स्वातन्त्र्य और अन्यान्य स्वातन्त्र्य की तरह प्रजा को शिक्षा स्वातन्त्र्य भी था। भारत का ऋषि एकान्त सेवी, निर्लोभी, तपः स्वाध्याय विरत, अन्य सांसारिक सुखों को तिलाञ्जलि देकर, अध्यात्म-जीवन और कर्म-योगपरायण होकर केवल मानव मात्र की शिक्षा में निरत रहता था, और सदा योगयुक्त अन्तःकरण रहने के कारण उनका अन्तःकरण देवलोक से सम्बन्धित होता था। देवलोकवासी देवर्षियों की प्रेरणा से वे सदा लोककल्याणार्थ शास्त्र-प्रणयन और शास्त्राध्यायन करते हुए इस मृत्युलोक को धन्य किया करते थे। विद्याप्रचार और लोकशिक्षा ही उनके जीवन का महान् लक्ष्य था। इसी प्रकार वर्तमान युग में वही देवर्षि नारद नारं ज्ञानं ददातीति नारद हैं। श्रीस्वामीकृष्णवल्लभाचार्यजी के रूप में भारत में अवतरित हुए हैं।

वैदिक साहित्य के आधार पर भारत को ज्ञान की अतुल सम्पत्ति प्रदान की है जिसे विश्व का मानव ऋषि धरोहर समझ कर सुरक्षित रक्खेगा।

यहां के मानव ने महर्षि कणाद के धर्म लक्षण का ही अनुसरण किया है—"यतोऽभ्युदयनिःश्रेयस्सिद्धिः स धर्मः। पूज्यपादमहर्षियों का यह सिद्धान्त था कि अज्ञान जननी अविद्या है और ज्ञान जननी विद्या है। अविद्या को जितना ही घटाया जावे, उतना ही विद्या की ज्योति विकसित होती है। विद्यालाभ का प्रथम ध्येय यही था कि इस लोक में अभ्युदय और परलोक में निश्रेयस्सिद्धि यानि मोक्ष प्राप्ति हो यही धर्म है। प्राचीन काल से ही इस देश में आत्मतत्त्व का अनुसन्धान हुआ था। "अहं" की प्रतीति किसको आश्रय करके एवं किसे अवलम्बन करके उठती है। इसकी आलोचना चिन्तनशील व्यक्तिमात्र ही करते हैं। जो व्यक्ति तपस्वी, योगी तथा साधना सम्पन्न था, वही अपने योग-बल से अपने अन्तःकरण तथा बाह्य इन्द्रियों का उत्कर्ष साधन कर लौकिक प्रत्यक्ष से कहीं श्रेष्ठ उच्च श्रेणी का प्रत्यक्ष ज्ञान लाभ करने में समर्थ होते थे। इन्द्रियों के दोष तथा अपटुतावश पदार्थ की सूक्ष्मता के कारण या आवरणवश या चित्त की कलुषता तथा प्राक्तन संस्कारों के कारण लौकिक प्रत्यक्ष द्वारा सत्य का अभ्रांतस्वरूप साक्षात् करना सम्भव नहीं है। इसलिए वे लोग नैतिक जीवन का उत्कर्ष सम्पादन अथवा समाधि का अभ्यास, अथवा अन्य किसी प्रकार के साधन प्रणाली का अभ्यास आवश्यक समझते थे। इसी परम ध्येय की पूर्ति भी स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य जी ने अपनी दिव्य शक्ति द्वारा की है। उनकी प्रशस्ति में क्या लिखा जावे वे अप्रतिम हैं। उनकी प्रशस्ति इसी में है कि उनकी ज्ञानराशि को भारतीय मानव अपनी वास्तविक सम्पत्ति समझकर सुरक्षित रक्खे और उनके आदेश के अनुसार जीवन बनावे।

स्वामी पूर्णानन्द

स्वामी कैवल्यानन्द सरस्वती

ठे० सुखगिरि बङ्गला

कनखल (उत्तर प्रदेश)

यह जानकर अत्यन्त हर्ष का अनुभव हो रहा है कि अनेक संस्कृत, हिन्दी एवं गुजराती ग्रन्थों के रचयिता प्रखर तेजस्वी महामान्य पण्डितवर्य अनन्त-श्री विभूषित स्वामीकृष्णवल्लभाचार्य महाराज के अमोघ पाण्डित्य के उपलक्ष्य में भारत तथा विश्वभर के विशिष्ट विद्वान् अभिनन्दन कर रहे हैं। जो कि भारत के लिये तथा खास कर साधु समाज के लिये बड़े गौरव की बात है। मैं भी आचार्यश्री जी का सन्मान करता हूँ तथा हार्दिक प्रेम से अभिनन्दन करता हूँ, एवं आपके सुयश सत्कीर्ति आदि अनन्तश्री की अभिवृध्यर्थ सर्वान्तरात्मा प्रभु से शुभ कामना करता हूँ।

आपका शुभाभिलाषी

स्वामी कैवल्यानन्द सरस्वती

अखण्डमहिमण्डलाचार्य श्रीमज्जगद्गुरुरामानुजसम्प्रदायाचार्य

श्री स्वामी गोपालदत्त शास्त्रीजी महाराज

काव्य-पुराण-वेद-वेदान्ततीर्थ

अध्यक्ष अ० भा० रामराज्यपरिषद, दिल्ली,

अ० भा० श्रीवैष्णवसम्मेलन, प्रयाग, शास्त्र धर्मप्रचार सभा, कलकत्ता

श्रीबलरामपीठ, राजेन्द्रनगर

पो० आरा (बिहार राज्य)

मान्यवर महोदय,

आप महानुभावों द्वारा प्रेषित स्वामीकृष्णवल्लभाचार्य-स्मृतिमन्दिर की ओर से "श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी अभिनन्दन-ग्रन्थ" का अनुष्ठान-पत्र प्राप्त हुआ। "गुरुं प्रकाशयेद्धीमान्" इस वचन के अनुसार सदाचार्य वैभव के प्रकाशन के लिये महाविद्वान् तत्त्वचिन्तक संस्कृत वाङ्मय के व्याख्याता स्वामिश्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी के अभिनन्दन-ग्रन्थ के प्रकाशन के लिये मैं आप महानुभावों का अभिनन्दन करता हूँ।

श्रीवैष्णव विद्वत्सार्वभौम स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज के सम्बन्ध में अपना विशेष अभिप्राय अभिनन्दन-ग्रन्थ के लिये भेजने में मुझे पूर्ण आनन्द हो रहा है। इस अवसर पर कालेज की स्थापना स्वामीजी के नाम पर आप लोग कर रह हैं उसके प्रति मेरी हार्दिक शुभ कामना है।

भवदीय

दिनांक २८-६-१९७६

श्रीगोपाल दत्त शास्त्री

श्रीस्वामी रघुनाथगिरिजी महाराज

वेदान्त-आयुर्वेद-सांख्य-योगाचार्य

श्रीमत्परमहंस-परिव्राजकाचार्य श्रोत्रिय-ब्रह्मनिष्ठ

भूपतवाला कलां (मोती चूर के पास)

हरिद्वार (उत्तर प्रदेश)

बहुत वर्ष पूर्व वाराणसी में रहते हुए सुप्रसिद्ध विद्वान् श्रीवामाचरण भट्टाचार्य से परिचय प्राप्त करते ही स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी के अद्भुत वैदुष्य से प्रभावित हुआ। उसी समय स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी की न्यायमुक्तावलि, सांख्यकारिका आदि की व्याख्याएँ देखने में आई हैं। मैं तभी से सुपरिचित हूँ। इनकी लोकोत्तर प्रतिभा संस्कृतवाङ्मय के गौरव को बढ़ानेवाली है। अतः भारत की अमुपम विभूति सरस्वती के वरदपुत्र अनन्त काल तक जन समाज का अपनी कृतियों के द्वारा कल्याण करते रहें, यही हमारी हार्दिक शुभेच्छा है।

भवदीय

दिनांक १२–७–७६

स्वामी रघुनाथ गिरि

कौशल्या वल्ली

Reader, Dep. of Sanskrit

Jamu University, Jamu Tawi.

Jamu State

यह परम हर्ष का विषय है कि स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य अभिनन्दन-ग्रन्थ जगत् के सामने शीघ्र ही प्रस्तुत हो रहा है। वैष्णव विद्वत्सार्वभौम, दार्शनिक पञ्चानन, षड्दर्शनाचार्य, नव्यन्यायाचार्य, सांख्ययोगवेदान्तमीमांसातीर्थ, काव्य-कुशल स्वामी कृष्णवल्लभाचार्यजी दार्शनिक जगत् के देदीप्यमान स्तम्भ हैं, संस्कृत भाषा एवं काव्य के प्रखर विद्वान् हैं, सर्वोपरि एक सन्त हैं। स्वामी जी की ४३ कृतियाँ भारतीयता से ओतप्रोत हैं।

ज्ञान की अमूल्य निधि एवं सरस्वती के उपासक—स्वामी जी—दीर्घकाल तक प्रेरणास्रोत बने रहें, यही विधाता से हार्दिक प्रार्थना है।

कौशल्या वल्ली

कृष्णकान्त चतुर्वेदी

एम० ए० (संस्कृत), एम० ए० (पालि-प्राकृत)

पी० एच-डी०, साहित्याचार्य

प्रवाचक (संस्कृत पाली तथा प्राकृत)

५, रीडर क्वार्टर्स, सरस्वती विहार

जबलपुर विश्वविद्यालय, जबलपुर

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि आप श्री स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य जी का अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित करने जा रहे हैं। स्वामीकृष्णवल्लभाचार्य प्राचीन परम्परा एवं अध्यात्म चिन्तन के महान् पण्डित हैं। इतने विशालकाय संस्कृत हिन्दी वाङ्मय के निर्माणकर्त्ता स्वामी जो वस्तुतः ऋषिकल्प हैं। इन्होने अध्यात्म जैसे कठिन और दुरूह विषयों की अत्यन्त सरल सुबोध व्याख्या की है। साथ ही विद्वानों के लिए विषय की गम्भीरता भी सर्वत्र प्राप्त है। भारतीय संस्कृत वाङ्मय के इतिहास में इनका नाम अमर रहेगा।

इस शुभ अवसर पर मेरी हार्दिक शुभ कामनाएँ स्वीकार करें।

दिनांक १४–७–७६

कृष्णकान्त चतुर्वेदी

प्रभुदत्त ब्रह्मचारी

संकीर्तन भवन,

झूसी

यह जानकर कि संस्कृत साहित्य के उद्भट विद्वान् एवं पण्डितप्रवर स्वामी कृष्णवल्लभाचार्यजी के अभिनन्दन के लिए संस्था की ओर से 'अभिनन्दन-ग्रन्थ' का प्रकाशन हो रहा है, अत्यन्त प्रसन्नता हुई।

यद्यपि स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य जी से मेरा व्यक्तिगत सम्बन्ध-सुयोग नहीं हो सका था, लेकिन संस्कृत वाङ्मय के इन प्रतिभाशील विद्वान् और भारती के सरस साधक की उत्कृष्ट काव्य-रचना के अंशो का मैंने अवलोकन किया है।

स्वामी जी के व्यक्तित्व एवं उनके अमर कृतित्व के लिए मेरी हार्दिक शुभ-कामनाएँ स्वीकार करें।

आपका

१३ जुलाई १९७६

प्रभुदत्त ब्रह्मचारी

महावीरदास जैन

स्नातकोत्तर हिन्दी एवं भाषा विज्ञान विभाग

जबलपुर विश्वविद्यालय,

जबलपुर

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आप भारतवर्ष के प्रख्यात संत-भक्त एवं मेधावी विद्वान् स्वामी कृष्णवल्लभाचार्यजी का अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित कर रहे हैं। आपका प्रयास स्तुत्य है। मेरी शुभकामनायें स्वीकार करें।

महावीरदास जैन

प्रेमलता शर्मा

सङ्गीतशास्त्र विभाग

सङ्गीत एवं ललित कला सङ्काय

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

Department of Musicology

Research Section

Faculty of Music & Fine Arts

B. H. U. Varanasi-5

पण्डितवर्य स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य जी से परिचित होने का सौभाग्य मुझे नहीं मिला है। आप ने उनके विरचित ग्रन्थों की जो सूची भेजी है उस से उनका व्यापक और प्रगाढ़ पाण्डित्य अवश्य झलकता है।

भवदीया

दिनांक १६-३-१९७६

प्रेमलता शर्मा

जगद्गुरु शङ्कराचार्य जी महाराज

जगन्नाथ पुरी, स्वर्गद्वारपुरी

श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी वैष्णव समाज के भूषण हैं। सरस्वती के वरदपुत्र हैं। विद्वत्ता और विनम्रता का उनमें मणिकाञ्चन योग है। दार्शनिक दुनिया के उज्ज्वल नक्षत्र हैं। सन्तों के हृदय के हार हैं। संस्कृत विद्या के प्रखर विद्वान् हैं। इनका व्यक्तित्व सन्त और गृहस्थ दोनों के लिए प्रेरणा-स्रोत है।

श्री कृष्णवल्लभाचार्य ने जिस विद्या वैभव से इतना उच्च व्यक्तित्व प्राप्त किया है उसी विद्यानिधि की सेवा उनके द्वारा होती रहे, यही हमारी शुभेच्छा है।

इनका अभिनन्दन वस्तुतः सरस्वती का ही अभिनन्दन है।

दिनांक ८-३-७६ **जगद्गुरु शङ्कराचार्य जी महाराज**

Dr. R. C. DWIVEDI

Professor & Head and Chairman. Faculty of Humanities

DEPARTMENT OF SANSKRIT UNIVERSITY OF UDAIPUR

UDAIPUR (RAJ.)

पण्डितवय श्रीकृष्णवल्लभाचार्य अपने वैदुष्य कृतित्व एवं साहित्य तथा समाज की सेवा के लिये सुविख्यात रहे हैं। उनके द्वारा प्रणीत ग्रन्थों ने संस्कृत दर्शन एवं भक्तिवाङ्मय की श्रीवृद्धि की है।

मुझे यह जानकर परम प्रसन्नता है कि देश के इन मूर्धन्य विद्वान् एवं आचार्य का आप सब अभिनन्दन कर रहे हैं। वस्तुतः उनका अभिनन्दन विद्या एवं सरस्वती की अर्चना है।

रामचन्द्र द्विवेदी

स्वामिनारायण चञ्चरीक

पं० धीरजधारीशास्त्री

मथुरावासी स्वा० ना० गौर

एवं

मन्त्री विद्वत् परिषद्

मु० मथुरा (उ० प्र०)

आजतक जितने भी अवतार हुए उन सबके सम्मुख एक ही प्रश्न था मानव जीवन उत्तम बनाना। उत्तम-मानव जीवन उपासना सहित अपने इष्ट देव के अनुसार कायिक वाचिक मानसिक आचरण करने एवं उनके सिद्धान्तों का सम्पादन करने से होता है। प० पू० भारतरत्न पण्डित कुलभूषण श्रीकृष्ण-वल्लभाचार्य जी उपरोक्त उक्ति के प्रतीक मूर्ति हैं। आप उद्धव-सम्प्रदाय में ही नहीं, भारतवर्ष भर में स्वरचित ग्रन्थों का सम्पादन हेतु विख्यात हैं। आपकी रचनाएँ एवं टीकाओं के विचार अनुपम हैं। उनका अभिनन्दन भगवान् अक्षराधि-पति पूर्ण पुरुषोत्तम श्री सहजानन्द स्वामी की मनीषा है। हिन्दी में साम्प्रदायिक ग्रन्थों की रचना करके उत्तर भारत के हरिभक्तों पर पू० आचार्य जी ने अतीव अनुकम्पा की है। एतदर्थ भारतवर्ष के विद्वान् तथा उद्धव-सम्प्रदाय सदैव आचार्यजी का ऋणी रहेगा।

अतः प-पू० स्वनामधन्य पण्डित कुलभूषण श्रीकृष्णवल्लभाचार्य के अभिनन्दन-ग्रन्थ हेतु प्रयास सफल होते देखकर अपने हृद्गत भावमयी सुमनाञ्जलि समर्पण करके अपने को धन्य मान रहा हूँ।

पं० धीरजधारीशास्त्री

विनोदचन्द्र सिन्हा

एम० ए०, पी-एच० डी०

निदेशक

पुरातत्त्व संग्रहालय

गुरुकुल काङ्गड़ी विश्वविद्यालय

हरिद्वार

बड़ी प्रसन्नता है कि देश के एक महान् पण्डित के सम्मान में आप अभिनन्दन-ग्रन्थ प्रकाशित करने जा रहे हैं। स्वामी जी भले ही गुजरात में जन्मे हों, परन्तु सारे देश को उन पर गर्व है। उनकी पुण्य स्मृति में एक विद्या मन्दिर की स्थापना सर्वथा उचित है।

आचार्य कृष्णवल्लभाचार्य जी का जीवन तप और त्याग का जीवन रहा है। आने वाले सैकड़ों वर्षों तक वे हम सब के लिये प्रेरणा के स्रोत बने रहेंगे। इस पावन अवसर पर मैं श्री आचार्य जी के चरणों में श्रद्धा से नत होता हूँ।

भवदीय

दिनांक २०–४–७६

विनोदचन्द्र सिन्हा

डा० रमेशकुमार शर्मा

एल०एल० बी०, एम० ए०, पी-एच० डी०

प्रोफेसर तथा अध्यक्ष,

हिन्दी विभाग, कश्मीर विश्वविद्यालय,

अमरसिंह बाग, श्रीनगर, कश्मीर

❀ श्री वल्लभ-वन्दना ❀

अमूर्त, निर्गुण, निरपेक्ष, सूक्ष्म, जीव के भावात्मक सुख-दुःख से उदासीन दण्डधारी न्यायाधीश के समान, मात्र हृदय हीन न्याय-कर्त्ता तथा किसी सीमा तक भयावह भगवान् के अत्याचारों से ऊब कर भावुक सन्त-ऋषि श्रीकृष्ण-वल्लभाचार्य ने नटनागर कृष्ण को एक ऐसे भगवान् के रूप में उभारा जो कि भक्त की देखभाल उसी प्रकार करता है जैसे गाय अपने बछड़े की करती है। उस व्यक्तिगत तोष देने वाले भगवान् की लीला का कोई प्रयोजन नहीं है—यदि है भी तो भक्त को उसकी चिन्ता नहीं है। उसे तो केवल इतना ही चाहिए कि उसका प्रिय (और प्रेमी) भगवान उसके दुःख में दुःखी होकर उसे सान्त्वना प्रदान करे और उसके सुख से पुलकित-प्रसन्न होकर उसके साथ रङ्गलीला करे—नाचे गाये।

चारों ओर जब अनास्था और भटकाव की चिलचिलाती धूप लोगों के तन-मन झुलसा रही थी तब श्रीवल्लभाचार्य ने मधुरा-भक्ति की त्रिविध पवन चलाकर जन-मानस को शान्ति एवं सन्तोष प्रदान किया था। कन्हैया की भक्ति का जो व्यापक रूप आज भारतवासियों के मानस पर अङ्कित है उसका कुशल चितेरा श्री वल्लभाचार्य के अतिरिक्त और कोई नहीं है।

व्रजवासी होने के नाते मेरा उनके प्रति विशेष प्रणाम अर्पित है।

रमेशकुमार शर्मा

डा० सत्यव्रत सिंह

एम० ए०, पी-एच० डी०, डी० लिट्

भवानी बिहार, मॉडल हाउसेज

लखनऊ

मैं श्री स्वामीकृष्णवल्लभाचार्य जी वैष्णव विद्वत् सार्वभौम के सम्मान में जो स्मृतिग्रन्थ आप के द्वारा प्रकाशनीय है उसके लिए अपना लघु निबन्ध (संस्कृत में) बहुत शीघ्र आपके पास प्रेषित करूँगा। श्रीस्वामी जी महाराज की सांख्यकारिका की किरणावली व्याख्या की विशेषता के संबंध में मेरा लेख होगा। आपने २० दिन का समय दिया है इसी अवधि के भीतर मेरा लेख आपको मिल जायेगा।

आपके सत्प्रयास के लिए हार्दिक धन्यवाद !

आपका

दिनांक २०-४-७६

डा० सत्यव्रत सिंह

डा० सत्यव्रत सिंह

एम० ए०, पी-एच० डी०, डी० लिट्

भवानी बिहार, मॉडल हाउसेज

लखनऊ

मैं श्री स्वामीकृष्णवल्लभाचार्य जी वैष्णव विद्वत् सार्वभौम के सम्मान में जो स्मृतिग्रन्थ आप के द्वारा प्रकाशनीय है उसके लिए अपना लघु निबन्ध (संस्कृत में) बहुत शीघ्र आपके पास प्रेषित करूँगा। श्रीस्वामी जी महाराज की सांख्यकारिका की किरणावली व्याख्या की विशेषता के संबंध में मेरा लेख होगा। आपने २० दिन का समय दिया है इसी अवधि के भीतर मेरा लेख आपको मिल जायेगा।

आपके सत्प्रयास के लिए हार्दिक धन्यवाद !

आपका

दिनांक २०-४-७६

डा० सत्यव्रत सिंह

शास्त्री हरिप्रकाश

शास्त्राचार्य, एम० ए०

SATSANG SHIKSHA PARISHAD

Shree Swaminarayan Gurukul.

'GH' Road Sector-22 GANDHINAGAR. (Gujarat)

तत्त्वद्रष्टा सन्त

२० वीं शताब्दी के वर्तमान युग में संस्कृत भाषा एवं दर्शनशास्त्र के सर्वोत्तम श्रेष्ठ प्रकाण्ड पण्डितप्रवर विद्वत् सार्वभौम पूज्य स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्य का अभिनन्दन-ग्रन्थ प्रकाशित हो रहा है, मुझे बहुत ही आनन्द का अनुभव हो रहा है। क्योंकि पूज्य स्वामीजी की अप्रकाशित ब्रह्मरसायनभाष्य की रचना को मैंने स्वयं देखा है। उसको देखकर मुझे स्वामीजी में भगवान् वेदव्यास की अनुभूति हुई है। उसमें स्वामीजी ने भगवान् श्रीस्वामीनारायण के दार्शनिक सिद्धान्त के सूत्रों की रचना करके उसके पर विशालकाय ब्रह्मरसायन भाष्य किया है। जो ब्रह्मसूत्र भाष्य से कदमें दूना है। इस प्रकार स्वामीजी ने भगवान् वेद-व्यासजी का तथा भाष्यकार, शङ्कराचार्यजी एवं रामानुजाचार्यजी इन दोनों का कार्य किया है। स्वामीजी की अनेकविध विशालकाय रचनाएँ भगवान् वेद-व्यास की प्रतिभा की प्रतीति कराती हैं। ऐसे अद्वितीय सर्वश्रेष्ठ संत महापुरुष के चरणों में मैं अपनी श्रद्धाञ्जलि समर्पित करता हूँ।

शास्त्री हरिप्रकाश

डा० अमरनाथ पाण्डेय

संस्कृत विभाग

काशी विद्यापीठ

वाराणसी-२

मान्यवर,

आपका पत्र मिला। यह जानकर प्रसन्नता हो रही है कि आप लोग श्रीकृष्णवल्लभाचार्य का अभिनन्दन कर रहे हैं। श्री आचार्य दार्शनिक हैं और सफल लेखक तथा कवि हैं। मैंने उनके सम्बन्ध में अपने विचार श्लोकबद्ध किये हैं। पाँच श्लोक उनके वैदुष्य के विविध पक्षों पर निर्मित किये गये हैं। ये श्लोक संलग्न पत्र में अङ्कित हैं। पत्र की प्राप्ति की सूचना दीजियेगा।

यदि सम्भव हो, तो अभिनन्दन-ग्रन्थ भेजियेगा।

भवदीय

दिनांक ३१-३-७६

अमरनाथ पाण्डेय

दयाकृष्ण

प्राचार्य

DEPARTMENT OF PHILOSOPHY

University of Rajasthan

JAIPUR

जहाँ तक मेरा इस विषय में लिखने का प्रश्न है, यह कहते हुए मुझे खेद है कि मैं आपको कुछ लिखकर नहीं भेज सकूंगा। आपने पत्र के साथ श्री कृष्णवल्लभाचार्यजी की पुस्तकों की जो सूची संलग्न की है उसको भेजकर आपने हमको यह अवसर प्रदान किया है कि हम उनकी लिखी हुई पुस्तकों को अपने विश्वविद्यालय के पुस्तकालय के लिए मँगवा सकें। इसके लिये हम आपके ऋणी हैं।

सधन्यवाद,

भवदीय

दिनांक २७–३–१९७६

दयाकृष्ण

डॉ० रामचन्द्र बिल्लौरे

एम० ए० (हिन्दी), एम० ए० (संस्कृत)

एलएल० बी०, पी-एच० डी०, साहित्यालङ्कार

१०२ जानकी नगर

इन्दौर

यह जानकर हर्ष हुआ कि आप स्वामि श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी अभिनन्दन-ग्रन्थ प्रकाशित करने जा रहे हैं। अंध-अश्रद्धा के अन्धकार में आज सात्त्विक श्रद्धा के दीप प्रज्वलित करने के जो भी उपक्रम हों, वे सर्वथा स्वागतार्थ हैं। आपकी यह साधना सफल हो, यही प्रभु से प्रार्थना है।

सस्नेह—

भवदीय

दिनांक २४–३–७६

डॉ० रामचन्द्र बिल्लौरे

उपेन्द्र ठाकुर

DEPARTMENT OF ANCIENT INDIAN AND ASIAN STUDIES

MAGADH UNIVERSITY

Bodh-Gaya, Bihar (India)

पण्डित कृष्णवल्लभाचार्यजी एक स्वनाम धन्य विद्वान् हैं तथा इनके सम्मान में जो अभिनन्दन-ग्रंथ प्रकाशित करने की योजना है वह सराहनीय है। स्वामीजी ने लगभग ४५ छोटे-बड़े ग्रंथ लिखे हैं जो संस्कृत, हिन्दी एवं गुजराती की अमूल्य निधि हैं। देश उनकी सेवा कभी भूल नहीं सकता। अतः इस अवसर पर मैं भी उस महान विद्वान् का अभिनन्दन करते हुए अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता हूँ।

भवदीय

दिनांक २३–३–७६

उपेन्द्र ठाकुर

डॉ० विजयेन्द्र स्नातक

आचार्य तथा अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि महापण्डित श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी की साहित्यिक सेवाओं के उपलक्ष्य में उनका सारस्वत सम्मान करने के निमित्त एक अभिनन्दन ग्रंथ तैयार किया जा रहा है। मैं इस सात्विक अनुष्ठान का हृदय से स्वागत करता हूँ।

मैं व्यक्तिगत रूप से श्री पण्डित श्री कृष्णवल्लभाचार्य से परिचित नहीं हूँ किन्तु व्यक्तिगत परिचय की पाण्डित्य और वैदुष्य के क्षेत्र में कोई आवश्यकता नहीं होती। विद्वान् का परिचय उसका कृतित्व है, उसकी विद्वत्ता ही उसकी सही पहचान है। पण्डित जी ने संस्कृत, हिन्दी और गुजराती में लगभग पचास ग्रंथ लिखकर साहित्य की जो सेवा की हैं वह इस बात की प्रमाण हैं कि इस युग में जब कि पण्डित समाज भी जीविका के ही लिए कार्य करता है पण्डित श्रीकृष्णवल्लभजी निरन्तर साहित्य को समृद्ध बनाने में संलग्न रहे। उनके द्वारा रचित ग्रंथों की विशाल तालिका को देखकर यह विस्मय होता है कि दर्शन, साहित्य, अध्यात्म, भक्ति आदि गंभीर विषयों को एक साथ व्याख्या-विवेचना का विषय बनाकर उन्होंने संस्कृत तथा हिन्दी जनता के लिए विपुल साहित्य पठनीय एवं मननीय बनाया है।

श्री पण्डित श्री कृष्णवल्लभाचार्यजी ने कुछ ऐसे विषयों का भी चयन किया है जो आज के समय में विवादास्पद है। जातिविमर्श, ख्यातिविमर्श, साकारत्व-विमर्श आदि विषयों पर पण्डितजी ने मननीय सामग्री एकत्र की है। 'अखिल भूमण्डलीय साम्प्रदायिक मुक्ति व्यवस्था' जैसे विषय की कल्पना भी अद्भुत है। संस्कृत-भाषा में कुछ ऐसे ग्रंथों का निर्माण भी पण्डित जी ने किया है जो सामान्य पाठक के लिए कठिन समझे जाते हैं। उन्हें सरल और सुबोध संस्कृत में उपन्यस्त कर ज्ञान का क्षेत्र बढ़ाया है।

मैं यह अनुभव करता हूँ कि संस्कृत भाषा और साहित्य का प्रचार-प्रसार इस देश की संस्कृति और परम्परा को जीवित रखने के लिए नितान्त आवश्यक है। यदि हम संस्कृत भाषा को जीवित रख सकते हैं तो राष्ट्रीय संस्कृति को उसके द्वारा व्यापक रूप से बिना किसी प्रतिस्पर्धा के सभी देश वासियों के लिए उपयोगी बना सकते हैं। राष्ट्रीय संस्कृति का बीज संस्कृत भाषा और साहित्य मैं निहित है। अतः संस्कृत भाषा और साहित्य निहित है। अतः संस्कृत साहित्य के मर्मज्ञ मनीषी विद्वानों का सम्मान करना हमारा सामाजिक कर्तव्य है। पण्डितवर्य श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी का अभिनन्दन कर हम इसी कर्त्तव्य का पालन कर प्रसन्नता का अनुभव कर रहे हैं।

विजयेन्द्र स्नातक

बाबूलाल शुक्ल
एम० ए०, साहित्याचार्य
प्राध्यापक
अध्यक्ष स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग
एवं संशोध मन्डौर, उज्जैन

मुझे यह जानकर अतिशय हर्ष है कि संस्कृत के उद्धार तथा ग्रन्थ रचना के अप्रतिम कीर्तिमान स्थापित करने वाले श्रीकृष्णवल्लभाचार्य (स्वामिनारायण सम्प्रदाय) विद्वान् का अभिनन्दन किया जा रहा है। इतना ही नहीं उनकी स्मृति में यहाँ कला, वाणिज्य का इण्टर मीडियेट कॉलेज भी स्थापित हो रहा है जो उनकी समाज को एक बहुमूल्य देन होगी तथा अमिट स्मृति भी। परन्तु मैं उनके संस्कृत विद्वान् होकर किये गये महत्वपूर्ण कार्यों को देखते हुए अभिनन्दन मात्र से सन्तुष्ट नहीं हूँ। मैं इनसे अपने छात्रजीवन से ही अतिशय परिचित हूँ तथा इनके द्वारा प्रणीत न्यायसिद्धान्तमुक्तावली टीका, सांख्यकारिका टीका तथा न्यायसूत्र टीका का पर्याप्त मनोयोग से अध्ययन भी किया था। इन सभी ग्रन्थों को सुलभ मूल्य में सदा प्राप्य रहना चाहिये। इनकी सम्पादित 'लक्ष्मीनारायणसंहिता' को भी मैंने देखा जो इनके महान् अध्यवसाय तथा सम्पादन पाण्डित्य का कीर्तिमान स्थापित करने में एक अंशभूत ही है। इनके पूज्य गुरुवर पण्डित वामाचरण जी भट्टाचार्य का भी इस प्रसङ्ग में स्मरण करना आवश्यक है जिनके चरणों में बैठकर श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ने न्याय तथा अन्य दर्शनों का काशी में अध्ययन किया था। यह उनका ही विचार साधना का पुष्परूप है शिष्य का विजयी होना। इनके विषय में मैं अधिक क्या कहूँ इन्हें अर्पित यह 'अभिनन्दनग्रन्थ' निश्चित ही साहित्य की एक अनुपम संगृहणीय निधि बनेगी। मैं ऐसे चतुरस्र विद्वान् के दीर्घायुष्य की कामना के साथ आपके श्रद्धापूर्वक किये गये सात्विक कार्यों का अभिनन्दन करता हूँ।

साथ ही आयोजित महोत्सव की सफलता चाहता हूँ।

भवदीय

दिनांक ३० मार्च १६७६

बाबूलाल शुक्ल

रामजी उपाध्याय

सीनियर प्रोफेसर तथा अध्यक्ष

संस्कृत विभाग

सागर विश्वविद्यालय

सागर

संस्कृत भाषा और साहित्य से अपने को अनुबद्ध रखकर स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य ने अपने जीवन को भारत में सांस्कृतिक ज्योति जगाने के लिये अर्पित कर दिया है। उनका आदर्श सबको सदा सहायता के लिये प्रेरित करता है। आचार्य जी को संस्कृत साहित्य और भारतीय संस्कृति के अभ्युदय और समर्थन के लिये असाधारण प्रतिभा और क्षमता प्राप्त ही है।

दिनांक २६–३–७६

रामजी उपाध्याय

Dr. P. N. Kawthekar
M. A., (Sans., Hindi), Ph. D., Sahityāchārya
Principal : Govt. Sanskrit College, Indore
Dean : Faculy of Arts; Education,
Chief Editor : University Research Journal
Member : Executive Council,
Chief : Employment Information & Guidance Bureau,
UNIVERSITY OF INDORE

अभिप्राय

विद्यावारिधि स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य जी अभिनन्दन ग्रन्थ के प्रकाशन कृष्णवल्लभाचार्य संस्कार भवन कुन्कावाव संस्था अभिनन्दन के योग्य है। 'स्वदेशे पूज्यते राजा, विद्वान् सर्वत्र पूज्यते।' स्वामीजी का विद्या-क्षेत्र इतना व्यापक है कि, सूर्य के लिए अगम्य गुहान्धकार का नाश भी स्वामी जी का ज्ञान-सूर्य कर रहा है। इस महोत्सव से सारे क्षेत्र में चेतना आएगी। स्वामी जी के आशीर्वाद के फलस्वरूप भारतवर्ष में संस्कृत विद्या का पुनर्जागरण हो सकेगा तथा नई पीढ़ी में भारत के अतीत गौरव के प्रति निष्ठा भी बढ़ेगी।

दिनांक २२-३-७६

डॉ० प्रभाकर नारायण कवठेकर

गोपिकामोहन भट्टाचार्य

एम० ए०, डी० फील्०, काव्य-न्यायतीर्थ

प्रोफेसर एवं अध्यक्ष

संस्कृत, पालि एवं प्राकृत विभाग,

कुरुक्षेत्र

स्वामी जी की सप्तति पूर्ति के अवसर पर मैं अपनी शुभकामनाएँ भेजता हूँ। आपने जो भारतीय दर्शन के विविध ग्रन्थों पर संस्कृत, हिन्दी तथा गुजराती में ग्रन्थ लिखें हैं उनकी सूची देखकर आपकी विद्वत्ता का भान होता है। ऐसे भारतीय दर्शनों के विद्वान् के प्रति मैं हार्दिक सम्मान प्रकट करता हूँ और ईश्वर से कामना करता हूँ कि पण्डित महानुभाव चिरकाल तक भारतीय दर्शन की समृद्धि में सहयोग प्रदान करते रहें।

आपका

गोपिकामोहन भट्टाचार्य

डा० रामनाथ वेदालङ्कार

आचार्य एवं उपकुलपति

प्रो-वाइसचांसलर

गुरुकुल काङ्गड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

डाकघर : गुरुकुल काङ्गड़ी (सहारनपुर)

श्री स्वामी जी द्वारा लिखित मौलिक पुस्तकों एवं प्राचीन पुस्तकों की टीकाओं की सूची के अवलोकन से यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने शिक्षा जगत् में उल्लेखनीय कार्य किया है। अतः उनकी स्मृति को चिरस्थायी बनाने के लिए जो आयोजन आप कर रहे हैं, मैं उसके लिए अपनी और से तथा अपनी संस्था गुरुकुल काङ्गड़ी विश्वविद्यालय की ओर से हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

भवदीय

डा० रामनाथ वेदालङ्कार

वैद्य त्रिलोकचन्द्र जैन

साहित्यशास्त्री, सिद्धान्तशास्त्री

A. M. M. S. (B. H. U.)

प्रोफेसर—स्नातकोत्तर प्रशिक्षणकेन्द्र

गुज० आयुर्वेद विश्वविद्यालय, जामनगर

प्रातः स्मरणीय स्वामी श्री कृष्णवल्लभाचार्य का अभिनन्दन ग्रन्थ आप निकालने जा रहें हैं, यह जानकर परम प्रसन्नता हुई। स्वामी जी ने आध्यात्मिक विषय पर अभूतपूर्व मौलिक विचारधारा को लेकर अनेक ग्रन्थ लिखे हैं जिनमें सृष्टि, आत्मा, परमात्मा, प्रकृति आदि विषयों पर उलझी हुई ग्रन्थियों को युक्ति और तर्क के आधार पर बहुत ही सुन्दर ढङ्ग से सुलझाया है। न्याय, वेदान्त आदि एवं धर्म विषयों पर लिखे गये उनके ग्रन्थ मननीय हैं।

इस प्रकार के विचारों के प्रसार के लिये आज से अधिक उत्तम समय कभी भी नहीं आ सकता।

सभी ओर से पीड़ित आज के मानव के लिये आपका यह प्रकाशन औषधि, अगद और अमृत का कार्य करेगा। आप इस कार्य में सफल हों, ऐसी भगवान् से प्रार्थना।

आपका

त्रिलोकचन्द्र जैन

विद्याभास्कर मणिशङ्कर वसंतराम उपाध्याय

सांख्ययोगादिसद् वैदिक सिद्धान्ती

वडोदरा

मैं आज तक समझता था कि संस्कृत विद्वान् प्रगतिशील नहीं होते। परन्तु आज श्रीमान् मनुभाईशाह महोदय के समागम से प्रतीत हुआ है कि स्वामिश्रीमान् कृष्णवल्लभाचार्य जी महाराज ने संस्कृत वाङ्मय के क्षेत्र में इतना अत्यधिक प्रयत्न किया है कि जिसके अवलम्बन से भावी भारतीय जनता असामान्य प्रगति और आत्मानुभूति को प्राप्त कर जीवन कृतार्थ कर सकेगी।

दिनांक ६-२-७६

मणिशंकर वसंतराम उपाध्याय

अध्यक्ष—श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रोत्रिय

ब्रह्मनिष्ठ श्री १०८

स्वामी ब्रह्मानन्दजी महाराज महामण्डलेश्वर

वेदान्ताचार्य

विला पारला,

बम्बई

भारतीय संस्कृति एवं दर्शन के धुरन्धर विद्वान् श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी महाराज के नाम पर कुङ्कावाव की जनता विद्यालय बना रही है, यह जानकर प्रसन्नता हुई। श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी ने संस्कृत साहित्य और दर्शन की जो सेवा की है उसके लिए विद्वत्समाज उनका सदा ऋणी रहेगा।

स्वामी ब्रह्मानन्दजी महाराज महामण्डलेश्वर

म० म० पाण्डुरङ्गशास्त्री गोस्वामी

डेक्कन कॉलेज, पुणे—६

अनन्त श्री विभूषित परमपूज्य आचार्य श्रीकृष्णवल्लभशास्त्रीजी महाराज को मैं जब उनकी पढ़ाई वाराणसी श्री क्षेत्र में होती रही तब से मैं अच्छी तरह से जानता हूँ। स्वर्गीय पण्डित श्री वामाचरण भट्टाचार्य जी महाराज के पास श्री स्वामि जी के साथ में अध्ययन करने का अवसर कई साल मुझे मिला था। इसलिये मैं श्रीस्वामिजी महाराज को अच्छी तरह से जानता हूँ। आपकी विद्वता, बुद्धिमत्ता और बहुश्रुतता आदि गुण बड़े अलौकिक हैं। आपने सभी दर्शनों में अच्छी तरह से अवगाहन करके कई अच्छे-अच्छे दार्शनिक ग्रन्थ लिखे हुये हैं। वे विद्वन मान्य भी हो गये हैं। हमारे गुरुबन्धु श्रीकृष्णवल्लभस्वामी जी महाराज श्री स्वामिनारायण संम्प्रदाय की छाया में बैठकर विद्या प्रसार का शुभ कार्य कर रहें हैं। इस कार्य के लिए उन्हें अनन्त बार धन्यवाद देता हूँ।

म० म० पाण्डुरङ्गशास्त्री गोस्वामी

सीताराम चतुर्वेदी

उत्तर बेनियाबाग, काशी

॥ न दैन्यं न पलायनम् ॥

यह जानकर प्रसन्नता हो रही है कि संस्कृत वाङ्मय के धुरन्धर प्रखर विद्वान् और मनीषी पण्डितप्रवर स्वामी कृष्णवल्लभाचार्यजी, षड्दर्शनाचार्य, सांख्यतीर्थ, वेदान्ततीर्थ, न्याय-वैशेषिकशास्त्री, वैष्णवविद्वत्सार्वभौम के सम्मान में उन्हीं के नाम पर और उन्हीं की जन्मभूमि कुन्कावाव में आर्टस एवं कौमर्स इन्टर कौलेज की स्थपना की जा रही है और उनकी विद्वत्ता के प्रति सार्वजनिक श्रद्धा अभिव्यक्त करने के लिये अभिनन्दन-ग्रन्थ भी प्रकाशित किया जा रहा है।

ऐसे उद्भट विद्वान् और गीर्वाण वाणी के ज्वलन्त स्तम्भ की सार्वजनिक आशंसा के द्वारा उनकी प्रतिभा के प्रति हार्दिक सम्मान प्रदर्शित करने के अतिरिक्त उनके द्वारा की गई भारतीय संस्कृति और संस्कृत के प्रचार, प्रसार और समुन्नयन की प्रवृत्ति के प्रति कृतज्ञता भी व्यक्त की जा रही है क्योंकि उन्होंने जिन असंख्य शिष्यों को अपनी ज्ञान-कादम्बिनीका पीयूष पिलाया है वे समाज को सुसंस्कृत करते हुए अपने चारित्र्य और वैदुष्य से लोकसेवा भी कर रहे हैं।

आचार्य श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी का पाण्डित्य सर्वतोमुखी था। अनेक दर्शनों का मन्थन और मनन करके जो ज्ञान-गौरव उन्होंने उपलब्ध किया था उससे केवल किसी एक प्रदेश का नहीं, किसी एक साहित्यका नहीं वरन् समस्त भारत के समस्त साहित्य का गौरव बढ़ा है। ऐसे तपोनिष्ठ मनीषी का में हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ।

सीताराम चतुर्वेदी

डॉ० राममूर्ति त्रिपाठी

विश्वविद्यालय आवास, कोठीरोड,

उज्जैन, (म० प्र०)

प्रातर्वन्द्य स्वामिवर्य श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज भगवन्निष्ठ साधक तथा सरस्वती के अप्रतिम आराधक हैं। पचास के लगभग आपकी वैदुष्यसंवलित कृतियाँ ही आपकी स्तुत्य प्रतिक क्षमता की निदर्शिका हैं। ऐसे ज्ञान, कर्म और भक्ति की जङ्गम त्रिवेणी के संस्पर्श मात्र से पार्श्ववर्ती समस्त वायुमण्डल निर्धूत कल्मष हो जाता है। अभिनन्दन के इस पुनीत महायज्ञ में मेरी ये कतिपय वाक् समिधाएं स्वीकार्य हों।

दिनांक २७–२–७६

राममूर्ति त्रिपाठी

डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी

ए ३३ रवीन्द्रपुरी,

वाराणसी

यह जानकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई कि विद्वर पं० श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी के अभिनन्दन का आयोजन हो रहा है। पण्डित जी ने अब तक चौवालीस ग्रन्थों की रचना की है। आप न्याय, वेदान्त, सांख्य, योग आदि विविध दर्शनों के मर्मज्ञ आचार्य भी और संस्कृत, हिन्दी तथा गुजराती के बहुत अच्छे लेखक भी हैं। भक्तिशास्त्र के भी वे निष्णात विद्वान् हैं। मैंने पण्डित जी की दो-एक रचनाएँ ही पढ़ी है। उतने से ही उनकी सरस शैली और तर्कसंगत उपस्थापन-पद्धति का प्रशंसक हो गया हूँ। ऐसे महान् आचार्य के अभिनन्दन के अवसर पर मैं अपनी हार्दिक प्रणति निवेदन करता हूँ।

दिनांक १२-७-७६

हजारी प्रसाद द्विवेदी

डॉ० सू० ना० व्यास

डी० लिट्

भारती भवन

उज्जैन (मालवा)

श्रीयुत् पं० कृष्णवल्लभाचार्य का अभिनन्दन किया जा रहा है यह जानकर प्रसन्नता हुई। पण्डित जी सरस्वती के सरल साधक और विविध विषयोंके मर्मज्ञ मनीषी है, उनका हार्दिक अभिनन्दन होना ही चाहिए, इस अवसर पर मेरी ओर से भी स्नेहमय अभिनन्दन।

दिनांक २७–६–७६

डॉ० सू० ना० व्यास

डॉ० शिवमङ्गल सिंह 'सुमन'

एम० ए०, डी० लिट्०

कुलपति

विक्रम विश्वविद्यालय

उज्जैन

यह बड़े हर्ष का विषय है कि पण्डितवर्य स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य पञ्चानन, षट्दर्शनाचार्य, सांख्यतीर्थ, वेदान्ततीर्थ, काव्यकुशल, न्याय वैशेषिक शास्त्री, वैष्णव विद्वत्सर्वभौम का अभिनन्दन समारोह कुन्कावाव, जिला अमरेली, गुजरात में सम्पन्न होने जा रहा है। ऐसे निष्ठावानविश्रुत और समर्पित विद्वान् का अभिनन्दन प्रकारान्तर से भारतीय वाङ्मय का अभिनन्दन है। अतएव इस पुण्य पर्व पर मैं इस समारोह की सफलता के लिए अपनी हार्दिक मङ्गलकामना प्रेषित करता हूँ और परमपिता से प्रार्थना करता हूँ कि वह आचार्यजी को शतायु करे जिससे हमारा राष्ट्र उनके मेधावी व्यक्तित्व से गौरवान्वित हो सके।

दिनांक २७ फरवरी १९७६ **डॉ० शिवमङ्गलसिंह 'सुमन'**

Dr. S. B. Varnekar

M. A., D. Litt.,

Professor & Head of the Department

UNIVERSITY CAMPUS

AMRAVATI ROAD

NAGPUR-10

भारतीय गौरव व मनीषि स्वामिकृष्णवल्लभाचार्य जी संस्कृत जगत् के तेजस्वी सूर्य हैं। आपने संस्कृत की जो सेवा की है वह चिरस्मरणीय रहेगी।

भवदीय

श्री० भा० वर्णेकर

डा० कृष्णकान्त चतुर्वेदी

संस्कृत-पालि, प्राकृत विभाग

आचार्यप्रवर श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी सम्पूर्ण भारत में सुख्यात विद्वान् सत्पुरुष हैं। इनकी विद्वतापूर्ण लेखनी से लगभग पैंतालीस ग्रन्थों की रचना हुई है। उसमें दार्शनिक साहित्य का अंश विपुल मात्रा है। दर्शन के गूढ सत्यों में असाधारण अभिनिवेश, सूक्ष्म अन्वेषण दृष्टि जैसी श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी की हो हैं वैसी अन्य कहीं देखने में नहीं मिलती है। सांख्य, न्याय, न्याय वैशेषिक वेदान्त आदि विविध सम्प्रदायों का विशद एवं तर्क-सम्मत विवेचन आपकी कृत्तियों में प्राप्य हैं। हितोपदेश जैसे शिक्षाप्रद ग्रन्थों का संस्कृत टीका भी आपने की है। आज के संस्कृत प्रचार दुर्बल वातावरण में ऐसा संस्कृत एवं शास्त्र का ज्ञान दुर्लभ हैं।

प्रभु से प्रार्थना है कि ऐसे मनीषि की छत्रछाया सुदीर्धकाल तक बनी रहे जिससे वे संस्कृतज्ञों तथा अन्य जनों का मार्ग दर्शन कर सकें।

दिनांक २४-३-७६

कृष्णकान्त चतुर्वेदी

डा० भोलानाथ तिवारी

दिल्ली

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आप स्वामीकृष्णवल्लभाचार्य का अभिनन्दन ग्रन्थ का प्रकाशन कर रहे हैं। यह बड़ा ही शुभ कार्य है। उस महान् विभूति के प्रति मैं केवल श्रद्धा-शुमन समर्पित करने की ही स्थिति में हूँ। अस्वस्थ होने के कारण कोई लेख नहीं भेज पा रहा हूँ।

भवदीय

भोलानाथ तिवारी

सत्यकाम विद्यालङ्कार

चन्द्रेश्वर भवन, २/१७८ स्योन रोड (वेस्ट), बोम्बे

मैं श्री स्वामि कृष्णवल्लभाचार्य की प्रतिभा से परिचित हूँ। उनकी ग्रन्थ सूची पढ़ कर आश्चर्य हुआ कि हमारे बीच ऐसा प्रकाण्ड विद्वान् आज के युग में भी विराजित है। ऐसे दिव्य मनीषियों को ही वेद ने ऋभवः, विभ्वाः, प्रचेतसः, जन्मना विद्वान्सः, सौधन्वनाः मेधसाताः आदि विशेषणों से अलंकृत किया है। उनके लिये मेरा श्रद्धावनतनमः स्वीकार करें।

सत्यकाम विद्यालङ्कार

हुकम चन्द पटयाल

एम० ए०, पी० एच० डी०

डेक्कन कॉलेज,

पूना- ६

(महाराष्ट्र)

वेद, वेदाङ्ग, वेदान्त, न्याय, मीमांसा, सांख्य, योग, धर्म, दर्शन, काव्य तथा अन्य बहुविध शास्त्रों के परम निष्णात श्रीकृष्णल्लभाचार्य जी का अभिनन्दन करके संयोजकों ने शास्त्रों का यथोचित आदर किया है। मैं उनकी दीर्घायु के लिए कामना करता हूँ 'शतं जीव शरदो वर्धमानः' (ऋग्वेद १०.१६१.४)। संस्कृत, संस्कृति के उपासक को मेरा सादर प्रणाम।

भावत्कः,

हुकम चन्द पटयाल

कर्ण सिंह

एम० ए० (संस्कृत, हिन्दी) पी०-एच० डी०

संस्कृत विभाग, मेरठ कालिज, मेरठ

चन्द्रिका,

शिवाजी मार्ग, मेरठ

आपके पत्र के माध्यम से परम विद्वान् पण्डितवर्य स्वामी श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी के कृतित्व एवं व्यक्तित्व का परिचय पाकर मेरा मस्तक श्रद्धा से पुनः पुनः झुक गया।

ऐसे महान् संस्कृत-सन्त के सम्मान में 'अभिनन्दन-ग्रन्थ' का प्रकाशन निश्चय ही एक पुनीत कार्य है। अत एव स्तुत्य है। स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी की प्रतिभा से प्रस्फुटित विशाल साहित्य-राशि के कारण, हम उन्हें सहज ही आधुनिक व्यास कह सकते हैं।

मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ स्वीकार करें।

भवदीय

कर्ण सिंह

डॉ० वि० श्री वाकणकर

एवं

डॉ० सुरेन्द्र कुमार आर्य

विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन

(म० प्र०)

स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य अभिनन्दन ग्रन्थ पर हमारी शुभकामनाएँ स्वीकार कीजिए। ऐसे अभिनन्दन ग्रन्थ से व्यक्ति की महत्ता का आदर होता है और उनके अनुकरणीय आदर्श से जन सामान्य प्रेरणा लेता है। स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य जी के मार्ग पर हम चलें यह प्रेरणा मिलती है। वर्त्तमान अर्थ संकुल मानव के लिए अध्यात्म का दिशा संकेत देकर स्वामी जी ने अनुगृहीत किया है। हम दोनों ही अपने अन्तरतम प्रदेश से आपके अभिनन्दन-ग्रन्थ के लिए शुभकामना प्रेषित करते हैं और विश्वास करते हैं कि यह भारतीय अभिनन्दन ग्रन्थों की परम्परा में युग निर्माणकारी ग्रन्थ मान्य होगा। शोध, संस्कृति, धर्म, इतिहास की इस ग्रन्थ में समन्वित सामग्री युगों तक शोधकर्ताओं के लिए ज्योतिपुञ्ज होगी।

डॉ० वि० श्रीवाकणकर

एवं

डॉ० सुरेन्द्र कुमार आर्य

डॉ० व्रजमोहन चतुर्वेदी

एम० ए०, पी-एच० डी०, साहित्याचार्य

रीडर, संस्कृत-विभाग

दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-७

आई० ए० २२ बी,

अशोक-विहार-१, दिल्ली ५२

"परमपूज्य स्वामी जी महाराज का वैदुष्यमय व्यक्तित्व संस्कृत ही नहीं सभी प्रकार के विद्या प्रेमियों के लिये प्रेरणा दायक है। भारतीय दर्शन की सभी विद्याओं में उनकी विविध कृतियाँ इसके ज्वलन्त निदर्शन हैं कि स्वामी जी महाराज का पाण्डित्य सार्वदार्शनिक एवं अखण्ड है। हम ऐसे विद्वान् तपस्वीकी विद्याविलास से युक्त तपोमय शताधिक आयु की कामना करते हैं।

व्रजमोहन चतुर्वेदी

डॉ० नरेन्द्रनाथ शर्मा

एम० ए०, साहित्यरत्न, पी-एच० डी०

अध्यक्ष—संस्कृत विभाग

शासकीय महाविद्यालय

सिवनी (मध्यप्रदेश)

संस्कृत साहित्य एवं संस्कृति की गम्भीरता विश्वव्याप्त है। प्राचीनकाल से ही ऋषि-महर्षि-विद्वानों ने इसकी गम्भीरता का समय-समय पर मूल्याङ्कन किया है। सम्प्रति, न केवल भारत के ही, किन्तु विश्ववन्द्य स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी ने अपनी बहुमुखी, बहुविषयी प्रतिभा से संस्कृत ग्रन्थों की विषयिता को अपने मौलिक ग्रन्थों के माध्यम से प्रकट किया है। संस्कृत, हिन्दी एवं गुजराती की सङ्गम भूमि रूप इनके ग्रन्थ प्रत्येक विपश्चित् के लिये पुण्य स्थल हैं। विविध विषयों पर ४४ ग्रन्थों की रचना स्वामी जी के अथाह संस्कृत-प्रेम को प्रकट करती है। 'तर्कसंग्रहदीपिकायाः किरणावली', 'न्यायबोधिनी०', 'सांख्यतत्त्वकौमुद्याः किरणावली' में जहाँ एक ओर दर्शन के अखण्डित रहस्यात्मक तत्त्वों को स्पर्शित किया है, वहीं दूसरी ओर 'कविकाव्यगौरवम्' में स्वामी जी ने काव्य के क्षेत्र में, भारतीय काव्यशास्त्र को एक नयी दिशा दी है।

ऐसे अनन्वयित असीम विद्वान् के अभिनन्दन ग्रन्थ का हम स्वागत करते हैं—यह हमारा कर्तव्य ही है। साथ ही उस असीम शक्ति से प्रार्थना करते हैं कि संस्कृत की तप, त्याग तथा प्रेरणामयी यह दीपशिखा अनन्तकाल तक जिज्ञासुओं को प्रकाशित करती रहे। इस सन्त को अशेष प्रणाम···अशेष प्रणाम···अशेष प्रणाम···।"

नरेन्द्रनाथ शर्मा

डॉ० भगीरथ मिश्र

प्रोफेसर एवं अध्यक्ष

हिन्दी विभाग

सागर विश्वविद्यालय

सन्देश

यह सूचना प्राप्त कर परम प्रसन्नता हुई कि 'स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य अभिनन्दन ग्रन्थ' का प्रकाशन हो रहा है।

महापुरुषों और विद्वानों का अभिनन्दन और सम्मान करना भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषता रही है। उनके द्वारा प्रदत्त ज्ञान और अनुभव की ज्योति से हम अपने मन का अन्धकार दूर करते हैं। उनका अभिनन्दन प्रकाश का आवाहन है। स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य की विद्वत्ता के प्रति हम अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं। इस पुण्य कार्य-हेतु मेरी शुभ कामनायें हैं।

दिनांक २५-७-७६

भगीरथ मिश्र

R. R. VERMA

Head, Department of Philosophy

Lucknow University

I am happy to note that you, with the help of many learned scholars, are bringing out a volume in this connection. However, I regret to say that I will not be able to contribute anything to this volume. Still good wishes to this great saint.

Once again thanking you for sending me the literature.

With regards,

Yours sincerely,

Dated 19-7-76

R. R. VERMA

Dr. KALICHARAN DAS

M. A., D. Phil.

Prof. & Head of the Dept. of Philosophy (Retd)

GAUHATI UNIVERSITY.

I personally have profound respect for Swami Krishnavallabhacarya, an outstanding international Sanskrit scholar who has made immense contributions particularly in the fields of Indian philosophy, culture and Sanskrit literatures. He is regarded as a teacher in real sense of the term. He has till now produced forty four books which are eloquent of his uncommon erudition and mastery over the rich heritage of Indian wisdom and culture. Swamiji's academic attainments, keen spiritual insight and extraordinary intellectual calibre rendered him amply suited to produce a number of books of everlasting value.

I have profound admiration for Swamiji's depth of knowledge specially in respect of six systems of Indian Philosophy as embodied in his interpretations of Nyāya, Navya-Nyāya, Sāṁkhya-yoga, Vedānta, Viśiṣṭadvaita etc. in his works of different designations.

I thank you once again for giving me the privilege to associate and co-operate with you all in paying tributes and offering felicitations to such an outstanding scholar and a noble personality as Swamiji.

Thanklng you all very cordially.

Yours Sincerely,

Dated 11-7-76

KALICHARAN DAS

Dr. SITANATH GOSWAMI

M. A. (Gold Medallist), D. Phil.,

Veda-Vedanta-Vyakaranatirtha,

Professor & Head of the Department

of Sanskrit, Jadavpur University

CALCUTTA–13

Only a profound scholar can write books on varied subjects, especially the various systems of Indian Philosophy. I have not been fortunate enough to peruse the books. If possible you may kindly send a copy of each of the three books— ख्यातिविमर्शः, प्रमात्वविमर्शः and चित्सुखी-टिप्पनी. Our University also purchases the books which should be sent on inspection to the Department. Books satisfying the requisite conditions may be purchased in multiple copies also.

Thanking you,

Yours sincerely

Dated 17–7–76

SITANATH GOSWAMI

Dr. K. KUNJUNNI RAJA

M. A., Ph-D. (Madras), Ph-D. (London)

Professor & Head of the Department of Sanskrit

University of Madras

MADRAS

Sri Krishna Vallabhacharya of Junagadh is a well-known saint and an eminent Sanskrit scholar with several works to his credit. I am happy to hear that an Arts and Commerce College will soon be started in his honour in Kunkavav, the birth place of the Swamiji; and that on the occasion of the opening of the College a volume will be published containing tributes to that great scholar-saint. I am happy to associate myself with this worthy venture and to pay my respect to that great saint scholar Sri Krishna Vallabhacharya who has been shedding the lustre of his wisdom throughout India.

Dated 30–12–75

KUNJUNNI RAJA

J. P. THAKER
Deputy Director
Oriental Institute
Lokmanya Tilak Road
BARODA

I am pleased to learn that a felicitation volume in honour of His Holiness Krishnavallabha Acaryaji is being published. The list of the forty-four works of this religious teacher vouchsafes for the varied knowledge and interest of the Ācārya as also his enthusiasm for promoting and promulgating the great teachings of our great religious teachers.

May God bless him with a very long and healthy and spirited life for serving humanity especially at this very critical time.

Dated 9-2-76

J. P. THAKER

J. P. THAKER

Deputy Director

Oriental Institute

Lokmanya Tilak Road

BARODA

I am pleased to learn that a felicitation volume in honour of His Holiness Krishnavallabha Acaryaji is being published. The list of the forty-four works of this religious teacher vouchsafes for the varied knowledge and interest of the Ācārya as also his enthusiasm for promoting and promulgating the great teachings of our great religious teachers.

May God bless him with a very long and healthy and spirited life for serving humanity especially at this very critical time.

Dated 9-2-76

J. P. THAKER

A. G. JAVADEKAR

Dean, Faculty of Arts

The Maharaja Sayajirao University of Baroda

BARODA—2

I am pleased to note that an Abhinandan Grantha will be shortly published in honour of Panditvarya Srikrishna Vallabhacharya. From the list of his published works in Sanskrit and Hindi and Gujarati languages one is indeed very delighted to see the profuse literature that has gone to enrich our long traditions. I wish the proposed scheme of the felicitations volume a grand success.

Dated 9-2-76 **A. G. JAVADEKAR**

G. MARULASIDDAIAH

Director

Oriental Research Institute

University of Mysore

MYSORE

I am extremely happy to see the list of works of Sri Krishna Vallabhacharyaji of Junagadh. His contribution to Sanskrit literature and philosophy is manifold and he richly deserves our respects.

Yours faithfully,

Dated 28–1–76

G. MARULASIDDAIAH

SWAMI CHIDANANDA PURI

Sri Ramkrishna Santi Kunja

Po. & Vill.–Tajpur gram Via–Katulpur

Dist.–Bankura

W. BENGAL

I am rather bound to live in this village and very poorly. I am so poor that I can not pay the subscription fees-even to the Sanskrit daily–"Sudharma" that is only one daily in our whole India and am so sorry. This village exists between two pilgrimage villages one is "Kamarpukur" which is the birth place of Sri Ramakrishna Paramahansa and another is "Jayram bati" that is the birth place of "Mother Saradamoni" our holy mother of R. K. Mission and also every body. Some of the villagers are even relatively connected with those holy families.

I am very much thankful for your this sort of works and pray for your long life and prosperity.

I request for one thing more Sir—if you pardon me—i. e. if you write me again, please write me in (U. O. L.) i. e. with English Alphabet; because I can't read the handwriting which is written in the Deb-nagari i. e. Sanskrita.

I am thanking you.

Yours

Dated 3–2–75 **SWAMI CHIDANANDA PURY**

॥ सा विद्या या विमुक्तये ॥

G. M. KALE, M. A.

SANSKRIT PRACHARINI SABHA

Comunidade Building, Margao-Goa

GOA

After going through the work and mission of Pt. Shri Krishna Vallabhacharya I am convinced that "The Saints are born and not made."

Dated 27–12–75

G. M. KALE

Prof. **ASOKE CHATTERJEE SHASTRI**

M. A., D. Phil., D. Ger., Ph. D., D. Lit.

Department of Sanskrit

University Colleges of Arts & Commerce

Asutosh Building

CALCUTTA

Sri Krishnavallabhācārya is a very well known scholar and saint in India. He has contributed as many as forty four volumes in different languages covering almost all the branches of Indian philosophy. It is a pleasure to know that a college in his name is going to be established at Kunkavav in Gujrat. His Holiness will remain ever alive in the hearts of his innumerable devotees. I deem it a single fortune to associate my name with the institution.

Dated 1-1-76 **ASOKE CHATTERJEE SHASTRI**

H. D. SANKALIA

M. A., LL. B., Ph. D. (London)

Emeritus Professor

Deccan College

Postgraduate and Research Institute

POONA

Svami Krishnavallabhacharyaji's works, the list which is appended by you is indeed impressive. There is no doubt that Svamiji by his example has done everlasting service to Sanskrit.

With my respect to Svamiji,

Dated 29–9–76 **H. D. SANKALIA**

Dr. M. A. MEHENDALE

M. A., Ph. D.

Professor of Sanskrit

Deccan College

POONA

I was very happy to receive your letter and to know that you have undertaken to publish a Felicitation Volume in honour of Svami Shree Krishnavallabhacharya. Svamiji by his numerous writings has no doubt rendered a valuable service to Sanskrit literature in general and to the work of exposition of the philosophical systems in particular. It is therefore quite natural that you should have thought of expressing your appreciation of Svamiji's great work by presenting him with a Felicitation Volume.

I wish you all success.

Yours faithfully

Dated 26-6-76

M. A. MEHENDALE

M. D. BALASUBRAHMANYAM
Kendriya Sanskrit Vidyapeetha
TIRUPATI

A kind reference may be made to your letter asking me to send my opinion on the proposed "Abhinandana Grantha" in honour of Sri Krishna Vallabha Acharya. Accordingly, I am writing a few lines as under.

Sanskritists in India and abroad will feel proud of Svami Sri Krishna Vallabha Acharya, whose contribution to Nyaya, Sankhya, Yoga, Mimamsa and Vedanta is of a high order. His 44 works clearly demonstrate the fact that the learned Svamiji is one of the greatest interpreters of Sanskrit Literature and Culture. The *Śvetāyana Samhitā* (or *Lakshminarayana Samhita*) containing 1,26,000 verses is his *magnum opus*. The Svamiji's life is a dedication to the cause of Sanskrit Muse. He shines like a gem-like-flame in the literary firmament. I wish the felicitation volume all success which it richly deserves.

Yours sincerely

Dated 12–5–76 **M. D. BALASUBRAHMANYAM**

A. M. SHASTRI

Department of Ancient Indian History, Culture & Archaeology

NAGPUR UNIVERSITY

NAGPUR

It is a matter of gratification that a volume to felicitate honourable Swami Krishna Vallabhacharyaji is being published. The social, religious and literary activities of the magnitude of Swamiji's are a matter of pride for any one. I wish all success to this noble venture and wish long life and good health to Swamiji so that he may continue to serve the society for many years to come and pay him my homage.

A. M. SHASTRI

Dr. G. K. PAI

Director

Sukrtindra Oriental research Institute

Alathukutty Road

COCHIN

I am glad to know that an Arts and Commerce College is being started in Kunkavav during this month, to be named after Swami Krishna Vallabhacharyaji. I am also happy to learn that a "commemoration volume" is also to be released shortly in honour of Swami Krishnavallabhacharyaji. I send you my very best wishes for the success of the function and of the new venture.

Yours faithfully

G. K. PAI

S. N. GHOSAL

University Colleges of Arts & Commerce

Asutosh Building

CALCUTTA

I hereby communicate to you my deep regards for Pandit Swami Krishnavallabha Acharya, who is a great scholar of rare merits and eminence. His knowledge extends over multifarious aspects of Indian philosophy—its different branches like Sāṅkhya, Vedānta Nyāya and Mīmānsā philosophies. It is very interesting to note that he has very finely given exposition to the abstruse doctrines of these religious systems and made them interesting to the readers. It is due to his untiring efforts that these thoughts have been clear to the readers who are all appreciators of his uncommon genius and talents. As a poet he has made his mark in his life. It is he who has proved by his uncommon enthusiasm and energy that Sanskrit can still be the language of communication among the people of this land. In fact before the coming of English to this country Sanskrit was the language of communication among the people of the different provinces. Swami Vallabha Acharya has thrown a flood of light on these immense possibilities of the Sanskrit language. The world of scholars appreciates the deep scholarship of Pandit Acharyajee and remains grateful to him for his contribution, that is, beyond calculation.

S. N. GHOSAL

Dr. U. N. DHAL

Department of Sanskrit

Utkal University

Bhubaneswar

VANI VIHAR

Dear Sri Shah,

I came to learn from my Professor Dr. A. C. Swain that you are going to publish the "*Swami Kṛṣṇaballabhā-cārya Abhinandana Grantha*" and you need research articles to incorporate in it. As directed by my Professor I am going to send my article on "Churning of the Ocean and Goddess Lakṣmī" very soon.

With best regards to Swamiji,

Yours sincerly

U. N. DHAL

Dated 9-7-76

M. A. DHAKY

Research Officer

AMERICAN INSTITUTE OF INDIAN STUDIES

(Incorporated in Delaware 1961)

Chief Court House

RAMANAGAR, VARANASI, U. P.

Thank you for the invitation to contribute to Swamiji Krishnavallabhacharya felicitation volume. The volume is a very laudable thought and a fitting tribute contemplated to a great saint. Unfortunately, my acquaintance with Swamiji and his works is practically negligible and I hardly seem to be the right person for writing anything of value on Swamiji's life and work. You will therefore forgive me for my inability to send the note you intend me to write for the volume, I greatly appreciate though your very kind invitation. I wish you, other editors and contributors a great success.

With greetings and regards,

Yours sincerely

M. A. DHAKY

Dated 24–6–76

K. V. SARMA

ACTING DIRECTOR

Vishveshvaranand Vishva Bandhu Institute

of Sanskrit & Indological Studies.

PUNJAB UNIVERSITY

PUNJAB

Thanks for your invitation to contribute a paper for inclusion in the Svami Krishna Vallabhacharya Abhinandana Grantha and thus extending to me the privilege of paying my homage to the revered Svamiji. I am sending herewith a short paper entitled "Gita as a Guide to conduct in everyday Life" for inclusion in the Abhinandana Grantha. Please acknowledge receipt of the same.

When the said article is being printed, please arrange to take 25 reprints for my use. The reprints might be sent here along with the volume.

Let me also take this occasion to wish all success to your laudable efforts.

With best regards,

Dated 22-5-76

Yours sincerely,

K. V. SARMA

Dr. RAM GOPAL

M. A., Ph. D.

Kālidāsa Professor of Sanskrit and

Head of Sanskrit Department

Punjab University

PUNJAB

It gives me great pleasure to learn from your circular letter that a Felicitation Volume will be shortly brought out to honour the saint scholar Swami Shri Krishna Vallabhacharyaji. It is a befitting recognition of the great services rendered by revered Swamiji to the noble cause of Indian Philosophy and Vaiṣṇava theology. I wish you all success in your holy mission and offer my reverential regards to respected Swamiji on this happy occasion.

Dated 27-5-76

Your faithfully

RAM GOPAL

Dr. KRUSHNA PRASAD MISHRA

Department of Philosophy, Utkal University, Bhubaneswar

ORISSA

I do not know anything of Swami Krushna-Ballava Acharya nor I have read any work written by him. I like the idea of bringing out an Abhinandan Granth on him. That would reveal his greatness to all of us. Would you like to include articles on culture, religion and philosophy in that Abhinandan Granth ? Then I can send an article to you. But on Swamiji, I do not know anything.

Please don't mind for this delay in replying to your letter. I was awfully busy.

Dated 30-5-76

Yours

KRUSHNA PRASAD MISHRA

Dr. V. I. SUBRAMONIAM

M. A., Ph. D.

(IND. U. S. A.)

Prof. and Head of the Department of Linguistics

University of Keral

Kariavattom, Trivandrum

KERALA

Swamy Krishna Vallabhacharya, the well known savant and literator of Gujarat will be ever remembered for his literature and love for language. It is a fitting tribute to that great soul to bring out commemoration volume soon by learned scholars.

Dated 17-5-76

Yours sincerely

V. I. SUBRAMONIAM

Prof. Dr. BISWANATH BANERJEE

Head of the Department of

Sanskrit, Pali & Prakrit

Visva-Bharati, Santiniketan

WEST BENGAL, INDIA

Śṛmat Kṛṣṇavallabhāchārya needs no introduction to scholars of Sanskrit learning and Indian Philosophy. His illuminating commentaries and expositions on the fundamental texts of the different branches of Indian Philosophy and their intricate problems speak of his erudition and wisdom. He seems to be an institution by himself. We are fortunate enough to have him still among us and draw inspiration from his untiring zeal and academic pursuit.

It gives me immense pleasure to learn that an institution has been established through his benevolence and a souvenir will be published in his honour.

Dated 3-1-76 **BISWANATH BANERJEE**

B. SUBBARAYAN

Telugu Bhasha Samiti

71, University Buildings

MADRAS

I am very happy to know from Prof. M. B. Shah that a volume on Srikrishna Vallabhacharya, the great Sanskrit literature of Gujarat, has been planned to be brought out soon as a tribute to his philosophical contributions to Indian thought.

Dated 30-12-75 **B. SUBBARAYAN**

Dr KALI KUMAR DUTTA

M. A., Sastri, D. Phil., Kavyasankhyatirtha

Prof. of Sanskrit Language & Literature

Department of Post-Graduate Training Research

Sanskrit College, Calcutta

CALCUTTA

I am paying hereby my tributes to the great scholar and Saint Srikrishnavallabhacharya of Junagad on the occasion of the publication of a volume in his honour. The saint is well-known in the scholarly world for his erudition and his writings on different branches of Indian philosophy is illuminating. I hope that his honourable place among the saints of India will ever be a source of inspiration to all thoughtful men and women of this ancient country of ours.

Dated 2-1-76 **KALI KUMAR DUTTA**

K. T. PANDURANGI, M. A.

Vedanta Vidwan, Meemansa Siromani

Head of the Post-Graduate Dept. of

Sanskrit, Prakrit and Pali

Bangalore University Campus

Jnana Bharati

BANGALORE

I was glad to know that a learned volume in honour of Panditavarya Sri Kṛṣṇa Vallabhācārya, is being published. Sri Kṛṣṇa Vallabhācārya is one of the great scholars of our times. He has written original Sanskrit commentaries on the texts of Nyāya, Vedānta, Mīmāmsā, Yoga, Sānkhya and Sāhitya. He is not merely an academician but a saint of a high order. He has been giving spiritual guidance to a large number of devotees. I am really happy to associate myself with the sentiments behind the publication of such a learned volume and pay my respects to the great scholar-saint.

It is really heartening to know about Sri Kṛṣṇa Vallabhācārya of Junagadh muth. I pay my humble respect to Swamiji through this.

Dated 29–12–75

K. T. PANDURANGI

R. K. TRIPATHI

M. A., D. Litt.

Department of Philosophy

Banaras Hindu University

VARANASI

I am very happy to know that a volume of philosophical articles is being published in honour of the great saint and scholar Shri Krishnavallabhacharya. As the whole country knows, he is one of the very few scholars of Indian philosophy who has published a mumber of books on problems of Indian philosophy. I wish all success in all that is done to honour this great son of India.

Dated 6-1-76

R K TRIPATHI

LALLANJI GOPAL

Department of Ancient Indian History, Culture & Archaeology

Faculty of Arts, Banaras Hindu University

VARANASI

I am glad to know that you are going to honour Shri Krishnavallabhacharyaji by opening an academic institution in his name at his birth place and publishing a felicitation volume on the occasion. Shri Krishnavallabhacharyaji has studied with the teachers of this university in his student life. He is one of those rare persons who combine in their personality a scholar and a saint. He has published many scholarly and useful books and is still busy in writing. I feel very happy in associating myself with you all in paying tributes to the learned Swamiji.

Dated 8-1-76

Yours sincerely

LALLANJI GOPAL

BISWANARAYAN SHASTRI

Member of Parliament

(LOK SABHA)

Please refer to your letter regarding a message for the proposed felicitation volume in honour of Panditavarya Shri Kṛṣṇavallabhāchārya and find herewith a few lines in Sanskrit. You have not indicated in which language the volume will be published and in absence of this I have preferred Sanskrit. If it is in Hindi, kindly get it translated into Hindi.

I read and speak Hindi but do not write and hence the writing is likely to appear clumsy.

With best wishes.

Dated 15-2-76

Yours sincerely

BISWANARAYAN SHASTRI

Dr. S. G. KANTAWALA

M. A., Ph. D.

Reader in Sanskrit

Maharaja Sayajirao University of Baroda

BARODA

It is heartening to learn from the letter of Prin. M. B. Shah, K. V. Higher Secondary, Kunkavav (Dist. Amareli, Gujarat State) that the Krishnavallabhacharya Sanskar Bhavan has launched upon an idea of felicitating Swamishri Krishnavallabhacharyaji at his native place Kunkavav on the occasion of the opening of Krishnavallabhacharyaji Arts & Commerce Intermediate College in June, 1976. Swamishri Krishnavallabhacharyaji is not only a well known scholar of Sanskrit, but also of different systems of Indian Philosophy. He is an author of several books in the field of Vedant, Nyaya etc. The presentation of a felicitation volume to Swamishri will be a fitting tribute paid to him in honour of his services to the cause of Sanskrit. I wish this grand and glorious idea a grand success.

Dated 17-2-76 **S. G. KANTAWALA**

Dr. D. C. SIRCAR

Formerly Carmichael Professor

Calcutta University, and Govt.

Epigraphist for India

CALCUTTA

I am glad to learn that you are contemplating a proper felicitation of the great Sanskritist Panditavarya Śrī Kṛṣṇavallabhacāryaji of Kunkavav in the Amreli District of Gujarat. On this happy occasion, please convey to Ācāryaji my humble salutations. Let us pray for his long life.

With greetings and good wishes.

Dated 27-2-76

Your sincerely

D. C. SIRCAR

Dr. K. KRISHNAMOORTHY

Professor and Head of the Dept. of Sanskrit

Karnatak University

Mysore State, India

DHARWAR-3

I am happy to learn that you are going to bring out a Commemoration Volume to felicitate Shri Krishna Vallabhacharya. He is a great scholar who has written good works relating to Nyāya, Sāṁkhya, Yoga, Viśiṣṭā-dvaita, Advaita, Mīmāmsā etc. Such a great scholar deserves rich praise. I hope that you will attain laudable success in this endeavour.

Dated 27-2-76

Yours sincerely

K. KRISHNAMOORTHY

S. A. UPADHYAYA

Jt. Director (Academic)

Bharatiya Vidya Bhavan

Founded by Kulapati K. M. Munshi

BOMBAY

I am very happy to learn that the Krishnavallabhacharya Arts and Commerce College is being started at Kunkavav in Gujarat. I am sure, with the blessings and guidance of Pujya Shri Krishnavallabhacharyaji, your College will make remarkable progress in imparting knowledge to students and in moulding their conduct and character. Pujya Shri Krishnavallabhacharyaji is a great Sanskrit scholar and a Mahātmā, and to have his blessings and gnidance is a rare privilege that you have.

I wish all success to your College.

With best regards,

Yours sincerely

S. A. UPADHYAYA

Dr. ESTELLER
D. Litt.
St. Xavier's College
BOMBAY

Dear Principal Shah, I am very thankful to you for making me aware of your plan to publish an Abhinandanagrantha in honour of Paṇḍitavarya Śrīkṛṣnavallabhacharya I am sorry for my delay which was due to my long absence from Bombay for academic engagements in both India and abroad. Since the revered Paṇḍitji and myself were working in such different fields of the vast Sanskrit domain, I do not feel competent to give an adequate estimate of his enormous literary out put in his own special line. Others will do that better. I can only say that I am overwhelmed with admiration at his single–minded dedication and inexhaustible productivity. But I feel more confident in expressing my deep appreciation of his personal aimability and humane friendliness in the best traditional Indian style of sincerity and simplicity in having himself taken the step of paying me a personal visit, with a gesture of encouragement and coustesy, considering me as a fellow-worker in the field of Ṛgvedic studies. The kind presence and genial pressonality brought me a warmth and sunshine that I treasure among the most satisfying experiences of my long scholarly work in India, where people like him do make me feel at home as an Indian citizen that of chose to be. May his noble example of esteem and appreciation for other scholars even beyond the boundaries of caste, creed and community, long remain as an inspiration both to his own followers and to the rest of us all. To him we can rightly apply ṛṣi-kavi, in a slightly modified form for my purpose here.

"Viśvaṃ to it bhodiom yat avanti shāvāḥ" may the help of Paṇḍitji's blessing inspire us to greater efforts on the path of deep learning and gentle humaneness.

With best regards and good wishes,

I remain yours sincerely
ESTLELER

Dr. PRABHAKAR K. DONGRE
M. A., M. ED., Ph. D.
Principal, Sanskrit Mahavidyalaya
M. S. Univerity of Baroda
BARODA

I feel indeed extremely happy to express my opinion on the tremendous and contributary literature which is of immense utility to the followers and well-wishers of Swaminarayan Sampradaya. Pujya Swamiji Shri Krishnavallabhacharya, under his scholarly and lucid style, has published about fortythree books in different languages–Sanskrit, Gujarati, Hindi with a view to creating the cultural background and thereby promoting the cause of cultural education in the Sampradaya—followers and the community at large. I am quite conscious that in these days when the world is rapidly developing in various fields of science and technology it is an absolute need of the day to mould the attitudes of the public in order to make them good and cultured citizens of the nation. The publications would surely serve the needs of the community and integrate them socially, emotionally and nationally. Such attempts seem to be very necessary in all Sampradayas to achieve the cultural integration in the society for the character building.

I therefore congratulate upon the eminent writer and pray to God to bestow upon him all strength, enthusiam and long life for the follow up work of this kind.

Dated 3–3–76

PRABHAKAR K. DONGRE

SATYA VRAT

Professor & Head of the Department of Sanskrit

Faculties of Arts & Social Sciences

University of Delhi

DELHI

I am so happy to know that you intend to bring out a volume in the honour of Swami Krishnavallabhacaryaji. Swamiji is one of the most prominent scholars. By honouring him the world of scholars will be honouring itself. I wish I could have time enough to contribute an article to the above Volume.. If you could kindly send me his brief bio-data in a couple of days, I may like to compose a couple of verses in his honour and send them to you for inclusion in the above Volume.

I once again offer you my hearty good wishes for the success of the laudable endeavour.

with warmest personal regards,

Dated 24–3–76

Yours sincerely

SATYA VRAT

J. L. K. JALALI
(The Center of Time)
Kalakendra, Jalali Nivas, Karan Nagar, Srinagar, (Kashmir)

It gives me a great pleasure to know that the disciples and devotees of the great saint and learned scholar Shri Krishnavallabhacharyaji are publishing an "Abhinandan Grantha" in his honour. I wish you all success and pray that the Acharyaji may live long to bless and guide all his followers as also to inspire other seekers of Truth by his spiritual and illuminating discourses and instruction.

Swami Shrikrishna Vallabhacharyaji is not only a saint and spiritual leader but an admittedly great scholar, philosopher and darshanacharya of a high order. As an author of some fifty works in Sanskrit, Hindi and Gujarati, of which the major part is in Sanskrit, the Acharyaji is an asset to our Culture, the most ancient culture of the world, whose beginnings have to be traced to a distant past. From what one finds on going through his learned lucubrations one is indubitabry impresses by the versatility of his genius, learning and command over the different aspects of our Philosophy, Sankhya, Yoga, Mimansa Vaiseshika, Nyaya and Vedant, particularly the advaita philosophy. His Swaminarayana-darshana is a learned contribution to our varied literature, particularly the religio-spiritual philosophy of our Bharat, which speaks of his in tellectual capacity to instruct and inspire us for ever and a day.

To honour such a great soul, a Swami and Acharya, a learned scholar of repute is not and should not be the concern of a limited body of his followers only, but of all Indians for whom he is a symbol of all-round greatness, as a spiritual guide and teacher. My Pranams to him and my prayers for the successful completion of the task undertaken by his devotees, in a spirit of self-sacrifice and devotion. The Abhinandan Grantha will be a fitting tribute, I believe.

With good wishes,

Yours sincerely
J. L. K. JALALI

Dated 24-4-76

J. L. K. JALALI
(The Center of Time)
Kalakendra, Jalali Nivas, Karan Nagar, Srinagar, (Kashmir)

It gives me a great pleasure to know that the disciples and devotees of the great saint and learned scholar Shri Krishnavallabhacharyaji are publishing an "Abhinandan Grantha" in his honour. I wish you all success and pray that the Acharyaji may live long to bless and guide all his followers as also to inspire other seekers of Truth by his spiritual and illuminating discourses and instruction.

Swami Shrikrishna Vallabhacharyaji is not only a saint and spiritual leader but an admittedly great scholar, philosopher and darshanacharya of a high order. As an author of some fifty works in Sanskrit, Hindi and Gujarati, of which the major part is in Sanskrit, the Acharyaji is an asset to our Culture, the most ancient culture of the world, whose beginnings have to be traced to a distant past. From what one finds on going through his learned lucubrations one is indubitabry impresses by the versatility of his genius, learning and command over the different aspects of our Philosophy, Sankhya, Yoga, Mimansa Vaiseshika, Nyaya and Vedant, particularly the advaita philosophy. His Swaminarayana-darshana is a learned contribution to our varied literature, particularly the religio-spiritual philosophy of our Bharat, which speaks of his in tellectual capacity to instruct and inspire us for ever and a day.

To honour such a great soul, a Swami and Acharya, a learned scholar of repute is not and should not be the concern of a limited body of his followers only, but of all Indians for whom he is a symbol of all-round greatness, as a spiritual guide and teacher. My Pranams to him and my prayers for the successful completion of the task undertaken by his devotees, in a spirit of self-sacrifice and devotion. The Abhinandan Grantha will be a fitting tribute, I believe.

With good wishes,

Yours sincerely
J. L. K. JALALI

Dated 24–4–76

GEORGE CARDONA

UNIVERSITY OF PENNSYLVANIA

Philadelphia

Faculty of Arts and Sciences

Department of Linguistics

Room 618, Williams Hall CU

I thank you most sincerely for your kindness in inviting me to contribute an appreciation of Pandita Sri Krishna vallabhacharya. I am most happy to say the following.

It is an honour and a pleasure to pay my tribute to Pandita Krishnavallabhacharya, who has contributed so much to Sanskrit learning and thereby inspired others. His life is an example to others. I humbly wish him well.

Thank you again, and please forgive my answering rather late : I was at a conference from which I recently returned.

With best wishes,

Dated 26-3-76

Yours sincerely

GEORGE CARDONA

Dr. R. S. BETAI

SHRI VALLABHACHARYA-A TRIBUTE

The greatness of a man should be evaluated not so much by his academic and philosophical achievement as by its impact on the life and mind of the contemporary society. From this point of view, the greatness and achievement of Shankara and Vallabha are to be evaluated on quite different grounds. Both have contributed their best towards reinstating Hinduism and Veda Dharma, both are great and immortal by their own rights. But Vallabha's times were quite different. Hinduism was suffering unbearable pangs under the ruthless iron heel of the Indian rulers completely opposed to the very existence of Hinduism and Veda Dharma. The enmity of the rulers on the country had spread the cult of conversion to Islam both willingly and by force and fear. Hindus faith and confidence in maintaining and enlivening power of their own Dharma was shaken from the very roots. Sanatana Dharma was no more Sanatana to many. It was Vallabhacharya, who by his work, his silent activity and revolution, reinstated this faith in Dharma in the Hindus and the Hindus lived. The cult of conversion was weakened if not altogether halted. His ideal was to place ones own house in order. That explains the tremendous impact of the then Vallabha cult on Hindu life. The commonest of common was before his eyes and the religion, philosophy and ethics that he preached, left an indelible mark on Hindu life. This was of course by the cult of Bhakti that he propounded. Sankara set the Hindu Dharma in order and reinstated the values of the Veda Dharma against so many opponents and showed the might of the Indian mind and also revealed as to which heights Hindu Jñāna can scale. Vallabha saved Hinduism in its most dire need and kept it living. We worship his greatness for this great contribution as for many others.

Yours sincerely

R. S. BETAI

S. S. RAGHAVACHAR

Retd. Professor of Philosophy

University of Mysore

MYSORE

Dear Shri Shah,

I am supremely happy that you are at a fitting celebration of the greatness of the phenomenal scholar-saint Shri Krishna-vallabhacharyaji. I too admire his great literary achievements of such stupendous variety and dimensions and an drawn from this distance to his devotional personality. I tender my pious homage to him.

Please accept my ardent appreciation and best wishes for your noble endeavour in honour of such greatness.

With great regards and best wishes.

Dated 1-4-76

Yours sincerely

S. S. RAGHAVACHAR

Dr. S. P. SINGH

M. A., D. Phil.

Head of the Department of Philosophy

Magadh University, Bodhgaya

I am glad to learn that you are going to publish "Abhinandan Granth" of Shri Krishnavallabhacharyaji I, Shri Darshanik Panchanan, sad-Darshanacharyaji, Sankhyatirth, Vedanth-Tirth, Kavya Kushal, Nyaya-Vaiseshik Shastri, Vaisanav Vidvatsarvabhom. Another good news that your letter gives is about your efforts to start Shri Krishanavallabhacharyaji Arts, Science and Commerce College from June 1976 on his birth place Kunkava.

I send my good wishes to you and pray that your efforts be a complete success.

Dated 20-3-76

Yours sincerely

S. P. SINGH

SURESH CHANDRA SRIVASTAVA

Reader in Sanskrit

Allahabad University

"Pt. Krishnavallabhacharya, the author of as many as forty standard books on the Sanskrit–subject is a renowned writer and an erudite scholar of modern age. His extraordinary penmanship covers a wide and vivid range of ancient Indian learning. I had the occasion to peruse his 'Kiranavali on Nyaya Sidhanta Muktavali' and 'Swaminarayana Bhashya on Yoga-sutras' while teaching these texts to Postgraduate students of the University. I was really amazed at the clarity of concept, thoroughness of exposition and his fine phraseology. Students and scholars of Sanskrit will, no doubt, remain for long in deep debt of gratitude to this great writer.

Thanking you.

Dated 30–3–76

Yours sincerely

SURESH CHANDRA SRIVASTAVA

नाथालाल दवे

साधनापथ (श्री अरविन्द योगकेन्द्र)

१०१ कृष्णनगर

भावनगर

Panditvarya Shri Krishnavallabhacharya is a painstaking scholar and a man of profound learning. There are more than forty works in Hindi and Sanskrit to his credit which bear testimony to his scholarship and the wide range of his intirests. There are learned commentaries on ancient books of learning like Yoga-sutra, Tattva-sutra, there are compilations of Sanskrit grammar as well as anthologies of well-selected verses which the students of Sanskrit find of every day use. The synopsis of dialogues and anacdotes like Shri Gunatit-swami-varta and Śri Gopalananda Swami-Varta are crisp and full of lively interest. I pay my humble homage to this saintly soul, a simple religious person who has lived and continue to live a life of very useful service to the cause of learning and religion and is a guiding star to his devotese and followers.

Your sincerely

KAVI SHRI NATHALAL DAVE

KALYAN KUMAR DAS GUPTA

Reader in Ancient Indian History and Culture,

University of Calcutta

42/1A Sarat Bose Road, Calcutta–20

I have been glad to learn that you are going to publish a Festschrift (Abhinandan-grantha) in honour of Sri Krishnavallabhacharya Ji, who happens to be one of the front-rank scholars in our country. Sri Krishnavallabhacharya Ji is a guru in the true sense of the term and his life and works are a source of inspiration to others. I am also glad to learn that you are going to set up a college in the name of this saintly scholar. I wish you all success and am extending my deep respect to the Acharya.

With thanks,

Yours sincerely

KALYAN KUMAR DAS GUPTA

S. VENKITASUBRAMONIA IYER

M. A., Ph. D.,

Professor and Head of the Department of Sanskrit

Kariavattom, Trivandrum.

University of Kerala

University Campus

Dean, Faculty of Oriental Studies.

I am very glad to know that you are bringing out a Felicitation volume in honour of Pt. Krishna Vallabhacharya whose contribution to Sanskrit, Hindi and Gujarati is quite substantial. I wish your enterprise all success and pray for long life to Panditji to continue his useful service to Sanskrit.

Date 23-3-76

Yours sincerely

S. VENKITASUBRAMONIA IYER

DR. G. C. NAYAK

M. A. (Alld.) Ph. D. (Bristol)

Reader in Philosophy

Utkal University, Vani Vihar,

Bhubaneswar (Orissa)

Thank you very much for associating me with this ceremony of felicitating Swami Shri Krishnavallabhacharyaji, a renowned scholar in Sanskrit. It is the divine spirit in him which actually deserves our honour and respect and by honouring him we actually honour ourselves. May his great spirit be a source of inspiration for all of us, mainly for the young scholars of our country.

I wish you all success in your undertaking and pray for his long life.

22-7-77

Yours sincerely

G. C. NAYAK

TRIBUTE

I am very happy to have this opportunity of paying my tribute of admiration and regard to the reverend Swami Krishnaballabhacarya on the auspicious occasion of his Seventieth Birthday. The holy personality of Swamiji is an amalgam of a massive intellect. His versatality, in the Śāstras, his unassailable penetration in Darsana, his sound approach in Navyanyaya have opened up a world perspective of Indian Philosophy. The range of his scholarship is amazingly wide beginning from Vedic lore to the field of spirituality.

He has won the national recognition by his most valuable edition of Sri Lakshmi Narayana Samhita composed of 1,26,000 slokas, he has done a signal service to the Puranic Society and Culture.

Pray, ever engaged in the quest of knowledge, the great scholar and the great saint may illuminate the hearts of the people with the light of knowledge in the years to come.

TRILOCHAN SINGH BINDRA

Lecturer

V. V. B. I. S. & I. S. [P. U.]

P. O. Sadhu Ashram,

HOSHIARPUR-146021

M. M. GOPINATH KAVIRAJA

VARANASI

Long live the great scholar and philosopher saint Shree Krishnavallabhacharya, who is student of my Guru Shree Vamacharana Bhattacharyajee, and also Shree Krishnavallabhacharya college, which is situating at Kunkavava in Saurastra, should become a famous Mahavidyalaya."

M. M. GOPINATH KAVIRAJA

DR. R. S. SHIVAGANESHA MURTHY

Lecturer in Sanskrit

Shri Krishnavallabhacharya ji is a great savant of Sanskrit Literature and Culture. The Acharya, having more than forty works to his credit, has done yeoman service to Sanskrit cause by writing commentaries etc. in Sanskrit on various important texts in technical fields like vedanta, Tark, Sankhya, Yoga, Mimamsa and Nyaya. Several critical surveys of topics in Darsana like khyati, jati etc. are also published by him. The students of Sanskrit in general and of Darsana in particular are laid under deep debt by Shri Krishnavallabhacarya through his valuable efforts in elucidating many a ticklish point. It is quite fitting that he is presented with a volume by his students and admirers as a humble token of their gratitude. It is also gratifying to note that there are devoted scholars in different corners of the country striving to keep the torch of Sanskrit learning burning brightes.

Dated 2-8-1976

Yours sincerely

Dr. SHIVAGANESHA MURTHY

Prof. VELURI SUBBA RAO

Professor and Head of the Department of Sanskrit

Andhra University

Waltair-530003

Andhra Pradesh [India]

Dear Sirs,

It gives me great pleasure to know that an Eminent Sanskrit Scholar like Sri Swami Krishnavallabhacharyaji is being felicitated. The great number of his valuable works speak volumes about the wide gamut of learning of the scholar. May the Almighty grant him long life and prosperity for the benefit of the scholarly world.

I wish the function every success.

Yours sincerly

V. SUBBA RAO

MANSUKHALAL A. MEHTA, B. A., LL. B.
Govt. Service, Collector Office, JUNAGADH

Swami Shri Vaishnavacharyaji, *Shri Krishnavallabhacharyaji* is one of the greatest learned saint, philosopher, scholar in his Sanskrit. There is Divine spirit in him.

I am very much happy to have his personal warm feelings. I have a great regard for his valuable works showing social and literary activities. They actually deserve our honour and high respect.

His extraordinary logical power, mighty lovely speech, front rank scholarship, holy personality, authorship of many books; and deep knowledge in Sanskrit, Gujarati, Hindi and English languages, which concentre him, are never seen elsewhere. Though he is a great intellect, he is so simple that he renders useful services to preach the devotees and others.

Acharya Shri Krishnavallabhacharyaji has acquired the degrees as under :

Mahamahopadhyaya, Bharatabhushan, Vaishnava Vidvatsarvabhaum, Darshanik Panchanan, Sad-darshanacharya, Tarkanyayashastri, Navya Nyayacharya, Sankhyayoga-tirth, Vedantatirth, Mimamsatirth, D. Phil, D. Litt., Sahityamanishi, etc.

As such Acharya Shri won the national recognition. Acharya Shri has done valuable services by writing commentaries in Sanskrit on various important books on Tark, Sankhya, Yoga, Mimansa and Nyaya. He has furnished the most useful literature through his unceasing efforts, which has increased the reputation of the culture of India.

I am very happy to pay my tribute, extending my deep respect to Acharyashri and pray for his long life.

At Kunkavav, birth place of Acharyashri, "Krishnavallabhacharyaji Arts, Science and Commerce College" is started and "Abhinandan Grantha" is to be published. I add a few words of appreciation to honour such great saint with all his activities. I pay my humble homage to this saintly soul—Swetayanvyas.

Your sincerely
Ist June, 1977 **MANSUKHALAL A. MEHTA**

Dr. BIPIN JHAVERI

Principal

Dholka Education Society's

and Smt. Vijaya Smt. Rambhabahen Damodardas Shah Arts &

Commerce College

Dholka

दर्शन, भक्ति, तर्क, न्याय, योग अने सांख्य ना उपासक तथा संस्कृत ना महा-पण्डित श्री स्वामी श्री कृष्णवल्लभाचार्य नुं थतुं सन्मान भारतीय संस्कृति अने प्रजा माटे गौरववंतो प्रसङ्ग छे। आ प्रसङ्ग नुं आयोजन करनार सौ ने मारी हार्दिक शुभेच्छाओ, अने स्वामी जी ने मारा वंदन पाडवुं छुं।

आभार साथे।

वि० आपनो हितेच्छु

बिपिन झवेरी

डॉ० हरिवल्लभ भायाणी

हाईलैंड पार्क, गुलबाई टेकरी

अहमदाबाद

हुं पण्डित श्री कृष्णवल्लभाचार्य नां पुस्तको थी परिचित न थी, परन्तु तमे बोड़ेली यादी ऊपर थी जोइ शकाय छे के तेमणे विविध विषयो पर, अने विशेषे स्वामि नारायण सम्प्रदाय ने केन्द्र मां राखी ने, संस्कृत भाषा मां तो क्वचित हिन्दी मां साहित्य रचना करी छे। संस्कृत भाषा ना अने स्वामि नारायण परम्परा ना आवा विद्वान नुं सन्मान थाय ते घणुं योग्य छे। आ प्रसङ्ग ने निमित्त बनावी ने, संस्कृत भाषा अने साहित्य नी रुचि वधारवा ना, तथा भारत नी विविध धार्मिक परम्पराओ ना जे आचार विचार आज ना जीवन संदर्भ मां विशेष मार्ग दर्शक जणाय तेमने साम्प्रदायिक रागद्वेष थी मुक्त रही ने, विशाल जनता माटे रजू करवा ना प्रयासो जो थता रहे तो स्वामी श्री नुं कार्य वधु सार्थक बने।

दिनांक ७–२–७६

हरिवल्लभ भायाणी

धर्मजीवन दास

श्री स्वामिनारायण मन्दिर

भुज कच्छ

श्री स्वामि नारायणो विजयते तराम्

सद्विधालंकृत सर्वगुणसंपन्न विद्वद्वर्य्य सद्गुरु स्वामी श्री कृष्णवल्लभाचार्य स्वामी प्रति मु० कुङ्कावाव आप श्री नी प्रेरणा थी कुङ्कावाव मां जे कोलेज थाय छे ते प्रवृत्ति आधुनिक युग ने अनुकूल छे। आ कौलेज मां शिक्षण लेता विद्यार्थीओ पोताना धार्मिक, सामाजिक, अने नैतिक प्रवृत्तिओ मां तेमज भगवच्छरणागति ने स्वीकारवा मां प्रगति शील बनशे, अने पोतानुं जीवन अैहिकामुत्र मां सफलता पामशे अेवो अभिप्राय आ पत्रिका थी आपु छुं आपने अहिं ठाकोर जी नां दर्शन समये अमोअे साथे मान्या छे।

दिनांक ६–१२–७५

धर्मजीवन दास

शास्त्री गोपालचरण स्वामी

चराडवा स्वामिनारायण मन्दिर,

मोरबी जिला–राजकोट

अखिलगुणमरोदधि वेद-वेदाङ्गसम्पन्न श्रीजी कृत मर्यादापालक उद्धव संप्रदाय उत्तेजक श्रौत श्री ब्रह्मनिष्ठ गुणमहोदधि पण्डित वर्य १०८ कृष्णवल्लभाचार्य आप श्री नुं अत्यन्त परोपकारी जीवन स्थापना मां सद्गुणो वडे संप्रदाय ना तथा मारा आत्मा ने परम शान्ति थाय छे।

श्री जी महाराजे आपना मां जे कल्याणकारी सद्गुणों नी स्थापना करी छे, तेनुं वर्णन थइ शके तेम नथी। आप श्री अे साधुता दीपावी छे श्री जी महाराज नी आज्ञा नुं बराबर परिपालन करेलू छे जे थी आप आगल आवेला छो तमारा प्रति अतिशय अनहद प्रेम नी भावना दिन प्रतिदिन वृद्धि पामती जाय छे, तेवी भावना दरेक ने होवी जोइ अे, अेवी श्री जी पासे प्रार्थना।

शास्त्री गोपालचरण स्वामी

शास्त्री भगवत स्वरूप जी

स्वामिनारायण मन्दिर

भूपेन्द्ररोड

राजकोट

परम पवित्र पूज्य स्वामी श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी (नव्य न्यायाचार्य सांख्य, तीर्थ, योगतीर्थ, वेदान्ततीर्थ, मीमांसातीर्थ, काव्यकुशल, न्यायवैशेषिक, शास्त्री अने वैष्णव, विद्वत्सार्वभौम, अे केलवणी क्षेत्रे जे आ कोलेज नुं पवित्र कार्य प्रारम्भ करवा नी प्रेरणा आपेली छे, ते थी अमे गौरव अनुभवीअे छीअे। अत्रे इच्छी अे छीअे के भारत मां तेमना जेवी पवित्र सात्विक धार्मिक अने विद्वान पेढ़ी भविष्य मां स्वामिनारायण धर्म मां ऊच्च संस्कारो लइ ने जन्मे अने जगत मां पवित्रता, धर्म, त्याग अने सेवा ना मूल्यवान तत्वो नो प्रचार करे तेवी अमारी अपेक्षा छे।

भगवत्स्वरूपशास्त्री

डॉ० भोगीलाल ज. सांडेसरा

एम० ए०, पी-एच० डी०

नियामक प्राच्यविद्या मन्दिर, अध्यक्ष, गुजराती विभाग

महाराजा सयाजीराव युनिवर्सिटी

बड़ौदा

पण्डितवर्य श्रीकृष्णवल्लभाचार्य स्मृति ग्रन्थ तमे प्रगटकरी रह्या छो, अे जाणी आनन्द थाय छे। हुं तो अेने अभिनन्दन ग्रन्थ अथवा अभिवादन ग्रन्थ कहुं, केम के अे वड़े अेक प्रकाण्ड पण्डित नी सरस्वती सेवा नुं अभिनन्दन थाय छे। पण्डित जी अे अेमना विपुल अने विद्वत्तापूर्ण साहित्य सर्जन द्वारा आपणी विद्यासम्पत्ति ने सविशेष मात बर बनानी छे। अेमने मारां अभिनन्दन अने तमे आदरेला महत्कार्य माटे शुभ कामनाओ।

भोगीलाल ज. सांडेसरा

श्री राजारामचन्द्राचार्य भण्डारी जो

वेदान्त, मीमांसा शास्त्री, हिन्दी साहित्यरत्न

साहित्य, आयुर्वेद धर्मशास्त्र, आचार्य

श्री रणछोडराय मन्दिर

डाकोर-खेडा

गुजरात

माननीय श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी के ग्रन्थ विचारणीय एवं मननीय हैं।

ऐसे विद्वानों के द्वारा भारतीय संस्कृति समृद्ध एवं सम्पन्न बनी रहे, यही प्रभु से प्रार्थना है।

भवदीय

राजारामचन्द्राचार्य भण्डारी

विजयते श्री श्याम मनोहर प्रभुः ॥ विजयते श्री मदनमोहनः प्रभुः ॥

गोस्वामी श्री व्रजभूषणलालजी महाराजश्री

चोपासनी

जोधपुर (राजस्थान)

मोटी हवेली
जामनगर

दाउजी मन्दिर
जोधपुर

पूज्य महाराज श्री कई दिनों तक ग्रामों के प्रवास में पधारे हुये थे वहाँ से वापिस पधारने पर आप श्री का स्वास्थ्य अनुकूल नहीं रह रहा है तथापि आप श्री ने स्वामि कृष्णवल्लभाचार्य अभिनन्दन ग्रन्थ के प्रति पूर्ण सहानुभूति व्यक्त की है। आपकी इस रचना की सफलता की शुभ कामनाएँ भी साथ है।

आप श्री के आशीर्वाद।

दिनांक १७–६–७६

गोस्वामी व्रजभूषणलाल महाराज

श्रीअक्षरपुरुषदास जी

श्री स्वामिनारायणो विजयतेतराम्

अभिनन्दन

संस्कृत वाणी छे, ते देववाणी छे, तेने ग्रहण करवा थी अनेक विद्वानों थया छे। तेमांपण स० शास्त्री श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी तो पूर्ण विद्वान थया छे। भारत भूमि मां भगवान ना अनेक अवतारो थया छे, तेमां श्रीस्वामिनारायण भगवान तो सर्वोत्तिम अवतारी थया तेमना आ स० शास्त्री उपासक छे।

शास्त्रो पण अनन्त छे, तेमां आहरि संभव महाकाव्य मां पर ब्रह्म अवतारी श्रीस्वामिनारायण श्री हरिना जन्म कर्म गुणानुवाद होवा थी तेम नुं संशोधन तथा प्रस्तावना आप जेवा विद्वानों अे लखी ते थी सर्वकाव्य मां सर्वोपरी काव्य थयुं तेनो लाभ हजारो विद्वानों तथा संतो हरिभक्तो लेशे ते निमित्ते आपने मारा हृदय ना प्रेम थी अभिनन्दन।

सत्सङ्गी होय ते जाणे छे, जाणे छे ने संभारे छे सत्सङ्गी होय ते जाणे छे।
महिमा सुणावुं निज मन्दिर नो, सौ सांभलो सत्सङ्गी जनो,
श्री जी प्रतापे निज मन्दिर नो, व्यवहार रूड़ो चाले छे, सत्सङ्गी···
निज मन्दिर कामपुरू रे थयुं, त्यारे श्री जी तणुं सामैयुं थयुं,
मोटर गाड़ी वाजां थी थयुं, साथे सन्तो ने वेसाड़या छे, सत्सङ्गी···
निज मन्दिर ना कोठारी जी, श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी
षोडशोपचारे पूजन कीधुं, जे ना आज सत्सङ्ग रूपी छे, सत्सङ्गी···
बेहजार आठ ना शुभ वर्ष, मागशर शुद आठम ना दिवसे
रूड़ा अेवा गुरु वारे, उत्सव प्रतिष्ठा नो ऊजवाणो छे, सत्सङ्गी···
मूर्ति पधरावी सिंहासने, आरतो ऊतारो प्रभूताननो
आचार्य महाराज श्रीनाथने ने, शुभ दिवस आजनो मनायो छे, सत्सङ्गी···
मध्य शिखर मां विराजे छे, लक्ष्मीनारायण साथे स्वयं छे,
डाबी बाजु धर्म भक्ति हरि कृष्ण छे, जमणी बाजु घनश्याम विराजे छे, सत्सङ्गी···
सेवा होय जेनी निज मन्दिर मां, थोड़ा झाझी तन मां के घन मां,
तेने माटे श्री जी ना मन मां, रूड़ो आशीर्वाद लखायो छे, सत्सङ्गी···
आ महिमा निज मन्दिर तणो अमारी बुद्धि प्रमाणे गवायो वणो,
क्षतियो नी माफीयाचवा तणो, ऊत्सव मंडलीये निरधारेल छे, सत्सङ्गी···

दिनांक २७-८-६८

कवि भक्तिप्रियदास जी

जूनागढ़

श्री लाभशङ्कर शास्त्री

व्याकरणाचार्य, वेदान्तशास्त्री, कोविद, एस० टी० सी०

महेन्द्रपरा, मोरबी (सौराष्ट्र)

विद्वच्चर्याविधाने द्युतियुतवचनैः सर्वविद्वत्सभासु
युक्तिं सूक्तिं सुवारां विदधति सुधियः पण्डितानां सुमान्याः ।
तर्कवागीशतुल्या रुचिरमतियुताः श्रीशसेवा दधानाः
काश्यां वादे विवादे सुविदितमहिमानः सदा सेव्यमानाः ॥
विशिष्टाद्वैतसिद्धान्तभास्कराचार्यवर्यकाः ।
कृष्णवल्लभनामानः पुनन्तु भारतीभुवम् ॥

वाराणसी मां हुं घणो वखत तेमना परिचय मां रह्यो छुं। पं० श्रीकृष्ण-वल्लभाचार्य स्वामी जो काशी मां विद्याभ्यास माटे रही ने घणा वर्षो सुधी दर्शन, तर्क, साहित्य, वेदान्त, मीमांसादि अनेक शास्त्रो नो विद्याभ्यास करी ने पण्डितो नी सभा मां अनेक वाद-विवाद द्वारा विजयपताका फरकावी ने श्री स्वामिनारायण संप्रदाय ने सर्वोत्कृष्ट साबीत करी बताव्यो छे। पोते अभ्यास करता अने बीजा विद्यार्थीओ ने न्याय-दर्शन वगेरे नो अभ्यास करावता।

काशी मां "भीर्वाणवाग्वर्धिनी सभा" नुं सभापति पद अलंकृत करता हता। अने गुजराती विद्यार्थीओ ने संस्कृत मां बोलवा नो बोध आपता हता।

पं० पू० श्रीकृष्णवल्लभाचार्य स्वामी जो अेक पवित्र अने परोपकारी पुरुष छे। ते ओ समग्र भारत मां अेक अग्रगण्य पण्डित छे, ते ओ तपस्वी पण छे, काशी मां तेओ घणां मंत्र-जाप तथा श्री जी महाराज नी उपासना अने व्रतो करता

हता। तेमनी रचेली पुस्तको ज्यारे-ज्यारे हुं वांचु छुं, भणावुं छुं, त्यारे-त्यारे मारा मन मां अलौकिक भावना उत्पन्न थाय छे। न्यायसिद्धान्तमुक्तावली नी टीका किरणावली नाम नी टीका संस्कृत मां नव्यन्यायशैली मां तेमणे लखेल छे। आवा अनेक पुस्तको नी रचना तेमणे करी छे। तेमना घणा पुस्तको युनिवर्सिटी मां पाठ्यपुस्तको तरिके लेवा मां आव्या छे। तेमनुं पाण्डित्य अने तपस्वि पणु मारा हृदय मां आनन्द आपे छे। आवा परोपकारी विद्वान सन्तो श्री जी महाराज ना परम प्रिय होय छे। गुजरात नी भूमि ने पावन करे छे। धन्य छे आवा संतो ने। तेमनी सर्वदा विजय थाओ, अेवी श्री जी महाराज पासे प्रार्थना करु छूं।

समाचार पत्र द्वारा मारा जाणवा मां आव्युं छे के आपनी प्रतिमा नी प्रतिष्ठा कुङ्कावाव मां थवा नो छे। आ जाणी ने मने घड़ोज आनन्द थयो छे। आजे अमारा वाराणसेय महान विद्वान नुं आवुं भव्य स्वागत थाय छे, ते अमारा जेवा माटे घणोज आनन्द नो विषय छे। आप श्री अे अनेक पुस्तको मां रचना करी ने सारस्वत मन्दिर मां भगवती शारदा नुं बहुमान कर्युं छे। धर्म अने भक्ति नो प्रचार तथा सेवा फलीभूत थया छे। चतुर्दश भुवनो ना ईश्वर पुरुषोत्तम भगवान श्रीस्वामिनारायण भगवान पासे प्रार्थना करु छुं के आप सर्वदा सुखी रहो अने धर्म नो प्रचार करी दीर्घायुषी थाओ।

आप श्री ना जेवा ज संप्रदाय मां कोइ महान विद्वान अने धर्म प्रचारक बने तेवी मारी भावना छे। आशीर्वाद मोकलावजो।

लाभशङ्कर शास्त्री

बदरीनाथ काशीनाथ शास्त्री

द्वारकाधीश मन्दिर

नरसिंह जी चौक

बड़ौदा

परमादरणीय

पंडितवर्य श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी नी साथे मारो अङ्गत परिचय थयो होय तो ते स्मरण मां आवतुं नथी। तेमज ते ओ श्री नां रचेलां पुस्तको मां थी अथवा प्रकाशित पुस्तको मां थी पण कदाच कोइ पण पुस्तक में जोयुं नहि होय अेटले अे संमंधी अभिप्राय अथवा टीप्पणी रूप कोइ लेख हुं केवी रीते लखी शकीश ? ते ओ श्री ना मारा सविनय नमस्कार कहेशो। आपे मोकलेंलो पोस्ट टीकीटो आवश्यक न होवा थी आ साथे पाछी मोकलु छु समुचित प्रसङ्गे स्मरण करवा माटे उपकृत छुं। आपनी प्रवृत्ति मां सफलता इच्छु छुं। धन्यवाद।

दिनांक २८–२–७६

बदरीनाथ काशीनाथ शास्त्री

डॉ० दलसुख भाई मालवाणिया

अध्यक्ष

लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृति विद्यामन्दिर

एल० डी० इंस्टिट्यूट आफ इन्डोलाजी

गुजरात यूनिवर्सिटी के निकट

अहमदाबाद

हुं ज्यारे बनारस मां हतो त्यारे में घणा संस्कृत ना विद्यार्थिओने स्वामि श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी नव्यन्याय अने बीजा दार्शनिक ग्रन्थो नी टिप्पणी वांचता जोया छे। कठण विषय ने पण सरल मां सरल रीते रजु करवा नी तेमनी हथौटीप्रशंसा मागी ले तेवी छे। न्यायसिद्धान्तमुक्तावली ऊपर नी तेमनी किरणावली में पण वांची छे, अने तेथी प्रभावित थयो छुं तेमनुं सन्मान थाय ते उचित ज छे।

आपका

दिनांक २६–२–७६

दलसुख मालवाणिया

डॉ० वसंत गि० परीख

कमाणी सायन्स कॉलेज और प्रतापराय आर्टस् कॉलेज, अमरेली

भगवान श्री स्वामिनारायणे अेक बाजु थी नीति अने सदाचार द्वारा लोक समस्त ना जीवन मां निर्मलता प्रसारी, तो बीजी बाजुअे शाश्वत सत्य ना चिन्तन द्वारा अेमा ऊंडाणपण प्रगट कर्युं। धर्म अने दर्शन (Religion and Philosophy) ना अद्वैत नो मन्त्र अेक सूरे गूंजे छे। अेमनी वाणी मां अेटलेज पण्डितवर्य श्रीकृष्ण-वल्लभाचार्य जेवा तेजस्वी गुरुजनो अे ज्ञान अने भक्ति-उभय ना क्षेत्रो समान साहजिकता थी सिद्ध कर्या छे। पण्डित श्रीकृष्णवल्लभाचार्य नो विविध शास्त्रो नो ऊंडो अभ्यास तेमना ग्रन्थ राशि मां चमकी रह्यो छे। षड् दर्शन ना ग्रंथो रचेला तेमना भाष्यो हिन्दु धर्म ना तत्त्वचिन्तन ने पुष्ट बनावे छे। अने साथे-साथे अेमना स्तोत्रो अने भक्ति साहित्य भगवत्प्राप्ति माटे नी आरत पण जगाड़े छे।

पूज्य श्री कृष्णवल्लभाचार्य ना सन्मान अर्थे प्रकाशित थइ रहेलो अभिनन्दन ग्रन्थ अे समयोचित अने आवकारदायक कार्य छे। सर्व गुणानुरागी ओ नी साथे हुं पण अेमने नम्रता थी प्रणमु छुं।

वसन्त परीख

डॉ० तपस्वी नांदी

भाषा साहित्य भवन

गुजरात युनिवर्सिटी

अहमदाबाद

पुज्य पंडितवर्य श्री कृष्णवल्लभाचार्यजी नी विद्या सेवा विपुल अने बहुमूल्य छे। तेमणे गुजराती, हिन्दी अने संस्कृत मां तत्त्व ज्ञान विषयक शास्त्र ग्रंथो अने काव्यो नी रचना करी छे। ते ओ श्री नी श्री हरी नी सेवा अने सरस्वती नी अराधना अखंड रीते चालू रहे अने विशाल लोक समुदाय ने तेमनी ज्ञानोपासना नो लाभ मलतो रहे तेवी परम कृपालु प्रभु ने प्रार्थना अने शुभेच्छाओ। प्रभु तेमने दीर्घ अने निरामय जीवन अर्पो।

दिनांक २६-२-७६

तपस्वी नांदी

मावदानजी भी. रत्नु

मु० कालावाड

सीतलामातानुं

जि० जामनगर

(१)

दार्शनिक पञ्चानन सह; षट दर्शनाचार्य छे,
सांख्य योग वेदांत तीर्थ; नव्यन्यायाचार्य छे।
तीर्थ मीमांसा साथ सह, जे "काव्य कुशल" महान छे।
श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी, विद्वान संत सुजान छे।

(२)

फुटन्यी— विदवान वर्य संत श्री, सत्संग ना शणगार छे।
मुखड़ुं मनोहर देव जेवा–देह नो दीदार छे।
मलतांज मन खेंचाय, दीलडुं लागणी प्रधान छे।
श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी, विद्वान संत सुजान छे।

(३)

ओजस प्रभावित दिव्य दर्शन, दयालु दातार छे।
"ज्ञान सागर" गर्व नहिं, महा मुक्त ना अवतार छे।
काशी ना पंडित नी महासभा मां सनमान छे।
श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी, विद्वान संत सुजान छे।

(४)

जन्म जयंति 'जन्म भू' सोतेर वरशें आवतां।
अेज मासे अेज तिथि, प्रतिमा पधरावता।
अनावरण विधि थतां, संत मूर्ति ईश समान छे।
श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी विद्वान संत सुजान छे।

(५)

पूर्वदत्त विद्या मले, सत शास्त्र नें, लोको कहे ।
सत्सङ्ग, बिन सत्सङ्ग मां, अे नी बराबरी कोन लहे ।
विद्वान संत श्रीजी तणा, (अे नुं) 'कवि माव' ने अभिमान छे ।
श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी विद्वान संत सुजान छे ॥

॥ दोहा ॥

अे पांच छंद कवि हृदय ना, प्रेम तणी पीछान ॥
कवि माव साचुं कहे; (अे नुं) अमने छे अभिमान ॥

"आकृति गुणान् कथयति" आप्रमाणे सुन्दर शरीर होय वाणी गङ्गाना प्रवाह जेवी अस्खलित होय अने विद्वान होय एतो सोनामाँ सुगन्ध जेवुं छे ।

भूतकाल मां भारत मार्तण्ड पंडित गटुलाल जी महान विद्वान हता । पण तेने जोनारा लखे छे—"शीलीना मोटा-मोटा खाड़ा ना डाघ चेहरा ऊपर, वर्ण पण कालो साई जेवो अने बन्ने चक्षुओ नहीं—आम ईश्वर, हजार माँ कोईक नेज-रूप-गुण-वाणी-चातुर्य अने विद्वत्ता-हजारे एकादनेज आपे छे । पूज्य शास्त्री महाराज श्री जी नी दया थी-विद्वत्तादेव समान देदीप्यमान देहे, विशाल चातुर्य, वाणी चातुर्य ए बधा सद्गुणों नो समुच्चय शिघ्रकाव्य कला सुकंठी : कंबुकंठ बगेरे चित्त आकर्षक मुखमुद्रा-अङ्ग मरोड़ आदि प्रभु नी घड़ेली विभूतियों छे । परम कृपालु भगवान श्री स्वामिनारायण ने तंदुरस्ती सह दीर्घायु बक्षे, अने सत्सङ्ग माँ दिग्विजय करे । आवो शुभाशीर्वाद हुँ ए इच्छू छू । "चारण देवी पुत्र" तरीखे पाठवी विरमू छू ।

महासुदी ११ सं० २०३२
दिनांक १३-२-६६

मावदानजी भी. रत्नु

हरसुखभाई सन्घवी

कुलपति

सौराष्ट्र युनिवर्सिटी

राजकोट

स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य जी अभिनन्दन ग्रंथ प्रकाशित थाय छे ते जाणी आनंद। आवा उमदा कार्य हाथ धरी तेने पूर्ण करवा माटे प्रमुख श्री ने अभिनन्दन आदेशथी।

दिनांक २–३–७७

हरसुखभाई सन्घवी

डॉ० अेसोर सोलोमन

३३ नेहरूनगर

आंबावाडी

अहमदाबाद

पंडितवर्य न्यायपञ्चानन षड्दर्शनाचार्य, सांख्यतीर्थ, वेदांततीर्थ, काव्यकुशल, न्याय-वैशेषिक शास्त्री वैष्णव विद्वत्सार्वभौम स्वामी श्री कृष्णवल्लभाचार्यजी नी साहित्य साधना अने तपश्चर्या जाणीती छे। अे उचित ज छे के तेमना आदरार्थे अने तेम नुं नाम सदा लोको ना जिह्वाग्रे रहे ते माटे जून १९७६ थी श्री कृष्ण वल्लभाचार्य जी आर्टस-कोमर्स कालेज नो प्रारम्भ थाय छे। कोलेज ने उत्तरोत्तर सफलता मलती रहे अने स्वामी श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी नी उज्ज्वल प्रतिभा नी दीप्ति तेने मलती रहे अेवी हार्दिक शुभेच्छा छे।

संस्कृत विद्या नां मूल प्रत्येक ना हृदय मां दृढ़ बने अने तेमां रहेलां रत्नो नो लाभ सौ ने मले ते माटे, स्वामी जी अे, संस्कृत, हिन्दी अने गुजराती मां घणुं लख्युं छे। न्याय, सांख्य, योग, वेदान्त ना भिन्न सम्प्रदायो, मीमांसा, भक्ति आदि अनेक दार्शनिक सम्प्रदायो अने प्रवाहो थी सौ परिचित बने, अने तेमना संस्कारो थी पावन अने तेजस्वी थाय ते माटे स्वामी जी नी साधना अद्वितीय छे। तेने आदर पूर्वक वंदन ज करवानां होय, स्वामी जी ना आशीर्वाद सौ पर सदा रहे, अेवी प्रार्थना !

प्रसङ्ग ने अने महोत्सव ने सर्व प्रकारे उज्ज्वल सफलता इच्छुं छुं।

अेसोर सोलोमन

प्रा० नर्मदाशङ्कर शास्त्री
एम० ए०, साहित्याचार्य
काव्यतीर्थः रा. मा. रत्न
आयुर्वेद उत्तमा
संस्कृतम् कोमर्सकालेज
भावनगर २

सादर–आनंद मां हशो। आप मारा घरे बे बखत आव्या, परन्तु हुं न मली शक्यो तेनुं मने दुःख थयुं अस्तु।

आप श्री अे परम पूज्य श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी ना अभिनन्दन ग्रंथ माटे बे शब्दो लखी मोकलवा माटे मने याद कर्यो, ते बदल आपनो आभारी छुं।

अमुक कार्य मां रोकायेल होइ पत्र तेमज बे शब्दो लखी मोकलवा मां विलंब थयो छे, तो दर गुजर करशो।

आ साथे आचार्य श्री ने वंदनात्मक पत्र संस्कृत मां लखी मोकलेल छे तो योग्य करवा पुनः आभार।

नर्मदाशङ्कर शास्त्री

कृष्णशङ्कर शास्त्री

श्री भागवत विद्यापीठ

शान्तिलाल डी० शाह : ५८ कृष्ण कुञ्ज : श्री माली सोसायटी

अहमदाबाद

श्रद्धेय शील विद्वद्वर्य पण्डित श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी ना सौरि सौरभ थी ते ज व्यक्ति अपरिचित हशे के जे व्यक्ति भगवान सूरि थी के भगवान शारि थी अपरिचित हशे।

ते ओ श्री नुं सर्व तो मुख पाण्डित्य नो परिमल ते ओ ज्यारे वाराणसी मां विद्याध्ययन काल मां विराजता त्यार थी ज हतो। "पाणिनीयं काणादं च सर्व-शास्त्रोपकारकम्" आ सूक्ति अनुसार तेओना तल स्पशीय त ज् ज्ञ पणा थी ते ओ प्रत्येक दर्शन नो सर्वाङ्ग मर्म जाणी शकता।

वैष्णव सिद्धान्त मां ना अेक विशिष्ट सम्प्रदाय श्री स्वामिनारायण जगत मां ते ओ अेक अप्रतिम विद्वद्वर्य पुरुष छे। पाण्डित्य साथे संस्कृति ना उपासक छे अेटलुज नहीं पण संस्कृत अने संस्कृति ना हिमायती छे तेमज उपकारक पण छे। अनेक विद्यार्थीओ ते ओ श्री ना सम्पर्क मां आवी ने तर्क शास्त्र नो ज नहि प्रत्येक शास्त्र नो अर्क पाम्या छे। तर्क शुद्ध तेमनी दलील वेदानुगामी विवेचन, भक्ति-पूर्ण निरूपण, सिद्धान्त प्रतिपादन प्रतिभा, सदा स्वपक्ष रक्षण मां समान वृति" आवुं तो अगण्य ते ओ मां विराजे छे।

५०, जेटला स्वतन्त्र भाष्यात्मक विवेचनात्मक ते ओ ना पाण्डित्य पूर्ण ग्रन्थो तेमनीज नहीं, सम्प्रदाय नी संस्कृत वाङ्मय नी अने समस्त विश्वनी सम्पत्ति छे। आवा मति सम्पन्न पुरुषोज साचा सम्पन्न छे ते ओ मां समर्थन ते तो साक्षात् सरस्वती भगवती नुं ज गौरव पूर्ण समाराधन छे। बाकी विद्वानो ज विश्व नुं सत्य धन छे।

आप ते ओ श्री ना मादरे वतनमां सारस्वत धामो नुं निर्माण ते ओ श्री ना अनुराग ना अने समादर ना प्रतीक स्वरूपे रचवा चाहो छो। ते सर्वथा स्तुत्य छे।

परम सारस्वत पुरुष श्री कृष्णवल्लभाचार्य ने मारा तरफ थी सप्रश्रय प्रणाम छे।

दिनांक २९–३–७६

कृष्णशङ्कर शास्त्री

कृष्णशङ्कर शास्त्री

श्री भागवत विद्यापीठ

शान्तिलाल डी० शाह : ५८ कृष्ण कुञ्ज : श्री माली सोसायटी

अहमदाबाद

श्रद्धेय शील विद्वद्वर्य पण्डित श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी ना सौरि सौरभ थी ते ज व्यक्ति अपरिचित हशे के जे व्यक्ति भगवान सूरि थी के भगवान शारि थी अपरिचित हशे।

ते ओ श्री नुं सर्व तो मुख पाण्डित्य नो परिमल ते ओ ज्यारे वाराणसी मां विद्याध्ययन काल मां विराजता त्यार थी ज हतो। "पाणिनीयं काणादं च सर्व-शास्त्रोपकारकम्" आ सूक्ति अनुसार तेओना तल स्पशीय त ज् ज्ञ पणा थी ते ओ प्रत्येक दर्शन नो सर्वाङ्ग मर्म जाणी शकता।

वैष्णव सिद्धान्त मां ना अेक विशिष्ट सम्प्रदाय श्री स्वामिनारायण जगत मां ते ओ अेक अप्रतिम विद्वद्वर्य पुरुष छे। पाण्डित्य साथे संस्कृति ना उपासक छे अेटलुज नहीं पण संस्कृत अने संस्कृति ना हिमायती छे तेमज उपकारक पण छे। अनेक विद्यार्थीओ ते ओ श्री ना सम्पर्क मां आवी ने तर्क शास्त्र नो ज नहि प्रत्येक शास्त्र नो अर्क पाम्या छे। तर्क शुद्ध तेमनी दलील वेदानुगामी विवेचन, भक्ति-पूर्ण निरूपण, सिद्धान्त प्रतिपादन प्रतिभा, सदा स्वपक्ष रक्षण मां समान वृति" आवुं तो अगण्य ते ओ मां विराजे छे।

५०, जेटला स्वतन्त्र भाष्यात्मक विवेचनात्मक ते ओ ना पाण्डित्य पूर्ण ग्रन्थो तेमनीज नहीं, सम्प्रदाय नी संस्कृत वाङ्मय नी अने समस्त विश्वनी सम्पत्ति छे। आवा मति सम्पन्न पुरुषोज साचा सम्पन्न छे ते ओ मां समर्थन ते तो साक्षात् सरस्वती भगवती नुं ज गौरव पूर्ण समाराधन छे। बाकी विद्वानो ज विश्व नुं सत्य धन छे।

आप ते ओ श्री ना मादरे वतनमां सारस्वत धामो नुं निर्माण ते ओ श्री ना अनुराग ना अने समादर ना प्रतीक स्वरूपे रचवा चाहो छो। ते सर्वथा स्तुत्य छे।

परम सारस्वत पुरुष श्री कृष्णवल्लभाचार्य ने मारा तरफ थी सप्रश्रय प्रणाम छे।

दिनांक २९–३–७६ **कृष्णशङ्कर शास्त्री**

डॉ० ना० म० कंसारा

प्रोफेसर अने अध्यक्ष

संस्कृत-प्राकृत-मराठी विभाग

गुजरात कोलेज

अहमदाबाद

संदेशो :

स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी नी सर्व दर्शनो मां जोवा मलती अव्याहत गति अने अेमनां स्तोत्रो अने काव्यो मां प्रकट थती कवि प्रतिभा अेमने आजे हयाति धरावता गुजरात ना संस्कृत पण्डितो-कवि-ओ मां मोखरा नुं स्थान अपावे अेमां आश्चर्य नथी ज । भारत भरना अग्रगण्य—

संस्कृत पण्डितो अने विद्वानो अेमनुं आ प्रसंगे अभिनदंन करे छे अेमां अे पण्डितो अने विद्वानो नुं पोतानुं ज गौरव प्रकट थाय छे । परम कृपालु परमात्मा ने मारी प्रार्थना छे के तेमने पूर्ण अेक सो आठ वर्ष नुं दीर्घायु बक्षी संस्कृत साहित्य नी वधु ने वधु सेवा करावे ।

दिनांक २७-७-७६

ना० म० कंसारा

लक्ष्मण भाई पटेल

सनातन धर्म प्रेमिओ पोताना तालुका-ग्रामोना जिल्लावार १०८ भागवत सप्ताह नुं आयोजन करवा मांगता होय तेओ श्री ने ऊपर ना सरनामे संपर्क साधवा विनंति छे। कुंकावाव ना सरपंच श्री भक्त लक्ष्मण भाई पटेले आ बावतमां पहेल करी छे। जेथी संक्षिप्त नोंध वांचो।

अमरेली जिल्ला मां आवेल मोटी कुंकावाव गामे ज्येष्ठ मास मां २०८ श्री मद् भागवत सप्ताह नुं आयोजन कुंकावाव ना सरपंच श्री भक्त लक्ष्मण भाई पटेल ना प्रमुख पणा नीचे गोठवायेल हतुं। परंतु भक्तो ने हंमेशा भगवान् कसोटीओ चडावे छे। तेम मुहूर्त ना आगले दिवसेज सखत वावाझोडा साथे मेघराजा खांगा थया तदऊपरांत बाजु ना नानी कुंकावाव गाम ना तलावे दगो दीधो अने मोटी कुंकावाव मां ताराजी सरजी जे वखते जगदगुरू श्रीशंकराचार्य जी नी उपस्थिति मां आ समारंभ मुल्तवी राख्यो परंतु कुंकावाव ना अे अडीखम भक्त भगवान् ने पण जवाब आपे छे के आ आयोजन थी ज तमारा नव निर्माण पामता शिवालय नो सभा मंडप रचवो छे।

अने तेमणे तेज वखते तेमना साथी द्वारो साथे रही संकल्प कर्यो के आ आयोजन मां अत्यारे गमे तेटलुं नुकशान थयुं परंतु मार्गशीर्ष मास मां कुंकावाव अने तेनी आजु बाजु ना ग्राम जनो आ संकल्प थी विचलित थया विना पूरो करशे ज त्यारे भगवान काम नाथ ने हस्ते मुखे आ समस्त तालुका ने आर्शीवाद आपवा खुद ने पधारवुं पड़शे। धन्य छे आ लोखंडी भक्तराज ने

लक्ष्मण भाई पटेल

महेन्द्र पण्ड्या

गुजराती प्राध्यापक

रिज्योनल कालेज ऑफ अेज्युकेशन

श्यामलागिरी, भोपाल–१३

मध्य प्रदेश

रा० रा० सद्गुरु विद्वान् गुरुवर्य श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी नी साहित्य सेवा खरेखर अजोड़ छे, अेमणे संस्कृत, गुजराती, हिन्दी साहित्य मां पण ग्रन्थों रची तुलनात्मक भाषा दृष्टि केलवी छे। अेमनी प्रचण्ड सर्जनात्मक शक्ति थी हुँ खूब प्रभावित थयो छुं। परम कृपालु परमात्मा स्वामिनारायण भगवान अेम नी उतरोत्तर साहित्य सेवा करवा नुं वल अने वेग आपे अेवी अभ्यर्थना छे।

आप श्री अे वृद्धा अवस्था होवा छता सर्जनात्मक वलण राखी अनेक साहित्य कृतिओ रचेल छे, ए खरेखर अनेक विद्वानो ने प्रेरणा अने पाथेय पूरा पाड़े तेम छे। अेज आपना विश्वासु सेवक ना प्रणाम !

दिनांक २८–६–७७

महेन्द्र पण्ड्या

अेम. टी. बुच.

अेम अे० पी० एच० डी०

आचार्य

वी. अेम. मेहता म्युनि. आर्टस अने कोमर्स कोलेज

पञ्चवटी सोसाइटी, पण्डित नेहरू मार्ग, जामनगर

॥ श्रीः ॥

स्नेही आचार्य श्री

सविनय निवेदन के आपनो पत्र मल्यो, ते मूजब पूज्य पाद स्वामीजी विषे 'एक अंजलि' रूपे कईंक लखी मोकलू छूं मने आशा छे कि आपने कांइ क संतोष थशे, मारे माटे आपे व्यक्त करेल लागणी माटे आपनो आभारी छूं।

आपना आ प्रशंसनीय कार्य मां ईश्वर ना आशीर्वाद अवश्य उतरशे, अने आ कार्य सम्पूर्ण रीते सफल बनशे, आ रीते माता गिर्वाणी देवी नो अने अेक अद्भुत विद्वान तथा संत महापुरुष नो सेवा करी आप कृतार्थ थशो।

आप सौ नी कुशलता इच्छु छुं

लि. मात्रं बुंचना

स्नेहवंदन

दिनांक ७–१२–७६

अेम. टी. बुच.

सी. वी. ठकराल

संस्कृत विभाग ना अध्यक्ष

के. अेच. माघ वाणी आर्टस अेन्ड

कोमर्स कोलेज, पोरबंदर

श्री मान्,

संस्कृत ना प्रखर पंडित स्वामी कृष्ण वल्लभाचार्य जी महाराज नु समुचित सन्मान करवा माटे तमे "स्वामी कृष्ण वल्लभाचार्य जी अभिनंदन ग्रन्थ" प्रकाशित करी रह्या छो, ते जाणी खूब आनन्द थयो, सौराष्ट्र मां आवा विद्वान होय तो ते आपणु परम सद्भाग्यज गणाय, तेमनुं सन्मान करी ने आपणे आपणुं पोतानुं ज सन्मान करिअे छीअे। ऋषी ऋण चुकववा नो तमारो प्रयास खरेखर अभिनंदनने पात्र छे। ज्यारे आपणी पासे आपणी पोतानी युनिवर्सिटी छे। त्यारे आपणे अेवी अपेक्षा राखी शकीअे के अेक आवा विद्वद्वर्य D. Litt. डी. लिट. : नी मानार्ह उपाधि अर्पण करी ने आवु ऋण चुकववा नो अवसर झड़पी ले। अभिनन्दन ग्रन्थ तैयार थाय अे प्रशस्य छेज। परंतु तेनी साथे-साथे पूज्य स्वामी जीनुं साहित्य आम जनता सुधी पहोंचे अे माटे समुचित तन्त्र गोठवाय तो अे समस्त राष्ट्र ना हित मां थशे। आ दिशा मां जे हुँ जराकेय ऊपयोगी थई शकीश तो मारी जात ने धन्य मानीश।

अे ज आभार,

सी. वी. ठकराल

मनहर लाल जी शास्त्री

पण्डित श्री कृष्ण वल्लभाचार्यजी सरस्वती ना उपासक, साधक, विविध विषयो ना मर्मज्ञ मनीषी छे, तेमनु हार्दिक अभिनन्दन समग्र संस्कृत विद्वानों नुं अभिनन्दन छे, तेमनां ग्रन्थों नी उत्कृष्टता, स्निग्धता अने विद्वत्ता हरेक ने आर्कषे छे, ते ओ कर्म योगी, भगवान निष्ठ साधक, सरस्वती ना उपासक अने अप्रतिम आराधक छे ।

आवा ज्ञान कर्म भक्ति नां पवित्र त्रिवेणी संस्पर्श थी ज समग्र वाता वरण पवित्र थई जाय छे । भारतीय विद्वानों नां समान मां कमल नी जेम पवित्र, सूर्य नी जेम तेजस्वी विश्व नी आ महान विभूति ने अमारी सौ नी भावभीनी अंजलि ।

मनहर लाल जी शास्त्री

शास्त्री भक्ति प्रिय दास जी

सांख्ययोग वेदान्ततीर्थ, साहित्यरत्न
श्रीस्वामि नारायण विद्यामन्दिर–गढपुर

आपणो भारत वर्ष तत्त्व द्रष्टाओ, अर्थात ऋषि मुनिओ नो देश छे। अति तत्त्व ज्ञानी परम्परा अति दीर्घ अविच्छिन्न रूपे चाली आवी छे जे परम्परा ने आपणे त्यां संप्रदाय अेवुं नाम पण अपाय छे। तत्तत्कालीन दार्शनिको अे जीवन भरनी आराधना अध्ययन अने अध्यापन, आदि द्वारा अनुभूत नक्कर सत्यो ने लेखिनी मुखे प्रकट करी, भारतीय तत्त्व ज्ञान निधि ने सर्वाधिक सु समृद्ध कर्यो छे।

आवा अतिरोहित तथ्यो ने प्रकट करता अनेक महा पुरुषो पैकीना पू० पा० स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी आजे आपणी समक्ष विद्यमान छे। स्वामी जी अे बाल्यवय मांज-गृह-परिजनो नो त्याग करी, विशुद्ध भागवती दीक्षा स्वीकारी हती, अनेक वर्ष पर्यंत काशी वास कर्यो हतो। आ समय मां तेमणे कठोर परिश्रम पूर्वक दर्शनोदधि नुं मथन करी सांख्ययोग, न्याय, वैशेषिक, पूर्व मीमांसा अने उत्तर मीमांसा (वेदान्त) रूप षड् दर्शनो ना उपर अनेक विध भाष्य, व्याख्या, विवेचन, टीका अथवा टीप्पणी आदि लखी परवर्ती व्युत्पित्सु ओना मार्ग ने सुगम अने सुबोध बनाव्यो छे।

त्याग अने तपः प्रधान जीवन वीतावता स्वामी जी अे अध्ययन कार्य पूर्ण कर्या, पछी अनेक शहेरो मां असंख्य जिज्ञासुओनी सभा ओ मां ते शास्त्रो ना सिध्धान्त ने अने तेना सार रूप भगवान श्री स्वामिनारायण ना, स्वरूप ना, महिमा ने प्रतिपादित करी श्री स्वामिनारायण संप्रदाय नु गौरव वधार्यु छे, तेमणे संप्रदाय नी परम्परागत प्रणालिका ने अनुरूप सर्व धर्म समन्वयनी भावना ने जनता नी समक्ष सुरम्य रीते छटादार स्पष्ट शब्दो थी प्रकट करी ने सम्प्रदाय नी विकास योजना ने पण सफल बनावी छे।

पू. स्वामी जी नुं जीवन अेक परम भागवत संत नु जीवन छे। सदाचार तो मानो तेमनो जीवनाधार छे। ज्ञान तो तेमना जीवन मां अेटलुं वणाइ गयुं छे। ए मानो स्वयंज्ञाननिधि होय। वैराग्य थी ज तेमनुं आध्यात्मिक तेज चमकी रहयुं छे। माहात्म्य पूर्वक नी प्रेम सहित सेवा, जेने भक्ति कहेवाय छे। ते तो स्वामी जी ना जीवन मां प्राण सम अविरत विराजी रही छे। जेम के प्रातः समये स्नानादि थी निवृत थइ भगवदर्थे चदंन, पुष्प धूप दीपादि, पूजा द्रव्यो ने सम्पादन करवा मां तो अतिशय दास वत् निर्मानी पणां ने आशर्या होय छे।

स्वामी जी अे पोताना शारीरिक सुख ने माटे कोइ पण व्यक्ति नी पासे कोई पण वस्तु नी अपेक्षा जणावी न थी। भगवत्-स्वरूप मां तेमने आकिंचन्य अने अनन्यभाव तो सतत् जाग्रत रहे छे। परमात्मा स्वरूप मां तैल धारावत् अखण्ड वृत्ति राखनारा आवा कल्याण गुणाश्रय श्रीगुरुजी ना श्री चरणो मां आश्रय पामी तेमनी पासे थी सांख्य, योग, वेदान्त अने मीमांसा वगेरे दर्शनो नुं अध्ययन करी ने जे में मारा जीवन ने कांइक अंशे घड्युं छे। ते प. पू. श्री गुरु चरणों मां कोटि-कोटि बार प्रणामुं छुं।

शास्त्री भक्ति प्रिय दासजी

डॉ० महेन्द्र पंड्या

गुजराती प्राध्यापक
रिजनल कालेज ऑव अेज्युकेशन
भोपाल

रा. रा. सद्गुरु विद्वान् गुरुवर्य श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी की साहित्य सेवा सचमुच अद्वितीय है। आपने संस्कृत, गुजराती, हिन्दी साहित्य में विविध ग्रन्थों की रचना कर तुलनात्मक भाषा व साहित्य के क्षेत्र में प्रचंड समीक्षात्मक शक्ति प्राप्त की है। शक्ति प्राप्ति व विशिष्ट सर्जन शक्ति जिससे मैं काफी प्रभावित हूँ।

आपके ग्रन्थ व साहित्य सभी के लिए प्रेरणा का कारण बन सकते हैं।

आपका

दिनांक २४–६–७७ **महेन्द्र पंड्या**

डॉ० अेम० टी० बुच

अेम. अे., पीअेच-डी.
प्रिन्सिपाल
वी. अेम. मेहता म्युनि. आर्टस कामर्स कालेज
जामनगर

स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी अभिनन्दन ग्रन्थ का प्रकाशन एक भव्य व प्रशंसनीय कार्य है। इस कार्य में ईश्वर का आशीर्वाद मिलेगा। ऐसे अद्भुत संभव महान विद्वान की सेवा करके हम सब कृतार्थ होंगे।

आपका

एम० टी० बुच

सी० वी० ठकराल

संस्कृत विभाग के अध्यक्ष,

के० अेच० माधवाणी आर्टस अेन्ड

कामर्स कालेज

पोरबंदर

श्रीमान्,

संस्कृत प्रखर पंडित स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य जी महाराज का समुचित सम्मान करने के लिए आप "स्वामी कृष्णवल्लभाचार्य जी अभिनन्दन ग्रन्थ" प्रकाशित कर रहे हैं। यह जानकर बहुत खुशी हुई। सौराष्ट्र में ऐसे विद्वान् हों तो वह अपना सद्भाग्य है। उनका सम्मान करके ही हम अपना ही सम्मान करते हैं। ऋषि के लिए ऋण चुकाने का आपका प्रयास सचमुच अभिनन्दन पात्र है। जब अपने पास अपनी खुद की युनिर्वासिटी है तब हम ऐसी अपेक्षा रख सके कि ऐसे विद्वद्वर्य D. Litt. की महान उपाधि अर्पण करके एसा ऋण चुकाने का अवसर स्वीकार ले। अभिनन्दन ग्रन्थ तैयार हो वह प्रशस्य है ही। लेकिन उनके साथ साथ पूज्य स्वामी जी का साहित्य आम जनता तक पहुँचे इसके लिए समुचित तंत्र बने तो यह सारे राष्ट्र के हित में होगा। इस दिशा में यदि मैं जरा भी उपयोगी हो सकूं तो मैं अपने आप को धन्य मानूँगा।

आभार !

सी० वी० ठकराल

मनहरलालजो महाराज

पंडित श्री कृष्ण वल्लभाचार्य जी महाराज सरस्वती के उपासक, साधक, विविध विषयों के मर्मज्ञ मनीषी हैं। उनका हार्दिक अभिनन्दन समग्र संस्कृत विद्वानों का अभिनन्दन है। उनके ग्रन्थों की उत्कृष्टता, स्निग्धता और विद्वत्ता सब को आकर्षित करती है। वह कर्मयोगी, भगवान निष्ठ साधक, सरस्वती के उपासक और अप्रतिम आराधक हैं।

ऐसे ज्ञान कर्म भक्ति के पवित्र त्रिवेणी के संस्पर्श से ही समग्र वातावरण पवित्र हो जाता है। भारतीय विद्वानों के समाज में कमल की तरह पवित्र, सूर्य की तरह तेजस्वी विश्व की यह महान विभूति को हमारी भाव भीनी अंजलि···

मनहरलालजी महाराज

शास्त्री भक्ति प्रियदास

सांख्ययोग वेदान्ततीर्थ साहित्यरत्न
स्वामिनारायण विद्यामन्दिर गढ़पुर

शत शत प्रणाम ! कोटि कोटि प्रणाम !

हमारा भारतवर्ष तत्त्व चिंतकों व ऋषि-मुनियों का देश है। यहाँ पर तत्वज्ञानियों की परम्परा अतिदीर्घ व अविच्छिन्न रूप से चली आ रही है। यह परम्परा यहाँ पर सम्प्रदाय के रूप में भी प्रसिद्ध है। प्रत्येक काल के दार्शनिक व तत्त्वचिंतकों ने जीवनभर ही आराधना अध्ययन व अध्यापन आदि द्वारा अनुभूत ठोस सत्यों में श्रीमुख से ही व्यक्त किया है और भारतीय तत्वज्ञान को समृद्ध किया है।

ऐसे महान तत्वचिंतकों में से एक पूज्यपाद स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जो आज हमारे समक्ष विद्यमान हैं। स्वामीजी ने बाल्यावस्था में ही गृहपरिजनों का त्याग कर विशुद्ध भागवती दीक्षा ग्रहण की थी। आपने अनेक वर्षों तक काशीवास किया था। इस समय अपने कठोर परिश्रम पूर्वक दर्शनोदधिका मन्थनकर सांख्ययोग, न्याय, वैशेषिक, पूर्वमीमांसा व उत्तरमीमांसा (वेदान्त) रूपी षड्दर्शन पर अनेकविध भाष्य, व्याख्या, विवेचन टीका टिप्पणियाँ लिखकर परवर्ती व्युत्पित्सुओं के मार्ग को सुगम व सरल बनाया।

स्वामीजी ने त्याग व तपस्या से पूर्ण जीवन में भी अध्ययन को स्थान दिया। बाद में अनेक शहरों में असंख्य जिज्ञासुओं की सभा में अनेक शास्त्रों के सिद्धान्तों व साररूप भगवान स्वामिनारायण के भव्यस्वरूप व गरिमा का प्रतिपादन कर स्वामिनारायण सम्प्रदाय का गौरव बढ़ाया है। आपने सम्प्रदाय की परम्परागत प्रणालिकाओं के अनुरूप सर्वधर्म समन्वय भावना को जनता के समझ सुरम्यरूप में व्यक्तकर सम्प्रदाय की विकास योजनाओं को भी सफल बनाया है।

पूज्य स्वामी जी का जीवन एक परम भगवान सन्त का जीवन है। सदाचार तो मानो उनका जीवन आधार है। ज्ञान तो उनके जीवन में इतना समन्वित हो गया है कि मानो वे स्वंय ज्ञान के निधि लगते हैं। वैराग्य से ही उनका आध्यात्मिक तेज चमक रहा है। माहात्म्य पूर्ण भक्ति आपके जीवन में अविरत दृष्टिगत हो रही है।

स्वामीजी ने स्वयं शारीरिक सुख के लिए किसी व्यक्ति के पास किसी वस्तु की अपेक्षा नहीं रखी है। भगवत्स्वरूप में आप अकिंचनभाव तथा अनन्यभाव से सतत जागृत रहते हैं। श्री गुरुजी के चरणों में बैठकर मैंने सांख्ययोग, वेदान्त मीमांसा आदि दर्शनों का अध्ययन किया है। गुरुचरणों में कोटि कोटि प्रणाम।

शास्त्री भक्ति प्रियदास

पू० स्वामी श्री एक भारतीय आत्मा के रूप में

पूजार्हस्वामीश्रीश एकोभारतीयाऽऽत्माभगवदंशः

विद्वज्जनवन्दनशाली

शास्त्राध्यापकः यू० व० जोहानबर्ग–लीडर, विक्टोरिया, मेलबार्न, ऑस्ट्रेलिया

स्वयं ब्रह्मसगुणस्वरूपः स्वामीश्वरः श्रीकृष्णवल्लभाचार्यो भारतीयविभूत्यात्मा भवन्निदानीन्तनयुगे संस्कृतात्मकदेववाणीं निजीयां प्राग्भवीयामेव व्यापारयन् वेदशास्त्रपुराणेतिहासभाष्यादिपारावारमथनालोडनयत्ननिष्पादितपीयूषवर्षणैः समस्तपृथिव्या उपदेशात्मकतत्त्वावेदनात्मकशारदीयसन्ततिसततप्रवाहात्मकनवजीवनात्मकनवनवीनपरिष्करणात्मकसेवां विदधाति, स्वीयमेव स्वस्थापितं स्वरक्षितं स्वपोषितं स्वसमृद्धं सम्पादयतीति भारते भुवि महदुपकारकृज्जनताकृते कृपालुर्यतिः समस्तविद्यासु धन्यतापात्रमस्तीति ।

ब्रह्म हि निर्गुणं निराकारमपि सगुणं साकारं स्वसृष्टयर्थं संभवति, श्रीकृष्णादिरूपं वैराजब्रह्मशंभ्वादिरूपं महर्षिरूपं सूर्यचन्द्रेन्द्रादिरूपं साम्प्रदायिकाऽऽचार्यादिरूपं सद्गुरुगुरुविद्यागुर्वादिरूपं सम्पद्यते लोककल्याणार्थम्, अतो ब्रह्मविद्योद्भावकाः सर्वेऽपि विद्वांसो ब्रह्मात्मका ब्रह्मस्थिरा ब्रह्मान्ता भवन्ति, सर्वेऽपि ब्रह्मात्मका अपि आविद्यकावरणवैविध्येन शासकशास्यतावस्थानविवृता विद्योतन्तेऽज्ञानविजृम्भणकवलीकृता अहम्ममत्वपराभूताः स्वस्वरूपभानवर्जिताः अकर्मठा अपि समाहितकर्मठाः सन्तो व्यापारपरायणाः संसारिणो भूत्वा रागद्वेषादि दोषसागरमग्नाः स्वयं संसरन्त्यन्यान् संसारयन्त्यपि, क्रमोऽयं संसारप्रवाहस्य, नत्वसंसारात्मचैतन्यस्य, असंसार्य्यात्मानस्तु सगुणा ईश्वरा नित्याऽविस्मृतविज्ञाना भगप्रपूर्णाः कल्याणकारिणो विपथगस्वसजातीयतत्त्वात्मकान् स्वपथपरान् कर्तुमेव यतन्ते, शुद्धसत्त्वप्रधाना एते सर्वज्ञाः सर्वज्ञकल्पा ब्रह्मेश्वरा 'अहं ब्रह्माऽस्मी'त्युपासनविज्ञानवर्षिणोऽपसृतब्रह्मपथान् समालम्बितपरब्रह्मघण्टापथान् कुर्वन्तीति, त एते साम्प्रदायिकबीजांकुरात्मकाः सम्प्रदायवृक्षापूरकाः संस्कृतवाङ्मयं महासागरमालोडयन्ति महामधुरममृतम् प्रमार्गय्य बद्धान् पाययन्ति, एते उद्धारका भवन्ति, संस्कृतविद्यातत्त्वनिध्युद्गमयिता नूतनतत्त्वनिधिमार्गयिता ज्ञानदुर्बलेभ्यश्च प्रदाता न्यायतर्कसुवर्णमीमांसारजतवेदान्तताम्रव्याकरणधातुवालुकासांख्यपित्तलयोगकांस्यसाहित्यलौहपुराणपारदादिषु शोधकक्षारधीभिः शुद्धिकृत् कारुवरोऽयं सर्वशास्त्रप्रवीणः सर्वशास्त्रीयकलाविज्ञः शास्त्रगर्भपतितप्रामाण्यख्यातिशक्तिवादादिषु प्रवीणतम आविष्कारनिष्णातः परिष्काररमणः स्फुटतादिवाकरः बोधतृप्तिशशधरो विषयविभागतारागणो लेखनविन्यासगणधरोऽध्यापनविधानव्यासप्रकरो व्याख्यानविधानवाचस्पतिर्भाषाविवरणसारस्वतो ग्रन्थप्रबन्धप्रग्रथनमहोशनाद्वैपायनो यज्ञानुष्ठानसुब्रह्मण्यो विज्ञानविस्तारविष्णववतारस्वरूपो वैराग्याधानविश्वेश्वरो भक्तिमूर्ति श्रीस्वरूपो भगवानयं कश्चिदवतारविशेषो भाति विद्यानिधिर्वाङ्मयमहावारिधिः, व्याकरणे काव्ये पुराणे सांख्ये योगे मीमांसायां वेदान्ते न्याये तर्के परिष्कारे शास्त्रार्थे नवोन्मेषे नवाऽऽविष्कारेऽप्रतिहतगतिको भगवानिव भगवान् कश्चिदिति ब्रह्माण्डकृतिभिर्भगवानिव शास्त्रकृतिभिरयं विदेशेऽपि सर्वदेशिकगुरुर्महेश्वरः स्वयमिव विदुषां च मम च प्रतिभाति, प्रमीतश्च तथैवाऽध्यापनसमये तदीयान् ग्रन्थानादायाऽध्यापयामि, वैचित्र्यं तु तत्र स्पष्टीकृतमुपादीयते, सरलतयाऽनुपादानं यत् चिरायते तदपि तदीयपंक्तिवाचनेन स्वयं बुद्धावारोहति स्पष्टं भाति विविच्यते च सम्यग् अवगतं भवति, सम्यक् चिन्तामणिसमा अस्य भगवतो ग्रन्थाः, यः साक्षी स एवाऽयमिति निश्चयो भवति, साक्षिणं विना धीप्रकाशं कः कुर्यात् । तस्मात् भारतभूमौ जगदात्मा सारस्वतात्मा व्यासात्मा देवात्मा भगवदंशो विद्यते श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमूर्तिरिति तदर्थमिदं मम कृतिरभिनन्दनमलमिति संस्मृत्य संस्तुत्य नमस्कृत्य प्रक्षमय्याऽऽत्मन्यधिसंस्थाप्य विरमामि ।

द्वैपायनव्यासोत्तर व्यासमूर्ति श्रीस्वामीजी साक्षात् व्यासजी !

पण्डितसूरचैतन्य, न्यायतर्कदर्शनरत्न
गुंटुकल (मद्रास)

संक्षिप्त-तनुक विद्याओं की गहनता को झेलने के पात्र न रहने पर कालबल से जिस प्रकार के पात्र जनता देखी जाती हो उनके लिये मेधानुसार उनसे धारण हो सके उस रूप में उन्हीं प्राचीन विद्याओं का सरल देववाणी में रूपक द्वारा या सरल आनुपूर्वी द्वारा सरल पद्य गद्य द्वारा समझाने का यत्न परायण होना व्यास देवों का कार्य है, वेदमन्त्र सहस्रशाखाओं की अनवगम्य आर्थिक कठिनाईयों को दूर कर सरलता में ग्रथन विभाजन आदि वेदों का चार भाग श्रीकृष्णद्वैपायन पाराशर व्यासजी ने किया, चार शिष्यों को ऋग् यजुः अथर्व साम नाम से पढ़ाये, शिष्यों ने अपनी मेधानुसार भावि शिष्य वर्ग को लक्ष्य में लेकर और विशेष सरलता कर दी, कर्मकाण्ड के मन्त्र शास्त्र रूप में सरल संस्कृत में व्याख्या के साथ एकत्रित किये कल्प सूत्र बनाये काण्डिकाएँ अलक-अलक कर दीं, भगवान् नारायण विष्णु रुद्र इन्द्र देवीयाँ आदिक के स्तोत्र स्तोम साम विभिन्न का भी एक संगठन सामवेद रूप में किया उस पर ऋषिओं ने अनेक स्तोत्र बनाये गाये, शुक्ल यजुर्वेद कृष्ण यजुर्वेद ऋग्वेद भी अलायदे एकत्रित कर दिये, उनका सरल भाष्य प्रचार भी सरलसंस्कृत व्याख्याओं के साथ समयानुसार हुआ, इनका अध्ययन मुख्य था, धीरे-धीरे क्षीणबुद्धि, स्वल्पमेधावी रटनाधार यादगीरी वाले छात्र होने से और सरलताएँ रचनी पड़ी, जो कि आख्यानरूपों में महाभारत बनाया तथा वेदों के रूपक इतिहासों के लिये पुराणसंहिताएँ बनायी गईं, इनके एक और अनेक व्यास हुए हैं, स्मृतिशास्त्रों के मुनि लोग अनेक हुए, दर्शनशास्त्रों के रचयितार अनेक हुए, षट्शास्त्र पर वाचस्पति ने टीकाएँ लिखीं, वेद का पाण्डित्य, अंगों का पाण्डित्य, आगमों का वाण्डित्य, स्मृतिओं का पाण्डित्य, संहिताओं का पाण्डित्य, इतिहासों का पाण्डित्य, पुराणों का पाण्डित्य जिनमें हों, वह एक पण्डित व्यक्ति यदि मिले तो वह व्यासता के योग्य इस युग में है, यह युग विस्तृत विद्यावाला है, वेद की सहस्रशाखाओं से भी अधिकशाखाओं में आज ज्ञान विज्ञानों के विकास हो गये हैं, धनुर्विद्या का विकास इतना हुआ है कि देश विदेश में गुप्त विविध शस्त्र उपजाये जाते हैं, इनका विज्ञान १००, २०० शाखाओं में विस्तृत हो गया जान पड़ता है, यन्त्रविद्याएँ, मशीनरी विद्याएँ, वाहन विद्याएँ जल-स्थल आकाशी वाहन यान विद्याएँ १००, २००, प्रकार की हो गई हैं, रसायन औषध इन्जेक्शन ऑपरेशन शारीर प्रत्येक अंग की विद्याएँ तो २००, ३००, प्रकार से भी अधिक हो गईं जान पड़ती हैं, खेती-बाड़ी की उत्पादन विद्याएँ १००, २००, प्रकार की हो गईं, विद्युद्विद्याएँ उनके विस्तार साधन साध्य वशता प्रकाशता, फोटो लेना यन्त्र चलाना, बड़ाका करना आदि बीजली की विद्याएँ भी १००, २००, प्रकार की हो गई, धातुविद्याएँ, वस्तुविद्याएँ, फरनीचरविद्याएँ, बरबखरीविद्याएँ भी १००, २०० प्रकार की हो गईं, लश्करीविद्याएँ, कलाएँ, कारीगरीयाँ १००, २०० प्रकार की हो गईं, पोस्ट तार, वायरलेस, फोनोग्राफ, आकाशवाणी, रेडियोरीति, टेलीफोन, दूरदर्शन, दूरश्रवण आदिक विद्याएँ भी १००, २०० प्रकार की हो गईं, ट्रान्समिटर, स्टेशनविद्याएँ भी बढ़ती ही जा रही हैं, कोर्ट कायदे राजनीति आदि का तो असंख्य कायदे विद्याएँ हो गई हैं, भौतिकविद्याएँ जादूविद्याएँ तथा कर्मकाण्ड अनुष्ठानविद्याएँ, शास्त्रविद्याएँ

आध्यात्मिकविद्याएँ भी हदपार चली जारही हैं, बड़े-बड़े सेतु पूल आदि विद्याएँ सरघस नाट्यविद्याएँ तथा एनजिनीयरींग शहर नगर भवन प्रासाद गृह मन्दिर महामार्ग बहुलगृह शतभूमिक महाभवन इन्द्रभवन जलयान आदिक विद्याएँ १००, २००, प्रकार की हो गई हैं, रेल्वे विद्याएँ का पार नहीं है, ये सब एक वेद में एकत्रित कर के गीनें तो अयुतशाख या लक्षशाख वेद वर्तमान युग में विद्यमान हो हैं, इनके विकासक व्यासस्थानापन्न हैं, विकासक निष्पादक उद्भावक संयोजक आविष्कारक उत्पादक आदि उनके मूल व्यास कहायँगे। गहने बासण स्टेशनरी करियाणा कापड आदिक के भी महामील हो गये हैं, गेस का जलना बाष्प का उपयोग लेना, वायुविज्ञान, ऋतु विज्ञान, शकुन विज्ञान, स्वाप्न विज्ञान ग्रह नक्षत्र विज्ञान ज्योतिष गति विज्ञान रेखारमलविज्ञान आदि भी असंख्यरीति में चल रहे हैं, इनके वेद भी हजारन शाखा वाले हो गये हैं, अगर देखा जाय सोचा जाय तो वर्तमान समय में व्यासों से दुनिया भर गयी मालूम होती हैं। मगर वेदव्यास की प्रणाली में आज पाँच हजार वर्ष जाने पर वेद शास्त्र सूत्र पुराण इतिहास स्मृति संहिता आदि का पृथक् ग्रन्थ रचने पर भी एक श्वेतायनव्यासने लक्ष्मीनारायणसंहिता एक लाख छब्बीश हजार श्लोकों का ग्रन्थ एक सभी विद्याओं का खजाना रूप बनाया, जिनकी संस्कृत कलम अविचल चलती ही रहती है, भारत के लिये बड़ा भारी साहित्य दिया, यह देनेवाला दिव्यमूर्ति पुरुषावतार श्वेतायन व्यास है, इनमें कितनी विद्याएँ भरी हैं थाह नहीं मिलता, अनुभव करनेवाले उनके परिचय में आने वाले विद्वान् भी मुक्तकण्ठ से ही कहते हैं ये स्वामीजी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी तो पूर्वजन्म के विद्वान् व्यास हैं। अधिक क्या लिखें, अन्य व्यास नहीं किन्तु कृष्णद्वैपायन व्यासजी के सच्चे अवतारी व्यास उनकी कोटिके व्यास श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी श्रीश्वेतायन व्यास हैं।

इनके विज्ञान अन्य सभी व्यासों के विज्ञानों को व्याप्त हो कर प्रकाश देते हैं, विजय पाते हैं, स्वयं स्वामीजी भी अंशावतार में दिखते हैं, अवतारों के अंक प्रत्यक्ष पाये जाते हैं। सृष्टि के विज्ञान परमात्मा में, सम्पूर्ण होते ही हैं, उनसे वेद प्राप्त करने पर अपर वासुदेव सृष्टि के प्रथम व्यास हुए, उनसे अनिरुद्ध सृष्टि विज्ञान के व्यास हुए, उसके बाद ब्रह्माजी व्यास हुए, उसके बाद भृगु व्यास हुए, अंगिरा व्यास हुए, श्वेतायन व्यास हुए, कई व्यासों के बाद कृष्णद्वैपायन व्यास हुए, इनके शिष्य ऋषि मुनि आचार्य सद्गुरु सन्त त्यागी गृही अनेक हुए, सभी ने श्रीव्यासजी की परम्परा प्रणाली संभाली है, विद्याओं के लिये व्यास होते हैं, ब्रह्मविद्याओं के व्यास श्रेष्ठ हैं, मोक्ष के लिये तात्पर्य वाले व्यासों के उपदेश प्रथम आरात् उपकारक या सन्निपत्य उपकारक होते ही हैं, अमोक्ष के लिये जो कुछ लोकसंग्राह्यार्थ परोपकार करना लिखना पड़ता है, सो तो मार्ग साफसूफीसा माना जाता है, कृष्णद्वैपायन व्यासजी ने गंगाजी के तीर एकान्त बदरी वन में बैठ कर युक्त रूप में या युञ्जान योगी रूप में अपने को एकाग्रता में स्थिरता करवा के लेखिनी के व्यापार चलाये, कई आख्यान पुराण रच दिये, वायुपुराण में अन्त में थकावट उदासीनता असन्तोष अकृतमिव अपने हृदय में भास ने लगने पर भगवन्मात्र में संयमी होने के लिये दिव्य परमपुरुष से उपदेष्टाद्वारा सत्यतत्त्व प्राप्त किया, और श्रीकृष्णनारायण के ही गुण गाये तब शान्ति हुई, अतः सच्चे व्यास वही माने जाते हैं, अपनीं व्यासता में परमपुरुष के गुणगान से स्व—पर सभी को आत्यन्तिक शान्ति मिले। श्रीलक्ष्मीनारायण संहिता के व्यास श्रीकृष्ण वल्लभाचार्यजी ने श्री नरनारायण श्री लक्ष्मीनारायण श्री कृष्णनारायण श्रीपुरुषोत्तमनारायण के ही संवाद में परमेश्वर मुक्त अवतार अवतारीणीयाँ मुक्तानीयां पार्षद पार्षदानीयाँ ईश्वर ईश्वराणीयाँ ऋषि ऋषियाणींयाँ देव देवानियाँ पितृगण पित्राणीयाँ सन्त साध्वीयाँ भक्त भक्तानीयाँ तीर्थ तीर्थानीयाँ सेवक सेवकानीयाँ गीताएँ सरस्वतीयाँ शारदाएँ ब्राह्मीयां परीयाँ अप्सराएँ त्यागिनीयां योगिनीयाँ वैष्णव शैव वैष्णवानीयाँ शैवीयाँ माताएँ शक्तियाँ कुलदेव कुलदेवीयाँ यज्ञमूर्तियाँ

वंशसृष्टियाँ खगोल भूगोल अन्यगोल तपस्वी तापसियाँ गण गणिकाएँ भृत्य भृत्यानीयाँ बाल-बलिकाएँ प्रतिव्रताएँ माताएँ पिताजन प्रजापति लोकपाल दिक्पाल ग्रह नक्षत्र तारकाएँ मानससृष्टि दृष्टिसृष्टि स्पर्श-सृष्टि संयोगसृष्टियाँ द्रव्य गुण सृष्टियाँ स्वर्ग मर्त्य पातालादि सृष्टियाँ काश्यपी दाक्षी सृष्टियाँ आर्षी पैतृकी सृष्टियाँ चल अचल छूट्टेपैर भूपाद सृष्टियाँ भौतिक जडसृष्टियाँ बन्धनों के मोक्ष के वृत्तान्त देह दैहिक सृष्टियाँ जीवन मुक्त विदेह मुक्त ईशमुक्त ब्रह्ममुक्तस्थितियां उद्भव विकास विलयन की दार्शनिक पद्धतियाँ मानवीय कर्म काण्डों की पद्धतियाँ देवाऽऽवाहनपूजन प्रतिष्ठानादिपद्धतियाँ जाप साधना तहेवार व्रत तप संयम योग की रीतियाँ ज्ञान विज्ञान प्रज्ञान ब्रह्मज्ञान का विवरण अर्थशास्त्र भूस्तरशास्त्र मिश्रण धातवीय शास्त्र सत्य असत्य न्याय नियम पद्धतियाँ शब्दशास्त्र गीतिवाद्य कथा नाट्य शृंगार अलंकार शास्त्र पाकशास्त्र रत्नपरीक्षाशास्त्र देश विदेश रंग बेरंग विभिन्न स्वभाव शास्त्र पशुपक्षि शिक्षणशास्त्र स्वप्न शकुन अपशकुन मंगल विघ्नविज्ञान शास्त्र शक्तिसामर्थ्य करंट गेरंटी शास्त्र हास्यविनोद विहार वैभव भोग विलास गप्प गाली तेहवार उत्सव महोत्सव, मेला सभा मन्त्रणा-व्यूह विघ्ननिवारणशास्त्र, आगमचेती महातीर्थ प्रभुकृपा भगवदंगीकार, भागवती सन्ततिशास्त्र, उपासना भक्ति प्रकार आदिक अनेक विद्याओं का समावेश श्रीलक्ष्मीनारायण संहिता में है, भगवान् का सम्वाद भगवान कर पाते हैं, भगवान् कोई भी अवतार में सर्वज्ञ ही है, सभी ज्ञान-विज्ञान, वृत्तान्त; भूत-वर्तमान, भावी होनारतें लिख सकते हैं, श्रीकृष्ण वल्लभाचार्यजी महाराज में ज्ञान-विज्ञान महासागर भरा है, सर्वज्ञ कल्पता होने से नये या प्राचीनतम व्यास भगवदवतार रूप विद्यमान मालूम होते हैं, प्रतिबिम्ब या कृपावाद में मानवों में अंश कला आवेश विभूति स्वरूप रूप आदिक घटता ही है, विशेषता से विशिष्ट व्यक्तिता मान्य होती है। श्री स्वामीजी एक भारत के लिये देन हैं, संसार के लिये भी देन हैं। अभिनन्दन उनके लिये तो देन ही हैं, प्रतिफल देना ही पड़ेगा, मुझे श्रीस्वामीजी का दर्शन काशीजी में हुआ तभी से दैवी अंश का निश्चय हो गया, इनके अभिनन्दन में आर्टिकल लिखना मिला,-सो मेरा सौभाग्य मानता हूँ।

स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी का जीवन दर्शन

पं० रामशरण त्रिवेदी, दर्शनाचार्य

युनिवर्सिटी, बेंगलोर

सभी के जीवन में से बोध पाठ मिलता है, जीवन सात्त्विक राजस तामस तीन प्रकार का है, स्वार्थभरा व परोपकार भरा होता है, स्वार्थभरा संसारिओं का, परोपकारभरा त्यागी सन्तों का जीवन होता है, प्रभु ने वृक्षवल्ली परोपकारार्थ ही सर्जे हैं, चोर डाकू लुटेरे का जीवन स्वार्थ भरा ही होता है, समय पलटने से हृदय पलटने से भी परोपकार भरा हो जाता है, वाल्मीक को वैसा ही हुआ, पहले सभी अहंममतापक्षपातवाले वाल्मीक ही है, पीछे से बोध होने पर सभी कोई मुरध्वज शिबि व हरिश्चन्द्र गोपीचन्द भरथरी बुद्ध तोण्डमान् के समान परोपकारी सन्त हो जाते हैं, ये अपने जीवन में ही अपने को देखने चाहते थे कि मैं अपने लिये नही हूँ परके लिये हूँ ईश्वर के लिये हूँ, वृक्षवल्ली पर के लिये हैं सन्त का जीवन पर के लिये होता है, कल्पना कल्पित चिन्तामणि देता है सुगन्ध चन्दन देता है मेघ वृष्टि देता है सूर्य प्रकाश देता है बड़े लोक आश्वासन देते हैं दानेश्री दान देते हैं ज्ञानेश्री ज्ञान देते हैं भक्तजन सर्व समर्पित करते हैं, दास सब कुछ दे देते हैं, अपना जीवन का यह अनुसन्धान रहना चाहिये—मैं सभी के लिये उपयोगी होउ, परार्थ उपयोग का जीवन दर्शन उत्तम है स्वार्थ का उपयोग जीवन दर्शन नहीं कहाता, यहाँ एक बात सभी को स्पष्ट समझाती है कि—अन्यत्र जो जो निर्व्याज परोपकार ही है वह मेरे में कैसे आवे, मेरे में आना यह स्वार्थ तो है, मगर वह सद्गुणोपार्जन का स्वार्थ है, अगर निज में गुणोपार्जन हो जाय गुण दर्शन हो जाय गुणनिवास देखा जाय, उनका उपयोग परार्थ के लिये किया जाय तो वह प्रथम का स्वार्थ भी परार्थ में पर्यवसित हो जाने से जीवन दर्शन में गीने जाते हैं, बालक का भोजन स्वार्थ के लिये होता है मगर सनकादिक बालको की भिक्षा पर कल्याण के लिये होती है, नारद जी का नारायण जाप स्वार्थ के लिये तो है परन्तु पर कल्याण के लिये ज्यादातर है, राजा का शिक्षण विद्याशिक्षण लश्करीशिक्षण आदि स्वार्थ के लिये तो है किन्तु प्रजा को निज जीवन के अच्छे दर्शन के लिये है, बालक का अभ्यास भविष्य के स्वार्थ के लिये है तो भी निज-परायत जनता के जीवन के अच्छे दर्शन के लिये भी है, सन्त दीक्षा दुःख दूर करने के लिये है किन्तु सभी के दुःख दूर करने के अच्छे दर्शन के लिये है, आचार्यों के पट्टाभिषेक स्वार्थ के रूप में होते हुए भी जनता को सदाचार में स्थान के अच्छे दर्शन के लिये हैं। जिज्ञासुओं की जिज्ञासाएँ स्वार्थ भरी होती हैं किन्तु वे अन्य के प्रति वितरण करने के लिये होती है, व्यास जी ने 'अथाऽतो ब्रह्मजिज्ञासा' लिखी, जैमिनि ने 'अथातो धर्म जिज्ञासा' लिखी, कपिल जी ने 'जिज्ञासा तदभिघातके हेतौ' लिखी 'पतञ्जलि ने—'अथ योगाऽनुशासनं' लिखा, तार्किकोने 'अथातो धर्म व्याख्यास्यामः' लिखा, शाण्डिल्य नारद आदि ने भक्तिजिज्ञासाएँ लिखी, इन लेखों में उनके ज्ञानोपार्जनरूप स्वार्थ सूचित किया, किन्तु ब्रह्म धर्म व्यक्ताऽव्यक्तज्ञविज्ञान अष्टांगयोगसिद्धि पदार्थ विज्ञान अभ्युदय व निःश्रेयस के साधनों का ज्ञान भक्तिस्वरूप प्रकारों के विज्ञान आदि आदि का उपार्जन पश्चात् पर को देने के लिये होते हैं, स्व-स्वेतर के अच्छे दर्शन के लिये हो जाते हैं, अनिष्ट मिटाने के लिये सन्त जन निज व्यक्तित्व के अच्छे दर्शन चाहते हैं, विल्व मंगल ने निज के अच्छे दर्शन के लिये नेत्रों में सूयें परो दियें, भीष्म ने निज के अच्छे दर्शन के लिये लिंग को

काट डाला, शंकर ने निज के अच्छे दर्शन के लिये काम को जला दिया, सती ने अच्छे दर्शन के लिये शरीर जला डाला, गोपिकाओं ने अच्छे दर्शन के लिये श्री कृष्ण को अपना लिया, नरनारायण ने अच्छे दर्शन के लिये शील तप स्वीकारा, प्रह्लाद ने अच्छे दर्शन के लिये नारायण जाप सीख लिया, बलि ने अच्छे दर्शन के लिये सर्वार्पण कर दिया, जनक ने अच्छे दर्शन के लिये सदा प्रति दिन सन्त मुनिओं का सत्संग किया, मीरा ने अच्छे दर्शन के लिये सन्त में भगवान की सेवा की, गरुड नन्दी शेष आदि ने अच्छे दर्शन के लिये आत्मनिवेदन किया, इत्यादि स्वार्थ में फलतः परार्थ ही निज विज्ञान में दृष्ट होता हैं, दैवी चमत्कारी जनों का प्रकट होना ही समझ पूर्वक बड़े भारी कार्य के लिये होता है। समुद्र मथन समय में भगवान् मन्दराचल को धारणार्थ कच्छप हुए, देवों को अमृत पाने के लिये मोहिनी भी हुए, ब्रह्मा भगवान को पहचानने के लिये वत्सग्वाल बालकों का चोर हुआ, शिष्य विद्या प्राप्ति के लिये गुरु शुश्रूषा करते हैं, पत्नी सर्वस्वलाभ के लिये पति सेवा करती है, मुमुक्षुजीव स्वमोक्ष के लिये दीक्षित होते हैं, अज्ञान मिटाने के लिये विद्या पढ़ते हैं, कुसंग मिटाने के लिये सत्संग कराते हैं, दुर्व्यसन मिटाने के लिये उपदेश व आदेश देते हैं, निर्माननिर्मोहादि स्थिति के दर्शनार्थ दीक्षा चिह्न सहित विचरते हैं, परोपकार शिक्षण अनुवर्तन के लिये पालनग्रहणार्थ स्वयं पालते हैं, अन्य से पलवाते हैं, स्वयं निर्लिप्त निरीह रहते हैं अन्य को भी वैसा बनाते हैं। सन्तों का व्यवहार धर्माचरण विद्याचरण सन्न्यासाचरण वनविचरण निर्जननिवसन सज्जनसमागम दुर्जनपरित्यजन दुःस्वभावनिरसन दुष्कर्मपरित्यजन दोषपरिहरण सर्वसद्गुणसमाहरण राजसतामसपरिवर्तन सात्त्विकतासमादरण शमदमतितिक्षोपरमाभिलसन क्लेशद्वेष-विनाशन सुखानन्दविरतिसमरमण आदि आदि सद्गुण में ही होते हैं, सन्त की तनु विशाल ज्ञानमूर्तता में परिणत रहती है, सन्त की क्रियायें निष्काम निर्गुणता में ही होती हैं, सन्त का मानस साक्षि चैतन्य क्षेत्र में ही व्याप्त रहता है, सन्त का अहंभाव ब्रह्म में ही सफल होता रहता है, सन्त का चिन्तनमोक्ष-चिन्तनरूप ही होता है, सन्त की बुद्धि आत्मसन्त में पर्याप्त रहती है, सन्त की आत्मा परमात्मा में जूटी रहती है, सन्त स्वयं परसन्तस्वरूप में अपना दर्शन करते हैं, सभी तत्त्ववेत्ता विद्वान् इस प्रकार आविद्यक सांवरिक मायिक तत्त्वों को निजत्व में से मिटा कर ब्रह्मत्व में सटा देते हैं, मैं नहीं हूँ पर ब्रह्म है, मन नहीं हूँ ब्रह्म है, इन्द्रिय नहीं हूँ आत्मा है, शरीर नही हूँ ईश्वर विभूतियाँ हैं, तुम नहीं हो ओं है, यह वह नहीं हैं सती समष्टि है, बालपने के क्रीडन भाव श्रीकृष्ण में हैं, युवानपने के रमणभाव ब्रह्मशक्तियाँ में है, वृद्धपने के पराश्रय भाव परमात्मा में हैं, और विलीनभाव मुक्ति स्थिति में हैं, इस प्रकार का दर्शन सन्त के जीवन में सुदृढ ही वरतता है, जीवन में ऐसी ही स्थितियों के व फिरती अवस्थाओं के परात्ममिलित दर्शन करते हैं, दुराचारी आत्मा भी अनन्य भाग् होके यदि भगवान् को भजता है तो वह साधु आत्मा ही है क्योंकि साधु को जो करना चाहिए वह कर रहा है, जब आत्म दर्शन के ज्ञाता होके निज को देखने की दृष्टि वाला होता है तब पुण्य पापों को छोड़ कर सर्वत्र दिव्य स्वरूप परमात्मा को देखता हुआ मायिक दृष्टि से छूट गया व ब्रह्म स्वरूप में पहुँचता है। जीवन का फल क्षुद्र कामनाएँ नहीं है, वे कुटुम्ब को वफादार रहना समाज को अनुकूल रहना देश का अभ्युदय करना संस्कारों को यथोचित चलाना धार्मिक प्रणालियों को निभाना परोपकारी कार्य करते रहना निराश्रित दुःखिओं का दुःख मिटाना, अपेक्षित को देना, विद्या पढ़ना कलाएँ सीखना, होशियार होना, समूह को प्रिय होना, नीति को अनुसरना, गरीबों को मदद करना, दैवी कामकाज करना कराना, पाप दृष्टियां जहाँ जहाँ भासे वहाँ सर्वत्र पुण्य दृष्टियों की अनुकूलताएँ सजाना, अतिवृष्टि अनावृष्टि आदि इतियों में आश्रय देके लोगों को बचाना, कमाई में से खैरीयात करना, अनाथों को पोषना, अनाधारों को आधार देना, वचन दान में सत्य पालना, लालचू घूसखोर नहीं होना, परमार्थ में वृति रखना, शोक मोह

ऊर्मिओं को जितना, उद्विग्न नहीं रहना, प्रसन्न मानस में विचरना, कार्यारम्भ में मौन रखना, कार्य फल में वावदूक होना, विभाग करके उपयोग लेना, बुरी वृत्तियों को मारना, अनाचरण में नहीं बहना, सदाचार में झेलना, ईश्वरीय तत्त्वों में आत्मवत् मित्रवत् निजीयवत् रहना, अज्ञान को हटाना, सुख-पुण्यशालि में मित्र दृष्टि करना दुःखी अपुण्य वाले में औदासीन्य या तो सुपुण्यानुग्रह करना, अनुपयुक्त के पीछे नहीं पड़ना। कबीर ने ब्रह्म में वाणी समर्पित किया वैसा करना, रामकृष्णपरमहंस ने ज्ञान समर्पण किया वैसा करना, ईशु ने देह समर्पण किया वैसा करना, श्रवण ने माँ बाप की सेवा की वैसा करना, रामचन्द्र ने पितृ वचन को वेद वाक्य माना वैसा करना, इन्द्रद्युम्न ने जगन्नाथ जी स्थापित किये हृदयमन्दिर में वैसा करना, भीलडी ने बेर दे दिये वैसा करना, रुक्मिणी स्वयं समर्पित हो गयी वैसा करना, सन्त का जीवन उक्त दर्शन में तृप्तिप्रद होना चाहिए। श्रीकृष्णवल्लभाचार्यस्वामी श्री अपने को छोटापन से ही शरीर में अनास्थ रहे, इन्द्रियों के वेग में नहीं बहे, मानस के प्रवाह में नहीं डूबे, अहंममता के संसार में नहीं चपके, अनात्मीयविज्ञान में नहीं घसड़ाये, परमात्मीय प्रकाश में आनन्द मानते थे, समझने लगे उम्मर लायक होने पहिले ही सन्तता ले ली, विरक्तता बढ़ने लगी, विद्या प्रियता उत्कृष्टा होने लगी, आत्मचिन्तन में चित्त नदी चलने लगी, परमात्मभक्तिसागर में छीपसत्सग में श्रीवृष्टि किम्मती मोती उपजाने लगी, जो कुछ करते थे आध्यात्मिक का लक्ष्य नहीं चूकते थे, कुटुम्ब परिवार आसन अखाड़ा बखेड़ा देश परिचित जन भय सहाय आदि जन्मक्षेत्रीयभूमियों में छोड़कर दूर का काशी क्षेत्र में अविरत निवास किया विद्याएँ प्राप्त की, उजाला कमाया, अन्धेरा हटाया, चिन्तामणि मिलाया, भारत को अनेक ग्रन्थमणि समर्पित किया, जिनके उजाले अनेक संस्कारी चलकते हो जायँगे, श्रीस्वामीजी ने वैष्णव स्थिति होने पर भी अवधूत स्थिति का तिरस्कार नहीं किया है व्यवहार स्थिति में रहते हुए भी पारमार्थिक स्थिति में सदा स्नातक ही रहे हैं, निष्क्रियता गमती बात होने पर भी परोपकारी आत्मोपकारी देशोपकारी लोकोपकारी सक्रियता सतत चालू रखी है। अनेक उपकारों में निज जीवन समर्पित करते समय सार्थक कर लेते हैं, निज व्यक्तित्व साधुत्व योगित्व महापुरुषत्वं दैवित्व दर्शन में समागमी व्यक्तिओं को भी दिव्य कर्तव्य वफादारी जीवन-दर्शन कराते हैं। श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजीमहाराज जीवन दर्शन को भी दर्शनीय सन्त जीवनदर्शन के अभिनन्दन पात्र हैं।

पू० स्वामी श्री भारत के महान् तत्त्वचिन्तक

पं० कुमारदत्त कानडी, वेदमूर्ति महाचार्य

कोलंबो, सीलोन

भारत भूमि आध्यात्मिक तत्त्व चिन्तकों की सागरखनि है, कोने-कोने में तत्त्वचिन्तक जागृत रखते आये हैं, भारत में तत्त्वचिन्तक बत्तीस व्यास ईश्वराऽवतार हुए हैं, सभी ने परमेश्वर ईश्वर आत्मा माया तत्त्व सृष्टि ज्ञान साधन व मोक्ष का चिन्तन किया है, वैवस्वतमनु से लेकर आज दिन तक में माहेश्वर योगप्रदर्शित ३२ व्यास तत्त्वचिन्तक हुए हैं, हिमाचल के छागलशिखर में श्वेतायन व्यास हुये, इनके श्वेत शिख श्वेताश्व श्वेतलोहित नाम के वेदपारग चार शिष्य हुए थे। द्वितीय सत्यनामा व्यास प्रजापति के अवतार हुए, उनके दुन्दुभि शतरूप ऋचीक केतुमान् नामक चार शिष्य योगज्ञानी सनातन ब्रह्मज्ञानी हुए थे। तृतीय भार्गव नामक व्यास हुए, उनके विशोक विकेश विशाप शापनाशन नामक चार शिष्य योगी तत्त्व-चिन्तक हुए थे। चतुर्थ अंगिरा नामक व्यास हुए, उनके सुमुख दुर्मुख दुर्दम दुरतिक्रम नामक चार शिष्य हुए थे। पञ्चम सवितानामक व्यास हुए, उनके कंक राज्य में सन सनन्दन सनातन ऋभु सनत्कुमार तत्त्व-चिन्तक पाँच शिष्य हुए थे। षष्ठ लोकाक्षी नामक व्यास हुए, उनके सुधामा विरज शंख पाद्रव चार शिष्य हुए थे। सप्तम शतक्रतु विभुनामक व्यास हुए, जैगीषव्य ऋषि हुआ, और सारस्वत सुमेध वसुवाह सुवाहन चार तत्त्वचिन्तक शिष्य हुए थे। अष्टम वसिष्ठनामक व्यास हुए, तब कपिल आसुरि पञ्चशिख वाग्बली नाम के ध्यानी तत्त्व ज्ञानी शिष्य हुए थे। नवम सारस्वत नामक व्यास हुए, तब ऋषभ के अंश पराशर गार्ग्य भार्गव अंगिरा नाम के वेदपारग तपोबलोत्कृष्ट शापानुग्रहकोविद योगी तपस्वी ध्यानी तत्त्ववेत्ता चार शिष्य हुए थे। दशम त्रिधामा नामक व्यास हुए, भृगुशिखर में हिमगिरि में बलबन्धु निरमित्र केतुशृङ्ग तपोधन नामक ध्यानयोगी तत्त्वचिन्तक चार शिष्य हुए थे। एकादशम गंगाद्वार में तिष्ठद्व्यास हुए, उग्रा महर्षि, और लम्बोदर लम्ब लम्बाक्ष लम्बकेश नामक माहेश्वर तत्त्व योगचिन्तक चार शिष्य हुए थे। द्वादशम शततेजा कवि व्यास हुए, अत्रि महर्षि, तथा हैमकवन में भस्मयोगी सर्वज्ञ समबुद्धि साध्य सर्वज्ञ शिष्य हुए थे। त्रयोदशम धर्म स्वयं नारायण नामक व्यास हुए, वालि ऋषि, तथा गन्धमादन में वालखिल्याश्रम में तपोधन ऊर्ध्वरेता योगी सुधामा काश्यप विसिष्ठ विरजा नामक शिष्य हुए थे। चतुर्दशम सुरक्षपर्याय व्यास हुए, अंगिरावंश में गौतम तत्त्वचिन्तक हुए, गौतम वन में अत्रि उग्रतपा श्रावण स्रविष्ठक नामक शिष्य हुए थे। पञ्चदशम-आरुणि नामक व्यास हुए, तदा पारमेश्वर अस्त्रावतार वेदशिरा महर्षि हिमवत्पृष्ठ में वेदज्ञ महर्षि हुए, सरस्वती शिखर में कुणि कुणिबाहु कुशरीर कुनेत्रक नाम के तपसी शिष्य हुए थे, वे बसिष्ठ ऊर्ध्वरेतस तत्त्वचिन्तक थे। षोडशम संजय नामक व्यास हुए, गोकर्ण महर्षि गोकर्णवन में हुए, उनके काश्यप उशना च्यवन बृहस्पति नामक चार शिष्य तत्त्वचिन्तक हुए थे। सप्तदशम देवकृतञ्जय व्यास हुए, गुहावासी महर्षि हिमालय के महातुंग शिखर में हुए, उसका महालय सिद्धक्षेत्रारण्य नाम हुआ, वहाँ ब्रह्मज्ञ योगी महात्मा उतथ्य वामदेव महाकाल महालय नामक मुख्य तत्त्व-चिन्तक शिष्य हुए, उनके ध्यान साधक शतसाहस्र (एक लाख) ध्यानयुञ्जान योगी महेश्वरकृपापात्र हुए थे। शुद्धबुद्धि होने को महालय में जाने वाला एकईस पेढी को तारेगा। अष्टादशम ऋतञ्जय नामक व्यास हुए, हिमाचल के शिखण्डी शिखर में ऋषिसिद्धि निषेवित शिखण्डी शिखर में शिखण्डी नामक तत्त्व-

वेत्ता महर्षि हुए, उनके वाचस्रवा ऋचीक शावाश्व दृढव्रत नामक वेदपारग चार शिष्य हुए थे। एकोन-विंशम—भरद्वाज व्यास हुए, जटामाली महर्षि जटायुशिखर में हिमाचल में हुए, तब हिरण्यनामा कौशिल्य काक्षीवस कुथुमिनामक ऊर्ध्वरेता योगी ईश्वरशक्ति शिष्य हुए थे। विंशम—वाचःश्रवा व्यास हुए, अट्टहास महर्षि हुए, हिमाद्रिके सिद्धचारणसेवित अट्टहासशिखर में ध्यानी व्रती तत्त्ववेत्ता युक्तयोगी—सुमन्तु बर्बरी विद्वान् सुबन्धु कुशिकन्धर नामक शिष्य हुए थे। एकविंशम—वाचस्पति स्वयं व्यास हुए, देवदारुवन में दारुक महर्षि हुए, उनके प्लक्ष दाक्षायणि दाल्भ्य केतुमाली वक नामक शिष्य हुए थे, वे ऊर्ध्वरेता महात्मा तत्त्वचिन्तक ध्यानी तपस्वी थे। द्वाविंशम—वाराणसी में शुक्लायन व्यास हुए, लांगली भीमक हलायुध वासव देवगण महर्षि हुए, उनके धार्मिक तुल्यार्चि मधुपिंगाक्ष श्वेतकेतु चित्रक आदि शिष्य हुए थे, वे ब्रह्मभूयिष्ठ ध्यानी थे। त्रयोविंशम—तृणबिन्दुनामा व्यास हुए, कालंजर पर्वत में श्वेतनामा महामुनि हुए, तदा ऊसिज बृहदुक्थ्य देवल कवि असित शिष्य हुए थे। चतुर्विंशम—ऋक्षनामक व्यास हुए, तदा नैमि-षारण्य में त्रिशूली ऋषि हुए, तपस्वी शालिहोत्र अग्निवेश्य युवनाश्व शरद्वसु नामक शिष्य हुए थे। पञ्च-विंशम—वासिष्ठ शक्ति व्यास हुए, तदा मुण्डीश्वर दण्डी कोटीश्वर नगर में ऋषि हुए, तब ऊर्ध्वरेतस छगल कुम्भकर्षा कुम्भक प्रवाहुक शिष्य तत्त्वज्ञानी थे। षड्विंशम—पराशर स्वयं व्यास हुए, पुण्य, रुद्रवट में सहिष्णु ऋषि हुए, तब धार्मिक उलूक वैद्युत शर्वक आश्वलायन शिष्य थे। सप्तविंशम—जातूकर्ण्य व्यास हुए, प्रभासक्षेत्र में सोमशर्मा ब्राह्मण तत्त्ववेत्ता हुआ, तदा अक्षपाद कणाद उलूक वत्स विमलबुद्धि तत्त्व-चिन्तक हुए थे। अष्टाविंशम—पराशरसुत स्वयं विष्णु द्वैपायन व्यास हुए, वासुदेव परमपुरुष कृष्ण भगवान् तत्त्ववेत्ता हुए, मेरुगुहा में नकुली महर्षि हुए, लकुली आदि तत्त्ववेत्ता हुए, तदा कायारोहण क्षेत्र में तपस्वी योगी वेदपारग ऊर्ध्वशीली कुशिक गार्ग्य मित्रक रुष्ट आदि महर्षि हुए थे, स्मृति इतिहास के धर्म विभाग कर्ता महर्षि हुए थे। जैमिनि रोमहर्षण पतञ्जलि वैशम्पायन आदि-आदि शिष्य हुए थे। इन्होंने अनेक प्रकार की वेदविद्याएँ प्रकट की थीं, ब्रह्मविद्याएँ प्रकट की थीं, व्यवहार विद्याएँ तथा मोक्ष विद्याएँ आन्वीक्षिकी विद्याएँ भी प्रकट की थीं, कपिल जी ने सांख्यविद्या प्रकट की श्रीविज्ञानभिक्षु वाचस्पति आदिक ने उनपर विचार किये टीकायें भाष्य लिखें, पंचशिख आसुरि ईश्वरकृष्ण आदिक ने षष्टितन्त्र लिखे, श्रीकृष्ण वल्लभाचार्यजी ने सांख्यपर स्वतन्त्र भाष्य लिखा वाचस्पत्यपर किरणावली लिखी माठर भाष्य पर किरण लिखा, महाभारत का सांख्य निराकार अद्वैतभरा है अविद्या मिटाने का बताते हैं, जब कापिलसांख्य मायापुरुष दोनों को बताते हैं साकार सत्ख्याति सत्कार्य बताते हैं, स्वरूप ख्याति कैवल्य साधन है स्वरूप स्थिति कैवल्य बताते हैं। श्रीकृष्ण वल्लभाचार्य जी ने ईश्वराऽसिद्धेः' 'तदसिद्धेः' 'उपा-सात्रैविध्यादि'त्यादि द्वारा सत्साकार प्राप्य ईश्वरसिद्धि तरफ तत्त्वचिन्तन किया है सेश्वरसांख्यवाद स्थापित किया है। योग दर्शन में पतञ्जलि ने अथवा में चित्तवृत्ति निरोध रक्खा, ईश्वरप्रणिधान भी रक्खा, पुरुषविशेष परमगुरु परमेश्वर जरूर रक्खा, सत्ख्याति समाधि तक साधन तत्त्वसाक्षात्कार मायासंयोग से मुकाना मुक्त होना कैवल्य में रहना जरूर लिखा, स्वरूप प्रतिष्ठा चितिशक्ति मोक्षप्रतिष्ठा कहा। श्रीकृष्ण वल्लभाचार्यजी ने परकायप्रवेशहेतु से परमानसप्रवेशहेतु से सर्व भिन्न तत्त्वों में संयमहेतु से सिद्धियाँ सार्वज्ञ्यादि प्राप्ति के सिद्धान्त से संसारप्रदमायासंगत मोडता है तो मायासंयोग की जगह परमेश्वरप्रणिधानसंयोग दाखल होता ही है रहता ही हैं, व्यापक द्रव्य को संयुक्त पने में रहते होने पर भी संसार नही हैं हेयं हेयसाधनं हानं हानसाधनं में हानं मोक्ष मील गया तो दुःख का अहेतु ईश्वरप्रणिधान व्याप्त संयोग हेयसाधन तो है नहीं ईश्वर प्राप्ति अहेय में अर्थात समाविष्ट हो जाती है तो कालेन अनवच्छेद्यगुरुत्ववाले ईश्वर सगुण सदा शाश्वत एक तत्त्व स्वीकार ही कर लिया तो योगशास्त्र अन्य आत्माओं में सार्वज्ञ्य होना ईश्वरान्वितता होना कैसे सिद्धान्तित नहीं हो सकता, प्रणिधान में आत्मविशिष्ट ईश्वर होते ही है तो

अनुयोगी प्रतियोगी रूप में दोनों का वैशिष्ट्य कहाँ से हठेगा, अतः आत्माओं को ईश्वरसमर्पण में अन्य उपबृंहणो से सत् सगुण साकार सोपासन सेवा सार्वज्ञ्य ध्यानादि भरी मुक्ति कैसे अस्वीकृत हो ? । जब नित्य सर्वज्ञ सगुण दिव्य परमपुरुष साकार स्वीकृत कर लिया तो उनके प्रणिधान से दृश्यसंयोगत्याग मात्र छोटे फल में क्यों चीपके रहना, बड़े फल में तो पहूँच ही गये । इत्यादि योगदर्शन पर भाष्य में सगुणसाकार दिव्यमूर्ति परमात्मा का धारणा ध्यान समाधि से मुक्ति परमात्म प्राप्ति मुक्ति पर तत्त्व विचार किया है । मीमांसा में कर्मकाण्ड से स्वर्ग शाश्वतस्वर्ग भी प्राप्त करते हैं, देवताओं में फल प्रदाता विष्णु व्यापक भगवान है तो अर्थात् प्रभु की ही कर्मकाण्डी उपासना पर्यवसित हो गई, नारायण बलि अन्य श्राद्ध आदि में परमेश्वर का आधार लेना ही पड़ता है, यज्ञमूर्ति नारायण का पूजन करना ही पड़ता है, शब्दब्रह्म पर-ब्रह्मार्थ का बोधक है, अंगो से अंगी ग्राह्य ही है, तो अंगी में पहूँचना अंगी का उपासन करना अन्ततः शाश्वत स्वर्ग में अंगिपास जाना उत्तम फल सिद्ध हो ही जाता है इस प्रकार तत्त्वचिन्ता स्वामी जी ने मीमांसा के सिद्धान्त यथावत् प्रतिपादन करते हुए मीमांसकीय प्रकट होता मर्मीय तत्त्व सिद्धान्त स्वीय मीमांसा लेखन में किये हैं । वेदान्तों में उपनिषदो में पुराणों में तो परमात्मा भरे पड़े हैं, कोई नहीं हटा सकते । न्याय वैशेषिक में परमात्मा स्वीकृत सर्वज्ञ सर्वकर्ता सर्वकृतिमान सर्वेच्छावान् सर्वेक्षणवान् सगुण साकार स्वीकृत ही हैं, उपबृंहणों से ब्रह्मलोक में ही मानना अन्यत्र शक्त्या वा महत्परिमाणवत्तया स्वीकारना तब सार्वज्ञ्यसहित को सशरीर भी स्वीकार ना स्वीय सावच्छेद्यमूर्ति सर्वान्वयी तथापि व्यतिरेकी स्वतन्त्र मूर्ति स्वीकारना आदि-आदि पर वार-वार बहुत विचार श्रीस्वामी जी ने अपने ग्रन्थों में न्याय आन्वीक्षिकी में तर्क में किये हैं, अधिक नये-नये ज्ञानविषय उपयुक्त तत्त्व भी विवेचित किये हैं, शक्ति आदि के पर बहुत विचार किया है । अधिक प्रमाण अधिक गुण अधिक ऐश्वर्य आदि-आदि तत्त्व विचार ठीक-ठीक उपयुक्त किया है, एक अच्छे दार्शनिक नैयायिक स्वामीजीने जहाँ-जहां कलम चलायी वहाँ-वहाँ तर्कित पदार्थ विषय में लेके जाति निग्रह भी प्रयुक्त किये हैं, शुद्ध ब्रह्म अविद्या में अज्ञान से ईश्वर जीव रूप मिथ्या अभिलाप्य हुआ तो उपासना से ज्ञान से वाक्य बोध से ब्रह्मस्वरूप खूल गया फिर 'न पुनरा-, वर्तते' इस की नित्यता कैसे रहेगी, फिर से शुद्ध को अविद्या में ईश्वरजीवता मिथ्यात्वपना क्यों न होगा शुद्ध की तरह अशुद्धानन्तर शुद्ध का वही हालत में कोई प्रतिबन्धक तो नहीं होगा, पूर्व सिद्ध में प्रतिबन्धक न रहा तो पश्चात् सिद्ध में कौनसा प्रतिबन्धक रहेगा ? स्वेतर हाजिर रहेगा ?, सिद्ध शिला में भारहीन आत्मा उड़ते ही जायगा तो उड़ते-उड़ते भारहीन शिला को कभी न कभी उल्लंघन करेगा ही तब भारवाली दशा में घूसना ही पड़ेगा, भारहीन को स्थैर्य है नहीं, यदि स्थैर्य है तो सिद्ध शिलावाले उपदेष्टा भी इधर नहीं आने चाहिए, अस्थिरता का साधन वा प्रयोजक वहाँ कोई भी नहीं है, वहाँ नित्यशाश्वत स्थिर वही यहाँ अनित्य अशाश्वत अस्थिर यह विभिन्न पक्ष एक के उपर लगाने से सप्तभंगी सभी को लगती है तो वहाँ सिद्ध शिलावाले को त्रिभंगी नवभंगी अष्टमभंगी वा क्यों न लगेगी, स्वेतर में दूर-दूर में जो भंगी लगासकते हैं वही भंगी अतिदूर में भी लगा सकेंगे, सीमा में जो भंगी का अवरोध करेगा उस पर भी भंगी तो लगेगी, शिव का वरदान भस्मासुर होने का अपने माथे पर भी लग गया, विमलविज्ञानोदय वाले के माथे पर क्या भंगी न लगेगी मुख में लगती है भंगी बोलती है माथे लगने का स्वभाववाली है तो वही परमस्तक पर की तरह वक्ता के मस्तक पर भी लगेगी, सो तो ठीक मगर भंगीन्याय स्वन्याय के मत्थे पर भी लगेगा यदि ऐसा होगा तो सभी निर्भय हो गया, स्थिर नित्य शाश्वत साबीत हो जाता है इत्यादि तत्त्व विचार बहुत से दर्शनों पर किये हैं । इस प्रकार नव्यन्याय में भी तर्क की छूटछाट रहने से खूब टीकाओं में विचार किये हैं, तत्त्वप्रभावली, ब्रह्मरसायन भाष्य, सत्संग भाष्य, सांख्ययोग भाष्य

तत्त्व मुक्तावलीप्रकरणावली आदि-आदि में श्रीस्वामीजी ने तत्त्वविचार करके भारत के देव बांधे हुए हैं भारत के सैकड़ों भारतीयविद्वानों के विकास के कारीगर भी भारतमाता के सुयोग्य बालक स्वामी श्रीकृष्ण-वल्लभाचार्यजी आज धरन्धर विद्वान् विजय पा रहे हैं। अधिक कहना आस्वाद देना है मगर बुद्धि में विशेष बुद्धि मिलने से शं 'शान्ति विराम स्वयम् आ मिलता है। श्री स्वामीजी सर्वप्रकार के अभिनन्दन के योग्य विद्वान् है, कि कहना ? आप का विजय हो ॥

स्वामीश्री का व्याकरण काव्य धर्मशास्त्र न्याय वेदान्त सांख्य योग मीमांसा पुराण साहित्य आदि में पूर्णपाण्डित्य

वेदगु संस्कृतपालीप्राचार्य लामा—अमिताभचोंखापा चांगसे

चीन

पण्डितवर्य श्रीस्वामिमहोदयमण्डलीश्वराणां ग्रथितप्रबन्धा अवलोक्यन्ते विमृश्यन्ते, वाच्यन्तेऽध्याप्यन्ते चापि, तत्र तत्र तत्तच्छास्त्रीयपदार्थानां नवीनाऽभिनवन्यानां प्रत्यग्राणां प्राविष्कारा उपलभ्यन्ते, प्रहृष्यामि कारम्बारं विमृश्य तत्तत्त्वानि, सारस्वते सिद्धान्तकौमुद्यां तद्भाष्ये च पूर्णं पाण्डित्यम्, लेखन प्रयोगैर्निश्चितं भवति, अथाऽपि न्यायशास्त्रं तु कवलीकृतं पाचितमिव विलोक्यते, यत्राऽसंख्या आविष्कारा विद्यन्ते, तर्काणां पारो नास्ति, टीकाभाष्यग्रन्थाः स्वामिमहोदयानां सत्तर्कधाराः पूर्वपश्चिमपक्षाश्रया निर्णयेषु विलक्षणसमाधानमूर्तयोऽवलोक्यन्ते, वेदान्तस्य बहव आचार्याः, सर्वेषां सिद्धान्तज्ञा इमे पाण्डित्यसागराः विद्यन्ते, केवलाद्वैतविशिष्टाद्वैतशक्तिविशिष्टाद्वैतविशिष्टब्रह्माऽद्वैतशुद्धाद्वैतद्वैताद्वैतद्वैतसिद्धान्तव्याख्यातारो भवन्ति स्वामिवर्याः, सांख्ये योगे च शास्त्रे भाष्यकर्तारोऽपि च विशदटीकारचयितारो भवन्ति प्रच्छन्नतत्त्वाविष्कारविद्वत्त्वपरिपूर्णाः सन्ति, मीमांसाशास्त्रं वाक्यार्थनिर्णये गहनतममपि स्वामिभिः शाब्दनिष्णातैर्व्याख्याभिः सरलीकृतम्, मीमांसका अपि नूत्नमिव स्वीकुर्वन्ति, काण्डज्ञा मन्त्रज्ञा अनुष्ठानज्ञास्तत्त्वज्ञाश्च वर्तन्ते, धर्मशास्त्राणां बहुविधप्रणालीभिरप्यधीतमिव सर्वं धर्मशास्त्रं श्रीस्वामिभिः क्रोडीकृतम्, श्रीसत्संगभाष्याद्यैरपि विप्रतिपत्तयस्तु जिह्वाग्रनर्तका इव स्वामिमहोदयानां विद्यन्ते, ख्यातयस्तु प्रदीपा इव, प्रामाण्यं तु प्रकाश इव, तत्त्वानि तु शरीरमिवैषां विद्वत्सार्वभौमानां विद्यन्ते, साहित्यविभागे धुरन्धराः, छन्दोभागे रचनेश्वराः, पुराणव्याख्यासु व्यासोत्तमाः नवीना व्यासवतारा महासंहिताकर्तारो नेश्वरन्यूना इति सर्वथा सर्वोत्तमाऽभिनन्दनार्हा भवन्ति, चिरं जीवन्तु शास्त्राणि रचयन्तु, जगदुपकारं कुर्वन्तु, मादृशानां कल्याणं चिन्तयन्तु, इति सोत्साहमात्मनि संस्मरन्नभिवादयामि।

भारतीय दर्शन के युगप्रतिनिधि-स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी

ज्ञानप्रकाशदासशास्त्री, वेदान्ताचार्य एम० ए०

गढडा स्वामिनारायण, जि० भावनगर, (गुजरात)

भारतीय दर्शन के महाकाश में असंख्य ऋषि-मुनि, सूत्रकार, वृत्तिकार, भाष्यकार और व्याख्याता जैसे महान् ज्योतिर्धर महापुरुषों की एक दीर्घ परम्परा देदीप्यमान चली आ रही है। प्रत्येक युग में कोई-न-कोई एक ऐसे महापुरुष का आविर्भाव इस भारतवर्ष में होता ही रहा है, जो कि उज्ज्वल लम्बी परम्परा के वर्तमान प्रतिनिधि माने गये हो। युग के वर्तमान प्रतिनिधि वे ही महापुरुष हैं जो कि अपने पूर्वाचार्यों से प्राप्त ज्ञान के साथ, जीवन भर की आध्यात्मिक साधनाओं के द्वारा अनुभूत विज्ञान को भी उसी परम्परा में अपनी लेखनी के द्वारा प्रकट करते हैं। स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी भी आज भारतीय दर्शन के एक ऐसे ही युगप्रतिनिधि महापुरुष हैं।

इन्होंने दर्शन शास्त्र रूप विशाल वटवृक्ष की विद्यमान और विराजमान अनेक महाशाखाओं का लोकभोग्य दृष्टि से सुदृढ़ विकास किया है और उस विकास में ही कई ऐसे प्ररोहों को जन्म भी दिया कि जिनके आधार पर अनेक व्युत्पित्सुओं ने निःसन्देह होकर नयी दिशा प्राप्त की है। ज्ञान वैभव-सम्पन्न गुरुजनों के पास अपने निवास के समय से लेकर आज तक ये जो कुछ भी अपनी प्रज्ञा में प्रकर्ष लाते गये हैं, शीघ्र ही उस प्रकृष्ट प्रज्ञारूप सूर्य की किरणावली को विस्तृत, सरल एवं सुस्पष्ट शास्त्रीय व्याख्याओं के रूप में निबद्ध करके प्रकाशित करते गये हैं। मात्र व्याख्याएँ ही नहीं, अपितु सतत चिन्तन तथा अविरल महान् परिश्रम करके अनुपम, अद्भुत एवं अपूर्व अनेक महान् विशालकाय ग्रन्थ भी इन्होंने लिखे हैं।

इन्होंने न्याय-वैशेषिक, सांख्य-योग और पूर्वोत्तरमीमांसा के अतिरिक्त भगवान् श्रीस्वामिनारायण के वचनामृतों एवं भगवान् श्रीस्वामिनारायण के समकालीन महान् विभूतिस्वरूप सन्तों के उपदेशामृतों को हृदयङ्गम करके उन सभी के रहस्यार्थों को स्वरचित ग्रन्थों में सुस्पष्टतया समझाने का कार्य भी नितान्त प्रशंसनीय किया है और प्रत्येक ग्रन्थ में प्रसङ्ग प्राप्त विषयों के विरेचन के समय अपनी प्रज्ञा से नवीनता की ओर विशेष ध्यान भी खींचते रहे हैं।

इन्होंने साक्षात् या परम्परया, प्रसिद्ध पूर्वाचार्यों के महत्त्वपूर्ण दार्शनिक सिद्धान्तों के अध्ययन द्वारा जो असाधारण विचार प्रकट किये हैं, उनकी ओर दृष्टिपात करते समय सर्वप्रथम हमारा ध्यान न्यायदर्शन की ओर जाता है। न्याय के प्रति सहज पक्षपात होने के कारण इन्होंने न्याय-वैशेषिक दर्शन में प्रविविक्षु छात्रों के हित के लिए तर्क संग्रह और न्यायसिद्धान्त मुक्तावली, दोनों ग्रन्थों की सरल एवं सुस्पष्ट विषयार्थदर्शिनी किरणावली नामक एक सुन्दर टीका लिखी है।

न्यायसिद्धान्त मुक्तावली की किरणावली टीका का सम्पूर्ण तथा अवलोकन करके पठन-पाठन में भी उसको उपयोग में लेनेवाले धुरन्धर नैयायिकों से मुक्तकण्ठ इसकी प्रशंसा सुनी जाती है। उनका कहना है कि मद्रास वाली प्रभा टीका से भी किरणावली में विशेष स्थलों पर नये-नये पूर्वपक्ष और उत्तरपक्ष आदि पदार्थ अतीव बुद्धि-प्रतिभा से प्रतिपादित हुए हैं और न्याय के छात्रों के लिए तो यह किरणावली

वरदान के समान सिद्ध हुई है। काशी के सुप्रसिद्ध विद्वान् सुब्रह्मण्य शास्त्री ने एक सभा प्रसंग में स्वामीजी से कहा था कि यह किरणावली टीका तो पढ़ाते समय विद्वान् अध्यापकों के लिए भी परम उपयोगी सिद्ध हुई है। इसके प्रकाशन के कुछ समय बाद तिरुपति के प्रसिद्ध विद्वान् वीरराघवाचार्यजी ने भी स्वतः एक पत्र लिखकर कहा था कि अत्यन्त अपूर्व रूप से कई विषयों का स्पष्टीकरण करने वाली यह किरणावली अच्छे विद्वानों के लिए भी मनन करने लायक है।

इस किरणावली के कुछ विषयों पर ही यहाँ हम स्वामीजी की नवीन दृष्टि का उल्लेख करेंगे। उनका कहना है कि—'क्षित्यङ्कुरादिकं सकर्तृकम्' इस अनुमान से ईश्वर में सकर्तृकत्व की सिद्धि के लिए यदि हम पक्षरूप में क्षिति, अंकुर और आदि, इन तीनों पदों से एक व्यक्ति का ग्रहण करेंगे तो पक्षतावच्छेदक में और पक्षतावच्छेदकावच्छिन्नमें सिद्ध साधन आदि दोष होंगे, यदि उसकी निवृत्ति के लिए सामान्यतः कार्यकारण भाव को अपेक्षित मानकर इष्ट सिद्ध करेंगे तो कार्यकारणभाव में गौरव, निश्चित प्रमाणाभाव, और अनुकूल तर्कराहित्य आदि दोष उपस्थित होते हैं, अतः इन सब से बचने के लिए वहाँ पर अभिव्यङ्ग्य घटात्मक व्यक्ति विशेष को पक्ष लेकर कुलालरूप में घटसाधक ईश्वरसिद्धि पर विचार किया गया है। और मेघपक्षक अनुमान लेते हुए ईश्वर सिद्धि का अनुसरण किया है। वैसे ही साध्यविषय में ज्ञान, चिकीर्षा, कृति, प्रत्येक के जन्यत्व को प्रसिद्ध रूप से स्फुट किया गया है। हेतु में स्वरूपेण सर्वानुगत कार्यत्व को लेकर साध्यसिद्धि पर फलित अनुमान दर्शाया गया है। विशेष रूप से तो उदयानाचार्य की—'कार्यायोजनधृत्यादेः पदात् प्रत्ययतः श्रुतेः। वाक्यात् संख्याविशेषाच्च साध्यो विश्वविदव्ययः॥ (न्या० कु० ५।१) कर्मर का पर विस्तृत विवेचन करके ईश्वर को प्रमात्मक परिशेषानुमान से प्रमिति विषय किया गया है।'

इसी तरह आत्मवाद में इन्होंने विभिन्न प्रस्थानवादी मतों की ओर संकेत करते हुए विशिष्टाद्वैतानुसारी स्वामिनारायण सम्प्रदाय के सिद्धान्तों को भी उल्लिखित किया है। आगे ज्ञानप्रामाण्य के अवसर पर मतमतान्तरों को खूब चर्चा विषय में लेकर स्वामीजीने न्याय के अभिप्रायों को न्याय सिद्धान्तानुसार किया है।

इसके अतिरिक्त व्यतिरेक व्याप्ति के विषय में स्वामीजी का कहना है कि व्यतिरेक व्याप्ति विपक्ष विषय में स्वयं अन्वयव्याप्ति ही है क्योंकि वह अन्वयव्याप्ति के गर्भ में पदार्थ रूप में अवस्थित है। व्याप्ति ज्ञान स्वयं व्यतिरेकि स्वरूप नहीं है। यह बात भी न्याय सिद्धान्त मुक्तावली किरणावली में ही है।

प्रमाणों की संख्या के विषय में स्वामीजी का कहना है कि दार्शनिकोंने गौरव और लाघव को मुख्य मान कर संख्याविषयक न्यूनाधिक भेदों को अङ्गीकार किया है, किन्तु सभी प्रमाणों से सभी शरीरधारियों के किसी-न-किसी प्रमाण को उपयुक्त मानकर व्यवहार किया जाता है। मूकप्राणी केवल चेष्टा से, बालक को ऐतिह्य आदि से अनभिज्ञ को अनुपपत्ति प्रयोगानन्तर विपरीत सिद्धिरूप अर्थापत्ति आदि से, प्रायः दूरदेशीय वस्तुओं में अनुमान से साजात्य सादृगुण्यादि के सहारे व्यवहार किया जाता है। इसलिए जहाँ जिसकी मुख्य उपस्थिति का बोध होता है वहाँ उसी को मुख्य प्रमाण के रूप में स्वीकार करना चाहिए। अतः इनका कहना है कि सभी प्रमाणों का प्रामाण्य अनिवार्य है। ऐसे अनेक विषय हैं, जिनपर स्वामीजी ने बहुत कुछ लिखा है। अब यहाँ हम ग्रन्थों के नाम के साथ उन विशेष विषयों का परिचय संक्षेप में देने का प्रयत्न करेंगे।

प्रमात्व-प्रमात्व के बारे में भी विशाल विचार धाराएँ बह रही हैं, जिन पर वैज्ञानिक आगे बढ़ रहे हैं। व्यक्ति का ज्ञान परिच्छिन्न होने से अनेक प्रकार के निज ज्ञानों में याथार्थ्य का अवभास नहीं

होता है अथवा ज्ञान पर ज्ञान प्रेरने पर भी पूर्वज्ञान का स्वरूप किसी-न-किसी रूप में अविदित रह जाता है। इस स्थिति में अप्रमात्व को मानना पड़ता है। इस विचार पर स्वामीजी का मन्तव्य है कि अनेक शास्त्रों में स्थित इन विषयों के अध्ययन के बाद जब सभी की ज्ञान के आधार पर प्रमात्व को पकड़कर ही प्रवृत्ति होती है, तो इससे निर्णीत हो जाता है कि ज्ञान में प्रामाण्य तो है ही, विषय की उपलब्धि या अनुपलब्धि ज्ञान के प्रामाण्य को निश्चित करने वाली नहीं है। जितनी भ्रांन्तियाँ, मिथ्याज्ञान, विपर्यय, विकल्प, स्वप्न आदि में तद्रूप होकर चैतन्य को जोड देने पर ज्ञानस्वरूप को जब अवगत करते है तो यावत् अपेक्षित प्रमात्व ही मिलता है इस पर कई दृष्टान्त देते हुए स्वामीजी ने प्रमात्व विमर्शनामक स्वतन्त्र ग्रन्थ ही लिख दिया है।

ख्याति-ज्ञान स्वयं अपने स्वरूप में प्रमात्मक है कि भ्रमात्मक ? इस विचार को जो ख्यापन करता है उसी की दर्शन शास्त्र में ख्याति नाम से प्रसिद्धि है। भारतीय दर्शन में प्रत्येक दार्शनिकों ने अपने-अपने ढंग से ख्याति पर विशेष विचार किया है। स्वामीजी ने तत्त्व प्रभावशाली में ख्याति के स्वरूप का लक्षण परिष्कार करते समय लगभग ३५-४० आचार्यों के सिद्धान्तों को अपने दृष्टि पथ में रखा है। इन ख्यातियों में भगवद्रामानुजाचार्य ने श्रीभाष्य में जो सत्ख्याति नाम से अपने मन्तव्य को भार पूर्वक प्रस्तुत किया है और इस पर परवर्ती आचार्य श्रीवेदान्तदेशिक ने न्याय परिशुद्धि में विवेचन करते हुए जो कहा है कि 'स्वारस्यं त्वन्यथा ख्यातावख्यातौ लाघवं स्थितम्' स्वारस्य अन्यथा ख्याति में है और अख्याति को स्वीकारने में लाघव है, सत्ख्याति, अन्यथा ख्याति और अख्याति इन तीनों को स्वामिनारायण सिद्धान्त में सत्समुच्चयख्याति के रूप में फलित बताया है।

स्वामिनारायण सम्प्रदाय में २६२ तरंगो के वैभव से सम्पन्न श्रीहरिवाक्य सुधासिन्धु नामक एक विशालकाय ग्रन्थ, जो कि भगवान् श्रीस्वामिनारायण का उपदेशामृत रूप है, उसके सारमय रहस्यार्थों को नवनीत की तरह खींचकर के स्वामी जी ने २२५० दो हाजर दो सौ पचास 'परब्रह्म सूत्रों' की रचना की है। ये सूत्र और 'हरिवाक्य सुधासिन्धु' इन दोनों के विवेचन में लगभग ५००० पाँच हजार 'फुलिसकेप' पृष्ठों पर 'ब्रह्म रसायन भाष्य' नामक एक नवीन भाष्य की रचना भी की है, जो कि व्याकरण महाभाष्य की तरह अपने विषय के गौरव को बढ़ा रहा है। यह ग्रन्थ रत्न आध्यात्मिक विचारों का एकमेव अमूल्य निधि है। इसमें विशिष्टाद्वैत तथा विशिष्टब्रह्माद्वैत और सत्ख्याति तथा सत्समुच्चय ख्याति, इन सबको संग्रहीत रूप में लेकर अद्वैत, शुद्धाद्वैत, द्वैत, शब्दब्रह्मवाद, प्रकृतिकारणवाद, ईश्वरीयव्यवस्थावाद, विभिन्न वैष्णवमत, शैव और शाक्त आदि अनेक विचारधाराओं पर समीक्षा करते हुए भगवान् श्रीस्वामिनारायण के श्रीमुख से निःसृत अभिप्रायों को प्रस्फुट किया है। इस महाभाष्य में सर्वत्र प्रत्येक तरङ्गों के प्रामाण्य पर भी विचार किया गया है।

भगवान् स्वामिनारायण के अपने उपदेशों में जीव, ईश्वर, माया, ब्रह्म और परब्रह्म, ये पाँच भेद अनादि हैं ऐसा प्रतिपादन हुआ है। स्वामी जी ने विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त को ध्यान में रखते हुए इस पाँच भेद वाले सिद्धान्त की पुष्टि के लिए वेदान्त वाक्यों में इन पाँच तत्त्वों के स्थान को निश्चित करके श्रुतितात्पर्यनिर्णय नामक एक गम्भीर ग्रन्थ की रचना की है, जिसमें ब्रह्म और परब्रह्म तत्त्वों को पृथक् ही दिखाकर विशिष्टब्रह्माद्वैत सिद्धान्त का विशेष रूप से स्वतन्त्रतया स्थापन किया है।

श्रुतितात्पर्य निर्णय की तरह ही विशेष तत्त्वों का प्रतिपादन करने वाला सूत्रात्मक 'स्वामिनारायण दर्शन' नामक एक ग्रन्थ भी स्वामी जी की कृति है। इस दर्शन को षड् दर्शन की तरह ही सातवाँ दर्शन भी कहा जा सकता है। इस पर एक कल्याणी वृत्ति भी स्वामी जी ने ही लिखी है। इसके अतिरिक्त

स्वामी जी ने सर्व साक्षात् और साक्षात्प्रमाणाधीन सर्वसिद्धि को ध्यान में रखकर एक ऐसा सिद्धान्त बताया है कि जिसमें विविध प्रकार के साक्षात् विषयताशून्य कोई भी पदार्थ नहीं है, यह बताया गया है। इस सिद्धान्त से विराजित यह रचना ५० पृष्ठों पर कल्याणीवृत्तिसहित 'साक्षात्कार सूत्राणि' के नाम से है, जो अभी अप्रकाशित ही है। इसमें प्रमाणमात्र को साक्षात् में प्रविष्ट कराते हुए सर्वसाक्षात् भी सिद्धि की गई है।

तत्त्व प्रभावली—स्वामी जी ने नव्यन्याय के आकार ग्रन्थ के रूप मे विख्यात गंगेशोभाध्याय के 'तत्त्वचिन्तामणि' की शैली में एक अद्भुत् और अपूर्व 'तत्त्वप्रभावली नामक महान् ग्रन्थ की रचना अतीव गौरवपूर्ण की है। सात सौ अस्सी कारिकाओं में लिखित इस ग्रन्थ के प्रमेय, प्रमाण, प्रमिति और प्रमाता ये चार खण्ड है और पदार्थ, पदार्थसाधर्म्य, द्रव्य, गुण, तद्गुण, ज्ञान, तर्क, नवप्रमाण, विप्रतिपत्तियाँ अनुमान, शब्द, प्रमिति, प्रमाता तथा पञ्चतत्त्व, इन विषयों के नाम से चौदह परिच्छेद हैं। इस ग्रन्थ में विषयोपन्यास एवं विवेचनशैली इतनी भावगर्भित तथा समृद्ध है कि जिसको देखकर बड़े-बड़े विद्वान् भी आश्चर्यचकित रह जाते हैं। विशिष्टाद्वैत सिद्धान्तानुसारी स्वामिनारायण सम्प्रदाय के पदार्थों का न्याय की दृष्टि से निरूपण इस ग्रन्थ में अत्यन्त नवीन रूप से हुआ है। इसके बारे में जब खुद स्वामी जी से ही पूछा गया तो उन्होंने 'विशिष्टं न्यायदर्शनम्' कहकर के इसका परिचय दिया था। इस तत्त्वप्रभावली ग्रन्थ पर, कारिकावली पर न्यायसिद्धान्त मुक्तावली और तत्त्वमुक्ताकलाय पर सर्वार्थसिद्धि की तरह स्वामी जी की एक सर्वोत्तम स्वोपज्ञ व्याख्या है जो कि इसके महत्त्व को सर्वोच्च शिखर तक पहुंचा देती है।

विप्रतिपत्तियां—अविद्या से व्याप्त इस संसार में स्थित आध्यात्मिक दृष्टि से पहुँचे हुए व्यक्ति भी अविद्या से परे परमेश्वर के स्वरूप का निरूपण करते समय कई बातों में विभ्रान्त जैसे देखे जाते हैं। इसीलिए जब भारतीय मनीषिगण उस भ्रान्तिमय ज्ञान के कालुष्य को दूर करके निर्भ्रान्त, निर्दोष और सत्यस्वरूप ईश्वर तत्त्व को बुद्धिगत करने के लिए परिषद् के रूप में एकत्र होकर अपने-अपने मन्तव्यों को वाक्यबद्ध करके प्रस्तुत करते हैं तब उनके मन्तव्यों में दो पक्ष रहते हैं, एक विधि और दूसरा निषेध। परिषद् के प्रत्येक व्यक्ति उस विधि पक्ष में अपनी-अपनी विप्रतिपत्तियों को रखते हैं। भारतीय प्राचीन वाङ्मय में, खास करके व्याकरण, मीमांसा और न्यायदर्शन में पद, वाक्य और प्रमाणों पर ऐसे अनेक विचार हुए है। इन विचारों के द्वारा निर्दोष एवं परिशुद्ध तत्त्वावगम को प्राप्त करानेवाली परिषदों या शास्त्रार्थसभाओं का होना आवश्यक और प्रसिद्ध राजमार्ग सा हो गया है।

किसी भी विषय के बारे में विप्रतिपत्तियों के उपन्यास के अनन्तर निर्णयार्थ बैठने वाली विद्वत्समिति तात्पर्यनिर्णय के लिए प्रतिज्ञापूर्वक उपक्रमोपसंहारादि विमर्शविषयवों को साधन के रूप में प्रयुक्त करती है। समिति के प्रत्येक व्यक्ति उस विषय से सम्बद्ध अपने-अपने न्यायों का प्रयोग करते हैं और बीच-बीच में प्रत्यवस्थान भी करते हैं। इसी सिलसिले में विद्वान् लोग वादि प्रतिवादियों के प्रश्नोत्तर एवं षट्पक्षीय कथाओं के द्वारा तत्त्वनिर्णय रूप फल को उद्घोषित करके शास्त्रार्थ को समाप्त करते हैं। इसमें विप्रतिपत्तियों के अनन्तर जो पक्ष प्रामाणिक एवं बलवत्तर सिद्ध होता है वही विधि पक्ष माना जाता है और जो पक्ष प्रमाणों से और तर्कों से पराहत होकर विप्रतिपत्तियों का समाधान नहीं दे सकता वही निषेध पक्ष सिद्ध हो जाता है।

इस तत्त्वप्रभावली में भी स्वामी जी ने उपर्युक्त पद्धति से तत्त्वावबोध के लिए दर्शनजात के विचारों को सामने रखकर अनेकत्र बहुविध विप्रतिपत्तियाँ उठायी हैं। उनमें से मात्र उदाहरण के लिए ही कुछ उद्धृत करते हैं।

'इष्टार्थिप्रवर्तकपुरोवर्तिविशेषकज्ञानं केवलरजतत्त्वाऽप्रकारकं न वा ? 'प्रामाण्यं स्वाश्रयधर्म्यवच्छिन्नसाक्षिदृश्यसद्विषयगोचरं न वा ? ज्ञानं सद्विषययाथार्थ्यप्रयुक्तविषयितावन्न वा ? ज्ञानत्वं विषययाथार्थ्यप्रयुक्तसमुच्चयितविषयतानिरूपितविषयितावच्छेदकं न वा ? प्रामाण्यं यथावत्समुच्चयिततत्त्वविषयितावच्छेकव्याप्यं न वा ? दार्शनिकानां यावत्यो ज्ञानप्रामाण्यविप्रतिपत्तयः स्वस्वीययाथार्थ्यावच्छिन्नविध्याद्याश्रयाः, विपरीतगर्भितभावकोटिकत्वात् , स्वाश्रयत्व–स्वविपरीताश्रयत्वोभयसम्बन्धेन विधेयत्वात्, उभयथा भिन्नलक्ष्यकसिद्धिफलकत्वात्, चित्साक्षिचैतन्यगोचरत्वात्, इत्येवं यथायोग्यं स्थापना ।"
(त० प्र० प्रमितिखण्डे १२ परिच्छेद)

इन विप्रतिपत्तियों के अर्थावबोध के लिए भी ऐसे विद्वान् गुरुजनों के चरणों में दीर्घकाल तक निवास करना पड़ता है। इसी तरह की विप्रतिपत्तियाँ नैयायिकों के प्रामाण्यवाद पर, अद्वैत वेदान्तियों के मिथ्यात्ववाद पर और नास्तिकों के क्षणिकत्व वाद पर भी उठायी जाती है।

विशिष्टाद्वैत सिद्धान्तानुसारी स्वामिनारायण सम्प्रदाय के दार्शनिक सिद्धान्तों को अवगत कराने के लिए स्वामी जी ने एक पदार्थसंग्रहरूप श्रीस्वामिनारायणवेदान्तसार नामक ग्रन्थ की भी रचना की है, जिसको तत्त्व प्रभावली का ही संक्षिप्त रूप माना गया है।

वैष्णव सिद्धान्तों में देखा जाता है कि भौतिक सृष्टि में प्रकट होने वाले भगवान् , उनके भवन, और तत्सम्बन्धि पदार्थों को नित्य और दिव्य आदि शब्दों से अभिहित किया गया है। सर्वनिवासी भगवान् स्वयं दिव्य मूर्ति ही है, प्रयोजनवशात् वे ही वैसे ही स्वस्वरूप में प्रकट होते हैं। बद्ध लोगों की दृष्टि स्थूल एवं मायिक होने से उनको भगवान् स्वदिव्य मूर्ति में स्वशक्ति से मायिक, अदिव्य स्थूल भावों को दिखलाते हैं। भगवत्कृपा अथवा भक्त की उपासना अति उत्कृष्ट होने पर अदिव्य, स्थूल और भौतिक मानव रूप में दिखायी देने वाले भगवान् भी ब्रह्मलोकवासी दिव्यरूप में ही दिखने लगते हैं, जैसे कि अर्जुन आदि को दिखायी दिये थे। इन सब बातों पर ध्यान रखकर स्वामीजी ने सद्गुरु श्रीगोपालानन्द स्वामि विरचित 'श्रीहरिस्वरूपनिर्णय' ग्रन्थपर सत्सङ्ग भाष्य की रचना की है, जिसमें ब्रह्मधामस्थ दिव्यस्वरूप, लौकिक मूर्ति और अवतार स्वरूप, सब एक ही हैं ऐसा युक्तियों और प्रमाणों के बलपर प्रतिपादित किया है और कई विप्रतिपत्तियाँ उठाकर विधि और प्रतिविधि पक्ष का विवरण देते हुए भाष्य नाम को सार्थक किया है।

इसके अलावा स्वामीजी का मन्तव्य यह भी है कि वैष्णव मतों में परमात्मा अपने स्वरूप में सदा सगुण, दिव्य और सदा साकार ही है, अतः अन्तर्यामितया उनके विराजमान रहने से और उनसे व्याप्य होने से चेतनतत्त्व (जीवात्मा) भी अन्तः प्रविष्ट के अनुरूप ही सुमूर्त एवं साकार सिद्ध होता है। यदि ऐसा नहीं होता तो उस चेतन तत्त्व को योगिजन, धर्मराज, मुक्त एवं परमेश्वर देखते कैसे ? इस लिए चेतन तत्त्व का सुमूर्तत्व एवं साकारत्व सोपपन्न है। इस सिद्धान्त की संगतता के लिए स्वामीजी ने सांख्य और योगदर्शन के स्वरचित भाष्यों में बीस व्याप्तियाँ दी हैं।

उपर्युक्त सब नवीन विषयों की गम्भीर विचारणा और स्वपक्ष की दृढ स्थापना के उपरान्त एक महान् आश्चर्यजनक स्वामीजी की रचना 'श्रीलक्ष्मीनारायण संहिता' है जिसकी श्लोक संख्या १,२६००० एक लाख छब्बीस हजार को देखकर कृष्णद्वैपायन व्यास का प्रत्यक्ष स्मरण हो आता है। स्वामीजीने अपने काशीवास के अनन्तर पश्चिम काशी के समान विद्यावैभव से सम्पन्न जामनगर में निवास करके बीस वर्ष तक वेद, वेदाङ्ग, पुराण, महाभारत, धर्मशास्त्र, एवं समस्तदर्शन शास्त्र तथा शिल्प एवं आयुर्वेदादि वाङ्मय का अध्ययन, मनन एवं प्रवचन करने के बाद इस लक्ष्मी नारायण संहिता की रचना

की है। उपर्युक्त भारतीय समग्र वाङ्मय के विषय, ईश्वरीय, मानवीय और दैवीय इतिहास, ब्रह्मविद्याओं के प्रकरण, भक्तों की आश्चर्य कारिणी एवं ऐश्वर्यशालिनी कथाएँ, चतुर्युग की पृथक्-पृथक् स्थितियाँ चौसठ कलाएँ, भूगोल के तीर्थ एवं ब्रह्म आदि, इन सब का इस संहिता में सम्पूर्णतया अतिस्फुट रूप से विशद विवेचन हुआ है।

अन्यदर्शनों की तरह मीमांसादर्शन के प्राथमिक ग्रन्थ अर्थसंग्रह पर स्वामीजी ने सुन्दर किरणावली नामक व्याख्या लिखी है, जिसमें द्रव्य, देवता, कर्म आदि द्वारा विष्णुपद से परमात्मा की उपासना को ही फलप्रदत्वरूप सिद्धान्तित किया है। सभी यज्ञ वाक्यान्तर्गत लिङ्गादि, भावना की विशुद्धता, अङ्गाङ्गित्वादि परिष्कार और वाक्यभेद आदि उपादेय वस्तुओं को इस किरणावली में प्रकाशित किया गया है। साथ ही साथ कवितार्किक केसरी के नाम से प्रसिद्ध श्री वेंकटनाथ सूरि (वेदान्तदेशिक) का तत्त्व मुक्ताकलाप, जो कि विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त के संरक्षण में ढाल के समान माना जाता है, उस सम्पूर्ण ग्रन्थ पर भी सान्वय श्लोकार्थ की स्पष्टता करने वाली एक नवीन किरणावली व्याख्या भी लिखी है।

स्वामी जी ने सुदूरदर्शिनी प्रतिभा के द्वारा मात्र दर्शन में ही नहीं किन्तु हरिसम्भव महाकाव्य की भूमिका 'कविकाव्यगौरव' में भी लक्षण ग्रन्थों के प्राचीन सिद्धान्तों को स्वीकार करते हुए अनेकविध नयी बातों का आविष्कार किया है, जैसे कि पृष्ठ २४ पर श्लोक ५४-५५ में समुदायबोधक युग्मादि नामों के अतिरिक्त ग्रामक, देशक, भौमक और सृष्टिक आदि नवीन नामों की समुचित कल्पना की है।

इस तरह स्वामी जी ने दर्शनशास्त्र रूप गहन और गम्भीर महासागर में मात्र अवगाहन ही नहीं किन्तु निर्भीक एवं स्वतन्त्र रूप से अन्तस्तल तक विहार करते हुए प्रसिद्ध तथा अप्रसिद्ध विविध एवं महान्, सिद्धान्त रत्नों को प्राप्त करके उनका परिष्कार किया है। सद्गुरुओं की वार्ताओं के सार का संस्कृत पद्यों में ग्रन्थन, अद्भुत कथा आख्यायिकाओं का संग्रहण और कई हरिवाक्यसुधासिन्धुसारसन्दोहन' जैसे सर्वश्रेष्ठ निबन्धों का लेखन, ये सब स्वामी जी की तत्तद्विषयावगाहिनी सूक्ष्म एवं सशक्त प्रतिभा के प्रत्यक्ष परिचायक है। यहाँ पर इनके ज्ञान वैभव सम्भृत वैदुष्य के विषय में जो कहा गया है, वह तो पल्लवग्राही मात्र है, ऐसे महासागर की गम्भीरता को तो मन्दराचल जैसे कोई महान् विपश्चित् ही जान सकते हैं। हम तो इनको केवल भारतीय दर्शन के युगप्रतिनिधि कह कर के ही विराम करते हैं।

वेदान्तवादी स्वामीजी सर्वविध वेदान्तमूर्ति है

पं० श्रीप्रणवानन्दजी, तर्कवेदान्ततीर्थ

सर्ववेदान्तवारिधि, धर्मारण्यम्

वेदों की अन्तिम विश्रान्ति ब्रह्म में है, ब्रह्म व्यापक व परिच्छिन्न दोनों स्वरूप रूप में है, श्रुतियां स्वरूप रूप का प्रतिपादन करती हैं, श्रुतियों के अवलम्बन करनेवाले स्वरूप रूप व अन्यतर में ही श्रवण मनन निदिध्यासन लगाया करते हैं, अन्तिम अभ्यास लक्ष्य दार्ढ्य को साक्षात्कार अवलम्बित हो जाता हे, श्रीरामानुजाचार्यजी सगुण साकार सशक्त सैश्वर्य परिच्छिन्न मूर्ति परमेश्वर शक्ति ऐश्वर्य गुण आदि द्वारा अपरिच्छिन्न-व्यापकता भी प्रतिपादन करते हैं, ज्ञानशक्तिबलैश्वर्यवीर्यतेजांसि ये छ भगवाले भगवान् नित्यविभूति के नित्यशरीरशरीरी नित्य ही हैं, पार्षद दास-दासियाँ आदि अपृथक्सिद्ध प्रकार सभी है हो, कभी न होना नहीं है, प्रभु समर्थ होने से सभी में शरीरी अन्तर्नियामक भी हैं, साक्षी कर्मफलप्रदाता भी है, प्रकार में प्रकारी परमात्मा है ही, प्रकार प्रकारी में रहता है यह न्याय सभी के घर में है, तो भी रामानुजस्वामी का न्याय प्रकारी प्रकार में रहता है, शरीरी आत्मा शरीर में रहता है यह श्रुतिसिद्ध ही है, देहात्मादर्शन में भी लौकिकसिद्ध भी वैसा ही है। अतः माया भी आत्माएँ चेतनवर्ग भी ब्रह्मविशिष्ट ही हैं, विशिष्टदृष्टि ब्रह्मदृष्टि है, सभी का शरीरी में पर्यवसान होने से नामी शरीरी है उपास्य शरीरी है, साक्षात्कार्य भी शरीरी ही रहेगा, मोक्ष में भी शरीरी से मिल कर ही रहना होगा, इस सिद्धान्त से सभी तत्त्व सत्य रह गये, परमात्मा का वर्चस्व रह गया, साधन साध्य कारणकार्य का निर्वाह भी हो गया, इसमें शान्ति भी मान ली गई, सगुण साकार वाक्य प्रधान हैं, निर्गुण निराकार के वाक्य गौण हैं, निषिद्ध-गुणरहितत्व व दिव्यनिजगुणसहितत्व में तात्पर्य ले के समन्वित शास्त्रार्थ निर्णयरूप मैं फलित होता है। विस्तार तो तर्क के होते हैं, सिद्धान्त का नहीं।

अब श्रीवल्लभाचार्यजी तो कहते हैं कि ब्रह्म में विशिष्ट हीं कारण तथा विशिष्ट ही कार्य रूप में अशुद्धता क्यों लगाना, श्रुतियाँ ब्रह्म को शुद्ध कहती हैं, माया-अमाया विद्या-अविद्या ज्ञान-अज्ञान जब ब्रह्म के शरीर ही हैं तो शक्तियाँ भी हैं, शरीर को शक्तियों में क्यों नहीं गिनना, शक्तियाँ ब्रह्मस्वरूप होती हुई ब्रह्म के संकल्प में अपने रूप दिखलानेवाली जरूर सेविकाएँ बन सकती हैं, कोई वहाँ विरोध नहीं है, आत्माएँ ब्रह्मब्रह्मांश शक्तियाँ भी ब्रह्मब्रह्मांश अनेकाकारता भी ब्रह्मब्रह्मांश तो सर्व ब्रह्मब्रह्मांश सर्वं शुद्धं अद्वैतात्मकं ब्रह्मब्रह्मांश ही है, ब्रह्मब्रह्मांश में ब्रह्म में ब्रह्मसंकल्प में ऐक्य ही है, अतः सृष्टि ब्रह्म से पृथक् नहीं है, ब्रह्म ही है, तब स्वभान ब्रह्म को होना नैसर्गिक है, स्वतदात्मक शक्ति के रंग बदलने से आत्मा आत्मत्व में न भासे या ब्रह्मत्व में न भासे तो अब्रह्मत्वाभास आरूढ हुआ उसको ब्रह्मत्वाभासाभ्यास से दूर करिए इतना ही सूचन श्रुतियों द्वारा है, ब्रह्म मानिये, ब्रह्म उपासिए ब्रह्म देखिए ब्रह्म होइये, यही वेदान्त द्वारा कर्तव्य है। अतः शुद्धब्रह्मरूप में रहना ही उत्तम हैं, रहना मिलाना व बरतना, आनन्द लेते रहना सदा मुक्त होना, सदा ब्रह्म शुद्धब्रह्म होना, यहाँ तक में वेदान्त का अन्त आ गया। सगुण साकार तो ब्रह्म स्वयं है ही, हमें थोड़ा कुछ विषमपना लगा हो तो उसे हटाना यही भक्ति-कर्तव्य से हो जायगा।

निम्बार्काचार्य का अभिप्राय तो जडचेतन अल्पज्ञ सेवक स्वामी भक्तभजनीय व्यवहार यथार्थ रखने पर भी श्रुतिबोध्य ऐक्यसम्पादन कर दिखलाना हो तो ब्रह्म में सभी कुछ होना मानना पड़ता ही

है। इसी सहारे से भेद-अभेद नामक पदार्थ भी सानुयोगिक सप्रतियोगिक संसर्ग-संसर्गीओं का होना मानना कोई भी बाधा डालने वाला नहीं होता, हाथ-पैर, शरीरपिण्ड में अल्प से भिन्न व्याप्य दिखते ही हैं शरीर भी होते ही है, व्याप्य स्थिति से भेद प्रत्यक्ष है तो व्यापक स्थिति से या तादात्म्य व्याप्यव्यापक स्थिति से अभिन्न ही प्रत्यक्ष हैं, यदि भिन्न धर्म वाले अनुभूत होते हैं तो धर्म से भेद धर्मी 'स्वरूप से' अभेद होने में सारल्य है ही, भिन्न होता हुआ भी अभिन्नोपासना कर सकते हैं, भिन्नता के लीनी भाव में अभिन्नता ही रहेगी, संसार में जब भेदाऽभेद कोई भी हानिकारक नहीं हैं प्रत्युत सरल व्यवहार कारक है तो मुक्तता में भी सेवक स्वामी का तथाविध दिव्यव्यवहार शाश्वत है ही, साकारोपासना में ब्रह्मलोक, गोलोक, वैकुण्ठों के सेवक स्वामी व्यवहारों का, शक्तिदासीदास, पार्षद पार्षदानियाँ के व्यवहारों का शाश्वतत्व उपासना में सेवा में पुष्टिकर्ता ही है, जब जगत् ब्रह्म से हुआ ब्रह्म में सम्बन्ध वाला है तो अजगत् ब्रह्मजगत् ब्रह्म में क्यों न रहे, न बसे न उचित हो, सब उचित ही है। सुखसेवा ही भेदाऽभेद की वेदान्ती दशा है। अतः ठीक ही है।

श्रीमन्माध्वाचार्यजी ने तार्किकों के पथ पर रह कर उपनिषदों के पथ को स्वीकारा, जब आत्मा परमात्मा दोनों को श्रुतियाँ आरम्भ में ही बोलती हैं तो अन्त में एक करने को दौडना ही नहीं संभवता, फिर अन्त में एकीभाव में दौड़ने वाले अन्यान्य व्यक्तिओं का वैसा भान कुछ अन्वयाऽग्रह संयोगाऽग्रह दर्शनाऽग्रह सूक्ष्मसमानाभिहारसंग्रह सर्वात्मक होने का लाभ आदि उत्तेजना देते हैं, दो की स्थिति में तो रहे है, एक की स्थिति में तो गये ही नहीं है तदपि परोक्षवाद को बढ़ाते गूंजाते जा रहे हैं, स्वयं उसमें घूसना नहीं चाहते किन्तु स्वयं वही बनना चाहते हैं, तो जो वह नहीं है वह कैसे वह हो सकेगा, अतः यहाँ वहाँ सर्वत्र जड परमाणुवाद मायावाद आत्मवाद परमात्मवाद मुक्तवाद सखीसखावाद धाम अधाम वाद सेवावाद सभी कुछ दो ही हैं, द्वित्व सदा के लिये हैं मैं ब्रह्म हूँ भक्तब्रह्म हूं, तुम वह ये सब भक्तब्रह्म हैं भगवान् ब्रह्म एक है यह एक अनेक के साथ है सच्चिदानन्द सदा सभी है स्वरूपैक्य उनमें है नहीं, होता भी नहीं, फिर भी ब्रह्मत्वेन ब्रह्म तत्त्वत्वेन तत्त्व सामान्यतया एक व्यवहार्य में हानि नहीं है, वन अरण्य कहने में कोई हानि नहीं है, उपासक बड़े की उपासना करे तो बड़े की समृद्धि पावे। धाम मिले आनन्दसागर मिले ब्रह्मानन्द मिले, ब्रह्म मिले, ब्रह्म का मिलना ब्रह्मैक्य है।

शंकरस्वामी की दृष्टि इनसे विदेश में ही चली गई, यहाँ के सब विनाशी है, जाग्रत् विनाशी स्वप्न संस्कार विनाशी ज्ञान विनाशी पुण्य विनाशी कृत विनाशी नजर विनाशी अहं भी विनाशी त्वं भी विनाशी सर्व विनाशी दिखता है, तो अविनाशी कौन !, श्रुति कहें सो अविनाशी, दो का संयोग वियोग होगा, एक का नहीं, एक ही सत्य, अन्यत् सब ससत्य है, स्वरूप से दृश्य होने पर भी आत्यन्तिक स्वरूप मे है न ही अतः सब मिथ्या है, मिथ्यात्व को कहने वाला तो अहं त्वं है तो मरने पर या आत्यन्तिक मरण के बाद त्वम् अहं मिथ्या यदि होगा तो ज्ञानकूटना निष्फल रहेगा, सफलता तो तद्रूप में सत्य रूप में अमिथ्यारूप में मिलेगी, अमिथ्या एक है तो हम अमिथ्या रूप में क्यों स्व को न सामेल करें, अतः ब्रह्मपना ही ब्रह्म ही सत्य है, उसमें यहाँ के दृश्य कोई भी नाटक नहीं है न तो रचना है, मत रचिए, एकमेवाऽद्वितीयम् एकोऽहं ही ठीक है, इस मार्ग को दृढ बनाया, जिससे कहीं भी स्मृद्ध लोचापोचा न रह जावे, पर वेदान्त यदि अभी ही मूर्तरूप में लागू पड़ने लगे तब तो सब उस वेदान्त को युगान्तर के लिये रखने लग जायँ, प्रत्यक्ष में सभी विलय को कोई नहीं चाहता, ज्ञान में चाहेंगे मगर व्यवहार में नहीं चाहेंगे, तब ऐक्य का वेदान्त अनाश्रितसा बनकर असंसार में लब्धप्रतिष्ठ हो के विजय पाता रहेगा, परोक्ष बात श्रुतियाँ को प्रिय लगती है, तब उनके पढने वाले को भी प्रिय लगे इसमें क्या कहना, मगर एक बात यह

उत्कृष्ट हो आती है कि भावनानुसार स्वरूप दर्शन होगा, ब्रह्मदर्शन ब्रह्मात्म का ब्रह्मता ब्रह्म जरूर होगा, यह सिद्धान्त क्रम नहीं है।

पाशुपतादि शैवो ने ब्रह्म ही शिव-शिव ही ब्रह्म माना शक्ति ही शिव-शिव ही शक्ति माना, शिव ही संसार-संसार ही शिव माना तब संसार शिव व ब्रह्म अभिन्न हुए, संसार में भी अभिन्न में खप गया, भिन्न कहाँ से रहूँ, शक्तिविशिष्टाद्वैत शिवविशिष्टाद्वैत लिंगाद्वैत रसाद्वैत सर्वाकार शिव, शिव ही ब्रह्म है मैं भी ब्रह्म हूँ इस प्रकार वेदान्त ब्रह्म में आप को पहूँचाता है।

शक्तिओं द्वारा सृष्टि होने से शक्त्यद्वैत भी होना संभवित ही है, शक्तिभरे हम शक्त्यन्वित में शक्ति के साथ में पहुँचेगे ही, प्रतिबिम्ब साकार वाद में तो कहना ही क्या है? आधार मिटा प्रतिबिम्ब मिटा बिम्ब रह गया, वेदान्त विम्ब तक पहूँचता है, शाक्तसम्प्रदाय आगमिक सम्प्रदाय शिव में या ब्रह्म में कर्म उपासना भक्ति विज्ञान अर्पित करके उनके साथ अपने ज्ञानी भी अर्पित हो जाते हैं, अन्य देश विदेशों में भी यही हालत प्रस्थान है, 'सब उसमें जायँगे मिलेंगे'। यह है उनके एक या अनेक जन्मवादों के सार। केवलकर्मवाद केवलनिराकारवाद जो कुछ हो हमारा उनका सम्बन्ध वर्णित करता है, उनमें अन्दर या समीप में पहुँचाते हैं, पहूँचाना घोषित करते रहते हैं। घोषित कुछ भी हो, मानव विद्वत् समाज उन वादों को अपनाते हैं, थक जाने पर तो 'अत्रैव ब्रह्म समश्नुते' का आश्रय ले लेते हैं, ये सभी वेदान्त ही हैं, गौतम का, कपिल का, जैमिनि का वेदान्त भी 'एकमेवाऽद्वितीय' हि 'सोऽश्नुते सर्वान् कामान्' देनेवाले का आश्रय बतलाते हैं। श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी महाराज के सभी ये वेदान्त निजमूर्ति में बसे हैं, वे स्वामी जी ही वेदान्तों की पिण्डमूर्ति हैं, उनके शास्त्रों में से सगुण निर्गुण वेदान्त स्वरूप ही ज्ञात हो आते हैं, यह अनुभूत विषय हैं। वेदान्तमूर्तिर्विजयते।

भारतीय गौरवमूर्ति सन्तरूप में

विद्वद्विधेय-स्वामी मीनाक्षी भास्कराचार्य

चिदम्बरम्, कर्नाटक, मद्रासराज्य

भारत एक ऐसी पवित्रभूमि है जिसमें कल्याणकारी अनेक सन्त प्रकट होते आये हैं, जनकल्याण-कारी धर्ममूर्तिरूप स्वयं भारत में विचरते हैं, समग्र पृथ्वी में भारत का गौरव चमत्कारी आकर्षक सन्त द्वारा हैं, तारणहार सन्तों के स्मरण भी निष्पाप करा के स्मर्ताओं को कैवल्य पद में पहुँचाता है, उत्तम गतियाँ होती हैं, नैष्कर्म्य बना रहता है, भगवन्मूर्ति सन्तस्मरण द्वारा परागति प्राप्ति होती है, श्रीहरि के भक्त शंकर के, विष्णु के या माता जी के भक्त हों, सूर्य अग्नि गणेश हनुमान जी भैरव आदि कोई भी देव के भक्त हों, महर्षि ग्रह तीर्थ आदि के जापक उपासक हों, ये सब सन्त सद्गुणी होने से भारत के गौरव बढ़ाने वाले हैं, अन्य देशो में भी यही बात है, माता-पिता जनता देश के सेवकों से भी उन भूमियों के गोरव बढ़ते आये हैं, पातिव्रत्य शीलव्रत आदि से भी देशों के गौरव काव्यों द्वारा गाये जाते हैं, सती शंकर ने अवधूत योगी स्वरूप में शिवगौरी शिखर में निवास करके हिमालय व भारत का गौरव बढ़ाया, इनके पीछे अनेक अवधूत होते आते हैं, ब्रह्मा जी ने पुष्करराज में, विष्णु भगवान् ने वेंकटाचल में तपश्चर्या तथा भक्त पर कृपा करके भारत का गौरव बढाया, बुद्ध ने अरण्य में, अर्हन् ने अद्रियो में, कपिल ने सिद्ध स्वरूप में सिद्धपुर व कपीलधारा में, दत्तात्रेय ने अवधूत स्वरूप में रैवताचल में, ऋषभ ने तीर्थभूमिओं में, वामन ने बलिखातभूमि में त्रिविक्रमस्वरूप में, पर्शुराम ने मांडला अरण्य में तथा अर्बुदाचल में, श्रीराम ने दक्षिण में पंचवटी आदि में, श्रीकृष्ण ने अनेक भूमिओं में विचरण व निवास करके भारत का गौरव बढ़ाया, अंश कला आवेशावतारों ने भारत में अगणित कल्याणकारी कायँ किये, विद्वान अवतारों ने शास्त्र बनाये, व्यासजी ने ब्रह्मविद्याएँ प्रकट की, ऋषियों द्वारा उपनिषद् विद्याएँ कल्याणप्रद विकसिन हुई, श्रीशंकराचार्य श्रीरामानुजाचार्य श्रीवल्लभाचार्य श्रीमाध्वाचार्य श्रीनिम्बार्काचार्य श्रीस्वामिनारायणाचार्य श्रीरामानन्दाचार्य आदि आदि ने भगवान की भक्ति करवा के भारत में बड़े-बड़े सम्प्रदाय स्थापित किये, अवतारों के मन्दिर बनवाये, इष्टदेवों की प्रतिमा प्रतिष्ठापित कीं, धोरी भक्तिमार्ग चालू किया, ईश्वरीय गौरव फैलाया, प्रजा में भक्ति का गौरव बढाया, अनेक प्रकार से मोक्षमार्ग चालू करवाये, अनन्त अगम्य विद्याओं का प्रचार करके ज्ञान कर्म धर्म प्रपुष्ट किये, सदाचारवाली प्रजा सुरक्षित की, गुरु परम्पराएँ सतत शृङ्खलाबद्ध बनायीं, अद्वैत एक परमेश्वर के लिये चकनाचूरपने में जीवन अर्पित कर दिया, वेद शास्त्र पुराण इतिहासों की घोषणाएँ कायमी चालू रख दी गईं, यज्ञ हवन पूजा अनुष्ठान कायमी हर एक प्रजा में चालू किया, स्नान सन्ध्या जप होम स्वाध्याय पितृतर्पणादि सत्कर्म सतत करने को बताया, ऐसी भारत की गौरवभरी सत् प्रवृत्तियाँ-उन-उन प्रकट अवतारी सन्तों द्वारा होती आयी हैं, भारत में सन्तों द्वारा सर्वत्र पवित्रता अहिंसा परोपकारिता-शुद्धि देवार्हणा वृद्धपूजा स्वामिसतीसत्कार तीर्थव्रतदान होते आये हैं व होते हैं, श्रीलक्ष्मीनारायण श्वेतायन संहिता में पृथ्वीपर के भूतकालीन चमत्कारी प्रताप प्रायशो महाभारत से भी ज्यादे निरूपित हैं, जिनश्रवण से भारत का प्राचीन नवीनगौरव जाने जाते हैं, श्रीकृष्णवल्लभाचार्य स्वामीजी के गौरवभर चमत्कार भारत के लिये गौरवस्वरूप हैं, केवल सौराष्ट्र या महागुजरात में ही नहीं किन्तु भारत में और अन्य-अन्य देशों में पवित्र ये सन्त प्रातः संभारे जाते हैं, पूजे जाते हैं, इनकी

पवित्र संगमरमर की बैठी माला जपती मूर्ति तीन फूट से अधिक ऊंचाई में श्रीकुंकावाव नगरी में राष्ट्रीय प्रासार में सुप्रतिष्ठित जनता द्वारा स्थापित की गई है, वहाँ तीर्थभूमि बनी है, प्रतिमा के सम्मुख आराधना करने वाले के इष्ट संकल्प पूर्ण होते हैं, ये परचे चमत्कार होते रहते ही हैं, भगवान के अवतारों से अवतारी परमपुरुषों के प्रकट होने से भारत को महागौरव है, विद्वान् सन्तों द्वारा प्रकट हुई विद्याओं द्वारा भारत का बड़ाभारी गौरव है, जिन विद्याओं को समग्र पृथ्वी के प्रदेश विदेश स्वीकारने लगे हैं, श्रीस्वामीजीने अनेक आधिदैविक आध्यात्मिकविद्याएँ प्रकट की हैं लिखी हैं भारत को प्रदान की हैं, विद्याओं के सम्प्रदाय चालू अविच्छिन्न रखे हैं, यह एक भारत का केवल नहीं समग्र पृथ्वी के लिये देन हैं। व्यासों ने जो कुछ भारत को दिया है वह उसके लिये देन है, दक्षिण में आलवार सन्तों ने जो कुछ कर बताया है वह भारत के लिये देन है, वैसे ही पेरी आलवार कुलशेखर विप्रनारायण मुनिवाहन पोयगे भूतत्ता पेयालवार मधुर कवि नम्मालवार आदि भारत के गौरव बढ़ानेवाले औतार हो गये। रेणुकाचार्य दारुकाचार्य एकोरामाराध्य पण्डिताराध्य विश्वाराध्य निजगुणशिवयोगी सिद्धलिंगशिवाचार्य औतारस्वरूप भारत के गौरव बढ़ाने वाले हैं, नाथमुनि विठ्ठलजी चैतन्यमहाप्रभु महावीर ज्ञानेश्वर नामदेव रांकाबांका कबीर पीपा नरसिंहस्वामी तुलसीदास हिताचार्यमहाप्रभु जगन्नाथदास गुरुनानक गोविन्दसिंहजी श्रीचन्द्रजी शंकरदेवस्वामी सन्त दादूजी समर्थ गुरुरामदास सन्त तुकाराम निजानन्दाचार्य प्राणनाथस्वामी दरियासाहेब डींगाराम राम कृष्ण परमहंस राजा राममोहनराय दयानन्दसरस्वती राधास्वामी अगस्तीन् लूई पोल जरथूस्त्र मोहम्मद मेब्रील एजिला पद्मसंभव मत्स्येन्द्रनाथ गोरखनाथ श्रीगुणातीतमुनि श्रीगोपालमुनि तुलाधार आदि-आदि बड़े-बड़े अवतारी पुरुष भारत में हो गये हैं। ये जीवात्माएँ नहीं थे परमपुरुष के औतार उतरे थे, यज्ञनारायण ऋषभदेव हुए थे, स्वायम्भुव मनुका दशरथ वसुदेव तथा विष्णुशर्मा होना, उनके घर क्रमशः श्रीराम श्रीकृष्ण श्रीकलंकी भगवान् का होना बताया है। ध्रुव के वंशज बेन की भुजाओं के मथन द्वारा विप्रों ने विष्णु व लक्ष्मी के अवतार स्वरूप पृथुराजा व अर्चि देवी को प्रकट किये थे : कर्दम ऋषि से देवहुती में कपिलदेव भगवान् अंशावतार सांख्यज्ञ प्रकट हुए थे। श्रीमहादेवजी के अवतार भृगु दशम द्वापर में हुए, उनके घर लक्ष्मीजी पुत्री हुई, भार्गवी का भगवान से व्याह हुआ। ब्रह्मा विष्णु चन्द्रमा तीन देव दत्तात्रेय हुए थे। कश्यप के घर वामनजी प्रकट हुए थे वामनजी गिरनारपर्वत की तराई में दामोदरस्वरूप से विराजते हैं। अंगिरा ऋषि के घर अग्नि देव ने अवतार लिया वह बृहस्पति कहलाया। अत्रि के घर शंकर दुर्वासारूप में प्रकट हुए थे। मरीचि अंशावतार है। हनुमानजी शंकर के अवतार है, जाम्बवान् ब्रह्मा का अशाऽवतार था, विदुरजी यमराज का अंशावतार कहा गया है। पेरी आलवार गरुड का अवतार था, इनकी पुत्री आण्डाल श्रीरंगनाथ भगवान से व्याही थी भगवान के साथ दिव्य बनकर चली गई। कुलशेखर केरलराजकुमार कौस्तुभमणि का अवतार था, विप्रनारायण ब्राह्मण वनमाला का अवतार था। मुनिवाहन धान्य की खेत में पड़े बालक रूप में एक अन्त्यज को मिले थे, मुनिवाहन श्रीवत्स का अवतार माना गया है। पोयगे पांचजन्यशंख का अवतार माना गया है। भूतत्ता को भगवान की कौमुद की गदा का अवतार माना गया है। पेयालवार खड्ग का अवतार था। मधुर कवि गरुण का अवतार था। नम्मालवार विश्वक्सेन पार्षद का अवतार था। श्रीगणेशजी श्रीकृष्णनारायण का अवतार है। रेणुकाचार्य कल्पवाकक्षेत्रस्थ सोमेश्वरलिंग द्वारा प्रकट हुए थे। दारुकाचार्य सिद्धेश्वरलिंग से प्रकट हुए थे। श्रीएकोरामाराध्य रामनाथलिंग से प्रकट हुए थे। श्रीपण्डिताराध्य मल्लिकार्जुनलिंग से प्रकट हुए थे। श्रीविश्वाराध्य काशीविश्वनाथलिंग से प्रकट हुए थे। श्रीनिजगुणशिवयोगी तथा सिद्धलिंगशिवाचार्य श्रीशंकर के अवतार हुए थे। रामानुजाचार्य शेषनारायण लक्ष्मणजी के

अवतार थे। निम्बार्काचार्य सूर्य या सुदर्शन का अवतार माना गया है। मध्वाचार्य वासुदेव का अवतार है। वल्लभाचार्य तैलंगी स्वयं भगवान् एकसो यज्ञों के पुण्यपिण्ड एकत्रित रूप में प्रकट हुए। अग्नि के अवतार भी कहाते थे। विट्ठलजी स्वयं भगवदवतार थे। चैतन्यमहाप्रभु श्रीराधाशक्ति के अवतार गीने गये हैं, पूर्णब्रह्म भी कहाते है। रामानन्दाचार्य विभवावतार लिखा है। ज्ञानेश्वर विष्णु का अवतार है। नामदेव श्रीविठ्ठलनाथ का अवतार है। पंढरपुर में रांकाबांका श्रीविष्णुलक्ष्मी के अवतार हैं। कबीर योगी द्वारा प्रतीचिदेवांगना में प्रल्लाद का अवतार प्रकट हुआ है। नरसिंह स्वामी माधव से अम्बा में दत्तात्रेय का अवतार हुआ। तुलसीदास सरयूपारीण ब्राह्मण में वाल्मीक के अवतार रूप थे। श्रीहिताचार्यमहाप्रभु भगवान की बंशी का अवतार था। जगन्नाथदास राधा तथा दुर्गा का अवतार था। जयदुर्गा अर्धकाली परमेश्वरी का अवतार थी। शंकरदेवस्वामी वैष्णव आसाम में शंकर का अवतार हुआ। समर्थगुरुरामदास सूर्यवरदान से प्रकट हुए थे। निजानन्दाचार्य देवचंदजी ब्रह्माऽद्वैत की वासना अवतार है। प्राणनाथजी मेहदी मसीहा या कल्की अवतार थे। एजिला सशरीर स्वर्ग में चला गया था। मार्कण्डेय स्वयं नारायणावतार कहा है। परशुराम आवेशाऽवतार हुआ। श्रीगोपालानन्द स्वामी श्रीकृष्णाऽवतार माने जाते हैं। श्रीगुणातीतानन्द स्वामी अक्षरब्रह्म के अवतार माने जाते हैं। श्रीराधिकाजी श्रीकृष्ण की बंशी का अवतार स्वरूप है। गोपियाँ देवताएँ थीं। श्रीकृष्णवल्लभाचार्य स्वामी श्रीश्वेतायन व्यास के अवतार अनादि श्रीकृष्णनारायण के स्वरूप माने जाते हैं। इनके भक्तों के सत्संगसे तथा प्रत्यक्ष दर्शन से तथा इष्टसिद्धि चमत्कार से इनका भगवान्पना मुझे निश्चित ही मानने में आया है, मुझे निद्रा में चतुर्भुज नारायण स्वरूप में समुकुट तेजस्वी दर्शन हुआ, ध्यान करने बैठता हूँ तब कई बार इन्हें नारायणस्वरूप में देखता हूँ यह मेरा प्रत्यक्ष प्रमाण है। मद्रास में बड़े उत्सव पर गया मगर इन प्रभुस्वरूप विद्वान का दर्शन वहाँ नहीं हुआ, सभी विद्वान लोग इनके दर्शनार्थ दत्तदृष्टि हो रहे थे, सभाकार्य में दूसरों की हाजरी थी इससे विद्वानों को परमसन्तोष मिलना अपूर्ण ही रह गया, पश्चिम काशी के एक नामधारी जगद्वन्द्य आसमुद्रान्त प्रख्यात नैयायिक धुरन्धर महायति सन्त दक्षिण विभाग के अच्छे-अच्छे वैष्णव व शैव विद्वानों को हार्दिक आराध्य है, इन महाबृहस्पति स्वरूप के न्यायवेदान्तसांख्ययोग मीमांसा आदि के ग्रन्थ पठन-पाठन में उपयोग लेने वाले को परिष्कार व तत्त्वनिर्णयों में बड़ा आश्चर्य पूर्वक सुसन्तोष मिलता है, दक्षिण में द्राविड तेलगु कर्णाटक मद्रास माईसोर मधुरा रामेश्वरम् आदि-आदि नगरों में संस्कृतविभागों में वहाँ वहीं की युनीवर्सीटियों में श्रीकृष्णवल्लभाचार्यन्यायाचार्यजी के दार्शनिक ग्रन्थ पठन पाठन में अतीवोपयोगिक हो रहे हैं, मुक्तबानी से इनका कीर्तिब्यान फैला है, मायावरं नागपट्टं तान्जोर त्रावनकोर मलय गूटकल आरकोणम् कुंभकोणम् त्रिचिनापल्ली त्रिवेन्द्रम् आदि-आदि स्थलों में युनीवर्सिटीओं के संस्कृत विभागों में इन प्रकाण्ड पण्डितवर्य के ग्रन्थ उत्तम पढ़ाई में उपयुक्त हो रहे हैं। जिनकी प्रशंसा एक कण्ठ से कहाँतक हो सके। कोलम्बा से आये हुए एक म० म० विरुद स्वामी महाचार्य ने किरणावली मेरे पास से ले ली, वे और भी इन महाविद्वान के पुस्तकों के परिचित थे। वे कहते थे कोई गौतमावतार स्वामी श्री हैं, या तो श्रीनिवासावतार स्वरूप में भी असन्दिग्धता है।

संस्कृत साहित्य में स्वामीजी का स्थान

पं० शान्तानन्दजी दर्शनाचार्य तर्कतीर्थ

नदीयाशान्ति

संस्कृत साहित्य बिशाल है, परमात्मा ने ब्रह्मा द्वारा वेद प्रकट किये, वे सभी शास्त्रों के साहित्य के मूलभूत हुए। वेद की सहस्र शाखाएँ ऋषि महर्षिओं में व्याप्त थीं, विशाल भूमण्डल में दूर-दूर निवासी ऋषिसन्ततियाँ देशकालादि वैपरीत्य के कारणों से उत्तम मध्यम हीन कर्मठ होने लगीं, मेधाह्रास होने लगा, धारणशक्ति में मान्द्य होने लगा, शाखाएँ अनबधृत होने लगीं, दीर्घकाल से कई शाखाएँ लीनसी हो गयीं, उच्छिन्न-प्रच्छन्नवाद लागू पड़ गया, यज्ञकाण्ड प्रतिष्ठान स्तुतियाँ वाली शाखाएँ जहाँ-जहाँ ताजी होती रहीं, उपयुक्त होने से बचाव पाने लगीं, वे रह गयीं, ज्यादातर शुक्लकृष्ण यजुर्वेद, कुछ ऋग्वेद, देवताओं से जरूरत वाला सामवेद, उपयुक्त मन्त्रात्मक अथर्ववेद, उनके अधिकारीओं में टीक गयें, अनधिकारिओं में से हठगाया, अनाश्रय अनुपयोग अनभ्यास कारण बन गये लुप्तता व्याप्त होने लगी, अब तो कागज पर जीवन रह गया। आनेवाले घोर कलि में कागज भी नहीं मिलेंगे, कर्मकाण्ड भी निर्जीवन होगा शशवत् मानव जंगली बन जायँगे, छठवाँ वर्ष युवानपना लायेगा, बारहवाँ बूढ़ापा लायेगा, उसके आसपास मृत्यु नजर दौड़ायेगा, यह हालत सभी के ह्रास की पुराणों में लिखी हैं। वैसे ह्रास कई बार होते आये हैं, नये शास्त्राविष्कार भी होते आये हैं, वेदों के लिये नैरुक्तशास्त्र रचा गया, शुद्धयर्थं व्याकरणं शिक्षा रचे गये, वैदिकानुष्ठान वैशद्यार्थं कल्पसूत्र रचे गये, मात्रादि परिचयार्थं छन्दःशास्त्र रचा गया, वैदिकसृष्टि के परस्पर सम्बन्ध असर फल स्थिति गति सामयिक आकस्मिक होनारतों जानने जनाने के लिये ज्योतिःशास्त्र रचा गया, जड़चेतन सृष्टि विज्ञान के लिये पाशुपत शास्त्र रचा गया, ईश्वरीय विभूतियाँ के लिये नारदागम पंचरात्र रचा गया, भौतिक विज्ञान के लिये बार्हस्पत्यशास्त्र रचा गया, राज्य नियमनादि के लिये प्राजापत्य व मानवशास्त्र रचे गये, विविध धर्मों के लिये आंगिरसशास्त्र रचा गया, आवरदा रसायन चिकित्सा आदि के लिये आयुर्वेद हायग्रीवशास्त्र रचा गया, लड़ाईयों के ज्ञान के लिये धनुर्वेदशास्त्र रचा गया, व्यवहार के लिये कलाशास्त्र रचे गये, देवताओं के दैवत शक्तियाँ जानने के लिये तन्त्रशास्त्र रचे गये, पराभव साधना आदि के लिये मन्त्रशास्त्र रचे गये, सृष्टियों के वृत्तान्तों के लिये संहिताशास्त्र रचे गये, रूपक आख्यानों के लिये पुराण रचे गये, ऐतिहासिक संग्रह के लिये महाभारतादि रचे गये, आध्यात्मिक विज्ञान के लिये दर्शन शास्त्र रचे गयें, परब्रह्म की उपासना के लिये ब्रह्मविद्याएँ एकत्रित की गई, वे उपनिषत् स्वरूप में प्रसृत हुयीं, नीति के लिये औशनसशास्त्र रचा गया, मोक्ष के लिये भक्तिशास्त्र रचे गये, सेवा के लिये उपासनाशास्त्र रचे गये, स्वर्गादि के लिये दानशास्त्र रचे गये, मुक्ति के लिये शरणागतिशास्त्र रचे गये। सभी शास्त्रों में तत्त्वनिर्णयार्थ आन्वीक्षिकी न्याय-विद्यामय गौतमीयशास्त्र रचा गया, अलंकार उत्सव महोत्सव महानन्द शृंगार आदि के लिये काव्य साहित्यशास्त्र रचा गया, ये सब शास्त्र जगद्भर के जनों को सहारा देने वाले हैं, जो सहारा देता है, सह साथ रहता है, वह साहित्यनाम से कहा जाता है, अनेक कलाविदों को कलाएँ कलाओं के विज्ञान कलामय कारिगरीयाँ साहित्य स्वरूप होती हैं, भौतिक विज्ञानीओं के लिये भौतिकविकास साहित्य होता है, रासायनिक धातवीय वायवीय औत्पातिक विज्ञानिओं के लिये रसायन धातु वायु प्रवहण अकस्मात् निमित्त आदि साहित्य होते हैं, जो जिनके लक्ष्य में फल में प्राप्य में आकर्षण हो वह उनके साहित्य होते

हैं, राजाओं को लश्करी साधन लड़ाईयाँ साहित्य होता है, ऋषिमुनि यति योगि संन्यासी त्यागिओं को उपासना संयम त्याग भक्ति ज्ञान वैराग्य आदि साहित्य होते हैं, स्वर्गार्थीओं को धर्म परोपकार आदि साहित्य है, वासनिक को इष्ट पदार्थ साहित्य होता है। भगवदवतारों ने जिस काम के लिये प्राकट्य स्वीकारा उसी साहित्य को अपना करके वे जगदुपकार करते हैं, प्रायशः श्रीस्वामीजी ने देशी भाषा का शिक्षण कौटुम्बिक रहन सहन का शिक्षण विद्याभ्यास का शिक्षण शास्त्रलेखन तत्त्वज्ञान का शिक्षण गुरुवर्यों से लिया, काव्यों में न्याय में वैशेषिक में वेदान्त में सांख्य में योग में मीमांसा में नीति में उपदेश में इतिहासों में छन्दों निरुक्त व्याकरण आदि में धर्मशास्त्रों में ब्रह्मशीलता आध्यात्मिक स्थिरता लोकोपकारिता व निर्लेपता तथा बड़े-बड़े संहिता ग्रन्थ लिख के जगदुपकारिता आदि किये, इन सभी प्रकार के साहित्य में आप का स्थान प्रत्यक्ष दीखता है, आपने त्याग तप में उपश्रद्धा उत्साह सहनशीलता आदि-आदि कौटुम्बिक गुणरूप में निज में बसाये हैं, काशीजी में क्विन्स कालेज के विद्यार्थी समुदाय ने निज आचार्य पद से बाहरी परीक्ष्य विद्यार्थीओं को न्यून उपाधि होने मिलने के लिये चार हजार लगभग हस्ताक्षर किये, श्रीस्वामीजी के पास जब हस्ताक्षर करने को वह समूहित पत्र आया, तब श्रीस्वामीजी ने विमर्श करके कहा-सभी के समान लाभ में निजभिन्नों को निम्न लाभ कराने के लिये ये हस्ताक्षर हो रहे हैं, मैं सोचता हूँ कि गवर्नमेन्ट संस्कृत क्विन्स कालेज के उत्तीर्ण विद्यार्थीओं को व बाहरले परीक्ष्य विद्यार्थीओं को टाईटल उपाधि पत्र में 'आचार्य' उपाधि गवर्नमेन्ट से समान ही मिलता है, तो हम तो वैसे ही रह जावें और अन्य को निम्न दशा की उपाधि में डालने का यत्न कर रहे हैं, यह नुकशानी कराना अपना काम नहीं है, वैसा करिए की बाहरले विद्यार्थीओं को 'आचार्य' टाइटल ठीक ही है, मगर कालेज के उत्तीर्ण गवर्नमेन्ट के विद्यार्थीओं को 'महाचार्य' 'महोत्तमाचार्य' 'पोष्टाचार्य' आदि ऊँचा उपाधि मिले। इस प्रकार माँगना अच्छा है, निम्न कराना अच्छा नहीं है। इस परोपकारी उदार बात के अच्छे विद्यार्थी गण समझ गये, तुरन्त सहीवाले कागज केन्सल रद्द कर दिये गये, व पोष्टाचार्य या महाचार्य के लिये नया लखान हुआ और नयी सहीयाँ हुयीं, उस पर पोष्टाचार्य शास्त्राचार्य आदि निर्माण हुआ, इस प्रकार सभी विद्वानों के लिये साहित्यिक दृष्टिवाले स्वामीजी सभी शास्त्रों में निष्णात ४४ ग्रन्थों को लिखने वाले आज भारतीय व विदेशीय बड़े-बड़े विद्वानों से अभिनन्दन ले रहे हैं, विद्वान् लोक श्रीकृष्णवल्लभाचार्य स्वामीजी को हर एक प्रकार के अभिनन्दन पात्र मान कर सम्मान दे रहे हैं, यह भारतमाता के विद्वानों के लिये अति उत्तम काम है, भारत माता का भारतीय दार्शनिक विद्याओं का तथा भारतीय विद्वानों का सदा के लिये उत्कर्ष विजय पाता रहेगा। स्वामी श्रीपश्चिम काशी में रहे हैं, तो भी मध्यमहा काशी को अपने में तदात्मक भाव से बसा कर ही वहाँ रहे हैं, काशीजी के सभी प्रकार के साहित्य में सभी विद्याओं में आपने लेखिनी चलाई रक्खी है, नूतन आविष्कृत पुस्तक दान देते रहते हैं। श्रीहरिसंभव काव्य का महाकाव्यनिबन्ध का ग्रन्थ जो सौराष्ट्र में लिखा गया था उसको मध्यमहा काशीजी में मुद्रित करवा के अनेक पण्डितों को अर्पण किये हैं दान में दिये हैं, न्याय सांख्यकिरणावली मीमांसाकिरणावली आदि-आदि काशी में ही प्रकाशित करवा के विद्यानिधियों के अन्तेवासिओं के लिये उपकार कर रहे हैं। श्रीलक्ष्मीनारायणसंहिता में तो काव्यसाहित्यदर्शन आदि जो-जो विद्याविभाग हैं वे सभी प्रविष्ट हो गये हैं। साहित्य में ओतप्रोत होके आज स्वामीजी श्वेतायन व्यासस्वरूप में विराजित हैं। भगवान् अभी भी दीर्घायु बनावें, एकहत्तर वर्षों से आगे शतक पर्यन्त पहूँचे और भारतभूमि को तथा सभी विदेशों को भी उपकार करते रहे। शम्।

पू० स्वामीश्री एक तेजस्वी स्कोलर प्रतिभाशाली विद्वान्

पं० कृष्णकेशव शास्त्री, न्यायाचार्य

वृत्तालय

श्रीस्वामिनारायण वैष्णव सम्प्रदाय के नैष्ठिक व्रतशाली त्यागी आचार्यवर्य श्रीकृष्णवल्लभाचार्य शास्त्रीजी बचपन से ही कोई दैवी चमत्कारी परमपुरुषनिभ है, गीताजी में वर्णित योगिजन योगसूत्र में कथित जन्मान्तर सिद्ध पुराण में प्रदर्शित महातपस्वी संहिताओं में निरूपित ईश्वरीय सम्बन्धी ऐश्वर्यशील विद्वान् सन्त महात्माओं की जीवनी में लक्ष्यीकृत दिव्यलौकिक अलौकिक सर्वज्ञांश मोक्षीयपुरुषों की कोटि के हैं, बालपने में भी इनकी प्रज्ञा में तर्क ही विशेष स्थान लेते थे, सिद्धान्त पर आकृष्ट रहते थे, उपदेश प्राप्त होने पर सार ग्रहण करते थे, और निर्णय भी यथार्थ देते थे, आत्मा परमात्मा के ब्यान में रस लेते थे, भंभा भट्टों की कथित महाभारत की कथायें सुना करते थे, उपदेष्टा सन्तजन की वाणी सुनते ये, भागवत रामायण आदि की प्राचीन कथाएँ देवमन्दिर में सुना करते थे, पुरुषोत्तम मास तथा एकादशी आदि कथापान किया करते थे, दो दिन के व्रतों पर विप्रवर्य से खुलासा माँगते थे, उस पर स्वयं व्रत की सीमा का विवेचन लेके कहते थे कि—जब से दिनमान शुरू हो तब से दिनमान उतरते तक का एकही व्रत सबके लिये क्यों न किया जाय ?, जब विन्ध्याचल का सूर्य चन्द्र नक्षत्र के रथमार्गों तक लाख दो लाख कोश पर्यन्त बढ़ते जाने की बात होती थी उस पर कहते थे कि एक दो ही माईल के घेरावे में शरीरयष्टि वाला विन्ध्याचल विच में ही अपने वजन से या ग्रहों के आघात से क्यों भाँग नहीं गया, इसका पैर पृथ्वी में कौनसी जगह रक्खा होगा, जब ग्रहण की कथा आती थी चार प्रहर भोजन वर्ज्य के लिये वेध निमित्त बतलाया जाता है उसमें वेध सूर्य चन्द्र को लगे व भोजनबंधी मानव को क्यों लगाना ?, एकादशी भगवान की पुत्री उसी की पत्नी क्यों लिखी गई, दिनान्त में सत्यव्रत जहाज में बैठा सबेरे तक बीजों की रक्षा करके सृष्टि में बोने लगा, सोलह मन्वन्तर जितनी उसका आयु बनाया इससे तो भगवान् संकल्प से नये बीज बनाते यही सरल पड़ता, कोई परमाणु से चैतन्य से शून्य से माया से अज्ञान से स्वरूप से वा सृष्टियाँ लिखते हैं तो वे क्या सर्वज्ञ ही से निर्णीत करके एक सिद्धान्त क्यों नहीं लिख गये, कर्मवाद में या निर्लेपवाद में एक में ही रहना था सभी वादों को क्यों अज्ञानिओं के आगे धर दिये, ?, इत्यादि तर्कित विचार रजू करते थे तथा आप्तजनों ने कहे सिद्धान्त को स्वीकारते थे आस्तिकता से हठते नहीं थे, व्यक्ति का कर्तव्य है कि सीखने के लिये अभ्यस्त व्यक्ति का आधार लेवें, स्वयं विचार मनन समाधान भी किया करते थे, जब शास्त्राध्ययन करने लगे तब एक परमाणु में दूसरा परमाणु घूस ही जाय तो द्वयणुक कद में विपुल कैसे बनेगा ?, कोई भी शब्द कखग राम कृष्णओं आदि व्यंजन स्वर एकक्षण में बोले ही नहीं जाते क्रम ही लगता है तो शब्दसिद्धि ही नही होता तो अर्थबोधकता मानना भूल क्यों नहीं है, अवकाश तो शून्य है उसमें शब्द गुण मानना इससे तो शब्द द्रव्य ही सूक्ष्म अवकाश नाम से क्यों न पुकारा जाय ?, एक प्रकृति में तीन गुण घूसा दिये एक आत्मा में तीन सच्चिदानन्द अंश घूसा दिये तो वह एकतत्त्व नित्य कैसे हो सकता है ? ब्रह्म से ही पाँचभूत व भूतों के गुण कर्म विकार मानना व सूक्ष्म कल्पित तत्त्वों को न मानना क्यों श्रेष्ठ नही गिना गया ?, एक ही तत्त्व चेतनाऽचेतन बने तो क्या हरज खड़ा होता है ?, ब्रह्माण्ड में ज्यादा माल है ?, और नेत्र में न्यून है, यह विपरीत क्यों न माना जाय, उष्णता को ही

आत्मा क्यों न माना जाय, दस-दस वर्ष पर एक नियामक देवदूत आकाशमार्ग से आकार सभी को विपरीत पथगामित्व से रोके वैसी व्यवस्था क्यों नहीं बनायो, और याम्यदण्ड दुरस्त बनाने का प्रयत्न किया, ?, इत्यादि-इत्यादि तर्कसंभृत विचार में आरूढ़ हो जाते थे और वृद्धों से इनके समाधान भी ले लेते थे, पण्डित होने पर कई ग्रंथ लिखे हैं, उनमें, सर्वं साकार, सर्वं साक्षात्, सर्वं विशिष्टब्रह्माद्वैतं, सर्वं साऽवस्थं, सर्वं सापेक्षं, सर्वं सत्समुच्चयख्यातं, सर्वं यथार्थं, इत्यादिविचारवाद भी अपनी लेखिनी के विषय बनाये हैं, सांख्ययोग वेदान्त आदि भाष्य रचना में प्रसंगोपात्त पदार्थों पर कारणकार्य पर संसार पर इसके अनादि प्रवाह पर सन्ततिपरम्परा पर मुक्ति स्थिति पर लोक-अलोक पर विभिन्न प्रस्थान पर न्यायतर्कादि युक्तियाँ पर भी विविध विचार चलाये हैं तात्पर्य खींचे है सिद्धान्तित प्रकाश में धरे हैं व सुज्ञ प्रातिभ मानव मंडल के लिये खूब-खूब ज्ञानोपकार किये हैं, इनके रचित शास्त्र बांचने से आश्चर्य होता है जगह जगह में नये अविष्कार देखने में आते हैं, स एषः पूर्वेषामपि गुरु की तरह इनकी बुद्धि का थाह पाना मुश्किल सा लगता है। प्रशंसा का नाम अर्थवाद है अपि तु वहाँ भी कोई न कोई परम्परया निजार्थ भी व्यञ्जित हो आता है, यही विलक्षणता है कि अर्थवादों के स्वरूपों को कहीं-कहीं अवस्थान्तर में धर लेते हैं, प्रतिव्यूह में दाखल कर देते हैं, इनके अध्ययन समय से ही मेरा अनुभव विकास में दौड़ने का स्वभाव बाला हो गया, जिससे मुझे सत्य की खोज करना सहज सा लगता था, परमात्मा ने या सरस्वती ने बृहस्पति ने या पुण्यपति ने श्रीस्वामीजी स्वरूप एक विद्यामूर्ति महादिव्यशक्ति भारत को प्रदान की है, जिसने श्रीकृष्णद्वैपायन व्यासजी के समय के उत्तर में जगत् को शास्त्रीय परिष्कृत शुद्ध घन साहित्य रूप में समर्पित किया है, पढना पढाना लिखना बांचना उपदेशना पालना पलवाना कल्याण में लगाना निःश्रेयस में पहूँचाना इत्यादि श्रेष्ठतम स्कोलर फिलोसोफर रीडर राईटर स्पीकर थोटर न्युसर्जक ज्ञप्ति क्रियेटर आदि-आदि निजतेजस्विता भरपूर प्रतिभापूर्ण विज्ञान के मूर्तस्वरूप जगत् को दिये हैं। यह भारत व भारतीयों के लिये अधिक गौरव है। सहवास से चमत्कृतियाँ अवगत होती हैं, शास्त्र सहवास से कृतिदर्शन से कीर्ति श्रवण से शान्तिप्रदवातावरण से कथन के पडछंदों से अन्तेवासी प्रणाली से प्रति-स्पर्धिपक्षगामीओं से भी व्यक्ति का व्यक्तित्व गगन में गाजता है जगत् में प्रसरता है हृदयों में बसता है फल देके विरमित भी होता है। आज मैंने अवसर पाके अभिनन्दनार्थं वास्तविक स्कोलरशीप स्वरूप में या सेवादक्षिणास्वरूप में अनुभूत विज्ञप्ति धन समर्पित किया है। इनमें का अंश भी लेने से आध्यात्मिक धनाढ्यता जरूर मिलेगी। इनकी दिव्य कृपा जगत् के साथ-साथ मेरे पर भी विशेष हो, इस प्रार्थना के साथ विरमता हूँ ॥

श्रीस्वामाजी की भक्ति व तप

काव्यपुराणतीर्थ योगिराज भगवत्प्रपन्नाचार्य

सीमला, हिमगिरि, पंजाब

पूर्वजन्मीय भक्ति व तपवाली आत्माएँ कर्म द्वारा आवागमन नहीं करती, अपने इष्ट स्वामी परमात्मा की इच्छा पालन के लिये आवागमन करती है, वैसी व्यक्ति धाम के मुक्त ही है, भगवदिच्छा से गोकुल माथुर प्रदेश में श्री राधाजी विरजा सरस्वती गंगाजी सुदामा उद्धवजी अक्रूरजी गोप-गोपिकाएँ हुए, वैसे ही श्री स्वामिनारायण प्रभु के साथ उनके अक्षर ब्रह्म असंख्य मुक्त असंख्य मुक्तानिकाएँ ऐश्वर्य इत्यादि साथ में आये प्रकट हुए, श्री वासुदेव के साथ उनका चतुर्व्यूह, श्री शंकर ब्रह्म के साथ उनका चतुर्व्यूह शिष्य, श्री रामचन्द्रजी के साथ उनका चतुर्व्यूह, ब्रह्माजी के साथ उनका सनकादिक चतुर्व्यूह, श्रीकृष्णचैतन्य के साथ उनके चतुर्व्यूह, अनादि श्रीकृष्णनारायण के साथ उनके असंख्य व्यूह श्रीबुद्धभगवान के साथ उनके नव नाथ चोरासी सिद्ध व्यूह, श्रीअर्हन् सुगत के साथ उनके चोबीस व्यूह, श्रीनारायण के साथ इनके पार्षद व्यूह, श्रीवेदव्यास के साथ इनके अनेक व्यूह, श्रीविष्णु के साथ अनेक उपयोगी व्यूह, श्रीमन्वन्तर के साथ उनके व्यूह, देवी शक्ति माताजी लक्ष्मीजी के साथ उनके व्यूह, ये सब आज्ञा से साथ-साथ समान समय में प्रकट होते हैं, भगवान् के औतारों के साथ उनके आयुध वाहन सेवक सभी भगवदिच्छा से ही प्रकट होते हैं, निज सृष्टि में भक्तों के कई कार्य कराने के बाद अपने व्यूह में से योग्य को गद्दी पर बैठाकर बाकी के सबके सब निज शाश्वत भवन में चले जाते हैं, शाश्वत भवन की भक्ति सेवा लौकिक भवन में भी यहाँ करते रहते हैं, ये भक्तियाँ विविध रुचि से विविध प्रकार की होती हैं, अर्जुन बलदेव लक्ष्मण उद्धव अक्रूर सुदामा विभीषण अम्बरीष नारद इत्यादि भक्तिमार्ग प्रवरतावने वाले लोक कल्याण करते रहते हैं, जिस प्रकार के शरणागत उस प्रकार की भक्ति करवा के ब्रह्मधाम में भेज देते हैं। राधिकाजी गोपियाँ आदिक रतिविलास की भक्ति से भगवत्सेवा बजाती हैं, बलदेव नर लक्ष्मण आदिक सखा के रूप में आज्ञाभक्ति करते रहते थे, पृथुराजा की श्रवणभक्ति प्रसिद्ध हुई, कीर्तनकारों की कीर्तन-भक्ति, धारणाध्यानवालों की स्मरणभक्ति, दासियों की चरणसेवाभक्ति, पुजारियों की अर्चनभक्ति, महिमा-वाले दुःखी शरणागतों की वन्दनभक्ति, सर्वस्वार्पित भक्तों की वचन में रहना आदिक दास्यभक्ति, विनोद के लिये सख्यभक्ति, सभी के लिये अन्तिम दशा में आत्मनिवेदन भक्ति तो है ही, सभी में रसभक्ति होनी चाहिए, प्रभु में मिष्ट मधुर रस का आस्वाद आने लगे, पराकाष्ठा में पहुँचने लगे, वैरी होते-होते प्रभुमूर्ति में द्रवितता से मिलने लगे ऐकात्म्यानन्द पाने लगे तब भक्ति विधि का अवधि आया नैसर्गिक बन जाता है। प्रभु स्वयं भक्तिरस के ज्ञाता है। स्वामी को जिस प्रकार की सेवा भक्ति रुचिकर है प्रिय है यह पहले तो स्वामी ही जानते हैं, स्वामी के अभिप्राय से सेवक भक्ति प्रयोग करता है, दिव्यमूर्ति परमात्मा आनन्द घन स्वयं वाच्यरस वाचकरस है, ब्रह्मरस कामरस अलंकाररस वेषरस भूषारस 'रसो वैसः' सर्वानन्दवर्षी है, अनावरणभक्तिरस सर्वोत्तम है निरवच्छिन्नानन्द आस्वादनीय परमेश्वर महारसोत्तमरस है, प्रियरस रमणरस सोऽहंरस योगरस सामरस्यरस द्रवरस परमात्मा है, मधुरचिद्रस अमृतरस, वात्सल्यरस कारुण्य रस अनुकम्परस साक्षात्साँकेतिकरस परमात्मा है, प्रेमरस आकर्षणरस पिण्डरस प्रसारस आह्लादरस परमात्मा है, परानुरक्तिरस प्रपत्तिपुष्टिरस लीलारस समर्पणरस विनोदरस स्रावस्रोतःरस स्वविस्मृत-

भगवन्मात्रस्मृतिकपूर्णब्रह्मकामरस भक्तिरस सच्चिद्रस भगवान ही है, भगवान को कोई भी भक्ति अनजानी नहीं है, सभी प्रकार की भक्तियाँ वैष्णवसन्त में रहती हैं, श्री कृष्णवल्लभाचार्य स्वामी जी बालपन से अनाविल भक्ति भरे थे,दर्शन भक्ति कीर्तन भक्ति वन्दन भक्ति करते थे, योग्यतानुसार श्रवणभक्ति करते थे, संस्कृतादिभाषा का वांचन सीखने पर कथा कीर्तन भक्ति कायमी किया करते थे, प्राप्त वेदों के पुराणों के महाभारत रामायण इतिहासों के पारायण किया करते थे, स्वामी जी आख्यान कथाओं के भी महासागर शेवधि हैं, आध्यात्मिक कथा व्याख्यानें करते ही रहते हैं, कोई भी दिन बिना कथाकीर्तनवन्दनस्मरण अर्चन आदि का बांझ नहीं गया, आत्मनिवेदनयें है ही, भगवन्निवेदित अन्न फल जल दल कण रस आदि लेना, अनिवेदित हो तो निवेदित करके लेना, जब कुछ भी लेते हैं प्रसाद करके लेते हैं वस्त्र पुष्पहार आदि कुछ भी प्रभु को अर्पण करके लेते हैं, विधिनिषेध मानव के धर्मों में भक्ति में अपराधों में लिखे जो कुछ मानव-स्वरूप में अग्राह्य त्याज्य अस्पृश्य अनादेय परिहरणीय विसर्जनीय प्रक्षेपणीय दूरीकरणीय आदि हैं उन्हें प्रभु को अनर्पण में शास्त्र प्रमाण होने से भक्ति में न करने का नहीं भी करते हैं। फिर भी भगवान् में तादात्म्य-भाव से वरतने पर जो भगवन्मूर्तिग्राह्य है उनका समर्पण करते हैं, जो भगवन्मूर्तित्याज्य है उनका समर्पण नहीं करते। अग्नि पकाने को ग्राह्य है, अन्दर पड़ने को ग्राह्य नहीं है, हीरा रत्नमणि आभूषारूप में ग्राह्य है, चूसने को ग्राह्य नहीं, मृत्ति का मञ्जन के लिये ग्राह्य है, खाने के लिये नहीं, आसन बैठने को ग्राह्य है सरपर धरने को नहीं, नव द्वारों के मल त्याज्य हैं ग्राह्य नहीं, शर्करा ग्राह्य है, जहर नहीं, सामने के दर्शन उत्तम है अन्य नहीं, दिव्यता ग्राह्य है मलिनता नहीं, भक्ति कर्तव्य है, अभक्ति नहीं, सेवा कर्तव्य है असेवा नहीं, प्रसन्नता होनी चाहिए क्रूरता नहीं, मक्खन घी खाने योग्य है उनका मेल नहीं, मधु शहद ग्राह्य है मक्खी के अण्डे या मधुपुट नहीं, भगवान की मरजी के सब ग्राह्य है मरजी विरोधी नहीं, भगवान् जो जो जानते होंगे उनके भक्त भी जानते हैं, श्री वल्लभाचार्य जो श्री विट्ठलेशजी श्री माध्वाचार्यजी श्री निम्बार्काचार्यजी श्री शंकराचार्यजी भी जो जो भक्त्यंश जानते हैं वे ब्रह्म हैं सब कुछ जानते हैं, श्री कृष्णवल्लभाचार्यजी उतना तो जानते ही हैं, यह अनुभव की बात हैं। कपिल भगवान के पास अश्वशिरा राजा गया और पूछने लगा, आप ब्रह्मदर्शन करते हैं ? कपिल जो ने कहा तुम प्रत्यक्ष कर लो तो संदेह न रहें प्रश्न हल हो जाय। राजाध्यान में बैठा अन्तश्चक्षु से देखने लगा, तब कपिल जी की मूर्ति में विष्णु चतुर्भुज देखने लगा, राजा ने कहा यहाँतक तो मैं भी सर्वत्र देखता हूँ। तब कपिल जी ने वैराज स्वरूप दिखलाया, राजा ने कहा यहाँ तक तो मैं भी देखता हूँ, तब कपिल जी ने महाविष्णु महानारायण तक दिखलाया, तब राजा ने कहा यहाँ तक तो मैं भी देखता हूँ, तब कपिल जी ने कहा—अब एक ही पूर्ण रूप बाकी है, देख लो राजन्, सर्वसृष्टिमय परमात्मा मेरे में हैं, तब राजा चकित हुआ, राजा ने अनन्त अवतार असंख्यसृष्टियां असंख्य मुक्त असंख्य ईश्वर असंख्य संकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्ध वासुदेव अनन्त नारायण अनन्त ब्रह्मसृष्टियाँ को देखा, परमपुरुष मूल दिव्यमूर्ति अवतारी परमात्मा बाकी रह गये, तब राजा ने कहा; आपका मूलस्वरूप परमपुरुष परब्रह्म का दर्शन कराइये, तब कपिल जी ने कहा—बिना योग्यता बिना कृपा वह दर्शन नहीं होगा, वैसा साधु बनो तब वह दर्शन होगा, राजा निवृत्त हो गया वैसा साधु होने का यत्न पर जिज्ञासु हुआ, कपिल जी ने कहा पराभक्ति एकरसमयी तादात्म्यमयी होने का अभ्यास करो। राजा अभ्यास करने लगा, वैसा होके दर्शन करके परमपुरुष के चरण में उनकी मूर्ति में समर्पित हो गया, 'ब्रह्माऽस्मि' भी उसी का प्रकार है, आत्मनिवेदित्वं भी उसी का प्रकार है, श्रीकृष्णवल्लभाचार्य स्वामीश्री कही रसमक्ति में तो पहुँचे ही हैं, वहाँ तक पहुँचना भी तपश्चर्याओं से होता है, सबीज तपश्चर्या उस स्थिति के लिये काम करती है, वस्तु पदार्थार्पण देह में, देहाऽर्पण सूक्ष्म तन्मात्राओं में, तन्मात्रार्पण

तन्मात्रार्पण इन्द्रिय वृत्तियाँ का अर्पण भी मन में, मनोऽर्पण अहं में, अहमार्पण बुद्धि में, बुद्ध्यर्पण पुरुषरूप आत्मा में, आत्मार्पण साक्षी ब्रह्म में, ब्रह्मार्पण परब्रह्म में प्रतिलोम रीति से करता रहे तो परमपुरुष का साक्षात्कार होता है, जीवन में परमपुरुष की आज्ञा से ही जगत् के प्रति अनुलोम होता रहने पर भी यह अनुलोमपना भगवान् के हुकुम से होता है अतः भगवान् में प्रतिलोमपना ही है, इस प्रकार की भक्ति श्रीस्वामीजी में पक्वता सम्मुख है। इस स्थिति में जो कुछ उनमें व्यावहारिकता दीखती हो वह अपनी दृष्टि को दीखती है, उनकी दृष्टि में परमपुरुष की ही सेवा है, 'सर्वं खलु इदं ब्रह्म नेह नानाऽस्ति किञ्चन' 'यस्य सर्वं आत्मैव अभूत्' यह बात हुई हो, उनके लिये सभी कोई तपस्या की दृष्टि करते हैं, 'यस्य ज्ञानमयं तपः' 'जिसको ज्ञानमय सर्वात्मदर्शनमय महातप है, उसका 'तत्परं परमपुरुषख्यातिः तपः' कहाता है। स्वामीजी का तप अनाहार अल्पाहार तप संकोच संयम तप सात्त्विक तप ब्रह्मशील तप तो समग्र जीवन में व्याप्त ही है, बड़े तप का फल पवित्रता भक्तिमत्ता शास्त्रदर्शिता परमपुरुषदर्शिता ब्रह्मसत्तास्थितिमत्ता रूप में तो है ही, परमपुरुषात्मकता होना ब्रह्म होना अवशेष दीखता है। इनके लिये अभिनन्दन एक भगवान् के अवतार के प्रति अभिनन्दन है। अधिक क्या कहना। प्रभु अपने को चरणों में रखने की कृपा करें।

श्रीहरिः शरणं मम

अभिनन्दन

वेलजी रवजी चौहाण

श्रीहरि शरणागति मंडल के प्रमुख, मु० पूना

सभी विद्याएँ मानवों के नेत्र हैं, उपर्ले नेत्रों द्वारा व्यवहार पर्याप्त हो सकता है, आन्तर नेत्रों द्वारा आध्यात्मिक सिद्धियाँ लब्ध होती हैं, विद्याएँ सभी के लिए फलप्रद हैं, जनता विद्यालयों द्वारा सभी विद्याओं का उपार्जन करके आत्मीय राष्ट्रीय अभ्युदय व निःश्रेयस को मिला सकती है, जो जो लोग विद्याओं के लिए पुष्टि में सहायभूत होते हैं और विद्याओं के सुमूर्त स्वरूप में तन्मय रहते हैं, उन दोनों को विद्यातत्त्वज्ञों की ओर से अभिनन्दन दिया जाता है, ऐसे ही प्रसंग जनता में भगवत्कृपा से पुण्यबल से हार्दिक प्रसन्नता द्वारा आशीर्वादों से और सत्कार्यों से सुघटित होते हैं।

यह उपमा ठीक है कि—विद्वान् सन्त सूर्य-चन्द्र समान प्रकाश और शीतलता करते हैं, जहाँ कहीं भी वैसी योग्य व्यक्ति से उजाला होता ही है, उजाला को सतत निभाने व बढ़ाने के लिए योग्य व्यक्ति का वसवाट सर्वेष्ट होता ही है, गाँव, नगर राजधानियाँ भी विद्वानों से उजली रहती हैं, राष्ट्र विद्वानों से प्रकाशित रहता है, विद्वानों के सत्कार से विद्वद्भूमि भी प्रकाशित रहती है। विशेष प्रकाश को फैलाती हैं।

अभिनन्दन-ग्रन्थ-स्वरूप में उक्त हकीकतें समाविष्ट ही है, शब्द कायमी है मगर आकाश में लीनसा भासता है, ग्रन्थ की अक्षर शब्द वाक्य रेखायें बार-बार शब्दों को व्यक्तवाणी द्वारा गजाती रहती हैं, अभिनन्दन में विद्वान् लोग विद्वत्प्रेमी लोग रात्यप्रातिभलोग और उन्नति की आकांक्षावाले सभी लोग एकत्रित हो सकते हैं, अभिनन्दन में विद्वान् आदि वर्ग अपने-अपने आभ्युदयिक अभिप्राय देकर देश नगर ग्राम आदि को साथ में ही रखकर अभिनन्दनार्थ सत्पात्र व्यक्ति का सत्कार करते हैं, देश में वैसे दिगन्त-कीर्ति पुरुषों को प्रकटाने के लिये उत्साह शक्ति को जाहेर में प्रसराते हैं. इसके द्वारा अन्य कई विशिष्ट दैवी पुरुष भी पुण्य प्रयत्न ईश्वरेच्छा जनसमुदाय के आशींर्वादों के सहारे से प्रकट हो आते हैं, जिससे देश सदैव सुप्रकाशित होता रहता है।

परमेश्वर ने जगत्कल्याण के लिये ब्रह्माजी को वेद दिये, वेदों का विज्ञान ऋषि मुनिओं ने जनता को दिया, व्यासाऽवतारों ने विस्तारपूर्वक आध्यात्मिक विद्याओं का विकास किया, आचार्यों ने उन विद्याओं का भगवान् के साथ सम्बन्ध बतलाकर उपासनामार्ग विकसित किया, विद्वान् महापुरुषों ने उन्हीं निगूढ रही विद्याओं का तत्त्वविमर्श के रूप में दर्शन शास्त्रों की प्रणाली प्रकट की, श्रेयः प्रेयः सुमूर्त विद्याओं का लाभ उपनिषदों द्वारा मिलता हो रहता है, उनके तात्पर्य सिद्धान्तों का प्रदर्शन आचार्यों ने भाष्यों द्वारा सुस्पष्ट कराया, जनता इसपर आत्मा में आनन्द लेने लगी, बुद्ध भगवान् ने जगन्मय तत्त्वों का क्षणिकत्व ही कहकर वैराग्य उपजाया, गौतम मुनि ने तत्त्वों पर गहन विचार कर न्याय शास्त्र रूप में तत्त्वनिर्णायक विद्या का गहन स्वरूप भी सरल बनाया, कणाद ऋषि ने दृष्ट अदृष्ट सभी तत्त्वों का न्याय रीति से स्वरूप व लक्षण आदि विवेचित करके जगत् की चीजों का वर्णन किया, कपिल भगवान ने

अनेक विद्वानों को आकृष्ट करके पूर्वीय अभिनन्दनों की तरह समग्र भौगोलिक प्रजाजनों के आन्तर नेत्र खोलवाकर अवर्णनीय उपकार किया है, भारत की कोणे रही हुई विभूतिओं को प्रकाश में रख दिया है।

भगवत्स्वरूप श्री कृष्णवल्लभाचार्य स्वामी जी ने श्री स्वामिनारायणसम्प्रदाय के बड़े-बड़े मन्दिर सभामण्डप नये बनाये हैं, सौराष्ट्र में राजकूट राजधानी में श्रीलक्ष्मीनारायण भगवान् का बड़ा भव्य मंदिर बनवाया है, सौराष्ट्रीय जाम नगर में बड़ा मन्दिर-सभामण्डप आदि बनवाये हैं, जूनागढ राजधानी में लाखों रूपये लगाकर महाप्रसाद-दिव्यभवन बनवाया है, इन स्वामी जो का काशीनिवास के फलरूप में श्रीवृत्तालय द्वारा मच्छोदरी में महादिव्य प्रासाद श्रीस्वामिनारायण मन्दिर हुआ है, कई स्थलों में छोटे मन्दिर भी होंते रहते हैं, साम्प्रदायिक शास्त्रों का हिन्दी भाषान्तर करके भारत में जनता के लिये ज्ञान दान दिया है, संस्कृत-फिलासाफी के नव्यन्यायशास्त्रादि के दोहन रूप कई नये ग्रंथों मे सुप्रतिष्ठित 'तत्त्वप्रभावली' नामक ग्रन्थ, जो 'श्वैतायनीयं विशिष्टं नव्यं न्यायशास्त्रम्,—नाम से प्रख्यात हुआ है, सचमुच पाण्डित्य भरपूर इस ग्रन्थ में अच्छे-अच्छे पण्डितों के भी मेधापुट खूलते रहते हैं, महाभारत की रचना के बाद पांचहजार वर्ष जानेपर संस्कृत पद्यात्मक काव्य श्रीलक्ष्मीनारायणसंहितानामक ग्रन्थ श्वेतायनसंहिता रूप में चतुर्युगों के ऐतिहासिक बड़ाभारी सुमूर्तरूप काव्य कुशल श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ने अपनी आगमनिगम की आगमीय अलौकिक अप्रतिहत विज्ञानशक्ति से अपरोक्षसाक्षात्कार वृत्तिरूप चैतन्य में से निकालकर प्रकट किया है, इसमें सारी सृष्टि के मुद्दे भरे पड़े हैं, वैसे कविवर्य श्रीस्वामीजी महाराज एकहत्तर वर्षों से ऊपर चली जा रही उम्मर में भी अखण्डित अविरत लेखनी चलाये रखते हैं, ये जरूर श्वेतायन व्यास जी का स्मरण कराते हैं, इनमें पठन पाठन लेखन संकलन कवन प्रवचन प्रकल्पन समन्वयीकरण आदि अनेक शक्तियाँ निवास कर रही हैं, अतर्क्य देवपुरुष की तरह जनता को अपने में आकर्षित कर लेते हैं, ये जरूर पृथिवी पर वर्तमान में एक महान् दैवी परम पुरुष विद्यमान हैं, इनके शरीरपिण्ड में सामुद्रिक शास्त्रानुसार दैवाऽवतारीय रेखाएँ हैं, कई स्पष्ट चिह्न दिखते हैं, संकल्पसिद्ध इन महापुरुष के आशीर्वादों से अर्धायु बीते सकाम भक्तों को पुत्रप्राप्ति संकडो कुटुम्बो में विद्यमान है, शास्त्रों में लिखे हुए दिव्यपुरुष अपने स्वरूप में विद्यमानता का स्मरण कराते हैं, इनके प्राकट्य-जयन्ती-महोत्सव ग्राम-नगरो में मनाये जाते हैं, जन्मजयन्ती गुजराती आश्विन कृष्णाष्टमी हिन्दी कार्तिककृष्णाष्टमो काशी व बम्बई आदि पंचांगपत्रों में स्वल्पप्रतिमासहित प्रसिद्ध मुद्रित होती है, इन परमपुरुष के द्वारा अनेक परोपकारी पुण्यकार्य होते रहते हैं, इनके नाम से कुंकावाव नगरी में महाविद्यालय आर्ट्स सायन्स कोमर्स कालिज संस्था हो रही है, यह जनता के लिये बड़ाभारी परोपकार हो रहा है, इनके प्रभाव से विद्यालय के लिये दान-प्रवाह चालू है, कुंकावाव नगरी की जनता और सौराष्ट्र प्रदेश की जनता जो इस विद्यालय में सहाय करेंगे उनके लिये भावी स्वर्ग व निःश्रेयस नक्की ही रहेगा, इन महात्मा ने अनेक जनों के दुःख दूर जिये, चोट झपट मिटायें पराभव हठायें रोगनाश किये निकृष्टयोनि की आत्माओं के कल्याण उपजाये, योगस्थित में सात्त्विक प्रकर्ष भी प्राप्त कराये, वर्तमान में भी शास्त्रचिन्तन व ब्रह्मचिन्तन में ही प्रायशः समयसार्थक कर रहे हैं, दर्शनाभिलाषी लोगों को रोकटोक नहीं है, यथायोग्य ज्ञानवार्ता भक्तिमिश्रित श्रवण कराते हैं, इन्होंने हजारन ग्राम नगर शहरों में विचरण से जनता को आत्मीय श्रेयः के लिये साधन समझाये हैं, इनके भाषा ग्रंथ कई स्थलों में बांचे जाते हैं, इनके निमित्त पवित्र दिनों में भक्तजन भजन कीर्तन सत्संग आदि करते हैं, प्रकृतिवर्ग से दूर ही दूर रहते हैं, यज्ञादिकर्म काण्डों के द्वारा सभी देवताओं के पूजारी हैं, गौमाता आदि के लिये सेवक हैं, ये सभी वृत्तान्त दृष्टिगोचर किये ही यथार्थ लिखे हैं।

लिये ग्रन्थवितरण करते रहते हैं, स्वामीजी में ज्ञान विज्ञान होने पर भी मुनिव्रत, शक्तियाँ होने पर भी क्षमाव्रत, त्यागशीलता होने पर भी अप्रशंसा, सम्मानों में रहने पर भी निर्मानव्रत, आजीवन प्रथमाश्रमी शीलव्रत, सन्तस्थिति, भगवद्भुक्ति, अनेक प्रकार के अपमानों का पी जाना, निश्चिन्त ब्रह्मस्मरण में समय सार्थकता, ग्रन्थपरिशीलन, भजन कीर्तन नियमरक्षण, दोषों से अपराभव, गाम्भीर्य, तर्कवितर्कों का समाधान, परोपकार आदि अनेक सद्गुण इन महापुरुष में मिलते हैं, भगवान् की कृपा से पण्डितों के आशीर्वादों से सरस्वती की उपासना से माता पिता के पुण्य से महान् सन्त पुरुषों की प्रसन्नता से वर्तमान समय में दिगन्तयशस्वी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज चमक रहे हैं।

इनके लिये भारत व अन्यदेशों के बड़े-बड़े विद्वान् लोग अभिनन्दन दे रहे हैं, यह एक भारतमाता को उसके साथ काशीनगरी को तथा सरस्वती माता को भी अभिनन्दन है, श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज तो निमित्त मात्र है, इन भगवान् की जन्मभूमि महागुजरात के सौराष्ट्र विभाग में रैवताचल पर्वत से पूर्वदिशा में स्थित कुंकुमवापी-कुंकावाव नगरी है, जहाँ लोमश ऋषि का क्षेत्र है, उससे दक्षिण में बकडालव ऋषि का आश्रम प्रसिद्ध है, इस भूमिक्षेत्र के दक्षिण भाग में एक सो कोशो में विस्तीर्ण सपर्व-ताऽरण्यात्मक गहन वन में नरसिंह भगवान् के वंशजों के Lion सिंहारण्य प्रसिद्ध है, जिस भूमि में सप्त द्वारिकाएँ सागर किनार पर भिन्न विभागों में हो चूकी हैं, जिस देश में सोमनाथ ज्योतिर्लिंग तीर्थ है, श्रीकृष्ण भगवान् का स्वधामगमन का प्राचीनपिप्पल नामक तीर्थ है, वामनभगवान् ने बलि राजा को १०१ संख्याक आखिरी यज्ञ में रसातल पहुँचाया था, उन त्रिविक्रम वामन-दामोदर की विशाल प्रतिमा सहित तीर्थभूमि गिरनार की क्षीण में हैं, आनर्त रुक्मांगद धर्मांगद रहूगण आदि राजाएँ इस देश के राज्याधिप हो गये हैं, नरसिंह महेता जलारामबापा इस सौराष्ट्र में हुए हैं, राणकदेवी आदि सतीयाँ हो चूकी हैं, वैसी इस सौराष्ट्रीय कुंकुमवापी-कुंकावाव की भूमि में श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज का सुमूर्तस्वरूप श्वेत संगमरमर की प्रतिमा 'श्रीकृष्णवल्लभाऽऽचार्यराष्ट्रीय स्मृति भवन में सुप्रतिष्ठाविधि से संस्थापित की है, जिसकी पूजा हो रही है, वहाँ मेला लगता है तथा बाधा मानताएँ मानी जा रही हैं, बाधा रखनेवालें के मनोरथ पूर्ण हो रहे हैं, वहाँ प्रतिदिन भजन मंडली भजन करती है, इस लोमश क्षेत्र की पवित्र भूमि में श्रीकृष्णवल्लभाचार्यकालिज स्थापित की है, वैसे विद्वान् सन्त की स्मृति में अभिनन्दनों के द्वारा अनेक प्रजाजन विद्वान् भक्त होयेंगे, वे देश के हित में ही तैयार रहेंगे, सौराष्ट्र देश, श्रीसूक्तकथित 'उपेतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह। प्रादुर्भूतः सुराष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिम् ऋद्धिं ददातु मे' ॥ ७ ॥ मन्त्रानुसार श्रीकृष्णभगवान् के गोलोकीय मुकुट का दिव्यमणि, जो सौराष्ट्रदेशस्वरूप में प्रकट हुआ है वह कीर्ति के साथ-साथ स्मृद्धियाँ देते रहो, ऐसी भूमि के सुपुत्र एक सन्त पुरुष के लिये बड़ाभारी अभिनन्दन सुमूर्त स्वरूप में हो रहा है, इसके फलरूप दूनिया के महाविद्यालयों में कुंकुमवापी नगर-महाविद्यालय गणना-स्थान ले रहा है, कुंकावावनगरी पृथिवी में अपने बालक सन्त को प्रकट करती हुई दिगन्त प्रख्यात हो रही है, यह एक बड़ा अभिनन्दन ही है, ३०० से अधिक धुरन्धर विद्वान् महामहो पाध्याय पद्मविभूषण पोष्टाचार्य आचार्य शास्त्री तीर्थ वाचस्पति केसरी पंचानन सार्वभौम राज रत्न निष्णात उपाध्याय विशारद कुलपति अलंकार वाइसचान्सलर लीडर लेक्चरर लीटरेचर डाइरेक्टर प्रिन्सिपाल जनरल सेक्रेटरी, M. B. B. S. D. P. H, M. A. A. M. S., M. A. Phd, Eplitt, D-Lit, D. Phill, आदि बड़े-बड़े लोग अभिनन्दन दे रहे हैं, ये इन दैवी परम पुरुष के लिये योग्य हैं, आप के आर्टिकल्स उपदेश लेख आशीर्वाद मननीय हैं, जगत् को बड़े उपकार करनेवाले हैं, विद्वान् लोग अपने उपदेश द्वारा असंख्य जीवों का उद्धार कर देते हैं, इस अभिनन्दन की समितिस्थ पूजनीय विद्वान् पुरुषों ने

अनेक विद्वानों को आकृष्ट करके पूर्वीय अभिनन्दनों की तरह समग्र भौगोलिक प्रजाजनों के आन्तर नेत्र खोलवाकर अवर्णनीय उपकार किया है, भारत की कोणे रही हुई विभूतिओं को प्रकाश में रख दिया है।

भगवत्स्वरूप श्री कृष्णवल्लभाचार्य स्वामी जी ने श्री स्वामिनारायणसम्प्रदाय के बड़े-बड़े मन्दिर सभामण्डप नये बनाये हैं, सौराष्ट्र में राजकूट राजधानी में श्रीलक्ष्मीनारायण भगवान् का बड़ा भव्य मंदिर बनवाया है, सौराष्ट्रीय जाम नगर में बड़ा मन्दिर-सभामण्डप आदि बनवाये हैं, जूनागढ राजधानी में लाखों रूपये लगाकर महाप्रसाद-दिव्यभवन बनवाया है, इन स्वामी जी का काशीनिवास के फलरूप में श्रीवृत्तालय द्वारा मच्छोदरी में महादिव्य प्रासाद श्रीस्वामिनारायण मन्दिर हुआ है, कई स्थलों में छोटे मन्दिर भी होंते रहते हैं, साम्प्रदायिक शास्त्रों का हिन्दी भाषान्तर करके भारत में जनता के लिये ज्ञान दान दिया है, संस्कृत-फिलासाफो के नव्यन्यायशास्त्रादि के दोहन रूप कई नये ग्रंथों मे सुप्रतिष्ठित 'तत्त्वप्रभावली' नामक ग्रन्थ, जो 'श्वेतायनीयं विशिष्टं नव्यं न्यायशास्त्रम्,—नाम से प्रख्यात हुआ है, सचमुच पाण्डित्य भरपूर इस ग्रन्थ में अच्छे-अच्छे पण्डितों के भी मेधापुट खूलते रहते हैं, महाभारत की रचना के बाद पांचहजार वर्ष जानेपर संस्कृत पद्यात्मक काव्य श्रीलक्ष्मीनारायणसंहितानामक ग्रन्थ श्वेतायनसंहिता रूप में चतुर्युगों के ऐतिहासिक बड़ाभारी सुमूर्तरूप काव्य कुशल श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ने अपनी आगमनिगम की आगमीय अलौकिक अप्रतिहत विज्ञानशक्ति से अपरोक्षसाक्षात्कार वृत्तिरूप चैतन्य में से निकालकर प्रकट किया है, इसमें सारी सृष्टि के मुद्दे भरे पड़े हैं, वैसे कविवर्य श्रीस्वामीजी महाराज एकहत्तर वर्षों से ऊपर चली जा रही उम्मर में भी अखण्डित अविरत लेखनी चलाये रखते हैं, ये जरूर श्वेतायन व्यास जी का स्मरण कराते हैं, इनमें पठन पाठन लेखन संकलन कवन प्रवचन प्रकल्पन समन्वयीकरण आदि अनेक शक्तियाँ निवास कर रही हैं, अतर्क्य देवपुरुष की तरह जनता को अपने में आकर्षित कर लेते हैं, ये जरूर पृथिवी पर वर्तमान में एक महान् दैवी परम पुरुष विद्यमान हैं, इनके शरीरपिण्ड में सामुद्रिक शास्त्रानुसार दैवाऽवतारीय रेखाएँ हैं, कई स्पष्ट चिह्न दिखते हैं, संकल्पसिद्ध इन महापुरुष के आशीर्वादों से अर्धायु बीते सकाम भक्तों को पुत्रप्राप्ति संकडो कुटुम्बो में विद्यमान है, शास्त्रों में लिखे हुए दिव्यपुरुष अपने स्वरूप में विद्यमानता का स्मरण कराते हैं, इनके प्राकट्य-जयन्ती-महोत्सव ग्राम-नगरो में मनाये जाते हैं, जन्मजयन्ती गुजराती आश्विन कृष्णाष्टमी हिन्दी कार्तिककृष्णाष्टमी काशी व बम्बई आदि पंचांगपत्रों में स्वल्पप्रतिमासहित प्रसिद्ध मुद्रित होती है, इन परमपुरुष के द्वारा अनेक परोपकारी पुण्यकार्य होते रहते हैं, इनके नाम से कुंकावाव नगरी में महाविद्यालय आर्ट्स सायन्स कोमर्स कालिज संस्था हो रही है, यह जनता के लिये बड़ाभारी परोपकार हो रहा है, इनके प्रभाव से विद्यालय के लिये दान-प्रवाह चालू है, कुंकावाव नगरी की जनता और सौराष्ट्र प्रदेश की जनता जो इस विद्यालय में सहाय करेंगे उनके लिये भावी स्वर्ग व निःश्रेयस नक्की ही रहेगा, इन महात्मा ने अनेक जनों के दुःख दूर जिये, चोट झपट मिटायें पराभव हठायें रोगनाश किये निकृष्टयोनि की आत्माओं के कल्याण उपजाये, योगस्थित में सात्त्विक प्रकर्ष भी प्राप्त कराये, वर्तमान में भी शास्त्रचिन्तन व ब्रह्मचिन्तन में ही प्रायशः समयसार्थक कर रहे हैं, दर्शनाभिलाषी लोगों को रोकटोक नहीं है, यथायोग्य ज्ञानवार्ता भक्तिमिश्रित श्रवण कराते हैं, इन्होंने हजारन ग्राम नगर शहरों में विचरण से जनता को आत्मीय श्रेयः के लिये साधन समझाये हैं, इनके भाषा ग्रंथ कई स्थलों में बांचे जाते हैं, इनके निमित्त पवित्र दिनों में भक्तजन भजन कीर्तन सत्संग आदि करते हैं, प्रकृतिवर्ग से दूर ही दूर रहते हैं, यज्ञादिकर्म काण्डों के द्वारा सभी देवताओं के पूजारी हैं, गौमाता आदि के लिये सेवक हैं, ये सभी वृत्तान्त दृष्टिगोचर किये ही यथार्थ लिखे हैं।

इनको ऐश्वर्य चमत्कार माहात्म्य को कई लोग स्वरुचि के अनुसार निगूढ ही रखवाना चाहते हैं, उन लोगों की तुष्टि के लिये आप की सुरुचि से ही निगूढरूप में रखना अति उत्तम समझकर वैसे ही वर्ताव रखते हैं, फल फूल छाया से तरुवर की तरह सन्तवर्य दैवी गुणों से आश्रय लेने लायक होते हैं, वैसे इन स्वामीजी के अपरोक्ष साक्षात्कार किये वृत्तान्तों के वर्णन में सत्याश्रयी हृदय अति आनन्द अनुभवता है, अरुचिवाले शरीरिओं के प्रति स्वामीजी महाराज स्वयं उनके सन्तोष के लिये रुचि का उद्भावन ही नहीं होने देते.हैं, द्वादशवार्षिक कुम्भमहोत्सवों में हरिद्वार प्रयाग नाशिक उज्जैन काशी हरिहरक्षेत्र कपिलधारा आदि स्थलों में शास्त्रार्थ के तम्बू तान कर महिने-महिने तक विद्वन्मंडली में शास्त्रार्थ गीर्वाण दर्शन मतों में जाहेर बोर्ड से चालू रखते थे, श्री भागवतानन्दस्वामी परमानन्दस्वामी हरिसिंह स्वामी महेशानन्दस्वामी ब्रह्मानन्दस्वामी श्रीकृष्णवल्लभस्वामी आदि बड़े बड़े नैयायिक वेदान्तिक दार्शनिक विद्वानों का मण्डल गीर्वाण तत्त्वार्थ शास्त्रार्थों के लिये सुसज्ज ही रहता था, इनमें श्री स्वामीजी ने अनेक बार सुसत्कार पाये थे, फिर भी सभी विकृतियों के आश्रय आकाश की तरह निर्लिप्त जीवन बीताते हैं।

श्रीस्वामिनारायण सम्प्रदाय की वैष्णवी दीक्षा होने से सम्प्रदाय के लिये उपयुक्त विद्वानों के लिये ग्राह्य—१-श्री स्वामिनारायणदर्शनन्, २-तत्त्वप्रभावली न्याय, ३-श्रुतितात्पर्यनिर्णय वेदान्त, ४-ख्यातिविमर्श, ५-प्रमात्वविमर्श, ६-सुधासिन्धु ब्रह्मरसायन भाष्य, ७-श्रीहरिस्वरूपरूप निर्णय-सत्संग भाष्य, ८-सांख्य भाष्य, ९-योग भाष्य, १०-साकारत्व विमर्श आदि कई ग्रन्थ लिखकर मजबूत पाये बना दिये हैं, और भी कई किरणावली आदि टीकाएँ लिखी हैं, ये जो जो विषय वर्णित किये हैं, सभी अभिनन्दन रूप में सुमूर्त ही हैं, दिव्य सन्त पुरुषों के गुण वर्णन भी प्रेयः श्रेयः के लिये सत्फलित होता है, इन महापुरुष के नाम से कुंकावाव कालिज की तरह और भी विद्यालय होंगे, सनातन धार्मिक विद्याएँ पोषण प्राप्त करेगी, वर्तमान समय में समुदायों के समुदाय विद्वान होते जा रहे हैं, उन्हें आत्मसाधन में सन्तपुरुष के अभिनन्दन आनन्दित रक्खेंगे, सुमार्गपर ही रक्खेंगे, आश्रित भक्तों को ब्रह्मलोक के सुख में वर्तायेंगे, सौराष्ट्र में बड़ी-बड़ी भूगोल प्रख्यात विभूतियाँ हो चुकी हैं, इन अवतारी परमपुरुष के अभिनन्दन उन पूर्वज पुरुषों को भी प्राप्त होगा ही, इन सन्तस्वरूप महाविद्वान् अवतारी परमपुरुष भगवान् श्री कृष्ण-वल्लभाचार्यजी महाराज को सर्वस्वार्पण करता हूँ, मेरी भावनानुसार भक्ति सफल होने के आशीर्वाद माँगता हूँ, अधिक न्यून आप क्षमा करेंगे।

पू० स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी के जीवन के अनुभव तथा गुणग्राहिता

पं० हरिहराचार्य वेदान्तद्वय शिरोमणि

संस्कृत महाविद्यालय, अमरावती

सभी को अच्छा होना प्रिय है, पहले अपनी आत्मा में देखते रहना चाहिए, अपने ही परीक्षक बनकर अच्छे होने के साधन-नम्बर संग्रहित करने चाहिए। दूसरे की उन्नति देखके ज्वलन के स्वभाववाला जलता ही रहेगा कभी ठण्ढक नहीं पावेगा, उसको शान्ति ही नहीं मिलती, वह सद्गुणी कभी नहीं बनता, अपने दुर्गुण तजने का यत्न ही नहीं करता है, चलन-स्वभाव के पराधीन है, अतः महत्त्वाकांक्षी को परोन्नतिप्रियता होनी ही चाहिए, जो जो पराया भला चाहता है पर की भलाई के गुणग्राहक बनता है भलाई में आनन्द लेना चाहता है वह सभी में पर की उन्नति उत्कर्ष महत्ता सम्मानिता को देख के खुशी होने का स्वमाव सीखे, बड़े सन्त महात्मा परोपकारी लोग तन मन धन से सेवा करने लग जाते हैं, गौ विप्र सन्त गुरु पितृजन अनाथ अनाधार अपंग स्वाश्रित स्वाधीन आदि को स्ववत् स्वबालवत् सेवनेवाला पुण्यशाली होता है, पुण्य से आत्मा निर्मल सात्त्विक प्रकर्षवाली होती है, ईश्वर साक्षी की प्रसन्नता रहती है, सेव्य लोक भी मीठी दृष्टि से सेवक को देखते हैं, अतः अपने में सेवकता का अनुभव को स्थान सतत देना चाहिए, स्वामी श्री ने अपना जीवन सेवाश्रम में समर्पिप कर दिया है, सेवा नामक बड़ा भारी गुण स्वामी जी में हैं।

बालपने में गुण बसाने की शक्ति जोर नहीं करती हैं किन्तु सभी नयी-नयी स्कूल शिक्षा गृह-शिक्षा समाज शिक्षा पडोश शिक्षा कामकाज शिक्षा परिचय शिक्षा सभी शिक्षण के अनुकरण की शिक्षा के लिए सभी शक्तियां जोर करती हैं, मातृभाषा शिक्षा तीन चार वर्ष में हो जाती है, अहं ममता का पूरा शिक्षण भाषा शिक्षण में से ही आरब्ध हो जाता है, हर्षशोक के शिक्षण के साथ पक्षपात का बड़ा भारी शिक्षण रूढ होते चलता है, इससे भरण-पोषण के स्वीयत्त्व बीज बीये जाते हैं। महापुरुषों को इसी अवस्था में पारमार्थिक जीवन का आना पक्षपाती जीवन का बदलना किसी न किसी निमित्त से हो जाता है, श्रीरामचन्द्रजी, श्रीकृष्ण भगवान्, कपिलजी, कबीरजी, शंकरस्वामी, स्वामीनारायण आदि भगवानों का जीवन-पलटा 'समग्र सृष्टि मेरे में ओतप्रोत होने का स्वरूप उद्भूत हुआ, जगत् के कल्याणार्थ घर से ही उद्यम में लग गये, उसी कार्य के लिए निकल पड़े, श्रीकृष्णवल्लभाचार्य स्वामी जी का ज्येष्ठ की भीमएकादशी का व्रत महोत्सव पर जूनागढ़ जाने से हृदय पलट गया, वहीं सन्त आश्रम में रहना स्वीकार लिया, संसार का खारा मीठा का भान सत्संग से होने लगा, जन्मभूमि जन्मगृह जन्मकुटुम्बी से विमुक्तता में गुरुद्वारा सन्त सत्संग देवभक्त्याश्रम में संयुक्तता में जीवन बीतने लगा, अभ्यास से विद्या का मूल्य भी भासने लगा, अभ्यास के नये संस्कार बलवान् बनते गये, त्यागी दीक्षा ले ली, बड़ौदा के महामहोपाध्याय न्यायव्याकरणादि के विद्वान् श्री बदरीनाथ शास्त्री का जूनागढ़ आने पर दर्शन करके फिर पलटा खाया—'अच्छे विद्वान् होना चाहिए।' जीवन त्यागी तो था, मगर विद्या की तरफ विशेष रूप से पलट गया, त्याग रखते हुए विद्या अच्छी तरह उपार्जित होगी, प्रभु इच्छा से यह निश्चित हुआ, काठियावाड में सौराष्ट्र

समस्त देश में एक महामारी का रोग एकदम गरमी में फैल पड़ा, एक-एक गांव में पाँच पचीस मृत्यु प्रत्येक दिन होने लगा, इससे यह भी वैराग्य बढ़ा कि मर जाते तो मानव जीवन पशुसम निष्फल हो जाता, इससे बच गये तो जरूर अच्छा उपार्जन कर लेना, ज्ञानोपार्जन से सत्यावलम्बित होके तैर जायेंगे, इस प्रकार का जीवन पलटा, मोक्ष के लिये बरतने लगा, स्वदेश भी छोड़ के बड़ौदा होकर मध्य प्रान्त में काशी नगरी पहुँच गये, बिलकुल जीवन हिन्दुस्तानी हो गया, अनेक नयी शिक्षा लेना आवश्यक हो गया, विशाल कोटि के विद्वानों में विद्या की कामना अतिशय बढ़ गयी, गुरुसेवा देवोपासना तीर्थसेवन विद्या-अध्ययन शारीर ऐन्द्रियक मानसिक तप आदि आदि में जीवन बीतने लगा, अनेक महान्तों के मठ गद्दियां महत्ता स्मृद्धि देखने में आये, ये गौरव बढ़ाने में टेका नहीं दे सके, दादूपन्थ के महान्तको तथा निर्मले पंथ के महान्त को किसी ने काट-काट कर टुकड़े सन्दूक में भरकर गटर में फेंक दिये, इत्यादिक अनिष्ट ने महान्ताई मठाधिपतित्व समूहस्मृद्धयधिपतित्व में भी निरास्था ऊपजा दिया और परमेश्वर की मेहरबानी से साधु आश्रम ही प्रियतम हो गया, सभी विद्याएँ पढ़ने में आयीं, विद्वानों के धन आत्मीय होते हैं, उनका उपयोग पढ़ाना शास्त्र रचना उपदेश करना भक्ति करते रहना, सात्त्विक समझ से द्वन्द्व तथा इतियों के दुःखों की असर न होने देना अलमस्ताना रहना परमेश्वर में ज्यादा समर्पित रहना, इस प्रकार का निष्कामस्थिति सन्यासस्थिति का अनुभव हृदय में आत्मा में होने लगा, इन्द्रिया अन्तःकरण शान्त ही हो गये थे, शारीर कष्ट सुखमय हो चुका था, पाण्डित्य की कली खिल गयी थी, आचार्य के अभ्यास में आगल बढ़े, दर्शनों के सभी प्रकार के विमर्शों से ब्राह्मी स्थिति के अंश जीवन में जीवनमुक्ति रूप में ही होने लगा, विदेह मुक्ति आधा तो आया-जाया करती थी, संसार को पचास टका नहीं अपनाना सावधानपने से निश्चित कर हो लिया, विद्योपार्जन के साथ-साथ भारत के तीर्थाटन हो गये, बड़ी पवित्र आत्मा ने अनेक विषय के ग्रन्थ लिखके पढ़ाई की सेवा किया, फिर सम्प्रदाय का ऋण उतारने का हृदय-सम्बलन देश में रहने की चाहना ऊपजाने लगा, विचार कर लिया आधा जीवन सात्त्विक उपार्जन में बीता, अब निर्गुण जीवन बिताना चाहिये पुनरागमन कर्म द्वारा न होने का स्वरूप तन्मय होना चाहिए, इस डोर को पकड़ कर निज सम्प्रदाय के स्वगुरु द्वारा जूनागढ़ में रहना पसन्द किया, पश्चिम काशी जामनगर में वहाँ की जनता के अनुरोध से बीसों वर्ष उसी चमत्कार नगर में मुक्ति सम्बद्ध जीवन बिताया, अभी गिरनार की छाया में जीवन बीत रहा है, विद्वानों की तरफ से अभिनन्दन आशीर्वाद आ रहे हैं, सरकार की तरफ से सम्मान आ रहे हैं, जनता की तरफ से तृप्ति आशिष आ रही हैं, जड चेतनों की तरफ से प्रशस्तियाँ आ रही हैं, धर्मराजा की तरफ से रूपक-दूत भी आ रहे हैं, भगवान् की तरफ से आतिवाहिक नजदीक में पहुँचे हैं, ब्रह्मलोक के लिए तैयारी में बरतते हैं। प्रायशः माया अविद्या अज्ञान कर्म स्व के मरने में सम्मुख हो रहे हैं, वे मरे हुए ही स्वामी जी को दिखाते है, उनका कर्जा उतर गया, वे ले चुके हैं, स्वामी जी पर किसी का कर्जा नहीं है, जो कुछ रहा होगा वे सब ब्रह्मार्पण से निवृत्त हो जायेंगे, काषायाम्बर अग्निवर्ण धारने से आत्मा दिव्य अग्नि ब्रह्मतेजमय हो ही गया है, वृत्तियाँ साक्षो से मिलाकर साक्षिचैतन्यप्रकाश में प्रस्थाना कर रही हैं। उपास्य अन्तर्यामी सर्वनियामक परब्रह्म के आदेशानुसार भक्तात्मा के लि रहना-सहना होता ही है, उनके इष्ट में स्वामीजी का वास है। ये उत्तम जीवन के अनुभव हैं।

विद्यार्थियों में से गरीबाई रखना विनय सीखना अभ्यास में सावधान रहना गुण लिये गये थे। पण्डितों में से वफादारी सीखना परोपकार करना सादा ज्ञानी जीवन बिताना गुण लिये थे, देसीय जनों से निर्बन्धन रहना, विदेशियों से एषणारहित होना तीर्थों में से निष्पाप बनना, शास्त्रों में से स्पष्ट अर्थ

उदारार्थ कहना, ये गुण लिये थे। साधु सन्यासियों से अग्नि स्वरूप होना, समुदायों में से विनीत होना अपमानों से सहनशक्ति रखना, सन्मानों से खुशीपने की जमावट नहीं होने देना, इत्यादि गुण लिये थे।

मानवों में स्वार्थी या तो विरोधी स्टाफ ज्यादातर झपटते हैं, इनका प्रसंग बिना माँगे मिलता रहता है, पशु की तरह मारने दौड़ते हैं, पशुओं से दूर चलने का गुण, विरोधियों से भी झपट में नहीं आ जाने का शिक्षण ले लेना चाहिए, स्वार्थी लोग दे के फुसला के उपकार दिखला के तब गड्ढे में डालते हैं, उनसे गुण लेना—अप्रसंग रखना, विश्वास में नहीं पड़ना, सन्त लोग संसारियों का विश्वास न करे, करे तो कुछ न कुछ निम्न दशा में पड़ना पड़ेगा, सन्त सन्त में विश्वास करे वहाँ कोई स्वार्थ नहीं होगा, स्वामी जी ने इन बातों पर खूब ध्यान दिया है, कई वैसे जनों से दूर रहते हैं, किसी से स्नेह तो करते ही नहीं, आदर सत्कार योग्य करके भी दूर रहते हैं, बन्धन से दूर रहना ही सन्त की शोभा है, लालचू बनना ही नहीं, शारीर निर्वाह योग्य प्रसंग भिक्षा आदिक स्वीकारना, तृष्णा नहीं रखना, पूर्णकाम होना, सदा तृप्ति रखना, इन्द्रियों में भाईबँधाई नहीं करना, आसन सिद्ध होना, समूह से निर्लेप रहना, भक्ति में ज्ञान में समय आयुः सार्थक करना, परोपकारी होना, कमा के धर्मार्थ लगाना, त्याग से शान्ति तथा उन्नति है, निष्फिकर होने से फकीराई श्रेष्ठ होती है। प्रभु की फिकर रखना, प्रभु सन्त की फिकर करते ही हैं। श्री स्वामी ने इस प्रकार अपने जीवन के अनुभव में रहते हुए सद्गुण प्राप्त किये, ज्ञानदान भक्तिदान मोक्षदान दे रहे हैं, शरणागतों के लिए शरण्य हैं, लालचूओं के लिये अरण्य हैं, प्रभु के नजदीक पहुँचे जीवन में पसार हो रहे हैं, परमेश्वर के अवतार की सेवा समान इनकी सेवा में हजारन लोक हाजर रहते हैं, स्वामी श्री आत्मसत्ता में परमात्म समर्पण विधि में ही बरतते हैं, भारत भमि के कल्याणार्थ श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी का जीवन है।

पण्डितवर्य स्वामीजी एक दैवी पुरुष, उनके सद्गुण आदि

एम्. बी शाह, एम्. ए. एम्. ए. एम्. जी. डी.

प्रिन्सिपल के. वी. हायर सेकण्डरी, कुंकावाव

श्रीकृष्णवल्लभाचार्य स्वामीजी एक दैवी पुरुष हैं नैसर्गिक दैवीमहापुरुषों के गुण श्रीस्वामीजी में अनुभूत होते हैं, स्वामीजी, आवाल ब्रह्मचारी हैं, किशोर अवस्था से ही त्यागी वैष्णव सन्त की भागवती दीक्षा प्राप्त करके अपने प्राग्भवीय नैसर्गिक चमत्कार भरे सद्गुणों से अर्हणीय महासमर्थ सन्त स्थिति में सदा बर्तते आये हैं, परिचय आश्रय व सत्संग में आये सभी जनों को इनके स्वभाव सिद्ध दिव्य सद्गुण-गण प्रत्यक्ष दीखने में आते हैं, शिशुपन में ही भगवान की मूर्ति के सामने बैठकर तालियाँ बजाकर भजन धुन्य करते थे, जन्मभवन में ही प्रभु की आराधने में ज्यादेतर रहा करते थे, माता-पिताजी प्रभु पूजन में बैठे तब बगल में बैठकर प्रभु की छवी में ध्यान लगाते थे, प्रणाम करते थे, माला हाथ में लेके मणि को स्वींचते थे, नारायण-नारायण बोलते थे, प्रभुप्रसाद नैवेद्य मीलने पर भोजन करते थे, प्रभु को जल पिलाते थे, फूल चढाते थे, पांच वर्ष बीतने पर स्नान नियम से करके स्वतन्त्र पूजा करते थे, चित्रमूर्ति को स्थापना, खड़ी मिश्रि जिमाना, नमन प्रदक्षिणा दंडवत् करना, मूर्तिस्पर्श करके हाथों को मस्तक पर व नेत्रों पर छूवाना, पूजाविसर्जन करना, अन्य-अन्य पूजक वर्ग को भी नमना तथा देवदर्शन करना, कथा भी सुनना सायंकाल देवदर्शन को जाना आदि-आदि भगवन्मय कार्य करते थे, सभी लोक इनको दैवी आत्मा कहते थे, एकादशी के व्रत रहते थे, माताजी ने व्रत में दूध के मावे की बरफी फलाहार के लिये दिया, तब माताजी से कहा—यह तो गेहूँ के आटे वाली हो तो मेरा व्रत भांग जाय, तब माताजी ने कहा यह तो दूध के मावे से बनी है इसमें आटा नहीं है, तब फलाहार में खाया, इस प्रकार भागवतधर्म वाली तपयुक्त भक्ति में मग्न रहते थे। इस प्रकार के दैवी पुरुष में दया परोपकार विभाग दान आदि-आदि अनेक सद्गुण बालपन से ही देखे जाते थे, कोई पूर्वजन्म के महायोगी की कल्पना कराते थे, भगवान के उनचालीस गुण भगवान के यथार्थ स्वरूपनिश्चयोपासना वाले सन्त में आते हैं, श्रीस्वामीजी में ये प्रभु के गुण मिलते हैं, १ **गुण**–सत्य, वाणी से सत्य बोलना, मन में सत्य का ही संकल्प करना, कर्म भी सत्य ही शुभ ही करना, ये तीनों दैवी पुरुष में होते हैं। २–**शौचम्**—शरीर से स्नान आदि से शुद्धि, वाणी में सत्य द्वारा पवित्रता, मन से बूरे संकल्प ही नहीं करना स्वामीजी को इन तीनों प्रकार के सत्य का पालन कायमी था। ३–**दया**—किसी भी जीव को दुःख नहीं देना, पर के दुःख का सहन भी नहीं होना, पर दुःख मिटाने के लिये प्रयत्न करना, स्वामीजी कभी भी किसी तृण को भी उखाड़ते नहीं थे, किसी जन्तु को मारते भी नहीं थे, शरीर में काटने वाले जन्तुओं को भी उडाडते नहीं थे। ४–**क्षान्तिः**—अपराध सहन करना, छोटे बड़े कोई भी दुःख दे रहे हों या दोष दे रहे हों या पीछे पड़ गए हों, सारी जिन्दगी द्वेष कर रहे हों तो भी उनके सामने न बोलना, न उनका सामना करना, सहन करके क्षमा करके नम्रता से हट जाना साधुवृत्ति से सब कुछ सहन कर लेना ये दाखले स्वामी जी के लिए बड़े-बड़े उपद्रवों में भी पृथ्वीसमानक्षमा रखने का स्वभाव लाखों आदमियों में प्रसिद्ध हैं, द्वेषी उपद्रवियों को भी समय

पर बचाये हैं। ५—**त्यागः**—सर्वस्वदाता, पास में हाजिर होने से कोई माँगे तो दे देवे, असंग्रह नामक गुण, यह स्वामी जी में जीवन्तपर्यन्त देखा गया है। ६—**सन्तोषः**—सभी प्रकार की अच्छी तरह पूर्णतृप्ति, अतृप्ति का अंश भी नहीं, इससे बड़ा सुखीपना रहता है, कायम स्वामी जी की आत्मा सुख में पड़ी ही मालूम होती है। ७—**आर्जवम्**—बाल युवा वृद्ध सद्गुणी अगुणी शिक्षित अशिक्षित सभी के प्रति सरलपना रखना, यह बड़ा गुण स्वामी जी में देखा जाता है। ८—**शमः**—मानस निग्रह या शान्त मन रहना, स्वामी जी का मानस सदा शान्त रहता है, कई प्रकार के विक्षेप आसपास में पसार होते हैं, तो भी स्वामी जी उस दिशा में स्वल्प भी चंचलता को नहीं जनाते। ९—**दमः**—इन्द्रियों के वेगों का विषयों के प्रति लगना ही नहीं, देखना-सुनना ग्रादि आदि निरर्थक कुछ भी नहीं करना, यह दमन जीवन भर के ब्रह्मचारी स्वामी जी में है। १०—**तपः**—शास्त्रविधि के अनुसार धर्म पालना ज्ञानपूर्वक संकोच रखना भोग तजना, ईश्वरेच्छा से प्राप्त पर निर्वाह करना, क्षुधातृषा सहना शीत ताप सहना आदि आदि तपस्या करना, जीवनभर श्रीस्वामी जी इस रीति से वर्तते देखे गये हैं, जीवनभर भोजनादि कुछ भी अलायदा नहीं कराते हैं, पञ्च के रसोडो में से जो मिले उसमें जो पथ्य हो उससे निर्वाह कर लेते हैं। ११—**साम्यम्**—आत्मा छोड़कर बाकी के तत्त्वों को यथार्थ समझने से उनसे मित्रता नहीं तथा शत्रुता भी नहीं, शत्रुमित्रभावरहित वर्तना, स्वामी जी कहते हैं कि—'शेर से दूर भागते हो तो कुत्ते को काही को मारने जाते हो, सबल से भागते हो तो निर्बल से भी दूर रहना' अर्थात् नहीं पीडा करना, इस प्रकार की साम्य दृष्टि रखना। १२—**तितिक्षा**—शरीरेन्द्रियाऽन्तःकरणद्वारा कोई हर्षशोक आया करे उन द्वन्द्वों में नहीं घुसना, शरीरादि में तत्त्वों के झगडने से तूफान हो तो उसे मिटाते रहना उसमें सहमेल नहीं करना, पर स्वभाव स्वामी जी में बराबर देखा गया है। १३—**उपरतिः**—निष्फल अयोग्य अघटित अनुपकारी अशास्त्रीय मुफत के व्यापार उद्योग क्रियमाण प्रवर्तन से निवृत्त रहना, रति प्रीति नहीं करना, विरत रहना, यह गुण विचारशील स्वामी जी में है। १४—**श्रुतम्**—जीवन में अधिकार के अनुसार सत् शास्त्र आदि आदि का श्रवण करके शब्द प्रमाणसिद्ध शाब्दज्ञान प्राप्त करना, वेद शास्त्र संहिता पुराण इतिहास अलंकार ज्ञान आदि आदि का अध्ययन द्वारा भी लौकिक अलौकिक यथार्थ ज्ञानवाला होना, स्वामी जी इस युग में व्यासस्वरूप ज्ञानी विज्ञानी प्रातिभज्ञानी हैं। १५—**ज्ञानम्**—तत्त्वों का ज्ञान आत्मा परमात्मा के अधिकाधिक ज्ञान सम्प्रज्ञात असम्प्रज्ञात सविकल्पक निर्विकल्पक पौरुषेयबोध साक्षिचैतन्य प्रकाश आदि आदि उच्च कोटि तक की समज्ञप्तियां, प्रमाण प्रमेय प्रमाता प्रमितियों के विशद विज्ञान स्वामी जी में हैं। १६—**विरक्तिः**—राग गृध्ना ग्राह्याऽऽग्रह न होना, वैराग्य होना, तजने का यत्न करना, नहीं तजने को भी तजने को अनुसन्धान करना, मानस में ही भासनेवाले को भी तजना, आत्मा में जाने ही नहीं देना, इस स्थिति से बरतना, सभी को मिथ्या जानने से सत्यभावना से रक्तता का नहीं होना, श्री स्वामी जी ने लाखों की शालाएँ प्रासाद बनवायें तज भी दिये। १७—**ऐश्वर्यम्**—देवों के समान ऐश्वर्य होना, ज्ञानविज्ञान में वाक्सिद्धि में सत्य संकल्पत्व में तेज में अप्रधृष्यता में आत्मबल में शारीरस्वास्थ्य में अनेक प्रकार की सिद्धिओं में इष्ट फलप्राप्ति करना, यह स्वामीजी में बलवान् ऐश्वर्य देखा गया है, छ प्रकार के ऐश्वर्य में से कहीं-कहीं कोई-कोई ऐश्वर्य प्रयुक्त किये हैं इनके प्रताप से प्रसन्नता पात्र लोक प्रभुसम दैवी पुरुष मानते हैं, कई जनों को वार्धक्य में भी पुत्र फल दिये हैं, भूत प्रेत पिशाच डाकिनी शाकिनी योगिनी वेतालनी आदि के उपद्रवों से कई शरणागतों की रक्षा की है, इस प्रकार के अनेक दाखले प्रसिद्ध हैं, कई जनों के रोग महारोग मिटाये हैं, माया का महारोग भी मिटाया है, कई प्राणयात्री को आतिवाहिक देवता सन्त स्वरूप में दर्शन दे के दिव्यस्वरूप में मोक्ष में ले गये हैं, कई भक्तों

को स्वप्न में भगवत्स्वरूप दर्शन होते हैं, कई लोक को सूर्य प्रकाश में भी दूसरे स्वरूप से दर्शन मिले हैं, ये ऐश्वर्य प्रभुपने का भान कराते हैं। १८-**शौर्यम्**—किसी से डरना नहीं, निर्भय रहना, आश्रित को निर्भय करना स्वामी श्रीमें बड़ा गुण है, आपत में फँसे जीवों को शूरता से छुड़ाये हैं। १९-**तेजः**—सभासमाज समूह महोत्सवादिक में तेजस्वी प्रभाववाले दीखते हैं। २०-**बलम्**-प्राणायाम रोकना, अस्मितावृत्ति से दूसरे स्वरूप ग्रहण करके बल से नियमन करना, नियमन बल वापरना। २१-**स्मृतिः**—यथा समय मानवस्वरूप में झटिति योग्य को संभारना, शास्त्रार्थ में गंगाजी का प्रवाह समान स्मृतिधाराएँ बहना। २२-**स्वातन्त्र्यम्**—किसी भी काम में अन्य सहायक की परतन्त्रता नहीं है, स्वरूच्यनुसार कार्य कर बताते हैं। २३-**कौशलम्**—अडसढ कलाओं में निपुणता, स्वामीजी में कारीगरी की कई कलाएँ प्रत्यक्ष हुई हैं। २४-**कान्तिः**—चन्द्रसमान शरीरमूर्ति में उज्ज्वलता, निरतिशय प्रदीप्ति होना, श्वेतायन व्यास रूप में शोभते हैं। २५-**धैर्यम्**—कहीं भी पीछे हट नहीं करना, हारजाना नहीं, पर्वत समान धैर्य रखना, बड़े बड़े झंझावातों में मानवों ने खड़े किये समरांगण में भी रोम भी नहीं फरकना, छाती में धड़क-धड़क नहीं होना, यह गुण बराबर परीक्षित किया हुआ भी है। २६-**मार्दवम्**—किसी के प्रति क्रूरता नहीं करना अतिकोमल रहना यह सन्त गुण है। २७-**प्रागल्भ्यम्**—बड़े सभा सम्मेलनों में कार्यवाहीओं में व्याख्यानों में पारायणों में प्रश्न उत्तर में प्रत्युत्पन्न मति द्वारा प्रतिभानयुक्तता, आपूरक प्रतिभा वाले स्वामीजी हैं। २८-**प्रश्रयः**—बड़ों के सामने नम्रभाव, आत्मा के प्रति आदरपूर्वक विनीतता स्वामीजी में हैं, अपने आसन पर कोई भी आ जाय उनके प्रति नम्रभावना, दर्शन करके चले जाय, नमन करे उनको नमें, दण्डवत् करे उन्हें भी आशिष देवें, बालक को भी हँसकर बुलावे, दुग्ध पायी शिशु अर्भक को भी कंठी मन्त्र देवें तब हँसकर अति कोमल सौम्य रूप से अपनावे शर्करा का कण मुख में देवें इत्यादि विनय करें। २९—**शीलम्**—व्रत रखना कामना को पोषण नहीं देना, सुस्वभाव, मिलनहार स्वभाव होना। ३०—**सहः**—प्राण का नियमन सामर्थ्य, अच्छा बुरा जो कुछ आ पड़े उस लाभ नुकसान को सभी प्रकार से अपनाना सह लेना भोग लेना यह बड़ा सामर्थ्य है। ३१—**ओजः**—अन्न जल वस्त्र वाहन धन ज्ञान देने का सामर्थ्य होना, उपदेश का बड़ा सामर्थ्य भी स्वामी जी में हैं। ३२—**सुबलम्**—तत्त्वों को धारने का सामर्थ्य, मेधा का सामर्थ्य, ग्रन्थि-उकेल का सामर्थ्य स्वामी जी में हैं। ३३—**भगः**—ज्ञान शक्ति बल वीर्य ओज क्रिया आदि प्रतापरूप में होते रहना बढ़ते रहना कमी न होना इस प्रकार के उत्कर्षयुक्त श्रीस्वामी जी है। भगवाले भगवान् कहाते है। ३४—**गाम्भीर्यम्**—अभिप्रायों में कार्यों में अगाधता, तल हाथ न लगे वैसा गहरापन स्वामी जी में है। ३५—**स्थैर्यम्**—क्रोध द्वेष उद्वेग औदासीन्य आदि प्रसंग उपस्थित होने पर भी उनके विकार न होने देना, क्रोधादिक का सदा के लिये लय रखना यह गुण स्वामी जी में है। ३६-**आस्तिक्यम्**—शास्त्रप्रदर्शित अर्थों में भी विश्वास, पुण्य-पाप स्वर्ग-नरक देव-ईश्वर मोक्ष आदि में तथा ब्रह्मलोक परब्रह्म उनके अवतार आदि-आदि में तथा व्रत तप भक्ति के फलों में भी सत्यता का विश्वास, होने की मति, यह आस्तिकता बड़ा गुण श्री स्वामी जी में हैं। ३७-**कीर्तिः**—जगत् भर में कीर्ति होना, यश फैलाना, लोक में अच्छा बखान होना, यह स्वामी जी का गुण है। ३८-**मानः**—योग्य स्वरूप में रहना मगर सभीं को सन्मान देना, मधुरता से व्यवहार करना, स्वयं निर्मानी रहना, यह गुण स्वामीश्री में है। ३९-**अनहंकृतिः**—स्वत्व का भी अहंपना रूप दोष स्वामी जी में नहीं है। देह का भवन का ज्ञान का पाण्डित्य का कोई भी प्रकार का अहम्पना ममपना नहीं है। ये ३९ उनचालीस गुण प्रभु के जिनमें आये हों ऊपजे हों दीखते हों वह भी प्रभुतुल्य है। भगवान के सम्बन्धवाले में भगवान के गुण बसते हैं। प्रदीप के सम्बन्ध से नेत्र में प्रकाश साक्षात्कार आदि गुण आते हैं, अन्धेरा भागता है,

नेत्र भी प्रदीप आदि या सूर्य सम अर्थ प्रकाश करता है, वैसे सन्त भी भगवान् के गुण आने से भगवान् के सम निर्बन्धन है, चाहे सो करने को समर्थ होते हैं। इस प्रकार श्रीकृष्णवल्लभाचार्य स्वामीश्री दैवी तो है भगवत्पुरुष भी है, परमपुरुष है। भारतभूमि का बड़ा भाग्य है जो भारत में एक प्राग्भवीय विद्वद्धुरन्धर सन्त भारत की गोद में रमते हैं, भारत के विद्वानों के अभिनन्दन इन भागवती पुरुष के लिये योग्य है। ये स्वामी जी कोई प्रकार का भारत का देन चुकाने आये हैं, मगर भारत इनका देनदार भी है। जो भारत की सेवा अनेक प्रकार से यथाशक्ति यथालब्धि यथासाधन यथासम्पत् यथायोग्य कर रहे हैं। श्रीस्वामीजी के करकमलों में मत्स्य त्रिशूल धनुष ध्वज स्वस्तिक पद्म के चिह्न हैं, अंगुलियों में आठ चक्र हैं, दो कम्बु के चिह्न हैं, दोनों चरणों से पूरती लम्बी ऊर्ध्वरेखाएँ हैं, तथा पद्म का कमल चिह्न हैं, तीन-तीन घूँटियाँ पैरों में बहिर्भाग में है इत्यादि से प्रभुता स्मरण होती है। सामुद्रिक शास्त्र में दर्शाये गये और भी चिह्नरेखाएँ हैं।

श्रीस्वामीजी द्वारा संस्कृत-हिन्दी-गुजराती-साहित्यसेवा

नव्यन्यायतर्कादिवाचस्पति स्वामिहरिसिंहजी (पंजाबी)

काशी

श्री स्वामीजी की गहन तलस्पर्शी विद्वत्ता निगूढ नहीं रहसकी, जो प्रकट हो के सुमूर्त रूप में पढाई की सेवा में उपस्थित हुई है। प्रथम ही जब तर्क संग्रह सटीक पढ़ाते थे तभी से विद्यार्थीओं को सरलता से अभ्यासार्थ अपेक्षित उपर्ले पदार्थ लिखा देते थे, जो पाठ के बाद स्वल्पमेधावाले को देख बाँच कर समझे पदार्थों को अवगतार्थ जिह्वापर चढ़ाने के लिये मददगार होता था, विद्यार्थी लोग कण्ठस्थ करके उन पदार्थों को उचित यथावत् घटाते थे, स्वामीजी सुनकर लिखाए पदार्थों की पंक्तियाँ को टिप्पनीरूप में स्वतन्त्र कापी में उतार लेते थे, उनपर नम्बरचिह्न लगा देते थे, न्यायबोधिनी व पदकृत्य के उपर न्याय के पदार्थों को स्पष्ट कर संग्रहित किये, उस कापी को प्रकाशित करवाया, वह विद्यार्थीओं को अतीव उपयोगी होने लगा, इनके अनेक मुद्रण हो गये, तब गिरींशशुक्लन्यायाचार्य के अनुरोध से दीपिका की स्पष्ट असंकुचित टीका लिखना शुरु किया, मेरी धारणा से भी अधिक उत्कृष्ट पदार्थ विशदता लेख में देखी, तब दीपिका किरणावली को गुरुराज श्री वामाचरण भट्टाचार्यजी के आशीर्वाद के स्वतन्त्र मुद्रित करने को कहा गया, श्री स्वामीजी ने श्री भट्टाचार्यजी के चरणों में लिखित कापी रक्खी, गुरुराज ने आश्चर्य से देखी, प्रसन्नता से कठिन गहन स्थान देख लिये, बिलकुल स्पष्ट यथार्थ व अधिक विवेचित किया देख के आशीर्वाद के साथ छपवाने को कहा, प्रकाशित होते ही दीपिका किरणावली अतिमूल्यवालो यशस्वी कीर्तिकारिणी टीका हो चली, और सभी तर्कसंग्रह एक पार्श्व रह गये, दीपिका किरणावली मूर्धन्य बन गयी, इसके अनन्तर स्वामीजी ने न्याय सिद्धान्तमुक्तावली पर सुविस्तृत शास्त्रार्थ भरी उचित अधिक सरल व गहन सभी न्यायरीतियाँ से भरी टीका स्वयं लिखकर तैयार किया व मास्टरखेलाड़ी लाल द्वारा प्रकाशित किया, लेखन प्रूफ संशोधन मुद्रण में सतत जातमेहनत लेते थे, यह टीका प्रसिद्ध होने से विद्यार्थी व पण्डितलोग सभी उपयोग लेने लगे, किरणावली के आगे दिनकरी रामरुद्री प्रभा आदि टीकाएँ निम्न नम्बर की हो गई, इसका दूसरा एडीशन चौखम्भा प्रेस ने किया, यह टीका सब से उत्तम जगत्प्रसिद्ध हो गयी है, पञ्चलक्षणी सिंहव्याघ्रलक्षण आदि ग्रन्थों पर विवृत्तिनामक श्रीभट्टाचार्य जी कृत टीका का प्रूफसंशोधन करना तैयार फार्मा गुरुजी से दे आना आदि-आदि सेवा किया करते थे, न्याय में तर्क में पढ़ने पढ़ाने में निष्णात श्री कृष्णवल्लभाचार्यजी उस समय सतीर्थ्यों में मानपात्र बढ़गये सतीर्थ्यों के शास्त्रार्थ में भी वादविवाद में तत्त्वनिर्णय तर्कपरिष्कारादि में बढ़कर बुद्धिमान बखनाते थे, मैं सरस्वती गली वाली-संगत पाठशाला में पढ़ाता था, सभी नव्य न्याय पढ़ाता था, मैंने पंचलक्षणी माथुरी पर टिप्पनी किया था मूलमुक्तावली पर टिप्पनी किया था, फिर भी मेरे विद्यार्थी भी श्रीस्वामीजी की टीकावाले ग्रन्थ लेके पढ़ने आते थे। यही आनन्द की बात है जो अपनी गुरु-परम्परा प्रणाली में अच्छे अन्तेवासी प्रकट हो आए, मैं जहाँ सभा व शास्त्रार्थ हो वहाँ बुलाने को श्री स्वामीजी के प्रति सायकल द्वारा कोटवाल के पत्र में का नम्बर देकर विद्यार्थी को दौड़ाता था, श्री शास्त्री स्वामीजी ब्रह्मचारीजी तुरन्त आते थे पूर्वपक्ष या उत्तरपक्ष लेके बैठ जाते थे शास्त्रार्थ अच्छा जमता था। स्वामीजी ने सांख्यपर किरणावली किरण तथा भाष्य लिखे हैं, योग पर किरण व भाष्य लिखे हैं, मीमांसा वर किरणावली व

परिष्कार लिखे हैं, हितोपदेश मित्रलाभ पर सरल टीका लिखी है, जिसके पचास के उपर एडीशन हो गये हैं, वेदान्त के ग्रन्थ लिखे हैं, श्री लक्ष्मीनारायणसंहिता सागरसमा ग्रन्थ लिखा है, छपा है सभी पृथ्वी में पहूँच गया है, पण्डित लोग इसका आश्चर्य मानते हैं, स्वामीजी की कलम व मेधा तथा एकाग्रता छन्दो ग्रथन गणेशजी की तरह होते जाता है, काटकूट नहीं करना पड़ता, एकलाख छब्बीशहजार श्लोकों की संहिता यह श्वेतायनसंहिता है। और स्वामीजी ने तत्त्वमुक्ताकलाप पर किरणावली लिखा है, आध्यात्मिक आर्षभाव से गुणातीतब्रह्मोपनिषत् ब्रह्मविद्यासंभृत लिखा है, ५४ ग्रन्थ लिख के संस्कृत हिन्दी गूजराती ग्रन्थ रूप में संस्कृत आदि की सेवा की है, ग्रन्थों के नाम यहाँ देने उचित हैं—

१ न्यायसिद्धान्तमुक्तावलीकिरणावली	संस्कृतम्
२ तर्कसंग्रह दीपिका किरणावली	,,
३ न्यायबोधिनीपदकृत्ययोष्टिप्पनी	,,
४ सांख्यकारिकायाः श्रीस्वामिनारायणभाष्यम्	,,
५ सांख्यतत्त्वकौमुद्याः किरणावली	,,
६ सांख्यकारिका गौड़पादभाष्यस्य किरणम्	,,
७ योगसूत्राणां श्रीस्वामिनारायणभाष्यम्	,,
८ योगसूत्रभोजवृत्तेः किरणम्	,,
९ श्रीस्वामिनारायण वेदान्तसारः	,,
१० हितोपदेशे मित्रलाभस्य किरणावली	संस्कृत-हिन्दी
११ शिक्षापत्र्याः किरणावली	संस्कृत-गूजराती
१२ श्रीगुणातीतानन्दस्वामिवार्ता ग्रन्थः	संस्कृतपद्य-हिन्दी
१३ श्रीगोपालानन्दस्वामिवार्ता ग्रन्थः	संस्कृतपद्य-हिन्दी
१४ श्रीस्वामिनारायणवचनामृतानि	हिन्दी
१५ शिक्षापत्री	हिन्दी
१६ अखिलभूमण्डलीय साम्प्रदायिक मुक्तिव्यवस्था	संस्कृत-हिन्दी
१७ तत्त्वप्रभावली विशिष्टं न्यायशास्त्रं प्रमेयप्रमाणप्रमिति-प्रमातृखण्डचतुष्टयात्मकम्	संस्कृतम्
१८ श्रीगुणातीतब्रह्मोपनिषत्	संस्कृतम्
१९ विशिष्टाद्वैतेऽपि विशिष्ट ब्रह्माऽद्वैतत्वम्	संस्कृतम्
२० ख्यातिविमर्शः	,,
२१ प्रमात्वविमर्शः	,,
२२ जातिविमर्शः	,,
२३ वचनामृतानां प्रामाण्यहेतवः, २२५१ सूत्राणि च	,,
२४ श्रुतितात्पर्यनिर्णयः	,,
२५ साकारत्वविमर्शः	,,
२६ श्रीहरिस्वरूपनिर्णयस्य सत्संगभाष्यम्	,,
२७ श्रीसुधासिन्धोः ब्रह्मरसायनभाष्यम् ४००० पृष्ठानि	,,
२८ अवताराऽवतारित्वे पुराणादिवचनानि	,,
२९ पंचतत्त्वनिर्णयः	,,

३० चित्सुखीटिप्पनी ,,
३१ कविकाव्यगौरवम् ,,
३२ श्रीस्वामिनारायणदर्शनम् , दर्शनशास्त्रम् ,,
३३ श्रीसत्संगिजीवनस्य पारायणी सारबोधिनी टीका ,,
३४ भगवतो विविधस्तोत्राणि ,,
३५ तत्त्वमुक्ताकलापस्य पञ्चसराणां किरणावली ,,
३६ हनुमदादीनां स्तोत्राणि ,,
३७ मीमांसाया अर्थसंग्रहस्य किरणावली ,,
३८ मीमांसायाम् अंगत्वादिपरिष्कृतिः ,,
३९ सुधासिन्धुसारसन्दोहनम् ,,
४० दर्शनतत्त्वसारः ,,
४१ भक्तिरससरित् ,,
४२ सामान्यनिरुक्तिगादाधरीक्रोडपत्रम् ,,
४३ अनेका विप्रतिपत्तयः ,,
४४ श्वेतायनसंहिता (श्रीलक्ष्मीनारायण संहिता १ लाख २६ हजार श्लोकाः) ,,
५४ दस ग्रन्थ और भी लिखे हैं। ,,

श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज प्राचीन नवीन न्याय के सभी ग्रन्थ तथा दर्शनों के सभी ग्रन्थ पढ़ाते थे, तथा लिखते भी रहते थे, हम सतीर्थ्यलोक कायम श्रीभट्टाचार्यजी के पास पढ़ने जाते थे, अन्य छात्रों को पढ़ाते भी थे, शास्त्रार्थ में मिलते थे, बड़ा रंग जमता था, आनन्द आता था, संस्कृत-हिन्दी-गूजराती साहित्य की सेवा श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज ने खूब-खूब की है। इस सेवा के लिये इन धुरन्धर सतीर्थ्य पण्डित को मेरा बार-बार अभिनन्दन है। कुंभ के स्नान पर जाते थे तब हरिद्वार प्रयागराज नाशिक आदि स्थलो में बड़े तम्बू में विद्वान् सन्तों की मण्डली शास्त्रार्थ के आनन्द के लिये ही प्रसिद्ध बोर्ड तम्बू पर लगा कर घोषणा करती थी, 'किसी भी विषय में शास्त्रार्थ करने का आमन्त्रण है' 'आईए' 'दक्षिणा पाईए'। इत्यादि ॥ इति शम् ॥

श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी एक बड़े तपस्वी हैं

महामण्डलेश्वर न्यायवेदान्ताचार्य बुद्धिप्रकाशस्वामी

उदासीन विद्यालय, देहरादून

तपश्चर्या सभी की शुद्धि व अभ्युदय के लिये है, सभी देशों में उनकी प्रणालीयों के अनुसार तपश्चर्या अधिक या न्यून होती है, भिषक्शास्त्र भक्ष्य-पेयादि में ध्यान खींचते हैं, देश समय वातावरण शीतउष्ण ऋत्वनुसार अवस्था स्वरूप लक्ष्य में रखकर संकोच आधिक्य मिश्रण गरम-नरम पथ्य अपथ्य व्यायाम अधिक वर्णित करके मानवों को पोषणरीति व्यवस्थित करते हैं, आयुर्वेद समस्त शारीररक्षणार्थ हितकर दिखलाता है' अहितकर तजाता है, सर्वान्तर्यामी नारायण ने जाठराग्नि स्वरूप में रहकर व्यक्तियों के प्राणनियमन के साथ रुचिकर या अरुचिकर पदार्थों के प्रति ग्राह्याऽग्राह्यत्वका बोधपाठ सभी को सीखलाया है, स्मृतिशास्त्रों ने भोग का संकोच प्रतिपादित किया है, शरीर व इन्द्रियों का ऐक्य होने पर भोग बढ़ जाता है, भोगे रोगभयं हो आता है, शरीर व इन्द्रियों के व्यापारों को पृथक् रखने से तपश्चर्या को जरूर स्थान मिलता है, दोनों के बेमेल से अधिक तूफान रुक जाते हैं, भय का आगमन नहीं होता, शरीर ऐन्द्रियक व मानस के यदि अति मेल होने लगे तब तो चेष्टाओं की संख्या ही हाथ में नहीं रहती, अनेक अनाचरण बढ़ते हैं, जिन्दगी बरबाद हो जाती है परलोक भी बिगड़ता है, चौराशीयोनियाँ में रखड़ना पड़ता है याम्यकष्टों को प्रसह्य सहना गुजारना पड़ता है। यदि ज्ञान विज्ञान विवेक द्वार तीनों का मिश्रण न होने देवे, तब शरीर से नियमित इन्द्रियों से संयमित मन से उदासीन ज्ञान से निर्लेप यथावश्यक ग्राह्यक होता हुआ बड़ा सुखी होता है, व्रती यति मुनि धार्मिक मर्यादित जीवन से अभ्युदय अनापत्ति-आनन्द व प्रेयः श्रेयः के पात्र अधिकारी होते हैं, शारीर ऐन्द्रियक व मानस तप सभी दुनिया के नर नारियाँ इष्टसिद्धि के लिये सकामतः यद्वानिष्कामतः करते ही हैं, वृद्धों की तपश्चर्या के दृष्टान्त से अवृद्धों की तपश्चर्याएँ बराबर चली आती हैं, चातुर्मास के उपवास नवरात्र के व्रत श्रावण के जागरण व्रत सोमवार के शनिवार के सूर्यवार के व्रत अन्यान्य तहेवारों के व्रत एकभोजन नक्तभोजन फलग्रास पेयमात्र निर्वाह अनिद्रवर्तन ब्रह्मशील में रहना निष्कामव्रत रसत्यागव्रत शुष्क वा आर्द्रपत्रमात्र भोजन रूक्षकणादन वांष्पाहार स्वल्पाहार शीतउष्ण सहन अनावरणवास गह्वरवास पर्वतनिवास निर्जननिवास तीर्थाटन सेवाकरण आदि आदि शारीर तप हैं, सततनिषदन सततखडा रहना ऊँचा हाथ रखना लिंगशिथिलीकरण पञ्चधुनी तापन धारणापारणा उपवास कृच्छ्रचान्द्रायणादिकरण दिवसोपवास एकाकीशयन भूमिशयन भिक्षाहार आदि आदि शारीरतप यथाभावना तथा अभ्युदय निःश्रेयसप्रद होते हैं, मानवों से शारीर तपश्चर्या भावना श्रद्धासहित होने से इष्टसिद्धि देती ही है, थोड़े या ज्यादे वर्षों की विकास तपश्चर्या ने माउन्ट एवरेस्ट तथा चन्द्रमा की भूमि का स्पर्श भी करा दिया, अर्जुन इन्द्रकील में तपश्चर्या करके इन्द्र के पास पहूँचा था, पार्वती ने हिमालय में तपस्या करके शंकर को प्राप्त किया, काली में से गौरीपना प्राप्त भी किया, विश्वामित्र ने नये नक्षत्र बनाये, ब्रह्मा ने तपः से वेद प्राप्त किये, भीष्म ने ब्रह्मव्रत से काल को हठाया, शारीरनिग्रह से इन्द्रियनिग्रह भी हो सकता है, रस व भोग का निग्रह बड़ा तप है, तप द्वारा हनुमान यति हो गये, सतीयाँ शील से पूज्य देवियाँ हो गई हैं, अहिंसा सत्य अस्तेय ब्रह्मचर्य अपरिग्रह शौच सन्तोष तपः स्वाध्याय ईशप्रणिधान सुखकर आसनाभ्यास प्राणायाम प्रत्याहार इन्द्रियवृत्तियों का निरोध

एक धारणासा एक ध्यान एक समाधि आत्मसत्ता ने वर्तना सदा ही तत्त्वविचार ब्रह्मजिसा में रहना आन्तरवृत्ति प्रतिलोमस्थिति सर्वार्पण ब्रह्मार्पण आत्मरूप सर्वदर्शन संकल्पाऽनुत्थान एकाग्रता निरोध आदि-आदि बड़ी-बड़ी तपश्चर्यायें हैं, वे पुण्यतत्त्व भावनावृद्धि सात्त्विक प्रकर्ष के साथ धर्ममेघ में स्थित हो के व्यापक साक्षिचैतन्य में तादात्म्यापन्नता से सभी प्रकार की सिद्धियाँ को करआमलकवत् हस्तगत कर लेते हैं, बलिष्ठ या निर्वजन शुद्ध आत्मा उपासक या भक्त आत्मा सेवक शरणागत आत्मा केवल या स्वस्वरूप आत्मा व्यापक या उपास्य महातत्त्व परमात्मा में समन्वित होते हैं। प्रति व्यक्ति पढ़ना कामकाज सीखना क्रिया करना उद्यम निभाना समूहित जीवन खपाना ज्ञान में तत्स्नातक होना आदि-आदि तपश्चर्याओं के अधिकारी है।

ज्यादातर सन्त लोग अधिक तपश्चर्या करते हैं, विकारों का सामना करते हैं, मान-सम्मान आदर सत्कार में बहते नहीं है, विस्मय भाव आने देते नहीं है, अहन्ता ममता को समय ही नहीं देते हैं, ईशसंकलित अवस्था निभाते बीताते हैं, सर्वत्र ब्रह्मदृष्टि से हितकारक परोपकारक समर्पण में ही गूजरते जाते हैं।

श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी प्राग्भवीय तपस्वी सिद्धयोगी ही हैं, बालपन में ही तपव्रत करते थे, देवार्पण पूजन भजन विशेष करते थे, अभ्यास में भी प्रह्लादजी की तरह भगवन्नाम भजन मालावर्तन तीर्थस्नान श्रावणस्नान अधिकमासस्नान जपपूजनभजन आदि किया करते बे, कथास्थल में जाके श्रवण किया करते थे, गीता आदि बांचते थे महाभारत की कथाएँ सुनते थे, वार्षिक सभी व्रत करते थे निर्जला व्रत करते थे जागरण करते थे, सन्तदीक्षा में सन्त की स्थिति के व्रत बराबर करते थे, आप पढ़ने में सरकारी इलेक्ट्रीक बत्ती के प्रकाश में बैठकर पढ़ते थे, आधी रात बीतने पर हरिणी नक्षत्र शिर पर आजाने पर जमीन में ही सोते थे, वाणी में अति संयमित थे, आहार में भी संयमित थे, ऋषि मुनियों के आख्यान श्रवण के संस्कार से तपश्चर्या को विशेषतः पसंद करते थे, बीछाने में भीण्डी के बोरे रखते थे शिर के नीचे ईंटा रखते थे, चटाई में ही बैठते लेटते थे सादे वस्त्र पहनते थे, काशी में अन्नसत्र में आहार लेते थे गंगा में त्रिकाल स्नान करते थे श्रीविश्वनाथजी आदि के दर्शन करते थे, मुख से भजन करते थे, कालिज को जाते समय मार्ग में ग्रन्थावलोकन व यादगीरी करते जाते थे, सांयंकाल का भोजन सदा अनियमित अनावश्यक ही था, पर्णाद ऋषि के व अपर्णा सती के वृत्तान्त पर अतिश्रद्धा से स्वयं स्वामीजी ने काशीजी में ही चार दिनों के उपवास सप्ताह के उपवास द्वादशदिनों के जलपानाधार व्रत मासिक फलाहार आदि-आदि व्रत दुग्धमात्र व्रत दधि-मात्रव्रत दधिभातमात्र चातुर्मासव्रत करते थे, संवत् १९९२-९३ में सालभर अन्नभिन्न आहार पर रहने का व्रत लिया, प्रथम के मास में 'नहीं मागने पर मिले सो खा लेना' ऐसा व्रत चालू किया, उसे साल भर निभाया, दूसरी वार नहीं मांगने का व्रत रक्खा, यह तो कायमी व्रत रूप अभ्यस्त ही हो गया दो चार कवल कमती रहने से जलपूर्ति तक्रपूर्ति से निभाव लेना अभ्यस्त ही रक्खा जो जिन्दगी भर यह व्रत चालू ही है। अपने लिये अलायदा कुछ भी नहीं पकाना पंच के रसोडे से जो पथ्य पड़े सो जिम्नेका भी व्रत रक्खा यह भी प्रसिद्ध ही है। दीक्षा में विशेष कर एक गोल काष्ठपात्र में चीजें लेकर परोसी चीजों को मिलाके भोजन लेना, जल तुम्बी पात्र से पीना इस व्रत को बीस वर्ष तक रक्खा, अभी तक काष्ठपात्र व तुम्बी कलश स्वामीजी के पास मौजूद हैं, जो पवित्र पात्र माने गये हैं। संवत् १९९२ के द्वितीयभाद्र से वार्षिक तपोव्रत किया था; भाद्रमास एक मास सुवापालव की कच्ची भाजी बीस रूपये भार दिन में एक बार खाके रहे थे, आश्विन में कच्चे शकरकंद २० भार खाके रहते थे, १९९३ में कार्तिक में कच्चे शींघाड़े खा कर रहे थे, मागशीर्ष में कुटू के (मोथ) के चावल पानी में चूरवा के खाते थे, पौष में शींघाड़े के

आटे के परोठे खाते थे, माघ में कलकता गये थे राजगरा के आटे की पूड़ी खाते थे। फाल्गुन में तीनी के चावुल खाते थे, चैत्र में पानी में बाफे हुए आलु खाते थे, बैशाख में मटर खाते थे, ज्येष्ठ में आम्रफल खाते थे, अषाढ़ में नेत्रों में तेज कम हो गया अन्धेरा का घेराव चोतरफ दूर घूमता भासता था, तब एक गूजराती लाईब्रेरी के अध्यक्ष ने कहा—आप का शरीर अन्नकणों वाला है, अन्न तजने से आँख को हानि पहूँचेगी, उपमन्यु आदि के अन्धेपन का दाखला है, अतः धीरे-धीरे अन्न चालू करिए, तभी से भात दहीं खाना चालू किया, फिर तो रोटी चने दाल आदिक पाचन होने लगे, आँखों में तेज पूरता आ गया, दस महीना उक्तरीति से तपश्चर्या किया दो महीने भात दहीं भोजन लिया, वर्ष की टेक पूरी हुई, उस तप को अयाचित प्राप्त में पलटाकर चालू ही रक्खा था, तब से बड़ा लाभ तो यह हुआ, कोई भी चीज डकार आते तक खा लेने से तृप्ति हो जाय, फल हो रस जो कुछ एक भी चीज पर तृप्ति हो जाने लगी, यह बड़ी सिद्धि प्राप्ति हुई, कुछ भी कभी भी खा लेने से दिन रात निकल जाते हैं, तप के बाद शरीर विशेष स्वस्थ निरोगी हो गया, समग्र जीवन में कभी ज्वर भी नहीं आया, अन्य कोई रोग नहीं हुए, मानस शान्ति हो गई, यतिपना सुखद हुआ ज्ञानिपना बढ़ा, बुद्धि में विशेष प्रकाश हुआ राजस तामस वेग निर्बल से हो गये, शान्त स्वरूप बढ़ने लगा, मेधा बढी पाण्डित्य बढा थकावट उड़ गयी असन्तोष मीट गया, शान्ति से ब्रह्म में ज्यादा समय देना, शास्त्रलेखन में तथा अन्य कामों में बाकी के समय देना आदि-आदि के नियम बराबर सुसिद्ध हो गये. कई बार साथ में रहने से इन बातों के अनुभव किये हैं, मैंने द्वारिका तीर्थ करने गया, मार्ग में नवा नगर आया, वहाँ स्वामीजी विराजते थे, वहाँ भी उपरली सभी हकीकते अनुभूत हुयीं, बाद में गिरनार व सोमनाथ तीर्थ करने गया था वहाँ भी इनकी तपश्चर्या उसी प्रकार की बढ़कर अनुभूत हुयी, सूर्योदय से सूर्यास्त पर्यन्त अपनी कूटियाँ-रूप गुफा से बाहर ही नहीं निकलते, शास्त्र भगवान् व आत्मपरमात्मभजन में ही जीवन तन्मय है, यह तपश्चर्या बड़ी भारी है। देहातों में जाते हैं तो वहीं भी अपनी तपश्चर्या चालू ही रखते हैं, ब्रह्ममग्न ऐसे सत्पुरुष की तपश्चर्या लोककल्याणार्थ है इनको मेरे अनेक अभिनन्द हैं।

श्रीस्वामीजीमहाराज की दृष्टि में अन्य धर्म

सौगत संस्कृतशास्त्राध्ययनाध्यक्ष परिमल सतीश भट्टाचार्य

देहरादून, हांगकांग, जापान

भगवान् परब्रह्म एक है, ब्रह्मधाम के वतनी है सर्वत्र भी रहे हैं, मानवमात्र उस तत्त्वमूर्ति की उपासना करते हैं, यथाबुद्धि उपासते हैं, बुद्धि आत्म चैतन्य है, अवस्थाओं में परिवर्तनशील है, विषयग्रहण होने से बुद्धि का होने से बुद्धि का अस्तित्व रहता है, यह सविषय अस्तित्व है, स्वरूप से ज्ञान की नित्यता तो है ही, तथापि विषय बुद्धचारूढ होने से विषयान्तर से रूपान्तर कहाता है, बिना बुद्धि उपासना नहीं होती, उपासना समीप की चीज में बुद्धि का आसन जमना, निराकार में भी आसन तो जमता है, कार्यवश स्वरूप रूप में तो आसन जमता ही है, एक में ही सभी दुनिया के उपासकों की बुद्धि का आसन बिना समीपता कैसे कहाँ जमेगा, अतः सर्वत्र अस्तित्व परमात्मा का है, उपनिषत् इस बात के मुख्य दैवी प्रमाण हैं, जगत् के सभी मानव काफलों के प्राचीन अर्वाचीन शास्त्र अपने अपने मुख्य प्रमाणरूप हैं, उनसे निराकार का भी सर्वत्र रहना सभी के प्रति रहना मानव को नक्की मनाता है, सर्वत्र है तो आत्मा में भी है, वहाँ उपासना उत्तम हैं, अतः आत्मा में अन्तर्यामी या शुद्ध ब्रह्म उपासा जाय, यह सबके लिये नियम ही है, ईश्वर देव ऋषि पितृ दैत्य नाग आदि ज्ञातृ सृष्टियाँ आत्मा में निदिध्यासन करती हैं, इसके अनधिकारी के लिए बाह्य में स्थित की उपासना हितकरों ने चलायी है, मूर्तियों में उपासना की जाती हैं, विधि से प्रतिष्ठित में श्रद्धा जमती है उपासना भी होती है, अतिस्थूलधी प्रजा को सुमूर्त प्रतिमा में सुरूपसुशृंगारित में ध्यानोपासना होती है, कोई उपासना वैसी है कि जडचेतन दोनों में प्रभु है इसका निदिध्यासन करना, कोई सूर्य इन्द्र वरुण अग्नि सन्त गुरु गौमाता पवित्र वृक्ष बाल सती योगी आदिक में प्रभु को विशेष उपासते हैं, देशजाति के उपदेष्टा में भी ब्रह्म की उपासना होती है, हनुमान् गणेश शिव विष्णुनारायण अर्हन् जिन अल्लाह ईसा गॉड इत्यादि किसी भी प्रतिक में ब्रह्म की उपासना पारम्परिक प्रवाह से भी होती है, ब्रह्म सर्वत्र है, अतः चाहे जहाँ उन्हें सर्वार्पण कर सकते हैं, यह सर्वत्र ब्रह्म की मानिनता सभी का एक धर्म है, प्रत्येक व्यक्ति के अन्तरात्मा ब्रह्म है, यह सभी की प्रतिस्विक अनन्त असंख्य ब्रह्म की मानिनता है, इन दोनों से न्यारी मानिनता बीच कोटिकी रह गई, यह काफले के लिये है, विप्रकाफले शिव में क्षत्रिय काफले सूर्य में वैष्णव काफले विष्णु में कोई ईशान में कोई अल्लाह में कोई अकाल में कोई भाग्य में कोई कर्म में ब्रह्मता के आरोप से उपासना करते हैं, उपास्य की मूर्तियाँ प्रतिमाएँ अनेक प्रकार की प्रतिष्ठापित करते हैं, पवित्र मन्दिर देवालय पुण्यतीर्थ करवाते हैं, वहाँ विशेषता से आराध्य ब्रह्म उपासित निदिध्यासित हो सकता है, इसका स्थूल नाम है सम्प्रदाय, सूक्ष्म रूप है उसका विज्ञान, कारणात्मक तो एक ही है। सात्त्विक राजस तामस मानवादिकों ने स्वनिसर्गतानुकूल देवादि-समर्चनोपासना चलायी है, उनकी पुष्टि के लिए विभागीय ग्रन्थ रचे जाते है, विभिन्न देशों के मानवों का एकसा रीतिरीवाज होना असम्भवित है, अतः एक सी प्रतिमाएँ एकसी पूजोपासनाएँ एकसी गतियाँ भी असम्भवित हैं, इन बातों का मेल नहीं होता, किन्तु सभी को संसार से छूटना व ब्रह्म के नजदीक मुक्ति में जाना, इस बात का मेल बन सकता है, इस दृष्टि से मोक्षधर्म एक है, उपासना प्रवाह एक है, भागवत

धर्मानुष्ठान सर्वार्पण निष्कामसाधन आत्मनिवेदन एक प्रकार का है, उत्तम मध्यम कनिष्ठ भले हों, परन्तु एकजातीय एकस्वरूपीय वह साधन है, अद्वैत की एक मुक्ति है, द्वैतियों की अनेक मुक्तियाँ हैं, अन्त में एक में समावेश करना पड़ेगा, एक में समाविष्ट होना पड़ेगा, महाप्रलय में एक के बाहर कोई नहीं रह सकते, खण्डप्रलयों की बातें न्यारी हैं, इन सबसे आगे आगे क्या होगा ?, इसकी शान्ति ब्रह्म होने में ही है, इस प्रकार एकधर्मता आ गयी ही, जबतक शरीर है शरीरस्थ आत्मा हैं आँखों के अधीन देखता है तो अन्य अन्य पन्थ धर्म उपस्थित होते ही रहते हैं, क्रिया गतिशील जगत् में एक के बाद दूसरे का स्थान होता ही है, अन्य अन्य देखने में आयेगा भी, चिरंजीवीओं को अन्य अन्य दीखता ही जाता है, विज्ञानीजीविओं को अन्य अन्य का बाध होता रहता है अबाधित एक का दर्शन सतत अविच्छिन्न चलता ही रहता है, अतः सभी परिवर्तनशील धर्मों में भी नित्यशाश्वतधर्मता तो एक ही दीखती है, शरीरीओं को मरना पड़ेगा—यह एक तो शाश्वत धर्म है, सभी को एक ही वह है, दुःख से छूटना सभी को यह भी एक है, सुख में जाना यह भी एक है, सुखद में अर्पण होना यह भी एक, ये सभी एक पिण्ड बन जाते हैं वह मुक्तिपिण्ड कहाता है यह भी एक है, श्रीकृष्णवल्लभाचार्य स्वामी जी के ग्रन्थों में आध्यात्मिक विषयों में यह एक धर्म सर्वत्र सारांश रूप निकल आता है। ब्रह्मप्राप्ति सर्वसामान्य भागवत प्राप्तिरूप सिद्धान्त तात्पर्यविषय हो मिलता है।

अब बात आयी मानव व्यवहार धर्म की, जैसा देश जिस प्रकार की प्रजा, जिस तरफ वलन, जो उपदेष्टा मिला, उसमें जो जैसी श्रद्धा, तदनुसार व्यवहारु धर्म स्थान लेता है, ये धर्म विभिन्न हैं, कृत्रिम हैं, काफले पलटने से पलटते हैं, पूर्व में या पश्चिम में नमन करिए, पृथिवी में या ऊपर नमिए, सब दिशाएँ एक ही है, व्यापक ब्रह्म पूर्व में पश्चिम में उत्तर में दक्षिण में ऊपर में नीचे में आसपास अन्दर बाहर सर्वत्र है, अन्य धर्मों की विभिन्न दृष्टियाँ श्री स्वामी जी की एक दृष्टि है, संस्कार विभिन्न हैं शरीर विभिन्न हैं शरीरी संस्कार्य नित्य संस्कृत एक है—स्वामी जी की यह दृष्टि है, स्वप्रियतावत् सभी में देखना एक धर्मदृष्टि है, रागद्वेष तजना अज्ञान अविद्या अन्धेरा माया आदि का तजना विद्या विज्ञान भक्ति का होना सभी के लिए एक दृष्टि है, ब्रह्मरूप होये बिना ब्रह्म में मिलना नहीं होगा, नाम भिन्न होना भी भिन्न नहीं है, जाने का प्रदेश सृष्टि से त्रिगुणित विशाल है, जहां राह रास्ता पाया वहाँ जाना अपनाया, आगे बड़े त्रिगुणित में पहुँचना ही होगा, यह धर्म एक है, इस युग में रीतरिवाज एक सा करने का आदरभाव समयानुसार सूझ पड़ा है, तब भी वह भाव खण्डित सा तो रहेगा ही, प्रलय तक रहेगा, क्योंकि स्वार्थ से भरा जगत् है, स्वार्थ स्वयं परार्थ से भिन्न बरतेगा, जिसने स्वार्थ तजा वह ब्रह्म दृष्टिवाले परिपक्वज्ञानी ब्रह्मशील एकार्थवृत्ति होके ब्रह्म में हुत हो ही जायेंगे, उनके लिए एक ही धर्म फलित हुआ, अब वैष्णव शैव जैन बौद्ध शाक्त आदि कोई भी समूह एकार्थवृत्ति होयेगा तो जरूर एक धर्मी होके ब्रह्म में पहुँचेगा। श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी महाराज ने अपने ग्रन्थों में आध्यात्मिक रीति से तथा अखिल भूमण्डलीय साम्प्रदायिकमुक्तिव्यवस्था नामक ग्रन्थ में साम्प्रदाथिक रीति से एक धर्म को लक्ष्य करके जानेवाले विभिन्न विश्रान्ति स्थानों में ठहरेंगे—इस बात का अच्छी तरह से सविस्तार उल्लेख किया है, किन्तु सभी को परब्रह्म तक पहुँचाये हैं। श्री स्वामी जी की दृष्टि ब्रह्मदृष्टि है स्वयं ब्रह्म है, इनके प्रति अन्याऽन्य धर्म भी एक ही धर्म है। औपाधिक व्यावहारिक धर्म तो यहीं रह जाते है पारमार्थिक सत्य ब्रह्म धर्म ही आत्म ब्रह्म के साथ चलेंगे, अमेरिका आस्ट्रेलिया एशिया अन्तर्गत विभागों में भी शास्त्र द्वारा एकधर्मविज्ञान पाने लगे हैं, एकोपासना होने लगी है, निष्काम कर्म एक आत्मार्पण साधन होने लगा है, जो कि परमेश्वर के ज्ञान में है, यति योगी अवतारों के ज्ञान में है, श्रीकृष्णवल्लभाचार्य स्वामी के ज्ञान में

भी वही एकता है, वैसे ये महान् यतिवर्य भारत के विद्वान् सभी के लिये परमार्थचिन्तन करनेवाले हैं, परमेश्वर की तरह अभिनन्दन के पात्र ही हैं सभी विद्वानों के अभिनन्दन इस परम पुरुष के लिए योग्य ही हैं, श्रीवेदव्यास जी के विज्ञानाऽवतारानन्तर श्रीकृष्णवल्लभाचार्य श्वेतायनव्यासाऽवतार वर्तमान में जगत् को एकात्मधर्म विज्ञान देने के लिए प्रकट हुए हैं, रैवताचल की गह्वर में विराजते हैं, श्रीदत्तात्रेय भगवान् जिस रैवताचल के शिखर में विराजे थे, जहाँ रैवताचल की द्रोणी में वामन भगवान् त्रिविक्रम जी बलि राजा के लिए आये थे, जिस रेवताचल की उपत्यका तथा अधित्यकाओं में श्रीकृष्ण नारायण बलदेव जी विहरे खेले हैं, जहाँ सभी देवाताएँ सिद्धपुरुष तीर्थ साधु सतीयाँ गिरनार की प्रदक्षिणा में प्रदक्षिणावाले तैर्थिकों को फल देने के लिये हाजिर रहते हैं। यह भी ब्रह्मावतार श्रीकृष्णवल्लभाचार्य की समक्षता का प्रदक्षिणारूप एक धर्म हैं, तमाम सम्प्रदाय मतपन्थवाले आते हैं तीर्थ करते हैं फल पाते हैं एकमेक से बरतते हैं, ब्रह्मानन्द में विशेष तो मिलते हैं मोक्ष में भी जाते हैं। यह भारतभूमि सौराष्ट्र भूमि रैवताचल भूमि, कुंकुमवापी भूमि भी अभिनन्दन पात्र हैं, मैं भी मेरा पूरा अभिनन्दन पाठवता हूँ, भूमि पर श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी अधिक जीवें, इसके समान सन्त अवतार होते रहें, विद्याविज्ञानमन्दिर बनते रहें॥ शान्तिः॥



नित्य प्रातः पूजन में दर्शनार्थ भक्तों ने स्वीकृत श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज-चित्र प्रतिमा

भारतीय विद्यालयों को श्रीस्वामीश्वर की देन

विदुषी शिष्या डॉ० सुषमा सक्सेना पी० एच० डी०

प्रयागराज

प्रकृष्ट विद्वान् में श्रीसरस्वतीशारदासती लक्ष्मीगायत्री सावित्री ब्रह्मविद्यागीतागंगायमुनागार्गी संज्ञामहेश्वरी भूदेवी महाशक्तियाँ सभी सिद्धियाँ सुसाकारा निवास करती हैं, ये देवीयाँ चैतन्यशक्तियाँ हैं प्रतिभाएँ ज्ञप्तिएँ प्रमाएँ ब्राह्मीयाँ विविध विद्यायँ कलाएँ अविनाभाव सम्बन्ध से विश्वविभूत्यात्मक महाविद्वान् में विराजती हैं, शीलव्रत की साधुता जहाँ हैं वहाँ ये शक्तियाँ निर्भय निर्ह्रासता से तदात्मीय होकर सेविकाएँ होती हैं, स्वामी के लिये यश कीर्ति विजय सुख सम्मानादि प्रदान का आयोजन खोजती रहती हैं, अच्छे विद्याव्रत सुपति को प्राप्त करके पातिव्रत्य में से कभी चूकती नहीं हैं, मैंने श्रीकाशीजी में संस्कृत आचार्य तक पढ़कर P. H. D. के लिये कविवर श्रीअचिन्त्यानन्दजी के काव्य पर निबन्ध लिखना शुरु किया, तब उस समय में स्वामीजी के ग्रन्थ देखकर आश्चर्य हुआ, कोई ईश्वरीय अंशाऽवतार भूमिपर विराजते हैं, इनके विद्वत्ताभरे परिष्कृत पदार्थों से सुशृंगारित ग्रन्थों में अच्छे उत्तम विद्वान् भी आनन्दपूर्ण हो जाते हैं, मैंने श्रीस्वामीश्वर का कविकाव्यगौरव बाँचा और अन्य भी शंका के लिये पूछा सभी पूर्ण समाधान मिल गया, श्रीस्वामीजी के प्रत्युत्तर से मुझे अग्रे-अग्रे प्रकाश हुआ, मैं जब-जब याद करती हूँ मेरी आत्मा में अधिकतम प्रकाश होता है, मेरे अच्छे भाग्य हैं ऐसे यतिमुनि के गुणगान के लिये सौभाग्य प्राप्त हुआ है। भारत में ऐसे प्रकाण्ड विद्वान् ने वर्तमान समय में विद्यालयों के लिये तथा विद्यार्थीओं के लिये पैंतालीश ग्रन्थ लिखकर दिये हैं, विद्वानों के लिये भी उपयोगी हैं, यह भारत पर विद्याविभाग पर श्रीबृहस्पतिब्रह्ममूर्ति श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज का देन है, इन गुरुस्वरूप हरि का विजयझंडा फरकता रहे, इनके लिये मेरा हार्दिक अभिनन्दन है, उनके आशीर्वाद प्राप्त होते रहने की प्रार्थना है।

अभिनन्दन

भरतकुमार रतिलालभाई कामदार

दिग्विजय सॉल्ट वर्क्स, वेडीबन्दर, जामनगर

भारत में महागुजरातविभाग में एक अवतारी प्रभु श्रीस्वामिनारायण भगवान् प्रसिद्ध हुए, उन्होंने जंगलीसी प्रजा में से भी मद्यमांस चौर्य हिंसा आदि स्वोपदेशादि द्वारा नष्ट किये, उन महासुधारक चमत्कारी प्रभु के सम्प्रदाय में वर्तमान समय में दिगन्तविख्यात महाप्रतिभाशाली आवाल ब्रह्मचारी एक महामहा विद्वान् सन्त श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी वेदवेदांग शास्त्रादिकों में अप्रतिहतगतिक भारत के गिने-चुने उच्चकोटि के विद्वानों में हैं, इनकी ५४ संख्याक सभी शास्त्रों की नयी-नयी कृतियों से संस्कृतभारती सुसेवित हुयी है, वैसी वाङ्मयी के सुमूर्त स्वरूप ये आपके अभिनन्दन के सचमुच उत्तमपात्र हैं, भारतादि के विद्वान् इनका अभिनन्दन करके अपने एक कर्तव्य का पालन कर रहे हैं, देश में आध्यात्मिक अधिक विकास के लिये त्यागी सम्प्रदायों का अस्तित्व अत्यन्त उपयुक्त हैं, बहु मुखी प्रतिभा से स्वामीजी महाराज ने अनेक प्रकारों में देश की सेवा की है, इनके अभिनन्दन ग्रन्थ में इनकी सेवारूप कृतियों का अनेक प्रकार के दिग्दर्शन कराये होंगे। इनके अभ्यासी भावी लोग भी विद्वत्तापूर्वक देशसेवाओं के लिये प्रयत्नशील उपजते रहेंगे। सन्तस्वरूप में लोकोपकार व आत्मश्रेयः के लिये जो कुछ करना चाहिए वे सभी कार्य इन विद्वान् सन्त ने किये हैं और करते जा रहे हैं, विद्या का अध्ययन अध्यापन शास्त्रदान ज्ञानदान मोक्षदान शीलसंरक्षण ब्रह्मचिन्तन उपदेश निज सात्त्विकवर्तन जीवन मुक्तस्थिति निगूढतत्त्वों का विमर्श भारत की सेवा सम्प्रदाय का पोषण वृद्धों की अनुवृत्ति आश्रित समवर्ताव परमश्रेयःकर विचारों का लेखन सद्गुणग्राहकता विनीतता निजमाताप्रोक्त 'बेटा खूब पढ़ना' इस आशीर्वाद को सफलता में सुमूर्त करने के लिये जीवन सर्वस्व विद्योपार्जनादि में समर्पण करना, परम्परा की कीर्ति व पद्धतियों का निभाना उच्च दर्जे पर विद्यमान होने पर भी तमाम जीवों के प्रति प्रणय दया सर्वात्मत्व दृष्टि से अवलोकन वाङ्मनः हृदयों से माधुर्याऽमृत वर्षा करते रहना इतियों का सहन करना तत्त्वाधार शरीर में रहने पर भी जल कमलवत् निर्लेप रहना परिश्रमवाले भगीरथ कार्य में भी वृद्धों की प्रसन्नता के लिये प्रवृत्त होना आरब्ध कार्यों का पार लेना विद्वत्सार्वभौम होते हुए भी स्वल्पज्ञों से मिलान रखना हरे तृण को भी नहीं तोड़ना चाहे जितने अपमान करनेवाले को भी नमः विनय दिखलाना हारकर सन्तोष रखना किसी की कीर्ति व योग्यता को खण्डित नहीं करना समय के उचित विभाग से सभी पवित्र कर्तव्य निभाना, स्वदर्शनार्थ आये सभी जनों के लिये अनवरोध पालना, सतत कथावार्ता करना भजन करते ही रहना व्यर्थ समय नहीं जाने देना समझ से सदा शान्ति रखना शान्त वातावरण रखना योगनिद्रा में जागना कभी भी आन्तरिक चिन्ता को प्रकट नहीं करना हर्षशोक के वेग नहीं आने देना सूर्योदय से सूर्यास्त पर्यन्त निज कुटीर में ही निरोध से ही रहना, सायं प्रातर्मध्याह्न आदि उचित समय में भगवदीय कार्यों का अनुष्ठान करना, रसास्वाद से अलिप्त रहना, कभी-कभी भक्ताधीन बर्तना, मोक्षीयमार्ग का पोषण करते ही रहना अपरिग्रह पालना आशातृष्णा रागद्वेषादि से पराभूत नहीं होना वैष्णवधर्म में पूर्ण रहना, तीर्थस्वरूपों को सेवना, जिज्ञासुओं की जिज्ञासाएँ शान्त करना अनेक विध



देहातों में घूमने विचरने जाने के समय का दर्शन। (१

तर्कवितर्कों में भी यथार्थ निकाल करना, सागर समान गम्भीर रहना इत्यादि अनेक प्रत्यक्ष की गई सम्पत्तियाँ मेरे शरणागति के गुरुदेव सद्गुरुशास्त्रीजी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज में विद्यमान हैं, कल्याणकारी इन परमपुरुष को हम लोग कौनसा अभिनन्दन देंयगे सभी अभिनन्दन उन सन्त पुरुष में निवसित है, फिर भी आत्मीय उत्साह भरे अभिनन्दन प्रकाश में देते हुए हम लोग अनेरे आनन्द को प्राप्त कर रहे हैं, उनके अभिनन्दन से सारी दूनिया अभिनन्दित होयेगी, प्रकट भगवान् हमारे इस अभिनन्दन से हमारे पर कपा निगाह रखते रहना, आप के अभिनन्दन सारी सृष्टि उजली है, भावी प्रजाजन इनसे उजाला प्राप्त करेंगे, अधिक चपलता को क्षमा करना, इस प्रकार समर्पित मैं विराम लेता हूँ।

श्रीहरिको नमः

अभिनन्दन

केशवजी हरिभाई दुबई

श्रीहरिशरणागतीय उपप्रमुख सेवक—

अरबस्तान, ओमन

परम पूज्य श्रीकृष्णवल्लभाचार्य स्वामी जी महाराज की परिष्कृत बुद्धिप्रतिभा तथा आदर्शरूप आजीवन नैष्ठिक स्थिति और विद्यातत्त्वों में सदा ही रचे पचे रहना, ये सब सुमूर्त परिश्रम आलस्य-पराभूत जनों के आलस्य को उड़ा देने वाले हैं, इनके सक्रिय जीवन को ग्रहण करके भारत के और सतेज बालक समुदाय भी बड़े बड़े विद्वान् व्यक्तिस्वरूप में प्रकट होंगे, इनके ग्रन्थों के दृष्टान्त से भारतीय विद्याओं की सेवा करेंगे, मोक्षमार्ग को भी अपनायेंगे, योग्यभूमिओं में विद्यालय स्थापेंगे; इन महापुरुष के अभिनन्दन ग्रन्थ से देश विदेशों में अनेक प्रेरणाएँ सुमूर्त स्वरूप धारण करेंगी। आपने अपनी विद्यासेवा से पूर्व के ऋषि महर्षियों की भी नयी प्रसन्नता प्राप्त की है।

इस प्रकार का अभिनन्दन ग्रन्थ होना अति उचित है, अभिनन्दन ग्रन्थ समिति भी ऐसे श्रेष्ठ कार्य के लिये धन्यवादों की पात्रता से गौरवान्वित हो रही है, कुंकावावनगरी को समग्र पृथ्वी पर प्रख्यात कराने को यह अभिनन्दन-ग्रन्थ व आर्ट्स सायन्स कोमर्स कालिज महाविद्यालय भी महान् प्रतीक रूप बने रहेंगे अन्य भी होते रहेंगे, दिव्य महाविद्वान् स्वामी जी महाराज की जन्मभूमि कुंकुमवापीनगरी तीर्थ बनती जा रही है, इस भूमि में बड़े बड़े सन्त व भक्तजन हो गये हैं, उन सन्त भक्तों के मन्दिर व जग्याएँ अन्नसत्र धर्मशालाएँ आदि चल रहे हैं।

कुंकावाव की प्रजा सदा सभी सम्पत्तियाँ मिलाती रहती है, यह उन प्राचीन भक्तों का प्रताप है, यह अभिनन्दनग्रन्थ एक बड़ा भारी दिव्य देवदूत पुरुष मूर्तिमान् होयेगा जो सर्वांगीण विकासों का तथा दैवी परम्पराओं का परिचय करायेगा, भविष्य में अनेक अभिनन्दन के वंश सजीव रहेंगे, श्री स्वामी जी महाराज को अभिनन्दनग्रन्थ भेंट कर रहे हैं इससे श्री स्वामी जी महाराज की दूनियाभर को भेंट हो रही है, इनकी आध्यात्मिक सम्पत्तियाँ जनता को भेट मिलेगी, इस ग्रन्थ द्वारा जनता कई प्रकार के इष्ट लाभ पायेगी।

भगवान् श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी महाराज का अच्छा स्वास्थ्य दीर्घजीवन योगगति के साथ अस्तित्व चिरं बना रहे, यह मेरा भी अभिनन्दन स्वीकृत होगा, श्री स्वामी जी महाराज की श्वेत संगमरमर की प्रतिमा-स्थापन करवाने में मुझे आशीर्वादात्मक बड़ी भारी प्रसन्नता प्राप्त हुई है, उस आनन्द के साथ इस अभिनन्दन को व्यक्त करके में स्वजीवन की सार्थकता अनुभवता हूँ।

अभिनन्दन

करशनदासभाई द्वारा हरिलालवेलजीभाई

सभासंचालक कान्दीवली, मुम्बई

पद वाक्य प्रमाण अलंकार पारावार पारीण विद्वत्सार्वभौम भारत के सन्तपुरुष को 'स्वामी श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी महाराज-अभिनन्दन ग्रन्थ समिति 'मोटी कुंकावाव-सौराष्ट्र' द्वारा अभिनन्दन ग्रन्थ समर्पित किया जा रहा है, यह बड़ी आनन्दलहरी है, ये स्वामी श्री भारयीय तत्त्वविद्याओं के सर्जनहार व सिद्धान्त विमर्शक वाचस्पति श्री देवगुरु बृहस्पति समान विद्यमान हैं, नव्यन्यायादि शास्त्रों के आचार्य धर्मों के प्रतिपादक पालक पलावक आचार्य त्याग भक्ति व विज्ञान के भी आचार्य हैं, आजीवन यति मुनि साधुजन विद्वज्जनों में से ही विद्याएँ प्राप्त करके यति मुनि सन्त के ही जीवन में स्वसमय सार्थक कर रहे हैं, अनेक स्थलों में कई जीवात्माएँ इनको शरणागतिप्राप्ति से उद्धार प्राप्त कर गये हैं तथा करते रहते हैं, इनका गुरुपूजन उत्सव जन्म जयन्ती महोत्सव खूब धामधूम से होते हैं।

ये सन्त सतत ज्ञान विज्ञान भक्ति के पूजारी हैं, भगवान में रमते रहते हैं, ये बाल्यावस्था में पढ़ने जाते थे तब छुट्टि के दिनों में गौ माताओं को चराने भी जाते थे, अपनी खेतीबाड़ी में हरियाली फसली जमीन में भी क्रियाशील से उद्यम रहते थे, हरएक कक्षाओं में आप की सर्वतोमुखी प्रतिभा मालूम होती थी, कई प्रश्नों के समाधान स्वतर्क बुद्धि से ही करते थे, वह सभी को यथार्थ ही जँच जाता था, इन सन्त में अनेक ग्राह्य विलक्षण सद्गुण बसते हैं, इन स्वामीजी-महाराज को विद्वानों की समिति द्वारा एक अभिनन्दन ग्रन्थ समर्पित हो रहा है, इससे भविष्य के उन्नति प्रेमी जनों को भारत की संस्कृति में सुदृढ़ प्रेरणाएँ मिलती रहेगी, प्रशंसनीय साहित्य सेवा में तथा विद्यालयों को चलाने में उत्साह बढ़ता रहेगा, यशस्वी परम्पराएँ बढ़ती रहेगी।

भारत की जनता में से भी योग्य चमत्कारी पुरुष इनके सहारे से दिगन्त यशस्वी प्रकाण्ड विद्वान् होते रहेंगे, यह अभिनन्दन भावि के लिये हजारनगुना उपयोगी होगा, सात्त्विक वैदुष्यवाली चेतना को प्रकटाया करेगा, भारत को और सौराष्ट्र की विशेषतः गौरव दान देता रहेगा, उच्च कोटि के विद्वान् होने में उत्कृष्ट प्रेरणा देता रहेगा, ऐसे विद्वान् सन्तपुरुष के लिये मैं हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ।

स्वामीश्री के ग्रन्थों की विशेषताएँ

महामहोपाध्याय पं० सत्यव्रतकौण्डिन्यः

वेददर्शन, पुराणरत्नाकर, विजयानगरम्

भारत में विद्वान् स्वामी श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी ने श्री मधुसूदन सरस्वती की तरह संस्कृत हिन्दी गूजराती में विविध ग्रन्थ लिखे हैं, सभी लेखक स्वमन्तव्य को लक्ष्य कर प्राचीन प्रणाली को नहीं भूलकर जनता की उपयोगी सेवा के लिये उपादेय को लिखते हैं, वेद-वैदिक शास्त्रोय लौकिक विद्याओं की ही विशालता में स्नातक होके नवीन भी आत्मचैतन्यभासित लिखते हैं। सभी शास्त्रों के ध्येय अभ्युदय व मोक्ष में ले जानेके हैं, श्री स्वामी जी ने तर्कन्यायशास्त्र, सांख्यशास्त्र, योगशास्त्र, वेदान्तशास्त्र, मीमांसाशास्त्र, साहित्यशास्त्र, तत्त्ववादशास्त्र, आध्यात्मिक विद्याओं पर भाष्यग्रथन, ऐतिहासिक विद्याओं पर संहिताग्रथन, कथा के ग्रन्थ में धर्मज्ञान वैराग्यभक्ति चमत्कार आदिक के पर टूंकतनु के ग्राह्य विषयग्रथन, नये-नये तत्तदनुकूल ही आविष्कार, अनेक प्रकार के उपदेश, विविध समाजसुधार वर्तन, विविध प्रजाओं के विविध धार्मिक सामाजिक पुण्य पवित्र सदाचारों का पालन, ईश्वरीय दैवी मानवीय युगीय राजसी तामसी सात्त्विक रीवाज, राजा प्रजा के कर्तव्य शिष्य गुरु के कर्तव्य इत्यादि विविध विषयों में यथोदित प्राचीन तथा अर्वाचीन तथा निजीय प्रातिभ व्यावहारिक पारमार्थिक भी विषय विशेषताएँ भी लिखी हैं।

१. **न्यायसिद्धान्तमुक्तावली** किरणावली।
२. **तर्कसंग्रह दीपिका किरणावली,** टिप्पनी।

ये न्यायशास्त्र के ग्रन्थ हैं, तर्कों में पदार्थों के ज्ञान के अन्त नहीं है, इनमें गौतम के सोलह पदार्थ व कणाद के सप्त पदार्थ वर्णित हैं, इन पर ग्रन्थों के ग्रन्थ रचे गये हैं, रचे जा रहे हैं, नये-नये पदार्थ कल्पनायें न्याय पर निर्भर रहकर लिखी जाती हैं, नये-नये आविष्कार सीखने जानने अवगत करने के योग्य हैं, किरणावली सबसे उत्कृष्ट टीका है, नये पदार्थों को खूलासावार लिखने से किरणावली का गौरव बढ़ा है, बाँचने पढ़ने-पढ़ाने वालों को सन्तोष देती हैं।

४. **सांख्यकारिका पर स्वामि** नारायण भाष्यम्।
५. **सांख्यतत्त्वकौमुदी पर किरणावली** टीका।
६. **सांख्यकारिका गौड़पादभाष्य का** किरण।

ये तीनों ग्रन्थ सांख्यशास्त्र के २५, तत्त्व पर लिखे गये हैं, सत्कार्यकारणवाद में ये ग्रन्थ मूर्धन्य हैं, इनके भाष्य टीकाओं में श्री स्वामी जी ने गहन विषयों पर पदार्थों को खोल खोलकर स्पष्टता की है, अधिक अत्यधिक दार्शनिक मीलते जूलते पदार्थ भी दाखील किये हैं नवीन स्वरूप विचारे हैं। अति उपादेय किरणावली किरण भाष्य हैं।

७. **योगसूत्राणां स्वामिनारायणभाष्यम्**।
८. **योगसूत्रभोजवृत्तेः किरणम्**।

ये योगशास्त्र के ग्रन्थ छब्बीश पदार्थ परक हैं, योग के आठ अंग तथा ईश्वर ग्राह्यता सिद्धियाँ ब्रह्मलोक आदि के अधिक पदार्थ दिये हैं, जो योग प्रक्रियाओं में मिलते हैं, वस्ति नेती धोती कपालभाती आदि अन्यान्य यौगिक क्रियायें तथा सिद्धियां नाड़ीयाँ ब्रह्माण्डगतियाँ तथा अनेक स्वरूपधारण परकाय प्रवेश आकाशगति स्तम्भन पराभव सामर्थ्य चमत्कार महाबल महाशील इत्यादि बेहिसाब के ऐश्वर्य भी संग्रहित किये हैं, भाष्य में दार्शनिक पदार्थ बहुत से दाखील किये हैं, भाष्य व किरण व्यासभाष्य के अनुसार भी है, आश्चर्य के लिये तो उपादेय है ही, तत्त्वज्ञातृत्व के लिये भी उपयोगी है, योगिजन ईश्वरसमान होता है वैसे काम करते हैं, यह जानने के लिये भी इनके अध्ययन इष्ट हैं।

९. **श्रीस्वामिनारायणवेदान्तसार,** यह ग्रन्थ प्रमेय प्रमाण बोधक है।

श्री स्वामिनारायण सम्प्रदाय के पदार्थ तत्त्वों के लिये यतीन्द्रमतदीपिका के समान व्यवस्थित है, द्रव्य गुणादि भिन्न प्रकरणों के एकत्रित ग्रन्थ है, प्रारम्भ में तत्त्वज्ञान के लिये उत्तम है। विशिष्टाद्वैत की छायाँ पर स्वतन्त्र संकलन है।

१०. **हितोपदेश किरणावली,** इसमें मित्रलाभ होने से उसके द्वारा छोटे दृष्टान्तों से उपदेशरूप में मैत्री में क्या सीखना लेना चाहिए आदि का ज्ञान के साथ कर्तरि कर्मणि भावि वाच्यान्तर में प्रयोग भी सीखने की सरलता किया है।

११. **कविकाव्यगौरवम्,** इसमें काव्य प्रकाश साहित्यदर्पण आदि के विषय तथा अलायदे भी विषय काव्य के लक्षण रस अलंकार आदि विशेषकर अच्छी प्रणाली से लिखे हैं।

१२. **तत्त्वप्रभावली,** यह न्यायशास्त्र ही प्राचीन नवीन न्यायों का दोहन है, खूब विशाल है, अधिक तत्त्वों के विशेष कर समावेश है, विशिष्ट ब्रह्माद्वैत के सिद्धान्त पर यह विशिष्ट न्यायशास्त्र है।

१३. **तत्त्वमुक्ताकलाप किरणावली,** यह भी न्यायशास्त्र है, अच्छो न्याययुक्तियों से सभी अन्य न्यायों का निरसन किया है, विशिष्टाद्वैत के न्याय पदार्थों का मण्डन किया है, अच्छा युक्तिबाज दार्शनिक ग्रन्थ है।

१४. **सामान्यनिरुक्ति गादाधरीक्रोडम्,** यह नव्यन्याय के हेत्वाभासों के एक ही लक्षण की शिरोमणि टीका के पर गादाधरी टीका के शास्त्रार्थ रूप में परिष्कार शंकासमाधानरूप है। नव्यन्याय-शास्त्र में कठिन में कठिनतम यह वाद है।

१५. **ख्यातिविमर्श,** इसमें सभी दार्शनिकों के 'रज्जुसर्पभान' आदि पर किस प्रकार का ख्यापन है जो सृष्टि में लगाया जावे, इनके ३५ मत हैं।

१६. **प्रमात्मविमर्श,** इसमें अनेक प्रकार के ज्ञान अज्ञान विपरीत ज्ञान भ्रम संशय तर्क स्वप्न आदि ज्ञानों में प्रमात्व-यथासत्यार्थपना कितने अंश में हैं, इन पर सूक्ष्मातिसूक्ष्म विशदविभाजन करके सत्यार्थ की खोज की है, दर्शनशास्त्रों में यहाँ ज्ञान प्रामाण्यवाद सभी के घर में हैं, पण्डितों का विषय है।

१७. **साकारत्वविमर्श,** इसमें सभी पदार्थों का साकारपना साबीत किया है, २० व्याप्तियाँ युक्तियाँ लगायी गई हैं, कोई भी पदार्थ निराकार नहीं है, पण्डितों को गाम्य है।

१८. **मीमांसा अर्थसंग्रह किरणावली,** इसमें धर्म के यज्ञ क्रिया द्रव्य पदार्थ पुण्य आदि स्वरूप कहे हैं, वैदिक बताया धर्म का ब्यान है, वेदवाक्यों में कर्ता कर्म क्रियापद में जिस अंश से जो अर्थ लभ्य होता है उन पर अतिसूक्ष्मविचार किये हैं, शब्द से प्रवृत्ति क्रिया देवता अनुष्ठान इष्टलोक साधन आदि जाने जाते हैं, जहाँ धूंच पड़ती है वहाँ न्याय लगा के उसे उडाय के निर्णीतार्थ ग्रहण किया जाता है, वैसा यह बड़ा उपायोगी वैदिक याज्ञिक कर्मकाण्डीयों के लिये उपयोगी है।

१९. **मीमांसा अंगत्वादिपरिष्कृतिः**, इसमें बुद्धि प्रतिभा वाले विद्वान् शब्दार्थनिरूपण के बाद जहाँ अर्थ नहीं घटता या अन्यत्र अलक्ष्य में भी लग पड़ता हो उनको बाँधने के लिये अच्छे लम्बे परिष्कारों में प्रतिपादन किया है जो उन विषय के अच्छे पण्डित आचार्य लोग ही उन्हें उपयुक्त बना लेते हैं, सूक्ष्म अभ्यस्त बुद्धि का विषय है।

२०. **चित्सुखी टिप्पणी**, अद्वैत वेदान्त का न्याययुक्ति भरा ग्रन्थ है। न्याय व तर्क तथा दर्शन पढे हों उनके लिये योग्य है।

२१. **दर्शनतत्त्वसार**, सभी दर्शनों के तत्त्व साररूप में एकत्रित कर दर्शाये हैं, दार्शनिकों के लिये प्रदीपसम है।

२२. **जातिविमर्शः**, ब्राह्मणत्व पशुत्वादि जातियाँ पर विचार किया है, जातिबाधक युक्तियाँ भी स्पष्ट कर दर्शायी हैं, जाति का व्यक्तधीन स्वरूप होने से अन्तिम वह निर्णय दिया है।

२३. **श्रुतितात्पर्यनिर्णयः**, यह विशिष्ट ब्रह्माऽद्वैत सिद्धान्त को श्रुति द्वारा तात्पर्यविषयत्व बताता है, अन्य पूर्वपक्ष करके निरस्त किया है। जीवात्मा ईश्वर माया ब्रह्म परब्रह्म इन पांच के पर इस ग्रंथ का सुखान रक्खा गया है।

२४. **श्रीहरिस्वरूपनिर्णयसत्संगभाष्यम्**, ब्रह्मलोक निवासी दिव्य परमपुरुष, और सृष्टिभूमि में अवतरित औतार परमपुरुष सशरीरी सुमूर्त होने से, ब्रह्मलोक में आनन्दघनमूर्ति इस लोक में विभूति-घन या भौतिकघन या शुद्धसत्त्वघनमूर्ति के भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों के शास्त्रीय भी मतभेद लिखे गये हैं, इधके समन्वयार्थक यह ग्रन्थ है 'वहाँ है वह यह है, यह है वह वहाँ है, वहाँ यहाँ एक है, शरीरी तत्त्व मूर्ति एक है, अपनी आँखों को भिन्न दर्शन में दीखते हैं, एक दर्शन के अपात्र होने से भेद वर्णित पूर्वपक्ष करने का समाधान खूब तार्किक विमर्श विप्रतिपत्तियाँ द्वारा तथा श्रुतियाँ द्वारा किया गया है, मोक्षदशा में ब्रह्मलोक में विराजित परमब्रह्म के उपासक सभी सम्प्रदायों के लिये यह ग्रन्थ तार्किकमूर्ति महायोगी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ने विद्वानों को दिया है, सम्प्रदायों की इस ग्रन्थ द्वारा बड़ी भारी सेवा की है, शैव वैष्णव जैन बौद्ध ईशान अल्लाह ईश्वरी नारायणी सभी के आश्रितों को निजदेन रूप में यह ग्रन्थ धन हैं, बांचने लायक है।

२५. **विशिष्टाद्वैतेऽपि विशिष्टब्रह्माऽद्वैतत्वम्**, यह जीव ईश्वर माया ब्रह्म परब्रह्म इन पांच तत्त्वों के प्रस्थान पर रचा गया है, रामानुजमत में जीव मायाविशिष्टं ब्रह्म है, तीन तत्त्व पर यह ठीक हीं है। पांच तत्त्व पर तो ब्रह्म तत्त्व ही जीव ईश्वर माया विशिष्ट होता है, ब्रह्मविशिष्ट परब्रह्मतत्त्व है, इस सिद्धान्त में ब्रह्मसूत्रों के तात्पर्य श्रुतियाँ द्वारा बतलाया है, यह नवीनता देखने लायक है, विशिष्टशक्ति-विशिष्टाद्वैत विशिष्टशिवविशिष्टाद्वैत विशिष्टश्रीविशिष्टाद्वैत विशिष्टमायाविशिष्टाद्वैत विशिष्टदेवी-विशिष्टाद्वैत विशिष्टात्मविशिष्टाद्वैत विशिष्टवासुदेवविशिष्टाद्वैत विशिष्टविज्ञानविशिष्टाद्वैत विशिष्टशून्य-विशिष्टाद्वैत आदिक सिद्धान्तों का उद्भावन इन ग्रन्थ से हाथ लगता है और तत्त्वविचार पर विद्वानों को आरूढ होने को बल नोपजता है।

२६. **श्रीगुणातीतब्रह्मोपनिषत्**, यह उपनिषद्विद्या साम्वेदीय है, आनुपूर्वी रचना की गई है, प्राचीन विद्या ही है, समन्वायक ऋषिरूप में नया व्यक्ति स्वामीजी हैं, इसमें साकार सगुण दिव्य परब्रह्म वर्णन, वैसे ही ब्रह्म का भी वर्णन, ब्रह्मधाम का वर्णन, विशिष्टब्रह्माऽद्वैतत्व के अनुसार सिद्धान्त प्रतिपादित हैं। उपासकों को बांचने पढ़ने देखने लायक है।

२७. **श्रीस्वामिनारायणदर्शनं सप्तमं दर्शनशास्त्रम्** , कल्याणीवृत्ति सहित है, सूत्रों में दर्शनों के पूर्वपक्ष विशिष्टब्रह्माऽद्वैत के तात्पर्यानुसार सिद्धान्तपक्ष श्रुतियाँ न्याय द्वारा प्रतिपादित है, यह दर्शन अभ्यास करने लायक है।

२८. **सुधासिन्धोः ब्रह्मरसायनभाष्यम्,** इनके बारह हजार से अधिक श्लोक हैं, २६२ प्रकरण हैं, इन पर ५०००, पांच हजार से अधिक पृष्ठों में ब्रह्मरसायन भाष्य है, इनके २२५० सूत्र हैं, इनमें तात्त्विक आस्तिक नास्तिक सभी सम्प्रदायों के मत पर विचार गये हैं, पूर्वपक्ष के बाद संशयादि में प्रश्नोत्तरविवाद चलता है, विमर्श के बाद निर्णीतार्थ प्रतिपादित किया है, दुनिया में आध्यात्मिक विचार पर विद्यमान इतना बड़ा भाष्य कोई भी नहीं है, इनमें गुण दोषों के स्वस्वकारण स्वस्वद्वार स्वस्वकार्य इत्यादि के तथा प्रतिबन्धकों के भी बड़े विचार किये हैं।

२९. इनके प्रामाण्यों के **हेतु ग्रंथ,** तथा **सूत्रग्रन्थ** बड़ी न्यायदार्शनिक पद्धति से लिखे गये हे, यह एक तार्किक विषय है।

३०. **सुधासिन्धुसारसन्दोहनम्** यह ब्रह्मरसायन के व मूलग्रन्थ के आधार पर पदार्थ प्रमेय प्रमाण सिद्धान्त का आवेदक संक्षिप्त ग्रन्थ हैं, दार्शनिक विषय स्वामिनारायण सम्प्रदायक के तत्त्व विषय जो दर्शनप्रणाली के है सभी अवगत हो जाते हैं।

३१. **श्रीस्वामिनारायणवचनामृतानि,** २६२ है, इनका गूजराती में से हिन्दीभाषान्तर बनाया है, भूमिका में मीमांसा के अनुसार वाक्यबोध खींचे बताये हैं।

३२. **भक्तिरससरित,** हरएक भक्तिग्रन्थों के उत्कृष्टसार रूप है, अनेक प्रकार स्पष्ट किये हैं नाम से भी वर्णित रस बताया है।

३३. **पंचतत्त्वनिर्णय.** संस्कृत श्लोकबद्ध इस ग्रन्थ में जीवमाया ईश्वर ब्रह्म के लक्षण आवश्यकता आदि कहे गये हैं।

३४. **अवताराऽवतारित्वे पुराणादिवचनानि,** पुराणों में संहिताओं में साम्प्रदायिक ग्रन्थों में श्रुति-स्मृतियों में अवतारी परब्रह्म पुरुषोत्तम व उसके अंश कला आवेश विभूति स्वरूप आदि अवतार भी प्रतिपादित किये ही हैं, इनका संग्रहरूप यह ग्रन्थ है। इष्टदेव में निज उपासना का उत्कर्ष कराने वाला है।

३५. **श्रीसत्संगिजीवनपारायणीसारबोधिनी टीका,** यह मूलग्रन्थ भगवान के अवतरण का प्रयोजनसंगति, प्राकट्य, चमत्कार विचरण आसुरभावविनाश मोक्षसाधन व्रत उपदेश दीक्षा कर्मकाण्ड मन्दिरकाण्ड वैष्णवकाण्ड, सम्प्रदायस्थापन आदि-आदि विस्तार से अठारह हजार श्लोकों में हैं, उनकी सारटीका है।

३६. **अखिल भूमण्डलीयसाम्प्रदायिक मुक्तिव्यवस्था,** यह एक अद्वितीय ग्रन्थ है, इसमें नानक के अनुसार समावेश हैं, जगत् की तमाम जातियों में गुरुदेव भगवान् मुक्ति साधन व्रत शिष्यता माने गये हैं, ईसाई पारसी यवन बौद्ध जैन वैष्णव शैव शाक्त शांकर सिक्ख आरबी अन्य भी किस प्रकार की मुक्ति मानते हें, उनका स्पष्ट विवरण इसमें हैं, भूत आवरण गगन अलोक सत्त्व शुद्ध सत्त्व शबल केवल अव्याकृत ईश्वर भीस्त सुरता सखीलोक गोलोक वैकुण्ठ बदरी श्वेतधाम अमृतधाम क्षीरधाम तत्त्वलय मायालय निराकारलय शून्यलय ब्रह्मलय परब्रह्मलय अलय दिव्यमूर्ति आविर्भाव साध्यमुक्त नित्यमुक्त आदिक के स्थान इत्यादि संस्कृत पद्य का यह ग्रन्थ है, कई विषय जानने योग्य हैं।

३७. **शिक्षापत्री** संस्कृत धर्मशास्त्र, भाष्य टीका विभूषित है, इसका मानव ज्ञाति नर नारी राजा प्रजा विप्र आदि पतिव्रता साधु ब्रह्मचारी के धर्म तथा जिन्दगी के मानव धर्म लिखे हैं जो २१ से अधिक स्मृति शास्त्रों के सार हैं।

३८. **शिक्षापत्री का** हिन्दी भाषान्तर तथा गुजराती विवेचन कई बार कई प्रकार के हुए है, सम्प्रदाय में प्रचलित मुख्य धर्मशास्त्र है, इस पर निर्णय लिये जाते हैं।

३९. **शिक्षापत्री का** किरणावली टीका ग्रन्थ संस्कृत गुजराती श्रीस्वामी जी कृत हैं। वाक्यार्थ मार्मिक हैं।

४०. **भगवान के स्तोत्र**

४१. **हनुमान जी के स्तोत्र** प्रतिष्ठित मूर्तियों के सम्मुख गाये जाते हैं, भूत प्रेत पिशाच डाकिनी शाकिनी आदि के भय आवेश निवृत्त होते हैं।

४२. **श्रीगुणातीतानन्दस्वामिवार्ता**

४३. **श्रीगोपालानन्दस्वामिवार्ता** ये दोनों आत्माओं को ब्रह्मरूप बनाके भगवान् के नजदीक मुक्ति दशा में पहुँचाने वाले ग्रन्थ हैं, इनके दस हजार श्लोकों में काव्य रूप में श्री स्वामी जी ने ग्रन्थन किया है ये अच्छे उपदेश लेने लायक ग्रन्थ हैं, इनके पारायण पुरश्चरण सत्संग हुआ करते हैं, सप्ताह होता है।

४४. **श्वेतायनसंहिता,** श्रीलक्ष्मीनारायण संहिता के स्वरूप में है, १ निगम संहिता, २ आगम संहिता, ३ पंचरात्रादि संहिता, ४ पुराण संहिता, ५ महाभारत संहिता, ये जगद्विख्यात विशालकाय विशालविषयक शास्त्रसागर विद्यासमुद्र हैं। श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी ने ६ श्रीश्वेतायन संहिता लिखी, यह श्रीलक्ष्मीनारायण संहिता नाम से प्रसिद्ध की गई, पूर्वीय संहिताओं के अनवशेष विषय वृत्तान्त विज्ञान सर्जन शक्तियाँ आदि हैं, भविष्य के लिये भी विशेषतो ध्यान दिया है, ये छः ग्रन्थ थ्रू आउट सर्वव्याप्त हुए हैं, वर्तमान युग व भविष्यत् युग के लिए श्वेतायन संहिता में विशेष तो वर्णन हैं, अन्य में अधिक विषय भरे हैं।

४५. **साक्षात्कारसूत्राणि,** यह ग्रन्थ श्री स्वामी जी ने 'सर्वं प्रत्यक्षम्' प्रतिज्ञा लेके रचा है। बृहस्पति शास्त्र का तो अनुमानादि न स्वीकारना या प्रत्यक्षमात्र विषय का सत्यत्व मानना सुखान है, इन सूत्रों का सभी गम्य अगम्य सूक्ष्म स्थूल तत्त्वों में भी प्रत्यक्ष पहुँचने का है। यह विशेषता है वर्तमान युग का, यह ग्रन्थ प्रत्यक्षवादियों की युक्तियाँ जानने के लिये व दर्शनों से मेल भी रखने के लिये अच्छा सहारा है। और भी १० ग्रन्थ ताजे लिखे हैं।

इस प्रकार श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी विरचित ग्रन्थों की स्वरूप विशेषता प्रयोजन विशेषता न्यून अधिक स्वीकार विशेषता नया आविष्कार विशेषता, इस युग के मानवों को जागृत करने की विशेषताएँ हैं। और निगूढतम विशेषताएँ तो असंख्य होगीं, क्योंकि अनेक शास्त्रों का थाह लेना टूँकधी मानव का काम नहीं है, फिर भी मैंने अनुभूत किया अवगत हुआ जान पड़ा वह वर्णित किया है, न्यून अधिक के लिये क्षमा याचता हूँ।

भारतीय संस्कृतिस्तथा आचार्य स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी

सर्वदर्शनशास्त्रसार्वभौमो भागवताचार्यः

कनखल, भारत

भारतवर्षं सर्वथा भगवदवताराधारभूमिरूपं तीर्थमयं भगवदवतारांऽशकलाऽऽवेशविभूतिकृताश्रयं कल्याणकृत् ब्रह्मस्वरूपोपासकं जनतानां विभिन्नखण्डानामपि परमं दैवतं संराजते, भारतीयवैदिकविज्ञानलभ्याऽऽविष्कारा विदेशीया यानैः स्वर्गं प्रयान्त्यायान्त्यपि च, वैदिकी वर्णसंस्कृतिर्बाल्यादिसंस्कृतिः षोडशसंस्कारादिसंस्कृतिर्भाषासंस्कृतिरात्मसंयमशुद्ध्यादिसंस्कृतिर्भक्त्यादिसंस्कृतिर्दोषक्षालनादिसंस्कृतिरविद्यापरिहरणादिसंस्कृतिर्दुरिताऽस्पर्शनादिसंस्कृतिः पातिव्रत्यादिसंस्कृतिः शुद्ध्यादिसंस्कृतिर्विनीततादिसंस्कृतिर्यज्ञसूत्रादिसंस्कृतिः सत्त्वप्रकर्षसंस्कृतिरान्तरवृत्तिसंस्कृतिसाक्षिचैतन्यसंस्कृतिर्मोक्षसंस्कृतिः परब्रह्मान्वयित्वसंस्कृतिर्देवदेवालयतीर्थालयधर्मालयसेवापरोपकारालयविद्यालययज्ञालयोपार्जनाऽऽलयन्यायालयश्राद्धालयपरलोकालयसत्संगालय भागवतालयमहालयप्रलयादिसंस्कृतयो भारते भारतीयविभूतिपुरुषैः ब्रह्मशिक्षणप्रकाशिता ब्राह्मीशक्तिमत्साधुजनप्रपोषिताः परब्रह्माऽनुलोमितोपासकब्रह्मर्षिसदृषिसाध्वर्षिवृद्धर्षिगुर्वर्षिसद्गर्वर्षिप्रभृतिभिराप्यायिताः, जीवन्मुक्तविदेहमुक्तनिर्लेपमुक्तममाहंकारमुक्तवासनामुक्तकारणमुक्तमहामुक्तपरममुक्तनित्यशाश्वतमुक्तमण्डलैश्च सदा विधृताः संस्कृतयो भारतीया अभारतेष्वपि भारतवत् व्याप्ताः सत्योऽभारतीयानपि संस्कुर्वन्ति संस्कारयन्ति सत्स्वरूपतां नयन्ति च। पृथुराज्ञा विषमा पृथिवी संस्कृता, मनुना धर्मशास्त्रेण प्रजा संस्कृतिः कृता, ऋषिभिः स्वदर्शनैर्ज्ञानसंस्कृतिः कृता, गुरुभिरुपदेशैः शिष्यरूपप्रजासंस्कृतिः कृता, विप्रैर्विद्वांसैः संस्कारैरात्मसंस्कृतिः प्रजानां बाल्यतः कृता भवन्ति, याज्ञिकैर्यज्ञद्वारा पुण्याऽदृष्टसंस्कृतिः कृता, धार्मिकराजभिर्वर्णाश्रमैश्च स्वस्वसमाजसंस्कृतिः कृता, विद्वद्भिर्विद्यासंस्कृतिः कृता, संस्कारैरभ्युदया भवन्ति, संस्कृतिभिर्विशिष्टफलानि लभ्यन्ते, सत्ययुगे संस्कृतयो विभिन्नाः, त्रेतायां विभिन्नाः, द्वापरे विभिन्नाः, कलौत्वप्रतर्क्या विभिन्नाः संस्कृतय उद्भवन्ति, इदानीं भेददृष्टिनिरोधः अवरोधनिरोधः पारतन्त्र्यनिरोधः सन्ततिनिरोधः विकासविरोधिनिरोधः सहमेलनाऽनवरोधः ऐच्छिकदाम्पत्याऽनिरोधः विपरीतव्यवहारविमोचनसभाजनता समानतासमादरः राजसाभिलाषमहोत्सवप्ररोहः इत्याद्याः संस्कृतयोऽर्कवत् प्रकाशिन्योऽभिप्रेयन्ते, एतत्सर्वं प्राचीनप्रणाल्या समायातमपि संस्करणं विशेषाऽऽवापं जरद्दुद्वापं सम्पद्यते, एतत्कालीनमेतदेवं रीतिप्ररीतिसंस्करणं सर्वाभिरुचिकं विवर्धमानमुर्ध्वशिरस्कं विन्ध्यवत् प्रवर्तते, स्वर्गीयं संस्करणं भुवि समायातं भुवं स्वर्गीकरोति स्वर्गं करिष्यत्यपि। श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहाराजस्य पवित्रकुले राजसम्मानितकुले प्राकट्यं, विप्राऽऽवासेऽध्ययनं, सतामाचार्याणामाश्रये यज्ञोपवीतादिधारणं, पण्डितानामन्तिके वेदांगशास्त्राद्यध्ययनं, ब्रह्मचारिमण्डलेषु निवासे शीलव्रतादिपालनं वैष्णवानां भक्तानां सहवासे भागवतधर्मभक्त्यादिकरणं, तीर्थनगर्यादिसेवने तारकमन्त्रादिलम्भनं, गंगायमुनाविन्ध्यहिमालयरैवतगिर्याद्युपत्यकानिवासे पावनाऽनुष्ठानादिसम्वर्तनं, देवालयादिदर्शने भगवत्स्फूर्त्यादिनिदिध्यासनम्, अपराविद्याध्ययने व्यवहारात्मकनवमनिधिरक्षणं, पराविद्याध्ययने कृपानिधिकरुणावारिधिसमाधिसाक्षात्करणीयभगवद्धामप्रयाणपरायणत्वं, चेत्यादिस्वरूपं वास्तवं विभिन्नाऽ-

वस्थं संस्करणं, श्रीस्वामिभिः स्वजीवने समासादितम्, आश्रित्य स्थितिमद्भ्यो वितरितं च, इदानीमपि तदभिनन्दनपत्रासादनद्वारा नवीनीकृतं संस्करणं सुसम्पन्नमिव पश्याम्यपि स्मराम्यपि च ।।

पूर्वमहं सुदामपुर्यां चातुर्मास्ये कथार्थं न्यवसं सुदाम्नो मन्दिरे कथामकुरवं तदानीं श्रीकृष्णवल्लभाचार्यन्यायाचार्याः पण्डितवर्यास्तत्र यात्रार्थमागताः राज्यसत्कृताः प्रधानादिभिर्वातगयानेन तत्र सभायां प्रापिताः सुविनिता आगत्य निश्चिते निषदने आसन्दीविशेषे मां नत्वैव समुपाविविशुः, तान् अवलोक्यैव मद्धृदि शान्तिरतीव जाता, आश्चर्यमपिजातम् 'अहोप्रकाण्डविदुषोऽस्य विद्यापाचनं सर्वमनाविद्यकं प्रायः संस्करणं वर्तते ब्रह्मगम इवाऽवलोक्यते' इत्यादि । ततस्तत्र कश्चिद् रामानुजविशिष्टाद्वैतवादी शास्त्रार्थार्थं सभायां समायातः, मया माध्यस्थमवलम्बितम्, तयोश्च न्यायवेदान्तयोर्विचाराः प्रावर्तन्त, स्फुटवादे तत्त्वनिर्णयार्थे प्रकाण्डपाण्डित्यं सर्वशास्त्रीयपाण्डित्यं सर्वशास्त्रीयतत्त्वज्ञानीयसंस्कृतधीमत्त्वं च मयाऽनुभूतं श्रीकृष्णवल्लभार्चस्याऽद्वैतपक्षे विजयो व्यवर्तत, तत्र बहु सम्मानमलभत आचार्यवर्योऽयं श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः स्वामिमहोदयः । स्वामिसम्प्रदायाऽऽचार्यः तस्मिन्मया जन्मव्याप्याः संस्कृतयो धर्मे ज्ञाने वैराग्ये भक्तौ विनये शिष्यत्वे स्वामित्वे सात्त्विकविद्वत्त्वे विशेषतत्त्वज्ञत्वे ब्रह्मवित्त्वे सर्वशास्त्रतत्त्वसिद्धान्तवित्त्वे वैष्णवत्वेऽपि च तत्संस्कृतयोऽनुभूताः ।। सोऽयं जगत्प्रसिद्धो विद्वान् भारतीयसंस्कृतिमूर्तिरस्तीति वेद्मि । अभिनन्दनप्रदानाऽर्होऽहं प्रहृष्याम्यस्याऽभिनन्दनप्रदानमहासमारोहमाश्रुत्य । भवत्त्वस्य विदुषः सर्वविद्यानिधिस्वरूपस्य न्यायतर्कादिपारदृश्वनः शतसहस्रगणितसंस्कृतिशीलस्य शतसहस्रगुणिताऽभिनन्दनानि । इति महाविद्यालयस्थापना विषयकानपि आशीर्वादान् प्रयुज्य विरमामि ।

स्वामीश्री का मेधावी वक्तव्य

श्रीस्वामिमहोदयानां मेधावित्वम्

श्रीवेदान्तसाहित्यमहामहोपाध्यायः प्रभाकरदेवर्षिः

मांडले, ब्रह्मदेश

धारणाशक्तियुक्ता धीर्मेधा, मेधते संगच्छते सर्वमस्याम् धीर्मनीषा भवति ज्ञप्तिर्भवति चेतनाऽपि भवति, यदि सा धारणाहीना तर्हि अपण्डा, यदि धारणाशक्तिमती तर्हि पण्डा प्रोच्यते, मेधया पाण्डित्यं भवति, स्फुरणा पाण्डित्यं द्योतयति, लेखनं स्फूर्त्या भवति, स्फूर्तिः पाण्डित्यव्याप्ता, पाण्डित्यं धारणा-समनियतम्, धारणावान् मेधावी, मानवोऽध्येति अभ्यस्यति विस्मरत्यपि, तत्र पाण्डित्यं नोद्भवति, पाण्डित्यं मेधया पुष्यते, पुष्टिर्हि स्थिरतां प्रोद्भावयति, स्थैर्यं विद्यारत्नाकरस्याऽऽधानधर्मः, स च पण्डिते वर्तते, धर्मो वर्धते पाण्डित्यं वर्धते प्रसरति व्यापकतां लभते, अध्येता धिया व्याकरणमधीते, मेधया धार्यते, तद्वचञ्जितं शास्त्राध्ययनं जिज्ञास्यते, काव्याध्ययनं प्रारभ्यते, काव्यव्याकरणनिष्णातो भाषाविद्वान् भवति, तव तत्राऽऽन्वीक्षिकी चाऽप्यध्यस्ता भवति अभ्यासगोचरा भवति प्रपच्यते च धारणावान् पण्डितो जायते, वेदान्तसांख्ययोगविद्यास्तु मेधास्वेकदेशे समुद्भूय लग्ना भवन्ति, धार्यन्ते पोष्यन्ते पाण्डित्यमुद्भाव-यन्ति सुखदाऽऽत्मशान्तिप्रदा भवन्ति, एतासु वाक्यार्थबोधा आवश्यकाः, मीमांसाऽपेक्षा जागर्ति, मीमांसको भवति, सर्वत्र शास्त्रेष्वहतगतिको भवति अलंकारहृगपि भवति आध्यात्मिकतत्त्वपरोऽपि भवति ब्रह्मपरोऽपि भवति, ब्रह्मात्मज्ञानी ब्रह्मैश्वर्यगुणशक्त्यादि ज्ञानी वेदवैदिकजिज्ञासावान् तत्तज्ज्ञानमूलान्युपार्जयति, ज्ञानस्थाणुर्ज्ञानस्तम्बो ज्ञानशाखो ज्ञानपत्रपुष्पफलो भवति ज्ञानरसो भवति ज्ञानभोजनो भवति ज्ञाननिद्रो ज्ञानजागरो भवति ज्ञानमूर्तिर्भवति ज्ञानपण्डितो भवति, विज्ञानपण्डितो भवति, तत्परिपाकवान् मुक्तान्वितो भवति मेधावी पण्डितो मुक्तो भवति, इत्येतावान् ज्ञानार्थाऽऽयासः, पाण्डित्ये तदीयव्यक्तित्वं चाऽपराभाव्यं भवति, विद्वांसं मार्गयितुं प्रोद्भाविते प्रश्ने, सति च प्रत्युत्तरे, यो निर्दिष्टो भवत्येकाऽङ्गुल्याः, स विद्वान् स्वव्यक्तित्वे लोकैरेव प्रत्युत्तरवाक्येन प्रश्रुत एव प्रकाश्यते, इदमेव तस्य व्यक्तित्वं विकास्यते, तदेव व्यक्तित्वमभिनन्द्यते, अभिनन्दनपात्रत्वं मेधया भवति, पाण्डित्येम भवति, नैयायिकधुरन्धरै-रभिनन्दितः स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्य आन्वीक्षिक्यां प्रौढप्रगल्भव्यक्तित्वमावेदयति। वेदान्तिविज्ञैरभि-नन्दितः सः स्वामिवर्यो निजवैदान्तिकव्यक्तित्वं प्रदर्शयति, सांख्ययोगज्ञैरभिनन्दितो यतिवरोऽयं व्यक्ताऽ-व्यक्तज्ञविज्ञानेऽतिपक्वव्यक्तित्वं प्रकाशयति, मीमांसकैरभिनन्दितो देवयाजकः सत्पुरुषोऽयं धर्मकर्मप्रकरणे व्यक्तव्यक्तित्वं प्रसिद्धयति, काव्यनिबन्धादिषु शतावधानिकधीवरैरभिनन्दितोऽयं काव्यकुशलो ग्रथ-ननिष्णातोऽयं पण्डितवर्यः पुरैतिहासिके विविधव्यक्तित्वं वितरति, सर्वविधविद्यानिधिभिरभिनन्दितोऽयं श्रीकृष्णवल्लभाचार्यो महाचार्यं सर्वविद्यासु व्यासव्यक्तित्वं दृढीकारयति, दीर्घसंस्कारी चाऽयं स्वामी नारायणो विद्वान् सर्वपूर्वविद्वानिति ज्ञापयति परमपुरुषव्यक्तित्वं निश्चाययत्यपि, भगवान् वा तत्कृपापात्रं महर्षिर्वाऽऽविर्भावः कश्चित् सर्वज्ञस्य परात्मन इति सर्वहृत्स्थाऽव्यक्तस्य स्वस्य अपि व्यक्तित्वं व्यक्तयति, विवेचयति ॥ किं बहुना—

'न्याये तर्के च सांख्ये समुपनिषदि योगे च काव्ये पुराणे,
मीमांसायां च वैशेषिकसुपरिकरे दर्शने कर्मकाण्डे।
वेदेष्वंगेषु यावद्गहनतमविवादेषु तत्त्वेषु नूत्ने,
शास्त्रार्थेधर्मशास्त्रेऽप्रतिहतगतिको राजते व्यासरूपः ॥ १ ॥
श्रीकृष्णोवल्लभाऽऽर्यो जगति हि परमो वैष्णवः सार्वभौमो,
विद्यावार्धौ निविष्टस्तललसितगतिर्लोक - कल्याण - कर्ता।
धर्तामेधाविशक्ति-प्रवहणसुपरिष्कारसंस्कारिबुद्धेः,
जीयाज्जेयात्समेयाच्चिरमतिसुकृतीन् कीर्तिसाम्राज्यमूर्ध्वम् ॥ २ ॥
इत्याशीर्भिः प्रयुज्जाम्यमितहृदयजैः स्वाभिसन्नन्दनैश्च,
स्वाभिप्रायैरजस्रं जगति विबुधसद्व्यक्तितां लब्धवन्तम्।
श्रीकृष्णस्वामिनारायणमतितमतिं पण्डितेशं महाऽऽर्यम्,
विद्याव्यासावतारं पुनरपि च नतिं संकरोम्यमात्मविज्ञम् ॥ ३ ॥
यस्याऽस्ति विद्या विपुला विनोदिनी विशुद्धवंश्या वरबुद्धिवासिनी।
परोपकारप्रवणा स मानवो व्यक्तित्वमग्र्यं जुषते भुवस्तले ॥ ४ ॥
यस्याऽस्ति मातुश्च पितुश्च सद्गुरोः कृपाकणः संविनयेन सेवया।
अनुग्रहश्चेतरकार्यसाधनात्, व्यक्तित्वमग्र्यं जुषते भुवस्तले ॥ ५ ॥
सर्वंसहो यो निजऋद्धिवैभवान्, परोपकाराय प्रयोजयत्यपि।
ददात्यनाथान् प्रसमाश्रयं निजम्, व्यक्तित्वमग्र्यं जुषते भुवस्तले ॥ ६ ॥
विशिष्टव्यक्तिप्रवराऽभिनन्दितः प्रपुण्यभाग्यः स्मरमानवर्जितः।
ब्रह्माधिदृष्टिः सुरसत्त्ववर्तनो, व्यक्तित्वमग्र्यं जुषते भुवस्तले ॥ ७ ॥
मेधाविनं व्यक्तिविशेषतां गतं, सिद्धं सुविज्ञं जनताप्रियंकरम्।
यतिं मुनिं साधुवरं च योगिनम्, व्यक्तित्वमग्र्यं जुषते भुवस्तले ॥ ८ ॥

शुभमभिनन्दनम्

माईकल लौरेन्स, संस्कृत कॉलेज

टन्झानिया (आँफ्रिका)

वेदा वैदिकप्रबन्धा वैदिक्यः शारदाः वैदिकीः प्रजाः स्वजीविका आमनन्ति, ताश्च प्रायशो भारते, अन्यत्राऽपि भारतीया एव गत्वा निवासं चक्रिरे। निजं भारतीयं विज्ञानं नैसर्गिकं व्यवहारं स्वाभाविकीं वेश्वरशरणागतिं न विस्मरन्ति, अद्य महागौर्जरप्रजास्तत्रापि सौराष्ट्रकच्छदेशीयास्तु धर्मप्राणा आफ्रिका-प्रदेशेषु निवसन्ति ताः स्वोद्योगं भगवदाराधनातो द्वितीयकक्षाकं मन्वते, भगवदर्थं तु प्रथमस्थानं सेवन्ते, इदं जन्मभूमिसंस्कारबलम्, सम्प्रदायबलं चापि, स्नानं सन्ध्या जपो होमः स्वाध्यायः तर्पणम् परोपकारः सत्संग उपासना शरणागतिः मोक्षाभिमुखैकतानता चेति मुख्याः, निर्वाह उपार्जनं तु अमुख्यमिवाऽस्ति, धार्मिकं सर्वं सत्पुरुषाणामुपदेशेन निर्वाह्यते। धर्मशास्त्राणां श्रवणेन वाचनेन धर्मे ज्ञाने अरागे सेवाभक्तौ च दार्ढ्यं भवति। स्वामिरामकृष्णस्य विवेकानन्दस्य व्यासस्य ग्रन्थान् लोका अत्र वाचयन्ति, श्री कृष्ण-वल्लभाचार्यग्रन्थानपि वाचयन्ति, तेन अभ्युदयस्य निःश्रेयसस्य च प्राप्तिर्भविष्यति, सत्संगोऽपि वर्धते, देवकार्याणि भवन्ति, महोत्सवा जायन्ते, अनार्यदेशोऽपि आर्यतां भजते, एतादृशविदुषामभिनन्दनस्य आयोजनं यत् तत्तु भारतीयानां सर्वेषां विदुषां भवति, यशस्कृत् भवत्वित्यभिनन्दयामि।

सर्वाऽभिनन्दनम्

जहाँशाहीनूर सुलतानाश्रय

(अरेबिया) मदीना, आरबी कालेज, पारशीसंस्कृतादिविभाग,

जंगशाहीनूर, सुलतानाश्रय, अरेबिया

अयि ! आरववासिनः सत्यविश्वासवर्तिनो विज्ञा जनाः !, आरवदेशो भारतस्य पश्चिमभागस्य अरुणाऽब्धिखातावरणकोऽपि भारतीयधर्मकर्मव्यवहाराऽऽचरणमर्यादामनुपालयन् स्वतंत्रप्रौढो वर्तते, भारतीया विद्याः संसारबन्धनच्छेदिका विद्यन्ते, ताश्च भारतीयानां वेददर्शनकथादिभागभिन्ना वर्तन्ते, अधीताश्च आत्मनां पावनतां प्रोद्भावयन्ति, अन्यत्र पृथिवीदेशेषु भारतीया विद्याः सम्प्रसृता विभान्ति, तद्विद्याध्येतार आत्ममार्गणश्रद्धालवो जायन्ते, भारतीयानां सर्वासां विद्यानां विद्वान् महाविद्वान् विख्यात-विद्वान् विदुषामग्रपदवान् विद्वान् त्यागाश्रमी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः सौराष्ट्रे भारते अभिनन्दनीयो भवति सर्वैः संस्कृतादिषु विद्वद्भिः, तद्ग्रन्था महाविद्वत्त्वं ख्यापयन्ति, सः पण्डितेश्वरः आरववासिभिरपि अभि-नन्दनीयो भवतु, अहं सर्वानधिकृत्य स्वस्मिन् अभिनन्दनमिदं प्रेषयामि, स विद्वान् देशोन्नत्यर्थं दीर्घजीवी भवतु ॥ इति ।

प्रकृष्ट विद्वानों के बीच श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी का स्थान

पं० तारानाथ चटर्जी, महाविद्यालय

संस्कृतविभाग, सप्ततीर्थ, मणिपुर

स्थान प्रस्थान आस्थान संस्थान आदि का अधि-स्थान में समभिव्याहार हो जाता है, विद्या महाविद्या पराविद्याओं के अधिष्ठान स्वरूप भारतीयधुरन्धर विद्वानों से समस्त पृथिवी पुलकित रहती है, भारत में नालन्दा काशी आदि बड़े-बड़े विद्यालयों में जगत् विख्यात पण्डित होते आये हैं, नव्यन्याय के लिये मिथिला बंगाल प्रख्यात हैं, विशिष्ट वैष्णवों के लिये दक्षिण द्राविड उड़ीसा आदि प्रख्यात हैं, काव्यों के लिये मालवा महागूजरात प्रख्यात हैं, दर्शनविद्याओं के लिये सर्वसामान्य काशी विशेषतः प्रसिद्ध है, सभी विद्याओं के अध्यापक काशीजी में पाये जाते हैं, सभी विद्याएँ एक-एक विद्वान् में बसी हैं, वे विद्वान् भी काशी स्वरूप हैं, काशी के पढ़े विद्वान् जहाँ जायँ जहाँ बसें वहाँ काशी नाम कहलाता है, पश्चिम काशी उत्तर काशी पूर्व काशी दक्षिण काशी नियत भी हैं भिन्न-भिन्न स्थलों में परिवर्तन भी लेती हैं, जहाँ सर्वशास्त्र के धुरन्धर विद्वान् हों वहाँ उस नगर का नाम काशी बनता है, भारत में कलकत्ता, मद्रास भूतपुरी पूना नवानगर लाहौर, बड़ौदा विगैरह नयी काशीयाँ हो रही हैं, वहाँ विद्वान् लोग विश्रान्ति पाते हैं, सभी विद्याओं के अध्यापक मिलते हैं, समयानुसार पढ़नेवाले न मिलने से काशीयाँ मन्दस्वरूपा हो जाती हैं, तो भी अच्छे विद्वान् उन्हें जिन्दी रखते हैं, दक्षिण में वीरराघवम्, बंगाल में मधुसूदनम् पूना में पाण्डुरंगं सौराष्ट्र में कृष्णवल्लभं हरिद्वार में भागवतानन्दं इत्यादि प्रकाण्डपाण्डित्याब्धि विद्वान् सभी शास्त्रसूत्र पुराणादि के तथा पद-वाक्य-प्रमाणाऽलंकारादि में आरपार निष्णात भारत की एक-एक दिशाएँ पकड़ के विराजते हैं, मध्य में काशीजी तो विद्या का महासागर है, इनसे भारत सभी अन्य देशों से विद्याओं में अभी तक मूर्धन्य चला आया है। इस प्रकार ग्रन्थों में विद्वानों में श्री कृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज का उत्तम कोटि के विद्वान् स्वरूप में स्थान है। उनको मेरे अभिनन्द हैं।

विविध तुलनात्मकम्

जलन्धरवर्णनम्

श्रीपाद्मे महापुराणे श्रीलक्ष्मीनारायणसंहितायां च जलन्धराख्यानविषये संवादित्वं विसंवादित्वं च

डॉ० श्यामलाल शर्मा, पी. एच. डी., डी. लिट्.

श्री विश्वेश्वरानन्द पुस्तकालय, पंजाब विश्वविद्यालय, होशियारपुर

विद्वद्वरैः श्रीस्वामिकृष्णवल्लभाचार्यमहाभागैः सम्पादितायां श्रीलक्ष्मीनारायणसंहितायामाख्यानानि माहात्म्यानि चतुर्वर्गफलप्राप्तिकामाः महोपदेशाश्च वर्णितानि सन्ति। साहित्येतिहासजुषां विदुषां कृते रुचिकराणि हि तान्याख्यानानि। तेष्वन्यतमं विद्यते जलन्धराख्यानम्।

श्रुतं किल जलन्धरो नाम विश्रुतं च जालन्धरपीठम्। ऋग्वेदसंहितायां तृतीये मण्डले त्रयस्त्रिंशाध्यायात्मके नदीसूक्ते वर्णितयोः विपाट्च्छतुद्र्योः जलं धारयत् पञ्चनदक्षेत्रे जलन्धर इति समुच्चरितं नगरं समृद्धं वर्तते। आसीदिदं नगरं विपाट्च्छतुद्रोरावतीनामन्तरे वसतां त्रैगर्त्तानां राजधानी। श्रूयते च जलन्धरमुखनिर्गता ज्वाला लालन्धरी विश्वमुखीति नाम्ना। त्रिगर्त्तप्रदेशे कांगड़ामण्डले ज्वालामुखी नाम पवित्रं तीर्थस्थानं विद्यते। अतिप्राचीनं हि जलन्धरनगरम्। अस्य वर्णनं पुराणेषु महाभारते पाणिनीये व्याकरणे बृहत्संहितादिग्रन्थेषु च समुपलभ्यते।

श्रीमात्स्ये महापुराणे श्राद्धकल्पे द्वाविंशेऽध्याये एतन्माहात्म्यमेवं वर्णितमस्ति—

कावेरी चोत्तरा पुण्या तथा जालन्धरो गिरिः॥ ६४॥
एतेषु श्राद्धतीर्थेषु श्राद्धमानन्त्यमश्नुते॥ ६५॥

श्रीवायुमहापुराणे व्याससंशयापनोदननाम्नि चतुरधिकशततमेऽध्याये जालन्धरपीठवर्णनमेवं विद्यते—

कण्ठं च मथुरापीठं काञ्चीपीठं कटिस्थितम्।
जालन्धरं तथा पीठं स्तनदेशेष्वदृश्यत॥ ८०॥

अभिधानचिन्तामणिकारो हेमचन्द्रो भूमिकाण्डे वर्णयति—

जालन्धरास्त्रिगर्त्ताः स्युः॥ ४।२४॥

अष्टाध्याय्यां भगवान् पाणिनिरायुधजीविसङ्घेषु सूत्रं पठति—

दामन्यादित्रिगर्त्तषष्ठाच्छः॥ ५।३।११६॥

श्रीकालिकापुराणेऽष्टादशेऽध्याये सतीसखीविजयाशोकवर्णने देवपातितमृतसतीस्तनस्थानमप्यत्र स्मर्यते—

जालन्धरे स्तनयुगं स्वर्णहारविभूषितम्॥ ४३॥

वर्णितमस्त्यत्रैव चण्डीमन्दिरम्—

पूर्णेश्वरी पूर्णगिरौ चण्डी जालन्धरे गिरौ॥ ४६॥

श्रीमात्स्ये महापुराणे पितृवंशान्वये गौरीनामाष्टोत्तरशतकथने त्रयोदशेऽध्याये विश्वमुखीवर्णनमेवमस्ति—

जालन्धरे विश्वमुखी तारा किष्किन्धपर्वते ॥ ४६ ॥

श्रीपाद्मे महापुराण उत्तरखण्डे जालन्धरोपाख्यानं द्विवारमुपलभ्यते । प्रथमं तावन्नारदयुधिष्ठिरसंवादे तृतीयाध्यायत एकोनविंशतितमाऽध्यायपर्यन्तमपरञ्च कार्तिकमाहात्म्ये श्रीकृष्णसत्यभामासंवादेऽष्टनवतितमाऽध्यायतः षडधिकशततमाऽध्यायपर्यन्तम् ।

श्रीलक्ष्मीनारायणसंहितायां प्रथमे कृतयुगसन्ताने चतुर्विंशत्यधिकत्रिशततमाऽध्यायत एकत्रिंशदधिकत्रिशततमाऽध्यायपर्यन्तं जलन्धरवृन्दाख्यानवर्णनं विद्यते । समुपस्थाप्यते तत् संक्षेपेणाऽस्या एव संहिताया: ।

इह त्रयोविंशत्यधिकत्रिशततमेऽध्याये भगवतो विष्णोः शतसहस्रशो दिव्याः शक्तयो निरूपिताः सन्ति । तासु धर्मपत्नीरूपेण त्रयोदश शक्तयः प्रोक्ताः । ताश्च—

श्रद्धा मैत्री दया शान्तिस्तुष्टिः पुष्टिः समुन्नतिः ।
क्रिया बुद्धिश्च मेधा च तितिक्षा ह्रीश्च द्वादश ॥ ९ ॥
मूर्तिश्चेत्यधिका भक्तिनाम्ना तत्र सदोच्यते ॥ १० ॥

चतुर्विंशत्यधिकत्रिशततमेऽध्याये भगवतो नारायणस्योक्तिरियम्—

वृन्दा पत्नी ममैवासीद् गोलोके राधिका समा ॥ १३ ॥

राधिकया समं मां रममाणं दृष्ट्वा सेर्ष्यया हृदये तापं प्राप्ता । मयाऽऽहूताऽपि नाऽऽगता । "दुष्टेयं न मां सेवितुमर्हति" इति मया संकल्पितम् । एषाऽधोलोकमसुरभावनां च प्राप्ता जलन्धरं पतिं प्राप्य स्वकीयं च दुरितं समाप्य पूता सती पूर्ववत् पत्नीरूपेण मामुपस्थास्यतीतिगदितं भगवता नारायणेन । आधारभूतोऽयं प्रसङ्गः । विस्तृतं वर्णनमस्यां संहितायां श्लोकबद्धमुपलभ्यते । सारांशोऽयमस्याः संहिताया:—

एकदा वनिनां पावनेच्छया महादेवो लीलया विचचार । शिवरात्रौ पूजार्थं महादेवदर्शनं कामयमानौ महेन्द्रबृहस्पती स्वर्गात् पृथिवीं प्रजग्मतुः । तयोर्ज्ञानपरीक्षार्थं महादेवो रूपान्तरं विधाय निकषा तस्थौ । पुरन्दरेण जटासम्बद्धमस्तको नग्नोऽद्भुताऽऽकृतिः नेत्रभीषणो महातेजस्वी पुरुषो मार्गमवरुद्ध्य तिष्ठन्नवलोकितः पृष्टश्च—कथं मार्गं समारुद्ध्य संस्थितोऽसि ? किं त्वया शंकरो दृष्टः ? स क्वाऽऽस्ते ? शीघ्रं वद । यतो हि पूजाकामावावामिह समायातौ ।

इति पृष्टो महायोगी किञ्चिदपि न प्रत्युवाच । पुनः पुनः पृष्टोऽपि तूष्णीं बभूव । एतदवलोक्य क्रुद्धो वासवो निर्भर्त्स्य दक्षिणं हस्तमूर्ध्वं कृत्वा वज्रं चाऽधिक्षिपन्नुवाच—

रे मूढ ! पृच्छ्यमानोऽपि नोत्तरं दत्तवानसि ॥ ३२४।३० ॥
एष त्वां हन्मि वज्रेण कस्ते त्राणं करिष्यति ॥ ३२४।३१ ॥

इत्युदीर्य पुरन्दरो यावदेव क्रुधा हन्तुं चेष्टते स्म तावद् भगवान् शंकरस्तस्य स्तम्भनं चकार । महेन्द्रः स्तब्धो बभूव ! बृहस्पतिः सत्त्वधिया तं शम्भुं ज्ञात्वा बद्धाञ्जलिर्ननाम दण्डवद् भुवि पपात हरं च स्तोतुं प्रचक्रमे—

त्र्यम्बकाय महेशाय दिगम्बराय ते नमः ॥ ३२४।३६ ॥

सुरनायकेऽयं स्तम्भः किमर्थम् ? (जालन्धरबीजार्थम्)—

पुनः गुरुः शक्रं विनयेन पातयामास प्रार्थयामास च—

क्षन्तव्यश्चापराधोऽस्याऽजानता यः कृतोऽधुना ।, ३२४।४४ ॥

तुष्टो भगवान् शंकरः प्राह-क्रोधोऽयं निर्गतः। तमुपसंहर्तुं योग्यं न मन्ये—इति श्रुत्वा दीनो बृहस्पतिः भयमापन्नः प्रोवाच—सदैव भक्ता अनुकम्प्याः। भक्तवत्सल इति नाम सार्थकं क्रियताम्। इन्द्रगुरुरहमस्मि। मां यथेष्टं भस्मसात् कुरु परं देवपतिं दग्धुं नाऽर्हसि। अतिविनयं श्रुत्वा शम्भुः बृहस्पतिमुवाच—प्रीतोऽस्मि तवाऽऽग्रहेण विनयेन च। महेन्द्राय जीवदानं ददामि। निर्भयो भव। उभौ सुखिनौ भवतम्। मम पूजनं कुरुतम्। कृतार्थौ गुरुशक्रौ स्वस्वस्थानं प्रजग्मतुः। शम्भुर्नेत्राऽनलं पश्चिमेऽपां निधौ चिक्षेप। स तत्रैव विद्युल्लेखेवाऽन्तर्दधे। लवणाम्भसि भालनेत्राऽनलसमुत्थमतिदारुणं जलं बालभावं समापन्नं सद्य एव व्यराजत। जलकल्लोलसेवितः स बालो बालशब्दं प्रकुर्वन् मुहुर्मुहुः प्रहसँश्च सर्वा दिशो निननाद। क्षितिः प्राकम्पत। सर्वे लोकास्तत्रसुः। सुराः लोकेश्वराश्च चकम्पिरे। ते सर्वे ब्रह्माणं शरणं ययुः। भयान्विताः सर्वे ऊचुः—

कश्चिद् ब्रह्माण्डमत्तुं वा समायातोऽसुरो महान्।
इति भाति प्रभो! तस्मादस्मान् रक्षय पूर्वज॥ २२४।६७॥

सर्वे देवाः समुद्रस्य तरंगेषु भयंकरं विचरन्तं प्रहसन्तं च बालयुवानं ददृशुः। समुद्रो ब्रह्मादीनागतान् दृष्ट्वाऽतिथिपूजां चक्रे। बालोऽपि तत्राऽऽजगाम। 'पितःपितः' इति गृणन् समुद्राङ्के निषसाद। ब्रह्मणाऽब्धिः पृष्टः—कुतोऽयम्? कस्य बालकः? अस्य हास्यं ब्राह्मणत्रासकृद् दिक्षु व्याप्नोति। समुद्रः प्राह—शंकरस्य बालोऽयम्। एतस्मिन्नन्तरे बालः समुत्थाय वेधसं प्रति दुद्राव। ब्रह्माणं कण्ठे जग्राह। विधेः कण्ठविधूननान्नेत्राभ्यां जलं निर्जगाम। समुद्रेण बालः समाकृष्टः। एतद् दृष्ट्वा सुरादिभिः स जलाधारो जलन्धराभिधः कृतः ब्रह्मा तस्य भाग्यं दृष्ट्वा सागरं प्राह—

शास्त्रज्ञः सर्ववेत्ता च शस्त्रास्त्रज्ञो भविष्यति।
अवध्यः सर्वभूतानां विना रुद्रं भविष्यति॥ ३२४।८०॥

भगवता नारायणेन निराकृता राधाद्वेषिणी वृन्दा भूतलेऽत्र कालनेमिगृहे जाता। सा चास्य शुभा पतिव्रता प्रिया पत्नी भविष्यति। सर्वैरयं दैत्यानां राज्यकर्ता विधीयताम्। इति विधाय सर्वे सुराः स्वं-स्वं निकेतनं ययुः। समुद्रः सुतमादाय स्वं गेहं जगाम। किञ्चित् कालानन्तरं समुद्रः कालनेमिं समाह्वयत्। तस्य च वृन्दाभिधां सुतां जलन्धरस्य भार्यार्थमयाचत। कालनेमिरसुरः समुद्रस्य याच्ञां मेने। तत्क्षणमेव विधानेन जलन्धराय सुतां ददौ। विवाहे महानुत्सव आसीत्। समुद्रः सस्त्रियं पुत्रमवलोक्य सुखं लेभे।

एकदा वृन्दापतिः जलन्धरोऽसुरैः सह शुक्राचार्यपूजार्थं समाययौ। तत्र जलन्धरो राहुं शिरो विना ददर्श भार्गवं च पप्रच्छ—

केनेदं कर्तितं राहोश्छिरो ब्रूहि कथं कदा॥ ३२५।५॥

शुकाचार्योदितं राहोः शिरश्छेदं समुद्रस्य मन्थनं रत्नोपहरणं सुरैः दैत्यपराभवादिकं पितृधर्षणां चाऽऽकर्ण्य रोषरक्ताक्षो जलन्धरश्चुक्रोध स घस्मराख्यं दूतं शिक्षयन् प्रेषयामास—

घस्मर गच्छ देवेन्द्रं निवेदय मदीरितम्।
गृहाण शरणं यद्वा युद्धार्थं सुस्थिरो भव॥ ३२५।२९॥

जलन्धरः सर्वं न सहते। वैरमार्जनमिच्छति।

इत्याकर्ण्य घस्मरो द्रुतं प्रतस्थे। स सर्वं वाक्यं देवेन्द्रमब्रवीत्—

शरणं मे गृहाण त्वं रत्नानि मे प्रयच्छ च।
अन्यथा ते भयं प्राप्तं राज्यनाशो भविष्यति॥ ३२५।३५॥

दूतवचः श्रुत्वेन्द्रः प्रोवाच—गच्छ दूत । जलन्धरं मन्थनकारणं वद । तत्पित्रा सागरेण मद्द्विषः शैलाः कुक्षौ रक्षिताः । तेन मम शत्रुः शंखासुरो रक्षितः ।

निर्दोषं न महेन्द्रो वै दण्डयं करोति कंचन ।
निर्दोषस्त्वं यदि द्वेषं करोषि मम नूतनम् ॥ ३२५ । ४० ॥
फलं शीघ्रं प्रदास्येऽहं सज्जो भवासुरेश्वर ॥ ३२५ । ४१ ॥

इत्युक्तो घस्मरः शीघ्रम् गत्वेन्द्रवचनं जलन्धरं प्रति निवेदयामास । रोषताम्राक्षो जलन्धरो देवान् जेतुमुद्योगं चकार । सर्वदिग्भ्यो दैत्यदानवादयः समाजग्मुः । जलन्धरः शुम्भनिशुम्भौ सेनाधिनायकौ कृत्वा निर्जगाम नाकं च प्राप । स रणाय शंखं दध्मौ । इन्द्रोपि सुरोत्तमैः सह युद्धाय निर्ययौ । सुरासुरसेनयोर्युद्धं बाणैरस्त्रैः मन्त्रैः मायाभिरिन्द्रजालैः पाषाणैः पर्वतैः वृक्षैरुल्काभिः शतच्छदैः शक्तिभिः पल्लताभिः बाहुभिः कफोणिकादिभिः प्रारब्धम् । रक्तनद्यो भूमौ विदुद्रुवुः । शुक्रो मन्त्रितवारिभिः संजीविन्या च मृतानसुरान् गजवाजिनश्चाऽजीवयत् । बृहस्पतिः द्रोणगिरेरानीतैः दिव्यौषधिभिः मृतान् सुरानजीवयत् । इति दृष्ट्वा शुक्रो जलन्धरं प्रोवाच—बृहस्पतिः द्रोणाचलादौषधीः समानीय सुरान् जीवयति । तस्माद् द्रोणाद्रिमानय । तं स्वाधीनं कुरु यद्वा समुद्रान्तः प्रवेशय । अनेन सुरा नष्टा भविष्यन्ति । ते पुनर्न जीविष्यन्ति तव च विजयो भविष्यति ।

इति श्रुत्वा जलन्धरो द्रुतं गत्वा द्रोणाचलमुत्पाटय सागरान्ते चिक्षेप । ततो मुदाऽन्वितः स देवान् जघान । बृहस्पतिः द्रोणभूमिं जगाम । परं स तत्राऽद्रिं न ददर्श । निराशो गुरुः दैत्यसंहृतमद्रिं ज्ञात्वा देवान् प्राह—

पलायध्वं पलायध्वं ये मृतास्ते गताः यतः ॥ ३२५ । ६४ ॥

सम्प्रति शेषपत्रैः मृतान् देवान् कथञ्चिद् जीवयिष्ये । इति दृष्ट्वा सर्वे सुराः रणं त्यक्त्वा पलायिताः । जलन्धराऽन्विताः दैत्याः देवान् पलायितान् दृष्ट्वा शंखभेरीजयघोषैरमरावतीं विविशुः । देवाः भयात् स्वर्गं त्यक्त्वा स्वरिरक्षिषया मेरुपर्वते गह्वराणि समाश्रित्योषुः । जलन्धरोऽतिमत्सराद् देवानां नाशनार्थाय मेरुवनानि ययौ । भीताः दुःखिताश्च सुराः ब्रह्माणं प्रति जग्मुः । तत्र तत् स्थानं रिक्तमवलोक्य ते वैकुण्ठं जग्मुः लक्ष्मीनारायणं च तुष्टुवुः—

पाहि नः शरणागतान् । वयं सर्वे जलन्धरेण स्वर्गान्निराकृताः ।

तस्य वधो विचिन्त्यताम् ।

विष्णुस्तान्निर्भयं कुर्वन् जगाद—

भयं त्यजत वो देवास्तं गच्छामि जलन्धरम् ।
नाशयाम्यद्य तं शत्रुं देवानां दुःखदं परम् ॥ ३२५ । १०२ ॥

भ्रातुर्निधनं भविष्यति—इत्यालोच्य दुःखिता लक्ष्मीः सवाष्पनयना स्ववल्लभं नारायणं प्रोवाच—

यद्यहं ते वल्लभाऽस्मि मा तन्नाशं कुरु प्रभो ॥ ३२५ । १०५ ॥

विष्णुः प्रोवाच—सुराणां रक्षणाय मया गन्तव्यम् । तत्र तेऽनुजं न मारयिष्यामि । परं रुद्रांशत्वाद् ब्रह्मवाक्याच्च ते भ्राता मारणीयोऽस्ति । मा विषादं कुरु प्रिये । इति तां सान्त्वयित्वा नारायणो देवैः सह यातः । बलगर्वसमन्वितो जलन्धरो विष्णुं दृष्ट्वाऽतिसंक्रुद्धो जातः । स दैत्यान् समरार्थमाज्ञापयामास—

भो-भो दैत्यवराः सर्वे युद्धार्थममरैः सह ॥ ३२६ । ४ ॥
निर्गच्छन्तु महाशस्त्रा युद्धं कुर्वन्तु दुस्तरम् ॥ ३२६ । ५ ॥

शुम्भनिशुम्भपरिरक्षिताः मौर्याः धौम्राः कालकेयाः कंकास्तालजंघादयो महादैत्याः निर्ययुः। बहवो देवानां चक्रैः हताः। दैत्यानां महत् कदनं दृष्ट्वा जलन्धरो रणमूर्धनि सबलान् दानवानवातरत्। बहवो देवताः हताः। अन्यान् पलायनपरान् देवान् दृष्ट्वा गरुडस्थो विष्णुः पुनः पुनराह्वयाञ्चक्रे—

मा पालयन्तु संग्रामादहं योत्स्येऽग्रगो भवन्॥ ३२६।२५॥

विष्णुस्तत् क्षणं सुदर्शनानां लक्षाणि रचयामास। दानवीं सेनां च हन्तुं प्रेरयामास। देवाः दिव्यैः शस्त्रैरस्त्रैश्च दानवान् जघ्नुः। बहवो दानवाः छिन्नाः नष्टाश्च। शेषा रणाङ्गणं परित्यज्य स्वर्गाद् विदुद्रुवुः। एवमसुराणां महान् पराजयो बभूव। शुक्रो विद्ययाऽसुरान् द्रुतं जीवयामास। तदनन्तरं स्वसृपतिश्यालकौ विपक्षगौ युयुधाते।

मर्तव्यं वा विजेतव्यं लाभो द्वयेऽपि मेऽस्ति हि।
क्व वै विष्णुकरान्मृत्युः क्व वा विष्णुर्विजेतृता॥ ३२६।५७॥

इत्यालोच्य जलन्धरो युयुधे। रणदुर्मदं तं दृष्ट्वा विष्णुः प्राह—

वरं वरय दैत्येन्द्र प्रीतोऽस्मि तव विक्रमात्।
अदेयमपि देयं ते त्वादृशाय रणाङ्गणे॥ ३२६।६२॥

वरस्य समयं ज्ञात्वा जलन्धरो हरिं प्रत्युवाच—

यदि तुष्टोऽसि भगवन्! वरं ददासि चेद्यदि।
मद्भगिन्या मया सार्धं मद्गेहे सगणो वस॥ ३२६।६४॥

तथाऽस्तु—इति भगवान् तं जगाद। ततो लक्ष्म्या परिवारेण च सहितो विष्णुः जलन्धरगृहं गत्वा वचनबद्ध उवास। मेदिन्यां जलन्धरेण पुरं जालन्धरं कृतम्। एवं लक्ष्म्या सह विष्णुस्तेन वशीकृतः। एतदवलोक्य देवाः शरणं विना दुःखिताः निराश्रयाश्च शंकरसन्निधिं जग्मुः। स्वदुःखविनिवृत्तये ते तं प्रतुष्टुवुः। देवकार्यचिकीर्षया महादेवो नारदं तत्पुरीं प्रेषयामास। नारदोऽपि शीघ्रं जालन्धरपुरं ययौ। स देवान् संगत्य तेषां दुःखं ज्ञात्वाऽऽश्वास्य च तान् जालन्धरसभां ययौ। जलन्धरस्तं विधिवत् सम्पूज्य कुशलं पप्रच्छ। प्रसन्नात्मा नारदः प्रोवाच—

अहो तव समृद्धेस्तु पारं नास्ति जलन्धर॥ ३२६।९८॥
किन्तु नैकमपि जायारत्नं ते भाति तादृशम्।
यादृशं शंकराऽग्रेऽस्ति तावान् न्यूनोऽस्ति वैभवान्॥ ३२६।१०६॥
न वै विवाहितां विना शोभा राज्ञो भवेत् क्वचित्॥ ३२६।११०॥

अतिमानवान् जलन्धरो देवर्षिं प्राह—भवता सर्वाः कन्यकाः दृष्टाः। सर्वाऽतिशयरूपयौवनसम्पन्नां कन्यां प्रदर्शयतु भवान्। तामहं नयामि विवहामि च। एतच्छ्रुत्वा नारदः प्राह—

कैलासे तद् वर्ततेऽद्य शम्भोर्हस्ततले स्थितम्॥ २२६।१३०॥
तत् रत्नं त्वक्षतं प्राप्य कृतकृत्यो भवाऽत्र वै।
नो चेत् प्राणान् विहायैव परलोकं समाश्रय॥ ३२६।१३५॥

इत्युक्त्वा नारदः स्वकं स्थलं ययौ।

ततो नारदवचनाऽनुसारतो जलन्धरः सम्यक् प्रयत्नं चकार। सुदूतं सैंहिकेयं महाराहुमाह्वयामास प्राह च—शीघ्रं कैलासं गच्छ। तत्र योगिनः शंकरस्य हस्तगतं कन्यारत्नमस्तीति नारदो मामुवाच। तत् पार्वत्यभिधानं रत्नं मया प्राप्तव्यमेव। त्वया तत्र गत्वैवं वक्तव्यम्—

वनवासिन् महायोगिन् जायारत्नेन किं नु ते ।
देहि तन्मे जलन्धरनाम्ने रत्नभुजे हर ॥ ३२७।१६ ॥

इत्याज्ञां प्राप्य राहुः कैलासं ययौ । स तत्र नन्दिना सभामध्ये प्रवेशितः प्रणम्य शंकरमुवाच-जलन्धरस्य दूतोऽहम् । त्वत्सकाशमिहागतः । स यदाह तच्छृणुष्व—

कन्यारत्नं स्वर्णकान्तं चन्द्रपिण्डसमं तव ।
योगिनो नोपयुक्तं स्याद् देहि मे त्वं दिगम्बर ॥ ३२७।१८ ॥

इति वदति राहौ तत्क्षणं सज्वालनयनो महारौद्रो राहुमभिदुद्राव । राहुस्तं दृष्ट्वा दधाव परं स प्रसह्य राहुं खादितुं दधार । राहुः प्रार्थयामास—

पाहि मां प्रपन्नम् । अयं तव सेवको मां शरणागतं दूतं खादति ।
शंकरः स्वगणमुवाच—दूत ! मा खाद ब्राह्मणं राहुनामकम् ।

इति श्रुत्वा स गणस्तं मुमोच शम्भुं च प्राह—

क्षुधा मां बाधते शम्भो देहि भक्ष्यं महेश्वर ॥ ३२७।३३ ॥

शिवः प्राह—स्वमांसं भक्षयाऽत्र वै । स गणः सर्वं स्वमांसं चखाद । यदा शिरः शिष्टमभवत् तदा प्रसन्नः शंकरः प्राह—

मया सह प्रपूज्यत्वं कीर्तिमुखाऽभिधानकम् ।
ददामि ते महावीर ! वस द्वारि मम गृहे ॥ ३२७।३७ ॥

अथ राहुः जलन्धरं प्रति जगाम । स्वस्य मृत्युं जीवनं च निवेदयामास । शंकरचेष्टितं श्रुत्वा संक्रुद्धो जलन्धरो दूताऽवमानं स्वाऽवमानं गणयन् दैत्यमूर्धन्यान् सज्जीभवितुमाज्ञापयामास । अभियान-वेलायां जलन्धरस्य शिरसो मुकुटमपतत् । अग्रे राहुश्छिन्नशिरा अतिष्ठत् । सम्मुखे शुक्रः काणः । एतत् सर्वममङ्गलायाऽभवत् । ततोऽन्यान्यप्यशकुनान्यभवन् ।

सुरास्त्रस्ता आसन् । ते शंकरं प्रति जग्मुः दुष्टनाशाय तं तुष्टुवुरूचुश्च—तव पुत्रो जलन्धरो विनाशाय समर्पितः । सुराणां कदनं पार्वत्या धर्षणं तवाऽपमानं च चिकीर्षन्नयं नाशयोग्यः । बलेन गर्वित-श्चैष त्वां योद्धुमायाति । अस्मत्प्रियचिकीर्षया तं जहि ।

इति देववचः श्रुत्वा शंकरो विष्णुं सस्मार । विष्णुः शीघ्रं समागतः । शंकरस्तं प्राह—विष्णो ! जलन्धरस्त्वया कथं न निषूदितः । कथमद्याऽपि तद् गृहे वससि ? विष्णुः महादेवं प्राह—अयं जलन्धरः श्रीभ्राता तवाऽत्मजश्चेति हेतोर्न हतः । शंकर ! त्वमेवैनं जहि । अहं तु लक्ष्म्या निवारितो नैनं मारयितुं शक्नोमि ।

एतस्मिन्नन्तरे जलन्धरो महासेनासमन्वितः कैलासमायातो जगर्ज । शंकरः सैन्यकोलाहलं श्रुत्वा चुक्रोध नन्द्यादिगणान् च युद्धार्थं समादिदेश । क्रोधसंभृताः सर्वे गणाः कैलासादवतेरुः । अतिदारुणं युद्धमभूत् । सहस्रशो वीराः हताः । शुक्रो मृतसंजीवनीबलाद् दैत्यानजीवयत् परं मृताः गणाः नोत्थिताः । सर्वे गणा इमं भयंकरं विनाशं शंकराय शशंसुः । शंकरः शुक्रस्य सर्वं चेष्टितं ज्ञात्वा क्रोधमाहार्षीत् । ततस्तन्मुखात् क्रौधताम्राक्षी भीषणा कृत्या समुदभवत् । सा रणभूमिं प्राप्याऽसुरेषु विचचार दैत्याँश्च भक्षयन्ती भार्गवं प्रति जगाम तं च गले धृत्वा निजयोनौ संस्थाप्य नभस्यन्तरदधात् । शुक्रनाशं ज्ञात्वा प्राणरक्षापरायणा दैत्या युद्धभूमेर्विनिर्जग्मुः । एवमासुरसैन्यं भग्नम् । स्वसैन्यं छिन्नं भिन्नं विनाशितं च ज्ञात्वोज्जीवकस्य शुक्रस्य नाशेन सर्वं नष्टमवलोक्य जलन्धरो मनस्यचिन्तयत्—अत्र मया युद्धपराक्रमं

कृत्वा मर्तव्यम्—इति निश्चित्य स सहसा पादयोः कृत्यां जग्राह । कृत्या शुक्रममुञ्चत् । शुक्रः संज्ञां समवाप । ततः संजीवन्या विद्यया पुनर्दैत्यानुत्थापयन् जगर्ज । एतदवलोक्य वीरभद्रः शुक्राचार्यं समानीय गह्वरं प्रविवेश । तदनन्तरं जलन्धरोऽनेकानि रूपाणि विधाय मूलरूपेण तत्स्थानाद् मृतेर्भियाऽपससार । ये दैत्याः शुक्राचार्येण जीवितास्ते छिन्ना. भिन्नाः हताश्च । जलन्धरो विध्वस्तां सेनां दृष्ट्वा पुनः गणानभिययौ । शिवसैन्ये च बाणवृष्टिं मुमोच । भूतानां महान् कोलाहलो बभूव । एतच्छ्रुत्वा रुद्रः संग्राममाहसन्नभ्यगात् । सर्वे दैत्या भीषणं रुद्रं दृष्ट्वा विदुद्रुवुः । बहवोऽसुरा हताः । ते न पुनरुत्थिताः । शंकरो जलन्धरं प्रति महाशक्तिं प्राहिणोत् । अम्बरे रूपान्तरमास्थाय स व्यलीयत । एवं शंकरप्रहिता शक्तिर्निष्फला बभूव । भयात् शेषाः दैत्याः प्रदुद्रुवुः । तद् वीक्ष्य जलन्धरस्तान् धिक्कुर्वन् प्रोवाच—

किं युष्माभिर्मातृदुग्धपानकृद्भिः पलायितैः ।
पृष्ठतश्च हतैः किं वै स्वर्गो मोक्षो न वाऽऽप्यते ॥ ३२८।५६ ॥

ततो जलन्धरो रुद्रमोहायाऽप्सरोमायां ससर्ज । तया सगणः शम्भुर्मोहमाप । सर्वे युद्धं विस्मृत्य तल्लीनाः बभूवुः । जलन्धर आसुर्या मायया रुद्रो भूत्वा गौरीगृहं जगाम । भवबल्लभा पार्वती रुद्रमवलोक्य पर्यङ्कगा बभूव । पार्वत्या वीक्ष्यमाणो रुद्ररूपधरः स जलन्धरो वीर्यमस्रावयत् । इदं दृष्ट्वा पार्वती विचारयामास—नाऽयं महादेवः किन्तु तद्रूपधारी दानवोऽयम्—इति विचार्य भीता साऽदृश्यतां जगाम । जलन्धरस्तामदृष्ट्वा शम्भुना सह योद्धुं जगाम । पार्वती मनसा विष्णुं सस्मार । विष्णुस्तत्र समायातः । पार्वती तं प्राह—रुद्रो भूत्वा जलन्धरो मां वञ्चयितुं मद्गृह आयातः । विष्णुः प्राह—विदितं सर्वं मे । किं कुर्याम् ? आज्ञापय तन्मे । पार्वती प्राह—तादृशाय तादृशं कर्तव्यमिति विचार्य वृन्दासतीत्वधर्मं मदाज्ञया विनाशय । अन्यथा स महादैत्यो न मरिष्यति । यतो हि पातिव्रत्यं महान् धर्मो रक्षाकृन्मोक्षदश्च । इति श्रुत्वा विष्णुः हरं निवेद्य जलन्धरविनाशाय छलं कर्तुं प्रतस्थे । स तत्र गतो यत्र दर्शनाऽऽतुरा वृन्दा युद्धे जयिनं पतिं प्रतीक्षते स्म । पूर्वं विष्णुः वृन्दां वैधव्यसूचकं स्वप्नं दर्शयामास । प्रबुद्धा वृन्दा विप्रेभ्यः स्वप्नं न्यवेदयत् । विप्रवचोभिः प्रेरितया तथाऽनिष्टशान्तिदानानि दत्तानि । अपि च तस्या दक्षिणाङ्गानां स्फुरणानि बभूवुः । अनिष्टं विज्ञाय शोकसागरे मग्ना सा क्वचिदपि शर्म नाऽऽप । विष्णुमायययाऽऽकृष्टाऽऽतुरा चोद्यानं जगाम । वनाद् वनान्तरं भ्रान्ता विष्णुना प्रेरितौ राक्षसौ ददर्श । पलायनपरा सा रक्षकं प्रति दधाव । तत्र विष्णुकृतं मुनिं दृष्ट्वा तं च रक्षकं मत्वा तत्कण्ठं बाहुभ्यां धृत्वा रक्ष रक्षेत्युवाच । तेन मुनिना हुङ्कारेण राक्षसौ विद्रावितौ सतौ च रक्षिता । अथ स्वस्थचित्ता वृन्दाऽब्रवीत्—साधो ! रक्षिताऽस्मि खलजाद् भयात् । मम पतिः जलन्धरो रुद्रं प्रति युद्धाय गतः । तस्य कुशलं जयोऽन्यद् वा सर्वं मे वद । मुनिस्तस्याः पत्युः स्वर्गतं स्वास्थ्यं प्राह । इत्याकर्ण्याऽतिविह्वला सा तारस्वरेण रुरोद । तस्मिन्नेव काले कपीशौ करयोः जलन्धरस्य कबन्धं गृहीत्वा वृन्दाया अग्रतः स्थितौ । पत्युर्मृतकलेवरं दृष्ट्वा वृन्दाऽतितरां तारं-तारं रुरोद ।

मयाऽपि तव देहेन सह भस्मसाद् भवितव्यम्—इति मतिं विधाय वृन्दा तच्छवेन सहाऽऽत्मानं भस्मसात् कर्तुमुद्यता बभूव । एतस्मिन्नन्तरे स मुनिरूपधारी विष्णुस्तामाश्वासयन्नुवाच—माऽऽत्मानं भस्मसात् कार्षीः । स्थिरा भव । जीवयाम्यहमेनं तव पतिम् । इत्युक्त्वा मुनिरूपी विष्णुर्मायाविनिर्मित-जलन्धरशवं सजीवं कृत्वा वने महोत्सवं चकार । वृन्दा निजभर्तारं जीवितं प्राप्य शोकं च विहाय कामाऽऽविद्धहृदया तत्रैव तेन सह भूयो रतिमनुबुभूषति स्म । मायाजलन्धरो विष्णुः रणाङ्गणमेवमवर्णयत्—प्रिये ! रुद्रेण मम शिरश्चक्रेण छिन्नम् । तच्छीघ्रं दूतेन तव सन्निधावानीतम् । तव सतीत्वतोऽनेन मुनिना मन्त्रेणाऽहमस्मि जीवितः । देवि ! ताम्बूलं गृहाण मया सहाऽनुभव च रतिसुखम् । इत्युक्त्वा मायाजलन्धरो

विष्णुस्तया सह भृशमरमत। तदा भूम्यां वृन्दाङ्गस्वेदतोऽतिपावनी तुलसी प्रादुर्भूता। तत्स्थलं वृन्दावनं जलन्धरस्य राज्यं च जालन्धराख्यं पीठं बभूव।

वृन्दायाः पातिव्रत्यभङ्गेन जलन्धरस्य तेजो बलं च क्षीणतां जगाम। पञ्चदिनानि यावद् भयङ्करं युद्धं बभूव। अत्रान्तरे विष्णुः वृन्दया सह पुनः पुना रेमे। पञ्चमे दिने यदा वृन्दा निद्रां गता तदा गरुड आययौ। विष्णुः गृहान्तरे गतश्चतुर्भुजोऽभवत्। गरुडो युद्धस्य सर्वं वृत्तान्तं विष्णवे न्यवेदयद्—अद्य यावद् दैत्यो जलन्धरो न मृतः। परञ्च मुमूर्षुर्वर्तते। अद्य श्वो वा परश्वो वा मरिष्यति। एतस्मिन्नन्तरे वृन्दया शीघ्रमुत्थाय गृहान्तरे चतुर्भुजो विष्णुः दृष्टः। सा शङ्किता बभूव। परन्तु विष्णुस्तत्कालमेव जलन्धरो भूत्वा पुनरागतः। दिनान्तरे सुरताऽन्ते वृन्दा मृषा सुप्ता। तत्र तावद् गरुडः प्राप्तः। गृहान्तरं गतश्चतुर्भुज-रूपधारी विष्णुः वृन्दया दृष्टः। सा रुषा विष्णुमब्रवीत्—

धिगस्तु ते परदाराऽभिमर्शिन् कपटाऽऽकृते।
धर्मपुत्रो हरिर्भूत्वा ह्यधर्मं कृतवान् स्वयम्॥ ३२९।५२॥
फलं भुक्ष्व ददाम्यत्र शापं ते त्वं तथा भव।
यौ त्वया मायया चात्र दर्शितौ राक्षसौ मम॥ ३२९।५३॥
तावेव तव भार्यां च हरिष्यतो हि राक्षसौ।
त्वं चापि भार्यादुःखार्तो वने कपिसहायवान्॥ ३२९।५४॥
भ्रमाऽनेन च सर्पेण सह यस्तेऽत्र सेवकः॥ ३२९।५५॥

वृन्दयैवं शप्तो विष्णुरदृश्यतां गतः। ततो वृन्दा सखीं प्राह—विष्णुना जैह्म्यं कृतम्। मम पातिव्रत्यं विनाशितम्। मम कान्तः सन्देहतां गतः। इत्युक्त्वा पार्श्वसरोवरे सा स्नानमकरोत्। शुष्ककाष्ठचयेन चितां कृत्वा विष्णुशाठ्यं च चिन्तयमाना सा हव्यवाहनं प्राविशत् क्षणादेव भस्मरूपा चाभवत्। तद्-भस्मना श्यामलं तुलसीवनं संजातम्। पुनः सा तुलस्युद्वाहविधिना हरिं पतिरूपेण प्राप।

वृन्दातेजस्तदा तत विष्णुशक्तौ व्यलीयत॥ ३२९।६४॥
वृन्दा तुलसी सा वृक्षरूपा पृथ्व्यां ह्यजायत।
अन्ते वै यादृशी वृत्तिर्गतिश्चाणि च तादृशी॥ ३२९।६५॥

ततो दूतः शीघ्रं गत्वा जलन्धरं वृन्दाज्वलनं कथयामास। इति श्रुत्वा जलन्धरो रुरोद—

येन यत् क्रियते कर्म तथा तेनैव भुज्यते।
मया तु वञ्चिता गौरी हरिणा वञ्चिता वधूः॥ ३३०।२॥
स्वसृपतिं गृहे नैव स्थापयेत् सर्वथा जनः।
धनदारादिकं सर्वं स गृह्णाति शनैः शनैः॥ ३३०।३॥

विचारणीयमधुना वर्तते—मया केन सह योद्धव्यम्—हरिणा हरेण वा? यदि हरिं जेतुं यामि तदा हरः पृष्ठे हनिष्यति। उपस्थितं परित्यज्याऽन्याऽनुगो विनश्यति। मम पत्नी भस्मतां गता। अहमस्म्यर्धपराजितः। पूर्वं पशुपतिं जित्वा पश्चाद् विष्णुं जेतुं प्रयास्यामि। शम्भुं जित्वा लोके सर्वेश्वरो भविष्यामि तस्य वा नाराचैः मृतस्तत्पदं यास्यामि—इति विचार्य स पिनाकिना सह योद्धुं ययौ। तुमुलं युद्धमभूत्। रुद्रबाणैस्तस्य कवचं भुवि पतितम। तस्य शरीरतो रुधिरं बहु सुस्राव हरस्तीक्ष्णशरेण तं हृदि विव्याध।

स मूर्छितः पपात । जलन्धरो मनसा शुक्रं सस्मार । शुक्रस्तु कृत्यावशीभूतः परतन्त्रतया नाऽऽगन्तुं शशाक । जलन्धरः शनैः मूर्छां परित्यज्य स्थितो बभूव । शीघ्रमसौ मायामयीं गौरीं विदधौ । शिवो रथोपरिगतां बद्धां साऽऽक्रन्दां शुम्भनिशुम्भादिदैत्यैश्च वध्यमानां पार्वतीं ददर्श । एतदवलोक्य शिव उद्विग्नमानसोऽवाङ्मुखो बभूव । ततो जलन्धरस्त्रिभिः सायकैः रुद्रं शिरस्युरस्युदरे च विव्याध । परमसंक्रुद्धो रुद्रो घोरो बभूव । शुम्भश्च मायाविरचितां पार्वतीं पादयोर्गृहीत्वा रथान्नभसि प्राक्षिपत् । सा शूलोपरि पपात । शंकरस्याऽग्रे रुदतो शूलबिद्धा सा ममार । हरः शोकमोहपरिप्लुतो बभूव । स शुम्भप्रमुखान् दैत्यान् शशाप—चण्डी भूत्वा गौरी युस्मान् सर्वान् हनिष्यति । तस्मिन्नेव क्षणे तत्र ब्रह्मा शंकरं समागत्य प्रोवाच—जलन्धरेणेयं मायापार्वती रचिता । सत्या पार्वती तु मया विष्णुना च रक्षिता । कमलस्याऽभ्यन्तरे कोशे सा सूक्ष्मतां गता तिष्ठति । इमां मायापार्वतीं जहि । ब्रह्मणो वाक्यमाकर्ण्य महेश्वरस्तां दानवीं मायां बिभेद । कपटां मूर्तिं बभञ्ज । मायापरित्यक्तं शिवमवलोक्य जलन्धरो भृशं मायामहाबलं चकार । अयुतभुजो जलन्धरः समरे शम्भुं रुरोध । हरं तिरस्कुर्वन् बलवदिदमुवाच—

मां न जानासि रुद्र त्वं त्रैलोक्यजयकारिणम् ॥ ३३०।३७ ॥

इति श्रुत्वा महादेवो विजहास । जलन्धरो हरं प्रति दधाव । अयुतभुजो भूत्वा स शिवं समरे बबन्ध । शिवः स्वस्य कृपाणेन तस्य करकाननं चिच्छेद । छिन्नहस्तोऽपि जलन्धरो युयुधे । इति दृष्ट्वा तुष्टो महेश्वरो वरदानार्थमुवाच । जलन्धरः प्रोवाच—

शीघ्रं प्रयच्छ मे सिद्धिं मह्यं देह्यात्मनः पदम् ॥ ३३०।४५ ॥

तथाऽस्तु—इति हरः प्रोवाच । सोऽनलपूरितं सुदर्शनं चक्रं जग्राह प्रचिक्षेप च तद् जलन्धरविनाशाय । स महदायतलोचनं तच्छिरो जहार । तस्य देहो द्विधा पपात । तस्य कण्ठात् शतसहस्रशो दैत्याः समुद्भूताः । सर्वे ते तेन चक्रेण युधि हताः । रुधिराऽरुणं जलन्धरकबन्धं ननर्त । सकला मही तस्य मेदसा पूरिता बभूव । योगिनीनां गणाः जलन्धरस्य मांसं चखदुः । जलन्धरं हतं दृष्ट्वा सुराः प्रसन्नतां गताः । पुष्पवृष्टिं कुर्वाणास्ते शिवकीर्तिं जगुः । कृत्यया शुक्र उत्सृष्टः । स स्वकं स्थानं ययौ । पुनर्देवराज्यमभूत् । सुराः स्वस्वस्थाने सुखमाश्रिताः ।

आख्यानस्याऽस्य महत्त्वमेवं प्रतिपाद्यते—
इतिहासमिमं श्रुत्वा न दुःखैः परिभूयते ।
क्लेशाः दूरे भवन्त्यस्य जाता अपि पुनः पुनः ॥ ३३०।६५ ॥

श्रीपाद्मे महापुराणे उत्तरखण्डे पूर्वभागे वर्णितमाख्यानं बृहत्तरं विद्यते । विशिष्टानि सन्ति तीर्थमाहात्म्यानि । सुराऽसुरयुद्धवर्णनानि संकटनाशादयो देवस्तुतयश्च बहुविधैः वृत्तैः बद्धानि सन्ति । कथा तु संवादिनी परं क्वचिद् विसंवादिनी वर्णनशैली वर्तते । प्रसङ्गेन जलन्धरोत्पत्तिः जालन्धरपीठवर्णनं कीर्तिमुखोत्पत्तिः क्षुधार्तस्य कीर्तिमुखस्य चेष्टाः तस्य च स्वशरीरभक्षणं देवाऽसुरयुद्धे विविधाः शक्तयो गणाः सेनापतयः शस्त्राऽस्त्राणि दारुणं मायायुद्धं च प्रकारान्तरेण वर्णनं तुलनीयं विद्यते ।

पुण्यपत्तनस्थाऽऽनन्दाश्रमपण्डितैः सम्पादितं श्रीपाद्मं महापुराणं विद्वद्वरेण्यस्वामिकृष्णवल्लभाचार्यसम्पादितां श्रीश्वेतायनव्यासविरचितां श्रीलक्ष्मीनारायणसंहितां चाधिकृत्य क्वाचित्कं विसंवादि वर्णनमत समुपस्थाप्यते ।

तुलनीया विषय-सूची

श्रीपाद्मेपुराणे जालन्धरोपाख्याने श्रीनारदयुधिष्ठिरसंवादे

अध्यायः	नाम	श्लोकाः
३	जालंधरोत्पत्तिब्रह्मगमनवरदान-निरूपणम्	५२
४	वृन्दाविवाहजालंधराभिषेकः	५४
५	(देवेन्द्रभवनं प्रति दुर्वारण दूतप्रेषणम्)	२५
६	देवदानवयुद्धम्	७०
७	बलदैत्यस्वर्गारोहणम्	५०
८	(जालन्धरेन्द्रयोर्युद्धं लक्ष्म्या च सह कृष्णस्याऽब्धौ वासः	८६
९	सौराज्यवर्णनम्	२७
१०	सर्वदेवतेजोमयचक्रोत्पत्तिः	३७
११	कैलासाद् राहुप्रत्यागमनम्	५३
१२	दैत्यसैन्यपराजयः	७२
१३	महादेवसमागमः	६३
१४	मायामहेशागमनम्	५५
१५	माधवमायाकथनम्	७३
१६	वृन्दायाः ब्रह्मपद प्राप्तिः	७३
१७	जालंधरस्य मायारूपपरित्यागः	४१
१८	शुक्रयोनिप्रवेशः	९०
१९	जालंधरवधे सुरमहोत्सवः	१५६

योगः—१७ अध्यायाः, ४८ पृष्ठानि (पृ० १२३८–८५) १०८० श्लोकाः

कार्तिकमाहात्म्ये श्रीकृष्णसत्यभामासंवादे

अध्यायः	नाम	श्लोकाः
९८	जलंधरोत्पत्तिः	३१
९९	अमरावतीजयः	३२
१००	जलंधरस्यविष्णुवरप्राप्तिः	२९
१०१	शिवदूतसंवादः	३६
१०२	दैत्यसेनावधः	३१
१०३	दैत्यसैन्यपराभवः	३१
१०४	शिवजलंधरसंग्रामः	३०
१०५	विष्णुसाक्षात्कारः	३२
१०६	जलंधरवधः	२८

२८० श्लोकाः

९ अध्यायाः, १५ पृष्ठानि (पृ० १४४५–५९)

श्रीलक्ष्मीनारायणसंहितायां प्रथमे कृतयुगसन्ताने जलंधरवृन्दाख्याने

अध्यायः	नाम (संक्षेपेण)	श्लोकाः
३२४	जलंधरोत्पत्तिः वृन्दया सह विवाहः	९५
३२५	सुरासुरयुद्धोत्तरं विष्णुस्तवनम्	१०८
३२६	जलंधरविष्ण्वोर्युद्धं जलंधरगृहे विष्णुवासः नारदस्य जलंधरगृहं प्रतिगमनम्	१३०
३२७	शंकरं प्रति राहुदूतप्रेषणं घोरं युद्धम्	९४
३२८	जलंधरवीरभद्रयुद्धं जलंधरशंकरयुद्धं मायारुद्रो जलन्धरः मायाजलंधरो विष्णुः आदि निरूपणम्	८७
३२९	वृन्दाया अशुभस्वप्नं जलंधररूपि-विष्णुचरितं वृन्दायाश्चिताप्रवेशः भस्मनः तुलसीरूपता	६९
३३०	जलंधरेण मायया कपटगौरीनाशदर्शनं शंकरचक्रद्वारा जलंधरनाशः विष्णुना तुलसीविवाहः	१११

७ अध्यायाः, २० पृष्ठानि (पृ० ७६५–८४), ६९१ श्लोकाः

तुलनीयः पाठः

१. जलन्धरोत्पत्तिवर्णनम्

श्रीपाद्मेपुराणे
पूर्वप्रसङ्गे
तृतीयेऽध्याये

इन्द्रो नृत्यार्थमागतः। कैलासे गिरीशं स्तोतुं स देवदुर्लभं नर्तनं चक्रे। प्रसन्नः शंकरो वरार्थमुवाच। यत त्वत्सदृशो योद्धा तद् युद्धं देहि मे प्रभो—इतीन्द्रः प्रत्युवाच। हरः क्रोधसंयुक्तो बभूव। तस्य क्रोधो मूर्तिमान् बभूव। हरस्तमुवाच त्वं स्वर्गसिन्धुं समासाद्य वासवं जय। तदा गंगासागरसंगमो बभूव। तस्यां महानद्यां समुद्राद् बली सूनुर्बभूव। तदनन्तरं हंसारूढश्चतुर्मुख आजगाम। स तं प्रीत्या जालन्धर इत्याह।

एवं स नाम्ना जालन्धरो बभूव। प्रजापतिः वरं ददौ—अयं जालन्धरो देवैरजेयश्च भविष्यति ॥ ५१ ॥

अपरप्रसङ्गे
अष्टनवतितमेऽध्याये

शक्रः शिवं द्रष्टुं कैलासं जगाम। शिवगृहे भीमकर्माणं पुरुषं ददर्श। पुनः पुनः मृष्टः स नोवाच। ततो वज्री तं वज्रेणाऽभ्यहनत्। तेनाऽस्य कण्ठो नीलत्वमगाद् वज्रं च भस्मताम्। रुद्रस्तेजसा प्रजज्वाल। बृहस्पतिः स्तोतुं प्रचक्रमे। प्रसन्नः शिवो भालनेत्रसमुद्भवां ज्वालां करे धृत्वा लवणार्णवे चिक्षेप। गंगायाः सागरस्य च संगमे बालरूपत्वमागतस्य तस्य रुदतः शब्देन धरणी प्राकम्पत्। एतच्छ्रुत्वा ब्रह्माऽऽययौ। समुद्रोत्सङ्गे स बालं ददर्श। कृताञ्जलिः समुद्रस्तस्योत्सङ्गे बालं निवेश्य निवेदयामास—जगद्गुरो। अस्य मम पुत्रस्य जातकर्मादिसंस्कारान् कुरूष्व। इत्थं वदति सागरे स बालः ब्रह्माणं कूर्चे मुहुर्मुहुः विधुन्वन्नग्रहीत्। ब्रह्मणो नेत्रयोर्जलमगमत्। कथंचिन्मुक्तकूर्चो ब्रह्मा सागरं प्रोवाच—

नेत्राभ्यां विधृतं यस्मादनेनैतज्जलं मम।
तस्माज्जलंधर इति नाम्ना ख्यातो भवत्यसौ २७
अधुनैवैषतरुणः सर्वशस्त्रास्त्रपारगः।
अवध्यः सर्वभूतानां विना रुद्रं भविष्यति ॥२८॥
यत एव समुद्भूतस्तत्रैवान्तं गमिष्यति ॥२९॥

श्रीलक्ष्मीनारायणसंहितायां
चतुर्विंशत्यधिकत्रिशततमेऽध्याये

महेन्द्रबृहस्पती शिवरात्रिदिने पूजार्थं पृथिवीं प्रजग्मतुः। तयोर्ज्ञानपरीक्षार्थं महादेवो रूपान्तरं विधाय निकषा तूष्णीमास। पुरन्दरः क्रुधा वज्रेण हन्तुमयतत्। महादेवस्तस्य स्तम्भनं चकार। बृहस्पतिः सत्वधिया शम्भुं ज्ञात्वा स्तोतुं प्रचक्रमे। प्रीतो महादेवो महेन्द्राय जीवदानं ददौ निजनेत्राऽनलं च पश्चिमेऽपांनिधौ चिक्षेप। सर्वे देवाः समुद्रस्य तरंगेषु प्रहसन्तं बालयुवानं ददृशुः। समुद्रो ब्रह्मादीनागतान् दृष्ट्वा निवेदयामास—शंकरस्य बालोऽयम्। बालः समुत्थाय वेधसं प्रति दुद्राव। तं कण्ठेऽग्रहीत्। तस्य कण्ठविधूननान्नेताभ्यां जलमगमत्। समुद्रेण तस्माद् ब्रह्मा वियोजितः। सुरादिभिः विलोकितो जलाधार स जलन्धराभिधः कृतः।

जलंधरः समुद्रोऽस्ति जालंधरोऽपि वार्धिजः।
जालंधर इति जातो जालंधरो जलंधरः ॥७९॥
शास्त्रज्ञः सर्वजेता च शस्त्रास्त्रज्ञो भविष्यति।
अवध्यः सर्वभूतानां विना रुद्रं भविष्यति ॥८०॥

२. जालन्धरपीठवर्णनम्

श्रीपाद्मेपुराणे
श्रीचतुर्थेऽध्याये

एवमुक्तोऽर्णवः प्रीत्या भार्गवेणाथ लीलया ।
अपसृत्य सुतप्रीत्यै जले स्थलमदर्शयत ॥१८॥
शतयोजनविस्तीर्णमायतं च शतत्रयम् ।
देशं जालंधरं पुण्यं तस्य नाम्नैव विश्रुतम् ॥१९॥
दैत्यवर्यं समाहूय मयं प्रोवाच सागरः ।
पुरं जालंधरे पीठे कुरु जालंधराय वै ॥२०॥

नोपलभ्यते

श्रीलक्ष्मीनारायणसंहितायां
एकोनत्रिंशदधिकत्रिशततमेऽध्याये

जालंधरस्य च पीठं राज्यं जालंधरात्मकम् ॥३६॥

---

३. जलन्धरस्य दूतो दुर्वारणो धस्मरो वा

पञ्चमेऽध्याये

कदाचित् प्रेषयामास दूतं दुर्वारणं बली ।
शिक्षयित्वा तु बक्तव्यं देवेन्द्रभवनं प्रति ॥४॥

नवनवतितमेऽध्याये

स श्रुत्वा क्रोधताम्राक्षः स्वपितुर्मथनं तदा ।
दूतं प्रस्थापयामास धस्मरं शक्रसन्निधौ ॥५॥

पञ्चविंशत्यधिकत्रिशततमेऽध्याये

धस्मर गच्छ देवेन्द्रं निवेदय मदीरितम् ।
गृहाण शरणं यद् वा युद्धार्थं सुस्थिरो भव ॥२९॥

---

४. इन्द्रबलयोर्युद्धम्
बलदैत्यस्वर्गारोहणम्

सप्तमेऽध्याये

इन्द्रबलयोर्दारुणं युद्धमभूत् बलेनेन्द्रो हृदि-मुद्गरेण हतः वासवस्तमत्यर्थं तुष्टाव । बलः प्राह—वरं वृणु सुरश्रेष्ठ । इन्द्र उवाच—
यदि तुष्टोऽसि दैत्येश स्वं वपुर्दातुमर्हसि ॥१९॥
तदिन्द्रवचनं श्रुत्वा भित्वा शस्त्रैर्गृहाण माम् ।
इत्युवाच बलं सोऽपि किमदेयं महात्मनाम् ॥२०॥
तथेत्युक्त्वा सहस्राक्षो मुद्गरेणाहनद् बलम् ॥२६॥

नोपलभ्यते

नोपलभ्यते

५ जलन्धरविष्णवोर्युद्धं जलन्धरगृहे च विष्णोर्वासः

श्री पाद्मे पुराणे
अष्टमेऽध्याये

अस्ति जालंधरस्य खड्गरोमा सूतः ।
युद्धे जालंधरस्योक्तिः—
निश्शङ्कं जहि मां विष्णो
नाहं त्वां हन्मि माधव ॥ २७ ॥
लक्ष्म्या उक्तिः—
शृणुश्व वचनं भ्रातर्जितो विष्णुर्धृतस्त्वया ।
भगिन्या न च वैधव्यं दातुं युक्तं महाबल ॥८४॥
श्रुत्वा तु वचनं तस्या मुमोच जगतां पतिम् ।
जालंधरो महाबाहुः स्वस्रे भक्त्या ननाम च॥८५॥
जालंधरस्य वरप्रार्थना—
यदित्वं मम तुष्टोऽसि शौर्येणानेन केशव ।
स्थातव्यं मत्पितुः स्थाने त्वया कमलया सह॥८६॥

शततमेऽध्याये

युद्धे जलंधरो विष्णुं हृदये दृढमुष्टिना जघान।
तौ बाहुभिर्मुष्टिभिः जानुभिश्च युयुधाते ॥
प्रसन्नस्य विष्णोरुक्तिः—
वरं वरय दैत्येऽन्द्र प्रीतोऽस्मि तव विक्रमात् ।
अदेयमपि ते दद्मि यत्ते मनसि वर्तते ॥२०॥
जलन्धरस्योक्तिः—
यदि भोत्वं प्रतुष्टोऽसि वरमेतं ददस्वमे ।
मद्भगिन्या सह तया मद्गृहे सगणो वस ॥२१॥

श्रीलक्ष्मीनारायणसंहितायां
षड्विंशत्यधिकत्रिशततमेऽध्याये

जलंधरो बाहुमुष्टिजानुभिर्युयुधे विचार यामास च—
मर्तव्यं वा विजेतव्यं लाभो द्वयेऽपि मेऽस्तिहि ।
क्वचैव विष्णोः करान्मृत्युः क्ववा विष्णुविजेतृता ५७
विष्णोरुक्तिः—
न दृष्टस्त्वत्समो वीरो गलग्राह प्रयुद्धकृत् ॥६१॥
वरं वरय दैत्येन्द्र प्रीतोऽस्मि तव विक्रमात् ।
अदेयमपि देयंते त्वादृशाय रणांगणे ॥६२॥
वरस्य समयं ज्ञात्वा जलंधरोऽपि बुद्धिमान् ।
प्रत्युवाच हरिं लक्ष्मि ! स्ववशं गमयन् प्रभुम्॥६३॥
यदि तुष्टोऽसि भगवन् ! वरं ददासि चेद् यदि ।
मद्भगिन्या मया सार्धं मद्गेहे सगणो वस ॥६४॥

---

६ सर्वदेवतेजोमयचक्रोत्पत्तिः

दशमेऽध्याये

हरस्योक्तिः—
विष्णुना न हतो योहि सकथं हन्यते मया ॥१५॥
देवाः कुर्वन्तु शस्त्रं हि मम प्राणसहं दृढम् ॥१६॥

ततो देवानां तेजसां चयेन शम्भोर्नर्तन-मर्दनाच्च चक्रं समुत्पन्नम् । चक्रार्चिभिर्विधेः कूर्चं दग्धं दृष्ट्वा शिवो ब्रह्मणो हस्ताच्चक्रं गृहीत्वा निजकक्षापुटे दधौ ।

द्व्यधिकशततमेऽध्याये

ईश्वरस्योक्तिः—
देवैः सह स्वतेजोऽशं शस्त्रार्थं दीयतां मम ॥५॥
ततो विष्णुप्रमुखाः देवाः स्वतेजांसि ददुः ।
तेनाऽकरोन्महादेवो महसा शस्त्रमुत्तमम् ।
चक्रं सुदर्शनं नाम ज्वालामालातिभीषणम् ११

नाऽयं प्रसंगोऽत्र ।
संवादोऽयमत्र सप्तविंशत्यधिक-त्रिशततमेऽध्याये

शंभुः प्राह हरिं विष्णो ! जलंधरः कथं त्वया ।
निषूदितो न चाद्यापि कथं वससि तद् गृहे ॥६०॥
विष्णुः प्राह महादेवं श्रीभ्राता च तवात्मजः ।
इति हेतोर्हतो नैव त्वमेनं जहि शंकर ॥६१॥
मया कृतो रणस्तेन प्राणग्राहेण सर्वथा ।
लक्ष्म्या निवारितश्चाहं मारयामास नैवतम् ॥६२॥

७ कीर्तिमुखवर्णनम्

श्रीपाद्मे पुराणे
एकादशेऽध्याये

अथेश्वरजटाजूटादाविरासीद् गणो महान् ॥३६॥
त्रिआननस्त्रिचरणस्त्रिपुच्छः सप्तहस्तवान् ।
स च कीर्तिमुखो नाम पिङ्गलो जटिलो महान् ३७
प्रणिपत्य शिवं देवमत्यर्थं क्रु (क्षु) धितः प्रभो ।
तदोक्तः शंकरेणासौ भक्षय त्वं रणे हतान् ॥३९॥
क्षणं विचार्य सगणः क्वाप्यदृष्ट्वा रणं तदा ।
ब्रह्माणं भक्षितुं प्राप्तः शंकरेण निवारितः ॥४०॥
ततः कीर्तिमुखेनाथ स्वाङ्गं सर्वं च भक्षितम् ।
बुभुक्षितेन चात्यन्तं निषिद्धेन च सर्वतः ॥४१॥
तमुवाचेश्वरः प्रीतः प्रासादे तिष्ठ मे सदा ॥४२॥

एकाधिकशततमेऽध्याये

वदत्येवं तदा राहौ भ्रूमध्याच्छूलपाणिनः ।
अभवत् पुरुषो रौद्रस्त्रीत्राशनिसमस्वनः ॥२१॥
सिंहास्यः प्रचलज्जिह्वः सज्वालनमनोमहान् ।
ऊर्ध्वकेशः शुक्लतनुर्सिंह इव चापरः ॥२२॥
ततः स राहुं स्वादितुं दधार ।
मुञ्चेति पुरुषः श्रुत्वा राहुं तत्याज सोऽम्बरे ।
राहुं त्यक्त्वा सपुरुषो महादेवं व्यजिज्ञपत् ॥२८॥
क्षुधामां बाधतेस्वामिन्क्षुत्क्षामश्चास्मि सर्वथा ।
किं भक्ष्यं मे महादेव तदाज्ञापय मां प्रभो ॥२९॥

ईश्वर उवाच—

भक्षयस्वात्मनः शीघ्रं मांसं
त्वं हस्तपादयोः ॥ ३० ॥
दृष्ट्वा शिरोवशेषं तं सुप्रसन्नस्तदाशिवः ।
पुरुषं भीमकर्माणं तमुवाच सविस्मयः ॥३२॥
त्वं कीर्तिमुखसंज्ञो हि भव मद् द्वारगः सदा ।
त्वदर्चां ये न कुर्वन्ति नैव ते मत्प्रियंकराः ॥३३॥

श्रीलक्ष्मीनारायणसंहितायां
सप्तविंशत्यधिकत्रिशततमेऽध्याये

शृणु पश्चात्तु यज्जातं राहौ वदति तत्क्षणम् ।
समुत्पन्नो महारौद्रो गणस्तीव्राशनिस्वनः ॥२५॥
भ्रूमध्यादीशरोषाद् वो सज्वालनयनो महान् ।
सिंहाऽऽस्यप्रचलज्जिह्वश्चोर्ध्वकेशो भयंकरः ॥२६
तालजंघोऽभिदुद्रावक्षुधया राहुमातुरः ॥२७॥
(शंकरः) अब्रवीद् दूत मा
खाद ब्राह्मणं राहुनामकम् ।

स शंभुं प्राह—

क्षुधा मां बाधते शंभो देहि भक्ष्यं महेश्वर ॥३३॥

शंभुः प्राह—

क्षुधात्वां बाधतेऽत्यर्थं स्वमांसं भक्षयाऽत्र वै ।
हस्तपादादिकं स्वस्य भक्षयाऽत्रेति चाज्ञया ॥३४॥
चखाद स गणः सर्वं स्वमांसं स्वकबन्धजम् ॥३५॥

प्रसन्नः शंभुरुवाच—

मया सह प्रपूज्यत्वं कीर्तिमुखाभिधानकम् ।
ददामि ते महावीर ! वस द्वारि ममगृहे ॥३७॥

---

८. जलन्धरदूतस्य राहोः शंकरं प्रत्युक्तिः

एकादशेऽध्याये

ईश्वरोऽस्तिकथं लोके भिक्षाभोजीप्रतिग्रही ।
संगोपयसि योगीन्द्र गौरीं रम्यां प्रयच्छ मे ॥४७॥
भिक्षापात्रं गहीत्वा त्वं भ्रम नित्यं गृहे गृहे ॥४८॥

एकाधिकशततमेऽध्याये

श्मशानवासिनो नित्यमस्थिभारवहस्य च ।
दिगम्बरस्य ते भार्या कथं हैमवती शुभा ॥१६॥
अहं रत्नाधिनाथोऽस्मि सापि स्त्रीरत्नसंहिता ।
तस्मान्त्रत्रैव सा योग्या नैव भिक्षाशिनस्तव २०

सप्तविंशत्यधिकत्रिशततमेऽध्याये

कन्यारत्नं स्वर्णकान्तं चन्द्रपिण्डसमं तव ।
योगिनो नोपयुक्तं स्याद् देहि मे त्वं दिगम्बर ॥१८॥
अहं रत्नप्रभोक्ताऽस्मि तत् स्त्री रत्नं न तद् भवेत् ।
भिक्षाशिनः कुतो रत्नं भार्यारत्नं तु भूभृतः ॥१९॥

९. जलन्धरस्य पितुराज्ञोल्लंघनम्

श्रीपाद्मे पुराणे

द्वादशेऽध्याये

जालंधरः स्वपितरमर्णवं युद्धार्थं निवेदितवान् ।

समुद्रेणोक्तम्—

अत्यद्भुतःप्रतापस्ते त्वत्तुल्यो नास्ति भूमिपः।१९।
ममान्तिके वस वत्स शंकरं भिक्षुकं त्यज ॥२१॥

जालंधरेण पितृवाक्यमवज्ञातम् । युद्धाय तेनोद्योगः कृतः ।

नोपलभ्यते

नोपलभ्यते

---

१०. जलन्धरस्य वृन्दावाक्यावज्ञानम्

द्वादशेऽध्याये

वृन्दया बहुशः प्रतिबोधितोऽपि जालंधरो हठं न तत्याज ।

वृन्दोक्तिः—

नाथ युद्धं न कर्तव्यं राजेन्द्र कुत्सयोगिना ।
मनो निर्वर्त्य मां पश्य प्रवृत्तं पार्वतीं प्रति ॥२३॥
गौरीं त्वं वाञ्छासे कस्मात् पार्वती किं ममाधिका ।
तपस्विनी निरालम्बा संसक्ता स्थाणवे सदा॥२४॥
सुतानुरागिणी बन्ध्या तथा कृत्रिमपुत्रिका ।
वृथा स्तुता नारदेन तां त्यजस्व भजस्वमाम्॥२५॥

नोपलभ्यते

श्रीलक्ष्मीनारायणसंहितायाम्

एकोनत्रिंशदधिकत्रिशततमेऽध्याये

शंभुना नैव योद्धव्यं गमने प्रार्थितं मया ।
तथापि वीरभावत्वात् त्वया नाथ मतं न मे ॥२६॥

११. जलन्धरस्योद्योगवेलायामपशकुनवर्णनम्

	श्रीपाद्मपुराणे द्व्यधिकशततमेऽध्याये	श्रीलक्ष्मीनारायणसंहितायां सप्तविंशत्यधिकत्रिशततमेऽध्याये
नोपलभ्यते	गतस्याग्रतः शुक्रो राहुर्दृष्टिस्थितोऽभवत् । मुकुटश्चापतद्भूमौ वेगात् प्रस्खलितस्तदा ॥२॥	अग्रे राहुश्छिन्नशिरोऽमंगलाय कृतोऽभवत् ॥४४॥ शुक्रः काणोऽमंगलाय द्वितीयोऽप्यग्रगोऽभवत् । शुंभस्य तु खड्गो हस्तात्पतितोऽमंगलाय सः॥४५॥ निशुंभादेः क्षुवनं च गतौस्खलनमित्यपि । जलंधरस्य शिरसो मुकुटोऽपतदित्यपि ॥४६॥ अमंगलाय तत्सर्वं प्रस्थानेऽभवदार्तिकृत् । महानिद्रासूचकाश्चाऽशकुनान्यभवन्नपि ॥४७॥

१२. मायाशिवप्रसंगः

चतुर्दशोऽध्याये पार्वतीं प्रति मायाशिवस्योक्तिः—		
अधुना तेऽङ्गसङ्गेन देवि मां त्रातुमर्हसि ॥४३॥ पार्वती शंकरस्याऽसमयोचितं वाक्यं श्रुत्वोवाच— कथं मां दुःखदुःखार्तां पुत्रशोकेन पीडिताम् । ग्लानां वाष्पपरिम्लानां सम्प्रार्थयसि चातुराम्४७ मायाशिव उवाच— पुरुषस्यार्तियुक्तस्य न यच्छन्ति रतिं स्त्रियः । तथैव रौरवे घोरे पतिष्यन्ति न संशयः ॥४९॥ गणशून्यः पुत्रशून्यो धीशून्योऽहं वरानने । साम्प्रतं गृहशून्योऽहं सर्वशून्योऽस्मि भामिनि॥५०॥ सजीवितविहीनोऽहं त्वां प्रष्टुमिह चागतः । स्वां गुहां तु प्रविश्याऽऽशु त्यजामि प्रकृतिं स्वकाम् ॥५१॥ उत्तिष्ठ नन्दिन् संयामस्तीर्थे भव पुरःसरः । त्वं याहि स्वेच्छया कान्ते प्रकृतिं स्वां परित्यज॥५२	नोपलभ्यते	नोपलभ्यते

१३. जलन्धरस्य मायारूपपरित्यागः

श्रीपाद्मे पुराणे
सप्तदशेऽध्याये

पार्वत्या मायाशिवपरीक्षार्थमादिष्टा जया गौरीरूपेण शिवमुपगता । तत्र मायाशिवदशावर्णनम्—

तामायान्तीं स दृष्ट्वा च भृशं मन्मथपीडितः॥१३॥
चकाराऽऽलिङ्गनं तस्या गौरीरूपेण भावयन् ।
ततो जालंधरः सद्यो वीर्यं स्वं प्रममोच ह ॥१४॥
तया स प्रोदितो दैत्यो न त्वं रुद्रो भविष्यसि॥१५॥
अल्पवीर्योऽधमाऽऽचारो नाऽहं
गौरी हि तत्सखी ॥१६॥

जया पार्वतीं प्रत्युवाच—

देवि जालंधरो ह्येष न शम्भुस्तव वल्लभः ॥१८॥

चतुरधिकशततमेऽध्याये

कामार्तः स जगामाऽऽशु
यत्र गौरी स्थिताऽभवत् ॥२२॥
यावद् ददर्श चार्वङ्गीं पार्वतीं दनुजेश्वरः ।
तावत् स वीर्यं मुमुचे
जडाङ्गश्चाऽभवत्तदा ॥२३॥
अथ ज्ञात्वा तदा देवी दानवं भयविह्वला ।
जगामान्तर्हिता वेगात्
सा तदोत्तरमानसम् ॥२४॥

श्रीलक्ष्मीनारायणसंहितायाम्
अष्टाविंशत्यधिकत्रिशततमेऽध्याये

आसुर्या मायया रुद्रो भूत्वा गृहान्तरं ययौ ।
आयान्तं रुद्रमालोक्य पार्वती भववल्लभा ॥७४॥
सुरतेच्छुं च तं ज्ञात्वा गृहे पर्यंकगाऽभवत् ॥७५॥
यावद् ददर्श तावत् स
वीर्यं स्रावितवान् जडः ॥७६॥
तस्मान्नायं महादेवः किन्त्वन्यो दानवो भवेत् ।७८।
इति विचार्य सहसा भीतेवादृश्यतां गता ॥७९॥

१४ वृन्दायाः रक्षकत्वेन बिष्णुकृतमुनिना सह परिचयः

षोडशेऽध्याये

भरद्वाजात्मजोऽहं वै देवशर्मेति विश्रुतः ।
त्रिहाय भोगानखिलान्वनं घोरमुपागतः ॥१३॥
अनेन बटुना सार्धं मम शिष्येण कामगः ॥१४॥

नोपलभ्यते

एकोनत्रिंशदधिकत्रिशततमेऽध्याये

मुनिः प्राह भरद्वाजात्मजोऽहं प्रब्रवीमि ते ॥२१॥

१५. वृन्दाविभीषिकार्थागतकृत्रिमराक्षसवर्णनम्

पञ्चदशेऽध्याये

एतस्मिन्नन्तरे प्राप्तो राक्षसो भीषणाकृतिः ।
त्रिपादः पञ्चहस्तश्च सप्तनेत्रोऽतिदारुणः ॥६५॥
पिङ्गलो व्याघ्रकर्णश्च सिंहस्कन्धस्तथाननः ।
विहंगेशसमाः केशाः लम्बन्ते रुधिरारुणाः ॥६६॥
तं दृष्ट्वा पद्मकोशाङ्गी
सहसा सभयाऽभवत् ॥६७॥

पञ्चाधिकशततमेऽध्याये

ततो भ्रमन्ती सा बाला ददर्शातीव भीषणौ ।
राक्षसौ सिंहवदनौ दंष्ट्रानयनभासुरौ ॥८॥
तौ दृष्ट्वा विह्वलातीव
पलायनपराऽभवत् ॥९॥

एकोनत्रिंशदधिकत्रिशततमेऽध्याये

वनाद् वनान्तरं भ्रममाणाददर्श भीषणौ ।
राक्षसौ सिंहवदनौ प्रेरितौ विष्णुना निजौ ॥१४॥
सेवकौ मायया कल्पौ
दृष्ट्वा साऽतीव विह्वला ।
पलायनपरा रक्षाकर्तारं प्रति धावति ॥१५॥

१६. वृन्दायाः विष्णुं प्रति शापः

श्री पाद्मेपुराणे
षोडशेऽध्याये

वृन्दाया उक्तिः—

रणे बद्धोऽसि येन त्वं जीवन्मुक्तः पितुर्गिरा ।
विविधैः सत्कृतो रत्नैर्युक्तं तस्य हृता वधूः ॥५३॥
पतिर्धर्मस्य यो नित्यं परदाररतः कथम् ।
ईश्वरोऽपि कृतं भुङ्क्ते कर्मेत्याहुर्मनीषिणः॥५४॥
अ मोहं यथा नीता त्वया मायातपस्विना ।
तथा तव वधूं मायातपस्वी कोऽपि नेष्यति ॥५५॥

पञ्चाधिकशततमेऽध्याये

धिक् तवेदं हरे शीलं परदाराभिगामिनः ।
ज्ञातोऽसि त्वं मया सम्यङ्
मायाप्रच्छन्नतापसः ॥२८॥
यौ त्वया मायया द्वाःस्थौ
स्वकीयौ दर्शितौ मम ।
तावेव राक्षसौ भूत्वा
भार्यां तव विनेष्यतः ॥२९॥
त्वं चापि भार्यादुःखार्तो
वने कपिसहायवान् ।
भ्रम सर्पेश्वरेणायं
यस्ते शिष्यत्वमागतः ॥३०॥

श्रीलक्ष्मीनारायणसंहितायाम्
एकोनत्रिंशदधिकत्रिशततमेऽध्याये

सा निर्भर्त्स्य रुषा युक्ता विष्णुं वचनमब्रवीत् ॥५१॥
धिगस्तु ते परदाराभिमर्शिन् कपटाकृते ।
धर्मपुत्रो हरिर्भूत्वा ह्यधर्मं कृतवान् स्वयम् ॥५२॥
फलं भुंक्ष्व ददाम्यत्र शापं ते त्वं तथा भव ।
यौ त्वया मायया चात्र दर्शितौ राक्षसौ मम॥५३॥
तावेव तव भार्यां च हरिष्यतो हि राक्षसौ ।
त्वं चापि भार्यादुःखार्तो
वने कपिसहायवान् ॥५४॥
भ्रमाऽनेन च सर्पेण सह यस्तेऽत्रसेवकः ॥५५॥

१७. वृन्दायाः मोक्षपदम्

षोडशेऽध्याये

यत्र वृन्दा परित्यज्य देहं ब्रह्मपथं गता ।
आसीद् वृन्दावनं तत्र गोवर्धनसमीपतः ॥७२॥

षडधिकशततमेऽध्याये

ततः सुहृष्टाः सुरसिद्धसंघाः
प्रगृह्य वीजानि विचिक्षिपुश्च ।
वृन्दाचिताभूमितले स यत्र
विष्णुः सदा तिष्ठति सौख्यवृत्तिः॥२८॥

एकोनत्रिंशदधिकत्रिशततमेऽध्याये

वृन्दा तुलसी सा वृक्षरूपा पृथव्यां ह्यजायत ।
अन्ते वै यादृशी वृत्तिर्गतिश्चापि च तादृशी॥६५॥

१८. जलन्धरस्य शोकाकुलत्वम्

श्रीपाद्मेपुराणे
सप्तदशेऽध्याये

चण्डमुण्डयोः जलंधरं प्रत्युक्तिः—
जितः शुम्भो हतं सैन्यं देवरूपेण ते रणे ।
एह्येहि कुरु सङ्ग्रामं न
त्वं प्राप्नोषि पार्वतीम् ॥२६॥
पञ्चाननस्य महिषीं कथं प्राप्नोति जम्बुकः ।
अन्धकारः कथं राजन्
प्राप्नोति सवितुः प्रभाम् ॥२७॥
तव जालन्धरात् पीठात् हृता राज्ञी मुरारिणा ।
इति संश्रूयते वार्ता तस्मात्त्वं कुरु संगरम् ॥२८॥
दुर्वारणस्योक्तिः—
राजन् यत् क्रियते कर्म तत्तथैव तु भुज्यते ।
त्वं हर्तुमागतो गौरीं हरिणा ते हृता वधूः ॥३५॥

नोपलभ्यते

श्रीलक्ष्मीनारायणसंहितायां
त्रिंशत्यधिकत्रिशततमेऽध्याये

जलंधरो वृन्दाज्वलनं श्रुत्वा रुरोद जगाद च—
येन यत् क्रियते कर्म तथा तेनैव भुज्यते ।
मया तु वञ्चिता गौरी हरिणा वञ्चिता वधूः ॥२॥
मायामाश्रित्य मे पत्नी
विष्णुना वञ्चिता ध्रुवम् ॥५॥

२९. जामातृनिन्दा

सप्तदशेऽध्याये

गृहे स्थितस्य जामातुर्विश्वसेन्नैव बुद्धिमान् ।
नूनं तस्मै प्रदत्वा च कन्यकां विसृजेद् बुधः ॥३३॥
जामातरं गृहे नैव स्थापयेत् सर्वथा नरः ।
धनदारादिकं सर्वं स गृह्णाति शनैः शनैः ॥३४॥

नोपलभ्यते

त्रिंशत्यधिकत्रिशततमेऽध्याये

स्वसृपतिं गृहे नैव स्थापयेत् सर्वथा जनः ।
धनदारादिकं सर्वं स गृह्णाति शनैः शनैः ॥३॥
गृहे स्थितस्य जामातुर्विश्वसेन्नैव बुद्धिमान् ।
नूनं तस्मै प्रदत्वा च कन्यकां विसृजेद् बुधः ॥४॥

श्रीलक्ष्मीनारायणसंहितायां जलन्धरवृन्दाख्याने समागतानि नामान्यधः प्रदर्श्यन्ते । तत्र—

नारायणो लक्ष्मी राधिका वृन्दा शंकरः सती कीर्तिमुखः कार्तिकेयो गणेशो वीरभद्रो भैरवो महारुद्रो महेन्द्रो ब्रह्मा बृहस्पतिः हिरण्यकशिपुः प्रह्लादो विरोचनो नारदो दुर्वासा सूर्यश्चन्द्रो वह्निः कामश्चण्डी काली कृत्या ब्राह्मी माहेश्वरी वाराही वैष्णवी माहेन्द्री कौमारी योगिन्यो जलन्धरः खड्गरोमा कालनेमिः शुक्रो राहुः केतुः बलाहकः प्रचण्डो घस्मरः शंखासुरः शुम्भो निशुम्भः कपीशो जम्भः शरभ इति सुरासुरनामानि ।

गरुडो नन्दी हंसो मूषक ऐरावत उच्चैःश्रवा महिष इति वाहननामानि ।

सुरासुरगणानां नामानीमानि सन्ति—

देवाः गन्धर्वाः सिद्धाः विनायकाः वेताला: प्रमथाः कूष्माण्डाः भैरवाः प्रेताः भूताः पिशाचकाः राक्षसाः सर्पा अप्सरसः पर्यः डाकिन्यः कृत्यकाः योगिन्य इति शम्भुगणाः ।

असुराः कंकाः कम्बुवंश्याः कालकाः कालकेयास्तालजंघाः दौर्हृदा इति जलन्धरपक्षगाः ।

मन्त्रशक्तिमायैन्द्रजलिकातिरिक्तानि शस्त्राणीमानि वर्णितानि सन्ति—

कौमोदकी गदाऽग्निचक्रं सुदर्शनं शार्ङ्गं धनुः नन्दकः खड्ग इति विष्णोरायुधानि ।

अर्धचन्द्र उल्का कुन्तः खड्गः खण्डो गदा चक्रं तोमरस्त्रिशूलं धनुः नाराचः पट्टिशः परशुः परिघः पल्लता पाशः पाषाणः बाणो भूशुण्डी मुसलो लोहस्तम्भो वज्रं वृक्षः शतघ्नी शतच्छदः शूलानि—इति सामान्यायुधानि ।

वाद्यविशेषनामानीमानि—

डमरुः भेरी मृदङ्गः रणशृङ्गं वेणुः शंख इति ।

उपकरणानीमानि वर्णितानि सन्ति—

कंकणः कल्पश्चर्म चामरं छत्रं पारिजातको मणिमौक्तिकं रत्नं रुद्राक्षः शेषराजमणिः सुवर्णं सुवर्णयष्टिः हीरक इति ।

स्वर्गपातालपृथिवीगोलोकेषु वर्णितानीमानि महत्त्वस्थलानि वर्तन्ते—

अमरावती कल्पद्रुममहावनं कैलासो द्रोणाचलो नन्दनं मन्दरो मेरुर्लवणाम्भः सिंहारण्यमिति ।

अशुभस्वप्नानां निरूपणमस्यां संहितायां जलन्धरवृन्दाख्यान एकोनत्रिंशदधिकशततमेऽध्याये वर्तते । तद् यथा—

शंकरेण जलन्धरशिरःकर्तनं गृध्रेणाऽऽकृष्टनयनं छिन्नकर्णाग्रनासिकं महिषारूढं तैलाभ्यक्तं दिगम्बरं कृष्णपुष्पाभूषणाढ्यं मुण्डं भक्षयन्तीं मुक्तकेशीं कृष्णवर्णमिरुणाम्बरां कालीं सच्छिद्रं निष्प्रभमुदितमादित्यं सर्वमनिष्टं स्वप्ने ददर्श विष्णुमायामोहिता वृन्दा । स्वप्ना इमे वैधव्यसूचकाः ।

आख्यानेऽस्मिन् स्तोत्रद्वयमुपलभ्यते । प्रथमं तावच्चतुर्विंशत्यधिकत्रिशततमेऽध्याये षट्त्रिंशत्तमश्लोकादारभ्यैकोनचत्वारिंशत्तमश्लोकपर्यन्तं षट्श्लोकात्मकं बृहस्पतिकृतं शिवस्तोत्रम् । द्वितीयं तावत् पञ्चविंशत्यधिकत्रिशततमेऽध्याये त्रिसप्ततितमश्लोकादारभ्य सप्तनवतितमश्लोकपर्यन्तं पञ्चविंशतिश्लोकात्मकं देवाराधनं श्रीलक्ष्मीनारायणस्तोत्रम् ।

आख्यानेऽस्मिन् मनोहारि सूक्तिस्रग्गुम्फनमप्युपलभ्यते ।

प्रदर्श्यतेऽत्र तन्निदर्शनम्—

१. पतिव्रताप्रशंसा

पतिव्रताया धर्मोऽस्ति दुःखं न गण्यते क्वचित् ।
सपत्नीजं सुखं पतिपरा तु गणयेत् सदा ।। ३२४।९ ।।

पातिव्रत्यं महान् धर्मः रक्षाकृन्मोक्षदस्तथा ।। ३२८।८४ ।।

२. शुक्लनारीप्रशंसा

श्रेष्ठेन जायारत्नेन सूर्यचन्द्रनिभेन वै ।
भवनानि प्रशोभन्ते राज्ञो न स्मृद्धिभिस्तथा ।। ३२६।१०७ ।
यद्वा किं शुभ्रदासीभिर्यशश्चेन्न विवाहिता ।
शुक्लां जायां विना सर्वं फेरुराजगृहोपमम् ।। ३२६।१०६ ।

३. भक्तिप्रशंसा

भक्त्याधीनो भवत्येव वशी नान्येन केनचित् ।। ३२६।७४ ।।

४. कर्मप्रशंसा

येन यत्क्रियते कर्म तथा तेनैव भुज्यते ।। ३३०।२ ।।
अन्ते वै यादृशी वृत्तिर्गतिश्चापि च तादृशी ।। ३२६।६५ ।।
सर्वोऽपि भुंक्ते स्वं कर्म लक्ष्मि तद् विद्धयसंशयम् ।
यावद् देहोऽस्ति कर्माणि सुखदुःखादि वर्तते ।। ३३०।६४ ।।
यादृशो यस्य संयोगो बन्धनं चापि तादृशम् ।
वृन्दायाः कृतयोगेन विष्णोश्चापि सुबन्धनम् ।। ३३०।६६ ।।

५. वीरप्रशंसा

शूराणां रणयज्ञो वै पुनर्नायाति नाऽऽप्यते ।। ३२६।२६ ।।
यत्र भूता राक्षसाश्च वेतालाश्च विनायकाः ।
योद्धारस्तत्र किं किं न संभाव्यते घटाऽघटम् ।। ३२८।३१ ।।
रणमृत्युः प्रशूराणां स्वर्गदो मोक्षदोऽपि च ।
आभिमुख्यैस्तु निधनं शस्त्रैरमृतदायकैः ।। ३२८।६० ।।
मा वैमुख्ये मृत्युरस्तु यो ददेन्नारकीं गतिम् ।
सूर्यस्य मण्डलं भित्वा यायाद् रणी परं पदम् ।। ३२८।६१ ।।
परिव्राट् स महायोगी यो रणे सम्मुखे हतः ।
अनिवार्यस्य वै मृत्योर्भयं कार्यं न वै बुधैः ।। ३२८।६२ ।।
उत्पत्त्या सह देहस्य मृत्युलग्नोऽस्ति वै ध्रुवः ।। ३२८।६३ ।।

६. भीरुनिन्दा

किं युष्याभिर्मातृदुग्धपानकृद्भिः पलायितैः ।
पृष्ठतश्च हतैः किं वै स्वर्गो मोक्षो न वाऽऽप्यते ।। ३२८।५६ ।।

७. कामगर्हा

हतधियोऽत्र लोके वै मातृकामाऽभिचिन्तकाः ।
सर्वे जलन्धरा बोध्या विष्णुमायाविमोहिताः ।। ३२७।२३ ।।
सतीष्वपि च दासीषु परांगनां समीहते ।
सोऽपि जलन्धरो बोध्यो विनाशमुखमन्त्रितः ।। ३२७।२४ ।।

८. जामातृनिन्दा

स्वसृपतिं गृहे नैव स्थापयेत् सर्वथा जनः।
धनदारादिकं सर्वं स गृह्णाति शनैः शनैः॥ ३३०।३॥
गृहे स्थितस्य जामातुर्विश्वसेन्नैव बुद्धिमान्।
नूनं तस्मै प्रदत्वा च कन्यकां विसृजेद् बुधः॥ ३३०।४॥

९. मायाचारः

पार्वती प्राह लक्ष्मीशं तादृशाय तु तादृशम्॥ ३२८।८२॥
तेनैव दर्शितं कृत्यं कुरु तस्मिन् तथैव हि॥ ३२८।८३॥

१०. विचाराः

न हि सर्पं उज्झितां कञ्चुकीं धत्ते पुनश्च ताम्॥ ३२४।४७॥
सर्वेऽपि चञ्चला लोलास्तत्र किं किं न जायते॥ ३२६।२॥
प्राप्तव्यं वापि मर्तव्यमिति कृत्वा प्रयत्यताम्॥ ३२६।१२६॥
भिक्षाशिनः कुतो रत्नं भार्यारत्नं तु भूभृतः॥ ३२७।१६॥
विषप्राशोत्तरात् पूर्वं वरं विषविनाशनम्।
दुष्टकृद्घर्षणात् पूर्वं वरं दुष्टे प्रदण्डनम्॥ ३२७।५२॥
उपस्थितं परित्यज्याऽन्याऽनुगो वै विनश्यति॥ ३३०।६॥

अस्यां संहितायां जलन्धरवृन्दाख्यानस्य माहात्म्यमेवं वर्णितमस्ति त्रिंशत्यधिकत्रिशततमाऽध्यायान्ते—

य इदं हि पठेन्नित्यं पाठयेच्छृणुयात्तथा।
सद्गतिः स्वर्गवासश्च मोक्षस्तस्य तथा भवेत्॥ १११॥

श्रीपाद्मे पुराणे जालन्धरोपाख्यानमाश्रित्यैतिहासिकभौगोलिकार्थनीतिप्रभृतिव्यवस्थाविषयकं चिन्तनं देशकालनिरूपणमस्त्रशस्त्रसङ्ग्रवर्णनं च यदस्ति तत् संवादिविसंवादिरूपेण विस्तरभिया नाऽत्र समुपस्थाप्यते। एतद्विषये पुराणपण्डितैरालोचनाग्रन्थेषु यत्र तत्र प्रकाशिता सामग्री विद्यते। सर्वभारतीयकाशिराजन्यासप्रकाशितायां पुराणमित्यभिधानशोधपत्रिकायांगवेषणात्मका एतद्विषयका लेखाः वर्तन्ते।

श्रीलक्ष्मीनारायणसंहितान्तर्गतजलन्धरवृन्दाख्यानमाश्रित्य शैलीसौन्दर्यकलाचित्रप्रबन्धविषयकमलङ्कारछन्दोविचिति पदवाक्यप्रबन्धविषयकं चाऽऽलोचनं विस्तरभियात्र नोपस्थापितम्। अस्याः संहितायाः सम्पादने कृतभूरिश्रमैः पण्डितवर्यैः स्वामिकृष्णवल्लभाचार्यैः महदुपकृतं संस्कृतवाग्विलासिनाममन्दानन्दसन्दोहाय। एतेषामाचार्यवर्याणामिदं पावनं कृत्यं यदि कोऽपि पुण्यसंभारसंभृतः पुरुषः तात्त्विकविवेचनपुरस्कृतविविधप्रसङ्गप्रदर्शनपुरस्सरं निपुणतमया सूक्ष्मेक्षिकया प्रतिस्थलं समालोचयेत्, मन्ये तदैतदीया स्वाभाविकी प्रतिभा प्रतिदिशमुत्तरोत्तरमतितरां प्रतिभायात्।

लब्धप्रचुरप्रशंसेयं श्रीलक्ष्मीनारायणसंहिता विद्वज्जनेषु। सर्वथा यथार्थमेव प्रतिपादितमत्रैव शुभाशंसनप्रसङ्गे स्वाभिप्रायं प्रकटयद्भिः पाठालोचनमर्मज्ञैः पण्डितवर्यैः आचार्यव्रजनन्दनमिश्रमहाभागैः—

समपादि तथाऽनेन श्रीश्वेतायनसंहिता।
षड्विंशतिसहस्रैकलक्षश्लोकसुभूषिता॥
यत्राऽनेकविधाख्यानं लक्ष्मीनारायणाश्रयम्।
निबद्धं शोभतेऽत्यर्थं भावसंशुद्धिकारणम्॥

तत्त्वमुक्ताकलापस्य भूमिका

सकलदर्शनवेदान्तन्यायादिविद्यानिधिः

महामहोपाध्याय पं० कमलनयनाचार्य्यः

मैसूर, दक्षिण

ग्रन्थोऽयं बोधायनीयार्थसिद्धान्तानुसारी विशिष्टाद्वैतब्रह्मनिरूपणपरः, श्रीवेदान्ताचार्याऽपराभिधानेन कवितार्किकसिंहेन सर्वतन्त्रस्वतन्त्रेण श्रीवेंकटनाथदेशिकेन विरचितः रामानुजस्वामिमान्यपदार्थप्रतिपादकः न्यायादिरीत्या ग्रथितः अन्यमतीयपूर्वपक्षादिनिरासनपरः परिष्कृतबुद्धीनामतीव हृदयंगमो वर्तते। दार्शनिकपद्धतिपरोऽयं ग्रन्थः श्लोकाऽन्वयेष्वपि कठिनो भवतीति तत्सारल्यार्थं यावच्छास्त्रनिष्णातनव्यन्यायधुरन्धरपण्डित श्रीकृष्णवल्लभाचार्येण सान्वया किरणावली टीकाविरचिता, मह्यं विलोकनार्थमर्पिता, मया दत्तदृष्ट्याऽन्तःपदार्थीयवादादिमयी सुप्रशंसार्हा चाऽध्ययनार्थिनामिव पण्डितानामपि हृदयंगमेति मुद्रणार्थमाज्ञापिता। पाण्डित्यपूर्णा किरणावली व्याख्या जीवेश्वरमायाज्ञानादितत्त्वानामतीवप्रतिपादनपरायणा वर्तते। ग्रन्थस्याऽस्य सर्वार्थसिद्धिगद्यभागोऽपि श्लोकवत् विद्वत्तापूर्णः पद्यकारेणैव पद्यार्थपूरकः कृतः, दार्शनिकोऽपि प्रातिभो नैयायिको नव्याऽभ्यासी तद्विषयपारगो भवेत् अपूर्णस्तु स्यादपूर्ण एव, अपूर्णानामपि पारगामित्वं कथं स्यादध्ययनलाभश्च तत्त्वोपार्जनफलात्मकः कथं स्यादित्यवधार्यैव किरणावलीरचनाप्रयत्नः कृतः, किरणावलीकारोऽपि महाविद्वान् कवलीकृतसर्वदर्शनविद्यो न्यायतर्कनिपुणो नव्यशास्त्रार्थनिपुणतमो नव्यदर्शनाद्याविष्कारव्यासमूर्तिरूपः भाष्यटीकाकाव्यादिषु तु स्वयं सरस्वतीमूर्तिः प्राग्भवीयो वेदप्रतिमः स्वयमीशो वा पदार्थतत्त्वादानप्रदानविनिमयेषु सर्वथा सर्वतन्त्रस्वतन्त्रोऽस्ति पश्चिमकाशीस्वरूपोविद्वद्धौरेयः किरणावलीभिर्भाष्यैः पद्यसंहिताभिर्गद्यग्रन्थैश्च विश्वविख्यातकीर्तिरिदानीं स्वयं शंकरो वा संकर्षणो वा कृष्णद्वैपायनो वा तत्समो वा बृहस्पतिवर्यो वर्तते इत्युत्कृष्टतमोहि प्रमोयते, प्रत्यक्षतयाऽपि कश्चिद्दिव्यपुरुषः प्रकाशते। जडद्रव्यसरः प्रथमः, प्रकृतिः कालश्च जडद्रव्ये। अजडद्रव्यं पराक् नित्यविभूतिः, धर्मभूतज्ञानं च। एवम् अजडद्रव्यं प्रत्यक् जीवेश्वरौ। प्रथमः सरो जडद्रव्यप्रतिपादकः। पञ्चमः सरः अद्रव्यप्रतिपादकः, अद्रव्याणि सत्त्वरजस्तमांसि शब्दस्पर्शरूपरसगन्धाः संयोगः शक्तिश्चेति। द्वितीयः सरो नियाम्यस्य जीवस्य प्रतिपादकः। तृतीयः सरो नायकस्य नियामकस्य परमेश्वरस्य प्रतिपादकः। चतुर्थः सरो बुद्धेः धर्मभूतज्ञानस्य प्रतिपादकः। एतद्विषयेषु गौतमकाणादकपिलपतञ्जलिजैमिनिशांकरजैनबौद्धयादवप्रभृतितत्तन्न्यायसिद्धमतेषु तत्तद्युक्तिन्यायप्रमाणादिभिर्निरस्तेषु सत्सु श्रीरामानुजाचार्यादिसम्मतेषु तेष्वेव पदार्थेषु सिद्धेषु सत्सु ग्रन्थोऽयं निर्भरविराममेति। अस्य किरणावल्यपि तत्प्रकाशकर्त्री तथैव परम्परायां विराममेति। ख्यात्यादिवादा अत्र प्रमापरका अप्यालोडिताः। श्रुत्याश्रयं सर्वं सिद्धमेव स्मृतमिति भक्तौ पर्यवसानं महाप्रयत्नात्मकव्यापारस्याऽस्येति। विशिष्टवेदान्तपरकः प्रौढदर्शनात्मकोऽयं ग्रन्थः प्रौढदार्शनिकैः श्रीकृष्णवल्लभाचार्यैः पद्यकिरणावल्या विभूषितः सरलीकृतोऽध्येतृणामन्तःप्रवेशप्रद इति। एभिर्विद्वद्भिरपरोऽपि मौलिको ग्रन्थो विशिष्टन्यायशास्त्रात्मको नव्यदर्शनात्मकस्तत्त्वप्रभावलीनामा निर्मितः परिष्कृततत्त्वजिज्ञासूनां महोपकारकृदित्येतद्ग्रन्थद्वयं सर्वोर्वीरिततया विजयेते। मन्ये विदुषां परीक्षकाणां चाऽत्राऽऽस्था सुप्रवृत्तिश्च भविष्यतः, लेखनसाफल्यं च स्यादिति दिगन्तकीर्तिविद्वांसावेतौ प्रख्यातावनन्यसमौ विजयेते॥ विशिष्टाद्वैतप्रतिपादकावेतौ विलोक्य विशेषतः प्रसीदामि चेति।

श्वेतायनसंहिता भूमिका

स्वामिपादानां न्यायसांख्यशिष्यः

डॉ० पं० महेन्द्राचार्य्यः

एम्. ए. डी. फिल्., पी-एच. डी-डी. लिट.

यह संस्कृत पद्य १, २६००० संख्या में विशाल ग्रन्थ है, संहिता का तात्पर्य है, प्राचीन अर्वाचीन दिव्य लौकिक तमाम गम्य अगम्य विद्याओं का संग्रह जिसमें हो, नवीन सब कुछ हो, भविष्य के भी वृत्तान्त दिव्यदृष्टि से निहित हों। कृतसन्तान त्रेतासन्तान द्वापरसन्तान तिष्यसन्तान खण्डों में लिखा गया ग्रन्थ खण्डनामों से ही चतुर्युग वृत्तान्तों से परिपूर्ण होना बतलाता है, अनुपयुक्त कोई भी बाते नहीं होतीं, सभी सुसंगत बोधदायक उपयुक्त होती हैं। विश्वविद्यालय में जितने प्रकार पढ़ाये जाते हैं, उनमें जो-जो कुछ संकलित रहता है, सभी बातें संहिता में रहती हैं, एक महाविश्वविद्यालय या जगत के विद्यालय संहिता रूप में मूर्तिमान् होने का कथन असंगत नहीं है, वाइस चान्सलर महाविद्यालय की मूर्ति है, महाविद्यालय देश के सभी विद्यालयों की मूर्ति है, विद्यालयें सभी ग्राम-ग्राम की कलाओं की मूर्तियाँ हैं, हरेक कलाएँ युगयुगान्तरों की मूर्तियाँ हैं, हरएक युग सृष्टियों की मूर्तियाँ हैं, परम्परा से सृष्टियों की मूर्ति संहिता है, अतः संहिता में कुछ भी न हो ऐसा नहीं होता, एक में न हो वह अन्य संहिता में होता है। समग्र सृष्टि का समावेश संहिताओं में है, संहिताओं का समावेश सर्वज्ञ पुरुषों में योगिजनों में होता है, संहिता योगिजन के प्रमाण से प्रामाणिक है। संहिताप्रमाण में विद्वानों के हृदय एकमेकसे प्रमाणित हो जाते हैं, आगम निगम पंचरात्र इतिहास पुराण कौलतन्त्र शार्ङ्गधर भार्गव पाशुपत बार्हस्पत्य औशनस आथर्वण धानुष्क भैषज सांग्रामिक कलाकलाप धर्मशास्त्र तत्त्वविज्ञान भौतिकविकास यानविज्ञान सस्यविज्ञान शारीरविज्ञान आदि आदि संहिताएँ हैं, वे सम्मिलित या पृथक् जहाँ कहीं हों सभी प्रजा की शिक्षा के लिये गुरुमूर्तियाँ हैं। वर्तमान समय में भी वैसी संहिता की मूर्ति दिव्यपुरुष श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी सौराष्ट्र में विद्यमान हैं, वे श्वेतायन व्यासमूर्ति हैं, सभी विद्याओं के खजाने एकत्रित हैं, 'परः सन्निकर्षः संहिता'। (पाणि० १।४।१०९), 'पदप्रकृतिः संहिता' (ऋ० प्रातिशा० २।१) पूर्व पश्चिम का सम्बन्ध होना, अथवा पदों की प्रकृति संहिता होती है, इसका कारण यह है कि संहिता से ही पद किये जाते हैं, अतः संहिता प्रकृति कहाती है, इसके विकाररूप पद होते हैं, अथवा दूसरी रीति से 'संहिता की प्रकृति पद है, संहिता विकार है, इसका कारण यह है कि—पद ही हननविषय होने से संहिता बनती है, अतः पद प्रकृति है, विकार संहिता है। 'पदप्रकृतीति सर्वचरणानां पार्षदानि' सभी शाखाओं की परिषद् में जो जो जिस शाखा में नियत किये हों वे पद उन संहिताओं की प्रकृति गिनी जाती हैं, वहाँ वैसी जरूरत है। किन्तु संहिता को प्रकृति मानना पद पद को विकृति मानना उत्तम है, क्योंकि—वेदमन्त्र मन्त्रदर्शी ऋषि के दृष्टिविषय संहिता से अभिव्यज्यमान होता है अतः मन्त्र शब्द विकार है, संहिता प्रकृति है, संहित हुआ शब्द का अध्ययन अध्यापन होता है, और यज्ञ कर्म में भी संहिता द्वारा मन्त्र जोड़े जाते हैं, अतः संहिता प्रकृति है यह प्रामाणिक है, यदि पद ही प्रकृति होता तो पदों से ही मन्त्र कर्म में लगा दिये जाते, संहिता की जरूरत ही नहीं पड़ती, किन्तु संहिता से ही कर्म में मन्त्र-नियोग होता है अतः संहिता प्रकृति है। संहिता वर्णों में आकांक्षा-विषयता स्वरूप है 'राम' पद में रा के साथ म को आकांक्षा 'राम' पद बोलने वाले की है, आकांक्षा

से 'रा-म' दोनों जुटने से 'राम' पद शब्द हुआ, तब दशरथ पुत्र 'राम' रामचन्द्र बलराम व परशुराम आदि वक्ता की इच्छा मुजब स्वीकृत अर्थ होता है। इस रीति से वर्णों का शब्द, शब्दों के वाक्य, वाक्यों के प्रकरण, प्रकरणों के खण्डसमूह, इनके ग्रन्थ संहिताएँ होती हैं। अतः संहिताएँ पहले से ही अर्थानुसन्धान पर सम्पादित की जाती हैं, वाक्यरचनाओं की आनुपूर्वीयाँ अव्यवहित-पूर्वोत्तरताएँ असंख्य बनायी जाती हैं, फिर भी अर्थानुसार शब्द वर्ण आदि तो अनादिकाल से आकाशात्मक चले आते हैं, वे वेदसंहिताएँ तथा अन्य संहिताएँ सम्पादित की गयीं मनाती हैं, इस न्याय से 'श्रीलक्ष्मीनारायणसंहिता' भी नित्य श्रीनारायण के ज्ञानमयी अनादिसिद्ध ही श्वेतायनव्यास श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ने सम्पादित की है, वेद समप्रमाण हैं, वेद वैदिक वृत्तान्तों से सम्भूत है, उच्छिन्न प्रच्छन्न आविर्भूत अनाविर्भूत प्रचलित अप्रचलित तिरोभूत भविष्यत् आदि आदि वृत्तान्तमयी श्वैतायनीयसंहिता वर्तमान युग में भगवदंशात्मक आचार्यश्रेष्ठ सृष्टिगुरुभगवत्स्वरूप श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ने भगवद्बुद्धि से प्राविर्भूत विज्ञान उपार्जन करके यह जगत् के लिये भगीरथ प्रयत्न किया स्तुत्य है अभिनन्दननीय है। इनमें विषय-परमात्मा उनके धाम उनके मुक्त मुक्तिस्थान शक्तियाँ सामर्थ्य ऐश्वर्य चमत्कार प्राविर्भाव महामाया में प्रवेश माया मायिकतत्त्व सात्त्विकता मलिनता राजसत्ता इनमें आत्माओं के अस्तित्व महाप्रलयोत्तर सृष्टिक्रम सगुण ईश्वर ईश्वरों के स्थान विभाग कक्षाएँ तत्त्वों की कक्षाएँ ईश्वरों के काम प्रधान पुरुष महत्तत्त्व भूमापुरुष ईश्वर महाविष्णु हिरण्यगर्भ वैराज ब्रह्मा विष्णु महेशों की कोटियाँ उनके धाम लोक पार्षद शक्तियाँ देवियाँ ईश्वराणीयाँ लोकपाल दिक्पाल वैकुण्ठ गोलोक अव्याकृत श्वेतद्वीप बदरिकाश्रम रुद्रसृष्टि सनकादिक सृष्टि ऋषि महर्षि सृष्टि पितृ सृष्टि देव सृष्टि व्योम सृष्टि ग्रह नक्षत्र तारा धूम्रकेतु, उनके नजरें मार्ग छायाँ असर उत्पात भौतिकस्थितियाँ काल समय सृष्टियाँ मन्वन्तर इन्द्र राजा प्रजा ज्ञातियाँ तीर्थ खण्ड सतीयाँ भक्तजन उपासनाएँ ज्ञानविज्ञान धर्म भागवतधर्म व्यवहार चमत्कारिक वृत्तान्त तपश्चर्यायें मन्त्राऽनुष्ठान यज्ञकाण्ड संस्कारकाण्ड शिक्षणकाण्ड दण्डकाण्ड पूजन सम्मान समाधियाँ सिद्ध योगी मुनि सन्त वैरागी परोपकारी दानी सतीयाँ पतिव्रताएँ कन्याधर्म पत्नीधर्म गृहधर्म आश्रम वर्ण संकर आदि के धर्म, मानवता कर्तव्य सद्गुण यम नियम धारणा ध्यान संमनन समाधिस्थिति वाक्सिद्धि संकल्पसिद्धि संकल्पसृष्टि दृष्टिसृष्टि स्पर्शसृष्टि मिथुनीसृष्टि आयु वृत्तियाँ जीविकाएँ काश्यपी प्रजाएँ दैत्य दानव राक्षस भूत प्रेत पिशाच तामस सृष्टियाँ कुलदेवीयाँ कुलपर्वत शीलव्रत अविद्यासृष्टि अज्ञान उनके पर्व ज्ञान के पर्व कलाएँ विकास कृषि व्यापार द्रव्य धातु आय व्यय सेवा माँ बाप गुरु आचार्य सम्प्रदाय परम्पराएँ रत्न मौक्तिक उपकरण साज-समाज साहित्य गायन वाद्यित्र स्वर व्यंजन विविक्ति भाषाएँ समरकलाएँ न्यायालय धर्मराज धर्मदूत देवदूत यमदूत रुद्रगण रोग अवस्थाएँ दायभाग् वंश विवाह उत्सव वर्ष ऋतुएँ पाक ओषधियाँ धन्वन्तरि-शास्त्र हयग्रीवविद्या अश्विनीकुमाररसायन पृथिवी समीकरण समुद्र द्वीप अरण्य रण नदियाँ खात अखात महायान आयुध सीमा साम्राज्य अदृश्य-देवता-सृष्टि अधर्मवंश अध्यात्मविद्याएँ मूर्तियाँ प्रतिमाएँ प्रतिष्ठा-पनविधि देवालय कला स्वर्ग नरक उनके साधन कर्मकाण्ड ज्ञानकाण्ड भक्तिकाण्ड व्यायाम शीलकाण्ड महाव्रत स्वाध्याय ईश्वराराधना सकाम-निष्काम-विभाग नर-नारीयुगलता महाकाल महामृत्यु खण्डप्रलय असंख्य खनियाँ उद्योगरीतियाँ काव्यमहोत्सव नृत्यमहोत्सव पशुयुद्धोत्सव सिंहशिकारपराक्रम अद्भुतचीजों का प्रदर्शन नाटकसमारोह कुंभ स्नान ग्रहण स्नान समारोह उपप्लव उनकी निवृत्तियाँ जपपद्धति हवन पारायण महाविद्यालय दैवी इतिहासें दैवीवाहन दैवीवृक्ष दैवीपुरुषों के प्राविर्भावों के निमित्त महारणसंग्राम भगवदवतारों के जीवन इतिहास देव असुरों के संग्राम इनाम नगरग्रामादिनिर्माणनाप भूगोलस्थितियाँ युगपरिवर्तन रीवाजपरिवर्तन राज्यपरिवर्तन मोक्षराज्य चान्द्रायणादि प्रायश्चित्त शुद्धियाँ कुमारदान पुण्यक्षेत्रमाहात्म्य श्राद्धतर्पणविधान अग्नि आदि के इतिहास कर्मविपाक भगवत्परिचय ज्योतिर्विज्ञान

स्वप्नविज्ञान शकुनविज्ञान ग्राम्य आरण्यक पशुविभाग गणिकादिशुद्धि सामुद्रिकपरिचय गणितविद्या कालमान क्षणादिविज्ञान परमाणुविज्ञान तत्त्वशक्तियों के नाप वायुविज्ञान यान्त्रिकविज्ञान विद्युद्विज्ञान वारिधिविज्ञान धातवीयखनिविज्ञान भूगर्भवारिविज्ञान सजीवबीजविज्ञान खाद्यपोषणविज्ञान महामार्ग विज्ञान आकाशवाणीविज्ञान प्रतिबिम्बविज्ञान प्रयोगविज्ञान अस्त्रविज्ञान शालग्रामशिलादिविज्ञान रेखाविज्ञान अश्वहस्तिशास्त्र रसायनतन्त्र रतिशास्त्र जड़ीबूटी विज्ञान प्रसूतिविज्ञान पारदशास्त्र तालमेलन-विज्ञान शिल्पविद्या भैरवीचक्रोपासना यक्षिणीसाधना इन्द्रजाल प्रदर्शन अलंकारविस्तर नायिकाशास्त्रं जन्तुशास्त्रं वनस्पतिशास्त्रम् भक्तभगवत्तादात्म्यशास्त्रम् आचारसर्वस्व उपनयनविधि दीक्षाविधान कुण्ड-मण्डपादि सर्वतोभद्रादि भक्तभक्तानिका गाथा शरणागति प्रपत्ति मुद्राधारण, नारायणबलि आदि। तथा कलि प्रान्त धर्म कर्म ह्रासादि। अनेक विषय अनादि सृष्टिओं में चले आते हैं वे संहिताओं में सम्पादित किये जाते हैं। ये विषय श्वैतायनीय संहिता में हैं।

ऋग्वेदसंहिता, कपिष्ठलकठसंहिता, तैत्तिरीयसंहिता, मैत्रायणीसंहिता, हिरण्यकेशीयसंहिता, पितृसंहिता, काण्वसंहिता, माध्यन्दिनसंहिता, वाजसनेयीसंहिता, यजुःसंहिता, जैमिनीयसंहिता, सामसंहिता, अथर्वसंहिता, अंगिरासंहिता, नारदीयसंहिता, बृहस्पतिसंहिता, मधुसूदनसंहिता, यमसंहिता, शाण्डिल्यसंहिता, अष्टावक्रसंहिता, शिवसंहिता, सूतसंहिता, गोरक्षसंहिता, घेरण्डसंहिता, याज्ञवल्क्य-संहिता, गर्गसंहिता, ब्रह्मसंहिता, अहिर्बुध्न्यसंहिता, ईश्वरसंहिता, जयाख्यसंहिता, पाद्मसंहिता, पारमेश्वर-संहिता, पौष्करसंहिता, बृहद्ब्रह्मसंहिता, भारद्वाजसंहिता, विष्णुसंहिता, सात्वतसंहिता, धनुर्वेदसंहिता, सुषेणसंहिता, काश्यपसंहिता, चरकसंहिता, पारदसंहिता, भेलसंहिता, वैद्य विनोदसंहिता, शार्ङ्गधर-संहिता, सुश्रुतसंहिता, हारीतसंहिता, कर्मविपाकसंहिता, नारदसंहिता, वाराहीसंहिता, भृगुसंहिता, लोमशसंहिता, वासिष्ठसंहिता, लाटीसंहिता, पुराणसंहिता, इत्यादि संहिताओं में भिन्न-भिन्न विषय वर्णित हैं, श्रीलक्ष्मीनारायणसंहिता में इनके अंश सुसंहित हैं। अतः सर्वमूर्धन्य है। बड़ा बहुश्रुत विद्वान् इसका थाह ले सकता है। भारत में ऐसे बड़े विद्वान् कई खनिओं में पड़े हुए हैं, स्वर्ण का नाई भारत में विद्वत् सूरिओं का पार नहीं है, वे इन विद्याओं को ताजी रखते जायेंगे। श्वैतायनीय व्याससंहिता ने माउन्ट एवरेस्टपना बतला दिया है। अपने स्वरूप में इनका परम विजय है। भारतसरकार के घर में ऐसे विद्वान हैं, इससे भारतसरकार का बड़ा गौरव है।

तर्कसंग्रहदीपिकाकिरणावली भूमिका

म० म० गुरुवर्य पं० करुणावरुणालयकणभाक् प्राध्यापक श्रीगिरीशशुक्लो न्यायाचार्यः

टेढ़ीनीम, सत्यनारायणमन्दिरम्, वाराणसी

भवति हि सर्वशास्त्रप्रवेशसाहाय्यदमपि न्यायशास्त्रं तत्तदर्थेषु गहनगभीरं चापि, तत्र पूर्वरूप-प्रसंगात्मकस्तर्कामृतस्तर्कसंग्रहः सप्तपदार्थीतिग्रन्था निरूपिताः, काश्यां प्रायशस्तर्कसंग्रहः पठ्यते पाठ्यते च, अन्यत्राऽपि तथैव विलोक्यते, तर्कसंग्रहे दीपिकाटीका मूलसारल्यार्थं रचिता, किन्तु दीपिका स्वयं कठिनार्थान् कुक्षीकृत्य विराजते, तदवगमार्थं सम्पूर्णा पराऽनपेक्षा विशदा टीका नासीदिति मनसि कृत्वा न्यायाचार्य श्रीकृष्णवल्लभाचार्येणाऽस्मद्गुरुवर्यश्रीवामाचरणभट्टाचार्यकृपाकणेन स्वयं स्पष्टार्था सुलिखिता, मयाऽपि दृष्ट्वा, संस्कृतलेखने परमोदारः श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहोदयः विशदीकृत्य स्पष्टीकृत्य विपुलीकृत्य किरणावलीं लिलेख, वीक्ष्याऽहं प्रसन्नो मुद्रणार्थमनुमतिं प्रदत्तवान्। सति मुद्रणे तु साऽध्ययने बहुलाभदाऽक्लिष्टा सरला च किरणावली समभवत्, ग्राह्या पाठ्या पाच्या चाप्यभवत्, निजगुरुपरम्परास्थ पण्डित-यशस्करी दीपिकाकिरणावली जाता, भूयोऽपि सुप्रसृता कीर्तिप्रदा भवत्विति प्रशस्य विरमामि।

वचनामृत भूमिका व वार्तायन्थों की प्रशस्ति

पं० रामआधार पाण्डेय, नव्य-न्यायाचार्य-व्याकरणतीर्थ

ग्राम—दूमखूली, जि० मिरजापुर

वचनामृत २६२ प्रकरणों में विशालकाय ग्रन्थ हैं, उनके सवा दो हजार सूत्र व उनका ब्रह्म-रसायन भाष्य सभी संस्कृत देववाणी का सागर है। इनका हिन्दी भाषान्तर गूजराती भाषान्तर खानदेश का मराठी भाषान्तर तथा अंग्रेजी भाषान्तर हुए हैं, यह ग्रन्थ दर्शनरत्नों का सागर है आध्यात्मिक विषयों का सागर है, भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों के सिद्धान्त तथा भगवत्प्राप्ति फल लिखे हैं। गुरुद्वारा सभी को मोक्ष प्राप्ति है। प्रत्यक्ष गुरु की महिमा सर्वमान्य है, वचनामृतों में प्रत्यक्षगुरु पर खूब भार दिया गया है। गुरु नानक ने कबीर ने दादू ने नाथ ने निजानन्दी ने सन्तरूप प्रत्यक्ष गुरु स्वरूप हरि की महिमा मुक्तकण्ठ से गायी है, शैव वीरशैव पाशुपतशैवों ने भी प्रत्यक्षगुरु की महिमा गायी है, गुरुमन्त्रात्मकसंस्कार द्वारा देहधारी शरणागत पावन होता है, तब पवित्र आत्मा वह इष्टभक्ति द्वारा मोक्ष में पहुँचता है, निर्बल कच्चे अपूर्णसाधनशील शरणागतों को गुरु भगवद्बलसे और स्वबल से मोक्ष में पहुँचाते हैं। गुरुद्वारा दीक्षित होकर जो कुछ साधेगा उसका फल पायेगा, अगुरुजन फल नहीं पाता।

गुरु महिमा शिष्य के लिये है, शिष्य को गुरुजी ब्रह्मस्थानापन्न है—

'गुरौ मानुषबुद्धि तु मन्त्रे चाऽक्षरभावनाम्।
प्रतिमासु शिलाबुद्धि कुर्वाणो नरकं व्रजेत्॥
गुरुः पिता गुरुर्माता गुरुर्देवो गुरुर्गतिः।
देवे रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन'॥

सभी शास्त्रों के जानकार सर्वांगपरिपूर्ण सत्यवक्ता हितकर धर्मकर्मपरायण सद्गुरु सुगुरु स्व-आचार्य करना चाहिए, धर्म कर्म उपासना ध्यान ज्ञान तत्त्ववित् तापहृत शान्तिप्रद कल्याण कृत गुरु करना चाहिए। समुद्र तैरने को बड़ा साधन महा-जहाज है संसार तैरने को बड़ा साधन सद्गुरु आश्रय है। इनसे धर्म पाला जावे, ज्ञान लिया जावे, वैराग्य समझा जावे, भक्ति की जावे, गुरु समता मिलती जावे, तब मुक्तिभागी बन जावे, भगवान् गुरु में तादात्म्यभाव से निवास करते हैं, भगवान् की मूर्ति सुप्रतिष्ठित जिन्दी जागती बोलती प्रतिमा गुरु है, गुरुरूप हरि को पहचान कर आश्रय लेके दिव्यभावना से सेवा करने वाला संसार को तैर जाता है। श्रीस्वामिनारायणभगवान ने सभा प्रसंगों में सभी सभासद श्रोताओं की आत्माओं का मोक्ष के लिए ऐहिक पारमार्थिक उपदेश दिये हैं, इनमें प्रत्यक्ष सन्त व प्रत्यक्ष भगवान् शीघ्र मोक्ष प्रदाता होने का उपदेश स्थलस्थल में हैं। प्रकट की उपासना सबसे बड़ी हैं। वचनामृतों में वाक्य-विचारों में बलवान् वाक्य वही है जो प्रत्यक्ष सन्त की महिमा कहता है। इनका हिन्दी भाषान्तर सद्गुरु स्वामीजी ने जब काशी में प्रकाशित किया, तब मैं पढ़ता था, बाँचता था, मैं हृदय से गुरुभक्त हुआ था, सदा के लिये गुरुभक्ति का बीज बल मेरे में दृढ़ हो गया, संस्कृत का विद्वान् होने पर भी मुझे किसी कुतर्क से पराभव नहीं हुआ, अभी मैं गुरुभक्त हूँ, परब्रह्म का भक्त हूँ। वचनामृतों को जो एकबार भी पढ़ेगा उसको मोक्ष साधन मनगमता हाथ लगेगा, ऐसा परोपकारी हितकारी हिन्दी वचनामृत है। वैसी ही श्रीगुणातीतानन्दस्वामिकृतवार्ताएँ तथा श्रीगोपालानन्दस्वामिकृतवार्ताएँ भी परममोक्षप्रद उपदेशों से भरी पड़ी है। मोक्षार्थी जन इनका आधार लेके मोक्षगति की प्राप्ति जरूर करेंगे। यह कह कर विराम लेता हूँ।

न्यायसिद्धान्तमुक्तावलीकिरणावल्या भूमिका

पं० श्री पद्मनाभशास्त्री न्यायाचार्यः

काशी

यावत्सु दर्शनेषु न्यायदर्शनं मूर्धन्यं सर्वत्रोपकारकं च, सेयं यथार्थाऽऽन्वीक्षिकी न्यायविद्या सर्वेषामान्तराऽक्षिप्रदा, अत्रेश्वरो व्यापकः सगुणोऽन्यशरीरैः शरीरी साकारोऽपि स्वरूपतो निराकारः, व्यापका जीवात्मानोऽपि पार्थिवादिशरीरैः शरीरिणो मनोयोगेन सगुणा ज्ञानादिविशेषगुणवन्तः संसरन्ति, स्थूलभूतसृष्टिर्नित्यपरमाणुजन्या, षोडशपदार्थतत्त्वज्ञानेनाऽज्ञाननाशद्वारा मोक्षो निराकारः पाषाणकल्प इति गौतममतम्। गौतमसूत्राणि वात्स्यायनभाष्यं चेति प्रसिद्धिः। न्यायवार्तिकतात्पर्यटीका वाचस्पतिकृता शोभना।

अथ न्यायदर्शनमिव कणादर्षिप्रणीतं वैशेषिकदर्शनमपि सप्तपदार्थप्रतिपादनमुखेन षोडशपदार्थ-प्रतिपादनपरं शास्त्रं चाप्यान्वीक्षिक्यात्मकम्, 'उभयोर्मतं-'तत्त्वज्ञानान्निःश्रेयसाऽधिगमः'। वैशेषिकस्य प्रशस्तपादभाष्यं हृदयंगमं वर्तते, अत्र व्योमवती-न्यायकन्दली-किरणावली-लीलावती-सूक्ति-रहस्य-सेतु-निकषात्मकानि व्याख्यानानि विद्यन्ते, तद्व्याख्यानान्यपि सन्ति। पठनपाठनादीन्येषु विश्रान्तान्यभूवन्।

अथ तार्किकशिरोमणिर्गंगेशोपाध्यायः पदार्थान् परिष्कृत्य नवीनं तत्त्वचिन्तामणिनिबन्धं दर्शनो-भयपदार्थगर्भितं दर्शनान्तराणां मतानि पूर्वपक्षीकृत्य न्यायरीत्या तत्समाधानसंभृतं कठिनमपि महाश्चर्यावहं ग्रन्थोत्तमं रचयामास, तदुपरि दीधितिप्रभृतिटीका ग्रन्थाः सुयुक्तिका न्यायावलम्बनाः समभवन्, तत्र-तत्र मथुरानाथादयोऽपि तलस्पर्शिनो जाताः, गदाधरजगदीशादयोऽपि व्याख्यातारोऽभवन्, एतत्पठनपाठनादि मुख्यं समभवत्, प्राचीनाऽभ्यासो गौणतां प्रापत् ततोऽपि न्यायसिद्धान्तमुक्तावली दर्शनद्वयतत्त्वचिन्मण्यादि-समाधारा सरला ग्रन्थरूपा सर्वमनोरञ्जना बहुकाठिन्यवर्जिता तत्त्वसाररूपा विश्वनाथपण्डितेन रचिता, एषः ग्रन्थः परीक्षायुगे व्याकरणसाहित्यवेदान्तसांख्ययोगन्यायादिषु खण्डशः परीक्षासूपकारी समजनि, तत्रापि दिनकरी प्रभाद्यष्टीका वर्तन्ते, किन्तु सर्वशास्त्रन्यायशास्त्राऽध्येता सर्वविधप्रबन्धानां द्रष्टा परिष्कृतबुद्धिः म० म० श्रीवामाचरणभट्टाचार्याणां शिष्यः पण्डितश्रीकृष्णवल्लभाचार्यः सुशास्त्रार्थसंभृतां मूलग्रन्थार्थबोधिकां तत्र-तत्र पदार्थतत्त्ववैशद्यकारिणीं निगूढतत्त्वानामावेदिकाम् अन्यपरिष्कृततत्त्वानां स्थलविशेषेषु समुपयोगिनीं विद्यार्थिनामिवाऽध्यापकानामपि पदार्थस्मारिकां सुविशालां सूर्यकिरणावलीमिव किरणप्रभावलीमिव नवीनप्राचीन तत्त्वानां सामावेदिकां किरणावलीं टीकां रचितवान्, सेयं मुक्तावल्या यावतीभ्यस्तदीयटीकाभ्यो मूर्धन्येति पण्डितैर्गीयते। पण्डितप्रकाण्डोऽयं किरणावलीकारः स्वलिखितां टीकां गुरुवर्येभ्य इव मह्यमपि प्रदर्शितवान्, अवलोकिता चाऽस्माभिरन्तःप्रविश्य कठिनपदार्थस्थलेषु पुनः पुनरावृत्या विचारिता, हृदयं नः प्रसादसंभृतं जातं, आशीर्वचनैश्च वर्धितोऽयं 'सर्वविद्यासु विद्वान् भवे'ति, गुर्वाद्याज्ञया सुविश्वस्तेयं ततः प्रकाशिता सर्वेषां समुपकारिणी भवतीति।

अखिलभूमण्डलीय साम्प्रदायिक मुक्तिव्यवस्था

महामहोपाध्याय पं० देवीप्रसाद, व्याकरणसाहित्याचार्यः

काशी

प्रथमभागे—श्रीवैष्णववर्यब्रह्मचारिपण्डितश्रीकृष्णवल्लभाचार्यस्वामिनारायणैर्न्यायादिशास्त्रनिष्णातैर्महां ग्रन्थ एकः पाण्डुलिपिस्वरूपो दत्तः, सोऽवलोकितश्च श्लोकबद्धः, तत्र सद्गुर्वाश्रयः, मोक्षश्च, मोक्षस्वरूपेषु बहूनि मतानि, आत्मनः परमात्मनः साकाराणि निराकाराणि स्वरूपाणि, जीवा ईश्वरा माया ब्रह्म परब्रह्म चेति पञ्चतत्त्वेषु भिन्नानि मतानि, उपासनानां भिन्नानि स्वरूपाणि, भगवदवतारचिह्नानि, चतुर्दश लोकाः, ८४ लक्षयोनयः, भूमौ जम्बूद्वीपादयः, सप्त सागराः पातालाद्याः, अष्ट आवरणानि, प्रकृतेरावणरेषु मुक्तिस्थानमतानि, आलोकाकाशे मुक्तिमतानि, निराकारचिन्मयाकाशे मुक्तिमतानि, चतुरशीतिसिद्धाः, सत्त्वस्वभावाकाशविष्णुलोकमुक्तिः, सप्तचैतन्यानि, यावनमतानि, अमृतमहाकाशमहाविष्णुलोकमुक्तिस्थानानि, आदिगोलोकः, वैकुण्ठलोकाः, श्वेतद्वीपाद्याः, वदरिकाश्रमाद्याः, अवतारद्वीपाः, मूलप्रकृतिव्यष्टिः, महाविष्णुव्यतिरेकितास्थितिः, हिरण्मयकोशः, नित्यगोलोकनिरंजनब्रह्मलोकः, अष्टवनानि, षोडश प्राकारा गोपुराश्च, शबलब्रह्मलोकः, केवलब्रह्मलोकः, सप्तवनानि, अक्षरब्रह्मलोकः, निराकारतेजोब्रह्मलोकः, मूर्तत्वाऽमूर्तत्वोपासनाविभागः, सारूप्यादिमुक्तयः, परब्रह्मणोऽक्षरधामादि, परब्रह्मधाम आत्यन्तिकी मुक्तिः। आस्तिकतादिः। जीवन्मुक्तादि—जीवभेदाः, त्रिगुणप्रवाहाः, विराट्सूत्रात्माऽव्याकृतमहाकारणानां स्थूलसूक्ष्मकारणमहाकारणानां च रचनाद्याः। सतां त्रिंशत्कल्याणकृद्गुणाः। सतां महिम्नः कीर्तनानि।

द्वितीभागे—पञ्चतत्त्वनिर्णयः, ३६ पदार्थाः, द्रव्यपदार्थाः, द्रव्यगुणात्मक पदार्थाः, क्रियाः, जातयः, सम्बन्धाः, अभावपदार्थः, श्रीस्वामिनारायणवेदान्तसारप्रोक्ताः पदार्थाः। श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदायपरिचयः, भगवतः चिह्नानि, तत्र पुराणादिवचनानि। षडक्षरादिमन्त्रजपफलम्। उपनिषदादिप्रमाणानि।

श्रीगुणातीतब्रह्मोपनिषत्—परब्रह्मवर्णनम्, परब्रह्मस्वरूपाणि, परब्रह्मगुणाः, परब्रह्मस्वरूपदिव्यता। प्राप्तिसाधनानि। साक्षात्कारादयः। परमात्मा साक्षी नियामकश्च। सर्वतत्त्वेषु अक्षरं तत्र पुरुषोत्तमस्य विशिष्टता च। अक्षरधामतत्त्वविशदता। अक्षरप्रकाशप्रकाशिता। जगदुत्पत्तिस्थितिलयप्रकारद्वारोपासना। स्वर्गप्राप्तिः, ईश्वरलोकप्राप्तिः, ब्रह्मधामप्राप्तयश्च। मुक्तानां साकारता सर्वैश्वर्यादिमत्ता। महाप्रलये ब्रह्मस्मरणम्। विशिष्टब्रह्माऽद्वैतश्रुतयः। सत्समुच्चयख्यात्यादौ विप्रतिपत्तयः। ज्ञानयाथार्थ्यवादः। ज्ञानधर्मिकविप्रतिपत्तयः। आनन्दधर्मिकविप्रतिपत्तयः। ब्रह्मधर्मिकविप्रतिपत्तयः। मुक्तधर्मिकविप्रतिपत्तयः। मायाधर्मिकविप्रतिपत्तयः। ईश्वरधर्मिकविप्रतिपत्तयः। जीवधर्मिकविप्रतिपत्तयः। तत्त्वधर्मिकविप्रतिपत्तयः। देवताधर्मिकविप्रतिपत्तयः। चिद्विशिष्टवृत्तिप्रामाण्यं फलम्। वृत्तिविशिष्टचित्प्रमाणं फलम्। इत्येतावत्पर्यन्तः **'अखिलभूमण्डलीयसाम्प्रदायिकमुक्तिव्यवस्था'** ग्रन्थः संस्कृतश्लोकबद्धः श्रीकृष्णवल्लभाचार्य विरचितो मया प्रेम्णाऽवलोकितः। अद्भुतं कार्यं ग्रन्थलेखेने कृतम्। सृष्टिलोकानाम् ईश्वरलोकानां ब्रह्मलोकानां परब्रह्मधाम्नश्च साक्षादिव प्रत्यक्षदर्शी कश्चिदवतार इव नारायणांऽश इव स्वयं नित्यसार्वज्ञ्यवानिव पंडितः श्रीकृष्णवल्लभाचार्यो मम भाति, भगवदंशं विना व्यासमिव ऋते एतत्सर्वं लिखितुं पृथिवीगोलकस्थितानां सम्प्रदायानां साक्षाददृष्टारं विना च न अन्यः साधारणो जीव एतल्लिखितुं शक्तिमान् भवति। अतो जगदुद्धारकः सोऽयं सोऽहं ब्रह्माऽस्मि वाक्यविषयः प्राप्यः स्वयं सगुणब्रह्मैव प्रति-

भाति। मया न्यायवेदान्तादिग्रन्थानामपि श्रीकृष्णवल्लभाचार्यकृतटीका अधीताः। तत्रापि आर्षं विशालं पाण्डित्यं ज्ञायते। काव्याद्या अपि ग्रन्था अवलोकिताः, साहित्यपण्डितोऽपि भवत्ययं पण्डितः, मम गुरु श्री दामोदरलालशास्त्रिणां शिष्योऽयमतो मम सब्रह्मचारी सगुरुसन्ततिर्भवति, तेनाऽहमतीव सन्तोषमनुभवामि, वेदान्ताचार्य परीक्षाया अन्तिमं प्रश्नपत्रोत्तरपत्रमस्य मदग्रे परोक्षणार्थमागतम् वीक्ष्यैव मया उत्तीर्णः कृतः, सोऽयं दार्शनिकः साधुर्गुरुकृपया जातः, जनिष्यते च पाण्डित्यकीर्तिरिति आशासे। आशीर्वादान् ददामि प्रख्यात पण्डितः साधुगुणो भवेति।

विद्वर्य श्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहोदयानां न्यायादि-सर्वशास्त्राऽभ्यासादिः परिचयश्च

श्रीहरिभाईशास्त्री व्याकरणसाहित्याचार्यः

पाठशालाध्यापकः, नवानगरम्

गुर्जरदेशान्तर्गतसौराष्ट्रप्रदेशे कुकुमवापीनगरे भगवद्भक्तपावनदेवानीककुटुम्बे विक्रमसंवत्सर (१९६१) तमस्याऽऽश्विनकृष्णपक्षेऽष्टम्यां प्रातः सूर्योदयात्पूर्वमेवैषामाचार्याणां प्रादुर्भावः, माता श्रीकम्भरा देवी, पिता श्रीगोपालकृष्णः, बाल्यवर्षनवतश्चतुर्दशपर्यन्ते समये वारद्वयं कार्तिकशुक्लैकादश्यां यज्ञोपवीत-संस्कारस्य भागवतीदीक्षायाश्चोपलब्धिः । तत आरभ्य जयन्तनगरे संस्कृतलघुकौमुद्यध्ययनप्रारम्भः । एतत्पूर्वं षड्वर्षाणि गौर्जरशिक्षाऽनुसाराऽध्ययनं कृतम् । ततो जीर्णदुर्गे पूज्यपाद श्रीबालकृष्णानन्दशास्त्रिभ्यः सिद्धान्तकौमुद्यध्ययनम्, श्रीहरिनारायणदासस्वामिभ्यः काव्यानां भागवतस्य चाऽध्ययनं कृतम्, ततो वृत्तालयपाठशालायां विट्ठलभाई शास्त्रितः कौमुदीटीकाग्रन्थाऽध्ययनम्, ततो वटपत्तने राजकीयसंस्कृत-पाठशालायां महामहोपाध्याय—श्रीबदरीनाथशास्त्रितो न्यायशास्त्राऽध्ययनाऽऽरम्भः, दक्षिणदेशीय-विद्वच्छास्त्रिभ्यः पातञ्जलभाष्याऽध्ययनम्, ततो विक्रमसंवत् १९८० तमे वर्षे माघशुक्लाऽष्टम्यां काश्या मध्ययनार्थायागमनम्, तत्र निर्मलसंस्कृतपाठशालायां मैथिलविद्वद्वर्यनव्यन्यायाचार्य श्रीराधाकान्तझासका-शान्न्यायसम्पूर्णमध्यमापरीक्षाग्रन्थानामध्ययनम्, १९८३ वैक्रमेऽब्दे परीक्षोत्तीर्णता च, ततः क्विन्स्कालेज-विद्यालये महामहोपाध्यायवंगदेशीय पण्डित धुरन्धर श्रीवामाचरणभट्टाचार्याणां सविधे प्राचीन नवीनोभय-विधन्यायवैशेषिकशास्त्राणामध्ययनम् । १९६७ पर्यन्तम्, खण्डपद्धतिना नव्यन्यायशास्त्रपरीक्षोत्तरं तर्कतीर्थ-श्रीवामाचरणभट्टाचार्येभ्योऽध्ययनम्, तदीयाऽऽचार्यपरीक्षा वैक्रमेऽब्दे १९९१ तमे प्रथमश्रेण्यामुत्तीर्णा, अथाऽस्मिन्नेव दशके दार्शनिकसार्वभौस-पदवाक्यप्रमाणाऽलंकारपारावारपारीण श्रीमन्माध्वसम्प्रदायाचार्य-श्रीदामोदरलालगोस्वामिनः सर्वविधवेदान्तमीमांसासांख्ययोगशैवपाशुपतजैनबौद्धादिदर्शनशास्त्राणामध्य-यनम्, बंगालसंस्कृतएसोशियेशनसंस्थायाः सांख्ययोगवेदान्तमीमांसादितीर्थपरीक्षा उत्तीर्णाः, ततः काश्यामेव विश्वविद्यालये षड्दर्शनाचार्यपरीक्षोत्तीर्णा, विद्वत्परिषदि अद्वैतवेदान्ताचार्यपरीक्षोत्तीर्णा, तदवसरे पञ्च-वर्षाणि सततं परनामिपाठशालायां निजभवने १३१ विद्यार्थिनो यावच्छास्त्रेषु यथायोग्यमध्यापिताः, इन्दोरमहाराजराजकीयमहाविद्यालये न्यायवेदान्तादिदर्शनाऽध्यापनार्थं संवत् १९९५ वत्सरे प्रिन्सिपाल-पदनियुक्तिर्जाता, तत्रत्यभौतिकाऽननुकूलतया तत् परित्यक्तम्, वाराणस्यामेव संवत् १९९१ तो ग्रन्थानां लेखनमारब्धम्, प्रायशः चतुश्चत्वारिंशत्ग्रन्था लिखिताः, आजीवनं ग्रन्थानां लेखनमपि अविरतं कृतम् । १९९७ तमे वर्षे वाराणसीं परित्यज्य सौराष्ट्रे पश्चिमकाश्यां नवानगरराजधान्यां विंशतिवर्षपर्यन्तं स्वकीयमन्दिरे बहवो विद्यार्थिनोऽध्यापिताः, तत्र वर्षद्वयं जयन्तनगरे, वर्षद्वयं जीर्णदुर्गे, ततो वर्षदशकं नवा नगरे, ततो वर्षद्वयं राजकूटनगरे, अध्यापिताश्च, राजकूटे श्रीलक्ष्मीनारायणमहाप्रासादः कारितः, ततो वर्षाऽष्टकं नवानगरे महासभामण्डपादि कारितम् । ततो जीर्णदुर्गे महामहासभामण्डपादि कारितम् ।

काश्यां महासम्मेलने विश्वविद्यालयभूमिकायां नैकदेशीयपारेसाहस्रविदुषां महासभासु संस्कृत-धारासु प्रसंगाऽऽपन्नव्याख्यानानि कृतानि, ज्ञानवाप्यां विदुषां महासभायां संस्कृते व्याख्यानं धर्मप्रस्तावे

विहितम्, ततो दर्शनशास्त्रेषु शास्त्रार्थयशोलब्धिः, दार्शनिकपञ्चाननेतिपदवीलब्धिश्च, अन्यत्र गुर्जरछात्र-समितावपमन्त्रितया कार्यं कृतम्, प्रतिसभं बहुवारं संस्कृतव्याख्यानानि कृतानि, हरिद्वारे प्रयागराजे नाशिकक्षेत्रे च कुम्भसम्मेलनेषु विद्वत्सभासु मासं मासं यावत् सप्रकाशं यथा तथा शास्त्रार्थपत्रिकाद्वारा समयोजितशास्त्रार्थेषु विजयकीर्तिर्लब्धा, सुदामापुर्यां महामण्डलेश्वरविद्वद्वर्यभागवतानन्दस्वामिनां माध्यस्थ्ये विद्वद्भिः सह प्रासंगिको विशिष्टाद्वैताद्वैतमतयोः शास्त्रार्थो दिवसत्रयमभवत् तत्र विजयो लब्धः, ततो देशेषु सुरतनगरे स्तम्भनगरे श्रीनगरे भावनगरे मणिपुरे जीर्णदुर्गे जयन्तनगरे गोमण्डले राजकूटे उपलता-नगरादिषु बहुत्र सभा आकारितास्तत्र संस्कृतादिधार्मिकव्याख्यानानि कृतानि। श्रीरामकृष्णपरमहंस-शताब्द्यां राजकूटे महासभायां संस्कृतव्याख्यानं कृतमभवत्, तत्र राजतरथेऽश्ववाहिन्यां सछत्रचामरादि-भिर्नगरे राज्य-कृतं भ्रामणं यशस्व्यभवत्, काश्यां श्रीस्वामिनारायणमन्दिरदेवप्रतिष्ठामहोत्सवे पण्डित-सभायां महाव्याख्यानं संस्कृतशास्त्रार्थश्चाऽऽनन्दप्रसादाचार्य घनश्यामदास बीरलादिसानिध्ये महामहो-पाध्यायकुलपत्याचार्यादिपण्डितमण्डलसत्कारपुरःसरम् अभवत्, १००८ संख्याकपदव्याचार्या विभूषिताः, न्यायस्य किरणावली प्रभावल्याद्याश्च सांख्यस्य भाष्यकिरणावलीकिरणाद्याश्च योगस्य भाष्यकिरणाद्याश्च साहित्यस्य काव्यगौरवाद्याः वेदान्तस्य वेदान्तसारश्रुतितात्पर्यनिर्णयाद्याः आध्यात्मिकसाम्प्रदायिकमुक्तिव्यव-स्थाद्याः तार्किकपद्धतिना ख्याति प्रामाण्यवादाद्याः प्रमात्वविमर्शाद्याः सुधासिन्धुब्रह्मरसायनभाष्याद्याः स्वामिनारायणदर्शनाद्याश्च मीमांसायामपि किरणावलीपरिष्काराद्या विरचिताः, भाषोपदेशग्रन्था अपि निर्मिताः, श्वेतायनसंहिताः श्लोकाः स्तोत्राणि गीतयः स्तुतयश्छन्दांसि चापि कृतानि, मोहमयीनगर्यां श्रीलक्ष्मीनारायणस्य शतवार्षिकमहोत्सवे व्याख्यानपीठमलंकृतम्,तत्र पञ्चफणाशेषनारायणछायास्थपट्टिकासनं शोभास्पदं कृतम्। जीर्णदुर्गेऽपि शतवार्षिकपाटोत्सवे तथा श्रीहरिकृष्णस्य शतवार्षिकपाटोत्सवे व्याख्यान-पीठानि समलंकृतानि, बहूनि पारायणानि विहितानि, आश्रितेभ्योऽनेके चमत्काराः प्रदर्शिताः, प्रायः शतगृहेषु अपुत्रेभ्योऽप्याशीर्वादैः पुत्रफलानि दत्तानि, द्वयोश्चरणयोरूर्ध्वरेखे सम्पूर्णे यथावर्णिते तथाऽस्य विद्येते, अष्टचक्राण्यंगुष्ठांऽगुलिषु करतलयोर्मत्स्यधनुर्ध्वजत्रिशूलस्वस्तिकादिचिह्नानि सन्ति पद्ममष्टदलं पादतलेऽस्य गोखुरं चापि विद्यतेऽशरूपोऽस्ति श्वेतायनो व्यासो दिव्यः परमपुरुषो विभाति।

न्यायशास्त्रमधीतं सुमार्मिकपदार्थप्रवेशपूर्वकमधीतम्, अध्यापितं च, काश्यां स्वयं मुक्तावली-मधीत्याऽध्यापयत्यपि स्म, नव्यन्यायशास्त्रस्य चिन्तामणिग्रन्थस्य दीधीतेर्गादाधरी जागदीशी सक्रोडपत्रैः परिष्कारैश्च सहाधीता, माथुर्यप्यधीता, परामर्शव्याप्तिवादपक्षताऽवच्छेदकत्वनिरुक्तिसामान्यनिरुक्त्यादि-ग्रन्थाः सक्रोडा अधीताः, शक्तिवादो व्युत्पत्तिवादः शब्दशक्तिप्रकाशिकाद्याश्चाऽधीताः, प्रामण्यवादो विध्यर्थ-वादाद्या अप्यधीताः, आत्मवादाः सर्वशास्त्राणां विभिन्नप्रस्थाना न्यायवादाः सम्यगधीताः प्रयुक्ता अध्या-पिताश्च, सर्वदर्शनादिव्याप्ताः ख्यातिवादाद्याश्चापि अवगतीकृताः, गौतमन्यायशास्त्रं काणादन्यायशास्त्रं रामानुजन्यायशास्त्रं बौद्धन्यायशास्त्रं जैनन्यायशास्त्रं मीमांसान्यायशास्त्रं वेदान्तपेटिकादिशास्त्राणि अन्य-दर्शनानां चापि न्यायाः सर्वेऽप्यधीताः, सर्वेषां न्यायानां शास्त्राणां च महापिण्डोऽयं पण्डितः पण्डापिण्डः स्वयं श्रीकृष्णस्य वल्लभः शास्त्राणामाचार्यो भाष्यकर्ता विजयते।

गौतमकणादयोर्न्यायः पंचावयवात्मकः, प्रतिज्ञाहेतूदाहरणोपनयनिगमनानि साधनानि पर-प्रतीत्यर्थमुपयुक्तानि भवन्ति, तत्प्रतिद्वन्द्विनो हेत्वाभासा अपि प्रतिन्यायात्मकाश्छलजातिनिग्रहाद्याश्चापि प्रतिन्यायात्मका उपपुज्यन्ते तेऽप्यधीताः। शाब्दबोधादावाकांक्षाद्या न्यायाः शक्तिलक्षणाद्या अपिन्यायार्थ-सम्बद्धा न्याया एवेति तेऽपि सभ्यगधीताः। बौद्धानां सत्त्वे क्षणिकत्वस्य व्याप्ता न्यायाः यथावश्यकोपयोगिनः जलधरनिदर्शने नैवात्मस्वपि प्रयुक्ताः शून्ये गताः सर्वेस्वयमपपि शून्यन्यायात्मका इति। जैनानां स्यादस्ति नास्त्याद्या एकत्र वस्तुनि प्रयुक्ता वस्तुस्थैर्यहन्तारस्ते न्यायात्मका अपि वस्तुस्थित्यै त्वन्यायास्तेऽपि सर्वेऽ-

धीताः, वेदान्तिनां त एते न्यायाः सन्त्यपि मिथ्यात्वादौ पञ्चावयवा वा त्र्यवयवाः मान्याः, पेटिकास्तु—उपक्रमोपसंहाराऽभ्यासाऽपूर्वताफलादयो न्यायाः, अर्थात् आरपारगोऽभिप्रायोन्यायः, न्यायेन सर्वेऽन्यथा क्रियन्ते। अथ मीमांसकानां तु गुप्ता मंजुषा प्रोद्घाटिता भवति, सा तत्सिद्धिजातिसारूप्यप्रशंसालिंगभूमभिः, शब्दानां गौणवृत्तिकत्वकल्पना न्यायः, अर्थप्रकाशो न्यायः, वाक्यार्थनिर्णयो न्यायः, न्यायात्मको निर्णयः, शैवानां सशक्तिब्रह्मशिवकत्वे आगमाः शक्तिशक्तनिरूपका युगलन्यायनिष्पन्नार्थकाः, अन्येषां तु सन्निकर्ष-न्यायरूपाः। इत्येवं कवीनामलंकारा न्यायात्मकाः, सर्वेषां त्वन्तःकरणप्रवृत्तयो न्यायाः, सर्वेऽपि प्रकाण्ड-पण्डिता न्यायमूर्तयो भवन्ति, नियमा न्यायरूपाः, उदाहरणानि न्यायरूपाणि, ततो जगदिदं न्यायैर्येनाऽधीतं स पूर्णो नैयायिकः, श्रीकृष्णवल्लभाचार्यस्वामी न्यायविद्धुरन्धरान्तेवासी सर्वज्ञधर्ता पूर्णनैयायिक इति यथार्थ एव मया तु काश्यां नवानगरे देशेऽपि च प्रायः सुयोगवता एतत्सर्वमनुभूतं वर्णितमिति।

अखिल भूमण्डलीय साम्प्रदायिक मुक्तिव्यवस्था

भूमिका

चुन्नीलाल तुलसीदास

गुजरात ग्राम वसई ना सत्संगी,

जरमन सिलवर वाला, मुंबई

आ जगत भगवाननी इच्छा बड़े बसेलु छे. माया मां वसाव्युं छे. मायिक चीजो ना विकारोमांज आत्माओ ने पोताना पूण्य पाप ने अनुसारे भोगो आप्या छे. भोक्ताओं भोग ओछा करे अने भगवान ने वधारे भजे तो आ मनुष्य जन्ममांज मोक्ष गति मां पहोचो जाय, सन्त बिना उपर कहेली हकीकतो बीजाओ समझावी शकता नथी, समझावी ने मेलावी शकता नथी मेलाव्या पछी परमात्मानी भक्ति करावी शकता नथी, भक्ति मां जोडया पछी पण परलोक ना विघ्नो मां थी बाहेर लई जई सकता नथी, सन्त पुरुषो तो भगवान ना धाम सुधी पहोंचाड़ी दे छे. माटे भगवान अने भगवान ना सन्त मोक्ष दाताओ छे. ते ओ आवा-आवा युगो मां सम्प्रदायो ना बन्धनो मांज बसो अने जीवो ना कल्याण करे छे. ते ते सम्प्रदायोनी मानिनता प्रमाणे उपासनाओ अने मोक्ष नी स्थितिओ शास्त्रीजी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ये पोताना अनुभूत ग्रन्थों ना अने साम्प्रदायिक संत महात्माओ ना अभिप्रायो मेलवी मोक्ष स्थितिओं नी मानिनताओ जणावनारो 'अखिल भूमण्डलीय साम्प्रदायिक मुक्ति व्यवस्था' नामक ग्रन्थ लख्यो, ते मने वांचवा आप्यो अने छपाववा इच्छा दर्शावी, ते प्रमाणे में वांची ने ठीक लागवाथी छपावी प्रसिद्ध कर्यो, साम्प्रदायिक व्यक्तियो पण ते ते साम्प्रदायिक रीति प्रमाणे ते बातों ने चोधारी प्रशंसा करवा लाग्या, आ ग्रन्थ में मुंबई मांज छपावी जाहेर बोर्ड मां मेली अने हजारो ने लाभ थवा सेवा करेली छे, कोई विज्ञापन करशे तो ते बीजा एडिशन मां उमेराशे-अेज.

मीमांसकदैवत्यमन्त्रणम्

(मीमांसा अर्थसंग्रह भूमिका)

पं० श्री रामनन्दन झा

संस्कृतप्राध्यापकः, सर्वकारीयाऽऽयुर्वेदमहाविद्यालयस्थः, सौराष्ट्रीय जीर्णदुर्गनरस्थः,

जूनागढ़

देवताऽनुष्ठानसापेक्षं मीमांसाशास्त्रम्, अनुष्ठानानि मन्त्राद्यपेक्षितानि, मन्त्रा ब्राह्मणाद्यपेक्षावन्तः, स्वतन्त्रा अपि स्वरूपवैशद्येऽनुष्ठातृविचारनिर्णयाऽवधारणगर्भाः. तात्पर्यवत्तया, चेतनाऽनुजुष्टाः चेतनः सर्वज्ञ परमेश्वरो देवताश्च सर्वज्ञाः, शब्दो द्रव्यं सर्वशक्तिमान् स्वार्थद्योतको ब्रह्म वा वेद एव नारायण एकरूपोऽप्यनेकव्यूहसान्नाहसमुदितः सृष्टिसञ्चालनादिहेतुः सर्वाऽनुष्ठानाऽपूर्वफलाऽनुयोजकः पाताऽन्तकर्ताऽपि च गण्यते, वेदोक्तं सर्वं प्रमा, मानुषज्ञप्तयो द्रव्यरूपा अपि पदार्थसापेक्षाः परिच्छिन्नाः सर्वत्राऽव्यापिन्योऽत्यन्त-प्रमाणसापेक्षाः क्वचित्प्रामाण्याऽनवरुद्धा अपि प्रामाण्यमृगिण्योऽपि तत्तदर्थपाराऽनवगता भवन्ति प्रामाण्य-विधुराः, तासां प्रामाण्यसम्पादकं साक्षिब्रह्मवत् वेदतत्त्वं मीमांसास्वरूपं वाक्यार्थनिर्णायकं भवति, जडमपि तेजश्चेतनानां पदार्थदर्शकमिव जडमपि शब्दशास्त्रं चेतनानां पदार्थप्रमापकं भवतीति परमेश्वरेणैषा विचित्रता स्वकृतिषु निहिता, यथावदनुष्ठितमिति कर्तव्यत्वादिकं सत्फलं सम्पद्यते व्युत्क्रमतयाऽनुष्ठितं तदेव विपरीतफलदं भवतीति परमात्मनिहितशक्तिकमेतत् सुप्रभावशालि वर्तते, मीमांसाशास्त्रं कर्मठाना-मुपकारकम्, सदेवताकत्वादास्तिकं च, वेदमूलकत्वादभ्रान्तं च, साधनेन यागेन विविधयज्ञैः सम्यगनुष्ठितैः पुण्यमपूर्वमदृष्टं प्रापय्य स्वर्गं सुखं चाऽपवर्गमाधायकमिति श्रुत्याधारं सत्यफलं सत्प्रयोजनं च वर्तते, नित्य-वेदमन्त्राद्याधारमपि देवर्षिपितृभूतभौतिकाऽर्हणयजनहवनाऽर्पणोपासनादिप्रवर्तकं च तद्रुचिमतां सर्वथोप-कारकं विविधकामनाबोधकमपि निष्कामनादिसम्पादकं प्रवर्तनापरमपि निवर्तनादर्शकं वर्तते, जैमिनिना स्वसूत्रेष्वेव विष्णुब्रह्मारुद्र इत्याद्या दर्शिताः, तत्तद्देवताकयागा दर्शिता नित्यस्वर्गात्मकाऽपवर्गोऽपि दर्शितः, श्रीहारियोजनो हारियोजनग्रहा अपि दर्शिताः, सगुणब्रह्महिरण्यगर्भोऽपि दर्शितः, नारायणबल्यादीष्टयोऽपि दर्शिताः, ब्रह्मवर्चस्वादिना ब्रह्माऽपि वर्णितम्, तस्मादास्तिकं जैमिनिशास्त्रम् विद्वद्भिर्वाक्यनिर्णयार्थं बहुधा विस्तारितम्। मीमांसादर्शने प्रथमेऽध्याये विध्यादेः प्रामाण्यं निरूपितम्, **द्वितीये**—विधिविधेयाऽनुष्ठानभेदा निरूपिताः, **तृतीये**—विहितानां शेषशेषिभावो निरूपितः, **चतुर्थे**—यज्ञीयपुरुषार्थीयाऽनुष्ठेयपदार्थानां परिमाणं चिन्तितम्, **पञ्चमे**—अनुष्ठानक्रमाश्चिन्तिताः, **षष्ठे**—भोक्त्रधिकारिता निरूपिता, **सप्तमे**—प्रकृत्यंगानां विकृतौ सामान्याऽतिदेशः कथितः, **अष्टमे**—प्रकृत्यंगानां विकृतौ विशेषेणाऽतिदेशो निरूपितः, **नवमे**—प्रकृतौ विकृतौ देवतादिभेदेऽपि विकृतावध्याहाराद्यूहरीतिर्दर्शिता, **दर्शमे**—विकृतौ चोदकप्राप्तानां प्राकृतांगानां विशेषांगादिना बाधाः वर्णिताः, **एकादशे**—अनेकविधिप्रयुक्तांगानां सकृदनुष्ठानात् सर्वाऽङ्ग्युपकारसाम्यं तन्त्रं निरूपितम्, **द्वादशे**—एकांगिप्रयुक्तांगाऽनुष्ठानस्य सर्वाङ्ग्युपकारता दर्शिता। एवं बहुविधनिर्णयात्मकमिदं सर्वोपकारपरं वर्तते।

किञ्च—अन्यत्र ये गुणाः शब्दः पुण्यं ज्ञानं शक्तिः कृतिर्भावना चेत्यादिरूपाः, पदार्थजातं च, तदप्यत्र पदार्थतया द्रव्यतया स्वीकृतम्, तच्च सर्वं परमात्माऽर्पणयोग्यमिति नितरां मोक्षकृद्भवतीति

प्रदर्श्यतेऽनेन शास्त्रेण । 'विष्णुर्वा स्याद्धौत्राम्नानादमावास्याहविश्च स्याद्धौत्रस्य तत्र दर्शनात्' (१०।८।१७।५३) इत्यनेन विष्णोः परमात्मनः सर्वार्पणयागार्हता स्वीकृता, **शाबरभाष्ये**—'इदं विष्णुर्विचक्रमे' 'प्रतद्विष्णुः स्तवते वीर्येण'ति उपांशुयाजने 'विष्णुर्देवत्य' इत्याद्युक्तम् । अतः परमात्मा सर्वदेवताकार्पणफलप्रदः प्रोक्तः । 'सर्वमेधेऽपि परमात्मा फलदः स्वीकृतः । विष्णुयागेऽपि परमात्मदेवत्यं स्वीकृतम् । तथा 'हिरण्यगर्भः पूर्वस्य मन्त्रलिंगात्' (१०।३।२।१३) इत्यत्र 'हिरण्यगर्भः समवर्तताऽग्रे' इति—आधारमाधारयतीति सगुणब्रह्म स्वीकृतम् । 'हारियोजने वा सर्वसंयोगादि'ति (३।५।९।।२८) इत्यत्र 'हरिरसि हारियोजनः' 'अथैतस्य हारियोजनस्य सर्व एव लिप्सन्ते'–इत्यनेन श्रीहरिप्रसादे सर्वाऽधिकार आवेदितः । 'ब्रह्मवर्चस्विनोऽन्नादा भवन्ति' इत्यत्र ब्रह्मणस्तेजोवन्तो नित्यतृप्तिभोजना भवन्तीति परमात्मा तन्मुक्ता ब्रह्मशीलाः स्वीकृताः । 'सः स्वर्गः स्यात् सर्वान् प्रत्यविशिष्टत्वात्' (४।३।७।१५) इत्यत्र दुःखाऽसम्भिन्ननिरतिशयसुखं धाम शाश्वतं सर्वान् जीवेशादीन् प्रति समानत्वेन स्वीकृतं मोक्षफलस्थानम् । 'प्रतिषिध्यविधानाद्वा विष्णुः समानदेशः स्यात्' (१०।८।१७।५७) इत्यत्र फलेन प्राप्यतया सर्वेषां समानो देशो विष्णुः परमात्माऽभिहितः । 'अपवर्गं च दर्शयति' (२।४।१।४) इत्यत्राऽपवर्गोऽपि दर्शितो मोक्षः । तत्र शाबरभाष्यम्—'जरामर्यं वा एतत्सत्रं यदग्निहोत्रं दर्शपूर्णमासौ च, जरया ह वा एताभ्यां निर्मुच्यते मृत्युना च, इति जरामरणनिर्मोचनाऽवधारणवचनं च नियमपक्ष एवोपपद्यते' । 'जरया वा एताभ्यां निर्मुच्यते मृत्युना चे'ति ।।

किञ्च—यागसम्बन्धेषु श्रूयमाणा पश्वर्पणा भक्तिरपि न हिंसात्मिका, तत्तदभिधानकद्रव्यार्पणविधानात् प्राणवियोगात्मकहिंसाया अनवकाशात् । उक्तं च यज्ञतत्त्वेऽपि 'वस्तुगत्या पुरुषाणां चोदितानां तत्तद्देवतायै यथाविधि उपाकृत्य तत उत्सर्ग एव, न तु विशसनादिकम्, न वपादीनामुद्धरणम्, नाऽग्नौ तत्प्रक्षेपणात्मको होमो वा, पुरुषपशूनां पशूनां तत्तद्देवताभ्य उपाकरणानन्तरं तान् नारायणात्मना ध्यात्वा तथैवोत्सृजेत्, जीवतामेव परित्यागः कार्य इति । तेषां परमपुरुषात्मना ध्यानसमये एव पुरुषसूक्तमन्त्राः पठनीयाः, तदर्थमेव प्राधान्येव सूक्तमिदं प्रवृत्तम्, अतो हिंसायाः पुरुषमेधादाववसर एव नास्ति, कस्यामपि शाखायां क्वचिदपि वा श्रौतसूत्रे पुरुषमेधादौ पुरुषादिहिंसाया अश्रवणात्, सर्वेषु वेदेषु श्रौतसूत्रेषु च तान् पुरुषपशूनेकत्र संघीकृत्य उपाकृत्य भगवन्नारायणरूपेण ध्यात्वा तथैतानुत्सृज्य त्यक्तरागद्वेषः स्वीयं सर्वमपि तस्मिन् यज्ञे सर्वस्वदक्षिणात्वेन ऋत्विग्भ्यो ब्राह्मणेभ्यश्च दत्वाऽरण्यमुपेयात् इत्येवं विधिर्दृश्यते । ऐतरेयब्राह्मणगतं शुभःशेपोपाख्यानं चापि न हिंसादर्शकं, जीवत एव शुनःशेपस्य त्यागोक्तेः, एतदाख्यानं श्रीमद्भागवते नवमस्कन्धे वर्तते, तदत्र अंगत्वनिरुक्तिग्रन्थाऽन्ते संक्षेपेण दत्तमस्ति । फलतः सर्वत्र जीवत उत्सर्गस्यैव विधानम् । सर्वमेवेऽपि ओषधीर्वृक्षाँश्चाऽऽनीय सूक्ष्मान् खण्डयित्वाऽऽहवनीये जुहुयात्, न तु पुरुषपश्वादिसंज्ञपनं कुर्यादिति प्रोक्तम्, उपाकरणान्त उत्सर्ग एव कथितः । गोनरवाजिमेधेषु तत्तन्नामकौषधिपयोदधिरसाऽऽज्यादिबलिसमर्पणोत्तरं पश्वादिविसर्जनमेव पुण्यप्रदमिति कृत्स्नमीमांसाशास्त्राभिप्रायः ।।

यज्ञक्रिया हि विप्राणां, विप्रास्तु निर्धनाः, धनं विना यज्ञा न, यज्ञं विना इति कर्तव्यता न, तां बिनाऽर्थाऽवगमने प्रवृत्तिर्न, एनां बिनाऽध्ययनमपि न, सर्वमेतज्जीविकायामपर्याप्तत्वात् क्षीणप्रवाहतः शुष्ककीचकस्तम्बनिभायमानं जातम्, न्यायशास्त्रं तु सर्वाधिकारिलब्धोत्तेजनं व्याप्ततां गतम्, काठिन्याद् बहुस्थानकं न, तथापि सर्वाऽभ्यासानुस्यूतत्वाल्लब्धसत्कारं सत् लब्धपोषणं वर्तते, वेदान्तो वेदो ब्राह्मणरूपः, स च मानवमात्रस्य मिष्टतमः, प्रतिमानवं रसवर्षी वर्तते, यत्र धनापेक्षा न, मेधाऽऽवश्यकता न, कार्पासवत्कोमलता वर्तते, कथनमात्रे व्याप्तता, हालिकोऽपि मृत्योऽपि दासोऽपि दूरस्थितिकोऽपि 'आत्मा सः

परमात्मेति मत्वा तुष्टिं लभते, अभ्यासे यत्नो न, श्रवणे नैसर्गिकता, समदृष्टिविधुरे समवचने त्वौदार्यम्, निर्व्ययं ब्रह्मचिन्तनम्, सूर्योदये सहजप्रकाशलाभवत् जाग्रति स्वप्ने च मूल्यार्पणं विनैवाऽद्वैतज्ञानलाभः केन त्यज्येत ?, सुशृंगारितगृहिणीवत् दृश्यम् अन्येषां व्यापारः स्वस्य तु मानसमात्रमिति को नाम वेदान्ते न प्रवर्तेत ?, तदेवंविधा वेदान्तव्याप्तिर्विजयते। साहित्यं तु बालेऽपि कृतस्थानम्, गायनस्य येन केनाऽप्यर्थेन सोल्लोचत्वमिव पक्षिष्वपि वर्तमानत्वात्, प्राणः श्वासोऽप्रयत्न एवोपलभ्यते, मुखं कल्पितमेव विद्यते, विचारः स्वयमेव प्रसरति, मौनं तु निरोधवत् दुःशकमेव भवति, रागः स्वयमुपतिष्ठते, ततः साहित्यं गायनं वदनं कीर्तनं सार्थं व्यर्थं वा को न करोति, ततः सर्वत्र साहित्यं सहभावमापन्नमेव भवति, सरलं लभ्यते, काठिन्यं त्यज्यते, निद्रा लभ्यते जागरणं त्यज्यते, यत्कठिनं तत् त्यज्यते, मीमांसा कठिना त्यज्यते, किन्तु विद्वद्भिः साऽमृताय्यते, क्षारसागरो निरवरोधोऽपि न स्वागतीक्रियते, नव्यन्यायशास्त्रं निरवरोधमपि न सर्वैरास्वाद्यते, मीमांसाशास्त्रं तज्ज्ञैः सरलीकृतं बहुधा, तत्र शाबरमुनेरुपकारो महान्, विनाऽऽलस्यं वाक्यन्याया विन्यस्ताः, जैमिनिरप्युदारमहर्षिः, विनाऽवरोधं सूत्रक्षेत्रं विशालीकृतवान्, नव्यमीमांसकैर्वार्तिककाराद्यैस्तन्नवीनरीत्या विस्तारितम्। अपितु गगने लब्धविस्तारं शरन्मेघवन्निहारपदं सम्पन्नं विद्यते, तस्माच्छैत्यलाभार्थं कृतयत्नैर्विद्वद्भिः—अधिकरणकौमुदी, अध्वरमीमांसाकुतूहलवृत्तिः, अर्थसंग्रहः, जैमिनिन्यायमाला, तत्त्वबिन्दुः, तत्त्वरत्नम्, तन्त्रवार्तिकाऽवशेषः, निराकारमीमांसादर्शनं, न्यायबिन्दुः, न्यायरत्नमाला, पूर्वमीमांसाऽधिकरणकौमुदी, प्रकरणपञ्चिका, प्राभाकरविजयः, भाट्टचिन्तामणिः, भाट्टदीपिका, भाट्टभाषाप्रकाशः, भाट्टरहस्यं, भावनाविवेकः, मीमांसार्थप्रकाशः, मीमांसाकौस्तुभः, मीमांसान्यायप्रकाशः, मीमांसानुक्रमणिका, मीमांसापरिभाषा, मीमांसापादुका, मीमांसाबालप्रकाशः, मीमांसाशास्त्रसारः, मीमांसाश्लोकवार्तिकम्, विधिरसायनम्, विधिविवेकः, विधिस्वरूपविचारः, शास्त्रदीपिका, मीमांसादर्शनम्,—इत्यादयो ग्रन्था निर्मिताः। तेऽपि मीमांसकीयस्वतन्त्रविषयाः अपि लोकोपकारका विद्यन्ते, तत्र श्रीकृष्णवल्लभाचार्येणाऽऽधुनिकप्रसक्त्यनुकूलाऽर्थसंग्रह-किरणावली स्पष्टाऽतिस्पष्टा रचिता, अंगत्वादिपरिष्कृतिरपि संगृहीता, सा तत्तत्पदवाक्याद्यर्थाऽवगमायोपकारिणी भविष्यतीति, श्रीमद्दार्शनिकसार्वभौमन्यायरत्नपदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणश्रीमन्माध्व सम्प्रदायाचार्य श्रीदामोदरलाल गोस्वामिभ्यो निजगुरुभ्यः समर्पणविधयाऽर्पिता, मीमांसाया अर्थसंग्रहस्य किरणावली अंगादिपरिष्कृतिसंहिता' अपि चाऽसार्वज्ञ्यप्रयुक्ता क्षतयः शोधनीया इत्यप्यर्थितं किरणावलीकारेण।

विदितमेवैतद्विद्वद्धौरेयाणां यदभ्युदयनिःश्रेयससाधनं धर्म एव, स च धर्मः कः ? इत्यत्र प्रमाणं श्रुतिरेवेति धर्मं जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिरित्यादिवचनैर्निश्चीयते। श्रुतीनामपि 'उदिते जुहोति', 'अनुदिते जुहोती'त्यादीनामापाततः परस्परविरुद्धार्थकतया प्रतीयमानानामर्थनिश्चयो मीमांसामन्तरेण न संभवति, सन्दिग्धेऽर्थे मीमांसैवैनामर्थनिर्णयस्य लौकिकैः परीक्षकैश्च क्रियमाणस्य दर्शनात्। अत एव परमगम्भीरस्य वेदस्य अर्थाऽप्रतिपत्तिविपरीतप्रतिपत्तिसन्देहैः कवलिना धर्माऽऽस्थावन्तो जना अननुष्ठाताऽवैधाऽनुष्ठान परायणा अभ्युदयतो निःश्रेयसतश्च च्युता माभूवन् इति समनुसन्दधानेन परमकारुणिकेन मुनिना जैमिनिना द्वादशाऽध्यायपरिमितं मीमांसाशास्त्रं सूत्रयित्वा प्रजाभ्यो धर्मनिर्णयाय राजमार्ग एवाऽविर्भावितः। तदपि सूत्रात्मकं शास्त्रमन्तर्भावितार्थतया गभीरभूतं पश्चात्तनप्रजासु दुरधिगममेव स्यादिति तदुप्रकृतिव्याजेन शबरस्वामिप्रभृतिभिरनेकैराचार्यैर्भाष्यविवृत्त्यादिभिर्विवृतार्थकमकारि, कुमारिलप्राभाकरमुरारिमिश्रादिकैरुद्भटैर्विद्वद्भिश्च श्लोकवार्तिकादिनिबन्धप्रणयनद्वारा शास्त्रमिदं बृहदाकारं विस्तृताऽभिधेयं च समपादि। तदस्मिन् शास्त्रे पारिभाषिकैः—नित्यविधिनियमविधि परिसंख्याविधिसन्दंशन्याययूपादिकैः शब्दैः परिपूरिते साधारणानां प्रवेशस्य दुष्करतया प्रविविक्षूणां सौकर्याय दयावलयितो लौगाक्षिभास्करोऽर्थ-

संग्रहनामकं यागादिषु कर्मसु प्रसिद्धानामर्थानां संक्षेपेण बोधकतयाऽन्वर्थाऽभिधानं प्रमाणसारं लघुकायं ग्रन्थं जग्रन्थ। अयं च ग्रन्थो मीमांसाशास्त्रे प्रवेशमिच्छतामतीवोपकारक इति मत्वा वाराणसेयसंस्कृत-विश्वविद्यालयस्याऽपरेषां च परीक्षासंस्थानानां पाठ्यनिर्णायिकमण्डलैरुपयुक्तासु परीक्षासु नियोजितः, सोऽयं परमं प्रचारमागतोऽपि विषयाणां काठिन्येन छात्राणां मनांसि समुद्वेजयन्निव वरीवर्ति। तस्माच्छात्र-जनमनोवैषम्यस्य निवारणाय सरलतयाऽत्र तेषां प्रवेशाय च ग्रन्थग्रन्थिश्लथीकरणनिपुणतमा ग्रन्थकर्तृषु टीकाकर्तृषु च विख्याताऽभिनवशैलीकुशला अनेकग्रन्थनिर्माणमार्मिका नव्यन्यायाचार्यषड्दर्शनाचार्यसांख्य-योगवेदान्तमीमांसातीर्थादिविरुदभाजः श्रीवैष्णवविद्वत्सार्वभौमदार्शनिकपञ्चाननाः Eng. M. A. श्रीकृष्ण-वल्लभाचार्यमहोदयाः संस्कृतजगति विश्रुतकीर्तयोऽर्थसंग्रहस्याऽपि ग्रन्थस्य सरलसरलां सकलार्थस्फुटीकरण-पाटवसमन्वितां किरणावलीनाम्नीं 'टीकां समकार्षुः।

अत्र च मूलग्रन्थाऽनुसारिवाक्यभेदाद्या अन्ये च लाघवगौरवादिस्थानसान्निध्यतत्तदीयाऽनुष्ठानाऽऽ-लम्बनाऽन्विता मीमांसकीयपारिभाषिकव्यूहाः कर्मकाण्डीयाऽङ्गाऽङ्गितत्तदध्वरनान्तरीयककाण्डविस्तरा विध्यर्थादिसमावश्यकाऽवधारणार्थकप्रयोगार्था विशदीकृताः, अङ्गादीनां परिष्कृतयश्च नव्यप्रणाल्या सुतर्किताः फलाऽनुष्ठानप्रयोजककलापास्तत्तदर्थकफलाऽधिकारिसमनुष्ठेयार्थकपरायणाः श्रुतिविभागा यज्ञोद्देश्या अन्ये च शाब्दिकप्रणाल्यातत्तद्गभीरखनिनिहितस्वतन्त्रसिद्धान्तिवाच्यार्थास्तत्तद्विषयसंजृम्भिता अनवशेषतयाऽत्रटीकाग्रन्थे स्पष्टीकृता ग्रन्थकारैः। अन्येऽपि एतच्छास्त्रीयाऽङ्गतां गताः प्रमाणप्रमेयादि-पदार्थाः पूर्वपूर्वबलीयस्त्वाद्या मीमांसकैः स्वतन्त्रप्रमाणिता बहुविधाऽर्थप्रकारविवेचनेन शारदीयप्रकाशतां नीताः। इत्येषा सर्वत्र व्यापिनी सौरकिरणावलीप्रभा तदधिकारिणां हृदयकमलेषु विशेषतो व्याप्ता सती चैतन्यौज्ज्वल्यं करिष्यतीति मन्यामहे।

अनया च टीकया मीमांसाशास्त्रीयाणां परिभाषिकाणां शब्दानाम् अर्थसंग्रहगृहीतानां सौष्ठ-वेनाऽर्थाऽवगमो भवेदेव ग्रन्थमिमं पठतां छात्राणामिति दृढं वयं विश्वसिमः। अनेन चैतदीयप्रयासेनोपकृति-भाजना भवन्तु मीमांसार्थमधिजिगांसव इति सप्रश्रयं भगवन्तं प्रार्थयामहे। इमे च विद्वांसः श्रीकृष्णवल्लभा-चार्या एतादृशान् प्रबन्धान् पुनः पुनः रचयन्तु, तदर्थमेषां स्वास्थ्यमायुश्च सुदृढं दीर्घायमाणं चाऽस्तु, इति भगवत एव सकाशादेतदपि कामयामहे—॥ शम् ॥

श्रीलक्ष्मीनारायणसंहिता (श्वेतायनसंहिता)

एक भव्य ग्रन्थ

श्री कान्तिलालशास्त्री

साहित्यवेदान्ताचार्य, कालिज–अध्यापक, डेक्कनकोलेज, पूना

विद्वत्सार्वभौम श्रीकृष्णवल्लभाचार्यस्वामीजीने अपने जीवनमें विद्याधन ही प्राप्त किया है, भारतीय दर्शनशास्त्रोंके अभ्यासके साथ-साथ तत्त्वज्ञान के खजानेके संग्रह की तरह ऐतिहासिक वृत्तान्तों का खजाना भी संग्रहित किया है, उन्होंने पहले श्रीमद्भागवत का अभ्यास किया, तब वाल्मिकीय रामायण तथा योगवासिष्ठ का अभ्यास किया, तब समयानुसार समग्र महाभारत का अभ्यास किया, नवानगर पश्चिम काशीमें प्रातः व सायं एक एक (कलाक) घंटा संस्कृत की जोहेर कथा बांचते रहे, अच्छे अच्छे विषयपर व्याख्यान देते रहे, लाउडस्पीकर की सहायता से विस्तृत आवाज को दूर-दूर के लोग भी सुनते रहे. इनमें से भारतीय संस्कृति के अनेक प्रकार के सनातन धर्मों के विकास के व्याख्यानों में स्फुटता नये अनुसन्धान के लाभ भी श्रोताओं को देते रहे नवानगर के विद्वान विप्र श्रोताओं ने सभी पुराणसंहिताएँ सुनने कीं अभिलाषा बतायी, तब श्रीस्वामी जी ने सतत नियम से एक के बाद एक अठारह पुराण भी कथा रूप में बाँचे, दिग्विजयों के महापुरुषों के जन्मजीवन ग्रन्थ बाँचे, राजकूट राजधानी में शिवपुराण, विष्णुपुराण, वाराहपुराण, नारदीयपुराण, आदि आदि ग्रन्थ कथास्वरूप में बाँचे, स्कन्दपुराण, मार्कण्डेय पुराण, गरुडपुराण, वायुपुराण, पद्मपुराण, वामनपुराण, लिंगपुराण, मत्स्यपुराण, ब्रह्माण्डपुराण, ब्रह्मवैवर्तपुराण आदि आदि कथा रूप में सम्पूर्ण संहिताएँ बाँची, गर्गसंहिता हरिवंश सामवेदसंहिता आदि आदि संहिताएँ बाँची, नारदपञ्चरात्र बाँचा, शंकरदिग्विजय, हरिदिग्विजय आदि बाँचे, इनसे सृष्टि के वृत्तान्तों का ज्ञान, भौतिक विज्ञान प्रजा का फैलाव मूलबीज युगधर्म वैदिक आख्यान देव ऋषि पितृ पातालादिवासियों के वृत्तान्त वैदिक पात्रों के ज्ञान, यजुर्वेद आदि के तत्त्वपात्रज्ञान यज्ञीयदेवों के वृत्तान्त तप आशीर्वाद पुण्य प्रभाव से ईश्वर देवादि प्रकटपना आदि आदि का प्रातिभज्ञान व धर्ममेधसामर्थ्य श्रीस्वामीको निजात्मा में आत्मदर्पण में भासने लगा, अपने को कई बार आगम निगमों के दिव्यपुरुषोंका मानसभास भी होने लगा, उस समय स्वामी जो सिद्धासन में भी विराजते थे, गुरुओं की कृपा थी, शान्ति समय में दाहिने पैर की एडी से मलेन्द्रिय दबाके उस पैर को अन्दर की घूँटीपर लिंग रखकर लिंग पर वाम पैर की बाहरकी घूँटी रखके दबाके बैठ जाते थे, शिवनाडी शैथिल्य के लिये यत्न करते थे, जब शरीर में पसीना आ जाय, लिंगादि भाग जडसा हो जाय मगज में गर्मी बढके वायुभ्रमण दृष्टिरोध होने लगे तब उस आसन को तजकर गौरक्षासनमें (गोरखासन में) बैठते थे, दोनों पैरों की पलथी को ऊपर उठाकर मस्तक व काँधे पर जमीन में स्थिर हो जाते थे, उदरके तत्त्व झगडा करने पर उस आसन को तजते थे, तब पावडी घोडो आसन लगाते थे, आदि आदि अभ्यास करते थे, अस्मिनाम की वृत्ति को योगाभ्यास में बढाते थे, आन्तःकरणिककायकल्पसे दूर-दूर घूमने निकल जाते थे, अनेक तत्त्वों के ज्ञान को हस्त-आमलक-दर्शन की तरह देख लेते थे, विषयों को समझ लेते थे व लिख लेते थे, लिखना जब कुछ नया भास हो चालू रखते थे, कई तत्त्व ज्ञान के ग्रन्थों के समान लौकिक अलौकिक वृत्तान्तों के

वर्णन, भूतभविष्यत् सृष्टि के वर्णन, ब्राह्मी व काश्यपी प्रजा के वर्णन, देवनीति महर्षिनीति पितृनीति के वर्णन याम्यनीति मानवनीति पितृनीति दैत्यदानव नीतियों के वर्णम, संकल्पसृष्टि दृष्टिसृष्टि मानससृष्टि के साथ दृष्टिसृष्टि स्पर्शसृष्टि मन्त्रसृष्टि दिव्यसृष्टि भौतिकसृष्टि द्रव्यगुण कर्म आध्यात्मिकसृष्टि दाक्षीसृष्टि वैकारिकीसृष्टि तत्त्वों का पञ्चीकरणभाव बीजीकरणभाव युगपर्याय का व्यवस्थापन सर्वत्र गतिसामर्थ्य अनेक सिद्धियाँ अनेक स्मृतियाँ असंख्य भोगपदार्थ जंगम स्थावर पिण्डरीति पक्व परिपाक उद्भव आविर्भाव पोषण संहार स्थिति, प्रकाश अन्धकार की व्यवस्था, अनेक शक्तियाँ देवियों का उद्भावन, योगप्रक्रियाओं द्वारा चिरंजीवित्व सदेह परलोकविचरण- तपस्या में शरीर पर तृणस्तम्बोद्गम बल्मीकारोह, अनेक शरीरधारण, अदृश्यीकरण, नयी सृष्टिनिर्माण जल का स्थल स्थल का जलनिर्माण सागरपान वज्रगिलन वह्निग्रास सूर्यस्तम्भन वज्रस्तम्भन पृथिवीहरण मायोत्पादन मन्त्रयुद्ध कामधेनु कल्पतरुचिन्तमणिप्रयोग इन्द्रजालप्रदर्शन अन्यान्य स्वरूपधारण आदिक सत्ययुग का प्रभाव उनसे आधा त्रेतायुग का प्रभाव उनसे आधा द्वापरयुग का प्रभाव जरातरासा कलियुग का प्रभाव सर्वस्व विपरीतपनारूप महाकलियुग का प्रभाव, भगवदवतारों का उद्भव ऋषिमुनि आचार्यों का उद्भव गुरुसम्प्रदायों का स्थापन, माताएँ देवियाँ शक्तियां सतियाँ योगिनियाँ अप्सराएँ कन्यकाएँ ब्रह्मचारिणियाँ गुर्वाणियां ब्रह्मशालिनियाँ सरिताएँ विद्युतशक्तियाँ आहुतियाँ व्याहृतियाँ पतिव्रताएँ डाकिनियाँ वेतालिनियाँ सरस्वतियाँ गायत्रियाँ गीतिकाएँ नाडिकाएँ राक्षसणियाँ आदि अनेक प्रकार की सृष्टियाँ बढ़ती ही चलीं, इनके भक्ष्य पेय आहार्य उपकार्य रंजनीय तत्त्वों का निर्माण, धातवीय उत्पादन, उपादानीय उत्पादन, विजातीयोत्पादन, सूक्ष्मों से महास्थूल-विकासोत्पादन, अप्रतिहततत्त्वप्रवेशन, बिरोधिचिकित्सन, गुणप्रतिगुणलक्षण द्रव्यादि, गरल मारक नाशक पराभावक शान्तिकृत् तृप्तिकृत् रचन, जाठरविभावादि वृष्ट्यादि ऋतु आर्तवफलादि तमाम सत्य पदार्थ ही प्रजा के लिये रचे गये, प्रजा में स्पर्शसृष्टि के बाद कामनासृष्टि गर्भसृष्टि आदि तथा दुग्ध रस पुष्प फल पत्र भाजी अन्न कण ओषध प्रवाहीसृष्टि," विकृतसृष्टि, रसोई बनाना कलाएँ सीखना, स्वाभाविक कपास काष्ठ अस्थि पाषाण कस्तूरी केसर चर्म रोम प्राण हृदय जीवन हवा गुफाएँ आदि आदि अनेक सुखदुःखकर पदार्थ रचना, परिश्रम निद्रा रात्रि दिन आयुष्य उपार्जन आगम व्यय अकल बिद्याएँ प्रतिबिम्बभाव आदि कई प्रकार के पदार्थ किये, वंशपरिबार क्षेत्रबिस्तार भाषाविस्तार संकेतशास्त्र स्वप्नसंसार लयसंसार आदि आदि भी विचित्र बनाये, पृथिवी जल प्रदेश पर्वत अरण्य प्रदेश रण अजीवन प्रदेश भी बनाये, भूत प्रेतादि बनाये, श्राद्धदान हवनादि निश्चित किये, बन्धन मुक्ति भी दरसाये, यह सब बड़े भारी जानकार सशक्त स्वतन्त्र जादूगर का खेल हो सकता है। उस जादूगर को खोजने के लिये लक्षकोटयवधि देव मानवादि दौड़ पड़े मगर हाथ में न आने पर यथामति गति काव्य कर गये, इनके आधार पर समस्त संसारी समूह चलता है, मार्ग हाथ लगता है, किन्तु बंगला नहीं दीखता कहाँ कितना दूर है, काया पल्टाने वाले साधक ने बंगला भी देख लिया मगर उनके मालिक अदृश्य ही रहा, उसको दृश्य करने के लिये दूरमीन स्थूलमीन फोटोमीन समाधिमीन बनाये व लगाये गये, तब किसी किसी के सामने जादूगर आ खड़ा हुआ फिर भी खेलाड़ी होने से खेल में ही अदृश्य हो जाता है इन्टरवल पाडता है शो बन्द भी करता है स्मृति में रह जाने का नाटय जादू दिखला कर चला जाता है, स्मरण के अनुसार दर्शक यति मुनि शब्दवेधी रूपवेधी शतावधानी लोग यथादर्शन स्मरण संस्कार के अनुसार लिखते हैं बयान किया करते हैं, उनने कोई सहस्रावधानी वेद का, कोई शतावधानी संहिता पुराणों का, कोई दशावधानी सूत्रशास्त्रों का, कोई ड्रेस आभूषणाऽवधानी धर्मशास्त्रों का, कोई क्षणिकाऽवधानी वाहवाह का, नर्तन करते हैं, नर्तन में जितना गम्य उतना उतारते ही हैं दिखलाते हैं, इस प्रकार दिव्य अवधानियों में के एक परमसमर्थ पुरुष

श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी सार्वभौम ने इस युग में वर्तमान समय में ही वेद शास्त्र पुराण इतिहासों में के भी अगम्य विषयों को ले के आवश्यक सिद्ध लगी वैसी श्रीलक्ष्मीनारायण संहिता बनायी, स्वयं लिखी, स्वयं सम्पादित की, स्वयं ही प्रकट की, परमेश्वर ईश्वर अवतार मुक्त प्रजापति लोकपाल सृष्टिपाल राजपाल धर्मपाल प्रजापाल व्रतपाल सन्ततिपाल जीवनपाल सर्वविभागपाल आदि के वृत्तान्त पृथ्वी स्वर्ग पाताल आदि के विभाग ग्रह देव ऋषि पितृ के विभाग पुण्यशाली पापशालियों के विभाग स्वर्ग नरक मोक्ष के विभाग, सागर नागर प्रजागरों के विभाग, दोहन मोहन कवन भवन के विभाग, विशाली झंझाली हरियाली के विभाग द्विपाद चतुष्पाद षट्पाद बहुपादों के चल स्थिरों के विभाग, व्योमयान जलयान भूमियानों के विभाग, यज्ञ रागमग्न कृतलग्न अनालग्नों के विभाग, युगल मूगल दंगलों के विभाग, महायान देवयान राशीयान अमरीयान वीलायतान अक्रिक्तान जलयान गह्वरयानों के विभाग, भगवदंश मुक्तांश भक्तांश धर्मांश शीलांश रक्तांश रक्षांश तीर्थांश अंगांश अंगनांश विहंगमांश जंगमांश द्वीपांश व्रतांश ग्रहांश दानांश समर्पणांश भक्त्यंश जगत्यंश परगत्यंश पुनरावर्तनांश पूर्वकर्मांश त्यागांश सत्तांश स्नेहांश सम्प्रदायांऽश विज्ञानांश चमत्कारांश चैतन्यांश निगूढप्रकाशांऽश जन्मान्तरांश गायनांश यज्ञांश मूर्तिप्रतिमाऽनुष्ठानांश महाप्रसादांश वंशविस्तारांश श्राद्धांश तीर्थांश सतीशीलांश भगवत्प्रपत्त्यंश श्रीहरिशरणागत्यंश तादात्म्यंश सर्वार्पणांश तन्मयत्वांश सेवांश प्रसादांश राजप्रजांश सेवासेवकांश कृपाउद्धारांश अवतरणांश वात्सल्यांश रसांश काव्यांश तर्कांश शाब्दांश प्रमाणांश पदार्थांश आविष्कारांश मिश्रीकरणांश व्यवहारव्यापारांश सामस्तोत्रांश आदि आदि अनेक विभूतियों का वर्णन श्रीलक्ष्मीनारायणसंहिता में हैं, जो कि नाममात्र से वेदशास्त्रसंहितादिक में पाये भी जाते हैं। दिव्यदर्शी सत्पुरुष के लिये निगूढ भगवदैश्वर्यों के लिये एक जीभ कितना ही कह सकेगी, यह कहना अतिशयोक्ति नहीं है भूगोल के सभी खण्डों की प्रजा के वृत्तान्त धर्म कर्म रहनसहनरिवाज वर्णित है, चौदह भुवनों के ईश्वर सृष्टियों के ब्यान दिये हैं, ब्रह्मलोक व मुक्ति उनके साधन, तथा मन्दों के स्वर्ग के साधन भी लिखे हैं, अनेक तीर्थ व वर्तमान भगवदवतार के तीर्थ के वृत्तान्त चमत्कार महाचमत्कार आदि भी मुक्तिप्रद व सन्तोष शान्तिप्रद भी वर्णित किये हैं। महाभारत के बाद पाँच हजार वर्षों के बाद यह श्वेतायनव्यासात्मक श्रीस्वामीजी व्यासरूप ने यह बड़ी संहिता लिखी है। ५४ ग्रन्थ और भी लिखे हैं। अतः समर्थ अवतार हैं। ओं शम्॥

अभिनन्दन स्वरूप में

पण्डित श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी का परिचय

प० रामानन्द झा, व्याकरणाचार्य, साहित्यरत्न,

संस्कृत प्रोफेसर, आयुर्वेद कोलेज, जूनागढ़

भारते पश्चिमे प्रान्ते पुण्ये सागरसंगते। 'रेवताद्रि' समाधारे कंकसौराष्ट्रविश्रुते ॥ १ ॥ वैक्रमेऽष्टादशशते वर्षे सर्वशुभावहे। बलिखातमहाराजः कूकावालाख्यभूपतिः ॥ २ ॥ यं प्रधानं नियोज्यैव ग्रामान् संगृह्य द्वादश। अस्थापयद् राजधानीरूपां हि नगरीं शुभाम् ॥ ३ ॥ नामतः कुंकुमवापीं नवतिग्राममूर्धनीम्। कूकानृपतिमान्यस्य राज्यकल्याणमिच्छतः ॥ ४ ॥ श्रीमत् 'कल्याण' देवानोकस्य ख्यातस्य तस्य वै। नवतिग्रामसमूहात्मकस्य मण्डलस्य यः ॥ ५ ॥ राष्ट्राऽध्यक्षो बली 'लिम्बा' देवानीकः सुपुत्रकः। कूकावालानृपपुत्रे आलावालाख्यभूपतौ ॥ ६ ॥ राज्ये शासत्युन्नतिं वै राष्ट्रस्य कृतवाँस्तदा। आलावालानृपे स्वर्गं गते राज्ञी तु धीमती ॥ ७ ॥ राज्यं समकरोत् कंम्रो लिम्बादेव सहायतः। तस्य पञ्चाऽभवन् पुत्राः सर्वे सद्गुणिनः शुभाः। ८ ॥ ज्येष्ठोलक्ष्मणनामा तत्पश्चाद् गोविन्दसंज्ञकः। ततोऽनु हरजित् पश्चात् मावजित्तु चतुर्थकः ॥ ९ ॥ पञ्चमः सुसुतो विज्ञोगोपालाख्यो हि भक्तिमान्। अस्य गोपालदेवानोकस्य चत्वार आत्मजाः ॥ १० ॥ ज्येष्ठस्तु भगवन्नामा पोपटस्तु द्वितीयकः। ततो गोपालदेवानोकस्य पुण्यवतो गृहे ॥ ११ ॥ धर्मपत्न्यां कम्भरायां देव्यां पुत्रस्तृतीयकः। वैक्रमे चन्द्रषण्णिधिभूमिते (१९६१) वत्सरे शुभे ॥ १२ ॥ ऊर्जकृष्णाष्टमी (सोराष्ट्रीयाऽऽश्विनकृष्णाष्टमी) प्रातः पुत्रो यो जन्म लब्धवान् ॥ (ता० २१-१०-१९०५) (शनिवासरे)। अधीतभाषाषड्वर्गो गुणातीतमुनेस्ततः ॥ १३ ॥ बालमुकुन्दमुन्याख्ये शिष्येऽर्पितस्वजीवनः। देवनिभो महायोगी जन्मसिद्धः प्रतापवान् ॥ १४ ॥ वर्षे त्वेकादशे ऊर्जेवृत्तालये तु वैष्णवीम्। एकादश्यां शुक्लपक्षे श्रीपतिसम्प्रसादतः ॥ १५ ॥ आचार्यात् दीक्षां प्राप्य ब्रह्मचारिव्रतोऽध्ययनमाचरत्। पिता तु नीतवान्नैजं गृहं कृत्वा त्वदीक्षितम् ॥ १६ ॥ ततश्चतुर्दशे वर्षे स्वामिनारायणस्य सः। दीक्षां दुर्गपुरे भाद्रे शुक्लैकादशिकादिने ॥ १७ ॥ पुनः प्राप्य जीर्णदुर्गे स्थित्वाऽभ्यासमथाऽकरोत्। बालकृष्णानन्दशास्त्रिगुर्वग्रे कौमुदीं मुदा ॥ १८ ॥ अधीत्य काव्यप्रभृतीन् तथा भागवतं कथाम्। पारायणं तु सप्ताहं कृत्वाऽगात् वटपत्तनम् ॥ १९ ॥ काशीमागत्य शास्त्राणि सर्वाण्यधीत्य तत्त्वतः। सन्दृब्धे येन भाष्ये वै प्रगल्भे सांख्ययोगयोः ॥ २० ॥ वेदान्तन्यायसाहित्यसांख्ययोगसमाश्रयाः। टीकाग्रन्थाश्च सुस्पष्टा रचितास्तात्त्विकास्तथा । २१ ॥ प्रमाख्यातिविमर्शाद्या भाष्यं ब्रह्मरसायनम्। सुधासिन्धोरथ श्रीस्वामिनारायणदर्शनम् ॥ २२ ॥ सत्संग-भाष्यमथ वै हरिस्वरूपनिर्णये। तत्त्वप्रभावलीभूमण्डलीयाद्यास्तथाऽपरे ॥ २३ ॥ अपि ग्रन्थाश्च रचिताः सिद्धान्ता वर्णिताः स्फुटाः। दृष्ट्वा तं योग्यविद्वांसं सर्वसद्गुणशालिनम् ॥ २४ ॥ सर्वविद्याश्रयं सर्वशक्तिशालिनमुत्तमम् । वृत्तालयपदाऽऽधीशाऽऽनन्दप्रसाददेशिकाः ॥ २५ ॥ वृत्तालयपुरे यस्मै सद्गुर्वाख्यं पदं ददुः। काशीपण्डितधौरेयैः सभायां काशिकापुरे ॥ २६ ॥ प्रदत्तं वैष्णवविद्वत्सार्वभौमपदं महत्। अन्ये उपाधयश्चापि काश्याद्याप्ताः परीक्षणे ॥ २७ ॥ गुर्वाशिषस्तथा लब्धा प्रसादफलबोधिकाः । श्वेतायनीयसंहितालेखनं विस्तृतं कृतम् ॥ २८ ॥ मीमांसार्थसंग्रहस्य सुस्फुटा किरणावली। किरणं किरणावल्यो न्यायादौ रचितास्तथा ॥ २९ ॥ स्वामिनारायणतत्त्वैः श्रुतितात्पर्य-

निर्णयः' ग्रन्थः सुरचितः पाराशर्यणी सत्संगिजीवने ॥ ३० ॥ तत्त्वमुक्ताकलापस्य सर्वस्य किरणावली। सर्वदर्शनसिद्धान्ताऽऽवेदिनी न्यायशालिनी ॥ ३१ ॥ रचिता शोभना नातिगहना ह्युपकारिणी। मीमांसायाः सत्प्रमाणपरिष्कृतिरपि स्फुटा ॥ ३२ ॥ रचिता मन्त्रबोधादिकारिणी तत्त्वसारिणी। गोपालानन्दमुनिकृद्वार्ताः संस्कृतपद्यगाः ॥ ३३ ॥ गुणातीतानन्दमुनिवार्ता जग्रन्थ संस्कृते। श्रीमद्गुणातीतब्रह्मोपनिषत् कलिता परा ॥ ३४ ॥ ख्यातिविमर्श उत्कृष्टो यावत्ख्यातिनिरूपकः। रचिताऽखिलभूमण्डलीयमुक्तिव्यवस्थिका ॥ ३५ ॥ चित्सुखी टिप्पनी चापि कृता गूढार्थबोधिनी। गादाधर्याश्च सामान्यनिरुक्तेः क्रोडमित्यपि ॥ ३६ ॥ एवमन्येऽतिसारांशा निबन्धाश्चापि निर्मिताः। अयं चैतादृशो विद्वान् नैयायिकधुरन्धरः ॥ ३७ ॥ सौराष्ट्रे गौर्जरे चापि करोति पुण्यकृच्छुभम्। कलाविज्ञान सामान्यविशेषाऽध्ययनात्मकम् (श्रीकृष्णवल्लभाचार्यकोलेज आर्टस सायन्स कोमर्स आदि विद्याविभूषितम्) ॥ ३८ ॥ मनुशिक्षाप्रदाऽध्यक्षचालितं बहुविद्यकम्। महाविद्यालयं चेति राष्ट्रस्य हितकारकम् ॥ ३९ ॥ भगवत्कार्यमेतद्वै करोति भगवान् स्वयम्। साक्षात्साधुस्वरूपोऽत्र विज्ञो विद्वत्प्रपूजितः ॥ ४० ॥ M. A. एम. ए. आग्लप्रविद्यायां हिन्द्यां विद्वाँश्च शास्त्रकृत्। विशिष्टब्रह्माऽद्वैतं स्वं मतं प्रख्यापयन् वरम् ॥ ४१ ॥ यश्चकाराऽन्यशास्त्राणि विविधानि मुदाहरेः। साम्प्रदायिकसिद्धान्ताऽऽवेदकानि प्रसादतः ॥ ४२ ॥ श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः स्वामिनारायणाऽऽश्रितः। न्यायाचार्यपदैरन्यैः सांख्यतीर्थादिभूषितः ॥ ४३ ॥ सोऽत्र विराजते स्वामीश्वरः ख्यातो भुवि प्रभुः। साध्वाशीर्वादपीयूषाऽसीमपानप्रजीवनः ॥ ४४ ॥ श्रीकृष्णवल्लभाचार्यो धर्माचार्यो विरक्तिमान् ॥ जन्मौषधिमन्त्रतपःसमाधिसिद्धिभूषितः ॥ ४५ ॥ इदानीं वर्तते देशे पश्चिमकाशिभूषणः ॥ विद्याध्यापक उत्कृष्टो विद्यासन्तोषकारकः ॥ ४६ ॥ **वेणीरामशास्त्रिणः, जामनगरम्** ॥

श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः स्वामिनारायणाश्रितः। विद्वान् साधुवरः पुण्यसंभृतात्मा यतीश्वरः ॥ ४७ ॥ योऽसौ काशीं समागत्य तृणीकृतपरिश्रमः। अर्थैः स्वार्थं विहायेदं प्रकाशयति सादरम् ॥ ४८ ॥ तस्मै मत्प्रियशिष्याय वश्यायाऽशेषभक्तये, सदानन्दमयायैवमाशीर्वादः प्रदीयते ॥ ४९ ॥ पुण्यपण्डितभावस्त्वं यशोमुकुटमण्डितः। पूर्णायुः सर्वपुण्यानामाश्रयः सन् सुखी भव ॥ ५० ॥ **श्रीवामाचरणभट्टाचार्येण काशी** ॥

नव्ये न्याये च साँख्ये श्रुतिशिरसि च योगेऽन्यशास्त्रेषु योऽस्ति,
मीमाँसायाँ च काव्ये नवकृतिरचने पारगो दर्शनेषु।
वाग्धारायां विमर्शे विबुधसदसि वैशेषिके लेखने च,
निष्णातश्चेतिहासे जयति स निगमे तन्त्रशास्त्रे पुराणे ॥ ५१ ॥

श्रीकृष्णोवल्लभाचार्य इह सुरनिभश्चाऽर्हणाऽर्हः शुभांको
विद्वान् ज्ञाने प्रवीणो बुधपरिषदि काश्यां च यो लब्धकीर्तिः।
मूर्धन्यं यत्सुधासिन्धुरसमरचयद् ब्रह्मरासायनाख्यं,
भाष्यं वै दर्शनानां पुरुमततततयो यत्र विश्रान्तिमापुः ॥ ५२ ॥

शास्त्रार्थे च विलेखने, नवकृतौ, चाऽध्यापने पर्षदि,
व्याख्याने च विवेचने, नवनवोन्मेषे, प्रमानिर्णये।
ऊहे, च ग्रथने, परात्मभजने, शास्त्रेषु पारंगतः,
श्रीकृष्णाऽन्वितवल्लभाऽऽर्यमुनिराट् विद्याऽब्धिरास्ते जये ॥ ५३ ॥

काश्यां यस्य विराजते सुमहिमा यः शास्त्रसिद्धान्तविद्,
विद्वच्छ्रेणिषु यः सतां बहुमतः श्रीस्वामिनारायणे ।
श्रीसत्संगिसुजीवनाख्यपरमग्रन्थार्णवस्नातधी-
र्जीयात् कृष्णसुवल्लभार्य इह स प्रौढप्रभाभासुरः ॥ ५४ ॥

वेद-ज्योतिषाचार्यः
श्रीव्रजलालशास्त्रिणः राजकोटनगरम्

युगलम्—

आम्नाति-प्रयति-चित्ति-सत्प्रभाव्यावृति-व्यभिसृष्टिसंगताः ।
वीक्ष्य कृत्स्नविदशेषशेमुषीः कृष्णवल्लभभिधः स्वधीतिमान् ॥ ५५ ॥
भूषितः स्वसुमतिप्रमापितः शारदाऽऽसनिविधिप्रसादभाक् ।
योग्यदार्शनिकपञ्चकाननश्चेति पात्रमिति नाऽपरोक्षता ॥ ५६ ॥

श्रीदामोदरलालशास्त्रिभिर्माध्वाचार्यैः
दार्शनिकसार्वभौमैः काश्याम्

श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी विरचित ग्रन्थों के परिचय

श्रीब्रजलाल शास्त्री, काश्याम्

१. **न्यायसिद्धान्तमुक्तावल्याः किरणावली**—इसमें न्यायदर्शन के 'प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टान्त, सिद्धान्त, अवयव, तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितण्डा, हेत्वाभास, छल, जाति, निग्रहस्थान' नामों से परिचित सोलहपदार्थ, और वैशेषिकदर्शन के 'द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय, अभाव' नामों से परिचित सप्त पदार्थ, तथा नव्यन्याय के अनेक परिष्कृत पदार्थों पर तथा दर्शनशास्त्रों के सिद्धान्तित पदार्थों के स्वरूप पर, पूर्वपक्ष उत्तरपक्ष परिष्कृत सिद्धान्तों से भरपूर यह ग्रन्थ हैं।

इसमें मंगलवाद, ईश्वरवाद, पदार्थों का साधर्म्य, वैधर्म्य, पदार्थों के लक्षण, परमाणुवाद, जातिवाद, उपाधिवाद, प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष, विमर्श, पार्थिव, जलीय, तैजसीय, वायवीय, गगनीय, काल, दिशाएँ, विभिन्न, आत्मतत्त्व स्वरूप चार्वाक-वेदान्ती, बौद्ध, वैष्णव, ऋषियों के मन्तव्य, आत्मा के गुणों में ज्ञान के विभाग, साधन, संसर्ग, अलौकिक सम्बन्ध, प्रमितियाँ, सविकल्पक, निर्विकल्पक ज्ञप्तियाँ, अनुमान के अंग व्याप्तियाँ परामर्श प्रमितियाँ, पक्षता, सद्धेलुवाद, असद्धेतुवाद, जिसमें सव्यभिचरितत्त्व, विरोध, समप्रकरण, असिद्धियाँ, बाध, आदि के विशालरूप में वर्णन, तथा उपमानप्रमाण उसका फल, शब्द प्रमाण, शब्द की शक्तियाँ लक्षणाएँ, शाब्दबोध के कारण आकांक्षा, योग्यता, आसत्ति, तात्पर्यज्ञानम्, यौगिक शक्ति रूढि शक्ति, योगरूढि शक्ति, यौगिकरूढि शक्ति। जहत्स्वार्था, अजहत्स्वार्था, जहदजहत्स्वार्था, व्यंग्या, साध्यवसानिका, गौणी, आदि लक्षणाएँ, तथा स्मृतिसंस्कारकार्यकारणभाव, गुणों के स्वरूप, भेद, लक्षण, समानता, ग्राह्यता, कारणकार्यता, अन्यथासिद्धिस्वरूप, व्यर्थविशेषणता, क्षणों के विचार, निश्चय विकल्प विपर्यय भ्रान्तिस्वरूप, अप्रमात्वविवेचन, नामधातु प्रत्ययार्थ, भावना कृति प्रयत्न संस्कार, चैतन्य, प्रमाण प्रामाण्य, ज्ञानधाराओं की ग्राह्यग्राहकता, वाक्यविभाग, विधि निषेध विभाग, प्रवृत्ति-वाचकतिबादि, धर्म अधर्म, असदुत्तररूप जात्युत्तर, आत्माश्रयादितर्कस्वरूप, प्रतिज्ञाभंजक निम्नता बोधक निग्रहस्थान षट्पक्षीकथाप्रस्थान, विरुद्धवादों की समिति समायोजन, अन्धकार, शक्ति, सादृश्य, शुद्धि, अशुद्धि, संगतियाँ, आदि कई विषय इस ग्रन्थ में प्राचीन नवीन दर्शन तत्त्वग्रन्थों के अनुसार स्वबुद्धि से पदार्थ विवेचन किया गया है, न्यायतत्त्वज्ञान का यह खजाना है॥ १॥

२. **तर्कसंग्रहदीपिका किरणावली**
३. **न्यायबोधिनीपदकृत्यटिप्पणी**

यह न्यायशास्त्र में प्रवेश के लिये संक्षिप्त रूप में न्याय के पदार्थों को तथा वैशेषिक के पदार्थों को स्पष्टता करने वाला प्राथमिक ग्रन्थ है, मगर समझने में क्लिष्ट हो जाता है, इसके उपर **दीपिका टीका** और अधिक पदार्थों को ग्रहण करती हुई मूलार्थ अन्यार्थ गूढार्थ उत्कृष्टार्थों को भी स्वरूप में समाविष्ट करती हुई गम्भीरार्थसंभृत टीका है, यह विशाल विवेचन के सिवा अवगत नहीं हो सकती, अवगत कराने के लिये विशाल स्पष्ट किरणावली टीका तथा टिप्पणियाँ रची गई हैं, जिनमें 'द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय, अभाव, सप्त पदार्थ लेके, पृथ्वी जल तेज वायु आकाश काल दिशा आत्मा, मन, ये नव द्रव्य विवेचित हैं, तथा रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, संख्या,

परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, वियोग, परत्व, अपरत्व, गुरुत्व, द्रवत्व, स्नेह, शब्द बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, धर्म, अधर्म, संस्कार, २४ गुण विवेचित किये गये हैं, तथा क्रियाओं के भेद, तथा जाति-उपाधि के स्वरूप लक्षण परीक्षा, विशेष नामक, वस्तुओं के भेदकपदार्थ, नित्यसम्बन्ध, अभावों के भेद, उनके लक्षण आदि विवेचित किये गये हैं। तथा ज्ञान के प्रमाण प्रमाओं के भेद, यथार्थ अयथार्थत्वों के भेद, मिथ्यात्व के भेद, सत्यनिश्चयादि के भेद, तथा सन्निकर्षों के स्वरूप, अनुमान के पञ्चाऽवयव वाक्य, अनुमान के विरोधी हेत्वाभासों के विशद स्वरूप, उपमाओं के स्वरूप, अन्य प्रमाणों के स्वरूप, प्रामाण्य-वाद की विप्रतिपत्ति का स्वरूप, हृदयंगम विवेचित ज्ञान प्रामाण्याऽप्रामाण्य में मतान्तर, तथा शब्द-छलादि, तथा पराजय देने के स्थल, तथा हरेक प्रयोग में देने योग्य दोष आदि खूब खूब उदाहरण सहित विवेचन किया गया है। यह किरणावली मूर्धन्य टीका है।

४. **सांख्यकारिकायाः स्वामिनारायणभाष्यम्** यह भाष्य विशालरूप में माया, माया के २४ तत्त्व, तत्त्वों की सिद्धि, उनके लिये प्रमाण, दार्शनिकों के मतमतान्तर, प्रमाणों के विशद स्वरूप, वीत, अवीत सामान्यतोदृष्ट नामक प्रमाणों के विवेचन, पदार्थों के ग्रहण में प्रतिरोधक के वर्णन, कारण में भी सत्कार्य सूक्ष्म है ही इस पर कई प्रयोग, व्यक्त अव्यक्त लिङ्गशरीर कारणकार्यतादात्म्य सूक्ष्म स्थूल तत्त्वों के विभाग, व्यक्ताऽव्यक्तत्व पर दार्शनिकों के मतमतान्तर, आत्मतत्त्व की सिद्धि, आत्माओं के स्वरूपवाद, सगुण निर्गुण क्षणिक अक्षणिक ज्ञातृत्वादिवाद, माया तत्कार्य और आत्माओं के साधर्म्य वैधर्म्य विवेचन, सत्त्व रजः तमः गुणों के स्वरूप स्वभाव धर्म कर्म स्थिति परिणाम, मिलकर फलप्रदता, कारणकार्य का विभाग तथा अविभाग, कारणरूप में प्रकृति को सिद्धि, आत्मैक्यवाद, पुरुष को सिद्धि, साक्षित्वसिद्धि, मुक्ति, मध्यस्थता, द्रष्टृत्व, कर्तृत्व आदि का विवेचन, जड़ चेतन ग्रन्थिजन्य संसार, अन्ध पंगु के संयोग से प्रवर्तक होने पर विस्तृत विचार, माया महत्तत्त्व अहंकार पञ्चतन्मात्राएँ दश इन्द्रियाँ मन, पाँच भूत उनके गुण, लक्षण धर्म अधर्म ज्ञान अज्ञान राग वैराग्य ऐश्वर्य अनैश्वर्य, इन्द्रियादिगण विभाग, अन्तःकरणविभाग, ग्राहकवत्तियाँ, प्राणवृत्ति, प्रत्यक्ष में अप्रत्यक्ष में भी एक साथ और क्रम से वृत्ति निकलना, सभी में अनागताऽवस्थ पुरुषार्थ को कारणपना, पदार्थों का साकारवाद, ग्राह्य धार्य भोग्य आकारों का प्रतिपादन, बुद्धि भोग्य प्रतिबिम्बवाद, उस पर दर्शनों के सिद्धान्त, दिव्य अदिव्य विषयों की व्यवस्था, वर्तमानकालीन ग्राहकता, त्रिकालीन ग्राहकता, प्रदीपवत् कार्यकारिता, विशेष अविशेष पदार्थों के स्वरूप, सूक्ष्म स्थूल विशेषों के स्वरूप, सूक्ष्म शरीर के आठ भाव, शरीरों को परस्पर अपेक्षा, आदिसृष्टि से शरीतत्त्वों की हाजरी, सांसिद्धिक प्राकृतिक वैकृतिक भाव पदार्थों का विवेचन, ज्ञान द्वारा मोक्ष, अज्ञानादि द्वारा बन्धन, बन्धन के भेद, ईश्वरों के संसार, बुद्धि के विपर्यय तुष्टि सिद्धि अशक्ति आदि के ५० भेद, अष्ट सिद्धियाँ, तमो मोह महामोह तामिस्र अन्धतामिस्र आदि के विभाग, माया में उपादान में काल में भाग्य में सन्तोष के रूप, दिव्य सिद्धियाँ, लिंगसर्ग, भावसर्ग, दैवसर्ग, पशुपक्ष्यादिसर्ग, मानुषसर्ग, सात्त्विक राजस तामस सर्ग, विभाग, माया का सर्ग आत्माओं के मोक्ष के लिये बताया जाना, नर्तकी दर्शकों को खुश करके निवृत्ति लेती है वैसी प्रकृति भी उपकारिणी वर्णित की गई है। राज्ञीवत् परदेवाली माया है वही बन्धन में आती है मुक्ति में जाती है, दोनों कृतकार्य होने से संसार से निवृत्त होते हैं। यह सब प्रतिपादित किया है। देवता शब्द से ज्ञानशक्तियाँ ग्राहकस्वभाववाली समझना चाहिए।

५. **सांख्य तत्त्व कौमुद्याः किरणावली**
६. **सांख्यकारिकागौडपादभाष्यस्य किरणम्**

इन दोनों ग्रन्थों में किरणावली सांख्यदर्शन के तथा नव्य तर्कप्रणाली से तमाम तत्त्वों को स्फुट करती है जो कि ४ नम्बर में बतलाये हैं। और

किरणग्रन्थ गौडपादभाष्य के गहन अस्पष्ट स्थलों को तथा गुप्तविषयों को लेके विशदरूप में स्पष्टता करता है। ये दोनों ग्रन्थ सांख्यशास्त्र के विषयों को अत्युत्तमप्रक्रियाओं से प्रतिपादित करते हैं, अध्यापन में मुक्तकण्ठ से प्रशंसित हुए हैं।

७. **योगसूत्राणां स्वामिनारायणभाष्यम्**—इस भाष्य में योग के पदार्थों का पूर्ण प्रतिपादन किया है, मोक्ष का स्वरूप, योग की परम्परा, चारसाधन, जीवनमुक्ति, वैदिकत्वविचार, चार अनुबन्ध, छब्बीश पदार्थ, अन्यमतों के पदार्थ, परमपुरुषार्थ, अभावनिर्वाह, बुद्धिधर्म, तीनदुःख, प्रमाणप्रयोजन, तत्त्वज्ञान, चित्त की पञ्च भूमिकाएँ, वैराग्यों के भेद, द्रष्टा का स्वरूप, प्रकाश में वैशेषिकमत, सुषुप्त्याद्यवस्था, आत्मपरिमाण में आर्हतमत, वेदान्तिमत, चार्वाकमत, इन्द्रिय मन प्राण क्षणिकज्ञान नित्यविज्ञान, आदि पर विचार, शुद्धाद्वैत, निम्बार्क, आदि के मत, आत्मा की अनेकता एकता प्रतिबिम्बतादि मत, वृत्तितन्मयता, सुखादिमत्त्व में वैशेषिकमत में मीमांसक चार्वाक आर्हत बौद्ध वेदान्ती शुद्धाद्वैती माध्व विशिष्टाद्वैत शैवादि मत विवेचन, प्रमाण, प्रत्यक्ष, अनुमान, इसके भेद, अवयव, असद्धेतु, प्रकृतिसिद्धि, शब्दप्रमाण, शक्ति, लक्षणा, पदविभाग, शाब्दबोध के कारण, अनुमान उपमान अर्थापत्ति अनुपलब्धि संभव ऐतिह्य चेष्टादि के विचार, विपर्यय भ्रम संशय अविद्या, पञ्चपर्व, निद्रा सुषुप्ति के विवेचन, स्मृति प्रत्यभिज्ञा, वृत्तिनिरोध के अभ्यास, वैराग्यों के स्वरूप, विदेह मुक्ति निरूपण, ईश्वरकोटि, सम्प्रज्ञातसमाधि असम्प्रज्ञातसमाधि, ईश्वरप्रणिधान में नवधा भक्ति, ब्रह्म पर ब्रह्म के स्वरूप, रुद्रादि देवता, सामानाधिकरण्य अखण्डार्थता, तदनुपपत्ति, विशिष्ट वैशिष्ट्यबोध, अज्ञान प्रतिबिम्ब की अनुपपत्ति, श्रुतिस्मृति का भेद में तात्पर्य, व्यासमत, सृष्टिप्रक्रिया, प्रलय, प्रणवजप, विक्षेपों का जय, क्षणिकता खण्डन, चित्त प्रसन्नतासाधन, हृदयादि के कमल, ध्यानदार्ढ्यम्, शारीर चक्र देव बीज जपादि के स्वरूप, सवितर्क निर्वितर्क संप्रज्ञात, परमाणुपुञ्जवाद, पदार्थों का साकारत्ववाद, सबीजसम्प्रज्ञात की षड्विधता, निर्विचार समाधि, ऋतम्भरा प्रज्ञा, फल, क्रियायोग में तपः स्वाध्याय ईश्वरप्रणिधानादि। प्रकृति जन्य जगत्, सत्कार्यवाद, असत् से सत् में बौद्ध योगाचार सौत्रान्तिक वैभाषिक, जैन के मत, सत् से असत् में न्याय वैशेषिक चार्वाक अद्वैती द्वैतो निम्बार्क माहेश्वर वैयाकरण के मत। सत् से सत् में शुद्धाद्वैती तथा योगी के मत। सत्कार्यसिद्धिप्रकार, अद्वैति के मायिकता विचार में निष्प्रयोजनता, अविद्या अस्मिता राग द्वेष अभिनिवेश, कर्म, जाति आयुः भोगः, परिणाम ताप संस्कार जन्य दुःख, इसमें हेतु संयोग, दृश्य का स्वभाव, आसन धौति बस्ति नेति त्राटक नौलि कपालभाति, प्राणायाम भेद; सूर्यभेदन, उज्जायी सीत्करी शीतली भस्त्रिका भ्रामरी मूर्छा प्लाविनी क्रियाएँ। कुण्डली जाग्रती के उपाय, महामुद्रा महाबन्ध खेचरी उड्डीयान जालंधर मूलबन्ध, वज्रोली अमरोली आदि मुद्राएँ, प्रत्याहार धारणा मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूरक, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञाचक्र, ब्रह्मपद्म, भगवद्रूपादि में धारणा, ध्यान, समाधि, निरोध, एकाग्रता, विभूति, सर्वप्राणि भाषाज्ञान पूर्वजन्मादिज्ञान, परचित्तप्रवेश, अन्तर्धान, मरणचिह्नज्ञान, भुवन सृष्टि आवरण वैराज महाविष्णु हिरण्मयकोश नित्यगोलोक शबल ब्रह्म केवल ब्रह्म अक्षर ब्रह्म धाम का ज्ञान, ताराव्यूह कायव्यूह, क्षुधातृषा निवारण, सिद्धदर्शन सिद्धिदर्शन आकाशादिगति, भौतिकजय, मनोवेगित्व, विवेकज्ञान सार्वज्ञ्य, तारकज्ञान, निर्माणचित्तता, वासनालय, चित्त को कैवल्यप्राग्भारता, विवेकख्याति, कैवल्य स्वरूप आदि, विवेचित किये हैं।

८. **योग सूत्र भोजवृत्ति किरणम्**—इसमें सूत्रार्थ पर भोजवृत्ति के काठिन्यार्थ पर विशद रूप से किरणनामक विवेचन किया गया है, नये-नये विचार भी दर्शाये हैं।

९. **श्रीस्वामिनारायण वेदान्तसार**—यह वेदान्त की प्रक्रिया का ग्रन्थ है, इसमें मूलप्रकृति उसके तत्त्व, काल; जीव ईश्वर, ब्रह्म, पर ब्रह्म, ज्ञान शक्ति, आदि द्रव्य, तथा रूप रसादिगुण, तथा, ज्ञान के विभाग, तथा प्रमाणों के भेद तथा प्रमितियाँ तथा ख्यातियाँ, वाक्यविभाग आदि पदार्थ सुनिरूपित हैं। ज्ञान का सत्यत्व यथार्थत्व प्रतिपादित किया है, अन्य ख्यातियाँ दिखलायी हैं, भ्रान्तिज्ञानों का याथार्थ्य ही सिद्ध किया है, प्रमेय प्रमाणों का विशाल विवेचन है, पञ्चरात्रादि प्रामाण्य-स्वामिनारायण-मुखवाणी प्रामाण्यादि स्पष्ट दिखाया है। प्रकृति अहंकारमन इन्द्रिय तन्मात्रा भूत आदि के लक्षण परीक्षादि विवेचित हैं। नित्य विभूति, ज्ञान की अवस्थाएँ, भक्ति के स्वरूप, षडविधशरणागति आदि साधन बतलाये हैं, देहात्मवादादिनिरास, बद्धमुक्तादिभेद जीवेश्वरादिस्वरूप मुक्तों के स्वरूप, ब्रह्म का द्वैविध्य, पर ब्रह्म के पर व्यूहविभवादि स्वरूप तथा रूप गुण अन्तर्यामिता आदि भी विशेष विवेचित हैं। कई नयी रचना भी बताई है।

१०. **हितोपदेशे मित्रलाभकिरणावली**—यह प्राथमिक विद्यार्थीओं के लिये अन्वय, कर्तरि कर्मणि वाच्यस्वरूप के हिन्दी में अर्थ सहित किरणावलीटीका, युक्त आदि स्वरूप में प्रचलित है।

११. **शिक्षापत्र्याः किरणावली**—श्रीस्वामिनारायणप्रभुने लिखा हुआ यह ग्रन्थ धर्मशास्त्र है, इसमें धर्मज्ञान वैराग्य भक्ति व्यवहार प्रतिपादित हैं, इस संस्कृत ग्रन्थ पर संस्कृत गूजराती उपयोगी नवीन टीका की गई हैं।

१२. **श्रीगुणातीतानन्दस्वामिवार्ता**—यह ग्रन्थ उपदेश रूप में पाँच प्रकरण में विभक्त है, संस्कृत श्लोको में ग्रथित है, ६२०० छहजार दोसो श्लोको का ग्रन्थ है, इसके क्रमशः १ भगवत्सन्त महिमा, २ भगवान का निश्चय, ३ सन्तसमागम, ४ भगवान के ऐश्वर्य चमत्कार, ५ सर्वदेशीय समझ, इस प्रकार विषय हैं। श्रीहरि प्रवर्तित ११४ धार्मिक तपस्वी वर्तनों की आज्ञायें हैं। यह सत्संगिओं को उत्तम उपासना व ज्ञान करा के ब्रह्मरूप बना देता हैं।

१३. **श्रीगोपालानन्दस्वामिवार्ता**—यह ग्रन्थ संस्कृत करीब ४७५० चार हजार सातसो पचास श्लोकों में हैं, इनके तीन प्रकरण हैं, १–भगवन्महिम समज्ञप्ति, २–भगवन्निश्चयसमज्ञप्ति, ३–भगवत्तद्भक्त-परिचयज्ञानम्। तथा परिशिष्ट में भगवदवतारादिपरिचय। यह उपदेश ब्रह्मरूप जीवात्माओं को पर ब्रह्म में स्थिति करा देता है।

१४. **श्रीस्वामिनारायणवचनामृतानि**—२६२ तरंगों का प्रश्नोत्तररूप में संग्रहित यह ग्रन्थ है, इसमें सर्वत्र दार्शनिक तत्त्वों पर आध्यात्मिक उपदेश हैं। मतमतान्तरों का समावेश है। सिद्धान्त सर्वत्र बताये गये हैं। यह ग्रन्थ संस्कृत करीब ८४०० श्लोकों में उपदिष्ट है, तत्त्वज्ञान भक्ति धर्म वैराग्य सद्गुण आदि के कार्य कारणभावों के प्रश्नोत्तरों से भरा है, सभी दार्शनिकों के सिद्धान्त इसमें मिलेंगे, इसके उपदेश के तत्त्वज्ञानादि पर श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदाय निर्भर है। इसका संस्कृत नाम है **श्रीहरिवाक्य-सुधासिन्धुः**, इसके पर ब्रह्मरसायन महाभाष्य लगभग पाण्डुलिपि पाँच हजार से अधिक पृष्ठों में है, इनके २२५० सवा दो हजार सूत्र भी है, यह समस्त तत्त्व वेत्ताओं के लिये उपादेय है। भारतीय विद्याओं का खजाना कहने से अतिशयोक्ति नहीं होगी।। सूत्र ब्रह्मरसायनभाष्यादि रचयिता श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजीने कोई भी दार्शनिक विचार बाकी नहीं रक्खा है।

१५. **शिक्षापत्री**—यह २१२ श्लोकों का धर्मशास्त्र है इस पर हजारन स्मृति आदि के प्रमाण लेके विशाल टीका लिखी गई है। इसका सार वाक्यार्थ विचार श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजीने किया है।

१६: **अखिलभूमण्डलीय साम्प्रदायिकमुक्तिव्यवस्था**—यह मूलग्रन्थ ही संस्कृतश्लोक आदि में श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजीने रचा है। इसमें अवतार विभाग, मोक्ष में मतमतान्तर, आत्मा में भिन्न-भिन्न मत, भगवान के ऐश्वर्य, अवतार प्रयोजन, भूगोलवर्णन, युग प्रलय निर्देश, अष्टावरण, प्राकृतावरण, आलोकाकाश, चिन्मयाकाश, यमद्वीप, कैलास, ८४ सिद्ध, सत्त्वस्वभावाकाश, सात चैतन्य, यवनादिमत, अमृत महाकाश, सप्तमहाद्वीप, हिरण्मयकोश, निरंजन ब्रह्मलोक, शवल ब्रह्मलोक, केवलब्रह्मलोक, अक्षरब्रह्मलोक, साकार निराकार अक्षर, परमधाम, विवेक, चार शरीर, पंचतत्त्वनिर्णय, भगवान् के चिह्न, मोक्षसाधन, ब्रह्मविद्या, तथा मुक्तिस्थिति का विवेचन किया है॥

१७. **तत्त्वप्रभावली**—महाकठिन तत्त्वसंभृत नवीन विशिष्ट न्यायशास्त्र, सुपरिष्कृत रचना में है, ७०० से अधिक कारिकाओं में ग्रथित है, इसका तत्त्वप्रभावलीरूप में जटिल विवेचन भी स्वकृत ही है। यह **श्वैतायनीयं विशिष्ट न्याय शास्त्रं नाम** से भी प्रकाश में रक्खा है, श्वेतायनव्यास स्वयं स्वामीजी ही हैं। इनके १ प्रमेय, २ प्रमाण, ३ प्रमिति, ४ प्रमाता, चार खण्ड हैं, उनमें चौदह परिच्छेद हैं, १ पदार्थ-निरूपणम् २ पदार्थसाधर्म्यम्, ३ द्रव्यनिरूपणम्, ४ गुणनिरूपणम्, ५ तत्तद्गुणनिरूपणम्, ६ ज्ञान-निरूपणम्, ७ तर्कनिरूपणम्, ८ नव प्रमाणनिरूपणम्, ९ विविधविप्रतिपत्तिप्रदर्शनम्, १० अनुमान परिच्छेदः, ११ शब्द परिच्छेदः, १२ प्रमितिविविधता परिच्छेदः, १३ प्रमातृविविधतापरिच्छेदः, १४ पञ्च तत्त्व परिच्छेदः। इस विशालकाय ग्रन्थ में कहे हुए परिच्छेदों के पदार्थों पर दार्शनिक प्राचीन नवीन सिद्धान्त दर्शाये हैं, यह नव्यन्याय का विशिष्ट तत्त्वों का तत्त्वज्ञान का खजाना है।

विषय विवेचन—इष्टता हेतुता आदि बाईस संगतियाँ दिखलायी हैं। परमात्मसिद्धि के नये ही अनुमान कहे हैं। द्रव्य गुण कर्म शक्ति संसर्ग धर्म विशेष अभाव नामक अष्टपदार्थसिद्धि, तथा अन्य पदार्थों के प्रश्नोत्तर दर्शाये हैं। वसुन्धरादि तमः सहित दश द्रव्यों की परीक्षा, अहंकारादिकों का अन्तर्भाव आदि बताये हैं। गन्धरूप रसादि पैंतीस गुण कहे हैं, अधिक न्यून की परीक्षा भी की है। क्रिया कर्म सोलह प्रकार से वर्णित किया गया है, चेष्टा का विशद रूप में वर्णन किया है। सांसिद्धि की नैमित्तिकी वैकृतिकी त्रिविधा शक्ति कही है। भक्तों में, सायन्स में, पदार्थमिश्रण में, इन्द्रजाल खेल में, योगाभ्यास में औषध में, स्वेदजादि में, मन्त्रों में, प्रोक्षण में, पदों में, देवप्रतिष्ठा में, ऐश्वर्यसिद्धि में, संकरीकृत बीज में, शुद्धि में, मेधा में, मद्यादि में, इत्यादि में शक्तियाँ निरूपित की गई हैं। समवाय स्वरूप तादात्म्य कालिक पर्याप्ति, और अधिक भी संसर्ग माने गये हैं। जाति उपाधिरूप धर्म व्याप्यव्यापकता, जातिविघटकता, उपाधित्व प्रयोजकता, कही हैं। विशेष पदार्थ की आवश्यकता पर विचार किया गया है। नञर्थाऽभाव की पञ्चविधता कही है, भाव में अभाव में तद्रूपता भी वर्णित की है। अभावों का विरोध, अतिरिक्तत्व आदि सिद्ध किये हैं।

सभी पदार्थों का नव आठ सात छः पाँच चार तीन दो का साधर्म्य वैधर्म्यादि विचार किया है। द्रव्यों का समस्त और व्यस्त रूप से भी साधर्म्य वैधर्म्य कहा है। समवायि असमवायि निमित्त त्रिविध कारण की परीक्षा की है। पञ्चधा अन्यथासिद्धियाँ लक्षित की हैं। पृथ्वी की परीक्षा, पृथ्वी के गुण, नित्यानित्य भेद, क्षणिकवादखण्डन, पुंजवादखण्डन, अवयवसिद्धिः, पार्थिव शरीर इन्द्रिय विषय, योनिजादि देह, हीरक सुवर्णादिविचार, रेडियम-प्लेटिनमविचार जल इसके गुण, चित्ररस, रूपादिकथन। नित्य अनित्य जल। शरीर इन्द्रिय विषय के भेदकथन। तेजस्तत्त्व इसके गुण, लक्षण, त्रिविधता, अयोनिज देह, चक्षुः, विषयचतुर्धा, कथन। वायु का लक्षण, प्रत्यक्षसिद्धता, अनुमेयता, वायु के देह इन्द्रिय विषय विविध-

वायुवर्णन । शब्दानुमेय आकाशः, गगन प्रत्यक्ष भी, अवकाश प्रत्यक्ष है । ईश्वरकालादि में शब्दसमवायित्व-निरास । श्रोत्र आकाश है । कालतत्त्व, सर्व कार्यों का निमित्त कारण है । कालिक संसर्ग से पदार्थों का आश्रय है । अतीतादि व्यवहार क्षणादि व्यवहार, प्रलयादि व्यवहार, बताया है । दिशाओं की सिद्धि । आत्मा परमात्मा, इनमें प्रत्यक्ष अनुमानादि प्रयोग, स्वरूप, लक्षण आदि । शरीरात्मनिरास, इन्द्रियप्राणमन माया के आत्मत्वनिरास । क्षकिक ज्ञानाद्यात्मपक्षनिरास, सगुणता, नित्य विज्ञानरूपतानिरास, अद्वैती, भाट्ट, प्राभाकर, माध्यमिक, मिथ्यावादी, सांख्य, प्रतिबिम्ब, विभु, आविद्यक, भेदाऽभेद, प्रातिभासिक, आदिपक्षप्रदर्शन, यथायोग्य निरासः । परमात्मसिद्धिः, एकधा बहुधा सर्वनिन्दाधार पुरुषोत्तम, दिव्यपुरुष, मूर्तिवर्णन, आदि । तमो द्रव्यं, प्रतीतियाँ, त्रिविधता । माया भी त्रिविध गुणवाली, महत्तत्त्वादिकार्यवाली । मनः, इसमें मीमांसक मत, माया में अविद्यादिमतनिरास ।

गुणनिरूपण, सर्वद्रव्यवृत्तिगुण, तत्तद्द्रव्यगुण, मूर्तवृत्तिगुण, अमूर्तवृत्तिगुण, अनेकवृत्तिगुण, एकैक-वृत्तिगुण, विशेषगुण, सामान्यगुण, द्वीन्द्रियगोचरगुण, एकैकेन्द्रियगोचरगुण, अतीन्द्रियगुण, अवयवगुणाऽजन्य-गुण, असामवायिकारणगुण, माया और आत्मा के गुण, असमवायिहेतुगुण, निमित्तहेतुगुण, द्विविधहेतुगुण, क्रियाजन्यगुण, व्याप्यवृत्तिगुण, अव्याप्यवृत्तिगुण, पाकजगुण, ज्ञानापेक्षोत्पत्तिकगुण, अस्वसमानजातीयारम्भकगुण, स्वसमानाऽसमानजात्यारम्भकगुण, सविषयकगुण भी वर्णित किये गये हैं ।

गन्धवैविध्यम्, रसवैविध्यं, रूपवैविध्यं, स्पर्शवैविध्यम्, पाकजाऽपाकजगुण, नित्याऽनित्यव्यवस्था, नवक्षण तथा पन्द्रह क्षण तक पाकजोत्पत्ति, क्षणप्रक्रिया, पिठरपाक, परमाणुपाक, शब्दवैविध्य, संख्या, अपेक्षाबुद्धि, परिमाणविभाग, पृथक्त्वविवेचन, संयोग, विभाग, अव्याप्यवृत्तिता, विभागजविभाग, दैशिक तथा कालिक परत्व अपरत्व, आश्रयनाशप्रयोज्यनाश, सूर्यक्रियाजन्यज्येष्ठत्वादि, गुरुत्व, लघुत्व, स्वच्छत्व, द्रवता, स्नेह, रूक्षता, रजः, सत्त्वं, तमः, पुण्यं, अपुण्यम् , पुद्गलादिनिरास, सुख, दुःख, द्वेष, प्रयत्न, चिकीर्षा, विध्यर्थ, तर्कत्वादिविचार, इष्टसाधनतादि, फलविचार, नञर्थान्वय, हिंसनस्वरूप, प्रवर्तना-प्रयोजकता, निवर्तनाप्रयोजकता, इच्छा, निद्रा, कामना, चतुर्धा संस्कारः, भावना, वेग, स्थितिस्थापक, भय, मोह, शौर्य, ज्ञानम्, ज्ञानविभाग, स्मृति, प्रमा, अप्रमा, दोष, गुण, स्वतोग्राह्यत्व, निर्विकल्पज्ञानम्, स्वतोग्राह्यत्वे परतोग्राह्यत्वे च न्यायसाख्यमीमांसकसौगतमतप्रदर्शन, तत्र विशेषविचार, प्राभाकर की अख्याति, विप्रतिपत्तिस्वरूप, निम्बार्कमत, अन्यथाख्याति, भ्रम, सत्ख्याति, स्वामिनारायणमत, वल्लभमत, शांकरमत, उदयनमत, योगाचारमत, आत्मख्याति, वैभाषिक सौत्रान्तिकमत, माध्यमिकाऽसत्ख्यातिमत, कुमारिलमत, असत्संसर्गख्याति, वाचस्पतिमत, जैन सांख्य विज्ञानभिक्षुसदसत्ख्यातिमत, प्रमाणलक्षण, दशप्रमाण, निर्विकल्पक सविकल्पक अनुभव, अप्रमा, प्रमा, संशय, विपर्यय, स्वाप्न, तर्क, निश्चय, आहार्य-ज्ञान, तर्क के भेद, आत्माश्रय, अन्योन्याश्रय, चक्रक, अनवस्था, अन्यबाधप्रसंग, इष्टापत्त्यादि, दोषत्रय, आशंकारूप, लाघव, गौरव, विनिगमना, उत्सर्ग, नवधा अनुभव, सप्तविध प्रत्यक्ष, दोषाभाव में भी प्रत्य-क्षादिकारणता, सन्निकर्षनिष्ठकारणता, ज्ञानसामान्यकारणता, ज्ञाततताविचारः, अलौकिकसंसर्ग, सिद्धि-संसर्ग, निदिध्यासनादिसंसर्ग, उपमाने विचारः, गंगेशमतम्, अर्थापत्तिभेदस्वरूपम्, अनुपलब्धिभेदस्वरूपम्, सम्भवप्रमाणता, ऐतिह्यप्रमाणता, चेष्टाप्रमाणता, ख्यातिस्वरूपज्ञानाऽऽवश्यकता, ज्ञानयाथार्थ्यबोधाऽऽवश्य-कता, ज्ञान में आनन्द में मूर्तत्व में साकारत्व में माया में ईश्वरों में, जीवों में तत्त्वों में भक्ति में विप्रति-पत्तिस्वरूप । अनुमितिः, लिंगपरामर्श, व्याप्तिज्ञान, व्याप्तियों के स्वरूप, विविधपरिष्कार, अवच्छेदकत्व-स्वरूप, विशेषाभाव सामान्याभाव की पृथक्ता, विशेषव्याप्ति, उपाधिस्वरूपम्, व्याप्तिग्रहोपाय, तर्क-स्वरूप, आत्माश्रयादि, शंकास्वरूप, व्याघात, अनुगम, सामान्यलक्षणा, उपाधिस्वरूप, अनौपाधिकता,

केवलान्वयि केवलव्यतिरेकि अन्वयव्यतिरेकि, अन्वयव्याप्तिप्रकार, अर्थापत्तिका पृथक्मानताविचारः, पञ्चावयवन्याय, न्याय-प्रतिज्ञाहेतु उदाहरण उपनय निगमन स्वरूप, हेत्वाभास, व्यभिचार, विरोध, सत्प्रतिपक्ष, असिद्धि, बाध, उपाधि, असाधकत्वसाधकता, वादादिकथा, षट्पक्षी, जल्पवितण्डा, छल, घातिदूषण, निग्रह पराभव, विविधसिद्धान्त, दृष्टान्त, प्रयोजन, धीत्रिक्षणतादिविचार, विषयतादिविचार, अभावविचार, विविध अभाव, नञर्थविचार, विविधपर्याप्तिस्वरूप, भेदसिद्धिः, जीवेश्वरब्रह्मपरब्रह्म की षड्विधतात्पर्यविषयता, विशिष्टेतात्पर्यनिर्णय, अपृथक्सिद्धतादात्म्य में तात्पर्य, पन्द्रह भेद के स्वरूप, परमात्मनिरूपण, सशरीरत्व, इस पर गहनविचार, असंख्याशक्तिमत्ता, स्वरूपसतीशक्तिः, प्रोक्षण से शक्तिसिद्धि, सहजादिशक्तिविविधता, साक्षात् तथा दिव्यशक्तिरूपण, विविध मोक्ष के स्वरूप के विविध विचार, तथा मोक्षकारणविचार, शब्दप्रमाण, कर्तरिकर्मणिभावे, विविधशक्तिलभ्य शाब्दबोध, शक्तिग्राहकप्रदर्शन, योग, रूढ, योगरूढ, यौगिकरूढ, शाब्दबोध में भिन्न-भिन्न कारण, वाच्यत्वज्ञानं वाचकत्वज्ञानं संसर्गज्ञानं संकेतज्ञानादिरूपं कारणम्, वाच्यत्ववाचकत्वपरिष्कार, आप्तोक्तिनिश्चय कारण, स्वरूपसती आकांक्षा कारण, श्रुतिप्रमाणता, साक्षिप्रमाणता, लक्षणाऽलंकारगुणदोषरीतिध्वनिरस कारण, प्रकृति स्वार्थ में शक्त है, सुप् आदि कर्मत्वकर्तृत्वादि में शक्त है, तिङ् आदि इष्टसाधनत्वादि में शक्त हैं, निपात समुच्चयादि में शक्त हैं, विकरण प्रत्यय, वसादि आदेश अन्याधीनवृत्तिक हैं, लट् आदि वर्तमान आदि में शक्त है, सप्तविभक्तियों की शक्ति, मीमांसक नैयायिकों के शक्ति में मत, गंगेश, रत्नकोशकार के, मत, प्रक्रियाप्रत्यय अनेकार्थ शक्त होते हैं, स्त्रीत्व में टाप् ङीष् ङीप् आदि शक्त्यर्थ, इवादि के अर्थ, आङ् आदि अव्ययों के अर्थ, लक्षणावृत्तिनिरूपण, प्रवृत्तिनिमित्तत्व, नानार्थतः, किंपदशक्ति, कुञ्जाशक्तिमीमांसकमत । मण्डनमिश्रमत । धर्माऽधर्मस्वरूप । पुद्गलखण्डन, विधिः, अर्थवादः, वैदिकवाक्यस्थपदार्थ, अर्थवादविभिन्नता, इनके उदाहरण, याज्ञिकशब्दशक्ति आदि । शब्दार्थ, उपस्थिति आदि को कारणता, भेदसम्बन्ध से बोध, वैदिकमखकाण्डोयशब्दार्थस्फुटता । विभक्तिकृत् तद्धित प्रत्ययों को शक्ति, व्युत्पत्ति, शाब्दबोधों के प्रकार, क्रियाजन्यफलशालि कर्म, इसके विविध शाब्दबोध, द्वितीयादिलक्षण, इसके अर्थ, सनुप्रत्ययार्थ, कृत्यर्थकधातुयोगे द्वितीयार्थ, तृतीया के अर्थ शाब्दबोध, चतुर्थी के अर्थ शाब्दबोध, पञ्चमी के अर्थ शाब्दबोध, षष्ठी के अर्थ शाब्दबोध, सप्तमी के अर्थ शाब्दबोध, सम्बोधन के अर्थ शाब्दबोध, तद्धितप्रत्ययार्थ, धातुप्रकृतिकप्रत्ययार्थ, नैयायिकमीमांसामत, आख्यातादि की शक्ति, लट् आदि की कालविशेष में शक्ति, वैदिकवाक्यविविधता, विध्यर्थ इष्टसाधनता, तिङो की शक्ति, तकारादौ लिङर्थ, धातु के अवयवरूपप्रत्ययार्थ, अपत्याद्यर्थकप्रत्यय । सप्तविध समास, महावाक्यता, तत्पुरुष, द्विगु, अव्ययीभाव, बहुव्रीहि, द्वन्द्व, उपपद, एकशेष, समासाश्रयविधि, लक्षणा, लक्षकपद, लक्षितलक्षणा, गौणी, साध्यवसानिका, निरूढा, व्यञ्जना, मीमांसक मत में वाक्यमपि लक्षक है, बहुव्रीहि, तत्पुरुष, साहित्यम्, कर्मधारय, उपस्थिति, आसत्ति, स्फोट विवेचन, शाब्दी आर्थी भावना, प्राभाकरमत, नैयायिकमत, मानसबोध, योग्यता, आकांक्षाज्ञानम्, तात्पर्यज्ञानम्, बुद्धिस्वरूपलक्षणभेदादि, धर्मभूतप्रज्ञा, स्वप्रकाशता, नित्यज्ञप्तिता, प्रत्वात्मज्ञप्तिः, संविदवस्था, यथार्थसन्ततिप्रमा, अव्याप्तित्वं त्व प्रमोपचारः । स्वरूपसतीधीः । प्रवृत्तिनिवृत्तिव्यवहारविशदता, सत्त्वं प्रवर्तकम्, प्रतिभास में ज्ञानं सत्यम् अर्थः सत्यः, साक्षिप्रकाश्यत्व, ज्ञानक्षणिकतानिरास, विधिसत्यता, निषेधसत्यता, संवृतिनिरास, आत्मा स्वप्रकाश, वृत्ति ख्याति सतीस्वप्रकाशा, सहोपलम्भतानिरास, बाह्यार्थाऽनुपपत्ति, क्षणाधिक्यसाधनम्, सर्वज्ञानयाथार्थ्य, तत्र दृढप्रयोजकता, बीज में पीठर में फल में समुच्चयख्याति, सर्वत्र सत्यताविनियोगः विशदविवेचनम्, प्रमात्व, साक्षिग्राह्यत्वम्, चिच्चैतन्यसत्यत्वम्, अहमर्थसत्यता, विशिष्टादिज्ञानसत्यता, भ्रान्तत्वोपचारता, स्वतःप्रमात्वपरिष्कृति, ज्ञानप्रामाण्यं स्वाश्रयधर्म्यवच्छिन्नसाक्षाद्-

द्रष्टृदृष्टिचिच्चैतन्यजन्यसाक्षात्कारातिरिक्तज्ञानविषयं न वा, विप्रतिपत्ति, प्रामाण्यग्राहक अन्य की अनुपपत्ति। भ्रमनिरास प्रयोग, निष्प्रकारकत्वाऽसम्भव, परप्रकाशकत्वनिरास, भ्रमप्रयोगों का निरास, प्रमात्व के परिष्कार, सविषयता पक्ष में प्रयोग, परतस्त्वनिरास, समुच्चयित ज्ञानादिविशदता, विप्रतिपत्तियाँ, अनिर्वचनीयतादि की अनुपपत्तिः, विविध विप्रतिपत्तियाँ, सत्समुच्चयितदार्ढ्य, प्रमाणप्रामाण्य में विप्रतिपत्तियाँ, अध्यासस्वरूप, विशेषविज्ञान प्रामाण्यविप्रतिपत्तियाँ, क्षणिकज्ञानादिनिषेध, असत्तादात्म्यविषयकज्ञान मे विप्रतिपत्ति शून्यवादिओं के स्यातिप्रकार, असत्संसर्गख्याति, कुमारिलमत, आर्हतमत, सदसत्ख्याति, योगाचार, प्राभाकर, विप्रतिपत्ति, सांकर्यख्याति, सदसत्ख्याति, विधिनिषेधपक्ष, और भी विविध ख्यातियां, मीमांसक का साकारख्यापनम्, रजतज्ञान में शब्दाभिलाप्याभाव, सत्ख्यातिमत, समुच्चयितख्यापनविप्रतिपत्तिः, विशालविवेचन, वस्तुत्वप्रदर्शन, प्रामाण्य में अन्य भी ख्यातियाँ, ख्यातियाँ के ३४ मतमतान्तरनिर्देश। विशिष्टवादिओं के ज्ञातसत्यत्व में विमर्श। प्रामाण्य में चार पक्ष, १ प्रामाण्य अप्रामाण्य परतः। २ दोनों स्वतः। ३ प्रामाण्यं परतः अप्रामाण्यं स्वतः, ४ प्रामाण्यं स्वतः अप्रामाण्यं परतः। इतरपक्षों की अनुपपत्तियाँ। याथार्थ्यसिद्धिः, वेदान्तार्थसत्यत्व, त्रिकुटिज्ञानं सत्यम्, विशिष्टत्वविशदता, विशिष्टब्रह्माऽद्वैतज्ञान में तात्पर्यम्। विप्रतिपत्तिपक्षक विप्रतिपत्तिः। परमात्मा प्रमाता, आत्मा प्रमाता जीवात्मा चेतन, मायावादिनिरास, क्षणिकसंवृतिवादिनिरास, कालसंविन्निरास, ब्राह्मी अनिर्वाच्या का निरास। शक्त्यंशे ब्रह्मांशेऽपि विकल्पा, अंशनिरास। मुक्त ब्रह्म परब्रह्मों का प्रमातृत्व। जीव ईश्वर के स्वाभाविकज्ञान परमेशो सर्वज्ञ साकार सगुण सुदर्शनीय है। इसमें वैदिकमन्त्र प्रमाण। वैकुण्ठादि प्रामाणिक। विराट हरण्यगर्भादिक प्रामाणिक। ईश्वर जीव नित्य है, मिथ्यात्वनिरास, अक्षरब्रह्म साक्षि फलप्रदाता है। श्रुतियाँ प्रमाण हैं। ब्रह्मरूप मुक्तगण में श्रुतियां प्रमाण हैं। साकारता शाश्वती है। सर्व प्रमाता परमात्मा सच्चिदानन्दघनसुमूर्ति है, उसका प्रकाश ब्रह्म है, धामरूप है, सुमूर्त भी हैं। जीव ज्ञानघन असंख्य है। ईश्वर ऐश्वर्यघन असंख्य हैं, माया तमोघना रजोघना २४ तत्त्वमयी है। ब्रह्म प्रकाशघनं अमूर्तधाम सुमूर्त सेवक इत्येवं दो रूप में हैं। पुरुषोत्तम परब्रह्म सर्वनियामक सगुण साकार सर्वात्मा आनन्दघनमूर्ति है। इस प्रकार यह ग्रन्थ तत्त्वज्ञान से भरा हुआ उपादेय है॥

१८. **श्रीगुणातीत ब्रह्मोपनिषत्**—इसके संस्कृतरचयिता संकलयिता श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी हैं, इसमें चार अध्याय हैं, सोलह पाद हैं, प्रथम पाद में ब्रह्मविद्या की परम्परा, द्वितीय में दिव्यमूर्ति परमात्मा का स्वरूप, तृतीय पाद में अपारमहिमाकथन, चतुर्थपाद में दिव्यमूर्ति का वर्णन, पंचम पाद में सदृष्टान्त कारणताकथन, षष्ठ पाद में सृष्टि में परमात्मा की व्यापकताकथन; सप्तम पाद में आत्मा में प्रभु को नियामकताकथन, अष्टम पाद में भगवदुपासना का फल कथन- नवम पाद में अक्षरब्रह्म का निरूपण, दशम पाद में ब्रह्म की अनेक नाम से ज्ञान उपासनादि कथन, एकादश पाद में विज्ञानभक्तिलभ्यताकथन, द्वादशपाद में परा अपरा विद्या का कथन, त्रयोदश पाद में सृष्टिरचना तथा तदात्मभाव का कथन, चतुर्दश पाद में महावाक्य का कथन, पञ्चदश पाद में अर्चि मार्ग आवागमन, गुणाष्टक सुमूर्तिविर्भावादि, षोडश पाद में सगुणनिर्गुण की एकोकरणताकासार॥

१९. **विशिष्टाद्वैतेऽपि विशिष्टब्रह्माऽद्वैतत्वम्**—इस ग्रन्थ में जीव माया ईश्वर की विशिष्ट स्थिति कह कर जीव ईश्वर माया ब्रह्म परब्रह्म पाँच तत्त्वों के सिद्धान्त पर जीव ईश्वर मायाविशिष्ट साक्षि ब्रह्म, इसकी विशिष्ठता परब्रह्म अद्वैत में दिखाया है, यह स्वामिनारायण सम्प्रदाय का मुख्य सिद्धान्त का दोहन है। हिन्दुविश्वविद्यालय काशी सारस्वतीं सुषमा में यह ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है।

२०. **ख्यातिविमर्शः**—इस ग्रन्थ में 'शुक्ताविदं रजतमि'त्यादि भ्रमस्थल में १ नैयायिकों की

अन्यथाख्याति, २ मीमांसकों की सत्ख्याति, ३ स्वामिनारायण की सत्समुच्चयख्याति, ४ रामानुज की सत्ख्याति, ५ आयुर्वेद की सत्ख्याति, ६ प्राभाकरों की अख्याति. ७ कुमारिल भट्ट की सत्ख्याति, ८ मुरारि-मिश्र की सत्ख्याति, ९ सांख्य-योग की अख्याति सत्कार्यख्याति, १० केवल योग की असत्ख्याति, ११ योगाचार की आत्मख्याति, १२ सौत्रान्तिक वैभाषिकों की आत्मख्याति, १३ माध्यमिकों की असत्ख्याति, १४ जैनों की अनैकान्तिकता ख्याति, १५ चार्वाकों की साक्षात् ख्याति, १६ माध्वों की विकल्पना ख्याति क्रमानैक्यख्याति सारूप्यख्याति, १७ वाल्लभों की अन्यथारूपख्याति आभाससुख्याति, लीलाख्याति, १८ निम्बार्कों की भेदाऽभेदख्याति ज्ञानाऽज्ञानख्याति, सत्याऽसत्यख्याति, दृश्याऽदृश्यख्याति दृष्टिसृष्टिख्याति अधिष्ठेयाऽभिन्नभिन्नख्याति, १९ शांकरो की अनिर्वचनीया ख्याति, २० शाब्दिकों की शक्तिवैवर्तिकख्याति, २१ प्रत्यभिज्ञानियों की प्रत्यभिज्ञाख्याति:, २२ पाशुपतों की विषयता ख्याति, २३ सिद्धान्तिशैवों की वैरूप्य ख्याति:, २४ लाकुलीशशैवों की भिन्नाऽभिन्नचाकचक्यख्याति:, २५ विशिष्टाद्वैतिशैवों की संसर्गता-ख्याति, २६ वीरशैवों की स्फूर्तिवैवर्त्यख्याति, २७ नन्दिकेशशैवों की आभासवृत्त्यात्मख्याति, २८ रसेश्वर-शैवों की सिद्धचसिद्धिख्याति. असिद्धिसिद्धिख्याति, २९ कालीक्रमशैवों को क्रमवैकल्पिकी ख्याति, ३० कौल शैवों की लीलाख्याति, ३१ ऐन्द्रजालिकों की मान्त्रिकशक्तिख्याति, ३२ परमसर्वज्ञ की सत्यतादात्म्यख्याति, ३३ गंगेशोपाध्याय की अभिनवधर्माऽन्यथाख्याति ॥ इत्यादि विस्तृत सुवर्णित हैं।

२१. **प्रमात्वविमर्शः**—इस ग्रन्थ में सभी ज्ञानों में किसी न किसी अंश में प्रमात्व सिद्धि दिखलाया है, हरेक अन्याभिमत न्यायाभिमत अप्रमाज्ञानों में स्वीयविचार दिखलाया है, इसमें प्रमात्व के परिष्कार, नैयायिकों के प्रामाण्य अप्रामाण्य परतोग्राह्य, सांख्ययोगों का स्वतोग्राह्य, बौद्धों का प्रामाण्य परतोग्राह्य अप्रामाण्य स्वतोग्राह्य, मीमांसकों का प्रामाण्य स्वतोग्राह्य अप्रामाण्य परतोग्राह्य, जैनों का अप्रामाण्य स्वतः प्रामाण्य परतोग्राह्य, वेदान्तियों का प्रामाण्य स्वतोग्राह्य अप्रामाण्य परतोग्राह्य; रामानुजादि वैष्णवों को भी प्रामाण्य स्वतोग्राह्य अप्रामाण्य परतोग्राह्य सम्मत है, विशिष्ट ब्रह्माद्वैतवादियों को प्रामाण्य अप्रामाण्य साक्षिभास्य है। नकुलीश पाशुपतादिशैवों की भी उक्त सम्मत सा है। आगमिक स्फोटवादी नैगमिकों को प्रामाण्य अप्रामाण्य स्वतः परतः अपि उभय अग्राह्य, आर्थवादिकों को ऐतिह्यवादिकों भी परतो ग्राह्य अग्राह्य है, सार्वज्ञयोदयवादियों को प्रामाण्यं स्वतो ग्राह्यम्, बार्हस्पत्यों को स्वतः प्रामाण्य से अप्रामाण्यग्रह, वैतण्डियों को किसी में स्थिरता नहीं। इस विषय पर नैयायिक सांख्ययोग विशिष्टवादी ब्रह्मशक्तिवादी हैरण्यगर्भिक, अहं ब्रह्माऽस्मीतिवादी, औपनिषदवादी भेदाऽभेदवादी उपाधिवादी ब्रह्मवादी पुराणसंहितावादी दिग्भ्रान्त ऐन्द्रजालिक पिशाचावेशवादी नाटकारूढी आभिचारिक स्फोटवादी अस्फोटवादी आलंकारिक सौगत आर्हत निर्गुणवेदान्ती पाशुपत सिद्धान्ती लकुलीश विशिष्ट नन्दिकेश रसेश प्रत्यभिज्ञानी कारुणिक कापालिक आदिकों के मतों का विवेचन ठीक-ठीक है।

निर्विकल्पक प्रत्यक्ष में प्रमाण अप्रमाण अन्यतर कोटि में, श्रीकुमारिलभट्ट, प्राभाकर, मुरारिमिश्र नैयायिक आदि दर्शनविद्वानों के मत। स्वतोग्राहक प्रकाश पर विवेचन, स्वामिनारायणविमर्श, ध्यानवृत्त्या प्रामाण्य अप्रामाण्य ग्राहिका। अविद्या आन्ध्यं व्याघात शंका तर्कभेद प्रतिबन्दी उभयतःपाश साधनाभास हेत्वाभास छल मौनश्लोक चेष्टा घात्युत्तर निग्रहस्थान, आदि प्रयोगों में ज्ञानों में प्रमात्व अप्रमात्व के स्वतोग्रहण परतोग्रहण आदि पर तलस्पर्शी विचार किया गया है। यह ग्रन्थ आदित्यनाथझा अभिनन्दन संस्कृत दील्ही से छपा है॥

२२. **जातिविमर्शः**—ब्राह्मणत्व घटत्व आदि धर्म जातियाँ गिनी जाती हैं, वे नित्य हैं न्याय का मत, अनित्य है व्यक्तिवादि का मत, इस ग्रन्थ में गुण कर्मानुसार जाति कल्पना का विचार किया है,

वैदिकमन्त्र भी गुणकर्मानुसार जाति की उद्घोषणा करता है, शब्दों को त्वप्रत्ययलगाने से जातिवाचकत्व होती है, श्रीरामभगवान ने कैवर्तकों चित्तपावन ब्राह्मण बनाये, भिल्लब्राह्मण आभीरब्राह्मण, गुर्जरे तैलिकब्राह्मण, परशुराम ने नम्पूतिरिब्राह्मण बनाये, कायस्थ भाट नागर ब्राह्मण हुए, इस पर अनेक ऋषि मुनि अवतारों के दृष्टान्त हैं। महाराष्ट्र में जावालकाष्ठ ब्राह्मण, आन्ध्र में आराध्य ब्राह्मण, गुर्जर में कण्डोल ब्राह्मण, राजस्थान में पुष्करण ब्राह्मण, प्रतापगढ़ में अहीर ब्राह्मण, गोरखपुर में पाण्डेयशुक्लमिश्र ब्राह्मण, ग्रामनाडा के पाठक, द्रविड के ओझा, बिहार के भूमिहार, पंजाब के गुज्जर, कर्णाटक में मत्ति, नागमाचो, भोद्री तम्बल, सौराष्ट्र में खेडावाल, गुजरात में भाट, महाराष्ट्र में सेनव्य, कर्णाटक में हैग, उडीसा में मस्ताना, भोजक सारस्वत डकोता गरोडा युगी पटवेगरा अय्यरा गणक हुसेनी मालाकार कोलभिल्ल मुशहर मलिच्छामय सतलखे वैठ कंनोजिया, ये सब आगन्तुक ब्राह्मण वर्णित किये हैं। इस प्रकार विशाल प्रामाणिक वर्णन है।

२३. **वचनामृत प्रामाण्यहेतवः सूत्राणि च**—श्रीस्वामिनारायण के २६२ वचनामृतों के पृथक्-पृथक् प्रामाण्य प्रयोजकता का विवेचन तथा २२५० सूत्रों का ग्रथन है। यह ग्रन्थ कार्यकारणभाव प्रतिबध्य प्रतिवन्धकभाव स्वरूप धर्म ज्ञान आदि से तथा पुरुषार्थों से भरा हुआ दर्शनों के सिद्धान्त पर विवेचन करने वाला आध्यात्मिक महासागरसमा ग्रन्थ है, इस पर यह रचना है॥

२४. **श्रुतितात्पर्यनिर्णय**—इसमें श्रुतियों का तात्पर्य उपक्रम उपसंहार अभ्यास अपूर्वता फल अर्थवादादि के अनुसार विशिष्ट ब्रह्माद्वैतसिद्धान्त में उपनिषदों का तात्पर्यपरायण तलस्पर्शि वेदान्तग्रन्थ है। जिस पर मैथिल पण्डित ब्रजकान्तझा ने भूमिका लिखी है। तीन भाग में है, प्रथमभाग विशिष्टवैशद्य-में भक्तितरंगों का प्रतिपादन श्रुतिवाक्योपबृंहण कारणकार्यावस्था विशिष्टावस्था आत्मपरमात्मभेदबोधक श्रुतिवाक्य विशिष्टब्रह्माऽद्वैतपरक है। द्वितीयभाग में परब्रह्मस्वरूपनिर्णय साकारवाद शक्तिनिरूपणादि किया है। तृतीयभाग में ज्ञान प्रामाण्यं स्वतः परतो वेति दीर्घशेमुषी से विचारितम्। दार्शनिकों के मत। स्वमत मैं साक्षिभास्य प्रामाण्य अप्रामाण्य दर्शाया है॥

२५. **साकारत्ववाद**—इस ग्रन्थ में बीस व्याप्तियाँ साकारत्वसाधिका हैं, सर्व पदार्थों का साकारत्व सिद्ध किया है, अति बुद्धिगम्य परिष्कृतपदार्थाऽभ्यासवालीधीगम्य यह तत्त्व है॥

२६. **श्रीहरिस्वरूपनिर्णयस्य सत्संगभाष्यम्**—इस ग्रन्थ में साकारोपासकों के लिये ब्रह्मलोक में जो परमेश्वर है वे ही अवतार रूप में यहीं है, यहीं मानवादिरूप में जो अवतरित हैं वही ब्रह्मधाम में हैं, एक है तदात्मक है वही है यही है यही है वही है परमाणुमात्र भी विषमता नहीं है इस बात को बड़े गम्भीर स्वरूप भाष्य से प्रतिपादित किया है। इसमें विप्रतिपत्तियों को स्थान दिया है, जैसे कि अनादि नित्यसिद्धदिव्याकृतित्वं न वा ?, अनादिनित्यसिद्धादिव्याऽकृतिभिन्नाऽऽकृतित्वं न वा ?, मायाकृतिभिन्न-विभूत्याकृतित्वाभाववान् वा ?, ऐसी कई प्रकार की विप्रतिपत्तियाँ रचकर उनके पर विस्तृत विचार किया है, सभी वैष्णवों को उपयोगी विद्वत्तापूर्ण ग्रन्थ है, उपनिषदों के प्रमाण ले के साकारता एकता प्रतिपादित की है। यह विशाल भाष्य विद्वत्तापूर्ण चमकता है।

२७. **सुधासिन्धोः ब्रह्मायनभाष्यम्**—२६२ संस्कृत तरंगों में नव हजार श्लोकों पर ६२५० सूत्रों के साथ यह भाष्य महासागर समान विशालकाय है। इसमें व्यावहारिक तथा आध्यात्मिक तथा मोक्षीय कोई भी साध्य साधन तत्त्व ऐसा नहीं है जो न लिया गया हो, जिस पर न विचार किया गया हो। हरेक दर्शनों के साकार निराकार वादों में नित्य अनित्य वादों में, प्रमाण अप्रमाणवादों में, शरीरे-

न्द्रियान्तःकरणात्मवादों में अवतार अवतारि परमात्मवादों में, न्याय सत् असत् शून्य आदि वादों में। नास्तिक आस्तिक सभी वादों में तलस्पर्शी प्रविष्ट ब्रह्मरसायन भाष्य, पूर्वपक्षवाद सिद्धान्त पक्ष दिखलाता है। ब्रह्मवाद मायावाद ईश्वरवाद ज्ञानात्मवाद द्रव्यात्मवाद, योग सांख्य शैव आगम निगम शाक्त वेद संहिता पुराण धर्मशास्त्र महापुरुषचर्या नियम संयम गुणधर्म शक्ति वन्धन मोक्ष भक्ति शरणागति प्रपत्ति सात्त्विक राजस तामस सृष्टिस्वभाव देवदैत्यसुरपितृऋषिवर्तन दुर्गुणनाशक साधन सद्गुणार्जन प्रयत्न समाधि स्फोट परापश्यन्त्यादिवाणी जाग्रदादि अवस्थाएँ, प्रमाणविपर्ययादि वृत्तियाँ, द्रव्यगुणादि पदार्थ, धर्म ज्ञान वैराग्य भक्ति उपासना आज्ञा सदाचार विविध यज्ञ काण्ड दैवाचार मुक्ताचार, अनिर्वचनीय आविद्यक मायिकवाद, बिम्बप्रतिबिम्बवाद, शक्तिसामर्थ्यवाद, योगांगवाद, सन्न्यासादि सर्व आश्रम, विद्या ब्रह्मविद्या आदि, धाम स्थान आदि खगोल भूगोल, नवधा भक्ति में कीर्तन गायन नृत्य आत्मनिवेदिता बाधितानुवृत्ति सन्तता भक्तता ब्रह्मदशापन्नता जीवन्मुक्तता, विदेहमुक्तता दिव्यदृष्टिता आदि अनेक तत्त्वों पर आरपार विचार विचार किये गये हैं, सभी जगत् के भाष्यों से अत्यधिक मूर्धन्य यह भाष्य लगभग पाण्डुलिपि में पाँच हजार पेजों में है। श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ने श्वेतायन व्यासस्वरूप में तदात्मक भाव से यह आविष्कृत किया है। यह अगाध सागर है॥

२८. **अवताराऽवतारित्वे पुराणादिवचनानि**—इस ग्रन्थ में पृथ्वी पर सभी देशों में ईश्वर परमेश्वर महापुरुष देवपुरुष मुक्तपुरुष आभूषण आयुध संकल्प गुण आदि परमेश्वर की आज्ञा से किसी न किसी कार्य के लिये प्राकट्य ग्रहण करते हैं, पर व्यूह विभव अर्चा अन्तर्यामी स्वरूप स्वयं अवतार या अवतारी सभी प्रजा में प्रकट होते हैं इसके पर वेद आगम निगम संहिता शास्त्र सूत्र अर्णव पुराण स्मृति इतिहास आचार्यविजय तत्त्वग्रन्थ आदि सभी में स्वीकृत प्रदिपादित है, इस पर एकत्रित किये प्रमाणों का यह ग्रन्थ है। सप्रमाण है॥

२९. **स्तोत्राणि**—भगवान् के शंकर के अवतारों के लक्ष्मी आदि सतीयों के सूर्य आदि के हनुमान गणेश देवी आदि के स्तोत्रमय यह ग्रन्थ है। व्यस्तरूप में है, एकत्रित मुद्रित नहीं है। अलग-अलग ग्रन्थों में मुद्रित है।

३०. **चित्सुखी टिप्पनी**—यह ग्रन्थ अद्वैत वेदान्त का जगन्मिथ्यात्वपरक है, इसका दूसरा नाम तत्त्वप्रदीपिका है, इसके मूल पर तथा टीका पर कठिन गहन स्थलों में सरल टिप्पनी लिखी है। जो सहायदा है।

३१. **कविकाव्यगौरवम्**—यह साहित्य के विद्वानों को नेत्र खोल देने वाला निबन्ध है, इसमें कविवर अचित्यानन्दवर्णी का संक्षिप्त जीवन सतर्कोज्ज्वल सचमत्कार वर्णित है, कवियों को ऋग्वेद ने ऋतुसदन ब्रह्म कहा है, अमूर्तों को कवि लोग मूर्त बना देते हैं, कवियों को वित्ति में साम्राज्यसा होता है, कवि शेमुषी में विश्व त्रिकालीन दीखता ही है, कवि लोग योगियों की समाधि को भी उल्लंघ जाते हैं। कवियों का कवित्व सृष्टिदृष्टिकवित्व सुमूर्त होके झलकता है। परमेश्वर में योजित काव्य चतुःपुरुषार्थ साधक होता है, काव्य रसोद्वेलनाकर सृष्टिमोहक होता है। रससंभृतान्तरोर्वरितवाक्यस्वरूपं काव्यम्, वाक्यं रसात्मकं काव्यम्, ध्वनिर्नामोत्तमं काव्यम्, शब्दार्थशरीरं काव्यम्, सहृदयहृदयाऽऽह्लादिशब्दार्थमयत्वं काव्यत्वम्, रसालंकारसंभृतसन्दर्भत्वं काव्यत्वम्, शब्दों में अनुप्रासादि रहते हैं, अर्थों में उपमादि रहते हैं, रसविशिष्टमूर्तालापविषयस्वरूपयोग्यत्वं काव्यत्वम्, वर्णसंघटना धर्मा रसाः, कविप्रतिभोल्लिखितत्वं काव्यत्वम्, उक्तिवैचित्र्यजीवित्वं काव्यत्वम्, न्यग्भावितशब्दार्थस्वरूपकविकर्मत्वं काव्यत्वम्, शब्दा-

र्थोक्तिसत्त्वप्रयुक्तलक्ष्यगुम्फनत्वं काव्यत्वम् , इष्टानुपूर्वीघटनास्वरूपत्वं काव्यत्वं, इस प्रकार काव्य के लक्षण दर्शाये हैं। काव्य के भेद उत्तम लक्षण, मध्यम निकृष्ट काव्य, बताये हैं, काव्य के गुण फल आदि बताये हैं, विविध पूज्य काव्य के स्वरूप बताये हैं, काव्यविषय स्थान बताये हैं, काव्य का गौरव, रस, गुण, सर्ग, कथासूचन, पारमार्थिक वर्णनवाला उत्तम काव्य कहा गया है। काव्य में युग्मक त्रैतानिक कलापक कुलक ग्रामक देशक भौमक सृष्टक सर्वक आदि समाविष्ट विषय होते हैं। उत्तमता के प्रकार भी दिखलाये हैं। भाव काव्य में रसप्रद होता है, रसव्यक्तता में व्यंजना स्वादरूप व्यापार है। रस का भोग होता है। सुख दुःखात्मक रस है, करुण शृंगार वीर हास्य शान्त वत्सल रौद्र अद्भुत भयानक तो है ही मगर रतिरस दशवाँ है, करुण में द्रुति है, शृंगार मे मधुरता है, वीर में ओजस्विता है, वीरबिभत्सकरुण में भी ओजस्विता अधिक है, हास्य में साश्चर्य प्रसन्नता है, शान्त में शीतद्रुति है, वत्सल में स्नेहातिशयिता है। रसों के बोध में व्यञ्जनावृत्तिः कवि में रहती है। यह नानार्थद्योतक वाचिक अभिनय कहाता है। अलंकार वर्ग सादृश्य से विरोध से काव्यन्याय से लोकन्याय से तर्कन्याय से गूढार्थ प्रतीति से हाजरी लेता है। अनुप्रासादि अलंकार भी उद्दिष्ट हैं। भाँति-भाँति के विचित्र प्रबन्ध कमल चक्र छत्रादि में निविष्ट ग्रथित उद्दिष्ट हैं। वृत्त भी बताये हैं। नायक-नायिका भेद चेष्टा भेद हाव-भाव विभावादि भी वर्णित हैं। अनुबन्ध चतुष्टय भी उचित कहे हैं। कवि के वर्णनप्रबन्ध किस प्रकार होने चाहिए यह भी इसमें कोई अनेरी रचना दिखलायी है। कविकाव्यगौरव को अवगत करने से भी कवित्व में प्रवृत्त उमदा झलकवाला हो जाता है।

३२. **श्रीस्वामिनारायणदर्शनं दर्शनशास्त्रम्**—छ दर्शनों के समान यह एक सातवाँ दर्शनशास्त्र रचा गया है। जिसमें पाण्डुलिपि में लगभग ४०० पृष्ठ हैं, तथा १-औपनिषदश्रौतप्रकरण, २-सुधासिन्धुपराबाक्-प्रकरण, ३-दार्शनिकप्रातिभप्रकरण, ४-पदार्थतत्त्वप्रकरण नाम से चार प्रकरण हैं। प्रथम प्रकरण में २१ अधिकण हैं। द्वितीय में ६९ अधिकरण हैं। तृतीय में ३४ अधिकरण है। चतुर्थ में ५९ अधिकरण है। समग्र ग्रन्थ के ३३१ सूत्र संख्या है। 'अथ परब्रह्मोपासीत' (१।१।१) सूत्र से लेकर 'परब्रह्मण उपास्त्या तादृगाप्तिस्तादृगाप्तिः' (४।११५।३३१) अन्तिम सूत्र है। इसमें परब्रह्मोपासना, मुक्तों के धर्म, विभूत्य-नवकाश, अन्वयिसाक्षित्व, स्वरूपाविर्भाव, दिव्यत्वशाश्वतता, आत्मान्तर्मूर्तता, ब्रह्मप्रकाशव्याप्तता, वास्त-विकसत्त्व, विशिष्टैककारणता, सर्वं सत् , सत्समुच्चयख्याति, साकारत्व, ब्रह्मप्रेरणा, महामाया, देवता-शक्ति, वृत्तिताद्रूप्य, तत्प्रसन्नता, कल्याण, प्रीणन, अवतरण, धाममुक्तसाहित्य, सेवा, भगवत्संसर्गिदिव्यता, ब्रह्मरूपता, चैतन्यप्रकाश, भावना, समागम, ब्रह्मदर्शन, लीला, साधर्म्य, स्वरूपनिष्ठा, भगवतीतनु, यथा-वकाशसेवन, उपास्ति, प्रतीकब्रह्मता, साधन, प्रताप, स्नेहप्रवेश, माहात्म्य, निष्कामभक्ति, निश्चय, कृपा, प्रेमलक्षणा, समाधि, सत्संग, योग, निर्वासन, अन्तर्दृष्टि, योगनिद्रा, आज्ञा, ज्ञानप्रलय, विक्षेपभयनिवृत्ति, आनन्दघनता, सुषुम्णामार्ग, परावाणी, विवेक, कारणत्व, शारीरित्व, अन्वयित्व, व्यतिरेकित्व, विश्व, धाम, देवता, उपदेश, विशिष्टोपादेयत्व, प्रयोजन, रसभक्ति, श्रुतितर्क, शक्य, लक्ष्य, विधि, केवलप्रकृत्यनु-पादनता, शब्दब्रह्म, शक्तिपारतन्त्र्य, प्रत्यभिज्ञा, ब्रह्मसम्बन्ध, पाशवत्त्व, शून्यत्व, कर्ममात्र, विशिष्टशिव, विशिष्टब्रह्माऽद्वैत. व्यूह, पदार्थ, अन्तःकरण, सूक्ष्मभूत, महाकाल, दिक् , तम, त्रिगुण, ज्ञान, चमत्कार, अदृष्ट, आकर्षण, रूपादिगुण, तादात्म्य, विशेष, अभाव, संशय, दृष्टान्त, सिद्धान्त, पक्षादि, अवयवपंचक, हेत्वाभास, तर्क, कथा, छलस्वरूप, जाति, निगहस्थान, मोक्ष आदि दार्शनिक विषयों के पूर्वोत्तरपक्षादि स्वरूप यह दार्शनिक नूतन ही ग्रन्थ है। इसमें बुद्धिकौशल्य व्यासजी के समान दिखता है।

३३. **श्रीसत्संगिजीवन पारायणी टीका**—अठारह हजार श्लोकों का यह भागवतसमान ग्रन्थ पाँच प्रकरणों में है, इसका धर्मशास्त्र नाम है, परं श्रीस्वामिनारायणभगवान का प्राकट्य होने में हेतु स्वरूप कलिकाल प्रावल्यादि निवारणार्थं नरनारायणभगवान् द्वारा परब्रह्म का पृथ्वी में प्राकट्य, छपिया में बाल्यावस्था, किशोर में वनवास तीर्थभ्रमण योगसाधन चमत्कार यौवन सौराष्ट्र में निवास सम्प्रदाय-स्थापन उपदेशार्थविचरण मन्दिरनिर्माण ग्रन्थनिर्माण धर्मज्ञानवैराग्यभक्त्यादि यज्ञयागादि विधापन व्रत उत्सव महोत्सवादिकरण, सामान्य विशेषधर्मों का कथन सांख्य योग वेदान्त मीमांसा तत्त्वज्ञानादि दर्शनों के सिद्धान्तों का संकलन, पुराण इतिहासादि सार ग्रहण, आदि तथा दर्शनशास्त्रीय वैष्णवादि सिद्धान्तग्रहण कौलनास्तिकादि निरास, शास्त्रचिन्तन, आदि अनेक प्रकारविधियां वर्णित हैं। इसका सप्ताह पारायण सारल्य के लिये चूर्णिका-समान पारायणी टीका सारबोधिनी स्वरूप में लिखी गई है।। हजारन स्थलों में इस ग्रन्थ के पारायणों का महोत्सव समारोह हुआ ही करता है। श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजीने १५ वर्षानन्तर ६५ वर्ष तक इसके कई पारायण कई शहरनगर ग्रामों में किये हैं।

३४. तत्त्वप्रभावली नामक विशिष्ट न्यायशास्त्र में अधिकसमावेश **'साक्षात्कार सूत्राणि'** ग्रन्थ का किया गया है। प्रत्यक्षप्रमाणप्राबल्यं को लेते हुए अनुमानादि नव प्रमाणों की उपस्थिति भी प्रत्यक्ष से ही होती है, अतः सभी पदार्थ कोई न कोई पुरुष का साक्षात्कृत है, परमेश्वर ब्रह्म मुक्त सगुणेश्वर व्यूह साक्षी ब्रह्म अन्तर्यामी अवतार ईश्वरलोग देवलोग ऋषि महर्षि योगिजन धर्मराज सूर्यनारायणादि को व्यक्त अव्यक्त आवृत अनावृत सूक्ष्म स्थूल सभी तत्त्वों का प्रत्यक्ष ही है, अतः **'सर्वं साक्षात्'** इस सिद्धान्त पर यह ग्रन्थ लिखा गया है, साक्षात्कार सूत्रों के पर कल्याणी वृत्तिनामक टीका भी लिखी गई है, जो दार्शनिक विद्वानों को नवीन नैयायिक तार्किकों के लिये भी सुतरां दार्शनिक विचारों में प्रामाण्यविषय के लिये उपयुक्त है। यह सभी प्रमाण प्रामाण्य रखता हुआ साक्षात्प्रत्यक्षप्रामाण्य को सभी में लगाता हुआ विचित्र ग्रन्थ है।

३५. **तत्त्वमुक्ताकलाप-किरणावली**—रामानुजसम्प्रदाय का यह ग्रन्थ दार्शनिक तत्त्वों पर विचार करता हुआ गम्भीर अर्थों का निर्णय दीखलाता है, फलतः तत्त्वचिन्तन का भक्ति में परिणाम लेके मोक्षरूप मुख्य है। तत्त्वशोधन सभी को इष्ट है, लाघवगौरव अन्यथासिद्धयादि युक्तियाँ काम देती हैं, न्याय सांख्य बौद्धवेदान्तियाज्ञिकशैवशाक्तादि विचारित तत्त्वों को याथार्थ्यविषय करना विद्वानों का बगीचा है, इस ग्रन्थ में द्रव्य अद्रव्व विभक्त करके पदार्थों पर विचार चला है। प्रथमसर में द्रव्य सिद्धि और प्रकृति आदि पर विचार किये हैं। विरुद्धमतों का निरास किया है, द्वितीय जीवसर में जोव विवेचित किये हैं, तृतीय नायकसर में ईश्वर विवेचित किया है। चतुर्थ बुद्धिसर में ज्ञानपर गम्भीर विचार किये गये हैं। पञ्चम अद्रव्यसर में गुणादि विवेचित हैं। प्रकृति, काल, जीव, ईश्वर, नित्यविभूति, धर्मभूतज्ञान येछ द्रव्य, और सत्त्वरजतम शब्दस्पर्शरूपरसगन्ध संयोग शक्ति दश गुण वर्णित हैं अन्य का निरास हैं तत्त्वज्ञान का प्रयोजन, द्रव्यलक्षण, प्राकृतिक सृष्टिप्रकार, ईश्वराधिष्ठिततत्त्वों में कार्यकारित्व, न्यायमतीयकारणतानुपपत्ति अवयवित्वनिरास, सत्कार्यवादनिरास, क्षणभंगवादनिरास, चार्वाकमत खण्डन इन्द्रियविचार, मनोविचार, आकाश दिक् वायु तेज पृथिवी तम आदि पर विचार, पञ्चीकरणप्रकार, आकाशप्रत्यक्षता, अभावप्रत्यक्षता, काल आदि विवेचित किये हैं। आत्मविचार स्वयंप्रकाशता कर्तृता, आत्मा एक अनेक क्षणिक नित्य परिच्छिन्न विभु मध्यमकद आदि पर विशद विचार, भक्तिस्वरूप विद्याविभाग वर्णादिधर्म ब्रह्मविद्या वाक्यार्थज्ञान महावाक्यस्वारस्य प्रिय अप्रिय आतिवाहिकक्रम मुक्तसत्यकामता सेवा प्रतिबिम्ब-

निरास, परमेशसिद्धि, सर्ववाङ्मय की नारायणपरायणता, विशिष्टेवाच्यता, विष्णु भगवान् आदि परक प्रमाण अयुक्तानुमानादिनिरास, जगन्निमित्तोपादान ईश्वर, लीलापरिणामाऽनुपपत्ति उपाधिब्रह्मजीवतादि-निरास, विवर्त आविद्यक अज्ञानादि अनुपपत्ति, मिथ्यात्वनिरास, प्रपंचमिथ्यात्वनिरास, नित्यविभूति, भगवतो विग्रहवत्त्व, भगवान के वस्त्र आभूषादि दिव्यत्व, षाड्गुण्य, व्यूहसमालोचना, प्राविर्भावोपपत्ति, सार्वज्ञ्यम्, स्वप्रकाशत्व, धीस्वरूप, ज्ञानद्रव्यत्व, प्रमाण अप्रमाण विवेचन, यथार्थख्याति, अख्यातियथार्थ-ख्यातिस्वरूप, अन्यथाख्याति अनिर्वचनीयख्याति असत्ख्याति आत्मख्याति निरधिष्ठान ख्याति निर्विषय-ख्याति का निरास, विशिष्टविषयकनिर्विकल्प, अनुमानप्रामाण्य, तर्क, उपाधिव्याप्ति असद्धेतु केवलान्वयि प्रतिज्ञादि कथा निग्रहस्थान षट्पक्षी आगमप्रमाण संकेत विधि विशिष्टवाचिता शब्दों की शरीरिपर्यन्त बोधकता, शरीर, विश्वकी ईश्वरशरीरता, शब्दों का परमात्मपर्यन्तता स्कोटवादभंग अन्विताभिधान अभिहितान्वय निर्विशेषताभंग, वेदप्रमाणता, स्वतःप्रामाण्य, वेदनित्यता, स्मृत्यादि की वैदिकता, पुराणादि की बलाबलता, स्मृति, अद्रव्य, धर्मधर्मिभाव, अनेकान्ततताभंग, सप्तभंगीभंग, शब्द, पुद्गलता-भंगः, पाकज अपाकज गुण, सांसिद्धिकत्व, ब्रह्म में परममहत्त्व, संयोगवैचित्र्य विषयविषयिभाव योगिधी मुक्तबुद्धि, ज्ञाततताऽनुपपत्ति, इच्छादि की ज्ञानविशेषता, अदृष्ट, देवताप्रीतिधर्म, पुण्य भगवत्प्रीति, भावना, कृतिसाध्यता, लिङर्थ, संस्कार, कर्म, जाति, सादृश्य, विशेष, समवाय, अभाव आदि पर अनुपपत्ति उपपत्ति सिद्धान्तादि विशद विचार, सभी के पदार्थों पर सभी के न्यायादि युक्तियाँ लगालगाकर पाण्डित्य पूर्ण विचार किया गया है। इस ग्रन्थ के पद्यों के अन्वयार्थ तथा सरल गहन अधिक उपयोजन आवाप उद्वाप जटिल पदार्थों पर अवर्जनीय तार्किक विचार हेत्वाभास छल जाति निग्रहस्थानों का योजन आदि तथा विशिष्टाद्वैतीय पदार्थों का पूर्ण प्रकाशकरनेवाली किरणावली टीका अभ्यास के लिये अतीव उपयुक्त मानी गई है। सभी दर्शनों के सभी पदार्थों के पूर्वपक्ष उत्तरपक्ष निरास सिद्धान्त स्थापनादि इस किरणावली टीका में बहुत सरल विशाल हृदय खोलकर विवेचित है। वर्तमानयुग में न्यायसिद्धान्त-मुक्तावली किरणावली, सांख्यतत्त्वकौमुदी किरणावली तत्त्वमुक्ताकलापकिरणावली, तर्कसंग्रहदीपिका किरणावली, मीमांसा—अर्थसंग्रह जिरणावली सबसे बढ़कर विजय पा रही हैं।

३६. **छूटकस्तोत्र** हैं—हनुमानजी के स्तोत्र छपे हैं। भूतावेश को भगाते हैं।

३७. **अर्थसंग्रह-किरणावली**—यह मीमांसा के पदार्थों का प्रक्रियाग्रन्थ है, वैदिकानुष्ठान प्रतिपादक वाक्यों के अर्थनिर्णयार्थक मीमांसाशास्त्र बडाकाय रचा गया है, उसमें प्रवेश के लिये पदार्थ प्रमाण तत्त्वसंकलन साधनसमुदाय अर्थनिर्णायक युक्तियाँ प्रकृति-प्रत्ययादिवाच्यार्थ प्रेरणा भावनादिबोध अर्थवाद यथार्थवाद विध्यर्थ निषेधार्थ आदि का स्वरूपज्ञान कर्मकाण्ड के अंग प्रत्यंगों का ज्ञान आवश्यक हैं, इन सब प्रकारों को यह अर्थसंग्रह बुद्धिगम्य कराता है, किरणावली टीका सरल कठिन सभी पदार्थों का विशद विवेचन सपरीक्षण करती है, टूचकाओं को तत्तत्स्थल में गहनता को खोल-खोलकर घटाती है। यह अच्छी उपयुक्त टीका हुइ है। इसमें याग देवता द्रव्य क्रिया अदृष्ट फल आदि में अन्ततः परमात्मा की प्रसन्नता में पर्यवसान दिखाया है सेश्वरमीमांसा सूत्रों से ही साबीत किया है।

३८. **मीमांसायाम् अंगत्वादि परिष्कृतिः**—नव्यतार्किकरीति से मीमांसा के पदार्थों का जहाँ जो परिष्कार करना उचित हो वहाँ-वहाँ मीमांसित अच्छे-अच्छे परिष्कृत पदार्थों को दिखलाने वाला यह ग्रन्थ है, जो विद्वानों के लिये उपयोगी है। नव्यतार्किकपरिष्कृति का यह मीमांसकीय ग्रन्थ है, परिष्कारों

के गौरवों से झलकता है। शास्त्र दीपिका तत्त्वप्रभावली, तत्त्वचिन्तामणि अद्वैतसिद्धि दूनिया में अजोड ग्रन्थ हैं।

३९. **सुधासिन्धु सारसन्दोहनम्**—इस ग्रन्थ में २६२ तरंगों के ग्रन्थ सुधासिन्धु के तमाम सिद्धान्तित सार दर्शनप्रणालियों से विशदरूप में संकलित किये हैं, जो स्वामिनारायणसम्प्रदाय में मान्य द्रव्यगुणादिपदार्थ, प्रत्यक्षादि प्रमाण, ज्ञान प्रामाण्य, ज्ञानस्वतःप्रकाशत्व, ज्ञानसत्यत्व, सत्समुच्चयख्याति, आदि का विशेष निर्णायक यह ग्रन्थ है। लेखक पंडितजी ने जीवनभर अभ्यास में लेके श्रीस्वामिनारायण-भगवन्मुख से वर्णित पदार्थ उठा-उठा कर पकड़ के उस पर संकलन किया यह ग्रन्थ है, विशिष्ट ब्रह्माद्वैत का निर्णायक है। पर ब्रह्म, ब्रह्म, माया, ईश्वर, जीव, ये पाञ्च तत्त्व, तथा पर ब्रह्म आनन्दघन सगुणसाकार दिव्यमूर्ति, ब्रह्मलोक अमूर्त प्रकाश और सुमूर्त सेवास्थ व्याप्य स्वतन्त्र प्रकाशघन तत्त्व, मुक्तमण्डल तत्त्व, त्रिगुणिमाया तत्त्व, चतुर्विंशति महत्तत्त्वादि तत्त्व, रजोघनतत्त्व, तथा ऐश्वर्यघन साकार ईश्वरतत्त्व, तथा ज्ञानघन सच्चिदानन्द जीवात्मतत्त्व, इनके आकार गुण परिमाण स्वरूप सामर्थ्य आभूषा हेति उपकरण आदि दिव्यरूप में प्रतिपादित किये हैं, अवतारवाद आविर्भावरूप में स्वीकृत है, धर्मज्ञान वैराग्य भक्ति प्रपत्ति शरणागति कृपा मोक्ष के साधन माने गये बतलाये है। सन्त मन्दिरादि सेवा साधन सत्संग द्वारा सेवा स्नेहसेवा मुक्ति बतलायी है। विशिष्ट ब्रह्माऽद्वैत सिद्धान्त स्थिर किया है, सत्समुच्चय-ख्याति बीजरूप से यहाँ ही प्रकट की है, इस पर संक्षिप्त तथा विशेष विशाल विवेचन यहाँ तथा तत्त्व प्रभावली के प्रमिति खण्ड में किया है, यहाँ पदार्थ प्रमाण ज्ञानविभाग साधन फल वाक्यविभाग आदि सार रूप से प्राथमिक बोधार्थ एकत्रित कर सुधासिन्धु महाग्रन्थ में से खींच कर रख दिये हैं। पञ्चरात्रादि मान्य अर्चिमार्गमान्य औपनिषदीय ब्रह्मविद्यामान्य वेदान्तसूत्रमान्य दिखलाये हैं, दीक्षा प्रकार बतलाया है। पदार्थ तत्त्व-द्रव्य, द्रव्यगुण, गुण, क्रिया, जाति, विशेष, सम्बन्ध, अभाव, सांख्ययोगनिष्ठा ब्रह्मनिष्ठा, चतुर्विधपुरुषार्थ, प्रमाणादि वृत्तियाँ, अवस्थाएँ, बन्ध, गुण दोष प्रकार, प्रतिज्ञादिप्रयोग, इस प्रकार तत्त्वसारविवेचन किया गया है, सभी विशाल प्रक्रियाएँ इस पर अवलम्बित रहेगी। इसमें शंका कृपा उत्तर प्रेरक समाधान यथार्थ विप्रतिपत्ति लाक्षणिक शक्तिमत् अलंकार रस विधिमन्त्रादि स्फोट शास्त्रीय-वाक्यों से विहँचनाएँ की गयी है। बहुविध प्रामाण्य हेतु उदाहृत है, श्रेष्ठ-श्रेष्ठ मुक्ति समय के सिद्धान्त भी दिये हैं। महावाक्यों का बोध मुक्तों के साक्षात्कार मुक्तिसाक्षात्त्व प्रकार वर्णित हैं। निश्चय तत्त्वज्ञान आदि में विश्रान्ति लेनेवाला यह ग्रन्थ सभी को परिशीलन करने योग्य है।

४०. **दर्शनतत्त्वसार**—इस ग्रन्थ में श्रीस्वामिनारायणदर्शन नामक सप्तम दर्शन के विषयविभाग उनके वर्णन, सन्निपत्योपकारक आरादुपकारक साधन, परब्रह्मदिव्यदर्शन फल, भक्तिमान् ब्रह्मधाम में जाके रहता है, परमात्मा के स्वेतर सर्वशरीर है, भगवत्कृपा से साधुजन कृपा से जल्दी मुक्ति मिलतीं हे। मूर्ति में भगवान् साक्षात् विराजित रहते हैं, सभी प्रमाण सभी दर्शन भगवद्दर्शन प्राप्ति पर्यन्त प्रवृत्तिवाले हैं, उसके बाद निवृत्त हो जाते हैं, साकार सगुण परमपुरुष में श्रुति और अनुमानादि उपयुक्त हैं। निर्गुण निराकार वाक्य सभी निर्बल ही हैं। विशिष्टब्रह्माऽद्वैत में श्रुतियों का तात्पर्य है। श्रुति विरुद्ध मान प्रमाणाभास में गिने जाते हैं। इस परदर्शनकारों के विविध मतमतान्तर दिये गये हैं। आत्मा का ब्रह्म साम्य या विषमत्व पर विचार, कपिल पातंजल केवल तार्किक वैशेषिकों के मत से वैदिकत्व पर विचार, इस पर श्रीस्वामिनारायणमत के विचार, न्याय वैशेषिक प्राभाकरों की ज्ञानशून्य जड मुक्ति है, भाट्ट के मत में अंशेन जडता कही है, शैव सांख्यपातंजल वेदान्ति लोग ज्ञानस्वरूप आत्मा को कहते हैं, द्वैत रामानुज नैयायिक वैशेषिक आत्मा को सगुण कहते हैं, बौद्ध को आत्मपरिमाण अनिश्चित है, रामानुज

माध्ववल्लभ अणु कहते है, चार्वाक माध्यमिक जैन मध्यम कहते हैं, न्याय सांख्य वेदान्त पातंजल वैशेषिक महान् कहते हैं, न्याय वैशेषिक सत्य कर्तृत्व मानते हैं, रामानुज माध्व नैमित्तिक मानते हैं, अद्वैती औपाधिक कहते हैं, सांख्य पातंजलों का प्रकृति में कर्तृत्व है, आत्मा में भोक्तृत्व नैमित्तिक है, परमाणु विषय में कारणता में ख्याति में कार्यता में प्रतिविम्ब में भ्रमस्थल में आविर्भाव में कारक व्यापार में साक्षात्कार में भी कई दर्शनकारों के मत दिखलाये हैं, नकुलीशपाशुपत शैव रसेश्वर मीमाँसक पाणिनीय मायावादी द्वैती आदि के मत जीव ईश्वर शक्ति साक्षी आदि में दिखलाये हैं। अन्धकार में भाट्ट अद्वैती विशिष्टवादी माध्व माहेश्वर तार्किक चार्वाक बौद्ध सांख्य के मत तथा कालतत्त्व में विचार दिखलाया है। अभाव पदार्थ पर विवेचन किया है, वन्ध में स्वतः परतः प्रामाण्य में अप्रामाण्य में मोक्षस्थिति स्वरूप में महान् विचार दर्शाया है, श्रीस्वामिनारायण तत्त्व के विमर्श उन्हीं तत्त्वों पर दिखलाये हैं, स्फूर्ति वृत्ति दृक्शक्ति चैतन्यशक्ति आदि पर सभी के मत कहे हैं, पदार्थों पर दर्शनकारों के मतमतान्तर स्पष्ट किये हैं। हरएक तत्त्वों पर सिद्धान्त पर द्रव्य गुण धर्म धर्मिक्षणिक शाश्वत साधन साध्य भ्रम निश्चयादि पर इस ग्रन्थ में विशाल संग्रहित स्पष्ट विचार किया गया है, जो अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। संसार द्वार मोक्ष उनके स्वरूप में भी श्रीस्वामिनारायणसिद्धान्त को लेके आखिर स्पष्टता की है। यह ग्रन्थ दार्शनिक विद्वानों को उपादेय है।

४१. **भक्तिरससरित**—इसमें भक्ति के स्वरूप, भक्ति में रसों के स्वरूप, भगवान् में सभीरसों के समावेश है, भोजन में भोग में उत्सव में विवाह में काव्य में लक्ष्यवेध में विद्या में प्रीति में जो-जो रस हैं वे श्रीहरि में हैं, रसमय मूर्ति में १९४ रसों का दिग्दर्शन कराया है। भक्तों को गम्य हैं। यह, रस में रससमूह में रसविकास में अपूर्व ग्रन्थ है। काव्यों में दर्शित रस इन रसों के आगे धूली-सा हो जाते हैं।

४२. **सामान्यनिरुक्तिगादाधरीक्रोडम्**—'यद्विषयकत्वेन ज्ञानस्य अनुमितितत्करणान्यतरप्रतिबन्धकत्वं तत्त्वं हैत्वाभासत्वं, सव्यभिचार, विरुद्ध, सत्प्रतिपक्ष, असिद्ध, बाधित, ये पाँच हेत्वाभास हैं, इनका वह एक ही लक्षण गमक है, इस पर गंगेशोपाध्याय रघुनाथशिरोमणि गदाधरभट्टाचार्य मथुरानाथतर्कवागीश जगदीशभट्टाचार्य आदि के परिष्कृत ग्रन्थ हैं, बच्चा झा का तत्त्वालोक बड़ा विशाल परिष्कृत ग्रन्थ है। वामाचरणभट्टाचार्यजी के कई टीकाग्रन्थ हैं। नव्यन्यायाचार्यों को पढ़ना शास्त्रार्थ में जितना आदि के लिये पाण्डित्य का खजानारूप यह ग्रन्थ है, महामहोपाध्याय धुरन्धर न्याय के पण्डित श्रीवामाचरणभट्टाचार्यजी के समय जो कुछ ग्रन्थों पर आकाशवृत्तीय छोटे-छोटे शंका समाधानों में शास्त्रार्थ के लिये क्रोडपत्र के रूप में शिख लिये जाते थे वे शास्त्रार्थ विषय के अंश परिष्कार रूप क्रोडपत्र यह ग्रन्थ है। नव्यन्यायाचार्य की चाँच इसमें स्पर्श कर सकती है, इसका अविलय जीवन के लिये स्वामीजो ने प्रकाशित कर दिया है। पूना-महामहोपाध्याय श्रीपाण्डुरंग शास्त्री, कलकत्ता-महामहोपाध्याय श्रीमधुसूदन शास्त्री आदि सहाध्यायी लोग एक साथ में ही गुरुजी से पढ़ते समय विशेष विचार लिख लेते थे, सो यह गुरुप्रसादीरूप क्रोड है। विवृत्तिटीका भी प्रख्यात है।

४३. **श्वेतायनसंहिता सम्पादनम्**—यह ग्रन्थ महाभारत के समान महामहा काव्यरूप है महामहा इतिहासरूप है। एक लाख छब्बीस हजार श्लोकों में श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ने ६० से ७० तक के दशक काल में लिखकर चौखंभा प्रेस काशी को देके प्रकाशित किया हैं, इनके चार खण्ड कृतयुगसन्तान, त्रेतायुगसन्तान, द्वापरयुगसन्तान, तिष्ययुगसन्तान हैं। श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ने अपना ही श्वेतायन व्यास नाम रख के (श्वेतायनीयसंहिता) श्रीलक्ष्मीनारायणसंहिता नाम से लिखकर सम्पादकरूप से जाहेर

किया है। इस ग्रन्थ पर कई चर्चाएँ हुई हैं होती हैं, परीक्षक लोग P. H. D. लोग इसका अन्तरथाह नहीं ले सके, इसमें श्रीकृष्णवल्लभ आचार्यजी के ऐहिक दैविक पारमार्थिक जीवन भी कहीं-कहीं सामेल है, श्वेतायनीय व्यासावतार श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ने इस ग्रन्थ में—चारों युगों के धर्म, अवतार मन्वन्तर महर्षि पितृगण देवगण इन्द्रादि परिवर्तन व्यासों का परिवर्तन भगवान् का प्राविर्भाव शक्तियों का प्राविर्भाव सृष्टि के प्रकरण खगोल भूगोल के इतिहास पृथ्वी पर तमाम प्रजाओं के प्राविर्भावों में भगवत्सम्बन्ध हरेक देशों में यज्ञ याग पर्वत नदियाँ अरण्य तीर्थ खात अखात स्थल जल अन्तरिक्ष के आख्यान, तीर्थ व्रत धर्म दान पुण्य युद्ध इतियाँ महासंग्राम आदि से भरा हुआ यह ग्रन्थ है, इसमें वैदिक प्राचीन अर्वाचीन होनारतें रूपक कथाएँ अघटित घटनाएँ परमेश्वर की ब्रह्मसृष्टि से सम्बन्धवाली कथाएँ ६८ कलाएँ, मन्त्र तन्त्र यन्त्र सूत्र शास्त्र वंश विभूतियाँ वर्ण आश्रम लय प्रलय स्थिरता काल युग विभिन्न धर्मपरिवर्तन प्रजा-परिवर्तन शिल्पविकास देवालय प्रतिष्ठाविकास गायनगान्धर्वविकास यागकाण्डविकास वेषभूषानृत्यादि-विकास समर युद्ध मन्त्र शस्त्रास्त्रविकास राज्य नगर नगरीग्रामादिविकास, ब्रह्मा विष्णु महेश रुद्र इन्द्र चन्द्र वरुण अग्नि वायु देवता देवियाँ योगिनियाँ कामधेनु रत्न चतुर्दश भुवनों के सम्बन्ध चरित्र चमत्कार ऐश्वर्य आदि के वर्णन, काश्यपी दाक्षी चान्द्री सौरी प्रजाओं के वंशविस्तार अमरीपरी भूतनाथी पिशंगी चिन्ही ब्राह्मी गौरी काष्णी आदि प्रजाओं के वंशविस्तार खण्डों के विभाग देवों के आविर्भाव आदि मूल-स्पर्शी वर्णन है, चार प्रकार की प्रजा, व्यवहार तत्त्वज्ञान तपश्चर्याएँ आयुष्य वाणी ब्रह्माण्डभवन वैराज महाविष्णु वैकुण्ठ गोलोक ब्रह्मधाम माया तत्त्वादि के विशाल विमर्श किये गये हैं। भगवान् के आविर्भाव उनके कुटुम्ब भक्त भक्तानी का समूह, फल प्रयोजन कार्य ज्ञान भक्ति आदि महामुख्य विषय लिये हैं। **प्रथम कृतयुग सन्तान में**—५९० अध्याय हैं, प्रायशः ५५००० हजार श्लोक है, दो वोल्युम में जिल्द है।

वैकुण्ठ में श्रीलक्ष्मीनारायण की भक्तसभा में नारदजी का कीर्तनभक्तिद्वारा द्रवितभाव तथा लीनभाव, ब्रह्मलोक में वैकुण्ठ गोलोक आदि में भी द्रवितभावी भक्ति। ईश्वरसृष्टि। ब्रह्मा विष्णु महेशों का आविर्भाव। दिव्यलिंग तेजःप्रवाहादि कथा। कालव्यवस्था, मानससृष्टि, देव देवी सती साध्वी विद्या जयन्त्यादि राधा आराधनादि सृष्टि, पतिव्रता तथा पत्नीव्रत दिव्य सृष्टि। ऋणानुबन्धी सृष्टि, सोमनाथ में चन्द्र तपश्चर्या, क्षयव्याधि परिहार, विश्वरूप, वृत्र, इन्द्र, वाराहावतार, हिरण्याक्ष, रैवतनृप, अश्वपट्ट-सरोवर तीर्थ, खट्वांग, लक्ष्मीनारायण आविर्भाव, वर्हिषांगद, व्यास, धारणा, ध्यान, विभूतियाँ, सर्पसत्र, सूर्य-संज्ञा, यमराज यमुना मनु, यमस्थान, कर्मफल, कमलालक्षण, प्रेतकर्मकाण्ड, दानफल, मुक्तिसाधन, नारायणबलि, धन्वन्तरि, चन्द्रवंश, काशीस्थ दिवोदास, योगिनियाँ, गण गणेश, शकुनादि, सप्ताहकथा, उर्वशीकथा, दुर्वासःकथा, समुद्रमथन, मोहिनी, शंकरोदित पुत्रव्रत, कार्तिकेय, तारकासुर, गणेश, हस्ति-मस्तकता, क्षेम लाभ, नरनारायण, शीलव्रत, बदरिकाश्रम, वैष्णवता, षोडशविध भक्ति, शरणागति, अक्षरब्रह्मधाम, गोलोकरचना, महावैकुण्ठरचना, श्वेतद्वीप, क्षीरसागर, वैष्णव शैव धर्म, हयग्रीव, मत्स्या-वतार, जयविजय, सनकादि, हिरण्यकशिपु, प्रह्लाद, माताको, नारदोपदेश, नरसिंहाविर्भाव, रेवताचल, दामोदर, बलिराजा, वामन, यज्ञ, त्रिपादभूमियाचना, निग्रह, इन्द्र को स्वर्गदान, पयोव्रत, स्वर्णरेखा नदी, योगिनी, शकुन, दान, कृच्छ्र, इन्द्रेश्वर, रेवताचल आगमन, देवतीर्थागमन, तुलसी, हरिवासर, लक्ष्मी-निवास, रेवती, आनर्त, पितृगण, पत्नीव्रतविप्रतीर्थयात्रा, नारायणह्रद में श्राद्ध, मोहिनी, मधुकैटभ, रम्भासुर, महिषासुर, महाकाली, अष्टमहर्षि, शुम्भनिशुम्भ, कौशिकी, चण्डमुण्ड, विभावरी देवियों के सैन्य, ब्रह्मैक्यबोध, गोप गोपी पार्वती शिवा, सती जयन्ती, कैलास, शिव, सती शंभु उद्वाह, दिव्यता, दक्ष यज्ञ, सतीलय, वीरभद्र, मेना धन्या कलावती, शिवा सिता राधा, स्तुतियाँ चमत्कारादि, मंगलग्रह,

टीकाकार के रूप में, मौलिक, सर्जक, आलोचक व विवेचक के रूप में संस्कृतसाहित्यजगत के महान आधुनिक वेदव्यासजी के अवतार हैं।

स्वामि श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी परमसात्विक, वचनसिद्ध, चमत्कारिक महानयोगी पुरुष हैं। भारत के दो सौ विद्वानों में से ३० विद्वानों की एक समिति आपके अभिनंदन की तैयारी कर रही है। महा-पुरुषों की शताब्दियों में अनेक नगरों में आमंत्रित किये जाने पर वहाँ पधारकर आपने अनेक विषयों पर विविध विषयों में व्याख्यान दिये। छड़ी छत्र सहित सोनेचाँदी के रथ में विराजमान होकर राज्य का गौरवमय सम्मान प्राप्त किया।

स्वामि ने अपने जीवन में संहिताएँ, शास्त्र, पुराण, इतिहास, सूत्र, भक्ति व धर्मशास्त्रों को मिलकर १०८ पारायण सम्पूर्ण किये।

आपने कुरान, बाइबल, गुरुग्रन्थसहाब, विश्वपट दर्शन, जैन तत्त्वप्रकाश का गहन अध्ययन कर उस पर व्याख्यान दिये। कई तपस्वी अनुष्ठान किये।

भारत में कई स्वामिनारायण मंदिर व संस्कृत पाठशालाओं तथा तपभवनों का निर्माण करवाया। स्वामिजी ज्ञानविज्ञान के प्रखर ज्ञाता होने पर भी मुनिव्रत, शक्तियों के होते हुवे भी क्षमाव्रत, त्यागशील होने पर भी प्रशंसा से दूर, सम्मानों में रहते हुवे भी निर्मानव्रत, आजीवन प्रथमाश्रमीशीलव्रत, संतस्थिति भागवद्भक्ति, ग्रन्थ परिशीलन, भजनकीर्तन नियमरक्षक तथा परोपकारी जीवनात्मता हैं।

भगवान की कृपा से, पंडितों के आशीर्वाद से, सरस्वती की उपासना से, माता-पिता के पुण्य से, महान सन्तों की प्रसन्नता से वर्तमान समय में दिगन्तयशस्वी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज भारत में चमक रहे हैं।

स्वामी श्रीकृष्णवल्लभचार्यजी के विषय में विद्वानों के कुछ अभिप्राय :—

"श्रीस्वामिजी द्वारा लिखित मौलिक पुस्तकों एवं प्राचीन पुस्तकों की टीकाओं की सूची के अवलोकन से यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने शिक्षा जगत में उल्लेखनीय कार्य किया है"।

डॉ० रामनाथ वेदालंकार
उपकुलपति
गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार, गुरुकुल काँगड़ी

"भारत के इस महान संस्कृत विद्वान को हमारा अभिनन्दन"। **स्व० डॉ० जाकिर हुसेन**
भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति

श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः सदाचारसमन्वितः। विश्रुतः कृतिभिर्लोके मानवानां हिते रतःज्ञाप्त्या विभूषितः कृष्णः सदाराधनतत्परः। सरस्वतीनिधिः पुष्यन् शोभत शिष्यवन्दितः॥ **डॉ० अमरनाथ पांडे**
M.A., D. Phil.

"संस्कृत के महान विद्वान को मेरा अभिनन्दन।" **डॉ० टी० एम० पी० महादेवन,**
मद्रास युनिवर्सिटी।

"श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी केवल पण्डित सार्वभौम ही नहीं सहृदय शिरोमणि और सदाचार की प्रतिमूर्ति भी हैं।"

डॉ० रामनरेश वर्मा
वाराणसी।

द्वितीय त्रेतायुग खण्ड में—हिरण्यकोश के अण्ड के कूर्चों से हिरण्यकूर्च और हिरण्याक्ष की उत्पत्ति, संकर्षणद्वारा नाश, मेरु से दक्षिण पाषाणात्मक पृथ्वीपरिरूप, भगवान का लोमशक्षेत्र में प्राकट्य, जयन्त्युत्सवदानादि, षष्ठीदेवीकृतरक्षा, सूतकपुरुषः, नामकरण, साणासुरनाश, प्रेंखारोहण, तलाजा-राक्षसीनाश, दुग्धपानोत्सव, गोरूपराक्षसीनाश, गृहनिष्क्रमण, चन्द्रदर्शन, भूम्युपवेशन, चमत्कार, कर्णवेध, अश्विनीकुमारतीर्थ, अन्नप्राशन, वनदेवता, वस्तुग्रह, दमनकदैत्यनाश, राक्षसणीयुद्ध, शरणागति, एकादशी पातिव्रत्य सेवा, शत्रुंजयस्थ कंकतालयुद्ध, पितृतर्पण, द्वितीय महोत्सव नारकिमोक्ष, जयन्त्युत्सव, प्रह्लाद नारायण युद्ध, चौलसंस्कार, पुष्पदोलमह, सालमालासुरनाश, यज्ञसूत्रोत्सव, सुकेशि, अशून्यशयनव्रत, शिवपुण्यकव्रत, तृतीयमहोत्सव। स्वस्तिक मोक्ष, चतुर्थमहोत्सव। शावदीनाकाली को बालबलि अर्पण से रक्षा, देवीपशुबलि, रक्षा, सहरि लोमशाश्रमागमन। पयोव्रत, श्वेतकेतुमर्यादा, उतथ्य बृहस्पतिभार्या, बालग्रहपूजा, वल्लीव्याघ्रासुरनाश, पञ्चममहोत्सव; गान्धर्वसमाज, दाल्भ्यबक चमत्कार, अर्धनारीश्वर नाट्य, विद्यारंभ, वराटकदैत्यनाश, डक्करनाश, राक्षसयोनि से ऋषिओं का उद्धार, शंकरलिंगपातकथा, षष्ठमहोत्सव, देवायनचाण्डालोद्धार। उर्जव्रतकथा दर्शन तीर्थादि। कंथाधर, हुड्डकायिनीकथा, उद्धार, रणंगमयज्ञ, सप्तम महोत्सवः, लक्ष्मणार्य मात्रागस्कर राक्षस, माजांबिकादेवी, रक्षण, सुषुम्णादि, शुक्र विश्वकर्मादि कथा। अब्रिक्त में ब्रह्मविमानेन युद्ध, विवेकाऽविवेकज्ञान, दैत्यनारीयुद्ध, कल्पवल्लिकाः, मृतोद्धार, मरुद्देवोत्पत्ति, यमराज, अरबदूत, बकदानरक्षा, अरववंशः, रक्तबीजासुर, प्रेतमुक्ति, धीरवीर-सरोवर, वृष्टिरक्षण, स्तम्भखान, पूर से मानवसंघातरक्षा, सोमनाथादिभ्रमण, रक्षास्तोत्र, रुग्णरक्षा, अष्टममहोत्सव, नर्मदा में वसुमेधरक्षा, गोपनाथतीर्थ, यज्ञोपवीत, पराविद्योपदेश, दिव्यदर्शन, पूर्वस्वभाव, ज्यामघ, ज्ञानम्, सुधनाभक्तमोक्ष, त्र्यष्टकाऽन्त्यजमुक्ति, षट्शतविप्रबालरक्षा, हिरण्यकेशी, तापी, घोरप्रतिग्रह में रक्षा, अश्विनीकुमार आगमन, कपिलभगवान्, दशम महोत्सव, बलेश्वर जयध्वज, विश्वामित्रोपदेश, नारायणसर, पुलस्त्योक्त युगधर्म, अक्षरक्षेत्रमाहात्म्य, सह्याद्रि, अधर्मजीव, सनत्कुमारोक्त अश्वपट्टसर माहात्म्य, ग्यारहवाँ महोत्सव, बदरिकाश्रम, महामारी, रक्षा, वासुदेवगीता, विशिष्टाद्वैताऽ-द्वैतविज्ञान, विभूति, व्यूह, स्वयंप्रकाशतीर्थ, उष्णालयरक्षा, हेमशालरक्षा, चक्रवाकी मार्जारी वृत्तान्त, मार्जारिका के बालकरक्षण, गण्डकी, मातामहिमा, महावैकुण्ठ धेनुपाल कृष्णादि आविर्भाव, नोपदेशे शिवादि प्राकट्य, तप, चक्रवाकी को शिखरपर जलपान, वरणानदी, काशीविश्वनाथ, अन्नपूर्णा, उष्णालय तीर्थ, बारहवाँ महोत्सव, पितृकन्यकाः, किम्पुरुषखण्ड, राक्षसोपद्रव, युद्ध, प्राग्ज्योतिष यज्ञ, दैत्यसमूह-नाश, ऋषिव्यवस्था, अर्यमा, ब्रह्मपुत्रिका, तीर्थीकरण, यज्ञभूमि लाशहापुरी, भक्ति, आत्मबोध, भूतासन, नग्नपर्वत, सुन्दरवन, पुष्पदोल महोत्सव, तेरहवाँ महोत्सव, शरभमोक्ष, दत्तात्रेयतीर्थ, पवमान, चौरहवाँ महोत्सव, यमपुर, देवायतनमहर्षि, याम्य मोक्षणम्। किंपुरुषखण्ड में राशियान प्रदेश में देवायतनादि बारहमहर्षिगमन, मन्त्रदान, बालकृष्णसरोवरतट में द्वितीय यज्ञ, शिबिदेवराज्य, उपदेश, तृतीय यज्ञप्रस्ताव, थर्कूटस्थराज्य में द्विकलसरोवरतट में द्वितीययाग, मन्त्रोपदेशादि, प्रेतोद्धार, राजनीति उपदेश, वीरजारनृपराज्य में ओबी रात्रीशा संगमबीच तृतीय विष्णुयाग, शक्त्यक्षिनृपराज्य में चतुर्थ विष्णुयाग, अवभृथा मन्त्रदान, पञ्चमयज्ञार्थ कालिमाब्धि प्रतिगमनम्, पिशाचिनीमोक्ष, कालिमेशराज्य में पञ्चमयज्ञ किया, अनेक द्वीपों में भ्रमण, साधुलालासन आदि पञ्चसहस्रों को साधु दीक्षा, लालासन-का उत्तर कुरु में जाना, शूरजारदम्पतीमोक्ष, भगवान् का अश्वपट्टसरोवर को आना, देवायतन का देवालयरूप में होना, मन्दिरों के प्रासाद मूल से ध्वज तक रचना, देवमूर्तियाँ प्रतिष्ठाविधि, वास्तुपुरुष, आचार्यादि वरण, कलशस्थापनादि, श्राद्धादि, कर्मकाण्ड, दक्षिणा, संभार, त्रिसूत्रीवेष्टन, ६४ योगिनियाँ

५० क्षेत्रपाल, स्तम्भ तोरण आदि के देवता पूजन, ग्रहलोकपाल द्वारपालादि पूजन, आहुतियाँ, होम, बलि, यूप, प्रतिमाएँ, नेत्रांजन, दान पूर्णाहुति चरुप्रसादि, सिंहासन, नीराजन स्वस्ति शान्ति आशिष अवभृथ विदाय। जीर्णोद्धारादि। धनमेद का मोक्ष, वोढुको कपिलदर्शन, द्युविश्राम का सिंह से रक्षण, नीलकर्ण का पूर से रक्षण, केतुमाल में जाना, गांगेयों का उद्भव, यज्ञोद्घोषणा, मण्डपादि, भगवान का विमान से जाना, यज्ञपूर्ण विधि से किया, माहात्म्य, अवभृथकुमार प्रत्यक्ष, तृप्तिकुमारी, कुमारी को कुमारदान्, उरलकेतुराजधानी मोक्षिका में भगवान् का जाना, सम्प्रदाय ज्ञानदान, क्रथकराजधानी ओंकारेष्ठा में जाना, शुभकालादि वर्णन। नक्षत्रादिबल। योगमुहूर्तादि पंचांग उपांग विवेचन, ज्योतिर्विज्ञान, ग्रह, युति, लग्नादि। पृथुराजधानी जरस्थलो में जाना, उपदेश, २६ नृपों के पूर्वजन्म ऋषि मनु सूर्यादि। उष्ट्रायराष्ट्र में आगमन, हंकार जयकाष्ठल नृप के राज्यों में विमान से फिर कर तीराणराजधानी में आना। तीराणपुरी में विघसाशित्वोपदेश, अल्मीनरराज्य में जाना, अर्थश्रीनगरी में राक्षस की मुक्ति करके जिनवर्धिनृप की राजधानी में जाना, रामपुरी को पावन करके, अपिनायाद्रि में जाना। वहाँ राक्षसों का नाश, सुदर्शन से पर्वत को जलाना, संगमरमर का होना, मृतों का जिन्दा करना, रवि-माहात्म्य, अल्पकेतुनृप की जीवनी नगरी में जाना। स्वेष्टजरर्षिप्रदेशों में जयकृष्णव नृप की वरणानगरी में जाना, पूजा लेके फेरुनरदेशों में परीशाननृपराज्य में परीशाना नगरी में राजसौध में पधारना। उपदेश। परीजराष्ट्र में जाना, इन्दुरायराष्ट्र में वायुनानगरी में पधारना, इन्दिरानदी में स्नान, मुद्राण्डराष्ट्र में जाना, मद्रिटानगरी में पधारना, उपदेश, शैवालनगरी में पधारकर पूर्तगण्डर्षिप्रदेशों में गण्डराज के लीशावनपत्तन में पधारना, लीशवना में भ्रमण कर, लीनोर्णराष्ट्र में वारुणी नगरी में घूमना, तब बृहच्छरनृप के राज्य में जाना, धीवरा नगरी में पधारना, तब अंगराज की मिलिन्दानगरी में पधारना, बाद में बललीननृपराष्ट्र में जाना, श्रीहरि का वालीना नगरी में पधारना, उसके बाद वालीशा नगरी में जाना, वरसिंहनृप से पूजा प्राप्त करके रायगामलराष्ट्र में जाना, वहाँ रिगा नगरी में पूजन प्राप्त करके फेनतन्तुनृपराज्य में त्रिनया नगरी में उतरना, उपदेश पूजन के बाद स्तोकहोम के राज्य में उमानगरी में पधारना, तब काष्ठयाननृप के राष्ट्र में जाना, तुन्नवायापुरी में उपदेशादि देकर कोलकनृप के राष्ट्र में पधारना, मुरमाषा नगरी में भ्रमण करके पूजोत्तर गांगेय कन्या नदियों में स्नान के बाद दिनमानार्कनृप के खण्ड में गरिमादेश की अपरानाविकापुरी में उतरना, विमान से भ्रमण करके केनाटक प्रदेशों में विनिपार सरोवर तट में उतरना, केनाटकों में यज्ञार्थ मंगलपत्रिका भेजना, दश भूपों ने सम्मान करके मण्डप साधन सामग्री एकत्रित करना, मणिसेवापुरी में यज्ञपत्तन में विश्राम लेना, रायकिन्नटनृपकृत सुवर्णमूर्ति देखना, रायरोकीश्वरनृप के राष्ट्र में स्फूर्तिनारीनगरी में पधारना, उस देश में फिरकर यज्ञ भूमि में पधारना, हर्यश स्वप्रकाश प्रभु का सर्वद्रष्टृत्व, महीयानों का आना, भगवान् का पधारना, देव स्थापना, ऋषिकृत देवपूजा, देहशुद्धि, अग्निस्थापना, आहुति देना, दक्षिणा। तब रायरणजित् के राष्ट्र-में पधारना, मीनार्ककृष्णनगरी में पूजा स्वीकारना, तब रायवाकक्षनृप के राष्ट्र में जाना, द्विनस्क में तथा मिल्विल में उपदेश देकर यज्ञभूमि में आना, रायमारीष राष्ट्र में आलीस्मर द्वीप में जाना, ऋद्धीशा-पुरी में भ्रमण कर काशीम द्विवाम मीलवील आदि द्वीपों को पावन करके मख भूमि में आना। तब रायबालेश्वर नृप के राष्ट्र में द्वैपायनद्वीप में वायुफेनापुरी में पूजा स्वीकारना तथा उपदेश करना, महापूर्णाहुति, तृप्ति, परिहार, आशीर्वाद, अवभृथ, पारितोषिक, तब रायलम्बारनृप के राष्ट्र में पधारना किमुवक्रानगरी में घूमना, बाद में यज्ञस्थली में पधार कर सभा में आशीर्वादादि के बाद विदाय लेना। तब रायनवार्कभूप के राष्ट्र में चिंचागोपुरि का नगरी में घूमना, तब स्वर्लतिकापुरी में भी पधारना,

उसके बाद रायहण्डेश्वरनृप के राष्ट्र में माक्षिका नगरी में भ्रमना, उपदेश देना, उसके बाद रायकूपेशनृप के राष्ट्र में पधारना, हवाना नगरी में पूजन प्राप्त करके कालीमण्डलीननृप की विगोष्ठिका नगरी में विश्रान्ति लेना। तब वनज्वालाराष्ट्र में पधारना, सानुज्योष्ट्रीनगरी में पूजन प्राप्त करके गतैनस राष्ट्र में पधारना, कायनी नगरी में सत्कार लेके राजालय में उपदेश देके कोटीश्वरनृप की पेयिस्थानगरी में जाना, सत्कार के बाद पारुपराष्ट्र में संचालानगरी में विश्राम लेके फान्कलाशीनगरी में उपदेश के बाद, आंडजरानृपराष्ट्र में पधारना, आन्तःप्रागस्थानगरी में पधारना, उपदेश देना, सत्कारप्राप्त करना, तब भगवान् का बाल्यरजोनृप के राष्ट्र में मन्त्रिणांगानगरी में पधारना, बाद में रायसोमननृप के राष्ट्र में वायुमानानगरी में पधारना, स्वागत लेके राजारायपति के राज्य में घूमकर, आर्षजतनुराज्य में तथा उरोगमनराष्ट्र में जाना, उरुगवाक्षनृपकृत सम्मान के बाद, रायग्रामानगरी में घूमना, उपदेश के बाद परांगवृतनृप के पारावातराज्य में पधारना, आशासनानगरी में घूमकर उपदेश के बाद ब्राह्मील राष्ट्र में यज्ञस्थली में जाना। यज्ञकार्य करना, दान देना, परिहार के बाद उपदेश, सर्वात्मकत्व का भान कराना, उत्सव करना, यज्ञपूर्णता के बाद आम्रजान्यादि सप्त सरिताओं में अवभृथ, तीर्थ करना; तब राजारायपति के राष्ट्र में व्येनोजराज्ञापुरी में जाना, पितृपिण्ड जलदान, बाद में लापलात्रोपुरी में जाना, विद्युन्मणि की रक्षा, नवजीव द्वीप में दैत्यों का नाश करना, कामनायकगण को राज्य देना, द्विनेदिष्ठपुर को पावन करके उष्णालय में त्रासमान द्वीप में वृन्दारुका में जाकर, सिंहल द्वीप में जाके, तब पम्पासर हो के कुंकुमवापी में पधारना, शरत्पूर्णिमा का रासमण्डल खेलना, पंद्रहवाँ जयन्त्युत्सव करना, तामसाक्षिचण्डाल का मोक्ष, धनलक्ष्मीपूजन, बर्बूर नृप का वृक्षावतार से मोक्ष, शंकरपूजन, दीपोत्सव, शारदापूजन, महामारीरोग से जनता की रक्षा, दत्तात्रेयतीर्थ, अन्नकूटोत्सव, पुण्डरीक नृप को हंसरूपदर्शन, हंसतीर्थ, चोलराजको नृसिंहदर्शन नृसिंहतीर्थ, वीतिहोत्र योगेश्वर को ऋषभरूप से दर्शन, ऋषभ तीर्थ, पतञ्जलि चमस वैवस्वत संकर्षण शेषादि के मन्दिर व तीर्थ। पंकिल ऋषि, वामनपादांगुष्ठस्पर्श, वामन तीर्थ। हैमकल्गि नृप को परशुरामदर्शन परशुराम तीर्थ। अश्वपाटल नृप का सोमयाग, लोमश उपदेश। प्रवर्ग्य हवन, उद्यापन, प्रातःसवनादि, पूर्णाहुति अवभृथम्॥ **लोमशगीता** में श्रद्धोपदेश, त्यागमार्ग, त्रिवर्ग, पुण्य पाप मोक्ष दोषनाश, अक्षरगति, साधन, गार्हस्थ्य, संन्यास, सर्ग, श्रेयः, अभ्युदय, तीर्षण, विवेक, उपासना, योग, धर्म, बलाबल, क्षराऽक्षर, धामगतियाँ। देहनिष्क्रान्ति, संन्यासविचार, आनर्त कुशला सम्वाद। सन्तसमागम, त्रिविक्रम को अनादि श्रीकृष्णनारायण की प्राप्ति, योगिजन, सत्कार्यफल, देवभागदान, भगवद्बोधदान, परब्रह्मपरायणता, रामादित्यतीर्थ, भाणवीर्यभक्त, ऊर्जव्रत कायस्थ का कुष्ठरोगनाश, सूर्यतीर्थ। मूक विप्र का मूकतानाश, शार्ङ्गधरसंहिता। अश्वसरतीर्थ। अजापाल का क्षयरोगनाश, नारदतीर्थ। अर्कपुरी नृप का सर्पयोनि से उद्धार, विप्रसर्पविषहरण जीवनदान, सतीतीर्थ। सौराष्ट्र में स्वर्णपत्तन में रक्षांगारक राणिका की रक्षा अश्वपटसर में सती तीर्थ। अमोहाक्ष नृप को परब्रह्मप्राप्ति बुद्धतीर्थ। अभयाक्ष नृप की त्यागी दीक्षा, लक्ष्मीतीर्थ नारायणतीर्थ। देवानीक कर्षुक की जल से रक्षा, विष्णुतीर्थ। ब्रह्मस्तम्ब विप्र को पुरुषोत्तम प्राप्ति पुरुषोत्तमतीर्थ। अमरी देवी को महाविष्णुप्राप्ति महाविष्णुतीर्थ। कूप्यवाल की गज से रक्षा, सनत्कुमारतीर्थ। कुंकुमेश्वरतीर्थ, सतीशातीर्थ दुर्गातीर्थ धनेश्वरीतीर्थ चैत्यतीर्थ. शालग्रामतीर्थ। नरनारायणतीर्थ माणिक्यातीर्थ अश्वपाटलवृत्तान्त, साधुदीक्षादि। मन्त्र दीक्षा ज्ञान, शिवराजपत्र, बृहस्पति नारद लोमश गोपालकृष्ण, शिवा लक्ष्मी महिमा, रहस्यधर्म, मंगल, मंडप महामुक्तस्वरूप, उत्सव, देवपूजन, बालकृष्णप्रभु का दर्शन, शृंगार, विमानादिभ्रमण, वाजित्रोत्सव, शिवनगरी जानकीनगरी कैलास, शंकरसम्मान, कुलदेवतार्हण, मण्डप, चन्द्रशाला, ऋग्मन्त्रोच्चारण

जय, भगवान् में वृत्ति, मधुपर्कादि सत्कार, दानलक्ष्मी, अग्निहवन, धर्मोपदेश, गंगातीर्थ, मन्त्रग्रहण। गृहधर्म, लोमशोपदेश, सोलहवाँ महोत्सव, उत्तरायणदान, त्रेताधर्म, भागवतधर्मादि पालन।

द्वापर सन्तान में—नारायणीस्तुति, सृष्टिकालगणना, ब्रह्मा के बावन वर्षों के नाम, अन्तिम ४० कल्प, विभूति आदि, अनादि श्रीद्युनारायण ने स्वर्ग रक्षा की, अनादि श्रीमेरुनारायण ने मेरु धारण किया, अनादि श्रीविष्णुनारायण ने रवि का शातन किया। अनादि श्रीदेवनारायण ने चन्द्ररक्षा की, अनादि श्रीयज्ञनारायण ने अब्धररक्षा की। अनादि श्रीब्रह्मनारायण ने रुद्रों का शासन किया, अनादि श्रीआदित्यनारायण ने देवों की गद्दियाँ नियमित बना दी। अनादि श्रीगरुत्मन्नारायण ने सर्पशासन किया। अनादि आर्षनारायण ने ध्रुवदेवस्थैर्य किया, अनादि प्राज्ञनारायण ने थुरानन्द को शासन किया, अनादि प्राज्ञनारायण को ज्योत्स्नाकृत मालाद्यर्पण, महायुद्ध। अनादि श्रीनैष्ठिक वीरनारायण ने साधुधर्म स्थापित किया। अनादि भद्रनारायण ने दग्ध प्रेतों का मोक्ष किया। अनादि श्रीहरिनारायण ने तुंगभद्रा का सूर्य-गतिनिरोध मिटाया। अनादि श्रीबीजनारायण ने कोशस्तेन राक्षस को मार कर बीजरक्षा की। धर्मव्रत-भवन में श्रीवरनारायण का प्राकट्य। सुदर्शनीशाप से स्त्रीरूप में परिणत की रक्षा के लिये अनादि स्त्रीपुंनारायण का प्राकट्य। अनादि श्रीजलनारायण ने माकरादिदैत्य नाश किया। अनादि श्रीशील-नारायण ने सन्तशील स्थापना की। अनादि श्रीवार्धिनारायण ने व्याघ्रानल का नाश किया। अनादि श्री-शीलचतुर्मुखनारायण ने सृष्टिरचना की। श्रीपुरुषोत्तमनारायण ने पुण्यव्रात की मनोकामना पूर्ण किया। अनादि श्रीतीर्थनारायण ने तीर्थ किये। अनादि श्रीजीवनारायण ने भक्तिप्रवर्तन किया। अनाद्यर्धश्रीश-नारायण ने अर्धश्रीश्वर दिखलाया, अनाद्यर्धपितृनारायण ने पितरलोक तृप्त किया। अनादि श्रीप्लक्ष-नारायण ने पिप्पलपूजन चलाया। अनादि श्रीपुंनारायण ने नरमेध में भक्तरक्षा की। अनादि श्रीश्याम-नारायण ने वटश्री प्रकट किया। अनादि श्रीराजनारायण ने मायूरकासुर नाश किया। अनादि श्रीब्रह्मचारि-नारायण ने नैष्ठिक व्रत चलाया। अनादि श्रीशिवनारायण ने हल्लकासुर नाश किया। अनादि श्रीस्वर्ण-नारायण ने कुबेर को सजीवन किया। अनादि श्रीस्वामिनारायण ने ज्वालामुखी से प्रजा रक्षा किया। अनादि श्रीसावननारायण ने निर्वाणिका के घर पुत्रता लिया। अनादि श्रीसाधुनारायण ने अंशुक्रमथ नृप का पुत्रपना लिया। अनादि श्रीभक्तनारायण ने वर्णिशाल मनु को जीवाया। अनादि श्रीमेघनारायण ने अश्व-योनि से वर्मधर नृप का मोक्ष किया। अनादि श्रीवह्निनारायण ने आनलाद को मारा। अनादि श्रीरस-नारायण ने इलोदर को मारा। अनादि श्रीचक्रनारायण ने दैत्य नाश किया। अनादि श्रीसत्यनारायण ने सत्युगधर्म स्थापन किया। अनादि श्रीहिरण्यनारायण ने पर्वतों को स्थिर किये। अनादि श्रीनैरंजनी-नारायण ने भक्तरक्षा किया। अनादि श्रीपुण्यनारायण ने पुण्यवती का शाप निवारण किया। अनादि श्रीबृहद्ब्रह्मनारायण ने अप्सराओं की कामना पूर्ण की। अनादि श्री गुरुनारायण ने ब्रह्मविद्या दिया। अनादि श्रीआचार्यनारायण ने साध्वी महादीक्षा प्रवृत्त किया। अनादि श्रीमहाविद्युन्नारायण ने विद्युत्स्राव राक्षसों का नाश किया। अनादि श्रीमधुनारायण ने मधुभक्षी असुरों का नाश किया। अनादि श्रीनारायण ने धेनुहन् राक्षसों का नाश किया। अनादि श्रीविभुनारायण ने सुवर्णोत्सव में प्राकट्य किया। अनादि श्रीमोक्षनारायण ने मुक्तिश्री का विस्तार किया। अनादि श्रीकृष्णनारायण ने वाङ्मय सुमूर्त किया। बदरिकाश्रम में महर्षियों को परब्रह्मदर्शन, वधूगीता में गृहिणीकर्तव्योपदेश, वधूटीधर्म, सदाचार, मर्यादा, सतीसामर्थ्य, निर्गुणभक्ति, पुरुषोत्तमयोग, परब्रह्मयोग, तादात्म्ययोग, लक्ष्मीनारायणव्रत, गुरुतीर्थ, दिव्या-देवीमोक्ष, गुरुचरण महातीर्थ, पुण्यदिन, ग्रहशान्त्यादि, लक्षकोटि जप होम, इनके फल, महालक्ष्मीनाम-स्तोत्र, प्रतिमा, पितृकन्यका, सौभाग्यशयनव्रत, घटलक्ष्मीव्रत, मांगल्यव्रत, सांख्ययोगीव्रत, रसव्रत,

आर्द्रानन्दव्रत, शारदेयव्रत, कमलाव्रत, लालनव्रत, चक्रवर्तिचिह्न, ६१ व्रत वर्णन। लोमशतीर्थ में मोक्ष, काल मृत्यु जय, मन्त्रजप, द्वापरधर्म, परिवर्तन, गीति में स्वर ग्राम मूर्छना आदि। उत्पात शान्ति। दुष्टस्वप्नादि शान्ति। शुभशकुन स्वप्नादि। हनुमत्प्रतिष्ठा, धनविनियोग, धर्मवंश अधर्मवंश दुःसहवंश, शुभनक्षत्रादिकों का फल। सरोजिनी को सतीश्वरी सेवा से दिव्यता। अष्ट मनु कथा। तेरह तक मनु कथा। रुचिप्रजापति, चौदहवाँ मनु। ब्रह्मप्रियाओं के साथ भगवान् का हिमालय प्रवास, भारावीक्षण, लोमशाश्रम में आगमन, रत्नोत्पत्ति, विभिन्न मणिश्रैष्ठ्य, भगवान् के १४ अवतार प्रयोजन, जीवत् श्राद्धविधि, संसारविषय निवृत्त्युपाय, आपत्व्यपोहनस्तोत्र, कृष्णार्पण, संन्यास, मृत्युकारण, मुक्तिधर्म, संवाद, देहप्राप्ति त्याग का कारण, मायालय, धामप्रापण, नैष्कर्म्य, शुभाऽशुभयोग, सारूप्यादिलाभ, तरणोपाय, अध्यात्मादि-निरूपण, श्रीहर्यर्पणक्रिया, अनाथा का मोक्ष। सुवर्णचोर का मोक्ष, चारण का ग्रामयाजक का विरालका रोगनाश मोक्ष। पृथ्वीधरपुत्र जन्मान्ध को नेत्र देना, सागरशूद्रक पंगु को पग देना, वृक्षणदेव की वक्षणता नाश करना, उन्मत्त पाशुपतेश का मोक्ष। मधुकार का सन्तसंगति से मोक्ष। चर्मकार को धेनुरक्षणफल, शंकुधर चौर का मोक्ष, महासौराष्ट्रीयसंघ की लुण्टकवृन्द से रक्षा, स्तोत्र। युद्धपुर नृपति का वारांगना-दोषनाश मुक्ति। ब्रह्मघ्न राजा राक्षस का कुन्दनदेवी भक्ति द्वारा मोक्ष। देवविश्राम अमात्य का स्त्रीहत्या निवारण। हर्षुलापुत्र मर गया साधु ने जीवाया, शाणधर कर्षुक का रोग नाश। निम्बदेव को वृषभहत्या से मोक्ष। भक्तों के ऐश्वर्य। कालीन्दर भाण्ड का मोक्ष। रायणदेव नर्तक का गर्भ में ही विज्ञान। व्रतर्दि गायक भक्त के द्वारा पुण्ड्रवर्म नृप का मोक्ष। तूलवायि का भक्ति द्वारा मोक्ष। मंगल काष्ठहार को साधुरूप भगवान् प्राप्त। वात्सल्यधीर, तिलकरंग, नाञ्ज, सागरकिरात, सारंगहूण, यज्ञराध पुष्कस, कपिक्षय-चाण्डाल, नालीकर लोहकार, मंगलदीन चर्मकार, हरिदास रथकार, शिलाहार, शिल्पि संजयदेव, चित्रकार संभरदेव, मौक्तिकेशि खनिकार आदि को आपत्तियों से रक्षण और मोक्षण। चक्रधर लुब्धक, पिशुनखवास वाटधर, प्रासादशिल्पी शिवजय, जालकारी संगरयादस्क, उद्यमश्री भरवाट, उष्ट्रपाल दीर्घ-रवा, रासभपाल रत्नप्रभ, गदार्दनेश वैद्य, कीशपाल देश्यावन, हर्षधर्मनापित, रुद्राणकी धीवरी, मत्स्यमार धीरपर्वा, शूलीप्रद तारादर्श, अंगारी ज्वालाप्रसाद, गरद लवायन, शस्त्रधारी विखण्डल, कृषीकार जीर्णभव का भगवान् ने स्वभक्ति द्वारा साधुसमागम द्वारा निष्पाप करके मोक्ष किया। अनादि श्रीकृष्णनारायण का सत्तारहवाँ महोत्सव। द्वापर कथा।

तिष्यसन्तान में—श्रीनरनारायण, बदरी, आदि का माहात्म्य, बदरराजाने बदरिकाश्रम नाम रक्खा, चन्द्रप्रदत्त शीतमणि रखने से शीतवार्धि में हिमालय का होना। हेमानल के उपद्रव, राक्षसनाशार्थ श्रीमाणिक्या का बदरीपना, तीर्थरूपता। बदरनृप की भक्तिद्वारा रसरूपता। देवों का बदरफलरूपता, नरको बोजरूपता, प्रेतरूप से सुशीलविप्र का उद्धार, दारभाग्यनृप का विशाला में मोक्ष, ब्रह्मदेव विप्रको दो बदरफलों से पुत्र पुत्री लाभ। बालयोगिनीगीता में सुरेश्वरी को बालयोगिनी पुत्री कृत उपदेश। दास्य, भागवतधर्म, बालयोगधर्म, वैष्णवीत्व, परब्रह्म प्रेमरस, नाग्नमुखी चारणीका मोक्ष, विनोदिनी देवलकी का सन्तद्वारा मोक्ष। बाहुलक-लीलावती के चमत्कार। भगवान् का योग। मल्लिका मालिनी का मोक्ष। श्रीकृष्णकान्तोपासना। शाश्वतबालधर्म। बालयोगिनी का द्वितीयाश्रम। भगवान् की प्राप्ति। निकामदेव का मोक्ष। विशिष्टाद्वैताद्वैत परब्रह्म योग निरूपण। निर्भययोगोपदेश। स्तवन, सर्वधामदर्शन, निगडभ्रम कैवर्तों का मोक्ष। कुथली सगरानी का राजयक्ष्म रोग नाश मोक्ष। वञ्चयित्री विषलाणी का सन्तसेवा से मोक्ष, कटकर्त्री गंगांजना का तथा रमांजना का सत्संग से मोक्ष। रणस्तम्बकुंभकार का चन्द्रजन्म। हेमसुधा स्वर्णकारिणी का भक्तिद्वारा अखूट अन्नसत्र। भगवान् का अठारहवाँ महोत्सव।

विष्टिनारी विद्रुमिणी का भक्तिसत्संग से मोक्ष। चाण्डाली मालवानी का धर्मसेवाबल से मोक्ष। कारेलिका शूद्राणी की परीक्षा तथा मोक्ष। भगवान् का उन्नीसवाँ महोत्सव। यन्त्रकर्त्री गोमती को सन्तसेवा से क्षयनाश मोक्ष। चामठी कनकांगदा का साधुरूप में भगवान् का मिलना, मोक्ष। सिन्धुनदीतीर द्यूत खेलते भाणवाणी रायहरि राजाओं की उन्मत्तता, श्रीलक्ष्मीनारायण कथाश्रवणेन मोक्ष। भगवान् का बीसवाँ जयन्त्युत्सव। शर्करानगर में संहिता कथासमारोह में सर्वलोक वासिओं का आना, श्रीहरि का उपदेश। उत्सव, साधुत्व विवेचन। लोमशक्षेत्र में भी दिव्यरूप से एक बीसवाँ महोत्सव। लोमश का उपदेश। कच्छ के माधवरायने भगवान् को नारायणसर तथा देश में पधरावना। लोमशक्षेत्र में दिव्यरूप से आना तथा रहना। विद्योतानामक कंसारिणी का कथा द्वारा मोक्ष, तथा नटराज कुंभकार का, स्वर्णकारिणी अम्बालिका का, धातुघ्मा विनोदिनी का, नट रंजनकोविद का, कदर्य रामसुन्दर का भी मोक्ष। क्षीरोदवीरनृप, सोमिकागणिका, मद्यप मिष्टासव, लुण्टकवृन्द, चक्रि यास्कवाद, निन्दक द्विर्वदन्ती, हत्याकार, सुरप्रसादविप्र, देवद्रोही नागविक्रम क्षत्रिय, देवजीविकाहारक शालमित्र नृप, विषपीडित युद्धराजकुटुम्ब, व्यवायी अनंगवल्ली, षण्ढमण्डल, हत्याकार यवसन्ध, भण्डशील भाण्ड, त्रिगालव भवायन, क्षुपद नाट्यकारी, हरिवीर्यादि मल्ल, हर्षलालादि मृगयू, कीरवणादि व्याध, नागादन वादीट, सारहासमण्डल, लुञ्चादन विलासदेव, दुरितघोष प्रधान, धर्मभर अमात्य, मुकुन्दसावित्र न्यायाधीश, लेखक विशालरेख, करण कायस्थ, शाहविलायन क्षत्रिय, दण्डारणि कौलिक, गृध्र, आदि का कथाश्रवण से साधु प्रसादीभोजन से मुक्ति। धेनुपाल गोपाल का मार्जारयोनि से, ठठ्ठोलवणिक का शृगालयोनि से, अजापाल भरवाट का श्येन जन्म से, सार्थवाटों का कपोत योनि से, कंकजातीयों का काकयोनि से, नाणकी खवासणी का गृहगोधायोनि से, संघवाट शूद्रों का मूषक योनि से मोक्ष, तथा सागरदान वारुट का, कीरतार भाट का कथाश्रवण सन्तप्रसादिभोजन से मुक्ति। अर्धज्योति देवगतीश का, बन्दिजन जयमान का, वज्रविक्रमनृप का, सर्पदष्ट सप्ताब्धिसिंह का, कथाश्रवण नामधुन्य प्रसादिभोजनादि से मोक्ष। श्रीहरि ने हर्षनयन मागध को, योगिदास को, सौरभसावित्र तम्बोली को, रंगिल नामक रंगकार को, डमरूक दाद्यकार को, चिह्नराय भावसार को मोक्ष में भेज दिये, तथा विद्याधर, गन्धर्व, किन्नर, किंपुरुष, चारण, सिद्ध, जो कोई कथा में आये भक्ति भरपूर हुए, उन्हें मोक्ष दिया। समाप्ति में आये जनसंघ का उपदा अर्पण। पधरामणीयाँ। प्रतिष्ठान, समाप्ति महोत्सव, लोमश क्षेत्राऽऽगमन, नागविक्रमनृप का सर्वमेध यज्ञ, दिलावरीनृप से नागविक्रम का महायुद्ध। अतिरणसंग्राम होना। सेनानाश, नागविक्रम के प्रति शरणागति, विमानीयुद्ध, भगवान ने नागविक्रम को दिलावरी साम्राज्य दिया, गृहगीता में दिलावरी राणीका सतीत्व, मोक्ष, श्रेष्ठता, कनिष्ठता, त्याग, उत्कृष्टता, मोक्षोपाय, गुण, दोष, विधि, आज्ञा, बन्धन, निर्बन्धन, गोसेवन मोक्षकृत् है, साधुसंगति मोक्षदा, भगवान् का बाईसवाँ महोत्सव। वर्धमानपुर के नृप को स्वप्न में नरकभोग, बाद में मोक्ष। भगवान् का विमान से सत्यलोक में पहुँचना, वहाँ से वापस तपोलोक, जनलोक, महर्लोक, स्वर्ग, भुवर्लोक में आना, पूजादि सत्कार ग्रहण करके लोमशाश्रम में आना। भगवान् का तेईसवाँ उत्सव। सातपाताल क्षीरसागर, श्वेतद्वीप, बदरिकाश्रम में आना, चौबीसवाँ महोत्सव लोमशक्षेत्र में करना। जम्बूप्लक्षादि सप्त द्वीपों में जाना। पचीसवाँ महोत्सव कुंकुमवापी में करना। वैराजादि ईश्वरलोक में जाना, पुनः लोमशक्षेत्र में पधारना। छब्बीसवाँ महोत्सव करना। सौराष्ट्र के नदनदी पर्वत अरण्य खात अखात रण खाडी ऊपर विमान से घूमना, भगवान् की शक्तियाँ सुमूर्त होके प्रजेच्छा करने लगीं, भगवान् ने संकल्प बल से सभी के मनोरथ पूर्ण

किये, युगल अपत्य वर्गों का युगलभाव बल तिष्यस्वभावादि। कलिदोष, सेवा गुण, मायापालनृप को याम्यदण्ड के बाद सनत्कुमार कृत रक्षण तथा मोक्ष। कलिधर्मवर्णन। सेवा अर्पण भक्ति ध्यान दान कीर्तन ये छ मोक्ष के साधन। कल्पान्त में रात्रि, कल्पादि में भगवत्प्राविर्भाव, ब्रह्मसृष्टि, राजनिर्माण, दिलावरीश नागविक्रम का कुंकुमवापी में तीर्थ करके मोक्ष। उसका पुत्र मुकुन्दविक्रम का राज्याभिषेक। भगवत्परायणता। भगवान् की सतियों को अक्षरधाम दर्शन, वैभव अवलोकन, परमधाम में सत्ताईसवाँ महामहोत्सव। अष्टमदुर्ग के अन्दर परब्रह्म महोल सिंहासन सभा मुक्तमण्डलादि दर्शन। अनादि श्रीकृष्ण-नारायण स्वरूप में तादात्म्य सृष्टि, लोमशक्षेत्र में आगमन, महादान, अठ्ठाईसवाँ महामहोत्सव करना। वानप्रस्थता, साधुदीक्षण, शक्तियों की सूक्ष्मावस्थाएँ। भगवान् का साधुयतिरूप से तीर्थों में विचरना। लोमशक्षेत्र में आना, ऊनतीसवाँ महामहोत्सव करना। इस इतिहास का पुरश्चरणविधान। सार्वभौम महादान। संहिता धारणा का महाफल। भगवान् श्रीनारायण, श्रीकृष्णनारायण, श्रीपुरुषोतमनारायण, श्रीनरनारायण, स्वरूपों का कन्यारूप संहिता को वरदान। कथाश्रवणफलादि॥ समाप्ति॥

यह लक्ष्मीनारायण संहिता श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ने स्वयं लिखा है, सन्तवृत्ति से अनंकुर प्रिय होने के कारण लेखक नाम न देकर निज का सम्पादक मात्र नाम दिया है। लक्ष्मीनारायणसंहिता का द्वितीय नाम श्वेतायनसंहिता है, भारत में देश विदेश में विद्वानों में यह महासागर समान ग्रन्थ आश्चर्य पूर्वक प्रसिद्ध हो जाने से, सभी की ओर से अन्वेषण होने पर लेखकनाम संहिता में से ही मिलता है 'श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः' जीवनसम्बन्ध भी इस ग्रन्थ में मिला है। अनेक उपबृंहणों से उक्तबात निश्चित है। प्रत्यक्ष प्रमाण ही प्रबल है। जगत्पर बड़ाभारी उपकार तो बड़े गहन-गहन ५५ नम्बर तक के ग्रन्थ लिखकर किया है। अच्छे धुरन्धर पण्डितों को आनन्द उपजाने वाले ये ग्रन्थ विद्याप्रेमियों को फिलोसोफरों को तलस्पर्शी विद्वानों को बड़े उपयोगी हैं। इन ग्रन्थों में नये-नये पदार्थ विकसाये हैं। सचमुच श्रीकृष्ण-वल्लभाचार्यजी में सरस्वती का व्यासों का बृहस्पति का वास है। श्वेतायन व्यासावतार स्वरूप कहने में अनुचितता नहीं है। इनके लिये यही मेरा अभिनन्दन है। पश्चिमभारत में इतना धुरन्धर सभी शास्त्रों का लेखक वाचक पाठक दर्शक विवेचक सभासद ऐसा महापण्डित महागुजरात सौराष्ट्र के शोभारूप है। यह कह कर विराम लेता हूँ।

पण्डित रामनन्दन झा, संस्कृत प्रोफेसर,
व्याकरणाचार्य, साहित्यरत्न, आयुर्वेद-उत्तमा,
सरकारी आयुर्वेद कालेज, सदर बाग, जुनागढ़

स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी का संक्षिप्त परिचय

श्री एम. जी. शाह M. A. (Hin.), M. A. (Eng.), M. Ed., Ph. D. (Stu.)

(१) नाम :—स्वामि कृष्णवल्लभाचार्यजी

(२) पता :—स्वामि कृष्णवल्लभाचार्यजी भंडारके मेडा पर, स्वामिनारायण मंदिर, जुनागढ, जि० जुनागढ, गुजरात राज्य।

(३) स्वामिजी की उम्र :—७५ वर्ष की है।

(४) स्थान :—जुनागढ के स्वामिनारायण मंदिर में स्थायी रहे हैं।

(५) शैक्षणिक योग्यता :—महामहोपाध्याय वैष्णवविद्वत्सार्वभौम, दार्शनिकपञ्चानन, षड्दर्शनाचार्य, नव्यन्यायाचार्य, सांख्ययोग वेदान्त मीमांसा तीर्थ काव्यकुशलः साहित्यमनीषी, M. A., D. Litt. D. Phit. Ph. D.

(६) कार्यपरिचयः—कुल ५५ ग्रन्थ १९७६ तक प्रकाशित (१० हजार पेज का एक ग्रन्थ तैयार हो रहा है।)

(१) मौलिक सर्जन, आलोचनात्मक टीकायें, प्रभावशाली संपादन व लाक्षणिक कृतियाँ।

(७) स्वामिजी के ग्रन्थ प्रकाशन व प्राप्ति स्थान का स्थायी पता :—

(१) चौखम्भा ओरियन्टालिया, गोपालमन्दिर के पास, वाराणसी।

(८) स्वाजी के अधिकांश ग्रन्थ इंग्लैण्ड, जर्मनी, फ्रांस, ईटली, अमेरिका, जापान, सिलोन के संस्कृत विभागों में व विश्व की प्रसिद्ध लायब्रेरियों में भेजे गये हैं। आक्सफोर्ड, केम्ब्रिज युनिवर्सिटी में स्वामिजी की टीकाएँ ख्याति प्राप्त कर चुकी हैं।

(९) स्वामिजी के बहुचर्चित ग्रन्थ :—न्यायसिद्धान्तमुक्तावल्याः किरणावली, तर्कसंग्रहदीपिकायाः किरणावली, न्यायबोधिनीपद्कृत्ययोष्टिप्पणी, सांख्यतत्त्वकौमुद्याः किरणावली, योगसूत्र भोजवृतेः किरणम् तत्त्वप्रभावली, ख्यातिविमर्श, प्रमात्वविमर्श, श्रुतितात्पर्यनिर्णय, ब्रह्मरसायनभाष्यम्, कविकाव्यगौरवम्, तत्त्वप्रभावली, तत्त्वमुक्ताकलाप, किरणावली, दर्शनतत्त्वसार, श्वेतायनसंहिता, श्रीस्वामिनारायणदर्शनम्।

(१०) लक्ष्मीनारायणसंहिता (श्वेतायनसंहिता) एक लाख छब्बीस हजार श्लोक। १२६००० श्लोक।

लक्ष्मीनारायणसंहिता (१२६००० श्लोक) श्लोकों की संख्या की दृष्टि से महाभारत से भी आकार व श्लोकों की दृष्टि से बड़ा है। इसे श्रीस्वामि कृष्णवल्लभाचार्यजी ने स्वयं ही ८ वर्षों में ५ भागों में लिखा है। भारतीय दर्शन, तत्त्वज्ञान, चिन्तन, मनन, अध्ययन, तर्क, वेद, न्याय, सांख्य, योग, उपनिषद, भारतीय संस्कृति व राष्ट्रीयता के गुणों से सम्पन्न संस्कृत का अद्भुत एक ऐसा महाकाव्य है जो गत् ५००० वर्षों में प्रथमबार प्रकाशित हुआ है। यह भारत की प्राच्यसंस्कृति, धर्म, विज्ञान, इतिहास, नीति, कर्म व साहित्य के सभी लक्षणों से सम्पन्न विशालकाय अत्यन्त प्रभावशाली ग्रन्थ है। श्री वेदव्यासजी के बाद गत ५००० वर्षों में विश्व का सर्वोच्चकोटि का काव्य व साहित्य के नियमों के अनुसार लिखा गया अत्यन्त महत्त्वपूर्ण व उपयोगी ग्रन्थ है।

स्वामि श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी संस्कृत के एक प्रतिभाशाली लेखक के रूप में

स्वामि श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी संस्कृत साहित्य, संस्कृत भाषा व काव्य के प्रखर विद्वान, प्रतिभाशाली लेखक, महान पंडित, गौरवशाली संत व भारतीय संस्कृति के परमपवित्र महात्मा हैं।

आप संस्कृत साहित्य, व्याकरण, शास्त्र, काव्य, धर्म, न्याय, योग तर्क व वेद के अविवादास्पद तेजस्वी व महान स्कोलर है।

आप की गणना विश्व के प्रथम कोटि के विद्वानों, महान तपस्वी व संस्कृत के प्रखर पंडितों में होती है। आप संस्कृत साहित्य के विश्व के प्रथम कोटि के विद्वान व महान लेखक हैं।

संस्कृत साहित्य में आपने न्याय, सांख्य, योग, वेद, धर्म, काव्य सभी विषयों पर अपने प्रभावशाली ग्रन्थ मौलिकरूप में लिखें हैं। आपकी लेखनी विविध विषयों पर गंभीर, विशद चिन्तनपूर्ण, आलोचनात्मक, टीकात्मक, सैद्धान्तिक व्याख्यात्मक विषयविवेचन व प्रतिपादन में आपके गहनज्ञान व सर्वथा मौलिक अभिव्यक्ति को व्यक्त करने में सर्वथा सफल रही है। स्वामि काशी विश्वविद्यालय, सम्पूर्णानन्द संस्कृत युनिवर्सिटी, बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय में आपकी गणना प्रथम कोटि के विद्वानों में होती है।

काशी के २०० पंडितों व विद्वानों ने आप को वैष्णव विद्त्सार्वभौम की सर्वोच्च उपाधि से सम्मानित किया है।

आपने संस्कृत विषय का अध्ययन, अध्यापन, लेखन बड़ी कुशलतापूर्वक किया है। आपने हमेशा कठिन से कठिन विषयों को अपनी कुशलता से सर्वसामान्य के लिए प्रभावशाली ढंग से सर्वसुलभ बनाया है।

आप महानयोगी, गहनचिन्तक, सिद्ध, पवित्र तपस्वी, निस्वार्थ सेवक, प्रतिभाशाली लेखक, प्रबल समाज सुधारक, महान धार्मिक नेता, स्वामिनारायण संप्रदाय के परम आदरणीय गुरु, महानमुनि, तेजस्वी पंडित, आत्मीय साधुपुरुष, विद्या के साक्षात अवतार व भारत के दैवी पुरुष हैं।

आपके नाम पर आपके जन्मस्थली कुंकावाव, जि० अमरेली, गुजरात में श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी आर्ट्स कॉलेज का जून ७६ से प्रारंभ हो रहा है।

कुंकावाव में आपका राष्ट्रीय स्मारक भी १९७५ में बनाया गया है। आप संस्कृत के महान लेखक होने से तथा अपने महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों के कारण विदेशों में भी काफी आदर प्राप्त कर चुके हैं।

न्यायसिद्धान्त मुक्तावल्याः किरणावलि तथा तर्कसंग्रहदीपिकायाः किरणावलि जैसे न्याय के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों की टीकाओं ने आपको विश्वप्रसिद्ध विद्वानों की प्रशंसा का भागी बनाया। आपकी टीकाओं ने विद्वानों को इन ग्रन्थों को समझने के लिए काफी सरलता प्रदान की। आपका न्याय पर किया गया यह कार्य अलौकिक व असाधारण है।

आपके ग्रन्थ इतने उच्चकोटि के हैं कि सामान्य विद्वानों की पहोंच वहाँ तक नहीं है। केवल स्कोलर ही इसका अध्ययन कर कामान्वित हो सकते हैं।

भारत के दो सौ विद्वानों ने आपकी व आपके कृतियों की भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

स्वामि श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी संस्कृत के स्कोलर के रूप में, प्रखर लेखक के रूप ये, महान पंडित के रूप में, महान सन्त के रूप में, विश्व के प्रथम कोटि के विद्वान के रूप में, कठिनतम ग्रन्थों के

टीकाकार के रूप में, मौलिक, सर्जक, आलोचक व विवेचक के रूप में संस्कृतसाहित्यजगत के महान आधुनिक वेदव्यासजी के अवतार हैं।

स्वामि श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी परमसात्विक, वचनसिद्ध, चमत्कारिक महानयोगी पुरुष हैं। भारत के दो सौ विद्वानों में से ३० विद्वानों की एक समिति आपके अभिनंदन की तैयारी कर रही है। महा-पुरुषों की शताब्दियों में अनेक नगरों में आमंत्रित किये जाने पर वहाँ पधारकर आपने अनेक विषयों पर विविध विषयों में व्याख्यान दिये। छड़ी छत्र सहित सोनेचाँदी के रथ में विराजमान होकर राज्य का गौरवमय सम्मान प्राप्त किया।

स्वामि ने अपने जीवन में संहिताएँ, शास्त्र, पुराण, इतिहास, सूत्र, भक्ति व धर्मशास्त्रों को मिलकर १०८ पारायण सम्पूर्ण किये।

आपने कुरान, बाइबल, गुरुग्रन्थसहाब, विश्वपट दर्शन, जैन तत्त्वप्रकाश का गहन अध्ययन कर उस पर व्याख्यान दिये। कई तपस्वी अनुष्ठान किये।

भारत में कई स्वामिनारायण मंदिर व संस्कृत पाठशालाओं तथा तपभवनों का निर्माण करवाया। स्वामिजी ज्ञानविज्ञान के प्रखर ज्ञाता होने पर भी मुनिव्रत, शक्तियों के होते हुवे भी क्षमाव्रत, त्यागशील होने पर भी प्रशंसा से दूर, सम्मानों में रहते हुवे भी निर्मानव्रत, आजीवन प्रथमाश्रमीशीलव्रत, संतस्थिति भागवद्भक्ति, ग्रन्थ परिशीलन, भजनकीर्तन नियमरक्षक तथा परोपकारी जीवनात्मता हैं।

भगवान की कृपा से, पंडितों के आशीर्वाद से, सरस्वती की उपासना से, माता-पिता के पुण्य से, महान सन्तों की प्रसन्नता से वर्तमान समय में दिगन्तयशस्वी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज भारत में चमक रहे हैं।

स्वामी श्रीकृष्णवल्लभचार्यजी के विषय में विद्वानों के कुछ अभिप्राय :—

"श्रीस्वामिजी द्वारा लिखित मौलिक पुस्तकों एवं प्राचीन पुस्तकों की टीकाओं की सूची के अवलोकन से यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने शिक्षा जगत में उल्लेखनीय कार्य किया है"।

डॉ० रामनाथ वेदालंकार
उपकुलपति
गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार, गुरुकुल काँगड़ी

"भारत के इस महान संस्कृत विद्वान को हमारा अभिनन्दन"। **स्व० डॉ० जाकिर हुसेन**
भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति

श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः सदाचारसमन्वितः। विश्रुतः कृतिभिर्लोके मानवानां हिते रतःज्ञाप्त्या विभूषितः कृष्णः सदाराधनतत्परः। सरस्वतीनिधिः पुष्यन् शोभत शिष्यवन्दितः॥ **डॉ० अमरनाथ पांडे**
M.A., D. Phil.

"संस्कृत के महान विद्वान को मेरा अभिनन्दन।" **डॉ० टी० एम० पी० महादेवन,**
मद्रास युनिवर्सिटी।

"श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी केवल पण्डित सार्वभौम ही नहीं सहृदय शिरोमणि और सदाचार की प्रतिमूर्ति भी हैं।"

डॉ० रामनरेश वर्मा
वाराणसी।

"स्वामिजी का जीवन तप त्याग व प्रेरणामय जीवन का पवित्र दृष्टान्त है।"

डॉ० विनोदचन्द्र सिन्हा
डाइरेक्टर, पुरातत्व संग्रहालय, हरिद्वार।

"वल्लभाचार्यजी ने भक्ति ज्ञान व श्रद्धा की त्रिवेणी बहाकर भारतीय जनमानस को शांति व सुख प्रदान किया है।"

डॉ० रमेशकुमार शर्मा
श्रीनगर (कश्मीर)।

"स्वामिजी की न्यायकिरणावलि भारतीय गौरवपूर्ण साहित्य को महान देन है।"

डॉ० सामव्रतसिंह
लखनऊ विश्वविद्यालय।

"स्वामिजी की कृतियाँ समृद्ध व चिरस्थायी हैं—भारत का गौरव है।" **डॉ० ईश्वरलाल दवे**
राजकोट।

"Swami Shri Krishnavallabhacharyaji is not only a saint and spiritual leader but an admittedly great scholar, philosopher and darashanacharya of a high order. To honour such a great soul, a Swami and Acharya, a learned scholar of repute, is not and should not be the concern of limited body of his followers, but of all Indians for whom he is a symbol of all round greatness, as a spiritual guide and teacher."

Dr. J. L. K. Jalali
President
All India Saraswat Cultural Organisation,
Jammu-Kashmir.

"But Acharyaji is also a holy teacher and his life and works provide illumination for the religious and spiritual guidance of mankind. To honour and worship such a great Guru, a Holy person, and a Benevolent Guide, is our worthy Obligation. My humble pranams."

Dr. G. K. Bbat
Director, P.G.T. Centre, Poona.

"Dr. Shri Krishnavallabhacharyaji is a great Sanskrit scholar and Mahatma, and to have his blessings and guidance is a rare privilege that you have.

Dr. S. A. Upadhyaya
Jt. Director, Bhartiya Vidya Bhavan, Bombay.

"It is an honour and a pleasure to pay my tribute to Pandit Shree Krishnavallabhacharya who has contributed so much to Sanskrit learning and thereby inspired others. His life is an example to others. I humbly wish him well."

George Gardona
Depart. of Linguistics, University of Pennsylvania,
Philadelphia (U. S. A.)

Vallabhacharyaji saved Hinduism in its most dire need and kept it living. We worship his greatness.

Ramesh Betai
प्रिन्सिपल, द्वारका कोलेज।
Dwarka College.

I wish you all success in the enterprises you hove undertaken. **V. V. Giri**
Late President of India.

"आचार्यजी में संस्कृत साहित्य और भारतीय संस्कृत के अभ्युदय और संवर्धन के लिए असाधारण प्रतिभा प्राप्त है।"

डॉ० रामजी उपाध्याय
सागर विश्वविद्यालय, सागर।

"स्वामि कृष्णवल्लभाचार्यजी के ग्रन्थ भारतीय संस्कृत साहित्य को अमूल्य देन है।"

डॉ० उपेन्द्र ठाकुर
मगध युनिवर्सिटी, गया।

"I wish you all success and pray for long life to Panditji to continue his useful service to Sanskrit.

Dr. Venkitasubramonia
Kerala University, Trivandram.

प्रभु से प्रार्थना ऐसे मनीषी की छत्रछाया सुदीर्घ काल तक बनी रहे जिससे वे संस्कृतज्ञों तथा अन्य जनों का मार्गदर्शन कर सकें।

डॉ० कृष्णकान्त चतुर्वेदी

मैं लक्ष्मीनारायण संहिता के महत्त्वपूर्ण प्रकाशनकार्य से अतिशय प्रभावित हूँ और अनेक महत्त्वपूर्ण संस्कृत ग्रन्थों के उद्धार की आशा रखता हूँ।

डॉ० बाबूलालजी शुक्ल
इन्दोर।

"श्रीमतां पंडितवर्यस्वामिश्रीकृष्णवल्लभाचार्याणां विद्वत्सार्वभौमपदभूषितानां दर्शनशास्त्र-पांडित्यं न केवल विविधोपाधिभिः अपितु तैः प्रणीतैः विद्वत्परितोषसाधकैः ग्रन्थरत्नैः स्वयं स्फुटम्। सुकुमारवस्तुनि साहित्ये दृढन्यायग्रहग्रन्थिमये तर्के च येषां भारती समलोकायते तेषु विश्वविश्वेषु विशेष-विद्वत्सु प्राचीन—पण्डितपरिपाटी रक्षत्सु श्रीमतां नाम सुप्रतिष्ठितं भ्राति। **डॉ० के० रा० जोशी**
नागपुर युनिवर्सिटी, नागपुर।

"सांख्ययोग, तर्क, भक्ति, मीमांसा इत्यादि गहन विषयों पर ही नहीं, अपितु भक्तिधारा में भी आचार्यजी की वाणी माधुर्योपदेश परिप्लुत है। संस्कृत, हिन्दी, गुजराती भाषाओं में प्रधारावाहिनी किया गया यह वैचारिक स्रोत पावन एवं बोधमय है।

Dr. S. Dange
Bombay University

"स्वामि श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी अंधश्रद्धा के अंधकार में आज सात्विक श्रद्धा के दीप प्रज्वलित करने का जो प्रयत्न कर रहे हैं वह सचमुच स्तुत्य है।

डॉ० कावटेकर इन्दौर, विश्वविद्यालय

भारत के महान ऋषि व संस्कृत की पवित्र आत्मा को मेरा प्रणाम।

डॉ० सत्यव्रत
दिल्ली युनिवर्सिटी।

"स्वामि श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ने दर्शन, साहित्य, अध्यात्म भक्ति आदि विविध व गम्भीर विषयों पर एक साथ व्याख्या विवेचना किस तरह से की ! उन्होंने सरल और सुबोध संस्कृत में उपन्यस्त-कर ज्ञान का क्षेत्र बढ़ाया है।"

डॉ० विजयेन्द्रस्नातक
दिल्ली विश्वविद्यालय।

संस्कृति, संस्कार व संस्कृत साहित्य के पुजारी स्वामि श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी को मेरा प्रणाम।

डॉ० वर्णेकर
नागपुर युनिवर्सिटी।

श्री कृष्णवल्लभाचार्यजी की न्यायमुक्तावलि किरणावलि संस्कृत साहित्य की अमूल्य निधि है।

करपात्रीजी महाराज

स्वामि के भारतीय दर्शन के विविध ग्रन्थ भारतीय संस्कृति के दर्शन के दर्पण है।

डॉ० गोपिकामोहन
कुरुक्षेत्र युनिवर्सिटी।

स्वामिजी को मेरी तरफ से उत्कृष्ट ग्रन्थों की रचना के लिए हार्दिक बधाई। **पं० सुखलालजी**
अहमदाबाद।

श्री कृष्णवल्लभाचार्यजी ने जिन विद्याओं को पढ़कर इतना उच्च व्यक्तित्व प्राप्त किया है उसी विद्या की सेवा उनके द्वारा होनी चाहिए। **जगतगुरु शंकराचार्य**
पुरी।

स्वामि श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी, इस संत का मैं अभिनन्दन करता हूँ।

के० के० विश्वनाथन्
राज्यपाल, गुजरात।

संस्कृत के प्रखर विद्वान प्रतिभाशाली लेखक व भारत के इस महान संत को मेरा प्रणाम।

डॉ० प्रभाकर कोंगरे
बड़ोदा।

स्वामि श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी सरस्वती के सरस साधक और विविध विषयों में मर्मज्ञ मनीषी हैं।

पद्मविभूषण डॉ० सू० ना० व्यास

स्वामि श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी का अभिनन्दन भारतीय वाङ्मय का अभिनन्दन है। राष्ट्र उनके मेधावी व्यक्तित्व से गौरवान्वित हो सका है।

डॉ० शिवमंगलसिंह सुमन
कुलपति, विक्रम युनिवर्सिटी, उज्जैन।

श्री स्वामि श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी की कृतियों का संक्षिप्त परिचय :—स्वामिकृष्णवल्लभाचार्यजी ने कुल ५५ ग्रन्थ लिखे हैं। जिनमें से लक्ष्मीनारायण संहिता (१,२६,००० श्लोक) सभी कृतियों में अलौकिक ग्रन्थ हैं। अन्य ग्रन्थों का परिचय निम्नलिखित है।

(१) न्यायसिद्धान्त मुक्तावल्याः किरणावलिः—इसमें न्यायदर्शन के प्रमाणप्रमेय, संशयप्रयोजन, दृष्टान्त, सिद्धान्त, अवयव, तर्क निर्णय, वाद, जल्प वितण्डा, हेत्वाभास, निग्रहस्थान नामों से परिचित सोलह पदार्थ और वैशेषिक दर्शन द्रव्य, गुण, कर्म वगेरे सप्त पदार्थ, नव्य न्याय के अनेक परिचित

पदार्थों के स्वरूपों पर प्रकाश डाला गया है। इसमें मंगळवाद, ईश्वरवाद, पदार्थों का साधर्म्य, पदार्थों के लक्षण, आत्मतत्त्वस्वरूप का चार्वाक वेदान्ती, बौद्ध वैष्णव ऋषियों के मन्तव्य तथा योगशक्तियों, स्मृतिसंस्कार—कार्यकारणभाव, वाक्य विभाग, शुद्धि अशुद्धि संगतियों पर प्राचीन व नवीन दर्शन के विषयों को तत्त्व ग्रन्थों के नियमों के अनुसार स्वामिजी ने स्वयं अथाह प्रयत्नों के द्वारा विवेचन कर तत्त्वज्ञान के इस खजाने को प्रस्तुत किया है।

(३) तर्कसंग्रहदीपिका किरणावलि न्यायबोधिनी पदकृत्य टिप्पणी :—न्याय शास्त्र में विषय प्रवेश के लिए संक्षिप्त रूप में न्याय के पदार्थों को तथा वैशेषिक के पदार्थों का स्पष्ट करनेवाला प्राथमिक ग्रन्थ है। इसकी दीपिका टीका और अधिक पदार्थों को ग्रहण करती हुई मूलार्थ अन्यार्थ गूढार्थ उत्कृष्टार्थों को भी स्वरूप में समाविष्ट करती गंभीर टीका है। किरणावली रचना का हेतु विषय को विविध स्वरूपों में सरल व स्पष्ट बनाना है। इसमें द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, सम्बन्ध, अभाव, सप्तपदार्थ तथा नव द्रव्यों का विवेचन है।

(४) सांख्यकारिकायाः स्वामिनारायणभाष्यम् :—इस ग्रन्थ में (भाष्य में) विशाल रूप में माया, माया के २४ तत्त्व, तत्त्वों की सिद्धि, उनके लिए प्रमाण, दार्शनिकों के मत-मतान्तर, प्रमाणों का स्वरूप, स्थूल व सूक्ष्म तत्त्वों का विद्वत्तापूर्ण विवेचन, आत्माओं का स्वरूप, गुणों का स्वरूप, पंचभूत तथा उसके लक्षण, बुद्धिभोग्य प्रतिबिम्बवाद, दर्शनों के सिद्धान्त, सूक्ष्म शरीर के आठ भाव, भावपदार्थों का विवेचन, बन्धन के भेद, मोक्षमार्ग इत्यादि गहन विषयों को सरलतापूर्वक समझाया गया है।

(५) सांख्यतत्त्व कौमुद्याः किरणावलि—सांख्यकारिका गौड़पाद भाष्यस्य किरणम् :—इन दोनों ग्रन्थों में किरणावलि सांख्यदर्शन के तथा नव्य तर्कप्रणाली से तमाम तत्त्वों को स्फुट किया गया है। ये दोनों ग्रन्थ सांख्यशास्त्र के विषयों का अत्युत्तम प्रक्रियाओं से प्रतिपादन करते हैं। अध्यापन में मुक्त कंठ से प्रशंसित हुए हैं।

(६) योगसूत्राणां स्वामिनारायण भाष्यम् :—इस ग्रन्थ में मोक्ष का, योग के पदार्थों का प्रतिपादन कर, मोक्ष का स्वरूप, योग की परम्परा, चार साधन, जीवनमुक्ति, वैदिक तत्त्वविचार, चार अनुबन्ध, छब्बीस पदार्थ, तत्त्वज्ञान, वैराग्य के भेद, शुद्धाद्वैत, विशिष्टाद्वैतवाद, प्रमाण व्यासमत, सृष्टि-प्रक्रिया, विषयों का सुन्दर विवेचन किया गया है।

(७) योगसूत्र भोजवृत्ति किरणम् :—इसमें सूत्रार्थ पर भोजवृत्ति के काठिन्यार्थ पर विशद् रूप से किरण नामक विवेचन किया गया है। यह ग्रन्थ शोधपूर्ण नवीन विचारों से पूर्ण है।

(८) श्री स्वामिनारायण वेदान्तसार :—इस ग्रन्थ में वेदान्त की प्रक्रियाएँ, मूल प्रकृति, उसके तत्त्व, काल, जीव ईश्वर, ब्रह्म परब्रह्म, ज्ञान, शक्ति आदि द्रव्य तथा रूपरसादि गुण तथा ज्ञान के विभाग, प्रमाणों के भेद, तथा वाक्य विभाग सुरुचिपूर्ण रीति से निरूपित किया गया है। इस ग्रन्थ में प्रमेय तथा प्रमाणों का विशाल विवेचन है।

(९) हितोपदेश मित्रलाभ किरणावली :—यह प्राथमिक विद्यार्थिओं के लिए अन्वय, कर्तरि, कर्मणि, वाच्यस्वरूप के हिन्दी में अर्थ सहित किरणावलीटीका युक्त आदि स्वरूपों में प्रचलित है।

(१०) शिक्षापत्र्याः किरणावली :—भगवान् स्वामिनारायण द्वारा लिखे गये धर्म, ज्ञान, भक्ति व व्यवहार सम्बन्धी विषयों पर संस्कृत गुजराती की नवीनतम उपयोगी टीका है।

(११) श्री गुणातीतानन्द स्वामि वार्ता :—यह ग्रन्थ संस्कृत श्लोकों में उपदेश के रूप में भगवत्सन्त महिमा, भगवान् का निश्चय, सन्त समागम, भगवान् के ऐश्वर्य चमत्कार, सर्वदेशीय समझ के विषयों को लेकर ६,००० श्लोकों में रचा गया है।

(१२) श्री गोपालानन्द स्वामि वार्ता :—संस्कृत में विरचित यह ग्रन्थ ४,७५० श्लोकों में ३ प्रकरणों में विभाजित है। इसके विषय हैं : भगवत्महिमासमझाना, भगवन्निश्चयसमज्ञाप्ति इत्यादि।

(१३) स्वामिनारायण वचनामृतानि :—२६२ तरंगों का प्रश्नोत्तररूप में दार्शनिक तत्त्वों व आध्यात्मिक उपदेशों से भरा सुन्दर ग्रन्थ है।

(१४) शिक्षापत्री :—यह २१२ श्लोकों का धर्मशास्त्र है। इस पर स्मृति आदि के प्रमाण लेकर टीका लिखी गई है। इसका सार वाक्यर्थविचार श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ने किया है।

(१५) अखिलभूमण्डलीय साम्प्रदायिक मुक्तिव्यवस्था :—इसके मूळ रचियता स्वामि श्रीकृष्ण-वल्लभाचार्यजी स्वयं हैं। इसमें अवतार भेद, मोक्ष में मतमतान्तर, आत्मा के विभिन्न मत, अवतार प्रयोजन, भूगोळ वर्णन, युगप्रलयनिर्देश, ८४ सिद्ध, ब्रह्मलोक, चार शरीर पचतत्त्वनिर्णय, भगवान् के चिह्नों को बड़े ही सुन्दर ढंग से वर्णित किया गया है।

(१६) तत्त्वप्रभावली :—यह ग्रन्थ अति कठिन तत्त्व संभृत नवीन विशिष्ट न्यायशास्त्र, सुपरिष्कृत कृति है। ७०० से अधिक कारिकाओं में ग्रन्थित यह ग्रन्थ श्वैतायनीय विशिष्टन्यायशास्त्रं नाम से भी प्रकाशित हुआ है। श्वेतायन व्यास स्वयं स्वामिजी ही हैं। इनके प्रमेय, प्रमाण, प्रमिति, प्रमाता चार खण्ड हैं। इनमें चौदह परिच्छेद हैं :—(१) पदार्थ-निरूपणस्, पदार्थसाधर्म्यम् द्रव्यनिरूपण, गुण-निरूपण, ज्ञाननिरूपण, तर्कनिरूपण, विविधविप्रतिपत्तिप्रदर्शनम्, अनुमान परिच्छेद, शब्दपरिच्छेद। इस विशालकाय ग्रन्थ में पदार्थों पर दार्शनिक, प्राचीन व नवीन सिद्धान्तों का विवेचन है। यह रचना नवन्याय के विशिष्ट तत्त्वों के तत्त्वज्ञान का खजाना है।

(१७) श्री गुणातीत ब्रह्मोपनिषत् :—स्वामि श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी विरचित इस ग्रन्थ में ४ अध्याय १६ पाद हैं। जिसमें ब्रह्मविद्याओं की परम्परा, परमात्मा का स्वरूप, अपार महिमा कथन, दिव्यमूर्ति का वर्णन, सदृष्टान्त कारण कथन, परमात्मा की व्यापकता, इत्यादि गहन विषयों का बड़ा ही सुन्दर प्रतिपादन किया गया है।

(१८) विशिष्टाद्वैतेऽपि विशिष्टब्रह्माण्डद्वैतत्त्वम् :—इस ग्रन्थ में जीव, माया, ईश्वर की विशिष्ट स्थिति तथा जीव ईश्वर माया विशिष्टसाक्षी ब्रह्म व विशिष्टता पर ब्रह्म अद्वैत में दिखाया है। यह ग्रन्थ स्वामिनारायण सम्प्रदाय का मुख्य सिद्धान्तदोहन है।

(१९) ख्याति विमर्श :—इस ग्रन्थ में शुक्ताविदं रजतमित्यादि भ्रमस्थल में नैयायिकों की अन्यथा ख्याति, मीमांसकों की सत्ख्याति, स्वामिनारायण की सत्समुच्चयख्याति, रामानुज की सत्ख्याति, आयुर्वेद की सत् ख्याति, सांख्ययोग की अख्याति, चार्वाकों की साक्षात ख्याति, विशिष्टाद्वैत शैवों की संसर्गताख्याति इत्यादि विषय सुवर्णित है।

(२०) प्रमात्वविमर्श :—इस ग्रन्थ में सभी ज्ञानों में किसी न किसी अंश में प्रमात्व सिद्धि दिखलाया है। इसमें हरेक अन्याभिमत न्यायाभिमत, अप्रमाज्ञानों में स्वीयविचार दिखलाये गये हैं। इसमें प्रमात्व के परिष्कार, नैयायिकों के प्रामाण्य अप्रामाण्य परतोग्राह्य, सांख्ययोगों का स्वतोग्राह्य, बौद्धों

का प्रमाण्य परतोग्राह्य, जैनों का स्वतोग्राह्य, रामानुजादिक वैष्णवों के प्रमात्व स्वतोग्राह्य अप्रामाण्य आदि का सुन्दर विवेचन है। तत्त्वज्ञान की दृष्टि से यह ग्रंथ अत्यन्त कीमती है। यह ग्रन्थ आदित्यनाथ झा अभिनंदन संस्कृत दिल्ली से छपा है।

(२१) जातिविमर्श :—इस ग्रन्थ में गुण कर्मानुसार जाति कल्पना का विचार किया गया है। वैदिक मन्त्र भी गुणकर्मानुसार जाति की उद्घोषणा करता है। यह विशाल प्रामाणिक ग्रन्थ है।

(२२) वचनामृत प्रमाण्यहेतत्वः सूत्राणि च :—श्री स्वामिनारायण के २६२ वचनामृतों के पृथक पृथक प्रामाण्य प्रयोजकता व विवेचन तथा २,२५० सूत्रों का ग्रन्थन है। यह ग्रन्थ कार्यकारणभाव व प्रतिबध्य प्रतिबन्धक भाव स्वरूप धर्मज्ञान आदि से तथा पुरुषार्थों से भरा हुआ दर्शनों के सिद्धान्त पर विवेचन करनेवाला आध्यात्मिक महासागर समा ग्रंथ है।

(२३) श्रुतितात्पर्य निर्णय :—इस ग्रन्थ में श्रुतियों का तात्पर्य उपक्रम उपसंहार, अभ्यास अपूर्वता फल अर्थवादादि के अनुसार विशिष्ट साहैल सिद्धान्त में उपनिषदों का तात्पर्य परायण तलस्पर्शी का विवेचन बड़े ही सुरुचिपूर्ण ढंग से किया है।

(२४) साकारत्ववाद :—इस ग्रन्थ में बीस व्याप्तियाँ साकारत्व साधिका हैं। सर्व पदार्थों का साकारत्व सिद्ध किया है। अति बुद्धिगम्य परिष्कृत पदार्थाऽभ्यास वालीधीगम्य यह तत्त्व है।

(२५) श्री हरिस्वरूप निर्णयस्य सत्संगभाष्यम् :—इस ग्रन्थ में साकारोपासना, ब्रह्म, जीव, अवतारवाद, माया, मोक्ष, कर्म, भक्ति, ज्ञान, उपनिषदों के प्रमाण पर आधारित है। वैष्णवों व विद्वानों के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

(२६) सुधासिन्धोः ब्रह्मरसायन भाष्यम् :—२६२ संस्कृत तरंगों में नव हजार श्लोकों पर २२५० सूत्रों के साथ यह ग्रन्थ महासागर के समान विशाल है। इसमें व्यावहारिक तथा आध्यात्मिक तथा मोक्षीय तथा हरेक दर्शनों के साकार निराकारवादों में, नित्य अनित्य वादों में; प्रमाण अप्रमाणवादों में, शरीरेन्द्रियान्त, कारणान्तवादों में अवतार अवतारि परमात्मवादों में, न्यायसत्, असत् शून्य आदि वादों में, नास्तिक आस्तिक, सभी वादों में तलस्पर्शी प्रविष्ट ब्रह्मरसायन भाष्य पूर्वपक्ष वाद, सिद्धान्तपक्ष पर बड़ा ही सुन्दर विवेचन किया गया है। स्वामि श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ने श्वेतायन व्यासस्वरूप में तदात्मक भाव से यह ग्रन्थ आविष्कृत किया है।

(२७) अवताराऽवतारित्वे पुराणादिवचनानि :—इस ग्रन्थ मे पृथ्वी पर सभी देशों में ईश्वर परमेश्वर महापुरुष, देवस्वरूप, मुक्तपुरुष, आभूषण आयुध संकल्प गुण आदि परमेश्वर की आज्ञा से किसी न किसी कार्य के लिए प्राकट्य ग्रहण करते हैं। पर व्यूह विभव अन्तर्यामी स्वरूप स्वयं अवतार या अवतारी सभी प्रजा में प्रकट होते हैं। इसमें वेद आगम निगम संहिता शास्त्र सूत्र अर्णव, पुराण, स्मृति, इतिहास-आचार्य विजय तत्त्वग्रन्थ आदि सभी में स्वीकृत प्रतिपादित किया है, इस पर एकत्रित किये प्रमाणों का सप्रमाण यह ग्रन्थ है।

(२८) स्तोत्राणि :—भगवान शंकर के अवतारों के, लक्ष्मी आदि सतियों के सूर्य आदि के हनुमान गणेश देवदेवियों आदि के सम्बन्धी स्तोत्र हैं।

(२९) चित्सुखी-टिप्पनी :—यह ग्रन्थ अद्वैतवेदान्त का जगन्मिथ्यात्वपरक है। इसका दूसरा नाम तत्त्वप्रदीपिका है। इसके मूल स्थान पर तथा टीका पर कठिन स्थळों में सरल टिप्पनी लिखी है।

(३०) कविकाव्यगौरवम् :—यह साहित्य के विद्वानों के नेत्र खोल देनेवाला ग्रन्थ है। इसमें कविवर अचित्यानन्द वर्णी का संक्षिप्त जीवन सत्य ज्जवल वर्णित है। कवियों को ऋग्वेद ने ऋतसरन ब्रह्म कहा है, अमूर्तों को कवि लोग मूर्त बना देते हैं, कवियों को चित्त में साम्राज्यसा होता है कवियों की कवित्व सृष्टि दृष्टि कवित्व सुमूर्त होके झलकता है। कवि के वर्णन प्रबन्ध किस प्रकार होने चाहिये इस बात को इस ग्रन्थ में स्पष्ट किया गया है।

(३१) श्री स्वामिनारायणदर्शनम् :—छ दर्शनों के समान पर एक सातवाँ दर्शन रचा गया है। इसमें औपनिषद् श्रौत प्रकरण, सुधासिन्धु वाक्य प्रकरण, दार्शनिक प्रकरण, पदार्थतत्व प्रकरण इत्यादि महत्त्वपूर्ण प्रकरण इस ग्रन्थ में हैं। इस ग्रन्थ का बौद्धिक कौशल्य व्यासजी की तरह ही है।

(३२) श्री सत्संगि जीवन परायणी टीका :—यह ग्रन्थ १८ हजार श्लोकों का पाँच प्रकरणों में विभाजित है। भागवत के समान विशाल ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में भगवान् स्वामिनारायण का जन्म, परब्रह्मप्राप्ति, भ्रमण-सम्प्रदाय इत्यादि बातों को बड़े ही सरस ढंग से उपस्थित किया गया है। दार्शनिकों व नैयायिकों के लिए महत्त्वपूर्ण उपयोगी ग्रन्थ है।

(३३) साक्षात्कार सूत्राणि :—इस ग्रन्थ में इस बात की चर्चा है कि सभी पदार्थ कोई न कोई पुरुष का साक्षात्कृत है। परमेश्वर, ब्रह्ममुक्त सगुणेश्वर व्यूह साक्षी ब्रह्म अन्तर्यामी-अवतार ईश्वरलोग, देवलोग-ऋषि, महर्षि योगिजन धर्मराज सूर्यनारायणादि को व्यक्त अव्यक्त सभी तत्त्वों को विवेचित करता है।

(३४) तत्त्वमुक्ताकलाप-किरणावलि :—रामानुज सम्प्रदाय का यह ग्रन्थ दार्शनिक तत्त्वों पर विचार करता हुआ गम्भीर अर्थों का निर्णय दिखलाता है। फलतः तत्त्वचिन्तन का भक्ति में परिणाम ले के मोक्ष रूप में मुख्य है। तत्त्वशोधन सभी को इष्ट है। यह स्वामिजी का गौरवमय अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है।

(३५) हनुमतश्च स्तोत्राणि :—इसमें हनुमानजी की स्तुति छपी है।

(३६) अर्थसंग्रह किरणावलि :—यह मीमांसा के पदार्थों का प्रक्रिया ग्रन्थ है। वैदिक अनुष्ठान प्रतिपादक वाक्यों के अर्थ-निर्णयार्थक मीमांसाशास्त्र विशाल स्वरूप में रचा गया है। यह महत्त्वपूर्ण टीका त्याग, देवता, द्रव्य क्रिया अदृष्ट भाव आदि में अन्ततः परमात्मा की प्रसन्नता में पर्यवसान दिखाया गया है।

(३७) मीमांसायाम् अंगत्वादि परिष्कृति :—नव्य तार्किक रीति से मीमाँसा के पदार्थों का जहाँ जो परिष्कार करना है वहाँ मीमांसित अच्छे-अच्छे परिष्कृत पदार्थों को दिखलानेवाला यह ग्रन्थ है। मीमांसकीय यह ग्रन्थ परिष्कारों के गौरव से झलकता है।

(३८) सुधासिन्धु सारसन्दोहनम् :—स्वामिजी ने सम्पूर्ण जीवनभर अभ्यास कर स्वामिनारायण भगवन्मुखसे वर्णित पदार्थ कड़ी मेहनत से संकलित किये हैं। इस ग्रन्थ में २६२ तरंगों में तमाम सिद्धान्त सार दर्शन प्रणालियों से विशद् रूप में संकलित किये गये हैं।

(३९) दर्शनतत्त्वसार :—इस ग्रन्थ में श्री स्वामिनारायणदर्शन नामक सकल दर्शन के विषय विभाग, उनके वर्णन, सन्निपत्योपकारक साधन, परब्रह्म दिव्यदर्शन फल भक्तिमान ब्रह्मधाम में पहुँच जाते हैं। यह ग्रन्थ संसार द्वारा मोक्ष उनके स्वरूपों में भी श्री स्वामिनारायण सिद्धान्त को ले के आखिर स्पष्टता करता है। यह ग्रन्थ दार्शनिक विद्वानों को उपदेय है।

(४०) भक्तिरस सरित् :—इसमें भक्ति के स्वरूप, भक्ति में रसों के स्वरूप, भगवान में सभी रसों का समावेश है। भोजन में योग में, उत्सव में, गायन में नृत्य में जो रस है वही श्रीहरि में हैं।

(४१) सामान्य निरुक्तिगादाधरी क्रोडम् :—महापण्डितों के लिए यह ग्रन्थ रत्नकोष है। महामहोपाध्यायाय धुरन्धर न्याय के पण्डित श्री वामाचरण भट्टाचार्यजी के पास अध्ययन के समय जो कुछ ग्रन्थों पर आकाशवृत्तीय छोटे-छोटे शंका समाधानों में शास्त्रार्थ के लिए क्रोड पत्र के रूप में सीख लिए जाते थे वे शास्त्रार्थ विषय के अंश परिष्कार रूप क्रोडपत्र यह ग्रन्थ है। केवल नव्यन्यायाचार्य ही इसका आस्वादन कर सकते हैं।

(४२) श्वेतायन संहिता सम्पादनम् :—यह ग्रन्थ महाभारत के समान महाकाव्य के रूप में लिखा गया है। यह ग्रन्थ भारतीय संस्कृति का महान् इतिहास है। एक लाख छब्बीस हजार श्लोकों में श्री कृष्णवल्लभाचार्यजी ने ६० से ७० वर्ष की आयु में इस ग्रन्थ की रचना की। यह ग्रन्थ चौखम्बा ओरियन्टालिया को छपने के लिए दिया गया। इस ग्रन्थ में चार खण्ड हैं। (१) कृतयुग सन्तान (२) त्रेतायुग सन्तान (३) द्वापरयुग सन्तान और (४) तिष्ययुग सन्तान है। श्री कृष्णवल्लभाचार्यजी ने ही स्वयं श्वेतायन व्यास उपनाम से इस ग्रन्थ की स्वयं रचना की है। श्वेतायनीय संहिता का दूसरा नाम श्री लक्ष्मीनारायण संहिता भी है। श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ने अनेक कारणों से अपना नाम प्रगट नहीं किया किन्तु वे स्वयं ही इस महान् ग्रन्थ के तेजस्वी लेखक हैं।

स्वामिजी का यह भव्य ग्रन्थ काफी चर्चास्पद ही रहा है। सामान्य विद्वानों के लिए इसका थाह पाना कठिन है। इसमें कहीं-कहीं स्वामिजो के जीवन अंशों के दर्शन हो जाते हैं। श्वेतायनीय व्यासावतार श्रीकृष्णवल्लभाचार्थजी ने इन ग्रन्थों में चारों युगों में धर्म अवतार मन्वन्तर महर्षि पितृगणदेवगण इन्द्रादि का परिवर्तन, व्यासों का परिवर्तन, भगवान् का प्राविर्भाव–सृष्टि के प्रकरण पृथ्वी, तत्त्व, इतिहास, भूगोळ, जळ, थल, आंतरिक्ष, आख्यान, तीर्थ, व्रत, धर्म, दान, पुण्य, युद्ध इत्यादि प्रत्येक विषय का उद्भव व विकास की बात इस ग्रन्थ में हैं। इसमें वैदिक प्राचीन अर्वाचीन होनारतें, रूपक कथाएं, अघटित घटनायें, परमेश्वर की ब्रह्मसृष्टि शास्त्र, वंश विभूतियाँ, वर्णाश्रम लय, प्रलय स्थिरता, काळयुग विभिन्न धर्म परिवर्तन, प्रजापरिवर्तन, शिल्पविकास, देवालय प्रतिष्ठा-विकास, गायन गान्धर्व-विकास, समरयुद्ध मन्त्रशास्त्र विकास, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, रुद्र, इन्द्र, चन्द्र, वरुण, अग्नि, वायु, देव, देवताओं, कामधेनु, रत्न, चतुर्दश भुवनों के सम्बन्ध में चरित्र, चमत्कार, ऐश्वर्य आदि का वर्णन है। भारत व विश्व के संस्कृत साहित्य को स्वामि व श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी की यह अद्भुत, दिव्य, महान तथा भव्य देन है। स्वामिजी को केवल एक यही ग्रन्थ इस महान विश्व में अमरत्व प्रदान करने के लिए काफी है।

भगवान् महर्षि श्वेतायनव्यास

स्वामि हरिप्रकाशजी ऋग्वेदशास्त्री, शास्त्राचार्य एम्. ए.

गांधीनगर

इस संसार में बहुत ही समय के बाद कभी-कभी कोई एकाद ऐसे महापुरुष अवतीर्ण होते हैं कि जो वे अपने स्वतः सिद्ध दिव्यज्ञान के आलोक के द्वारा सारे संसार को प्रकाशित करके युगों तक अपना प्रभाव छोड़ जाते हैं। ऐसे महापुरुषों का सुयोग मिल जाना महान् सद्भाग्य का सूचक है।

हम लोग वाल्मीकिमहर्षि एवं भगवान वेदव्यास के गुणों का गुणगान अद्यावधि करते हैं किन्तु उसी कोटि के महापुरुष आज भी हम सब के बीच विद्यमान है। जब मैं काशी में था तब भगवान महर्षि श्वेतायन व्यास विरचिता एक लाख छब्बीस हजार श्लोकात्मक श्रीलक्ष्मीनारायण संहिता का प्रकाशन चौखम्बा संस्कृत सीरिज ने किया तब कई विद्वानों ने एक पण्डित सभा में प्रश्न किया कि भगवान महर्षि श्वेतायन व्यास कब हो गये तब मैंने कहा कि हम सब लोग पण्डिप्रवर विद्वत्सार्वभौम पण्डित स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी का नाम जानते हैं। वे ही इस संहिता के रचयिता भगवान महर्षि श्वेतायन व्यास हैं। एवं उनके द्वारा अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों की रचना की गई है उन सब मिल कर के सात लाख श्लोक के आसपास होते है।

ऐसे महापुरुष का अभिनन्दन करने के लिये मेरे पास इतना बड़ा विद्यावैभव नहीं है किन्तु अभिनन्दन ग्रन्थ का आयोजन करनेवाले का उत्साह बढ़ाने के लिये एवं इस आयोजन को सफल बनाने के उद्देश्य से ही यह छोटासा प्रसंग लिख रहा हूँ। ऐसे तो जब कभी मैं इस महापुरुष के दर्शन के लिये उनके पास जाता हूँ तब वे अपना लेखनकार्य छोड़ करके शास्त्रों के गूढ़ तत्त्वों का विश्लेषण करके तत्त्वार्थ को स्पष्ट करते हैं यदि उन तात्विक सिद्धान्तों का संग्रह किया जाय तब तो कई पुस्तकें लिखनी पड़ेगी एवं उनके लिखे हुये ग्रन्थों पर शोधप्रबन्ध लिख करके कोई भी छात्र डॉक्टरेट डेगरी प्राप्त कर सकता है।

स्वामि श्रीकृष्णवल्लभाचार्यश्च तेषां प्रदानम्

शास्त्री बळवन्तराय चुन्नीलाल द्विवेदी Date.

भावनगर

समग्रेऽस्मिन् भूमण्डले श्रेष्ठोऽयं भारताख्यो भूभागः तत्रदेवा अपि स्व जननं स्यादिति अभिलषन्ति इदं हि चतुर्वर्गसाधकं नारायण क्षेत्रमिति पुराणे प्रसिद्धम् अत्र निर्गुणोऽपि नारायणः धर्मस्थापनाय च अधमापहाराय सगुणोभूत्वा अवतारचर्याः चरति, अतः एव भगवान् मनुः "यस्यदेश प्रसूतस्य सकाशादग्र-जन्मनः स्वं स्वं चरितम्, शिक्षेरन् पृथिव्याम् सर्वमानवाः इतिवचनेन तत्रस्थितानां जनानां वैशिष्ठ्यम् दर्शयामास, एतादृशे परम पवित्र प्रदेशे पश्चिमजलधिप्रांतस्थितो भूभागः पूर्वकाल आर्नत संज्ञां अधारयन् सोऽधुना सौराष्ट्रेति निगद्यते।

भारतमातुः मेखलावर्तभावासिधेनुका तुल्योऽयं प्रदेशः रमणीयो तेजस्वी च वर्तते तस्य स्वाभाविकं माधुर्य वर्तते अत अस्मिन्नेव प्रदेशे भगवान् श्री कृष्णः अपि यमुना तटं विहाय वासं चक्रे। अत्रैव द्विजराजस्सोमः सोमेश्वरं शिवमुपास्य क्षयीः अपि अक्षयी बभूव।

अत्रहि जगत्प्रसिद्धे सोमनाथ द्वारावती संज्ञके द्वे धामनी वर्तेते एतादृशे वैशिष्ट्यपूर्णेऽस्मिन् प्रदेशे भक्तिः ज्ञानं वैराग्यं शौर्य सतीत्वादि भावपूर्णाः अनेका नरनार्यः स्वश्रेष्ठाचरणेन गौरवं लभन्ते अस्मिन् नरसिंहसदृशैरनेक भक्तजनैः भगवतः साक्षात्कारः कृतः। अत्रैव बहवः शूराः स्वप्राणैः स्वधर्मरक्षां स्वदेश रक्षां च चक्रुः भारतीय स्वातंत्र्य संग्रामधुरावाहक महात्मागान्धिरपि अत्रत्य एव, भगवता स्वामिनारायणे-नाऽपि सरयूतटं त्यक्त्वा अत्रैव निवासं विधाय बहुजनोद्धारः कृतः।

एवं वैशिष्ट्य पूर्णेऽस्मिन् प्रदेशे वर्तमान "कुंकावाव, इति संज्ञके ग्रामे कृषिकर्मरते पवित्र वैश्य कुले स्वामिपादानां जन्म संजातः मातुः पितुः पवित्र संस्कार बलेन बाल्यतः एव संस्कार संपन्नः शुचिः च आसीत्, सत्संगप्रभावतः अल्पे वयसि—सुयोग्यं सत्व संपन्नं गुरुजनं संप्राप्य उद्धवसंप्रदायानुसारिणी भागवती दीक्षा समधिगता।

प्राथमिक अध्ययनानंतर विशेष विद्योपार्जनाय वाराणसीं गत्वा तत्र विविध शास्त्राणामध्ययनं कृतम्।

स्वतीव्र बुद्धिवैभवेन उत्कृष्टप्रतिभाबलेन षट्दर्शन नव्यन्याय, व्याकरण सांख्ययोग पुराण साहित्यादि शास्त्रेषु प्रावीण्यं लब्ध्वा विभिन्नेषु विषयेषु आचार्य पदवीं प्राप्तवान्।

समग्रविद्वत्समाजेऽपि सिद्धान्तविशिष्ट शास्त्र नैपुण्य ताबलात् गौरवास्पदं स्थानं संजातं अनेक-शास्त्राणां शास्त्रार्थे विजयं प्राप्य "दार्शनिकपञ्चानन" इतिपदवीम् अधिगतवान् परं च—"विद्वत्सार्वभौम" रति उच्चतमं "बिरुदं" प्राप्तवान् तथापि 'मानमदरहिताः सरलाः सत्वपूर्णाः' इति स्वामिनः परिचयः स्वान्ते स्वाभाविकात्मीयतांस्थापयति अनेक शास्त्राध्यन पूर्णाः अपि ग्रामिणहरिभक्तानां बालानाञ्चसमीपे सरल-शब्द वचन विन्यासद्वारा वार्तां कुर्वन्तः तेषां मनसि भक्तिभावं जनयन्ति न केवले शास्त्राभ्यासे वा ग्रन्थनिर्माणे किन्तु व्यवहारे अपि तेषां कार्यकुशलता बहु स्थले बहुजनद्वारा एव।

जामनगर राजदुर्ग जीर्णदुर्गादि स्थले मन्दिरे महत्त्वपूर्ण स्थानं गृहीत्वा समग्र व्यवहार संचालनमपि सुचारुरूपेणविधाय तेषां आयव्यय साधनानि सुदृढानि कृतानि, उपदेश द्वारा अनेकजीवनेषु धर्म श्रद्धा, सत्संगनिष्ठा रोपिता पोषिता वर्धिताश्च, बहुवारं अनेकस्थल संचरण द्वारा ग्रामेषु नगरेषु, गत्वा सत्संग समाजस्य दृढता आपादिता, भगवतः स्वामिनारायणस्य सिद्धान्ताः परोक्षे जनसमाजेऽपिप्रस्थापिता एवं सर्वतोमुखीप्रतिभा द्वारा सत्संगे वर्तमानं "सद्गुरु" पदं सार्थकं कृतम् ।

एतादृग् भव्यप्रतिभावतः स्वामिनः ग्रन्थनिर्माण कार्यमपि विशालं वर्तते तेषान्नामधेयान्यपि वैदुष्यं दर्शयन्ति, विविधेषु शास्त्रेषु ज्ञानंप्राप्य तस्य जनहिताय वितरणमेव तेषां कार्यमिति मत्वा, छात्रहिताय मुमुक्षुजनज्ञानाय ग्रन्थानाम् या रचनाकृतास्ताः केवल सिंहावलोकन न्यायेन लिख्यते तेनविना तेषां प्रदानस्य ज्ञानं कथं भवेत् अध्येतृणां छात्राणां अध्ययनकाठिन्यं वीक्ष्य कतिपय ग्रन्थाः तेषां सुबोधाय टीकया सरलीकृतास्तेषु हितोपदेशः प्रथमः संस्कृत प्राथमिकाभ्यासक्रमेस्थितमिदं पुस्तकं संस्कृत माध्यमत्वात् अस्मत्प्रान्तीय छात्राणां दुर्बोधमिति ज्ञात्वा किरणावली टीकया सुबोध सरलश्चकृतः एवं न्यायशास्त्रे प्राथमिको तर्कसंग्रहाभिधोऽपि कठिनग्रन्थः तस्य दीपिका टीका छात्राणां कृते दुर्गम्या तस्य सूत्राणि, शंका पूर्वपक्षोत्तरपक्षादि स्थापनं निराकरणं न्याय शास्त्रीय भाषानुसारं आत्मसात् गमयति अतः अस्यव्याख्यांविधायमहान् उपकारः कृतः छात्रेभ्यः ।

अस्यैव न्यायबोधिनी टीका उच्चाध्ययनं कुर्यतामपि, मनोद्वेगकरी अतः तस्योपरि टीपणींविधाय यथा शास्त्रबोधः सारल्येन भवेदिति महत्कार्यं कृतम् । अस्मिन्नेव विषये अतिदुरूहा ।। न्यायसिद्धान्त मुक्तावली सदृशो आकर ग्रन्थः तस्य सिद्धान्ताः बहुप्रयत्नैरपि स्वात्मीया नभवन्ति रतिविचार्य छात्राणामुपकाराय स्वामिपादैः किरणावली व्याख्यया अयमपि सुबोधः कृतः ।

एवं रीत्या सांख्यशास्त्रस्य ज्ञानमपि अति गम्भीरं इति तस्याध्ययनशीलाः अवगच्छन्ति, तस्यार्थगामीय पूर्णभावः महताप्रयत्नेनापि नावगम्यते अतः तत्र छात्रसंख्यापि स्वल्पा भवति अतः सांख्यकारिकाः च तस्य गौडपाद विरचितं भाष्यमपिकिरणावली स्वोपरिटीकया सरसं सरलश्चकृतम् परं च सांख्यतत्वकौमुदी अपि स्वलाक्षणिक रचनाद्वारा भावगम्याकृता ।

योगशास्त्रे ।। पातञ्जल योगसूत्राणां स्थानं मूर्धन्यं वर्तते तस्य भोजराज प्रणीता भोजवृत्तिरपि सूक्ष्म बुद्धिग्राह्यत्वात् अतिदुरुहावर्तते सापि किरणावल्या योज्य स्वल्प श्रमसाध्याकृता ।

एवं प्रकारेण ।। मीमांसा शास्त्रे अर्थसंग्रहादि ग्रन्थान् लोकभोग्यान् कर्तुं महान् श्रमः कृतः परं च दर्शनशास्त्रे मौलिकं साहित्यं अल्पं विद्यते प्राचीन परम्परा प्राप्त ग्रन्थानां अध्ययन मतिदुष्करं तस्य तत्वनिर्णय पारिभाविक बाहुल्यं काठिन्यं वर्धयति, अतः "तत्वप्रभावली" प्रमातत्वविमर्श "ख्यातिविमर्श" तत्वमुक्ताकलापादीनां स्वोपज्ञ लाक्षणीक टीपणी द्वारा दुर्गमोऽयं विषयः सरलः सुगमश्च कृतः ।

स्वामिनारायण सिद्धान्त प्रतिपादक ग्रन्थानां संख्या संस्कृत वाङ्मये स्वल्पा तेषां सिद्धान्त संग्रहग्रन्थाः गुर्जरभाषैव अस्ति इति विद्वज्जनवाच्यतानिराकर्तुं तथा समग्रे विश्वे तेषां प्रसारः स्यादितिधिया अस्मिन् विषये महत्त्वपूर्णं प्रदानं कृतम् ।

शिक्षापत्री, भगवता स्वमुखेन कथिता तत्र उद्धव संप्रदायस्य बहुमूल्योपदेशः व्यवहारोपयुक्तं ज्ञानमपि वर्तते अतः सत्संगे ।। श्रीमद्भगवद्गीतावत् नित्यपाठ रूपं माहात्म्यं धारयतिः आपाततः सरला अपि इयं स्मृति श्रुति शास्त्राणामनुसंधानं धारयति अतः स्व विस्तृत भाष्य द्वारा स्वामिपादैः तस्य सर्वशास्त्र सारत्वं प्रतिपादितम्, तथा च भगवतः उपदेश रूपाणि वचनानि गुर्जरभाषा वशात्, अन्य भाषाभाषिणाम् कृते तस्य उपादेय हेतुमधिकृत्य तत्राऽपि सर्वशास्त्र गामीत्वं स्व भाष्येण निरूपितम् ।

एवं श्री गोपालानन्द स्वामिवार्ता तथा च श्री गुणातीता नन्द स्वामिवार्ता विविध स्थले जन समाजे सरल वाक्य विन्यासेन भगवतो भावं दृढं कर्तुं समर्थोऽपि तथो उपदेश संग्रहः स्वभाष्यरचनाद्वारा सर्वशास्त्र साररूपोऽयं इति प्रतिपादितम् ।

स्वविशिष्टाद्वैत सिद्धान्तः भगवतः रामानुजाचार्यस्य सिद्धान्ततः किं वैशिष्ट्यं धारयति कुत्र च विभिन्नतेति निदर्शनाय ॥ विशिष्टाद्वैतेऽपि विशिष्टब्रह्मा द्वैतत्वं च स्वामिनारायणदर्शनम् च स्वामि नारायणवेदान्तसारः श्रुतितात्पर्यनिर्णयः, वचनामृत प्रामाण्यहेतवः । श्री गुणातीत ब्रह्मोपनिषद इत्यादि ग्रन्थानां प्रणयनं स्वप्रौढ प्रतिभा बलेन विधाय स्वबुद्धिवैभवनिरूपण द्वारा स्वसिधान्त श्रेष्ठत्वं प्रतिपादितं स्वामिपादैः ।

भगवतः सगुणत्व विषये आशंकमानान् तथा च अस्मिन् कलिकाले कथं अवतारः सम्भवेदिति भ्रमवतां भ्रमनिरासाय श्रीहरि स्वरूप निर्णयः, अवतारावतारित्वे पुराणादिवचनानि सूक्ष्मेषीकया संगृह्य सर्व शास्त्रसंमतनिर्णयः स्थापितः सुधासिन्धु नामक सिद्धान्त ग्रन्थस्य तथा च ब्रह्म रसायनं भाष्यं तथा साकारत्वविमर्शादि ग्रन्थाः स्वामिनः सर्वशास्त्रे कृतश्रमस्य तेषां ज्ञानस्य अगाधतां दर्शयति ।

एतादृशं वैविध्यपूर्णं सिद्धान्तनिरूपणं ग्रन्थरचनं अद्यापि केनापिकृतं नास्ति ।

इदं विद्वज्जनभोज्य साहित्यनिर्माणेऽपि सामान्यजनस्य विस्मृतिः तेषां मानसे न आसीत् सामान्याऽपि जनानां भक्तिभाव पोषणाय तथा च वर्धनाय, भगवत्स्मरण द्वारा ।

नित्यपाठेन स्वजन्मनः साफल्यं नयेदिति धिया। "भक्त्याकेवलं तुष्यतिहरिः" इतिवचनानि दृढयितुं भक्तिभावपूर्णानि विविधानि स्तोत्राणि देवस्तोत्राणि हनुमदादीनां स्तोत्र संग्रहः प्रकाशितः तेषां सरलतां सरसतां च वीक्ष्य हृदयं प्रमोदमेति तेषां गानेन मनसि आह्लादो भवति एतादृशं कवित्वं साक्षात्कार साधनमेव एतादृशो भक्तिभावपूर्णा रचना संसारे विरला दृश्यते ।

सत्संग समाजे "सत्संगी जीवन"स्यमहत्त्वं कः न जानाति श्रीमद्भागवततुल्योऽयं ग्रन्थः सत्संग समाजे नवाहपारायणस्य स्थानं भजते शुक स्वामिनः इयंरचना भगवतः स्वामिनारायणस्य अवतार-कारणत्वम् , धर्मकुलपरिचयः च गुरुवर्य श्रीरामानन्दस्वामिनः चरित्रं तथाच भगवतः विस्तृतं चरितं तथा बाल्यतः आरभ्य समग्रजीवनवृत्तान्तः निरूपणपूर्वक भगवतः दिव्याः अप्रमेया अतर्क्या लीला वर्णिताः परंच ब्रह्मचारिपरमहंसानां सत्संगिनरनारीणां धर्माः वृतोत्सवानां निर्णय मान्यग्रन्थविवेचना । इति अनेका-विषया पञ्चप्रकरणात्मकेऽस्मिन् ग्रन्थेनिबद्धा वर्तन्ते, सत्संगसमाजेऽस्यनवाह पारायणमपि भवति अतः पुराण सदृशी रचनाअध्येतृणां सरलास्यादितिधिया तस्योपरि नारायणी टीकां श्रीमद्भागवतस्य श्रीधरीस्टीका तुल्यां विधाय स्वामिपादै उपकारः कृतः ।

एतादृशी रचनावैशिष्ठ्यवतः स्वामिनः एका सर्वोत्कृष्टा शिखरी भूता रचना उल्लेखने तां बिनाअपूर्णामिवाभाति लेखनमिदं यस्या स्मरणमपिपावन करं पठनमाह्लादकरं भक्तिवर्धनम् मननं, आत्मकल्याण करं भवति सा रचना "श्रीलक्ष्मीनारायणसंहिता" सपादलक्षश्लोकपूर्णा महाभारतादपि विस्तृता विपुला अस्ति । अस्याः विषये हेतुं एवं कथयामि श्रीमद्भागवते प्रसंगः अस्ति सप्तदश पुराणानि विरच्य पञ्चमवेदतुल्यं महाभारतं पिधाय भगवान् व्यासः स्वमनसि यदा शान्ति नलेमे "आत्मा अकृतार्थः एवबभास सरस्वत्यास्तटे कथं रिक्तं मम जीवनमाभाति इतिविचार्यमाणः तत्र समागतेन नारदमुनिनासह संवादस्संजातः तस्य तात्पर्यमिदमेव आसित्" न हि यत्र चित्रपदं हरेर्यशो जगत्सर्वत्र प्रगृणीत कर्हिचित् । तद्वायसं तीर्थमुशन्ति मानसा न च यत्रहंसा विरमन्त्युशिकक्षया ॥ १ ॥ तद्वाग्विसर्गो जनताघविप्लवो

एवं श्री गोपालानन्द स्वामिवार्ता तथा च श्री गुणातीता नन्द स्वामिवार्ता विविध स्थले जन समाजे सरल वाक्य विन्यासेन भगवतो भावं दृढं कर्तुं समर्थोऽपि तथो उपदेश संग्रहः स्वभाष्यरचनाद्वारा सर्वशास्त्र साररूपोऽयं इति प्रतिपादितम् ।

स्वविशिष्टाद्वैत सिद्धान्तः भगवतः रामानुजाचार्यस्य सिद्धान्ततः किं वैशिष्ट्यं धारयति कुत्र च विभिन्नतेति निदर्शनाय ।। विशिष्टाद्वैतेऽपि विशिष्टब्रह्मा द्वैतत्वं च स्वामिनारायणदर्शनम् च स्वामि नारायणवेदान्तसारः श्रुतितात्पर्यनिर्णयः, वचनामृत प्रामाण्यहेतवः । श्री गुणातीत ब्रह्मोपनिषद इत्यादि ग्रन्थानां प्रणयनं स्वप्रौढ प्रतिभा बलेन विधाय स्वबुद्धिवैभवनिरूपण द्वारा स्वसिधान्त श्रेष्ठत्वं प्रतिपादितं स्वामिपादैः ।

भगवतः सगुणत्व विषये आशंकमानान् तथा च अस्मिन् कलिकाले कथं अवतारः सम्भवेदिति भ्रमवतां भ्रमनिरासाय श्रीहरि स्वरूप निर्णयः, अवतारावतारित्वे पुराणादिवचनानि सूक्ष्मेषीकया संगृह्य सर्व शास्त्रसंमतनिर्णयः स्थापितः सुधासिन्धु नामक सिद्धान्त ग्रन्थस्य तथा च ब्रह्म रसायनं भाष्यं तथा साकारत्वविमर्शादि ग्रन्थाः स्वामिनः सर्वशास्त्रे कृतश्रमस्य तेषां ज्ञानस्य अगाधतां दर्शयति ।

एतादृशं वैविध्यपूर्णं सिद्धान्तनिरूपणं ग्रन्थरचनं अद्यापि केनापिकृतं नास्ति ।

इदं विद्वज्जनभोज्य साहित्यनिर्माणेऽपि सामान्यजनस्य विस्मृतिः तेषां मानसे न आसीत् सामान्याऽपि जनानां भक्तिभाव पोषणाय तथा च वर्धनाय, भगवत्स्मरण द्वारा ।

नित्यपाठेन स्वजन्मनः साफल्यं नयेदिति धिया। "भक्त्याकेवलं तुष्यतिहरिः" इतिवचनानि दृढयितुं भक्तिभावपूर्णानि विविधानि स्तोत्राणि देवस्तोत्राणि हनुमदादीनां स्तोत्र संग्रहः प्रकाशितः तेषां सरलतां सरसतां च वीक्ष्य हृदयं प्रमोदमेति तेषां गानेन मनसि आह्लादो भवति एतादृशं कवित्वं साक्षात्कार साधनमेव एतादृशी भक्तिभावपूर्णा रचना संसारे विरला दृश्यते ।

सत्संग समाजे "सत्संगी जीवन"स्यमहत्त्वं कः न जानाति श्रीमद्भागवततुल्योऽयं ग्रन्थः सत्संग समाजे नवाहपारायणस्य स्थानं भजते शुक स्वामिनः इयंरचना भगवतः स्वामिनारायणस्य अवतार-कारणत्वम् , धर्मकुलपरिचयः च गुरुवर्य श्रीरामानन्दस्वामिनः चरित्रं तथाच भगव्रतः विस्तृतं चरितं तथा बाल्यतः आरभ्य समग्रजीवनवृत्तान्तः निरूपणपूर्वक भगवतः दिव्याः अप्रमेया अतर्क्या लीला वर्णिताः परंच ब्रह्मचारिपरमहंसानां सत्संगिनरनारीणां धर्माः वृतोत्सवानां निर्णय मान्यग्रन्थविवेचना । इति अनेका-विषया पञ्चप्रकरणात्मकेऽस्मिन् ग्रन्थेनिबद्धा वर्तन्ते, सत्संगसमाजेऽस्यनवाह पारायणमपि भवति अतः पुराण सदृशी रचनाअध्येतृणां सरलास्यादितिधिया तस्योपरि नारायणी टीकां श्रीमद्भागवतस्य श्रीधरीस्टीका तुल्यां विधाय स्वामिपादै उपकारः कृतः ।

एतादृशी रचनावैशिष्ठ्यवतः स्वामिनः एका सर्वोत्कृष्टा शिखरी भूता रचना उल्लेखने तां बिनाअपूर्णामिवाभाति लेखनमिदं यस्या स्मरणमपिपावन करं पठनमाह्लादकरं भक्तिवर्धनम् मननं, आत्मकल्याण करं भवति सा रचना "श्रीलक्ष्मीनारायणसंहिता" सपादलक्षश्लोकपूर्णा महाभारतादपि विस्तृता विपुला अस्ति । अस्याः विषये हेतुं एवं कथयामि श्रीमद्भागवते प्रसंगः अस्ति सप्तदश पुराणानि विरच्य पञ्चमवेदतुल्यं महाभारतं पिधाय भगवान् व्यासः स्वमनसि यदा शान्ति नलेमे "आत्मा अकृतार्थः एवबभास सरस्वत्यास्तटे कथं रिक्तं मम जीवनमाभाति इतिविचार्यमाणः तत्र समागतेन नारदमुनिनासह संवादस्संजातः तस्य तात्पर्यमिदमेव आसित्" न हि यत्र चित्रपदं हरेर्यशो जगत्सर्वत्र प्रगृणीत कर्हिचित् । तद्वायसं तीर्थमुशन्ति मानसा न च यत्रहंसा विरमन्त्युशिकक्षया ।। १ ।। तद्वाग्विसर्गो जनताघविप्लवो

अभिनन्दनकुसुमाञ्जलिः

डॉ० श्यामलाल शर्मा D. Litt.

पंजाब विश्वविद्यालय, होशियारपुर

श्रीमत्स्वामिनारायणसम्प्रदायविद्वद्वरिष्ठानां सांख्ययोगपरिष्कृतस्थिरमतिनिष्ठानां नव्यन्याय-प्रबन्धबृंहणबद्धपरिकराणां मीमांसालोचकधुरीणानां वेदान्तविज्ञानविभावनीतोपनतजनमनस्तिमिरगणानां विद्यासंवर्धनैकान्तोत्साहसमन्वितानां परमादरणीयसच्चारित्र्यपरिपूरितानां धर्माचार्यवर्याणां श्रीमत्स्वामि-कृष्णवल्लभाचार्याणां शुभाभिनन्दनवृत्तमभिजायामन्दानन्दमनुभवतितरां मे चेतः। गौतमकणादवाङ्मय-किरणावल्यालोकेन षड्विंशतिसहस्रान्वितलक्षश्लोकमयानां श्रीश्वेतायनव्यासवचसां कृति सम्पादनेन च विद्या-श्रीघराणां श्रीमत्स्वामिप्रवराणामसाधारणी प्रतिभा लोकेषु सर्वत्र प्रतिभाता। अनेकगुणविशिष्टाया अस्याः संहितायाः सप्रक्रियसम्पादनेन सूक्ष्मावस्थदार्थप्रबोधः संस्कृतसाहित्यसद्मसरसिकानां चेतसः समाराधना प्राचीनेतिहाससामग्रीसमुपस्थापनादितिहासाध्वजुषां विदुषां प्रचुरतरश्चोपकारः कृतः श्रीस्वामिवर्यैरिति प्रत्यक्षमेव सर्वेषाम्। संहितायां चास्यां सर्वेश्वर्याः परमार्थस्वरूपं वैदिकतान्त्रिकदेवतानां स्वरूपाणि देवता-नुग्रहोपायाः महाविद्यानां तत्त्वानि तासामुपास्तिविधिफलप्रभृतिप्रकथनानि गननान्यपि सुशैल्या सम्पादनतः स्फुटमवबुध्यन्ते। वेदवेदान्तयोगरहस्यानि धर्मोपदेशेषु प्रकटयन्तः स्वामिवर्याः सम्प्रति सौराष्ट्रवासिनां भागधेयानि सफलयन्तो विजयन्तेतराम्। एषां महानुभावानां ग्रन्था एव एतदीयां प्रतिभां प्रकटयन्ति। श्रीनारायणतत्त्वदर्शने प्रदीप्तमेषां व्यक्तित्वं कृतित्वं च। तपसा विद्यया चाहर्निशं राजन्ते गीर्वाणवाण्याः साधका इमे। पुण्यशीलक्रियामेषां कल्याणी देववाणी सर्वेषां भूतये प्रभवतु चिरायेति ससम्मानं निवेदयन् विरमति।

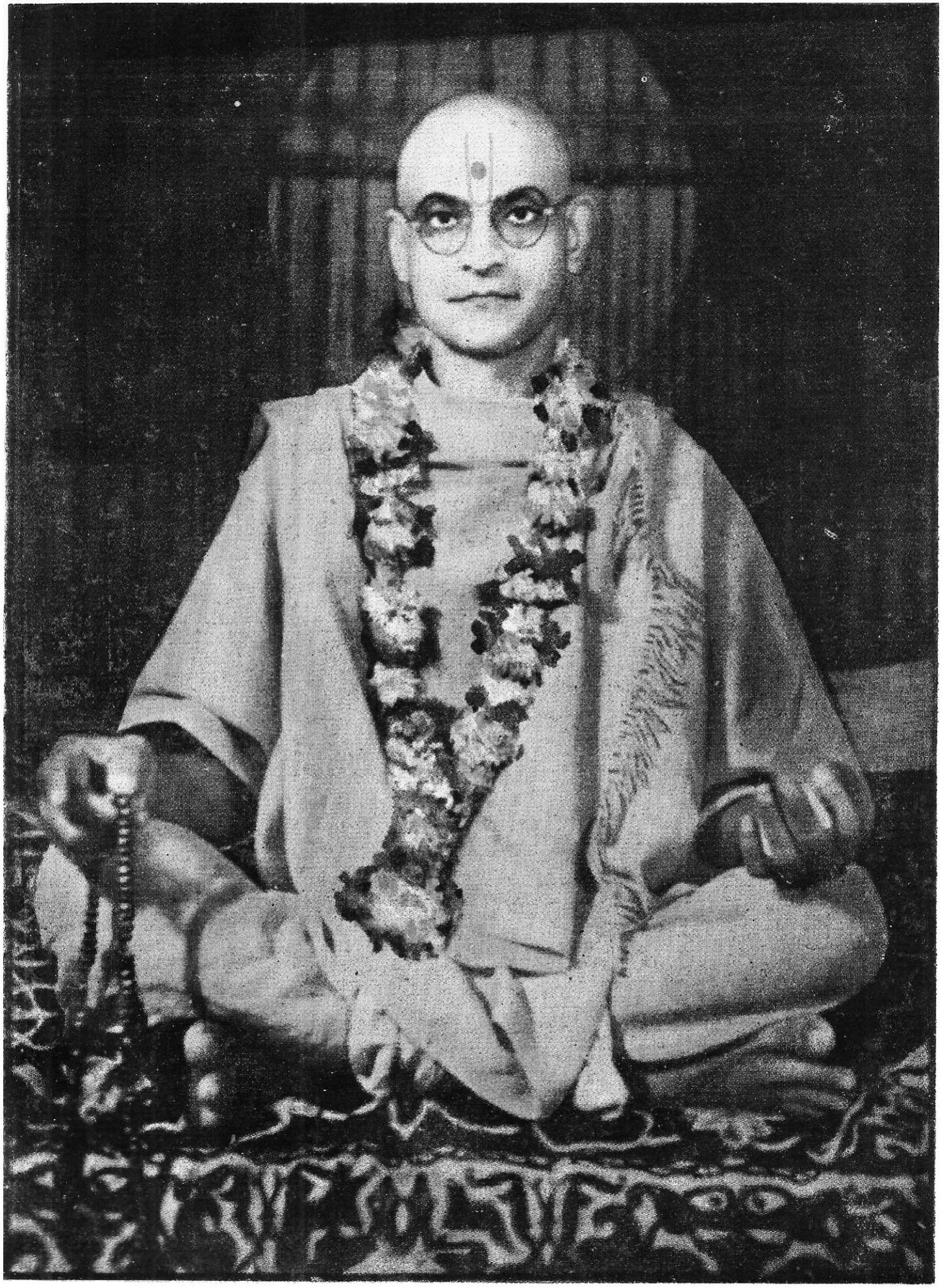

कुंकावाव नगरी में राष्ट्रीयभवन-मन्दिर में प्रतिष्ठापित श्वेतसंगमरमर की मानवमूर्तिसमप्रमाण
श्रीकृष्णवल्लभाचार्य महाराज (श्वेतायन व्यास) की महती प्रतिमा। (पृष्ठ ४५६)

श्रीस्वामिनारायणो विजयतेतमाम्

स्वामि श्वेतवैकुण्ठदासः

न्यायाचार्य-वेदान्ततीर्थ-सांख्ययोगवारिधिः, मु० वृत्तालयनिवासी

अक्षराधिपति-श्रीस्वामिनारायणभगवद्विभूतिस्वरूपमहाशय श्रीपण्डिप्रवर श्रीकृष्णवल्लभाचार्याणामलौकिकजीवनचरित्रं समग्रतयाऽऽलिखितुं नाहं समर्थोऽस्मि तथापि स्थालीपुलाकन्यायेन निवेदयामि। यथा भगवदवताराणां जगत्याविर्भावोऽनेनजीवानां कल्याणायैव तथा भगवद्विभूतीनामपि जनसमुदायानाम-न्तः-करणप्रविष्टमायाजनितानाद्यज्ञास्य स्वोपदेशद्वारा विनाशाय प्रभवति, अस्य महापुरुषस्य जन्म "कुंकावाव" समाख्ये नगरविशेषे बुद्धिमतामग्रेसरराज्यामात्यपदसमलंकृतानाम् सत्पुरुषाणां गृहे श्रीगोपालनाम्नः जनकात् पतिव्रतपरायणायां कम्भरा नाम्न्यां जनन्यां १९६१ तमे संवत्सरे जन्माऽभवत्। प्रत्येकाऽङ्गानाम् लोकोत्तररूपसम्पत्तिविशेषेण हास्यादिना च बालस्वरूपोऽयम् मातापित्रोः इव स्वसम्बन्धिजनेतरजनसमुदायानामपि महानन्दसागरे निमज्जकोऽभवत्। बाललीलया स्वजनानतीवानन्दयति प्रतिदिनं मातापित्रोः आनन्दं जनयन् शुक्लपक्षीय चन्द इव वृद्धिंगतः, पञ्चमे वर्षे प्राथमिकपाठशालायाम् विद्याभ्यासाय सुसमारम्भेण प्रधानाध्यापकान्तिके स्वजनकेन निहितः, एकवारं कथन मात्रेण अक्षरसमाम्नायानां ग्राहकत्वात् अध्यापकानामपि विद्याभ्यासेनाश्चर्यचकितता कृता बालेनानेन। प्राथमिकशिक्षणे सम्पूर्णप्राप्ते सति, अथ कदाचित् स्वग्रामे-श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदायस्थाक्षरमूर्त्ति श्रीगुणातीतानंद स्वामिपरंपरागत श्रीबालमुकुन्ददासः सन्तवर्य आगतः तस्मात् सदुपदेशं प्राप्य स्वतः सिद्धमुक्तोऽपि मानुष्य नाट्यानुसारेण सद्गुरुं मत्वा तस्मात् शरणागतिमन्त्रं प्राप्य गरुप्रेरणया वृत्तालयपीठाधीश्वराचार्य श्रीश्रीपतिप्रसादमहाराजात् भागवतीं दीक्षां प्राप्य श्रीकृष्णवल्लभाख्य शुभनामाऽभवत्। भागवतीदीक्षामनुलक्ष्य भगवत्सम्बन्धेन ज्ञानदीप्तिर्यज्ज्ञानेनस्यादथ च स्वाश्रितानामनेकजन्मसञ्चितपापसमुदायानां यथा क्षालनं स्यात् तज्ज्ञानमवश्यं सम्पादनीयम् इति सद्विचारं मनसि कृत्वा सद्गुरोरपि सम्मतिं प्राप्य ब्रह्मनिष्ठ-ब्रह्मचर्यव्रतधारि श्रीबालकृष्णानन्द-महाशयस्यान्तिके संस्कृतविद्याभ्यास समारम्भोऽनेन महाशयेन कृतः। मानुष्यनाट्याच्छादितमुक्तभावः तथापि कस्तूरिकायाः सुगन्धः नहि वस्त्रादिनाऽऽच्छादिनः स्यात् तद्वत् अस्य महानुभावस्य मुक्तभावः नहि मनुष्यरूपेणाच्छादितो भवति, जीर्णदुर्गनगर-वृत्तालय-वदरा-काशिस्थ संस्कृतमहाविद्यालयेऽभ्यासः कृतः तत्र तत्रस्थानाम् अध्यापकानामग्रे काव्य-कोश-व्याकरण-न्याय-वेदान्त-सांख्ययोग-मीमांसादीनां शास्त्राणामध्ययनकालेऽध्यापक गुरुवोऽपि आश्चर्यवहां धारणशक्ति दृष्ट्वा पूर्वजन्मसिद्धविद्यासंस्कारसंस्कारीति तैरनुमितम्। परञ्च युगपत्प्रत्यक्षेण सदास्वतः ॥ यः सर्वज्ञः सर्ववित्" यथा परमात्माऽस्ति तद्वत् ब्रह्मणि परमैकांतिक भावप्राप्त्या मुक्तभावप्राप्तानामपि भगवत्संकल्पानुविधायिसङ्कल्पवताम् मुक्तानामपि सर्वज्ञत्वादिगुणगणः स्वतः सिद्ध इति तैरपि अध्यापकमहोदयैरपि तत्त्वन्तु न ज्ञातम् अथवा ज्ञातमपि संशयग्रस्तम् निश्चेतुं समर्थास्ते न भवेयुः। विद्याध्ययनयुक्तस्वरूपाः त्रिचत्वारिंशत् ग्रन्थाः विरचिताः। कार्येणाऽनेन सर्वज्ञत्वादिगुणगणैरनुमीयतेऽयम् महाशयः मुक्तः। अस्य महाशयस्य भूमण्डलेऽवतरणं तु सर्वावतारिश्रीस्वामिनारायणस्येच्छया जातम् तदपि स्वाश्रितभक्तजनानां स्वस्य शुद्धस्वरूपं सर्वावतारित्वञ्च तद्द्वारा विज्ञापयितुम् अथवाक्षरब्रह्मदिव्यधामाधिकारिणः कारयितुमस्ति। तदेव कृतम्। मोहमयीनगर्यां

श्रीस्वामिनारायणमन्दिराधिष्ठित श्रीगोलोकविहारिभगवत्स्वरूपस्य शतवार्षिकपाटोत्सव निमित्त शतकुण्डी यदा महोत्सवः २०२४ द्विसहस्राधिकचतुर्विंशतितमे संवत्सरे वैशाखशुक्लपक्षीयद्वादशीतिथौ महानभवत्। तस्मिन्नुत्सवे देशदेशान्तराणाम् अथ नगरजनानां महान् सवबायोऽभवत्—मोहमयी (मुम्बई) नगरस्य भक्तजनानां प्रार्थनया वृत्तालय श्रीलक्ष्मीनारायण पीठाधीश्वरधर्मधुरंधराचार्यवर्य श्रीनरेन्द्रप्रसादमहाराज—परमैकांतिक सद्गुरुवर्य संत-महात्मानः श्रीस्वामिनारायणभगवत्स्वरूपाश्रिताश्चानेकजनाः अथ वैष्णवादिभगवद्भक्तजनाश्च आगताः तेषां महती सभा सञ्जाता तस्यां सभायाम्-व्यासासने नियुक्ताः महाशय पण्डितश्रीकृष्णवल्लभाचार्याः महासिंहासनोपरिस्थित्वा तैः श्रीस्वामिनारायणभगवतोपदिष्टशिक्षापत्र्याः व्याख्यानस्वरूपस्ववचोऽमृतेन सिञ्चितः संसारदावानलदंदह्यमान जनसमूहः अनवधिकातिशयश्रान्तिमन्वभवत्।

दिव्यामृतैः सिञ्चित सहस्र लक्षावधिजनानामन्तः करणे किमपि लोकोत्तर—दिव्यभावसञ्चरणेन स्वस्वरूपा विर्भावपूर्वक श्रीपर ब्रह्माक्षराधिपतिसेवाभूतमुक्तिस्वरूपे कारणीभूता स्वधर्म-ज्ञान-वैराग्य-माहात्म्यज्ञानयुक्तभगवद्भक्तिः सञ्जाता, तस्मात् तस्यां सभायां यादृशी यस्य हृदय-कमले तादृशी भावना तया विशिष्टो भवान् पूज्यः जनैरदर्शि। यथा भवद्दर्शनेन पण्डितप्रवरैः पण्डितराजेति, भक्तसमूहैः परमभक्तराजः, सन्यासिभिः परमसन्यासी, वैरागिभिः परमवैराग्यस्वरूपः, व्याख्यानकर्त्तृभिः अपरव्यासः वा बृहस्पतिः सहस्र लक्षावधि साधारणजनैः मूर्त्तस्वरूपवेदः एवं प्रकारेण सर्वजनैरदर्शि यत्र यत्र (पारायणादि श्रीमद्भिः कृतम् स्यात् तत् तत् ग्राम-नगराणाम् उल्लेखो कर्त्तव्यः) पारायण व्याख्यानानि कृतानि तत्रतत्र चाद्भुत शैल्या जनानाम् अनवधिकातिशयानन्दसागरानुभवः भवद्भिः कारितः। सत्संगिजीवन-शिक्षापत्र्यादि ग्रन्थानां पारायणादिव्याख्यानानि अनेक स्थान कृतानि, तत्र तत्र जनसमूहैः भवदीय वचोऽमृतानामास्वादस्यानुभव प्रत्यक्षानुभूतः। प्रतिदिनं जीर्णनगरस्थ निवास भूतमन्दिरे प्रत्यहं प्रातः सन्ध्यासामयिक सभायां नियमितरूपेण भवदीय व्याख्यानं भवति, कथा कर्त्तृणामद्वितीयोत्साहो जायते, कथासाररूपेण व्याख्यानमपि भवता महानुभावेन क्रियते, शिक्षापत्र्यामुक्तं यत् "व्यर्थकालो न नेतव्यो भगवतो भक्तिं विना" तत् चरितार्थीकृतम्, नवधाभक्तिः भवदीया तु अलौकिकावर्तते यदा सभायां कथाकारेण कथा क्रियते तदाऽक्षरमूर्त्तिश्रीगुणातीतानन्दस्वामिनः प्रसादीभूतस्थाने प्रमुखपदे स्थित्वा ध्यानमुद्रया श्रीस्वामिनारायणनाम्नः जपमालिकापरावर्तनं क्रियते तदा श्रीहरेः स्वस्तिक-यव-जम्बू-ध्वज-अङ्कुश-अम्बुज-अष्टकोण-वज्र-ऊर्ध्वरेखा-मीन-त्रिकोण-व्योम-गोपद-कलश-अर्धचन्द्र धनुषाख्यानि षोडशचिह्नानि तैः चिह्नितचरणकमलादारभ्य प्रत्येकाङ्गानि मनसा चिन्तनम्—श्रवणेन्द्रियेण कथाश्रवणम्—त्वगिन्द्रियेण भगवच्चरणस्पर्शनम्—चक्षुरिन्द्रियेण भगवद्दर्शनम्, रसनेन्द्रियेण भगवत्प्रसादभूतदिव्यरसविशेषग्रहणम्, घ्राणेन्द्रियेण भगवतः स्वाभाविकसौगन्धविशेषग्रहणम्, हस्ताभ्यां भगवच्चरणसेवा, पादाभ्याम् भगवन्मन्दिरगमनम् चेत्येवं मानसिकचिन्तनादिसर्वमेककालावच्छेदेन श्रीमद्भिः क्रियते तेन महाशयेषु अष्टावधानित्वं सूच्यते, अन्यच्चेतादृशसर्वेन्द्रियवृत्तीनां भगवत्स्वरूपे तादात्म्यसम्बन्धात् भगवत्परामक्तेः पराकाष्ठा भवत्सु जनसमूहैः परिदृश्यते, पण्डितप्रवर श्रीकृष्णवल्लभाचार्य्याणां दिनचर्याविशेषस्तु (सीनेमाख्यगृहविशेषे रजःप्रेरितमनःचाञ्चल्यहेतुभूतशृङ्गारिक चलचाञ्चल्यचित्रपटे स्त्रीपुरुषप्रमुख्यैः नृत्यादिविविधपरिदृश्यमानानि लौकिकानि चित्राणि जनैः परिदृश्यते, तानि तु दर्शनकर्तृणाम् अन्धःतमःद्वारमुद्घाटयन्ति, तद्विरुद्धस्वभावकानि) सत्सङ्गीयसभामण्डपे सत्वप्रेरितमनः शान्तिकारणभूत भवदीय-भगवत् वार्तामृतरूपालौकिकानि व्याख्यानानि श्रोतृणां जनानामक्षरधामपर्यन्तसम्भूतिद्वारमुद्घाटयन्ति, लौकिकानामलौकिकानां महद्वैशम्यं विद्यते, महाशयस्यदिव्यज्ञानप्रदीपस्तु जनसमूहान्तःकरणस्थानाद्यज्ञानजनितान्धकारस्य विनाशकोऽस्ति। यदज्ञानं रुचि-

जगाढान्धकारविनाशकमहातेजस्विसूर्योऽपि विनाशं कर्तुमसमर्थोऽभवत् । सूर्यः यथा स्वकीरणद्वारा गाढान्धकारविनाशकः तथैव न्याय-व्याकरण-मीमांसादिसर्वशास्त्राणाम् संशयात्मकान्धकारः केषांचित् ग्रन्थानां किरणावली-टिप्पणी-किरण-भाष्य-सार-विमर्श-सूत्राणि-निर्णय-टीका-परिष्कृति-सन्दोहन-रससरित-क्रोड-स्वतन्त्रग्रन्थसम्पादनानि कृत्वा दूरीकृतः । भवदीयरचनादिभिः विविधशास्त्रजनितज्ञानविशेषमास्वाद्य सुज्ञपण्डितैः भवदीय ज्ञानं बहुधा प्रशंस्यते । अथ च—हास्यरस-अद्भुतरस-शान्तरस-शृङ्गाररसादीन् सर्वान् रसान् आस्वाद्य तथा विविध द्रुतविलम्बितवृत्त-ललितवृत्त-वसन्ततिलकवृत्तादिसर्ववृत्तानां कविकाव्य-गौरवे दृष्ट्वा कविकौशल्यतायाः पारंगतानामपि कवीनां सम्मोहनं सम्पादितम् श्रीमद्भिः ।

एकदा वृत्तालये श्रीलक्ष्मीनारायण-श्रीहरिकृष्णमहाराजादिदेवमन्दिरस्थ महत्सभामण्डपे चैत्र-शुक्लीयपूर्णिमायां प्रातःसमये देशदेशान्तरीयशास्त्राध्ययनशीलपरमसद्गुरुवर्य्य-सन्त-पार्षद-हरिभक्त-पण्डित-प्रवराणां महतीसभाऽभवत् तन्मध्ये सुशोभितसिंहासनोपरिछत्रचामरसहित धर्मधुरंधर आचार्येन्दु श्रीआनंद-प्रसादजीमहाराजोविराजितः, तत्समयेऽतीवसुन्दरतमव्याख्यान मञ्चस्वरूपसिंहासनम् अलंकुर्वद्भिः पण्डित-प्रवर श्रीकृष्णवल्लभाचार्यैः गुणनिधिभिः "इति अक्षरमुपासीत" इत्यारभ्य परा-अपरा च विद्यायाः रस-माधुरी शैल्याकृतम् विशिष्टाद्वैतसिद्धान्तानुसारिसुन्दरतमं वेदान्ताभिप्रायप्रतिपादनपरायणम् विवेचनं श्रुत्वा सभास्थाः आबालादारभ्य आचार्यवर्य्यपर्यन्ताः सर्वेऽतिप्रसन्नाः सञ्जाताः हर्षातिरेकात् कश्चित् विज्ञजनः तिष्ठन् प्लुतस्वरेण धन्यः धन्यः शास्त्रिमहोदय ! भवदीयमातापितरावपि धन्यौस्तः । भवद्भिः अलौकिक-कथामृतमयं वेदान्तसिद्धान्तं श्रावयित्वाऽस्माकं मनुष्यावतारः सार्थकीकृतः इति हस्ततालीवादनपूर्वकं सभा-जनैरपि अनुमोदितः । भवदीयव्याख्यानामृतैः जनसमूहान्तःकरणस्थ विषयवासनया मूर्च्छितजनाः सञ्जीविताः । एकदा भवदीयहृदयस्थ श्रीस्वामिनारायणभगवता पुस्तकलेखनसमये भवत्स्वार्विभूय विलुप्त श्रीगुणातीतोपनिषदः आविर्भावः कृतः, वेदस्तु अपौरुषेयः तस्मात् भगवता स्वेनैव भवता द्वाराऽऽविष्कृतः । "सुज्ञेषु किम् बहुना" इति न्यायेन अल्पाक्षरैः बह्वर्थान्—वेष्टयति इति सूत्र व्याख्यानवत् अल्पलेखेन अलौकिकगुणनिधीनां गुणाः अधिकाधिकमनुमेयः । विशेषतः किम् कथये "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" इति यत्कथनम् तत्तु मनुजानां जननी-माता, जन्मभूमिः जन्मभूमिरूपदेशश्च अतिशय महानस्ति, परञ्च यस्य महानुभावपण्डितराजस्य जन्मतः जननी-जन्मभूमि-देशदेशान्तराः अपि गौरवीभूताः भवन्ति इति कथनेनाऽलम् । ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

परब्रह्मश्रीस्वामिनारायणभगवत्स्वरूपानन्यनिष्ठासमुत्कर्षप्राप्तब्रह्मात्मकभावयुक्तसकलवेदशास्त्र-पुराणेतिहासादिसमग्रहार्दाभिज्ञमहाशयश्रीमच्छीकृष्णवल्लभाचार्याणाम् पण्डितप्रवरमद्विद्यागुरुवर्य्यमहोदया-नाम् न्याय-वेदान्त-सांख्य-योग-मीमांसा-व्याकरण-काव्य-कोषादिसमग्रविद्यादिसारभूतत्रिचत्वारिंशद्ग्रन्थ-विरचनावताम् सविद्ये सहस्रशोऽभिनन्दनं क्रियते, श्रीमद्भगवत्स्वरूपश्रीमताकृष्णवपुःधारिकृष्णद्वैपायनव्यासेन महाभारत-अष्टादशपुराण-ब्रह्मसूत्रादीनि वेदान्तसमुपबृंहणानि विरचितानि वेदानां विन्यासस्तस्मात् व्यासः इति प्रसिद्धिम् समुपगतः, तद्वत् श्रीमताऽपि समग्रशास्त्रसारस्वरूपत्रिचत्वारिंशत् ग्रन्थान् कृत्वा यथा सूर्यः किरणानि विस्तार्य रात्रिगाढान्धकारं विनाशयति तथा किरणावली-भाष्य-विमर्शादीनि विस्तार्यऽपर वपुषा गौरवर्णत्वात् श्वेतायनव्यास इव भवान् परिदृश्यते जनैः । श्रीस्वामिनारायणभगवान् स्वयं भक्तजनानाम् दुःखानि कर्षतीति कृष्णः तस्य हृद्गदभिप्रायपरायण सत्संगिजीवनपारायणीटीका-अवतारावतारित्वे पुराण-वचनानि योगसूत्राणां स्वामिनारायणभाष्यम्—सांख्यकारिकायाः स्वामिनारायणभाष्याद्याबहवः ग्रन्थाः भवद्भिः सम्पादिताः एतैः कार्यविशेषैः श्रीस्वामिनारायणाऽपरनामधेयकृष्णस्य वल्लभः सार्थकं नाम "स्वयमाचरते यस्मादाचारे स्थापयति यः । आचिनोति शास्त्रार्थान् आचार्यस्तेनेति ॥"

पारमहंस्यभागवतीदीक्षादीक्षितत्वेन सर्वधर्मशास्त्रगतधर्माणाम् विषयीकृतत्वात् अथ च जनसमुदायानामाचारे श्रीमद्भिः स्थापितत्वात्, स्वयं शास्त्रार्थानाम् ग्रन्थानाम् विरचितत्वाच्च आचार्यपदवी अपि सार्थकीकृता, यथा भगवतः गुणऐश्वर्यादिनामनन्तत्वात् पारंगन्तुमशक्यत्वात् तथा भगवद्विषयेऽपि शेमुषी कुण्ठिता भवति। भवदीयगुणानामनन्तत्वात्। मे शेमुखी कुण्ठिता भवति,

भवदीयपादरविन्दयोः शिष्यरूपेण सहस्रशः साष्टांगप्रणतिपुरःसरम् पूजयित्वा विरमेऽहम्। भवदीयाशीर्दाद्योऽहम्।

प्रशस्तिः

डॉ० व्रजनन्दन मिश्रः P. H. D.

पंजाब विश्वविद्यालय, होशियारपुर

पुण्येऽस्मिन् भारतेवर्षे सौराष्ट्रेऽतिप्रसिद्धिभाक् ।
भूभागः शोभनः कश्चिद् आस्ते पुण्यकृदालयः ।। १ ।।
शर्यातिर्मानवो यत्र शासकोऽभूत् कृते युगे ।
सुकन्याऽऽसीत् सुता यस्य सती च्यवनमोहिनी ।। २ ।।
द्वापरे यत्र विश्वात्मा विष्णुः कृष्णवपुर्धरः ।
न्यवसद् धर्मसंस्थित्यै द्वारकायां दुरासदः ।। ३ ।।
यदीयचरणाम्भोज - सुखस्पर्शात् पदे पदे ।
पावनी भूरियं जाता सम्प्रहृष्टतनूरुहा ।। ४ ।।
कुङ्कुमावाप(कुंकावा)-नाम्नाऽत्र ख्याताऽऽस्तेपूर्मनोहरा ।
कृतपुण्यजनावासा गिरालक्ष्म्या समन्विता ।। ५ ।।
तत्र पुर्यां जनिं लेभे प्राग्जन्मकृतसत्क्रियः ।
श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः स्वामिनारायणानुगः ।। ६ ।।
यः श्रीमद्भगवत्पाद - पद्मकेसुरसस्पृहः ।
धियं न्यवेशयत्तत्र त्यक्त्वा संसारवासनाम् ।। ७ ।।
न्याये वैशेषिके सांख्ये योगे वैयासिके तथा ।
जैमिनीये परां निष्ठां प्राप्नोद् योधिषणोपमः ।। ८ ।।
पाणिनीयेऽपि मेधावी कृत्वा श्रममनुत्तमम् ।
सर्वशास्त्रोदधेर्धानाद् मैत्रावरुणिवद् बभौ ।। ९ ।।
साहित्यतत्त्वविज्ञानात् काव्यतत्त्वविमर्शने ।
काव्यप्रणयने पूर्वान् अत्यशेत कवीन् बुधः ।। १० ।।
एवं गुरुमुखात् प्राप्य शास्त्राणि विधिवद् व्रती ।
व्यभासीद् विदुषां मध्ये नक्षत्राणां यथा शशी ।। ११ ।।
सोऽयं सकलशास्त्राणां तत्त्ववित् कृपयाऽऽचितः ।
लोकानामुकाराय ग्रन्थान् कर्तुं मनो दधे ।। १२ ।।
संस्कृते राष्ट्रभाषायां हिन्द्यां गुर्जरगिर्यपि ।
ग्रन्था अनेन रचिता विविधाः स्फुटबोधकाः ।। १३ ।।
मीमांसान्यायवेदान्त - साख्ययोगाशयोद्भिदः ।
ग्रन्थास्ते सन्ति सन्मान्यास्तथाऽन्यविषया अपि ।। १४ ।।

एतेषां ग्रन्थरत्नानां सदर्थप्रतिपादिनाम् ।
चतुर्गुणा दश द्वौ च (४२) संख्याः प्रासिद्धयमागताः ।। १५ ।।
समपादि तथाऽनेन श्रीश्वेतायनसंहिता (४३) ।
षड्विंशति सहस्रैक - लक्षश्लोकसुभूषिता ।। १६ ।।
यत्रानेकविधाख्यानं लक्ष्मीनारायणाश्रयम् ।
निबद्धं शोभतेऽत्यर्थं भावसंशुद्धिकारणम् ।। १७ ।।
यत्प्रकाशसमाकृष्टाः कृष्टयः सार्वदेशिकाः ।
नोबुलाख्यपुरस्कार - पात्रमेनममंसत ।। १८ ।।
विद्वद्वृन्दशिरोभूषः सोऽयं देशिकसत्तमः ।
जीव्याज्जीयाच्च सततं वाचं देवीं समर्धयन् ।। १९ ।।

●

श्रीकृष्णवल्लभाचार्य के विषय में कतिपय श्लोक

न्याये यस्य सरस्वती विचरति प्रौज्ज्वल्यसम्मार्जिता
साङ्ख्ये चारुविलाससन्ततिमयी प्रौढ्यञ्चिता राजते ।
सद्बोधोद्धुरचिन्तनव्रततिभिः श्लिष्टा मनोहारिणी
माङ्गल्यैकनिधिर्विधिश्च महसां स्रोतस्विनी पावनी ।। १ ।।
विद्यां लोकहितां सदाशयमयीं प्रोद्भासयन् सन्ततं
यद् वृत्तं कथितं पुरा कविवरैस्तत् स्फोरयन् निर्मलम् ।
योगे गूढमनल्पसिद्धिमहितं तत्त्वप्रकारं दिशन्
वेदार्थं विमलैर्वचोविलसितैर्व्याख्याति कृष्णः सुधीः ।। २ ।।
काव्यं साधुपदार्थजातसुषमं योग्यैः प्रसङ्गैश्चितं
सद्ग्रन्थान् विविधान् नवान् ननु कृती निर्माय विभ्राजते ।
कल्याणं दिशति प्रसन्नवदनः सत्प्रीतिमालम्बते
विद्यारण्यविहारदत्तहृदयः कश्चिन्नवो वल्लभः ।। ३ ।।
श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः सदाचारसमन्वितः ।
विश्रुतः कृतिभिर्लोके मानवानां हिते रतः ।। ४ ।।
ज्ञप्त्या विभूषितः कृष्णः सदाराधनतत्परः ।
सरस्वतीनिधिं पुष्यन् शोभते शिष्यवन्दितः ।। ५ ।।

ॐ ॥ श्रीस्वामिनारायणो विजयतेतमाम् ॥ ॐ

श्रीमतां श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदायदीक्षितानां दार्शनिकपञ्चानन-षड्दर्शनाचार्य-
नव्यन्यायाचार्य-सांख्ययोगवेदान्तमीमांसातीर्थानां पदवाक्यप्रमाणप्रमिति-
पारावारपारीणानां पण्डितवर्याणां-

श्रीकृष्णवल्लभाचार्य-

स्वामिमहोदयानाम्

अभिनन्दनपत्रिका

भो ! भो ! मुमुक्षुविद्वज्जनसहृदया महात्मानः श्रीमन्तोऽत्र
स्तम्भतीर्थनगरे समुपस्थिताः सर्वशास्त्रकुशलाः—

श्रीकृष्णवल्लभाचार्य्यस्वामिमहोदयाः !

सम्प्रति किल भारतवर्षे शिथिलप्रायसनातनवैदिकधर्मस्योज्जीवनाय विविधग्रामनगराणि पर्यट-द्भिर्भवद्भिः स्तम्भतीर्थ(खंभात)नगरमागत्य नागरिकबृहत्सभायां श्रुतिशास्त्रादिसिद्धान्तमनुसृत्य जगज्जी-वेश्वर-परमपुरुषार्थादिधार्मिकतत्त्वावबोधकानि प्रवचनानि कृत्वेदानीन्तनेभ्यो जनेभ्यो धर्मोपदेशान्दत्वाऽ-त्रत्याः प्रजाः सम्यक् सन्तोषिताः, भवतां भक्तिज्ञानादिविवेकनिपुणतां दृष्ट्वा समयोचितां व्याख्यानपरि-पाटीञ्चावलोक्य परमोदवन्तो वयम् , अतः सद्गुणाख्यं हार्दिकं वाङ्मयमभिनन्दनमर्पयामः साभारप्रदर्शनं च कुर्मः ॥

श्रीस्तम्भतीर्थे विशदे सुरम्ये श्रीस्वामिनारायणमन्दिरे वै ।
व्याख्यानमालार्पितया जनेभ्यो धर्मोपदेशोऽहरहः प्रसङ्गे ॥ १ ॥
श्रीकृष्णस्य प्रियोऽयं नयविनययुतो भारते लब्धकीर्तिः
मीमांसासांख्यतीर्थे श्रुतिशिरसि महापण्डितः सर्वशास्त्रे ।
श्रुत्वैतद्धर्मतत्त्वप्रवचनमभवत् स्तम्भतीर्थे प्रसिद्धं
लोकाऽज्ञानञ्च लब्ध्वा परमसुखवहं प्राप्नुवन्ति प्रशान्तिम् ॥ २ ॥
लक्ष्मीपतिः स भगवाँच्छ्रीमन्नारायणो विभुः ।
स्तम्भतीर्थे निवसतां करोतु कुशलं सदा ॥ ३ ॥
जयन्तु ते सुज्ञमहाशयाश्च युष्मप्रयत्नः सफलः सदा स्यात् ।
कुर्मस्तवं श्रीहरिसन्निधौ जीयासुश्चिरं कौ परमार्थसिद्धयै ॥ ४ ॥

आषाढ शुक्लैकादशी
विक्रम संवत् २०००
खंभात

श्रीस्वामिनारायणो विजयतेतराम्

पण्डितसभानिमन्त्रणपत्रम्

पण्डितवर्याः श्रीमन्तः केदारनाथशास्त्रिमहोदयाः !

श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदायस्य वडतालवासिश्रीलक्ष्मीनारायणदेवपीठान्तर्गतवाराणीस्थित-श्रीलक्ष्मीनारायणदेव-श्रीहरिकृष्णमहाराज-श्रीकाशीविश्वनाथमहादेवादिदेवानां वार्षिकप्रतिष्ठोत्सवनिमित्तेन वडतालवासिश्रीलक्ष्मीनारायणदेवपीठाधिपतीनां सनातनधर्मधुरन्धराणां श्री १००८ आचार्यश्रीनरेन्द्रप्रसादमहाराजानामाध्यक्ष्ये समायोजितायां पण्डित्तसभायां निम्नाङ्कितस्थाने ९-५-७० दिनाङ्के शनिवासरे प्रातः सार्धसप्तवादनवेलायां श्रीमतामुपस्थितिं सादरमभ्यर्थयते ।

स्थानम्—

कनैयामैत्री मन्दिर

श्याम बाजार मछोदरी पार्क

श्रीस्वामिनारायणमन्दिरस्य निकटे

वाराणसी-१

श्रीस्वामिनारायणो विजयतेतराम्

वैदिकवसन्तपूजानिमन्त्रणपत्रम्

पण्डितवर्याः श्रीमन्तः केदारनाथशास्त्रिमहोदयाः !

श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदायस्य वडतालवासिश्रीलक्ष्मीनारायणदेवपीठान्तर्गतवाराणसीस्थित-श्रीलक्ष्मीनारायणदेव-श्रीहरिकृष्णमहाराज-श्रीकाशीविश्वनाथमहादेवादिदेवानां वार्षिकप्रतिष्ठोत्सवनिमित्तेन वडतालवासिश्रीलक्ष्मीनारायणदेवपीठाधिपतीनां सनातनधर्मधुरन्धराणां श्री १००८ आचार्यश्रीनरेन्द्रप्रसादमहाराजानामाध्यक्ष्ये समायोजितायां वैदिकवसन्तपूजायां निम्नाङ्कितस्थाने १०-५-७० दिनाङ्के रविवासरे प्रातः सार्धपञ्चवादनवेलायां श्रीमतामुपस्थितिं सादरमभ्यर्थयेते ।

स्थानम्—

श्रीस्वामिनारायणमन्दिरे

मछोदरी पार्क,

वाराणसी-१

श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः

श्रीश्वेतवैकुण्ठशास्त्री च

स्वामिश्रीकृष्णवल्लभाचार्याभिनन्दनग्रन्थाभिप्राय-विशेषविमर्शः

श्रीसिद्धपद(सिद्धपुर)स्थ श्रीनरहरिशास्त्रिणां स्वाभिप्रायः

अनवरतसद्धर्मकर्मानुष्ठानप्रभान्वितनानाविधन्यायव्याकरणवेदान्तसांख्ययोगादि सत्सिद्धान्तपथप्रदर्शक संस्कृतटिप्पण्याद्यलङ्कृततात्पर्यार्थबोधकग्रन्थप्रभाभासुरभूसुरसुरिवर्य श्रीलक्ष्मीनारायणसेवासद्भावभावभरितनव्यव्यासपदावलिविभूषितकाव्यकलाकुशलवैष्णवविद्वत्सार्वभौम संस्कृतभाषाज्ञानप्रसारणक्रियया भारतेऽस्मिन् विश्वविलसन् नानाविधकीर्त्तिकौमुदीप्रकाशयशोधवलितेङ्ग्लेण्डजर्मनीफ्रान्सेटल्यमेरिकाजापानादि भारतीयज्ञानदर्शनतत्त्वचिन्तनेषु महाकाव्यकृतिकर्मणा सर्वशास्त्रज्ञमहानुभावानां साम्प्रतः संस्मरणीयो रमणीयः ।

कश्चित् व्याकरणन्यायवेदान्तसाङ्ख्यादिशास्त्रेष्ववस्थितं रससन्दोहं स्वीयहृदयारविन्दविराजमानयाशब्दरचनया सर्वत्रग्रन्थेषु भासयन्ती गिरामधीश्वरी भगवती शारदा शारदाम्भोजवदना नानाविधसांख्यन्यायशास्त्रज्ञतया विराजमाना लक्ष्यतेऽत्र । ग्रन्थज्ञानाय क्वचित्समभ्यस्तसस्वरविकस्वरश्रुतिपटुविपश्चिद्वरैः उच्चैर्यन्नामसमुद्घोष्यते ।

न्यायसिद्धान्तेषु किरणावल्या, विकासमानैः किरणैर्हेत्वाभासादि जटिलविषयेऽपि । अवच्छिन्नावच्छेदकतावच्छिन्नां गिरां राजयो वैशेषिकपदार्थान् विस्फोटयन्ति दृश्यन्ते ।

ययामूलार्थगूढार्थभावार्थोत्कृष्टार्थानां प्रभया प्रपूरयन्ति प्रतिभां न्यायशास्त्रविदाम् । स्वामिनारायणवेदान्तशास्त्रे नितान्तदुर्दान्तवेदान्तक्रान्तशान्तनप्रक्रियाप्रदर्शनेन मूलप्रकृतितत्त्वसंख्यास्मरणकालजीवेश्वरब्रह्मपरब्रह्मज्ञानशक्तिद्रव्यरूपरसादिगुणज्ञानविभागैः सप्रमाणरुचिकरवाक्यज्ञानप्रदर्शन प्रमाणप्रमेयविशालविवेचनेन रुचिरप्रवाहः प्रस्रावितस्तत्त्वबुभुत्सूनां विदुषांकृते ।

सदाचारविचारयोः सुरसरस्वतीरसास्वादः स्थवीयान् पन्थाः शास्त्रविचारप्रसादरूपः प्रस्थापितः प्रवर्तते । प्राथमिकानां कृते हितोपदेशमित्रलाभकिरणावलीमृद्वीकामधुमाधुरीमप्यधारयन् । साहित्यस्य सौहित्यकरी रसोल्हासपूर्णा सेवा समुद्घोषिता । स्वीय स्वामिनारायणसिद्धान्तपथप्रदर्शिनी शिक्षापत्र्या किरणावलिमवलम्ब्यधर्मज्ञानभक्तिवैराग्यबोधिनीं नवनीतवन्नव्यां भव्यां पदे पदे रसदायिनीमास्वादयन्ति स्वजनाः ।

भगवन्महिमज्ञानगुणैर्गुणातीतगोपालानन्दशुकमुनिप्रभृतिभिर्विरचितेषु भगवत्सन्तमहिमासमागमभगवदैश्वर्यदर्शकचमत्कारविद्यानिधिर्विलसति वर्तमाने आधुनिके कराले कलिकाले गिर्वाणवाणीवाङ्मयस्य समुन्नायकाः सुरभारतीसमाराधनतत्पराजनमनोभिश्चिरचुम्बितागङ्गायमुनयोरिव सरस्वत्या—अपि साक्षात्स्वरूपस्य दिदृक्षां सफलयितुं मानववपुषा सम्प्रदायाचारपरम्परया निखिलनिगमागमपारावारपारदृश्वानोऽसङ्ख्याशिष्योपशिष्याणां प्रस्वरवैदुष्यजनुस्थितिभ्यां तज्ज्ञानान्धतमसच्छित्या विरञ्चिविष्णुशिवात्मनस्त्रिदेवमूर्त्तिधरावेदविद इव विराजन्ते विश्वमूर्धनि ।

अखण्डभारतपण्डितमण्डलकाननपञ्चाननतया शास्त्रार्थेषु जल्पवितण्डा ताण्डवचमत्कृतिपरायणाननुपमवैदुष्येणोत्तरेषूपमानतामुपमेयताञ्च विधूयोल्लसन् सुधामाधुरीकहृद्यविद्यतया सद्यः सुखाकुर्वते ।

इदानीं गुर्जरस्यातीशवैदुष्यविश्रुत्यादिगुणगणलभ्यमानयाज्ञवल्क्यगौतमकपिलकणादोदयन मण्डनवाचस्पतिविशिष्टविदुषामेकमूर्त्तिधराः विलसन्तुतराम् । विश्वस्मिन् श्वेतायनसंहितासम्पादनेन ।। इति शम् ।।

स्वामिश्रीकृष्णवल्लभाचार्याभिनन्दनग्रन्थविमर्शः

वैद्यशास्त्री पं० प्रेमवल्लभ शर्मा

आयुर्वेदसाहित्याचार्य इतिहास विशेषज्ञ, सिंहपुर

निरन्तरंनव्यप्रणाल्यनुसरणकर्तृणांनव्यशिक्षादीक्षाव्रतविहरणशीलानां केवलं वाण्यादिनाप्रसरण-प्रचारविषयैव भारतीयत्वधारकाणां जनानामादर्शरूपजीवनव्यवहारक्रियाकलापसद्धर्मसच्चारित्र्यपूर्वक-स्वाङ्गीकृतविशिष्टाद्वैतसिद्धान्तपथदृढीकरणसंलग्नमानसानां **स्वामिश्रीकृष्णवल्लभाचार्य**महानुभावानामभि-नन्दनाख्योऽवसरः सनातनधर्मावलम्बिप्रजानांकृतेऽतीवपुण्यमयः संस्मरणीयश्च ।

ते महानुभावाः केवलं विपश्चिद्वरा एव न । किन्तु, न्यायवेदान्तसाङ्ख्यसाहित्यारण्यविहरणे संशक्ततापूर्वकतत्तच्छास्त्रेषुनिगूढविषयकाठिन्यनिर्मूलनपूर्वकतत्तत्सिद्धान्तायेनप्रकारेण जनसमुदाये सुलभा भवेयुस्तदर्थं यत्नः केन प्रकारेण विधेय इति दृढीभूतं सत्यं शिवं सुन्दरं सङ्कल्पं हृत्सरोरुहे स्थापयित्वा अनेकानेकग्रन्थनिर्माणव्रतधारणपूर्वकं **कलियुगीय श्रीकृष्णद्वैपायनव्यासापरावतारं श्रीकृष्णवल्लभाचार्य-**स्वरूपेण धारयित्वा धरणीं पावयितुं महागुर्जरराज्यान्तर्वर्तिसौराष्ट्रभूमौस्वजन्मना साफल्यपूर्वकं दिगदिगन्तप्रस्रविण्याः स्वप्रतिभायाः प्रभाप्रकाशविशेषेण स्वर्लोकादापतन्तीं भारतवर्षं पावयित्वा पाश्चात्य-देशेष्वपि स्वप्रभावेण चमत्कारलीनान् कुर्वतीं भगवतीं ज्ञानगङ्गां स्वमूर्ध्नि परशिवावतारस्वरूपेण धारयित्वा सामान्यविद्वज्जनाऽसुलभकठिनकङ्करकंटकादिव्याप्तपथविहरणपूर्वकस्वप्रभाविशेषेण स्वानुष्ठितपथदृढीकरण-प्रयत्नविशेषेण च महान् प्रयत्नः कृतः । कीदृशोऽयंप्रयत्नः ? इति समुपस्थिते प्रश्नेनव्यव्यासपदप्रतिष्ठानारोहणं कर्तुं विशिष्टं प्रयत्नं श्रीलक्ष्मीनारायणसेवासंजातोत्कृष्टप्रतिभाप्रभावेण सुलभंकृत्वा एकलक्षान्वित-षड्विंशतिसहस्रश्लोकात्मकाद्भूतविरचनयादेवभाषाभारतीभाप्रसरणक्रियया समग्रभूमण्डले कीर्तिकौमुदीं व्यापयन् भासयन् यशोधवलितेङ्गलेण्डजर्मनीफ्रांसेटल्यमरिकाजापानप्रभृतिदेशविदेशेष्वध्यात्मदीपसंजात-प्रकाशेन तत्रस्थानां गाढान्धकारसंलग्निताज्ञानतमनिरासार्थं विद्युताक्षेपवदाक्षेपेण संजागरिताः शान्त्यन्वेषकाः ।

भगवन्महिमगुणज्ञानवर्णने स्वामिनारायणसम्प्रदायप्रवर्तकप्रथमपुरुषसहजानन्दस्वामिपादमारभ्य-गुणातीतश्रीगोपालानन्दशुकमुनिप्रभृतिभिः प्रवर्तितविशिष्टाद्वैतसिद्धान्तपथावलम्बीप्रणाल्यनुसारेण धर्मचक्रं प्रवर्तयन्, तत्प्रभृतिभिर्विरचितेषु ग्रन्थेषूपन्यस्तभगवत्सन्तमहिमासमागमभगवतः षडैश्वर्यदर्शकचमत्कार-परम्परासमुन्नायकानां देववाणीसमाराधनसंलग्नानां जीवनस्रोतस्विनीं गङ्गायमुनयोर्मध्ये विलसन्तीं तपस्विनीं सरस्वतीं समाराधनाय महान् प्रयत्नः श्रीस्वामिवर्यैः कृत इति । न तत्रातिशयोक्त्या संग्रहणेऽवकाशः ।

भगवन्महिमागुणज्ञानवर्णने पूज्यपादस्वामिवर्याणां करकमलाङ्गुल्यग्रपरिचुम्बनरसास्वादलोलुप-लेखिन्याग्रमुखेन निःसृता अनेका ग्रन्थाः सन्ति । तेषां ग्रन्थसमूहे स्वामिवर्याणां बुद्धिप्रागल्भ्यप्राबल्यप्रदर्शिका "श्वेतायनसंहिता" मूर्धन्यरूपावरिवर्ति । तस्या निर्मातुः सदृशाः पुरुषाः कदाचिदेव क्वचित्क्वचिदव-तरन्ति । यथाश्रीभुवनभास्करकुलभूषणमहाराजश्रीभगीरथेन स्वर्लोकादानीता गङ्गैव साक्षान्नादब्रह्म-स्वरूपिणीं सरस्वतीं शब्दब्रह्मापरावतारभूतेनाक्षरब्रह्मस्वरूपेण भूतलेऽवतारणक्षमः कोऽपि मानववपुर्धार्या-धुनिके करालेकालेऽस्तिचेत्तस्माकं मस्तिष्कैकैवनाम प्रस्फुरति स्वामिश्रीकृष्णवल्लभाचार्यवर्या एव ॥ इति शंतनोतु भगवान्श्रीरसेश्वरः ॥

श्रीस्वामिनारायणो विजयतेतराम्!

अभिनन्दन

भक्तिप्रियदासजी

सांख्ययोगतीर्थ, वेदान्ततीर्थ, साहित्यरत्न, गढ़डा, भावनगर

आजना वैज्ञानिक युग मां विद्या नो विकास थइ रह्यो छे, साक्षर अने प्रगति शील विद्वानो ओ भारतीय दर्शन शास्त्रों ना विविध भागो ने सरलता थी समजाववा भाष्यो—टीकाओ रची आध्यात्मिक तत्व मां नवी-नवी चेतना आपी छे, आ सैकामां अनेक विद्वानों थया, तेमां पुज्य शास्त्री जी "श्री कृष्ण वल्लभा चार्य स्वामिनारायण" नू स्थान अग्रेसर रह्यू छे शास्त्री जो ए संवत् वीस वर्ष काशी वास करी दर्शन शास्त्रो ऊपर "षड दर्शनाचार्य" "नव्य न्याया चार्य" जेवी महत्व नी उपाधियो मेलवी अेक नामांकित धुरंधर विद्वान तरीके बहार पड़ी शास्त्रों मां अनेक वार विजय मेलवी "दार्शनिक पंचानन" जेवी उपाधि मेलवी सनातन धर्म ना विकास माटे विविध शहेरो मां अने विद्याधामों मां जाहेर सभाओ योजी वैष्णव संप्रदाय ना आधार स्तम्भ रूप श्री स्वामि नारायण संप्रदाय नो ज्योत प्रगटावी "वैष्णव विद्वत्सार्वं भौम" उपाधि प्राप्त करी भावि विद्वानों ना विकासार्थे दार्शनिक तत्वो ना गहन ग्रन्थों ऊपर टीका-भाष्यो रची सनातन धर्म ना आचार्यों नी प्रतिभा ने विस्तारी स्वयं धर्मा चार्य रूपे प्रसिद्ध थया छे, आवा भारतीय दर्शन शास्त्र ना अजोड़ विद्वान पंडित वर्य पूज्य शास्त्री जी श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी नी पासे थी विद्या भ्यास करी जग प्रसिद्ध बनेला घणा विद्वानों तेमनो उज्वल कीर्ति ने विस्तारी रह्या छे, आ रीते भगवत परायण जीवन जीवी ब्रह्मनिष्ठ स्थिति ने अनुभवता, जगत ना मानवीओ ऊपर ज्ञान प्रभा ने विस्तारता, पूज्य शास्त्री जी ने अमारा कोटि-कोटि वन्दन साथे अभिनन्दन छे।

जूनागढ श्रीस्वामिमंदिरमां

पं० जीवराज-

आणंद, काबरीया

हाल मां स्थान :

जुना गढ़ श्री स्वामी नारायण मन्दिर मां सर्वे गुणो सम्पन्न एवा श्री जी ना लाडिला सर्वे संत ने हरिजनों ने आ लोक ना माइक सुख ने देह ने विषे रहेली अहं बुद्धि जेणे अलग करी ने आत्मा शुद्ध करि ने सर्वोपरि भगवान श्री स्वामि नारायण नो सम्बन्ध करावी लाखों जीवो ने अक्षर धाम ने रस्ते चढ़ावी दिधा ने हजी ते काम जीव ऊपर दया चालू छे, एवा-एवा परम पूज्य दयालु न्याय शास्त्री जी कृष्ण वल्लभाचार्य स्वामि गुरु राज तमोने हजारों दंडवत प्रणाम, सहित आपने नमस्कार करू छूं।

हे गुरु राज, तमो आ कमीगढ़ ना नानकड़ा हरि भक्त ऊपर बहु दया करी छे, तेथी मारा अन्तर मां (हृदय मां) आनन्द ना फुवारा छुटे छे, हवे तमो ए मने लाभ दिधो छे ते नीचे मुजब जाडसो।

१–तमो काशी अे थी भणी ने आव्या, त्यारे अमुक साल मां जुनागढ़ साधु नी धर्मशाला मां सांझ ना सन्ध्या समय आरती पछी सद्गुरु नारायण दास स्वामि, रघुनाथ चरण स्वामि, कृष्ण-चरणदास स्वामि तथा त्याग वल्लभदास जी तथा हरि भक्तों नी संतो नी मोटी सभा भराई ने बेठी हती, ते वखत अे खोरासाना महंत सभा मां शास्त्र वाद माटे आवेला, ते महंत ५—१० मिनट बोल्या पछी तमो गुरु राज पूज्य शास्त्री जी कृष्ण वल्लभाचार्य तमो तेनो शास्त्र विधि प्रमाणे जवाब आपता, ते महन्त विनय थी प्रणाम करि ने उठया, ते आपना मुख कमल ना अमृत धारा मने साक्षात कार वरते छे।

२–ते तम्हारी मोटी दया छे, त्यार पछी न्हानी कुंका वाव शास्त्री धर्म प्रसाद दास जी मन्दिर नू भर्युं करयु त्यारे तम्हारा मुखारविन्द वाणी मने साक्षात कार त्यार पछी जाम नगर मन्दिर मां हरि भक्तों तथा संतो नी मोटी सभा मां तम्हारी अमृत वाणी थी बहुज आनन्द थयो छे।

३–पछी लाखापादर भक्ति वल्लभ दास मन्दिर भर्युं करयु, त्यारे तम्हारा मुख कमल थो अमृत वाणी नो लाभ लीधो छे।

४–त्यार पछी बगसरा मन्दिर मां कथा प्रसंग नू काम चालू हतूं, ते वखत अे दिवस ना १२ वागे मंदिर मा आप ना दर्शन नी साथे हाथ नी शान थी जमवा नु कहयु, ते तम्हारा हाथ नू लटकू मारा अंतर मा पेसी जवा थी मारा अंतर मां आनन्द ना फुवारा छुटे छे।

५–त्यार पछी माणा वदर मां तमे खुबज दया करी अक्षर मुक्त सर्वे हरि भक्तों मा प्रथम मया राम भट तेना नवा स्थान मां भव्य मंदिर करवावी ने स्वामि नारायण भगवान स्वरूप पधरावी ने वीशाल यज्ञ करी माणा वदर ना ७० (सत्तर) हजार माणसों ने तथा वाहेर गाम थी आवेला तीस हजार माणसों ने ए सर्व ने साग मटे नोतरूं आपी सवार ना साडा आठ पछी लाऊस मां जमवा पधारो एवा विनय भरेला शब्दों थी मारा अंतर मा आनन्द ना फुवारा छुटे छे। वली जमवा नी वीशाल जग्या अने ऊत्तम व्यवस्था जोइ ने खुबज आनन्द थयो।

६–बली माणा वदर नगर पंचायत चौक मां रात्रि ना नव थी अग्यार वाग्या सुधी विसालसभा मां, धर्म धुरंधर आचार्य महाराज श्री ए अमृत मइ प्रवेशन करि ने सर्वे सभा ने आनन्द वर्ताव्यो अने परम पु० शास्त्री जी कृष्ण वल्लभाचार्य अे वखत अे माणावदर नगर पंचायत चौक मां अमृत धारा प्रवेशन करि ने सर्वे सभा श्रे बहुज लाभ लीधो।

७–त्यार पछी सम्वत २०२९ वैसाख वदि दूइज जूनागढ़ वार्षिक पाट उत्सव मोटा शास्त्री जी ए संत हरि भक्तों बहुज लाभ लीधो बस एज

आ लेख कमी गढ़ ना हरि भक्त श्री पटेल जीवराज भाइ आनन्द भाई ना जय श्री स्वामिनारायण वांचजो।

हे परम पूज्य सद्गुरु न्याय शास्त्री स्वामि कृष्ण वल्लभाचार्य नी पवित्र सेवामां, अे.

८–अेक वखत तमो अे अमरेली मा मोटी दया करी अमरेली महाजन वाड़ी मा सत्संग जीवन परायण करी हजारो माणसो आप नी अमृत वाणी नो लाभ दीधो, ते मने साक्षात कार वर्ते छे, जमवा माटे नी उत्तम सगवड़ व्यवस्था ने जोइ मारा अन्तर मा आनन्द फुवारा छूटे छे आ वखते धरम धुरंधर श्री आचार्य महाराज नरेन्द्र प्रसाद जी महाराजे आ वखते संतो ने हरी भक्तो नी मोटी सभा मा हजारों माणसो ज्ञान उपदेश नी श्री मुखे वातों करी ने बहुज सर्वो ने आनन्द पमाड़या छे, वली साथे महाराज श्री पासे लाल जी महाराज विराजता सर्वे ने दर्शन नो मोटो लाभ दीधो, ते थो सर्वे ने आनन्द थयों छे।

९–अेक वखत जुनागढ़ मां सद्गुरु स्वामि श्री भक्ती तनय स्वामि अक्षर वास थया पछी ते निमित्ते तेमना सेवक कोठारी स्वामी अे जुनागढ़ सभा मंडप ऊपर सत्संग जीवन नी कथा करी त्यारे संतो ने हरि-भक्तो नी मोटी सभा मा बहुज लाभ दीधो। आ वखते तमारा मुखारविन्द नी अमृत वाणी सर्वे ने घणो आनन्द थयो, आवी रीते अनेक वखते मारी ऊपर बहुज दया करी छे, हवे मने जेम नाना छोकरा ने तेनी मां सांभरी आवे ने गलगलु थइ जाय तेम मने तमो सांज सवारे पूजा वखते सांभरी आवो त्यारे मारू हृदय भराइ जाय छे, तमारा जेवा महा पुरूष मां तेनाचरणमां सर्वेतीर्थ रह्यां छे। तो हवे कृपा करी ने मारी छेल्ली जीन्दगी श्री स्वामि नारायण भगवान परायण थाय आ लोक मां कषाय वासना न रही ने तमारा जेवा संतो मां आत्म बुद्धि थाय, तमारा जेवा संतो राजी थाय, ते कृपा करी ते मागु छुं तमारी कृपा थी मने :—"माइक मागे ते भक्त नहीं, माइक आपे ते पुरूषोत्तम नहीं"

हे दयालु: हुं कृपा ने पात्र थयो होऊं तो मने आर्शीवाद पत्र लखवा कृपा करशो। महाराज नी साथे तमारी पूजा करू छुं हवे तमारा हाथ ना आशीर्वाद अक्षर नी साथे हुं पूजा करू तेवी मारी भावना छे। बस अेज अमारू सरनामु नीचे भुजव छे।

१०–आ वे लीटी छेली वात लखवा नी छे, आवो मोटो लाभ ता० १७-५-७४ थी १८-५-७४ ना रोज मने दया करी तेथी मारा अंतर आनन्द ना फुवारा छुटे छे।

११–ली, सेवक जीवराज आनन्द कमी गढ़, त्यार पछीछेला ता० १०-५-७४ थी १८-५-७४ सुधी मां रामपुर गाम ना सतसंगी ने बीन सतसंगी ऊपर खुबज दया करी सात दिवस सत शास्त्र सत्संगि जीवन नी परायण करी ने आपनी अमृत वाणी नो हजारों माड़सो ने लाभ दिधो। कथा सांभलवा नी ने जमवा नी उत्तम सगवड़ ने रामपुर गाम ना सर्वे भाइ जनो ऊपर आप खुश थइ घेर घेर पधरामणी करी कथा ना मंडप थी बेहेनों ना मंदिर महाराज प्रतिष्ठा वखत अे कथा मंडप थी बाइयों ना मंदिर सुदी आप महापुरूष मोटा शास्त्री जी कृष्ण वल्लभाचार्य जी तमो रामपुर गाम मा अड़वाड़े पगे आप गाम मां चाल्या ते धाम नी भूमिका ने तीर्थ रूप करी तमारा जेवा संतो ना चरण मां सर्व तीर्थ रह्या छे, वीजूं के गुरू राज ध्यान ना सागर तम्हारा सेवक जीव राज आनन्द आ विनय पत्रीका लखवा मां कांई पणमारी भूल थइ होय ते कृपा करी माफ करशो जी। अेज मारी अरजी।

साहित्य नी दृष्टि अे श्रीवल्लभाचार्यजी

श्री बी. अेम. वधे का

साहित्याचार्य, ज्योतिषाचार्य, विद्वद्भूषण, पालीताणा, गुजरात

शंकराचार्य ना काल मां, शिव राम अने विष्णु संप्रदाय ना फाटा पड़्या, विक्रम संवत् १५ वीं १६ वीं शताब्दी मां वैष्णव धर्म ना आन्दोलन ना प्रधान प्रवर्तक श्रीवल्लभाचार्य जी। आचार्य नो जन्म सं १३३५ वैशाख कृष्ण ११ ना रोज थयेल। अभ्यास बाद बालक वल्लभ माधवेन्द्रपुरी ना शिष्य थया अनेक शास्त्रों नो अभ्यास कर्यो। गुरू ने गुरू दक्षिणा मागवा कहयू ; बल्लभ ने छानी सरसो ! मांग्यो आँख मा-थी अश्रु वेहवा लाग्यां, गुरू अे गुरू दक्षिणा मां श्रीनाथजी नी प्राथनी मागी।

रामानुजाचार्य नी माफ़क वल्लभाचार्य भारत नी यात्रा करी, विद्वानो साथे शास्त्रार्थ करी, पोताना मत नो प्रचार कर्यो। वल्लभाचार्ये ब्रह्म मां बधा धर्म छे तेममानेल सत् चित अने आनन्द एज ब्रह्म कृष्णज परम ब्रह्म दिव्य गुणों थी पुरुषोत्तम बन्या। शंकराचार्य निर्गुण ब्रह्म ने रूप मानेल अने सगुण व्यवहारिक रूप छे, एम मानेल ज्यारे वल्लभाचार्ये सगुण असल रूप अने निर्गुण अंनुसत: रूप मानेल प्रेम लक्षणा भक्ति ग्रहण करी।

प्रेम लक्षणा भक्ति आ जीव प्रवृति नो समन्वय बनता भगवान अनुग्रह करे छे, ए ने 'पोषण' अगर पुष्टि कहे छे आ ऊपर थी वल्लभाचार्ये पोताना मार्ग नू नाम 'पुष्टि मार्ग' राखेल 'कृष्णाश्रय' नाम ना गुथ मा वेद मार्ग मर्यादा मार्ग कठिन छे, तेम प्रति प्रादन करेल।

वल्लभाचार्य ना मुख्य ग्रन्थ '१-पूर्व मिमांसा भाष्य-२' उत्तर मिमांसा श्रीमदभागवत सुबोधिनी टीका, तत्व दीप निबंध वगैरह।

संस्कृत साहित्य मा ना केटलाकग्रन्थों धार्मीक ग्रन्थ तरीके ख्याति पामेल छे। श्रीमदभागवत संस्कृत ग्रथ प्राधान्य छे आ महान पवित्र ग्रंथ ने साहित्य दृष्टि ए जोइए तो अत्यन्त प्रगाढ़ पंडित, महान् श्रीकृष्णभक्त अने वैष्णव सम्प्रदाय नो अनुयायी, संस्कृत भाषा ऊपर नू तेनू प्रभुत्व तेनी स हृदयता श्रीकृष्ण प्रत्ये नी परानु रकित दर्शन शास्त्रों ना अभ्यासी वेदो, उपनिषदो, गीता तथा ब्रह्मसूत्र तेमज तत्व ज्ञान जे ने आत्मसात कर्या। भागवत ना "जन्माद्यस्य यत:" तेमज 'तेने ब्रह्म हृदाय' आवा ब्रह्मसूत्र साँख्य दर्शन ना पुरस कर्ता दशम स्कंध मा आवेल वेद स्तुति काव्य ना अभ्यासी महान् कृष्णभक्त अने कृष्ण भक्ति नो ऊदय थाय ए हेत् थी विशाल ग्रन्थ रचना करनार महान प्रचारक सुबोधिनी टीका ना कर्ता वैष्णव सम्प्रदाय ना निष्ठा वन्त महाप्रभु श्रीमद आचार्य श्रीवल्लभाचार्य ने आवी ऊपमा केम न आपी सकाय। भागवत महाकाव्य छे, जुदा-जुदा अख्यानों मा रस भाव युक्त कविता छे, दशम स्कंध मा आवेल गोपी गीत, भ्रमर गीत वगैरह खंड काव्यों छे।

वल्लभाचार्य जी ए पोताना ऊपास्य देव श्रीकृष्ण नी जन्म भूमि मां गादी स्थापी, पोताना शीष्य पूरव मल खत्री द्वारा गोवरधन पर्वत पर श्रीनाथ जी नू मंदिर वनावेलू सं १५७६ मा मंदिर पुरू थता भगवान श्रीनाथ जी नी स्थापना करी। सूरदास जी वल्लभ सम्प्रदाय ना शीष्य बन्या, आचार्य ने बाल पण ना गुरू माधवेन्द्र पुरी याद आव्या, तेमना शिष्य कृष्ण चैतन्य ने श्रीनाथ जी नी सेवा बतावी अने माधवेन्द्र पुरी ने मुखिया नेम्या। अग्यार वर्ष वाद सं १५८७ ना अषाढ़ शुक्ल तीज ना तेमने गो लोक वास कर्यो। तेमनां पुत्र विट्ठलनाथ गादी पर वीराज्या।

रामानुज थी लइ ने वल्लभाचार्य कृष्णवल्लभाचार्य वगैरह दार्शनिक अगर आचार्य केहवाता हत्ता।

महाप्रभू जी ना केटलाक वचनामृतों—"वैष्णवों जगत ने ब्रह्म रूपे सत्य माने छे, प्रत्येक पदार्थ श्रीकृष्ण नो अन्स छे ते, थी आ जगत सत्य छे—

सीया राम मय सब जग जानी।
करऊ प्रणाम जोरी जुग पानी ।।

श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी ना सिद्धान्त पण दिव्य छे, वैष्णवों माने छे। इश्वर ने क्रिया नथी, पण लीला करे छे।

सुबोधिनी टीका मा महाप्रभू जी ए गोपियों ने प्रेम सन्यासी कही छे, सर्व कर्म नो त्थाग ए संन्यास छे, गोषियों इश्वर ने माटे जीवती हती, एटले प्रेम संन्यासी नी ऊपमा आपेल छे, वस्त्र संन्यास कर्ता हृदय नो संन्यास उत्तम छे।

श्री कृष्ण नी सेवा लौकिक भाव थी न करो। लौकिक अने अलौकिक नी चिंता प्रभु ने छे। हरी ऊपर विश्वास राखी ईश्वर सेवा, ईश्वर भक्ति करवी जोइए।

गोपीओं नी फरीयाद अंगे यशोदा मा लाकड़ी लइ ने ज्यारे लाला ने ज्यारे लाला ने पकड़वा जाय छे। ते प्रसंगे आचार्य जी अे कहयु छे के भक्त अभिमान थी भगवान ने पकड़वा जाय, तो भगवान पकड़ाता नथी। सत्कर्म थी अंदर नू अभिमान वंधतु होय तो सत्कर्म शा काम नू। भगवान अपराध नी क्षमा करे छे। पण अभिमान नी क्षमा करता नथी। वैश्नवों ब्रह्म परिणाम वाद मा माने छे; श्री महाप्रभु जी कहे छे, ब्रह्म निर्विकार रही ने पण ब्रह्म नू परिणाम थाय छे।

वैष्णवों ना पंच रस—शांन्त रस, हास्य, सख्य, वातसल्य अने माधुर्य। कपाल मा श्री नूं चिह्न फरती रेखा।

व्रज संस्कृति ना श्री निर्मता के जी पण वैष्णव सम्प्रदाय ना प्रणेता, जो लोक वृन्दावन मा नित्य निकुंज मा विराजमान वनविहार ना समये श्यामसुन्दर ना हाथ नो लाकड़ो रूपे रास विलास नृत्य समय-वासली रूपे भूतल पर संद धर्म प्रचारक श्री निम्ड़ा के रूपे विक्रम सं० ११ मी रात ९ निधी मा थया।

गुजरात नी दक्षिणे वेले गाम ना ब्राह्मण ज्ञाति ना वासुदेव शुंगेरी मठ ना शंकराचार्य ना शीष्य वैष्णव धर्म ना आचर्य वेदांत मा दैत्य सिद्धांत ना हिमायती 'माधव' नामे प्रसिद्ध थया।

विक्रम नी १४ मी सताब्दी मा काशी मा वैष्णव श्री सम्प्रदाय ना आचार्य राघवानंद जो ने दीक्षा प्रदान करी।

पुष्टिमार्ग मां आठ कवियों—सूरदास, कुंभन दास, परमानंद दास, कृष्ण दास, ज्ञान स्वामी, चतुरभुज दास, अने नंद दास, वल्लभाचार्य ना आदेश थी, सूरदासे भागवत कथा पद मा गायेल। अन्य संप्रदाय ना शीष्यों ए भ्रमर गीत रात्रे, सुदामा चरित्र, मान लीला, रूप मन्जरी, वीरह मन्जरी, रास पंचाध्यायी वगैरह पुस्तकों लखेला।

मथुरा निवासी सं० १५५६ मा जन्म धारण करनार गोसाई हित हरिवंस जे ओ राधा वल्लभ नी संप्रदाय ना प्रवर्तक हत्ता।

गुजरात मा स्वामी माधवाचार्य जी सं० १२५४–१३३३ मा दैन वादी वैष्णव संप्रदाय चलाव्यो। पूर्व भाग मा जयदेव जी अे संगित द्वारा कृष्ण प्रेम उत्तर मा रामानुजाचार्य ना रामानंद जी थया, विष्णु नो अवतार राम नी उपासना द्वारा संप्रदाय नी रचना करी बीजो बाजू वल्लाभाचार्य प्रेममूर्ति कृष्णभक्ती द्वारा लोकों ने रस मग्न कर्या।

महाप्रभु जी नी बैठक, नासिक, हाल नी बैठक ना स्थले कदम आसो पालव राखी वगैरह वृक्षों जोता बैठक माटे जमीन खरीदी, ने खोदता नीचे थी बैठक जेवी जग्या, झारी, बंटा, तथा जूनी भागवत नी पोथी मली आव्या, ते थी सं० १८९६ मा बैठक तरिके प्रसिद्ध थइ।

मदुरा थी त्रिवेन्द्रम, वरकला, स्टेशन थी ५ माइल दूर जनार्दन तीर्थ स्थान छे, त्याह थी डोढ़ माइल दूर एकांत मा आ स्थले श्री मदवल्लभाचार्य ने प्रथम ज्ञान प्राप्त थयुं। त्याह पण सुन्दर बैठक छे।

वैष्णव सम्प्रदाय ना श्री महाप्रभु जी नी बैठक विष्णु कामी थी आवता मार्ग मा दावे हाथे कांची पुरम मा आवेल छे।

पंढरपुर मा चंद्रभागा ने सामे पार महाप्रभु जो नी बैठक छे।

"वैष्णवाः बहवः सन्ति वसुदेव परायणाः।
वैष्णवा विरला सन्ति वासुदेव परायणाः॥

वैष्णव संप्रदाय ना महान् कृष्णभक्त वेदांत केशरी थी महाप्रभु जी ने युगे-युगे वन्दन "कुल पवित्रं जननी कृतार्था वसुन्धरा पुन्यवती चेतन, अपार संवित् सुखसागरेऽस्मिल्लीन परे ब्रह्माणि पस्य चेनः॥"

अंजलि-अलमल मिचमेव प्राणि नां पातकानां
निरसन विषये वा कृष्ण कृष्णे त्रिवाणी।
यदि भवति मुकुन्दे भक्ति सानन्द सान्द्र
विलुठति चरणावजे मोक्ष साम्राज्य लक्ष्मी॥

वेद अने भाष्य नी दृष्टि ए

आंध्र प्रदेश ना वतनीय, पण मोटे भागे काशी क्षेत्र आसपास अड़ेल मा रहैता शुद्धादैत वेदांत ना प्रबोधक आचार्य वल्लभ ना यमुनाष्टक, मधुराष्टक, मनुः श्लोक, कृष्णाश्रयः, पुरूषोत्तम सहस्र नाम, वगैरह स्त्रो त्रो छे।

पुष्टि मार्ग नी स्थापना करी, तेगणे "अणु भाष्य" नाम नो ग्रंथ लख्यो, वल्लभाचार्य जी अे पुष्टि मार्ग नी स्थापना करी पोताना द्वैत वाद मत स्थाप्यो पुष्टि मार्ग ना मत अनुसार चार प्रकार नी पुष्टि छे। केवल प्रेम अने अनुराग भरी कृष्ण नो अनुग्रह प्राप्त करवो अे शुद्ध पुष्टि छे।

वैष्णव संप्रदाय मां लोलावाद अने अपासना नू खूब महत्व छे। श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ते स्वरूपे छे।

श्रीमदानन्दरामगुरुदेवपादपद्मेभ्यो नमः

दार्शनिकसार्वभौम–पण्डितप्रवर श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराजानाम्—

अभिनन्दनम्

महंत शांतिप्रसाद वेदान्ताचार्य

श्रीआणंदाबाबा सेवाश्रम, जामनगर

अभिप्रायलेखे मनो मेऽतिमुग्धं भवत्यत्र शङ्कावकाशो न कार्यः।
यतः कार्यमेतत् समुद्दिश्य, तज्ज्ञान् नतान् वल्लभान् कृष्णपूर्वान् ममास्ते ॥ १ ॥

ते कृष्णवल्लभाचार्या वल्लभा न क्षितौ कथम्।
श्रीहरिशास्त्रसंसक्ता भवन्ति जनवल्लभाः ॥ २ ॥

न्याये काव्येऽत्र सांख्ये प्रथितवरगुणाः शास्त्रि संलेखदक्षाः
वाराणस्यां स्वकार्यैः विबुधगणवराः पण्डितप्रीतिभाजः।
श्रीजीतत्त्वातिसक्ताः विमतगजकृते दृप्तपञ्चानना ये
ते कृष्णा वल्लभा भो ममगुणिसुहृदो दीर्घमायुर्लभन्ताम् ॥ ३ ॥

येषां टीकाकिरण(किरणावलि)रविभासासमानं सदास्मिन्
किं तच्छास्त्रं भवति न मतं छात्रचित्ते निमग्नम्।
ज्ञात्वा शास्त्राण्यमितमुदितः शिष्यवर्गोऽतिधन्यो
ब्रूते "लब्धाः विमलगुरवो वल्लभाः पण्डितेन्द्राः" ॥ ४ ॥

श्रीकृष्णवल्लभाचार्या निजधर्मपरायणाः।
सम्प्रदायेऽद्वितीयास्ते जीवन्तु शरदां शतम् ॥ ५ ॥

अभिनन्दनमालायां स्नेहकेसरभूषितम्।
वासितं प्रेमगन्धेन स्थाप्यते भावनासुमम् ॥ ६ ॥

विद्वद्वरेण्य षड्दर्शनाचार्य पं० श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी भारत ना गण्या-गांठया समर्थ विद्वानों माना अेक छे, संस्कृत जगत ना प्रखर तेजस्वी सूर्य छे, गुजरात नुं भूषण छे अने श्रीस्वामिनारायण संप्रदाय ना शिरोमणि छे। आ संप्रदाय मां स्वामी श्रीसहजानंद थी मांडी ने आज सुधी मां आवा विद्वान कोइ थया नथी भने भविष्य मां थसे के नहीं ते अनिश्चित छे।

ते ओ श्री नां पांडित्य नो जेमणे-जेमणे अनुभव कर्यो छे तेओ प्रभावित थया विना रह्या नथी। पछी ते प्राचीन पद्धति ना उपासक होय के नवीन पद्धति ना उपासक होय ! तेमनां ज्ञान थी जेटलो संतोष संस्कृत ना पंडितो ने थाय छे तेटलोज़ कौलेज़ो ना प्रोफेसरों ने पण थाय छे।

आवा महान् विद्योपासक शारदा कृपा पात्र साक्षर रत्न नुं जेटलुं सन्मान ते ओछुज़ छे। आवी विभूतिओ संप्रदाय मां रेहवा छतां क्षुद्र वंध नो थी पर होय छे अने कदाच संप्रदाय नां माणसो जाणतां होय छे, ते थी विशेष जगत ना माणसो तेओ ने जाणता होय छे।

आवी आ विद्वत विभूति ने परमेश्वर खूब चिरायु बनावे अने तेओ पोताना ज्ञान निधि मां थी अनेक जिज्ञासुओ ने प्रकाशदान करता रहे तेवी हार्दिक शुभकामना साथे ईश्वर ने प्रार्थु छुं।

श्रीकृष्णवल्लभाचार्यशास्त्रीजी

कुंकावाव निवासी श्री अेम. बी. शाह

जन्म समय ५।३४, जन्म कुंका वाव २२।११।१०, १९०५

कन्यालग्न,

नीच अवस्था नो शुक्र,

नक्षत्राधिपती चन्द्र

शनि ना सान्निध्य मां चन्द्र शनि ना विषयोगे नक्कर साधुता आपी छे। अने तेज विषयोग गुरू नी दृष्टि ना कारणे अमृत योग बन्यो छे, शरीर सारू प्रण वायु धुनि (स्वतन्त्र) प्रकृति पोतानी रीते चालनार विचक्षण पंडितत्व शरीर सुख आयु: विसे ९३ वर्ष ना गड़ाय छे। वीजा स्थान मा सूर्य ने बुद्ध बैठा छे, आ सूर्य परम नीच त्व ने पामेलो होवा थी पोताना कुटुम्ब सहयोग देहवा देतो नथी, बली आज सूर्य मंगल ना नक्षत्र मा रहेलो होवा थी, तीक्ष्णस्वभाव रखावे छे, ए ज कारणे स्वमानस ऊपर कोइ चोट लागे त्यारे पोतानो धारेलो करवा माटे आसमान, पाताल एक करी सतत प्रयास करे छे, बली तेज सूर्य पोते पीतानाज़ पेटा नक्षत्र मा होवा थी हमेशा विजयो बनावे छे। आ सूर्य बुद्ध ना कारणे प्रखर लेखन शक्ति आपी छे, महत्ता आपी छे। आ लेखन द्वारा धार्युं होय तो उपार्जन करी सकाय, कमिशन रोयल्टी वगैरह पड़े, घणु द्रव्योपार्जन थाय, ते द्वारा धणी सिद्धी नाम ना कमावाय छे।

बीजु स्थान धन भुवन नाणा संचय वृत नत्थी, वीजु स्थान कुटुम्ब भवन अंगे खोराक ऊपर सम्पूर्ण संयम, छता आ सूर्य पाचन शक्ति विशेष आपे छे, तीजू स्थान भांड्ओ अने पराक्रम भवन तीजा स्थान नो मालीक गुरू पोते राहू अने शनि ना केन्द्र योग मा होवाथी भांड्ओ होवा छता अ सम्बन्ध रहे छे, एका की पणु थाय छे मंगल पोते नीचे ना शुक्र ना केन्द्र मां होवा थी शनि नी घातक दृष्टि वणे जोवायेलो होवा थीं भांड्ओं ना सुख नत्थी, गुरू नी सम्पूर्ण दृष्टि बड़े स्वयं पोते सुखी बने भांडू स्थान ऊपर गुरू नी दृष्टीयें स्व पराक्रमी बनावे। उतकष्ट निष्टा आपे, जीवन्त शक्ति आपे।

चौथा स्थान नो मालीक गुरू पोते शनि राहू ना केन्द्र मा होवा. थी माता पिता नू सुख नत्थी, अन्त सुती सून्य थाय, सरवाले अनुभवो बड़े, दिव्य शक्ति मा वधे छे। नक्षत्राधिपती शुक्र नीचे नो होवा थी संसार तरफ अवृत्ति, मालीक गरू पोते चन्द्र ना नक्षत्र मा होवा थी अने चन्द्र पोते गुरू ना नक्षत्र मा होवा थी, गुरू चन्द्र नू परिवर्तन (नक्षत्र) योग बन्यो छे, ते ऊच बीचार अध्यात्मीक सरल तरफ दोरे छे, चन्द्र ने गुरू मन ने हृदय सूर्य आत्मा नू चन्द्र मिलन बड़े जन्म निश्चीत छेलो फेरो गड़ाय। चन्द्र गुरू ना कारणे इस्वर शक्ति, विकास, तेमा मंगले महत्व, अग्र शक्ति देव द्वारा सहाय अथवा देव प्रेरणा छे, मंगल अन्दर थी, गरम राखे, चन्द्र, गुरू नक्षत्र परिवर्तन बड़े, ठंडक राखे छे।

पांचमो, अधिपति शनि छे, राहू थी जोवाएल छे, सुखेस गुरू भाग्य मा छे, वतन मा माता, पिता ने न मळाय, नान पड़ मा सक्त परिश्रम वेठयो, मोशाल पण निर्जीव, मध्यम कठोर होय, पोताने जमीनों बड़े, लेहणु जागे।

छठो, शनि, विजयी सरदार गड़ाय, ते परिश्रम आपे, रहेला सूर्य बुद्ध अने शनि केतु ना त्रिकोण ऊपरान्त चन्द्र ने प्यून अने प्यून अने मध्य विन्दू ना त्रिकोणे वाणी मा धारा सिद्ध रहै, उपदेश भरी तत्व सोधन सिद्धियों मले, सूर्य बुद्ध सिद्ध भाषी छे। आ बुद्ध पोते चन्द्र अने शनि ना त्रिकोण होवा थी विचाय छता काबू जरूर पुरतुज वचन न फरनार एवा आग्रह वाल।

सातम् , अधिपती गुरू छे, शुक्र ना शत्रु क्षेत्री वनी, भाग्य मा वेठा छे। तेणे सन्यास सिद्धि आपी, आ गुरू राहू ना पेटा नक्षत्र मा होवा थी, सन्यस्त नी सरूआत अथवा स्वगुरू नो कड़क स्वभाव सहन करवो पड्यो। आज धिपती गुरू, राहू, शनि ना सुर मा होवा थी नैष्ठीक, ब्रह्मचारी, कठोर तपस्या निर्वासन।

आठमा, आधिपती मंगल चौथे बराबर चोपन वर्ष सुदी १९५९ सुदी जपी ने वेठा नत्थी, जीवन माटे जे जे भेलववा यत्न कर्या, ते मलया, आज मंगल ७६ वर्ष मा धणो मोटो साथ आपसे। गुजरात नी नाम ना कर्त्ता जगत मा नाम ना आपसे, जगत विश्वव्यापी प्रसिद्धी मलसे, जीव ने प्रसिद्धी जोइती नत्थी, मानव कल्याणार्थ नकल संदेश आपसे नवा लेखन मा प्रयास थसे, भाग्याधिपती, शुक्र, जन्मलग्न मा होवा थी हमेश ऊलटी दिशा ए चाली, वाद वदे तत्वनिर्णय, सत्य कड़वा अने हरिफ़ ने तेना न्याय बड़े, मांग करवा नी आवड़क वधारे छे।

दसमा स्थान मा विक्रय बुद्ध पोते धन भूवन मा होवा थी ते बुद्ध राहू ना नक्षत्र मा होवा थी कुटुम्ब धन थी अलग थया छता शिष्यो मा अपेक्षा भाग्याधिपती शुक्र शक्ति, सरस्वती आपे, गुरू ते भ्रम ज्ञान आपे, दसमें रहलो चन्द्र तिर्मल ख्याती आपसे लाभ भूवन नौ विक्र चन्द्र स्वस्थान वार मा आवी ने गादी स्थान मा वेठयो, ते थी ऊँचु आसन आपी रह्यो छे, ते स्वीकार मा भलवुं कि केम ते स्वालम्भी छे, ७७ वर्ष पछी एकाकी थइ जासो, व्ययस्थान नो मालीक सुर्य धन भूवन मा छे, ९२-९३ वर्षे शरीर कष्ट आपे, तेज वर्ष मा सूर्य, मंगल अष्टमेस अने व्ययेस थयोहोवा थी सूर्य नीचे नो होवा थी, मंगल ना नक्षत्र मा होवा थी, हृदय मा तकलीफ ऊभो करे, कष्ट साध्य, मृत्यु नत्थी। सूर्य मंगल ओत प्रोत होवा थी स्वेच्छया प्रयास बढ़े, संयम बढ़े, सामाधि थान, जीवन मा सातवां १९७६ ना जान्यु आरी थो आत्मा मा उत्कृष्ण कार्य वृति बड़े सिद्धी, १९७७ ना अक्टूबर पड़ेला मले।

१९७७ समस्त वर्ष प्रखर कामगिरी नू समयपण भूली जवाय।

१९७८ अक्टूबर थी १९७९ अगस्त सुधी सुभय वर्ष आवे समया प्राप्त नो छे।

१९७९ थी ८० ना दिसम्बर सुधी १ धारो सुखमय।

१९८० ना दिसम्बर थी आ कुंडली मा मानव ख्यालों पूरा थया।

चन्द्र नी महादशा १८-१२-१९८० चन्द्र महादशा गुरू ना नक्षत्र मा परिअर्तन होवा थी, ब्रह्म-लीन महा दिक्षा स्थिती मा सर्व सिद्धी थाय, उपरांत परमेश्वर, स्वनिवास भूमि मा पोतामा वसे।

१९९० ना दिसम्बर शरीरे हानि नत्थी, आ दस रोज विश्वव्यापी बनावसे।

पछी १९९० ना दिसम्बर थी, १९९७ ना दिसम्बर मा पुरी थाय ते मा आवी ने नड़े, तेने आ काढ़वा सामनो करवो पड़े।

१९९७ ना दिसम्बर नी १८ मी देह रहेसे, पछि राहू नी महादशा शरू थाय, गुरू पोते बाधक बने, अने राहू वारमा स्थान मा शनि कड़ा स्थान मा होवा थी, कफ द्वारा राहू नी दशामां गुरे ना प्रत्यन्तर मा लीन थवाय।

१९९९ ना विषवी अगस्त सुधी नो गालो उपला वृत्तान्त मई हसे।

अगस्त करता, मइ ऊंच ना सूर्य मा शुक्ल मा नवमी पछी एकादशी पेहला तिथी आवे ते दिवसे गुरूवार होय तो, ए दिवस ब्रह्मलीन थवा नो यत्न करावे, सफल थवाय।

अभिनन्दन

शास्त्री शांतिलाल मटुलाल व्यास

जुनागढ़

श्री कृष्ण भगवाने आनर्तराजाने आपेला निजमणि द्वारा प्रकट थयेला सौराष्ट्र देशमां नरसिंह मेहता, जलारामबापा, महात्मागांधी, दयानन्दसरस्वती श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी आदि-आदि जगत् प्रसिद्ध विभूति पुरुषो प्रगट थता आव्या छे, तेओने जगत ना उद्धार माटे पोताना जीवन सन्त दशामां भक्तिवाली तपस्वी स्थिति मां ब्रह्मार्पण कर्या छे, आवा तारणहार भगवत्पुरुषो मां रहेला भगवान ना गुणों जगत मां प्रख्यात थया छे खे प्रभुना वेद शास्त्रो अने भक्तिना विद्वानो, अलौकिक देवताओ के ईश्वरो अवतरेला होय तेम जणाय छे प्रभुये कटोकटीनी स्थितियों मां जेमनी रक्षाओ करी छे तेवोये साधु सन्तनी सेवा द्वारा सन्तनी स्थिति मां वर्तीने देशनी जनताने धर्म, कर्तव्य, सद्गुण भक्ति, अभ्युदय अने निःश्रेयस आप्या छे देशमा सारा संस्कारो रेड़या छे, जनताने प्रभुमय बनावी छे, कर्तव्यो ना विकासो करया छे, जनताने सिद्धान्तो आप्या छे के जे सत्ताधीशोने पण ग्राह्य थई पडया छे अनेक ना कल्याण करनारा आवा महापुरुषो जरूर आवा युगमा भलू करनाराज नीवडया छे, देश-देशान्तरना जनोने घणु-घणु आपी गया छे अने आपी रह्या छे वर्तमान समयना राज्य नेतालोक पण भारत ने घणु-घणु आपी रह्या छे, आपता जाय छे अने आपशे.

धर्म, अर्थ, काम अने मोक्ष ए चार आपनारा सन्तपुरुषो देशीय जनतानु आ लोक अने परलोक माटे भलू करता जाय छे. सन्तोना गुणों-अद्रोह, उपकार, शुद्ध भावना, प्रसन्नता, सात्विकता, शीलव्रत, प्रभुदर्शन, उत्कृष्ट बुद्धि, विद्या, विनय, सन्तोष सहनशीलता, अक्लेश. विरागिता, विज्ञानिता, विवेक-शीलता, समदर्शिता. दानिता, साहाय्य प्रदता, आधारता, शरणागतरक्षिता, दया दक्षता, शम निग्रह उपरति तितिक्षा, निर्मानिता, विनीतता, सारल्य मित्रता, कापट्यरहितता, वाणीशुद्धि अविकारिता, निर्लिप्तता, मानप्रदातृता, दुःखहारिता, शुद्धि व्रतशीलता, स्वागतता, आस्तिकता इत्यादि श्रेष्ठ सद्गुणों द्वारा बधा नेताओ ए देशनु अने गामोनु कल्याण करेल छे.

आज सौराष्ट्र ना अहोभाग्य छे जेमा महापुरुष चमत्कारी विभूति, सुमूर्त धर्ममूर्ति, विद्यामूर्ति श्री कृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज परमपुरुष विद्यमान छे. जेमने पृथ्वीने खूणे-खूणे थी अभिनन्दनो मली रह्या छे. औदार्य प्रभाव, विद्या संरक्षण, पांडित्य उत्तरदायित्व, जनसेवा, गाम्भीर्य सन्तता आदि-आदि गुणों बड़े आप पोतानी प्रतिष्ठा द्वारा कुंकुमवापी तथा सौराष्ट्र नी प्रतिष्ठा वधारनारा छे. आवा सौराष्ट्रमां समाजबल, धर्ममां आस्था अन्नसत्र, अनाथरक्षण, सत्कारपरिपालन, संयम, मर्यादा भक्त जग्याओ आदिक चालू स्थिति मां पण देशनी विभूतिओ विद्यमान छे.

सौराष्ट्रनो प्रजा मां ब्राह्मणधर्म, अमद्यपानी, अमांसभक्षी, अनिवेदित-अग्राही, गुरुभक्ति विशेषरूपे घर-घर मां माणसे-माणसे देखाय छे. तेवा आ पावन देशमां शेत्रुंजो गिरनार आदिक महापवित्र पर्वतो रह्या छे. द्वारिकाओ वसेली छे. भगवानो वसेला छे. महातीर्थो रहेला छे. जंगमतीर्थरूप सन्तोनी जग्याओ स्थले-स्थले रहेली छे. आवुं सौराष्ट्र एक धाम स्वरूप रहेलुं छे. तेना बालको ब्रह्ममुक्त समान होयज.

मोटी कुंकावाचना बालक स्वामी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी बालपरणथीज योगिराज जेवा सुखदशान्ति वाला अकलेशी दैवीस्वरूप तेजस्वी हता भगवाननी मूर्ति पांसे बेसी ताली वगाडी भजन करता पांचमा वर्षथीज न्हाता, पूजा करता कथाकीर्तन सांभलता अने भणवा जता हता भणतरमां विद्यापाठ कंठस्थ करता, सारी रीते समझता, रमतमां ध्यान न देता छूटी मां गायो बाछड़ा चारवा जता बाड़ी खेतर जता रात वासो रहेता, सहन शक्ति राखता, कोई साथे कलेश न करता शान्तिमा रहेता पाणी पण वालता बधाई थी राव आवती नहीं बाड़ो खेतर सीममा क्यारेक एकला रहेता अने निर्भीक हता भजन करता माला जपता एकादशी आदि व्रतों करता हता आठमा वर्षना ज्येष्ठमा जूनागढ़ गुरुद्वारे दर्शनार्थे गया हता त्यारथी त्यागी स्थितिना विशेष संस्कारी थया हता मंदिरमा आवता जता सन्तदीक्षामां दाखल थया पूर्वथीज स्वमाताजीना भणवानी भळामणना वचन ने ध्यानमां राखी भणतर चालू राखता संस्कृत कथाओ, पारायणों वाचवा लाग्या मीठा स्वरने सांभली कथाओना अर्थोने स्पष्ट समझी सभासदो राजी थता हता, आशीर्वादो मलता हता जेतपूर, जूनागढ़, बडताल, वड़ोदरा अने काशी भणतर माटे गया त्यां-त्यां रह्या अने पोतानी सरस्वती शक्तिनो विकास करता गया संस्कृत काव्यो रचवा लाग्या, संस्कृत व्याख्यानो आपवा लाग्या संस्कृत भाष्यो अने संस्कृत दर्शन, तर्क, वेदान्त मीमांसा, सांख्ययोग वगैरे नी टीकाओ लखवा लाग्या तलस्पर्शी तत्वज्ञानमां नवीन-नवीन पदार्थो दर्शावी पंडितो ने आनन्द उपजाववा लाग्या अतितीव्र अभ्यास, स्निग्धमेधा तथा प्राग्भवीय विद्वत्ताना संस्कारो वडे प्राचीन नवीन परिष्कृत न्यायादि दर्शन शास्त्रोमां पारंगत धुरन्धर प्रकाण्ड पण्डित थया पृथ्वीभरमां प्रकाण्ड पण्डित वाला प्रख्यात थया हजारो ने भणाव्या भारतमांज जेम तेम अन्य देशोमां पण आ युगना धुरन्धर विद्वान पश्चिम काशीनी स्थिति टकावनारा सूर्यसमान देशना प्रकाशक थया वाल ब्रह्मचारी होवाथी एमना बधा सद्गुणों लोक हितकर वर्णव्या खुटे तेम नथी विख्याति पामेला स्वामीश्री ने पाछा पाडवा अनेक डोली ईर्ष्युकोए वावाझोडां उपजाव्या, खोटाईयो प्रेरी पण तेओ तेमनीज कपट मायामां ईर्ष्यामा बलतरामां दाझीने कोलसाज थई रहया श्री कृष्ण वल्लभाचार्यजीनो कीर्ति ने कोई पहोची शक्या नही श्री शास्त्रीजी महाराजे पोताने जोखमी करनारा व्यक्तियोंने पण संताडो ने तेमबा आततायीओ तेमनी रक्षा करी छे, तेमने नम्या छे अने जनताओ शरणागतरक्षक आपत्तिनाशक अधमोद्धारण परमपुरुष तरीके गाया छे, शास्त्रीजीने सर्वत्र प्रशंस्या छे.

मोटा शास्त्रीजी महाराजनु ध्येय छेटूं -आ मारो सम्प्रदाय अने सम्प्रदायनो हू छु, मारो सम्प्रदाय जगतभरमा प्रसिद्ध थाओ, दूनियामा मुमुक्षओ आ सम्प्रदायना पण प्राचीन अर्वाचीन तत्व ग्रहण करे, भक्ति करे अने अभ्युदय तथा मोक्ष मेलवे पांच तत्वोने पवित्र हृदयमा समझे आवो सार्वभौम सिद्धान्त समझावबा अेकज महासागर जेवु तान छे. जेने कोई हकावी फगावी सूकावी शके नहि लेखन कार्य तो सतत चालूज रहे छे. संस्कृत, गुजराती, हिन्दी आदिमां घणा तात्विक सिद्धान्त लख्या ग्रन्थो लख्या अने हजु पण लखताज जाय छे लखती वखदे कोई पण आवे तेमने ध्यान मा लेता जाय, हसमुखे बोलावता जाय देशी परदेशी दर्शनार्थी जनोनी संभाल लेता जाय अने लेखन कार्यपण शतावधानी नी पेठे चालू राखताज जाय, नेत्रो सेवको तरफ होय अने मगज तथा कलम बराबर सीधी पक्ति मां लखाण करती जाय, आ आश्चर्यो तो घड़ी वार जोअेला छे। श्लोको पद्यो अकाट्य गोठवाता जाय महाकवित्वे बराबर उपयोग मा लेता जाय अे पण साक्षात संपूर्ण जोअेल छे, शंका समाधानभर्या तार्किक जवाबो नुरतज आपता जाय, आधिभौतिक आधिदैविक दुःखिया आवेला ना दुःखो भगवत्सस्मरणपूर्वक टाणवाना ऊकेल

करता जाय, लोको वचन सिध्धि फल ने मेलवता जाय सुखिया थाय, आवा चमत्कारो तो हजारो जेवामां आवे छे, मलिन देवताई, छायावालाओना डाकिनी शाकिनी योगिनी वेतालणी भूत प्रेत आदिक ना उपद्रवो ने तो तुरतज स्वप्रताप दैवी शक्ति बड़े नाश करवा ना हजारो दाखलाओ प्रख्यात छे, पितृओना ऊध्धार भाटे श्राध्ध महा नारायण बलि आदि करावववा आज्ञा आपता जाय, आवा चमत्कारो होवा नु कारण परमेश्वर नी सतत ऊपासना हृदय शुध्धि ज्ञान शुध्धि निर्दोषता, तथा जेणे करी धर्म पुण्य सात्त्विकता नाश थाय तेवा संग प्रसंग विस्मयता न करवा मां खवडदारी थी वर्तता जोया छे; कोइ प्रकार नी लालच लोभ वृत्ति वडे क्याइ पण पराभूत थया न थी, वसुधाने कुटुम्ब मानी ने सर्व शरीरी समानबृत्ति वडे वरते छे, भगवान ना लाखो नाम गायत्री जप माला जप-भजन सतत चालूज राखे छे।

शास्त्रार्थ चिन्तन भगवद्भजन विश्रान्ति मिश्रित शरीर संभालमय संभाळज प्रवृत्तिओ भर्यु जीवन वीतावे छे, योगिजनो नी माफक उदयास्त पर्यन्त स्वासने विराजमान अने समय-समय पर देवदर्शन पूजन भजत सत्संग कीर्तन इत्यादि नियम मा वर्ते छे आबी प्रत्यक्ष प्रभु मूर्ति ना स्मारक आज आपणा देश मां अभिनन्दनो आवी रह्या छे ते आपणे माटे अति गौरव नी वात छे, आवा अवतारी पुरूषो जरुर प्रकट थता रहो तथा जन कल्याण करता रहो अेवुं मागीअे, प्रकाण्ड विद्वान स्वामी श्री ना जेओ-जेओ विद्याभ्यासो सत्संगाभ्यासी थया तेओ पण भारत नी विभूति रूप थया छे। नैष्ठिकता साधुता चरित्र पवित्रता गुण गरिमता देवार्चन भक्ति श्रध्धा विगेरे महापुरूषो ना समान तेमना शिष्य मंडल मां पण छे, श्री हरि शरण मंडल आज धर्म ज्ञान वैराग्य भक्ति मां सर्वोपरि वर्ते छे, श्री स्वामी जी अे भणावेला घणा शास्त्री ओ आचार्यो पण्डितो पण भूमि मां आभूषण स्वर्ग ना देवो जेवा वर्ते छे। पूज्य स्वामी जी महाराज ने तेमना गुरूवर्यो ना अति हर्ष भर्या केवा-केवा आशीर्वादो छे ते जोइ वांची ने अेम थाय छे के आ जरूर कोइ दैवी विभूति इश्वरीय अंश छे, जेमां सदगुरू विद्यागुरूओ पूर्ण छलकी ने उभराइने आशिषो दे छे, थकावट नो दाखलो तेमनी पासे नथी। चोवीस तत्त्वो पोत पोताना रोगी निरोगी काममा होय तो पण आत्मीय काम बौध्धिक काम लेखन काम व्याख्यान काम आदिक ज्वर शरदी विगेरे अस्वास्थ्य मा पण कर्या करताज जोया छे, पोते जे द्वन्द्वो ने आत्म भिन्न तत्त्वों मा ज रहेवा दइ ने गणकारता नथी, आवा ब्रह्मदशा ना दाखलाओ साथे घणी वार अनुभवाया छे, शत्रु तरफ शत्रुता नहि अवरोधक सामे निरोधकता नहीं नुकशानी करनार सामे अफशोश नहीं गेरलाभ सामे उद्वेग नहीं आ बाबतो तो सदा जोवा मां आवे छे, बालक विगेरे ने अेम नी सामे काई भय नहीं क्रूरता नही, कठोरता वाणी नही; प्रायः मौनम् संकल्प विराम नो अभ्यास इत्यादि तो पराकाष्ठीय गुणो वर्तछे।

केटलाके अेमना ग्रंथों मा धूड़ नारवी पण ते ग्रंथो पूनम नी चन्द्रिका नी पेठे निर्मल शीतल प्रकाश करनाराज फेलाया छे, जे ने भणी ने हजारो पंडितो थया छे, पोते ज ग्रन्थो लखी प्रेस कोपीओ करी सम्पादीत करी पोतेज संशोधित करी ने मुद्रित मुद्रापित करावववा मां जरा पण आलस जणावता नथी। आपे सूत्रो लख्या भाष्यो लख्या, टीकाओ लखी, मूल ग्रन्थो लख्या अनेक विषयो लख्या, तथा अनेक आकांक्षितो ने तेमनी मरजी मुजब लखो आप्या, तो पण पोते तेनो गर्व राखता नथी। निगूढ विषयो ने स्पष्ट करी आपी देता, ते केम जाणे पोताना हाथ नो अथवा अन्तःकरण नो जादू मन्त्र होय तेम तुरत ज रचना करी ने आपे के, पूर्वजन्माभ्यास दृढ चिरन्तन संस्कार अने नूतन जन्म मा गुरूओ ना अशीर्वादो श्री कृष्णवल्लभाचार्य जी स्वामी जी मां मूर्तिमान प्रकट देखाता होय तेम साक्षी कवुने छे, पोतानी मुलाकात माटे तो रात्रि दिवस पोतानुं आसन अने प्रवेश मार्ग खुल्लाज रहे छे, निद्रा मां पण ते खूल्लाज

रहे छे, कोई कांइ ऊणाड़ी जाय तो तेनो अफशोश करता नथी। तमाम प्रणाली मुजब धार्मिष्ठजनो ने प्रवेश माटे रोक टोक नथी। काई सूचनाओ मोकलवी पड़ती नथी, आपनी अलौकिक कान्ति मा दर्शक लोको ने तृप्ति मले छे, ऊंघ न आवनार माणास ने वधारे निद्रा, शान्ति मली जाय छे, आवुं दिव्य सात्त्विक निरूपद्रवी वातावरण शीतलता अपनारूं छे, आडम्बर बीलकूल नही, सरल पणुं गुण समुदाय छे आदि-आदि तेमनी परम पुरुषता दाखवे छे।

आशीर्वादो आपे छे, श्री शास्त्री जी सत्कर्म विज्ञान अने भक्ति मां बराबर स्नातक छे, शरीर माटे जगत मा कोई पण, प्रकार नी तृष्णा थवा देता नथी, जे भारतीय दिव्य महारत्न होवा छतां सादू जीवन गाले छे, जाजी मोटी ऊपाधिओ विशाल मोटी सत्ताओ ने जंजाल रूप मां प्रसरती होवा थी अद्यापि पर्यन्त इच्छता नथी, कर्म निष्ठता विमर्श कुशलता दीर्घ दर्शिता अमनस्विता द्वन्द्वक्षमता मित मधुर भाषिता सफल समयोपयोगिता आदिक सदगुणो तो श्री शास्त्री जी महाराज मां आश्चर्य ऊपजावनारा नजरे पड़े छे। अेम्. अे. पर्यन्त आंग्ल भाषा नुं अध्ययन करेल छे तो पण दुर्गुणी डाघ पोता मां पेसवा दीधेल नथी, अभिमान आववा दीधुं नथी, संस्कृत रचनाओ मां अंग्रेजी डखलगोरी थी पोते दूरज रहेवा मा श्रेयः माने छे, अंग्रेजी नू काम स्व ऊपयोग पूरतुंज ल्ये छे, आवी मोटी प्रतिष्ठा पावन कीर्ति पूर्वजन्मीय आवेलौ होइ तेनी विशेष वृध्धि करनारां आज विरुद्ध धुरन्धरो ना अभिनन्दनो सफल थया छे कार्यारंभ, तथा कार्य समाप्ति ना दाखलाओ पोतानुं भणतर ग्रन्थलेखन दिक्षा निभाव साधु स्थिति अेक रेणी कहेणी आदिक आजीवन ना दाखलाओ श्री स्वामी जी मा विशेष प्रकाश करी रहया छे, पोतानुं दिवस नुं अध्ययनादि कर्तव्य पुरूं करी गुरू देवो ने सन्तोष आपी पछी तृप्तिप्रद भोजन लेवुं अेवा तो अनेक दाखलाओ विद्यमान गुरूवर्योद्वारा जाणवा मले छे, काले करीशुं अेवुं आलस्य तेमनी पासे आवतुज नथी, कोई अशक्ति जणावे तेमने पोते अेटलूंज कहे छे—"मारी सततं कर्म शीलता ने संभारी काम करो, ते वडे तमो विजय मेळवशो"।

मनुष्यो अे पोतानु जीवन केवी रीते निभाववुं क्या प्रकारे सदुपयोग करवो—अे शीखी लेवा शास्त्री जी मूर्तिमान आदर्श रूप छे, आवा पोताना दृष्टान्त रूप कार्यो द्वारा हिन्दू भारतीय संस्कृत विद्या नी ऊपस्थिती ज्यां-ज्यां छे त्यां-त्यां दार्शनिक तात्त्विक वैज्ञानिक शास्त्रों द्वारा आपनो कीर्ति अमर छे। श्रेष्ठ गुणो तो वारे-वारे देख्यो छे के—स्वसमीप आवेला विद्वान ने जरापण पराभव न करवा अनुसन्धान राखे छे, शास्त्रार्थो मा कुशल छे तथापि तेवी छेडणी स्वयं क्यांइ करता न थी, अने तेवुं करनार ने सु प्रसन्न चित्त रहेवा ध्यान आपी प्रति विवेचन स्पष्टता वड़े जीज्ञासा शान्ति ना स्वरूप मा विजय आपे छे, देश परदेशो मां थी आवता पत्रो ना जवावो तुरन्त आपी पोष्ट पत्र रवाना प्रतिदिन लोको ने सुखिया थवा ना चमत्कारो जोया छे, आवती नुकशानी करती वृष्टि ओ हठी जवी इत्यादि दाखलाओ स्थले-स्थले छे आवा संत पुरूष योगीराज वर्णी समिपे आवेला यात्रिओ जरूर आध्यात्मीक कइक शान्ती, ज्ञान, विज्ञान भक्ति लइ ने जाय छे। आप नु जीवन विश्व ना कल्याण ने माटे छे निर्मल हृदय वाला जनसमूह नी माफक अन्य समुदाय पण साक्षि द्वारा श्री स्वामी जी महाराज ने परम पवित्र पुरूष समझे छे। दर्शनार्थी तथा सह निवासी तमाम जनो सप्रेम सदंडवत प्रणाम करे छे। पुष्पहार चन्दन, आदि पूजे छे, तेओ ने जरूर इश्वर मूर्ति नी पूजा समान लाभ थाय छे, पण स्वामी श्री तो मूर्ति समान अचचंण अविचलजब्रह्म स्थिती मा सम वृत्तिज वरते छे। काशी जी मा क्वीन्स कालेज मा अभ्यास वडे आचार्य बिरूद वाळा थया, प्रथम विभाग मां पण प्रथम नम्बर मा पास थया, जे थी वधारे न्याय तर्कादि पाण्डित्य मा प्रतिष्ठित थया

भणावया मां लिटरेचर फिलोसोफर आदि-आदि मां शिक्षण प्रशिक्षण मां अग्र्य पद प्राप्त करवा लाग्या। आ सर्व विद्या वैभवी जीवनी वर्णवो।

महायोगी संत स्थिती मा अनेक स्थलोमां श्री स्वामी जी ना दर्शन वाक् सिद्धिफल मानता द्वारा दुःख नाश इस्ट सिद्धी आदिक चमत्करो प्रसिद्ध छे, वर्तमान समय मां पण तेवाज चमत्कारो चालू छे, जे थी प्रागभवीय कोइ ईश व्यक्ति आव्या होय तेम जणाय छे, जेम नी वर्तमान स्थिती मां मूर्ति प्रतिष्ठा राज जनता तरफ थी, वैदिक विधी द्वारा करवा मा आवी, ते भूमि अत्यारे तीर्थ रूप थइ छे, आ तमाम यश भोटी कुंकावाव ने सौराष्ट्र देश ने अने तेमनी खतीली जनता ने छे। जीवन भर ना चमत्कारो असंख्य व्यक्तिओ मां साक्षात गुंजी रहेला छे। प्रकाश मां आवता जाय छे। विद्वानो ना अभिनन्दनो पण चमत्कारो ने गणत्री मां लिये छे।

आपे प्रथमा अवस्था मां भणेला ग्रथों सतत जीवन मा अभ्यस्त राखेला आज वार्धक्य मां पण कंठस्थ रसनाग्र नर्तनवत वरते छे, आप नी महतता, गुरूता श्रेष्ठता, विद्वता, योगिता, संयम मितता, विगेरे प्राग भवीय छे। तर्क न्याय वेदान्त काव्य सांख्य योग आगम निगम आदिक शास्त्रो ना धुरन्धर विद्वानो नी कृपाओना किरणो आवा सन्त पुरूषो मां विराजेल छे जे तेमनी महत्ता ना अपनारा वरते छे आवी महत्ता होवा छता संत स्थति ना स्वरूप वडे ए महान होय तेवा लागे छे, सादाई भरेला ठाट माठ बिना ना अविद्वान सधारण मानव समान देखाय छे, एमनो कान्ति तो दैवी पुरुष समान तथा शारिर चीन्हादि जोंइ ने परम पुरूष ना संदेह मा पडी जवाय छे विद्या छुपी रहेती नपी, वाणी मा अर्थो मा तत्व ज्ञत्व मा विद्वता बतावी दे छे मुनी जन मंडित नीः स्पृह सु शान्त आत्मज स्थिती प्रज्ञ आत्मज ब्रह्म विमर्श ब्रह्मपरायणता, सुमेधा चमत्कार पदमासने बेसवुं घोघाटं मा पण एकाग्रता मा रहेनु मोटा-मोटा प्रोशेसनो फुलेकाओ वर घोड़ाओ मा पण एकाग्र वरति लक्षवेधी वेसी रेहवु शेहरो मा महा प्रोशेसनो मा नासिकाग्र-वृत्ति मा बेसवु इत्यादी स्थिती योगी समानता नू भान करावे छे, जीवन नी अभ्युदय ने निः श्रेयसनी पराकाण्ठा मा पहोचेला आ सन्त पुरूष मालूम पड़े छे, आप विद्वान स्वामी जी राजाकीय वुद्धि वालाओ नी परम्परा मा जन्म पामेला होवा थी राजकिय कुशलता वाला न्याय भरी वाणि वाला अदभूत लेखक कुशल तत्व निर्णय वुद्धि वाला सभाओ मिटींगों विमर्शणी समितीओ विराट सभाओ आदि मा धर्माचार्यो समान प्रख्यात पुरूष थया छे, अलौकिक मेधा प्रतिभा तर्क शक्ति निर्णयात्मक फल प्रताप भर्या वैभवी कर्त्तव्य परायणताओ वडे बधा प्रकार ना गौरव भरया आज विद्यमान छे जेमनी गुण राशि ने कोण गणी सके।

आ तमाम सभाओ मां अग्रपद शोभावे छे। आप भारत मा सर्वत्र विचरया छे, स्वं स्थलो मा महा विद्वान तरिके वखड़ाई रहया छे, आपे अनेक पुस्तकों वाची, उत्तम भाषा ग्रंथो पण लख्या छे, आप शास्त्र व्यवसनी शास्त्र चीन्तन परायण जनता प्रियकर धीमान मलतीया स्वभाव वाला अेक तपस्वी, तेजस्वी, संयमी, संत, माननिय प्रातःस्मरणिय, पाप, प्रज्वालक, शरणप्रदायक, सत्पुरुष छे। आपे ज्यां-ज्यां परायणो वाच्या, सेवाओ माटे विचारता त्यां-त्यां सर्वत्र वृष्टिओ सु वर्ष पाकवा तथा आदिकवि विद्वानों नी भूमि समान आ कुमकुम वापी वाली सौराष्ट्र भूमी विद्याओ बड़े गूजी उठे अेवा दर्शन करावे छे, प्रथम श्रेणी ना दिगन्त किरती विद्वानो भारत मा थोड़ी संख्या मा गण्या ठया छे। ते माइला ये महान प्रकाण्ड सर्व सास्त्रो ना निष्णात, विद्वान, श्री कृष्ण वल्लभाचार्य जी आ कुंकुम वापी भूमि मां प्रगट थया छे। एमनुं पांडित्य हरएक शास्त्रो मां वेजोड़ छे। अगाध्य व्यापक छे, कठिन मा कठीन दर्शन शास्त्रो ना

विमर्शो ना उकेलो आपता शास्त्रो श्री स्वामी जी महाराजे विशद कही करी ने अभ्यासोमाटे विद्वानो ने अर्पित करया छे।

शास्त्री स्वामी जी महाराजे तमाम संस्कृत शास्त्रो ना विशद विवेचनो करी विद्वानो मां घणी किरती मेणवीं छे, आ समय मां जेवी जरूरीयात छे तेवा ने तेवा अभ्यास ग्रथों रची, भारतिय विद्याओ मां पुष्टि करी छे, ज्ञान धन कमावबु अने तेनु दान आपबु ते मोक्ष स्थिती ने मदत करनारू पु० स्वामी जी ए करी बताव्यु छे। सौराष्ट्र ना धन्य भाग्य छे। काशी मूर्तिमान् जे विद्वान मां बसी छे तेवा विद्वान आ भूमि मां विराजे छे। आज कुंकावाव पृथ्वी ना तमाम भागो मां द्विपो मां विद्यालय मां प्रसिद्ध थइ रहेल छे। सौराष्ट्र मां मध्य वरती २५० माइलो ना वर्तुल प्रदेशो मां भारतिय संस्कार भरेला शास्त्रो ना विद्यालयो थवा लागे ए इच्छनिय छे, सौराष्ट्र पश्चिम काशी नामे प्रख्यात छे। आवा महा विद्वानो द्वारा पश्चिम काशी जीवती रहे छे। आ युग मां ज्यां आवा महा विद्वानो होय त्यां ते पश्चिम काशी रूप छे। आ धुरन्धर विद्वानो ना अभिनन्दनो वड़े समग्र पृथ्वी मां परिचय काशी नी कृति गूंजी रही छे।

महा पुरूष बालक नी पेठे निर्मल अत: करण थी रहे छे, संसारियो ना कल्याण करता जाय छे। संसारियो ने निर्मलता सोंपता जाय छे, अनेक महा निर्मल पुरूषो ने प्रकट करता जाय छे, आ भारत भूमि आवा पुरूषो ने माटे सदा प्रंसन्न छे। आरीते भारत माता सदा नर नारीओ ऊपर प्रसन्न रेहजो। आ जीवनी अनुभुत करेली, ते अर्थात् लखनार, शान्तिलाल शास्त्री जी, मारू नगर, बमसरा, भायाणी शहेर।

आ जन्म मां तो केवल निमित्तो द्वारा वृद्धि पामे छे। आप शरिर तन्दुरूस्ती मां स्वयं पोताना वैद्यवर्य छे, मिताहार, पथ्याहार विगेरे-मां घणाज संयमीत छे, जीवन मां पोते परांधिन थया होय तेवा अस्वास्थ्य ने देखेलज नत्थी। आपने चालता कलिकाल ना दूषणों नो ससर्ग पण थयो नत्थी। सौराष्ट्र नी पावन तीर्थ भूमि मां धर्म चूस्त भक्तिवाली प्रजा ना केन्द्रो थता आव्या छे, अनेक संत महात्माओ, कविओ, चारणो, विप्रो, चमत्कारी बापुओ, आचार्यों, सति, साधवीओ थता आव्या छे। लिम्वा पटेल देवाणी गोकुल बापा भगत, दामोदर बापा सतसंगो, वैष्णव सेठ २५७-दाने श्री श्रेष्टीवर्यो सदाव्रती पुरूषो, परोपकारी जनहितकारी प्रसिद्ध पुरुषो थता आव्या छे।

आ कुंकुमवापी भूमि मां रूकमांगद राजा लक्ष्मी जी नारायण विगेरे ना विचरणो थया छे। श्री लोमश रूषि, बक डालव रूषि, इन्द्रद्युम्न राजा, विश्वकर्मा, इन्द्रदेव, प्रजापतिओ, देवताओ आहीं तीर्थ करी गया छे, आजे शंकराचार्यजी, श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी, तथा सन्तो, महान्तो, इश्वरमूर्ति, आचार्यो पण आ भूमि मां पधारी तीर्थोत्तम बनावे छे, आवा देशो मां धार्मिक संस्थाओ नी विशेष सेवाओ करी रह्या छे, आवा आचार्य श्री ओ ना चरणो मां लक्ष्मी जी नम्र थयां थका सेवा मागे छे. आवा आचार्यो पोताना दर्शनो वड़े लोको ने चमकावे छे, आकर्षित करे छे, आदर करे छे अने प्रतिष्ठा वधारे छे, संस्कृत विगेरे ना महाविद्यालयो माटे आप नी आ भूमि ने आशीर्वादो आपे छे, कुंकुमवापी नगरी ने सौराष्ट्र नगर विद्या केन्द्र, व्यापार केन्द्र, राज केन्द्र थवा आशीर्वादी आपे छे, महा तीर्थ हो देव वाणी ना ऊपासको हजारो विप्रवर्यो विद्वानो आशीर्वादो वडे त्रिलोकी ने गजावी रह्या छे, सनातन संस्कार माटे सम्बोधी रह्या छे, व्याख्याता विद्वानो आ भूमि ने मेरू शीखर नी समान उर्ध्वपद बनावी रह्या छे। आपना केलवणी मंडल, पारायण मंडल, संस्कार भवन मंडल, किरतन मंडल, आदिक तमो आज प्रभु ने साक्षात् बोलावी रह्या छे, अने किल्लोल करी रह्या छे, मीथिला नगरी, नालन्दा नगरी, नदिया शान्ति, पुण्यपतन, भूतपुरी काशी नौतमपुरी, मोटी कुंकावाव ना दक्षिण दिशा ना विशाल क्षेत्र मां अेक योजन दूर छे। मारा पिता

श्री मटुलाल, त्रिक्रमलाल भाइ व्यास कवि तथा ज्योतिषी, तथा संस्कृत विद्वान, भागवत पारायण वांचनारा हता, सौराष्ट्र ना गामो मां पारायणो, महोत्सवो, यजमानो ना सुभ प्रसंगो विगेरे मां जता, हूं पण जतो कुंकावाव ना कुटुम्बो नो मने घड़ो परिचय छे, रेलवे जंकशन कुंकावाव होवा थी घणी वार व्याह करावबा नो प्रसंग थतो, पंडित वर्य श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी महाराज ना बालपण ना भक्तिमय वृत्तान्तो घणा मने याद छे। पछि पोते दिक्षा लइ काशी अभ्यास करवा गया, हूं पण त्यारे काशी ज्योत्सी शास्त्र ना विशेष अभ्यास माटे गयो हतो। भागवत ना पारायणो ते वखते पण वांचतो हतो। श्री शास्त्री जी स्वामी पासे थी, दशम, एकादश, द्वादश, अवगत कर्या हता। काशी जी मां शास्त्री जी स्वामी अे शास्त्रो ना पांडित्य नो सारो नाम ना मेलवी प्रकाण्ड पंडित थया, ते बावत नो हुं पूर्ण सहवासी छूं। अभ्यास कर्या पछी (२५८)

६

जामनगर, राजकोट, अने जुनागढ़ मां विराजेला छे, हूं पण मारा कुटुम्ब सहित जुनागढ़ मां तीस एक वर्षो थी रहेवा आवेल छूं, मंदिर नी छाया मां रहू छूं। श्री शास्त्री स्वामी जी साथे केटलेक स्थले भागवत पारायणो वांच्या छे। जामनगर मा पण भागवत पारायण साथेज वांच्या छे। बीजा नगर शहेर के गामों मां ज्यां-ज्यां यज्ञ याग महोत्सव, होम, हवन, मूर्ति प्रतिष्ठा विगेरे महोत्सव होय त्यारे यज्ञ ना आचार्य तरीके हुं शान्तिलाल व्यास, यज्ञ कार्य करू, करावुं छु। अने प्रतापी, चमत्कारी, पावन संत पुरूष भजनानन्दी, भक्ती भरपुर, एवा सदगुरू शास्त्री जी श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी स्वामी जी महाराज ने यजमान जनता अे बोलाव्या, आमन्त्रया होय छे, ते ओ पधारे छे, पचीस पचास सौ, जेटला साधुओ शास्त्रीओ, पुराणीओ, वक्ताओ, मंडलधारीओ, किरतनीआओ, विगेरे-विगेरे पण साथेज होय छे, वाजते-गाजते महान विशाल दीर्घ प्रोशेसनो मां सन्मात्र थया जोया छे। अक्षत, चन्दन, पुष्प, कुमकुम आदि वेद भगवन मूर्ति नी पेठे वधावेला जोया छे। जयकार ना नादो सांभल्या छे। ऊँचे आसन मां पधारी मूर्ति ना अंगन्यास प्राणप्रतिष्ठा आत्मजीवावाहन चक्षुः सलाका अंजन आदि-आदि श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ने हस्ते कराव्या छे। देव नी आरतीओ ऊतरावी छे। महामहोत्सव कर्या छे, होम, हवन कराव्या छे, यज्ञ-मंडप मां विद्वान विप्रो नी अने जनता नी हाजीरी मां संस्कृत ना धारा बंधी प्रवचनों सांल्या छे। पंडित जी ना पांडित्य अने संत धर्म तथा आध्यात्मीक योग ना प्रतापे लाखो माणसो श्रीकृष्णवल्लाचार्यजी नी पाछल खेंचायेला जोवाय छे भगवान ना आनन्द वरसी रहया होय छे, विप्रो ने दक्षिणा अपातो जोइ छे, आवो विद्ये श्री, दाने श्री, धर्मे श्री, त्यागे श्री, शीलव्रते श्री, प्रतापे श्री, यशस्वी, देवपुरुष आज पृथ्वी मां विराजे छे। तेमने माटे मारा हजारो-हजार अभिनन्दनों छे। तेमना समस्त जीवन नो अनुभवो ब्राह्मण, याज्ञिक, ज्योतिषी, कर्मकांडी, पौराणीक, शास्त्री, अल्प होवा छतां, पण मोटा नी कृपा वडे कीरती मान हूं विप्र शान्तिलाल, मटुलाल भाइ शास्त्री, पंडित प्रकांड श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी ना विद्वता अने संत स्थिती ना विशेष गुणों वर्णवु, ते अनुभूत यथार्थ छे। महा गुजरात हाल ना सवयस्य विद्वानों आ बावतो ना मुक्त कंठे स्वानुभव पूर्वक वखाण करे छे। आवा विद्वान संत ने आधारे संप्रदाय ऊजला अने ऊर्ध्ववर्ती होय छे। आवा आ संत शतवर्षजिवी दिर्घायु सुस्वास्थ्य मां उत्तम भक्ति मां जनता ना कल्याण माटे घणु जीवो। काशी, मुंबई, अहमदाबाद, आदि महानगरो मां लक्षावधी मानवो नी मेदनी मां व्याख्यान आपता आप नी जे कीर्तीओ गवाती हती, ते थी हजारो गणी कीर्तीओ, सत्कारो ना फलवाली कीर्ति आपने माटे गवाती रहो। आवुं हार्दिक अभिनन्दन प्रेरी विरमूं छुं।

पटेल लीम्बा देवाणी

लक्ष्मण जी भगत

सरपंच कुंकावाव

आ कुटुम्ब गुजरात मां थी आवी ने सरधार मां वश्युं। अने सरधार थी जरखीया अने सनाली थइ कल्याण पटेल सं० १८९५ मां कुंकावाव ऊतर्या। आ वखते आ गाम नानीआला कुंकावाव नामे ओलखातु हत्तु। अने वस्ती वहु जुज हत्ती। जमीन ऊअड़ हत्ती। गाम ना नामे सात नेसडा हता। दरवार श्री आला वाला अे पटेल ने चार सांती नी जमीन पलत आपी ने आ गाम आवाद करवानु कार्य सोंप्युं, पटेले नेसडा भांगी वस्ती ने गाम मां वसावी, अेटलुज नहि पण सारा खेडुतो बोलावी ने वसाव्या अने थोड़ा ज वखत मां गाम आवाद थयुं। आ वखते लीम्बा पटेल कारभार करता हत्ता अने बिलखा नी गादी पर दरवार श्री रावत वाला हता।

संवत: १९१५ मा रावत वाला गुजरी गया दरवार श्री अे पोतानी राणी कमरी बाई ने राज्य सोंप्युं। अने लींबा पटेल ने वहीवट सोंप्यो। पटेले वही वट सारा मा कर्या कुमरी बाई पुण्य शालो जीव हत्ता। लींबा पटेल नी सलाह थी बनी शके तेरलो धर्मा दो करवानु ते नु चित गयु। मेवासा गाम सदा व्रत आपवा माटे अपर्ण कर्युं। विलखा नी धर्मशाला, कुंकावाव नी वात वेगरे पुण्य ना कामों करी नाम अमर कर्युं। काशी, मथुरा, जगन्नाथ, ने रामेश्वर नी यात्रा करवा लींबा पटेल ने साथे तेड़ी ने गया, अने काशी मां पण काय मी सदाव्रत नी गोठवण करी तेथी आजे पण कमरी बाई नी जै बीलाय छे. ते नी साथे लींबा पटेल नी पण जै वोलाय छे। कुंकावाव मां पण ४० सांती नी जमीन धर्मादा मां आपी ते आजे पण चालू छे।

राज्यों नी नानी मोटी तकरारो पताववा पंच तरीके निमाता, अने ऊजलानी तकरार पतावी ते नु वे हजार रूपिया इनाम मल्युं। कुंकावाव मां पांच हजार रूपिया ने खरचे स्वामिनारयण नु मंदिर वंधाव्युं। आ खरच वधु पटेले आप्युं हतुं संवत १९३२—

डेडाण तालुका ना गरास नी वहेचणी माटे प्रान्त साहेवे पटेल नोम्या। पटेले न्याय बुद्धि थी तेना भाग करी आप्या। अेम केहवाय छे के ते वखते अेक भागदारे रूपिया नी थैलीओ लावी पटेल ने खुटबी पोताना हक मा लाभ थाय तेवी रीते ललचाववा प्रयास कर्या। पण पटेले रूपिया लेवानी ना पाड़ी। त्यारे भागदारे जणाव्युं के पटेल आटला बधा रूपिया आपनारो तमने बीजो नही मले, माटे रूपिया ल्यो, ने अमारा लाभ मां फेसलो आपो, त्यारे पटेले कहथु के आपनारा तो घणा मलसे पण मारा जेवो ना पाड़नारो बीजो नही मले अे रीते मक्कम रही भाग पाडी न्याय कर्यो। अेक भागदारे तकरार पण लीधी पण प्रान्तमां लींबा पटेले करेला भाग मंजूर रहया।

लींबा पटेल ने पांच दिकरा हता। लखमण पटेल अने गोविद पटेले पण अेवोज कारभार कर्यो। लींबा पटेल ना मावजी पटेल अने मावजी पटेल ना कानजी पटेल, अत्यारे कुंकावाव मां पटेल छे।

श्रीकृष्णवल्लभाचार्य परोपकारी मानव जीवन

श्री. अेम्. बी. शाह M. A. (Eng.) M. A. (Handi) M. Ed.
Ph. D. साहित्यरत्न

प्रिन्सीपाल—के. बी. हायरसेकेन्डरी, कुंकावाव, डी. अमरेली

संवत : १९६१. भारत मा पश्चिम सौराष्ट्र काठियावाड़ मां बीलखा राज्य ना तालुका मोटी कुंकावाव नाम ना नगर मां राजकीय पटेल, देवाणी लीम्बा पटेल ने पाँच पुत्रो हता—१. लक्ष्मण पटेल, २. गोवीन्द पटेल, ३. हरजी पटेल, ४. मावजी पटेल, ५. गोपाल पटेल। पांच मा पुत्र गोपाल पटेल ना धर्मपत्नी कम्मर देवी अे विक्रम सं० १९६१ मा आश्विन वदि अष्टमी शनिवार सुर्योदय पहेला तृतिय पुत्र ने जन्म आप्यों।

ते वखते कर्क राशी ना चन्द्रमा हता. ते पुनर्वसु मा प्रवेशता होवा थी क-अक्षर ऊपर कुंवर जी नाम धार्यु हत्तु। पांचमे वर्षे गुजराती निशाले बेसार्या हता, दशमें वर्षे जूनागढ़ मावजी बापा साथे गया हत्ता पाछुं घेर आववुं पड़यु हतुं। ६. गुजराती भणी लीधी हत्ती।

* १९७५ :—

तेरमे वर्षे फागण बदी ११ ना निज माता जी नी आशिषों लइ जेतपुर मंदिरे गया हत्ता, त्यां संस्कृत पाठशाला मां विश्वनाथ शास्त्री जी पांसे प्राथमिक संस्कृत अभ्यास चालू कर्यो हतो। लघुकौमुदी पूर्ण करी हत्तीं। चौदमें वर्षे १९७५ मां गुजरात देश मां दंठाव्य मां पंचतिर्थ करी हत्तो, तथा बुरानपुर सुधी यात्रा करी हत्ती। चैत्र शुक्ल एकादशी अे बड़ताल मां श्रीपति प्रसाद जी महाराज द्वारा त्यागी दीक्षा लीधी हती।

जुनागढ़ मां शास्त्री जी बालकृष्णानन्द जी पासे सिद्धान्तकौमुदी भण्या हता, पुराणी श्री हरि-नारायणदास जी पासे काव्यो, भागवत भण्या हता। प्रारब्ध अनुसार अदीक्षित थइ ने ओळिया गामे मामा ने घेर १ वर्ष रहेवु पड़यु हत्तुं। सदगुरूओं साथे फरी थी आवी ने जेतपुर थी तीर्थ मां सिद्धपुर, पुष्कर्राज, मथुरा, गोकुल, वृन्दावन, अयोध्या, छपैया, प्रयाग राज, गयाजी, कलकत्ता खड़गपुर, जगन्नाथ, कटक, कालोमटी, बोलासपुर, सावदा, बुरानपुर, तीर्थ मां फर्या हंता, बुरानपुर मां श्रीपति प्रसाद जी महाराज ना हस्तक यज्ञ ना दर्शन, पछो, मुम्बइ, सुरत, बड़ोदरा, भरूच, बड़ताल, अमदाबाद, जेतलपुर, मूली, राजकोट गौंडल, जेतपुर, अने जूनागढ़ आव्या हतां।

* १९७६ :

गढ़पुर मां १९७६ कार्तीक शुक्ल अेकादशी अे पुनः त्यागी दीक्षा श्रीपति प्रसाद जी महाराज ना द्वारा लीधी हत्ती।

* १९७७ : १९७८ :

जूनागढ़ भीम एकादशी ना समैया मां सत्संगी जीवन द्वितीय प्रकरण नी कथा करी हत्ती। पछी बड़ताल वड़ोदरा अेक वर्षे अभ्यास करी १९७७ मां मूली वसन्त पंचमी नो समैया कर्यो हतो। १९७८ मां

श्रावण मां जूनागढ़मां श्रीपति प्रसाद जी महाराज पधार्या त्यारे सत्संगि जीवन नु पारायण श्री नारायण दास जी स्वामी कृत सभा मंडप मां वांच्यु हतुं, राणा दिवान तथा वड़ोदरा ना वदरी नारायण शास्त्री जी ते प्रसंग मां ऊपस्थित हता।

* १९७९ :—

१९७९ आश्विन मां जन मंगल ना दस हजार पाठ विद्या प्राप्ति थवा निमित कर्या हता, अग्यार दिवस ०। शेर अेक पेंड़ो रोज़ खाई ने पाठनुं व्रत पूर्ण कर्युं हतुं।

* १९८० :—

१९८० माघ सुदि ८ प्रेमवती दास जी ने साथे लइ काशी भणवा पहोंच्या हता, रणछोड गोर ना राम मंदिर मां अेक मास रहया हत्ता, बे मास सारस्वत ब्राह्मण ना मकान मां रहया हता। पछि चौखम्बा बाजार मां निर्मल संस्कृत पाठशाला मां रही पंडित राधा कान्त जी, मैथिली, नैयायिक पासे न्याय सिद्धान्त मुक्तवाणी तथा तर्कसंग्रह भण्या हता।

* १९८१ :—

१९८१ मां जूनागढ़ आवी घनश्याम चरण दास जी पुराणी नी जोड़ करी ने कार्शी गया हता। त्यां पोरबंदर राणासाहेब दरवार नी तरफ थी चालता अन्न क्षेत्र मां १९८१ मां भोजन जमवा चालू कर्युं हतु।

* १९८२ :—

१९८२ ई० स० १९२६ मां गर्वनमेन्ट संस्कृतक्विन्स कौलेज नी न्याय मध्य मां परीक्षा आपी हत्ती, जे तेमां पास थया हता, माघ मां कुंभ ना स्नान माटे हरिद्वार गया हता, चैत्र मां छपैया पंढरी गया हता, अेक महिनो शंकर भगत कोठारी ना आग्रह थी रोकाया हता। आचार्य श्री आनन्द प्रसाद जी महाराज ना द्वितीय विवाह बन्धूसरा गामे थयो, त्यारे श्री पति प्रसाद जी महाराज तथा कुंज विहारी प्रसाद जी महाराज तथा सदगुरू स्वामी श्री नारायण दास जी स्वामी तथा गढ़पुर मां ना हरि स्वरूपा नन्द जी ब्रहमचारी विगेरे ते विवाह प्रसंगे पठरी पधार्या हता।

* १९८३ : १९८४ : १९८५ :—

कंकोतरी ना श्लोकों श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी अे रच्या हता, ते विवाह कार्य पती गया पछी स स्वा श्री नारायणदास जी विगेरे सन्त मंडल काशी पधार्या हता। हरिद्वार ना कुंभ मां १ मास रूकाना हत्ता, गंगा स्नान करता हता, नव्य न्याय शास्त्री नो प्रथम खंड १९८३ मां पास कर्यो हतो, बे वर्षे द्वितीय खंड १९८५ मां पास कर्यो हतो ब्राह्मण महासम्मेलन द्वारा ज्ञान वापी मैदान मां भरायेलाविद्वानों नी विराट सभा मां संस्कृत मां व्याख्यान आप्यु हतु। जेते वखत ना "आज" नाम ना दैनिक मां संक्षिप्त छपाअेल छे। त्यार बाद टाऊन हौल नी महा सभाओं मां संस्कृत मां व्याख्यानों आप्या हता, प्रयाग राज ना कुंभ मां महिनों दिवस जाहेर शास्त्रार्थ राख्या हता। पंडितो अने विद्यार्थीओ ना योजेल शास्त्रार्थी मां वखतो वखत बेसता हता।

* १९८६ :—

१९८६ मां नव्य न्याय शास्त्री तृतीय खंड पास कर्यो हतो। तथा सांख्य करिका नु संस्कृत स्वामी नारायण भाष्य लख्यू हत्, तथा गौड पाद भाष्य नू किरण लख्यु हतु।

* १९८७ :—

१९८७ मां नव्य न्याय नो आचार्य नो प्रथम खंड भणी ने जूनागढ़ पधार्या हता, सदगुरू स्वामी श्रीकृष्णचरणदास जी ना दर्शन थया हता। पछी तेओ अक्षर धाम पधार्या हता, पछी जेतपुर जइ नें २ दिवस सुधी जाहेर सभाओ करी हती, त्याह थी पोर वंदर पधार्या हता। त्यांहा सुदामा जी ना मंदिर मां त्रण दिवस जाहेर सभा व्याख्यानो आप्या हता बाहेर ना भागवता नन्द जी तथा बीजा विद्वानो साथे संस्कृत ना वेदान्त न्याय मा शास्त्रार्थो थया हता। शास्त्री जी महाराज नो विजय थयो हतो, त्याह थी जूना गढ़ पधार्या हता। नागर अनन्तराय भाइ ना अध्यक्षपणा मां अनन्त धर्मालय स्थान मां बे दिवस जाहेर सभा व्याख्यानों वेदान्त मतो ऊपर कर्या हता, त्याह थी गोंडल पधार्या हता। त्याह बे दिवस जाहेर सभाओं मां व्याख्यानो आप्याहता। त्याह थी राजकोट पधार्या हता, राजकोट मां स स्वामी श्री नारायणदास जी ना अक्षर धाम पधार्या पछी श्री हरि लीला कल्पतरु सपूर्ण पारायण वद्रिकाश्रम वाड़ी मां बोरड़ी नीचे वाच्यु हतु २१ मां दिवसे पारायण पूरू थयु हतुं, त्या दरवार श्री अर्जुन सिंह जी ने बंगले राज्य नी चांदी नी गाड़ी मां विराजमान करी छडी छत्री सहित सामैयु करी पधराव्या हता। त्याह थी काशी पधारया हता, अने योग सुत्रो ऊपर स्वामी नारायण भाष्य लख्यु हतुं

* १९८८ :—

१९८८ मां श्रीस्वामि नारायण वेदान्त सार संस्कृत मां लख्यो हतो। तथा नव्य न्यायाचार्य प्रथम खंड पास कर्यो हतो। अषाढ़ मां नासिक ना कुम्भ मां गोदावरी स्नान माटे गया हतां, त्यां ना राम जी भाइ मीस्त्री ने बंगले उतर्या हतां। लक्ष्मी नारायण ना मोटा मंदिर मां सन्यासी सन्तो वैष्णवों नी महा सभा मां मोटा शास्त्रार्थ मां विजय थयो हतो। सन्यासी महान्ते श्री शास्त्री जो महाराज ने सोनेरी जरीयानो महा मूल्य नो दुपट्टो सत्कार मां ओढ़ाव्यो हतो। त्यां थी मुंबई जई रोकाई ने अेक महीने काशी जी गया हता। चौमासा मां सावण मां काशी थी दिल्ली रस्ते राजकोट गया हता। त्या हरिभाई सिन्धिया मीस्त्री अे सत्संगि जीवन नु पारायण सावन सुदि पूर्णिमा अे बेसाइवा इच्छेल ते वाचवा रोकाया हता। सावन सुदि १३ जूनागढ़ थइ दर्शन करी ने पारायण माटे राजकोट आवी ने पारायणवाड़ी मां पूरू कर्यु हतुं। वद ०)) जुना गढ़ करी हती। भादरवा सुदी-४ जेतपुर, शुद आठम आंकडीया, भादरवा वद पडवो: बीज कुंकावाव मां तथा नानी कुंकावाव मां करी ने बद चोथ ना कुंकावाव थी आणंद भगत ने साथे लइ ने जेतपुर पधार्या। भादरवा वद: १० वड़ताल करी अेकादशी दर्शन करी ने वद् द्वादशीअे मुंवई गया। अमासे रात्रे अे ओ काशी पहोच्या। इश्वरांक कल्याण मसिक गोरखपुर हिन्दी लेख मोकलाव्यो।

* १९८९ :—

१९८९ मां नव्य न्यायाचार्य द्वितीय खंड पास थया तर्क संग्रह दीपिका ऊपर किरणावली टीका लखी हती।

* १९९० :—

ते संवत १९९० मां गुरू पूर्णिमा अषाढ़े छापी। तथा हितोपदेश मित्र लाभ नी किरणावली टीका लखी। अने चौखम्वा संस्कृत सिरीज प्रेस ने आपी दीधी हत्ती। १९९० ना पोष मां इन्दोर, कलकत्ता, परीक्षा केन्द्र मां सांख्य योग तीर्थ परीक्षा आपी हती। पास थया हता।

* १९९१ :—

संवत् १९९१ मां कार्तिक मास मां पटना हरिहर क्षेध मां महा गण्डकी नदी गंगा नदी ना संगम मां जंगी मेला मां स्नान माटे गया हता। कार्तिक वदि मां काशी आवी ने स्वामी नारायण वेदान्तसार संस्कृत छपाव्यो हतो। तथा काशी नव्य न्यायाचार्य ना तृतीय खंड मां प्रथम नंवर आचार्य (नव्य न्यायाचार्य) पास थया हता। तथा इन्दौर केन्द्र मां वेदान्तीर्थ परीक्षा आपी हती अने पास थया हता।

त्यां थी मुंवई जेतपुर आवी ने रोकाणाहता। त्यां रोकाई ने ज्ञान विलास, सुधासिन्धु, शिक्षा पत्री भाष्य, हरि दिग्विजय नी कथाओं वांची हती, त्यां थी कालसारी विसावदर गया हता। त्यां थी सरदार गढ गया हता। त्यां थी घनश्याम महाराज मूर्ति प्रतिष्ठा मां माणावदर गया हता। त्या थी जेतपुर पधारी ने रोकाणा हता।

पोठडीया दरबार मूलुवाला नी भादरवा सुदि बीज नी जन्मगांठे आशिर्वाद आपवा गया हता। जल जीलणी सदगुरू पदनो सत्कार कर्यो हतो। पुनमे बोटादनी जाहेर सभा करी हती। वद बीज ना सारंगपुर गया हता। त्यां जाहेर प्रवचन कर्युं हतु। हनुमान जी ना दर्शन नो लाभ लइ वठवाण, विरमगाम, म्हेसाणा, जेपुर, अयोध्या थइ ने वद दशमो अे काशी पोहच्या हता। श्री मद वामाचरण भट्टाचार्य जी वाली विवृत्ति सहित न्याय पंच लक्षणी तथा सिंह व्याघ्र छापी हती। तथा हिन्दी शीक्षा पत्री लखी हती। भादरवा वद : १४ ना आणंद भगत देश मां गया हता। आश्विन मां हिन्दी वचनामृतो लखवा आरम्भ्या हतां।

* १९९२ :—

संवत १९९२ वसंत पंचमी मां शुद पांच में ऊना शिखर ना भर्या ऊपर काशी थी परबारा ऊना गया हता। कलश चढ़ाव्या ना उत्सव निमित्ते समैयो हतो। जाहेर सभा मां प्रवचन कर्युं हत्तु : त्यां थी आनन्द प्रसाद जी महाराज साथे वलता ट्रेन मां बेरावल जूनागढ़ जेतपुर थइ काशी गया हता। त्या सांख्यतत्त्व कौमुदीनो किरणावली टीका लखी हती। तेथी माघ सुदि तेरस मां लक्ष्मी लाभ बड़े मदद मली हती अने वेदान्तांक मां सन्तांक मां लेखो आण्या हतां। छविओं तथा श्लोको छवाव्या हता। फाल्गुन थी अधिक भादरवा सुदी दही भात नुं भोजन कायम राखयुं हतु।

अमदाबाद ना भणनारा हरी नारायण दास जी मल्ल साधु ने तथा गढ़पुर ना भक्ति वल्लभ दास जी ते भणवुं पडयुं मेली ने देश मां पाछा पोताने मंदिर गया हता।

* १९९३ :—

१९९२ ना बीजा भादरवा थी तपोव्रत शरू कर्युं हतुं भादरवा मा सुवा पालव नी काची ०।। शेर भाजी जमाड़ता हता। आसो मा काचा रतालू जमाड़ता हता। १९९३ मा कार्तिक मां काचा शीगोडा जमाड़ता हता। मागशर मां कुटु नो मोथ नो बाफेलो भात जमावड़ा हता, पोष मा शीघोड़ा ना लोट ना थेपला जमाड़ता हता। माघ मां राजगरा नो पूरी जमाड़ता हता। फागुण मा कलकत्ता मां मीमांसा तीर्थ परीक्षा आपवा गया हता। फलाहार चालू हतुं। वड़ताल ना हरिबल दास जी गुरू हरि कृष्णदास जी नी कलकत्ता महान्ताई हती।

ता: १५-२-३७ ना जेतपुर आवी, ता० १८ मी अे गढ़पुर गया हता। १९ मी अे अमदाबाद थइ ता० २१ मी अे मथुरा गया हता। ता० २५ मी अे अयोध्या गया हता, त्या थी २७ मी अे चाली ने

मखोड़ा तीर्थ तथा छपैया गया हता, त्यां रोकाया हता। ता: ३-३-३७ ना अयोध्या आवी ने काशी जी पधार्या हता। फलाहार चालू हतुं।

काशी मां तिनीना लाल चावल नू फलाहार एकमास चालु राख्युं हतुं। सांख्य कारिका नुं स्वामि नारायण भाष्य छाप्युं हतुं। तथा न्याय सिद्धान्त मुक्तावली ऊपर किरणावती टीका लखावी हती। संवत: १९९३ ता: ७।५।३७ ना चैत्र वदी १२ शुक्रवारे ते टीका पूर्ण लखाई रही हती। अने मास्टर खेलाड़ी लाल ने छपावी ने आपी दीधी हती।

१९९३ चैत्र बदी १४ रविवार ता: ९-५-३७ शिवपुर महोत्सव सभा हती। सरकारी पोलीस लेन मां सेवा मंडली ने हारतोरा कराया हता। त्यां ना प्रमुख गुरू नू विसर्जन थया बाद पण्डित मंडल ना बगीचे रोकाया हता। वैसाखी पुनम नी सम्मेलन सभा हती। बैशाख शुद १ मंगल वाल ता० ११-५-३७ काशी जी गंगा मा पण्डितो साथे गौ घाट तरफ मोटा पुल सुधी वहाण मां गया हता। पछी छूटा थइ निवासे आव्या हता।

* १९७४ :—

१९७४ धनुर्मास मां सुरत आव्या हता। अेक मास व्याख्यानों आप्या हता। भरूच मां एक मास रही स्वामि नारायण भागवत अवलोकन कर्युं हतुं। पोष वदी दशमी अे वड़ताल दर्शनार्थे गया शास्त्रीओं नु सम्मेलन लायब्रेरी मा थयुं हतुं। गौरव जलवायुं हतुं। पारायण ब्राह्मणो बाई तरफ थी राजकोट बोरडी नीचे बेसारायेलुं वांचयुं हतुं। पछी लोधिका, कालावाड, वणथली गया हता। मावदान जी कविने "राज कवि रत्न" पदवी संस्कृत मा लखी आपी हती। राजकोट लोधिका थइ ने फागण वदि १० दशम जेतपुर करी हती। काम माटे त्रण दिवसो रहया हता। पछी जूनागढ़ सात दिवसो रहया हता।

बैशाख वदि आठमें भावनगर गया हता। अेक शेठ नू भागवत परायण वाचयु हतु। वदी तेरश-चौदश ना बे रोज यशोनाथ जी ना मैदान मां जाहेर व्याख्यानो आप्या हता।

बैशाखी अमांसे नटवरलाल भाई सुरती साहेब दिवाने तथा त्रिभुवन दास भाई वृद्ध दिवाने वापस पोताना बंगलाओं मा अधराव्या हत्ता।

ज्येष्ट शुक्ल ४ चौथ जेतपुर करी हती। दशम अेकादशी-द्वादशी जूनागढ़े कर्या हता। तेरश चतुर्दशीं अे बे दिवस सोरठ वंथली मां पब्लीक हौल मा व्याख्यानो आप्या हता, जूनागढ़ एक मास रहया हता।

शिकवेरा साहेवे दिल्ली मोकलवा राजकोट कमिश्नर साहेब ने अे. जी. जी. द्वारा महामहोपाध्याय नी राजकिय सत्कार उपाधि माटे लखाण मोकलावीयु हतु।

अषाढ़ वदि ९ नवमी ने जेतपुर थइ राजकोट गया हता, दरबार अर्जुन सिंह जी भाइ ने बंगले सावण सुदि ३ शुधि स्वामी निरगुणदास नू संत मंडल साथे रही ने अमदाबाद गया हता।

अमदाबाद मा अढ़ार दिवसो सुधी जाहेर प्रवचनों मंदिर ना सभामंडप मां चालू राख्या हता, हीर ना हिंडोला नो महोत्सव १ मास कर्यो हतो।

त्याह थी नड़ियाद, आनन्द, भरूच, सुरत, वि, स्थले गया हता। सुरत मां अरदेशरजी त्याह प्रसादी नी प्राघना दर्शन करी, आरती उतारी हती, हरिबल दास जी, त्याह ही भणता साथे हता। शास्त्री जी महाराज सुरत थी मुंबई भादरवा सुदि ७ ना जइ ने भादरवा सुदि चौदस ना काशी गया हता।

* १९९५ :—

संवत् १९९५ ना माघ बदि सातम ना जेतपुर मूर्ति प्रतिष्ठा ना महोत्सव मा कथा वांचवा आव्या हता वसंत पंचमी थी फागुन बदी पड़वा सुधी रोकाई ने काशी गया हता। त्यां योगदर्शन स्वामी नारायण भाष्य तथा भोजवृति किरण तथा न्यायमुक्तावली, मुद्रित ग्रंथो जाहेर मा मुक्या हता। ग्वालीयर स्टेट द्वारा रू० १७५।– पारितोषिक आव्यु हतुं। पोष्टाचार्य मां दाखल थया हता, इन्दौर ना राजकीय संस्कृत महाविद्यालय मां प्रिन्सिपाल तरिके १ मास निमणुक निभावी हती, पाछा काशी गया हता।

* १९९६ :—

१९९६ ना बैशाख सुदी ७ सप्तमी, सातम ना काशी थी नीकली, बैसाख सुदी दसम ना आसाम मां कामरूप कामाख्या ना दर्शन करी पंड्या राधिका प्रसाद हरि प्रसाद गौर ने बंगले ऊतर्या हता, त्यां त्यां गवरनर ने बंगले गया हता, एक दिवस रोकाइ ने ब्रह्मपुत्रा नदि मां आगवोट मां बेसी ने एकादशी ना गौहटी शहर गया हता, त्याह थी बारस ना मणीपुर रोड गया हता। तेरस ना सादिया शहर गया हता, सत्यनारायण ठाकुर वाड़ी बावा जमुनादास जी ने मंदिर चार दिवस रोकाया हता, मारवाड़ी छोटा गोला मां व्याख्यान आप्या हता। त्यां बे पुलीस मैन को श्री हरि कंठियो बांधी हती। पुलीस लश्करी लेन मां पधरामणीओ थइ हती। त्यां थी बैशाख वदि चौथ ना दिबरूगढ़ गया हता, त्यां ओं बाबा ना मंदिर मां फलाहार कर्या हता, शहर मां आणंद ना विप्रो व्यापारी संतसंगियो ने धेर पधरामणी करी हती।

बैशाख वदि पांचम ना मुक्तिनाथ शिव सागर गया हता, वद सातम ना चितागोंग, चटगांव, बंगाल मां गया हता त्या पृथिवी यंत्र, सूर्य यंत्र जोइ ने बारस ना आगबोट मां बसी ने कलकत्ता आव्या हता, त्याह थी रेलवे रस्ते ट्रेन मां बेसी अमावस ना मथुरा जी आव्या हता, त्याह थी फरी ट्रेन मां बेसी जेठ सुदी छठ ना जेतपुर आव्या हता ने रोकाया हता, भादरवा मास मां, बंटेटा ना फलाहार ऊपर रही ने अेकवीस हजार जन मंगल ना पाठ पुरश्चरण कर्या हता।

* १९९७ :—

संवत् १९९७ मा पोष सुदी १ ना नोंघण चोरा गामे, वचनामृत नू एक दिवस रात्री नू पारायण वांचवा गया हता, तीज ना मेगंणी गया हता। रीब थइ ने बदि पाचम ना जेतपुर आव्या हता।

माघ वदि अमासे पब्लीक द्वारा अने मैनेजर द्वारा महामहोपाध्याय नी अरजी स्मृति राजकोट ताराचन्द भाई गवरमेन्ट अधिकारी ऊपर मोकलावी हती, तथा बीजी अरजी ता० ७–३–४१ ना फागण शुक्ल ६ ना रोज राजकोट प्रान्त साहेब पुलीटिकल एजेन्ट सर विलीयम्स पर मोकलावी हती।

ता० १०–१०–४१ ना सोमवारे द्वादशीअे अे. जी. जी. ऊपर रिन्यु अरजी मोकलावी हती। रेसीडेन्ट सर गीब्सन साहिब हता। जेठ सुदी तीजे कालावड गामे मूर्ति प्रतिष्ठा करवा गया हता। चातुर मास मां जेतपुर उपनिषदों नी कथा वांची हती, १९९७ मां श्रावण वदी बीजे गाम मां हरिभक्तों मां पधरामणी थइ हती।

* १९९८ :—

संवत १९९८ मागसर वदि ४ चौथ ना, रोंढ़ा टाणे ठाकुर जी जाग्या समय, निर्गुण दास जी स्वामी धाम मां गया हता, ते निमिते नव दिवस संतसगिजीवन पारायण वाच्यु हतुं। चैत्र वदि द्वादशी ना काशी ना स्वामी नारायण मंदिर मां मूर्ति प्रतिष्ठा ना महोत्सव मां गया हता, त्यां पंडितो नी

सभा ने ११-११ रू०, एक-एक चांदी नी रकावी अने बडा बडा १-१ पेड़ो धानन्द प्रसाद जी महाराज ना तरफ थी सत्कार दान मां शास्त्री जी महाराज द्वारा आपवा मां आव्यो हतो। राजा साहेब घनश्याम दास तथा आचार्य महाराज ने १००८ तथा स्वामी धर्म स्वरूप दास जी कोठारी ने मान सहित योग्य उपाधि, किताबो सभा तरफ थी मल्या हता।

वैशाख सुदी सातम ना अयोध्या गया हता, त्यां थी छपैया, मथुरा, जैपुर, गढ़पुर थइ ने दर्शन करी ने वैसाख वदि पांचम ना जेतपुर आव्या हता।

अधिक जेठ सुद ३ तीज ना मागरोल अने लौज गया हता, शुद आठम ना वेरावल जादवजी भाई घी वाला ने बंगले रहया हता। जेठ बद तीज ना जेतपुर गया हता। अषाढ़ शुद ४ चोथ ना जुनागढ़ गया हता। पांचम ना जेतपुर गया हता।

* १९९९ :—

संवत: १९९९ कार्तिक पूर्णिमा अे जुनागढ दर्शन करवा आव्या हता, पाछा जेतपुर गया हता, पोष बदी: २ जुनागढ आव्या हता। ता: १९।४।४३ ना जुनागढ़ अल्लाऊद्दीन कौलेज मां जुनागढ़ केन्द्र मां बौम्बे युनिवैसोटी नी मैट्रीक नी परीक्षा आपी हती।

ता: ३०।४।४३ सांकली गाम गया हता। अषाढ़ वदी बारस ना अमरेली ना उत्सव मां गया हता। वदी: १४ चौदश ना जूनागढ़ गया हता। अमास सोरठ वंथली मां करी हती।

श्रावण सुद: २ पछी तेरस सुधी सत्संगि जीवन परायण सोरठ वंथली मां वांच्यु हतुं। पूर्णिमा नू चन्द्र गहणपींपलाणा नी ओजत मां कर्यु हतुं। बद द्वितीया आंखा मां करी हती। बद त्रीज सारन पीपली मां करी हती। चोथ बोडका मां करी हती। पांचम नावडा मां, छट्ठ वंथली मां, अने सातम नवा गाम करी हती। अमास थाणा पीपली करी हती। थाणा पीपली मां भादरवा शुद: २ थी हरि लीला कल्पतरूं नु सातमु प्रकरण वांच्यु हतु। अेक दिवस जेतपुर पधरामणी अे गया हता। त्यां थी वड़ताल गया हता।

जेठ शुद: ६ थी अषाढ़ शुद: २ सुधी वड़ताल रोकाणा हता। कोठारी स्वामी धर्मस्थरूपदास जी नी बदली थइ हती। अषाढ़ शुद : ११ : से खंभात मां गया हता। मानपत्रो अपाणा हता। श्रावण शुद: छट्ठ ना भरूच गया हता। अष्टमीअे बडोदरा गया हता। अने जूनागढ़ आव्या हता।

भादखा वद अेकादशी अे माणावदर गया हता। आशो वद: ४ चोथना सोरठ वंथली गया हता। वद सातम ना जूनागढ़ गया हता।

* २००१ :—

संवत २००१ मागशर शुद मां अगत्राई देश मां फरवा गया हता। फागण मा जूनागढ़ यज्ञ महोत्सव मां व्यासासने व्याख्यान काम कर्यु। फागण वदी अेकादशी माणावदर करी तेरश वेरावल करी: चौदस जूनागढ़ करी। अधिक चैत्र बीज मांगरोल करी। अजाब गामे नारायण भाई ने फलीअे भागवत पारायण वांच्यु। आधिक चैत्र वद तेरश वरजांग जालीया गया। कथा वाची पधरामणी थइ। बीजी चैत्र नी चोथ ऊपलेटा गया। व्याख्यान आप्यु। आठम थी मांगरोल मां भागवत पारायण २० मी अे वांच्यु। यजमान लाल जी भीमजी भाई मालीया वाला हता।

चैत्र वद १० थी जेठ शुद २ सुधी लोज गाम मां शिक्षापत्री कथा वांची। यज्ञ कर्यो। पंचोतेर नवी कंठीओ वांधी। गोवुभा दरवारे जनोई बांधी सत्संगी थया। तेणे लोज मंदिर मां खेतर आप्युं।

जेठ शुद : ३ थी ८ : सुधी केशोद शेठ लाल जी लाधा ने त्यां रोकाणा। जेठ शुद : ११ : जूनागढ़ करी। अषाढ़ वद ०।। ना रोज जाम नगर श्रावण नी कथा वाचवा बोलाव्या त्यां गया। चालू कथा माटे श्रा. ब. २ ना माणावदर गया हता। श्रावण वद ८ मी अे माणावदर शिक्षापत्री सप्ताह वाच्युं। दशमी जूनागढ़ करी। द्वादशी जामनगर करी। भादखा शुद : २ : चांदा चद्रपुर सी पी. मां करी शुद: ५ थी भागवत सप्ताह चांदा पोपटलाल हरजीवन काछेला ने त्यां वाच्यु। तेना पुत्र कान्तिलाल सवारे डोसी मां ने देखाणा। ने सदगति कही धाम मा गया।

बद वीज ना राजमहेन्द्री गया। वद : ५ : जगन्नाथ पुरी गया। वद : ८ : बेजवाड़ा कावेरी स्नान कर्या पछी, मद्रास अेकादशी अे गया। जाहेर मां प्रवचन आप्युं। चौदशे रामेश्वर गया। आशो सुदी: पडवे धनुष्कोटी जइ समुद्र स्नान कर्युं। दशम ना चिदम्बर मां स्फटिक लिंग दर्शन कर्युं। वारश ना तिरूपति बाला जी नु पर्वत ऊपर दर्शन कर्युं। चौदश ना पंढरपुर गया। चन्द्रभागा नदी मां स्नान कर्युं। वद पड़वा अे पूना गया। वद त्रीजे मुंवइ आव्या हता। वद आठमे जाम नगर आव्या हता।

* २००२ :—

संवत २००२ ना मागशर थी जामनगर मां मकान पाडवा चालू कर्या। अक्षय तृतीया वैशाख सुद त्रीज ना सभा मंडप नो पायो नाख्यो। वैसाख शुद सातम ना मोरजर गामे हनुमान प्रतिष्ठा करी। श्रावण शुद: द्वादशी अे तरधरी देवलीया मूर्ति ना प्रतिष्ठा ना यज्ञ मां गया हता। भादरवा बद सातम सोरठ वंथली शिक्षापत्रीनो कथा वांचवा गया हता। आश्विन शुक्ल तृतीया अे माणावदर गया हता। सातमे जूनागढ़ गया हता। अेकादशी अे जामनगर आव्या हता।

* २००३ :—

संवत २००३ ना माघ शुद चतुर्दशी ता: ४।२।४७ ना सांजे पोणा चार वाग्ये प्लेन मां बेसी मुम्वइ गया हता। फागण शुद: छट्ठ ना जवलपुर गया हता। भगवानजी भाइ जेराम भाइ ने त्यां रोकाणा हता। फागण बद : २ : बीज ना धनसौर गया हता। सातम ना मांडला गया हता। दशम ना जबलपुर आव्या हता। बारश ना गोदिया राजगर मकनजी ने त्यां गया हता। तेरश चांदा पोपटलाल काछेला ने त्यां करी हती। स्वामी नरसिंह मूर्ति V. N. नो पुत्र ने कंठी बांधी हती। चैत्र शुक्ल पडवा अे मोटर वड़े बलारशा गया हता। पाछा चांदा आवी ने त्रीज ना अहीरी स्टेट गया हता। राजा अे तथा राणी अे पुत्र पुत्रीओं अे वगेरे प्रणाम कर्या अने तेमने कंठीओ बांधी हती। हिंसा तजावी हती। राजाअे रू. २१००।– भेट आप्या हता। सिलोमा नदी मां न्हाया हता। चोपना जंगलो मां फरया हता। १५० माइल जंगलो मां फरया हता। पछी पांचम ना आलापली गया हता पाछा चांदा आव्या हता। दशम ना रेलवे द्वारा ट्रेन मां बेसी बारस ना जामनगर आव्या हता। चैत्र वद सातम ना सोनारडी गामे शोक्षा पत्री नी कथा वांची हती। वैसाख शुद पड़बा ना जूनागढ़ आवी ने बैसाख शुद ३ ना जामनगर गया हता। सभा मंडप नो सिमेंट कोंकरेट छत भराव्यु हतुं। बैसाख वद २ ना बोज ना बगसरा त्रीज थी सत्संगीजीवन नु पारायण वांचवा गया हता। एकादशी अे समाप्ती करी हती। तेरस मोटी कुंकावाव पधरामणी करी हती। अषाढ़ मास मां जामनगर सभा मंडप ना पारापीठ नो चणतर काम पूरू कर्युं हतुं। श्रावण मां प्रदक्षिणा मां नीचे गायो बांधवा नु भंडक ढांक्यु हतुं। भादरवा मां अलीयामोडा नदि ना करमदी धारा मां न्हावा गया हता, भोजन जमाड़या हतां।

* २००४ :—

सम्वत २००४ मां कार्तिक मां जामनगर प्रदक्षिणा मां उगभणा उत्तर थांभला अने कमानो करावी चणाव्या हता। माघ वद : २ : ना वड़ताल, कवोला, सारंगपुर, पोरबंदर गया हता आफ्रिका नी स्टीमर नी टिकट कैन्सील (रद) करावी हती। बद अग्यारस ना प्लेन मां बेसी ने सांझे जामनगर गया हता वैसाख वदि द्वादशी ना खोखरी गामे मूर्ति पधरावबा गया हता। जामनगर मां श्रावण मां संतसंगी जीवन नू बीजूंपारायण वांच्यु हतुं, पछी महाभारत कथा चालती हती श्रावण बद ९ ना सभा मंडप ना छत मा लादी पथरावी हती, भादरवा मां रवेश, जाली कोतराव्यो हतो। पीलास्तरों कराव्या हता। भादरवा शुदः १ थी सतसंगीभूषण १ प्रकरण वांच्युं हतुं। सांझे स्कंद पुराण वंचाव्यु हतुं। सः २००५ मां अषाढ़ वद तेरस ना महाभारत पूर्णकरी समाप्ती पूजन कर्युं हतुं। भादरवा मा वासुदेव माहात्मय वाच्यु हतुं।

* २००६ :—

संवत २००६ मां कार्तिक मां वाल्मीकीयरामायण संस्कृत कथा वांचवी चालू हती। मागशर शुदः ४ ना ऊना गया हता मागशर शुद १२ बारस सुधी स. पु. हरिनारायण दास जी नू पारायण वांच्यु हतु। पुनम गीरगढडा करी हत्ती, द्रोण तथा, फाटसर पधरामणी करी हती, त्रीज इटवाया करी हती। चौथ मोतीसर करी हत्ती। पांचम तुलसी श्याम करी हती। छठ मोटा समढ़ीयाला करी हती, सातम अम्बा मां, आठम कांधी, नवमी पातापर, दशम सामतेर, अने बारस ऊना, करी हती, तेरस बावरडा, चौदस ऊना करी हती। पोषसुदी पडवो हडमडीआ कर्यो हतो। बीज मालिया हाटी ना करी ने माणा बदर गया हता। त्यां थी छठ ना जामनगर पहोच्या हता।

२००६ ना चैत्र सुद छठ ना कुंडला थइ, आदसंग भागवत वांचवा गया हता। आठम थी अमास सुधी सप्ताह वांच्यु वैसाख सुदो ३ कुंडला करी हती। वैसाख सुदो पाचमे देतडमूर्ति पधरावी हती। नौम खांभा करी, दशम ना जामनगर गया हता। आश्वीन मां स्कंद पूराण सम्पूर्ण कथा नी समाप्ती मा पूजन कर्युं हतुं।

* २००७ :—

संवत २००७ मां पद्म पुराणनी कथा चालू करी हती। फागुण मां भागवत सप्ताह वांच्यु हतु। जमीन नवेलुं बेचातु लीधुं हतु। अषाढ़ शुद दशम मां हरिलीलाकल्पतरू वांचवा सरू हतु। श्रावण वद त्रीज ना राजकोट मां वदली थवा थी चार्ज लीधो हतो।

* २००८ :—

सम्वत् २००८ मां, कार्त्तीक शुद तेरस ना वाडी मां नवे मंदिरे घनश्याम महाराज ने लइ गया हता। मागसर शुद पांचम अे घनश्याम महाराज तथा हनुमान जी, अने गनेश नी पुनः प्रतिष्ठा करी हती। माघ शुद पांचम ना शीव जी, दत्रातेय, शेषनारायण अने सूर्य नी प्रतिष्ठा करी हती। विष्णु पुराण वंचातु हतु। फागण थी शीवपुराण वंचातु हतु। अषाढ़ शुद एकादशी थी सवारे सुधासिन्धु वंचातो हतो। आश्वीन शुद चौथ ना शीव पुराण नी समाप्ती करी हती : पछी ब्रहन्नारदीपुराण वंचातु हतु। राजकोट मां संवत २००९ माघ शुद आठमे लक्ष्मीनारायण देव पधराव्या।

* २००९ :—

संवत् २००९ ना पोष शुदः पून्यम थी वाराह पुराण वंचातु हतु। सुधासिन्धु नी समाप्ती करी हती। माघ शुद पडवा थी हरिलीलाकल्पतरू ना चार भागों वाच्या हता। चैत्रशुद पड़वा थी भागवत

पुराण कथा चालू हती। चैत्र शुद पड़वाए आनन्द प्रसाद जी महाराजे राजकोट देव नी आरती उतारी हती। अधिक वैसाख मां पुरूषोत्तम मास नी कथा बांची हती, तथा भागवत वंचातु हतु। अक्षय तृतीया अे नवा नवा ग्रंथो ना मंगल कर्या हतां। जेठ, असाढ़ मां हरि लीला कल्पतरू अने हरि दिग्वीजय वांच्या हता, सम्वत् २००६ श्रावण शुद २ जामनगर वदली थइ हती। श्रावण मां राजकोट मां रोकावू पड़यू हतू। भादरवा शुद पड़वा अे जाम वंथली गया हता, पांच दिवस रोकाया हता। छठ ना जामनगर जइ सत्संगी जीवन कथा चालू करी हत्ती।

* २०१० :—

संवत २०१० मा मागशर शुद आठम ना राजकोट पाटोत्सव करी नौमना जामनगर ता: २१।१२।५३ ना गया हता। ध. धु. महाराज नी पुजा माटे कनु भाई वड़ताल गगा हता। प्रथम माघ मां शिक्षापत्रीभाष्य कथा बांची हती। माघ बद : ६ मां घनश्याम महाराज ने रंग काम पुन: प्रतिष्ठोत्सव कर्यो हतो। फागण बद पांचम मां खोड़ी रूगनाथपुर मां सत्संगिजीवन परायण वांचवु शरू कर्यु हतुं। तथा मूर्ति प्रतिष्ठा आरती उतारी हती। चैत्र शुद द्वादशी समढीयाला करी हती। प० विघा जमीन जूनागढ़ ने श्री कृष्णार्पण मां अपाणी हती। त्रीज खोड़ी करी। चोथ अनीड़ा करी हती। पांचम खोड़ी करी हती। छट्ठ जीकीयाली करी हती। सातमे चरखा हनुमान प्रतिष्ठा करी हती। आठम सोनारीया करी हती। नोम केरीया करी हती। दशम चाड़ीया जइ ने तरगतलाव जइ बे हनुमान जी पधराव्या हता।

अेकादशी गोखरवाला करी हती। बारश चानगढ़ करी हती। तेरश हाथशणी जइ हनुमान प्रतिष्ठा करी खोड़ी त्रण दिवस रोकाणा हता। वद बीजे नीकली त्रीजे जामनगर आव्या हता। मोटी शिक्षापत्री कथा चालू करी हती। वैशाख बद अमास ना श्री आनन्द प्रसाद जी महाराज ना गादी वाला तथा स० पु० श्री मायातीतानन्दजी स्वामी श्री तथा को० स० पु० धर्मस्वरूपदासजी स्वामि वगेरे सन्त मंडल वडताल थी जामनगर पधारी ने द्वारोका गया हता। अषाढ मा हरिदिग्विजय कथा वंचाती हती। भादरवा वद मां ब्रह्म वैवर्तपुराण वंचांतु हतुं।

* २०११ :—

संवत् २०११ मां माघ मां वाराहपुराण पुरू कर्यु हतुं। बैशाख मां वामन पुराण वांच्युं। अषाढ़ मां कूर्म पुराण वांच्युं हतुं। ता: १०।७।५५।२०११ ना खषाढ़ बद पांचम ने रविवारे जामवणथली बाईओ ना मंदिर ना भर्या मां गया हता। सांजे जामनगर आव्या हता। श्रावण मां सत्संगिजीवन नी कथा वंचाती हती।

* २०१२ :—

संवत् २०१२ मां मागशर थी ब्रह्मांड पुराण वंचातुं हतुं। चैत्र मां हनुमान जी, गणेश जी नुं रंग काम कराव्युं हतुं मंदिर नी प्रदक्षिणा बांध काम चालू राख्यु हतुं धूम्मट मा फूवारा नो नल नखाव्यो हतो। जेठ मां चांदी नो मोटो हिंडोलो कराव्यो हतो। गरूड़ पुराण नी कथा वंचाती हती। श्रावण थी पोष पर्यन्त सुधा सिन्धु वांच्यो हतो।

* २०१३ :—

संवत् २०१६ मां मार्कण्डेय पुराण नी कथा, कार्तिक मां वंचाती हती। तथा मागशर मां मत्स्य पुराण वंचातुं हतुं। अने सत्संगिजीवन टीका सहित बार महिना बांच्युं हतु। तथा प्रदक्षिणा सम्पूर्ण बांधी लीधी हती। तथा चांदी ना वारसाखो डेरा ना कमाडो माटे कराव्या हता।

* २०१४ :—

संवत् २०१४ मां डेरा नी कोली मां उम्वराओ मां आरस, टाईल्स, रंग काम, भीत मां टाइल्स फूधारो कराव्यो हतो। घूम्मट मां तमाम चित्र रंग काम तथा प्रदक्षिणा ना सारा थांभलाओ कोतरणी काम कराव्या हता। श्री गुणातीतानन्द स्वामी नी पांच प्रकरण नी वार्ता संस्कृत मां रची ने पूर्ण करी हती। २०१४ मां जाम वण थली नो चांदी नो हिंडगेलो पूरो कराव्यो हतो। जामनगर मां श्रावण मां सत्संगिजीवन कथा करी हती। भादरवा मां श्री गुणातीतानन्द स्वामी संस्कृत वार्ता नी कथा वांची हती।

* २०१५ :—

संवत् २०१५ मां फरी थी श्री गुणातीतानन्द स्वामी नी संस्कृत वार्ता कथा वांची हती। पोष माघ मां श्री गोपालानन्द स्वामी नी वार्ता त्रण प्रकरण नी संस्कृत पद्य मां रचना पूरी करी हती।

* २०१६ :—

संवत् २०१६ जामनगर प्रदक्षिणा मां आरस पथराव्यो हतो।

* २०१७ :—

संवत् २०१७ मां चांदी नुं पारणुं कराव्यु हतु। पोष सुदी पुनम थी घूमट ना थांभलाओ ने आरस चढ़ाव्यो हतो।

* २०१८ :—

संवत् २०१८ मां प्रदक्षिणा नी बेठको, बांकड़ाओ मां मोजेक काम कराव्यु हतुं। प्रदक्षिणा मां इलेक्ट्रीक फीटींग कराव्यु हतु। श्री गोपालानन्द स्वामी नी वार्ता संस्कृत पद्य मां कथा वांची हती। सत्संगिजीवन नी कथाओ चालू हतीज। आशोवद अमासे संस्कृत वार्ता ना पुस्तकों ना पारसलो जामनगर आव्या हता।

* २०१९ :—

संवत् २०१९ मां जामनगर मंदिर ना काम काजो थी निवृति लेवा राजी नामुं आपी अरजी द्वारा बदली मांगी हती। जेठ वदी ११ : राजी नामुं आप्या पछी अषाढ़ बद चोथ ना मंगलवारे बदली थता जाम वंथली गया हता। त्यां सुधी सुधासिन्धु अने गुणातीतान स्वामी नी वार्ताओ : कथाओ वंचाणी हती।

प्रेमजी बाधा खोलीया अे विद्यालय बंधाववा फूलवाड़ी जाहेर दान कर्युं हतुं। श्रावण मां कालापाणा खाण मां थी कढाव्या हतां। मेहनत करता हरिभक्तो ने चाह, गांठीया पोते जमाड़ता हता। त्रणे मोतैया नी रसोई जमाड़ी हती। आशो बद आठम नो शास्त्री जी ओंगण साठमुं वर्ष बेसतां ते साल नो जन्म जयंति दिन नो उत्सव महोत्सव समस्त गामे हरिभक्तो अे ऊजव्यो हतो।

* २०२० :—

संवत् २०२० आशोवद अग्यारस आवी जुनागढ़ रहया हता। त्रण महीना सभा मां कथा वार्ताओ करी हती। कार्तिक शुद त्रीज रविवारे ता: २०।११।६३ ना जुनागढ़ जुना सभा मंडप मां व्याख्यान सभा थइ हती। पोष शुद अेकादशी अे वडाल विगेरे देश ना गामो मां फरवा गया हता। पोष बद चोथ चोकी मां, बद सातम परबड़ी मां, नोम सांकली मां अग्यारस नानी सांकली मां, बारस जेतल सर मां, तेरश रूपावटी मां, चौदश अनोडा मां, माघ शुद छट्ठ खोड़ी मां, आठम समढ़ीयाला मां, अग्यारस भेंसाण मां कर्या हता। माघ वद बीज परब बावड़ो करी हती।

बद त्रीज चणाका करी हती। माघ वद पांचम नो जुनागढ़ महारूद्रयाग दयाशंकर ठाकरे करावेलो, तेमां आव्या हता। अग्यारसे चणाखा पाछा गया हता। अमास ना कोटडा गया हता। फागण शुद त्रीज पीपलीया, पांचम राणपुर, सातम सोडवडी। अग्यारस खारचीया पुनम थाणागालोड़ करी हती। फागण बद पांचम जूनागढ़ करी हती। छट्ठु पिपलीया करी, त्यांथी बोडका वंथली थइ ने सात में ऊना थइ ने बारपटोली मां आठमे शिक्षापत्री कथा चालू करी हती।

फा० ब० २०२० नी, १३ तेरस नी समाप्ति करीने पाटी समढीयाणा कथा मां शिक्षापत्री कथा अधिक चैत्री शुद २-थी-८ सुधी वांची हती। तुरतज नोम रात्रेथी पुनम सुधी त्रीजी कथा संत्सगिजीवन बे प्रकरण कोदीया वांचया हता। चैत्र वद पड़वो सराकडीया कर्यो हतो। वद : २ रापड़ी करी। त्रीज आदसंग करी, पांचम जीवापर करी डेडाण गया। बद ९ थीं अमास सुधी मोटा समढीयाला शिक्षापत्री कथा सप्ताह वाच्युं हतुं। त्यांथी नाना समढीयाला जीवापर नालीयेरी मोली थई बीजी चैत्र शुद अगीयारसे ऊना गया हता, त्यांथी जूनागढ़ आव्या।

२०२० ना वैशाख सुद सातमे जामवणथणी गया हता चूना नी भट्ठी नखावी, फूलवाड़ी मां ओरडा ना पाया भरी आठमे बाधी भरती भरी हती। पाछा जेठ शुद : १० ना जूनागढ आव्या हता जेठ शुद : १४ नुं भंडार ने मेडे जिज मकान नु वास्तुं लीधुं जलेबी, साटा जमाडया।

ता० २१।६।६४ मां जीर्णोध्धार समिनि रचाणी तेनु प्रमुख पंणु स्वीकार्युं। श्रावण मा जामवंथली मां भागवतनी कथा वांची। भादरवा वद पांचमे थी अगत्राई मां भागवत अने शिक्षापत्री नीं कथा सप्ताह वांची। भादरवा बद०।। अमासे केशोद रहया। आशो पड़वे जूनागढ आव्या। आश्विन शुद : बीज नी लाखापादर मूर्ति प्रतिष्ठा करी। आशो शुद–४–ना मोटी कुंकावाव छट्ठु ना देरडी। सातम ना जूनागढ़ पहोची गया हता।

* २०२१ :—

संवत २०२१ मां कार्तिक वद पांचमे धोरा जी देश फरवा गया हता। वद ८ ना जामवंथली गया हता। बद अमांसे धोराजी आव्या। त्यां थी फणेणी श्रीमासी बड़ा मा करी ने पुष शुद अगीयारसे वीरपुर जइ रहया हता। पोष बदी ११ जूनागढ आव्या त्या थी नाम वण थली गया। फागण शुद पुनमे लाखाण गया। फागण वद तीजे चावणा गया फागण वद ७ अलैपा मोडा गया बद अग्यारसे वथली गया। जे वद तेरश ना जामनगर गया। चैत्री शुद मां खोखरी जइ शुद पांचम ना खंढेरा शुद चौदश ना कापाथ, चैत्री बद आठम ना कंदारेडा, वैशाख वद ०)) अमास ना वीरपुर थइ। जूनागढ़ आव्या। अषाढ़ शुद त्रीज ना जाम वथंली गया। भादरवा बद ४ ना जूनागढ आव्या।

* २०२२ :—

संवत २०२२ मां मागशर वद : ११ घोरा जी करी माघ शुद ११ : जूनागढ करी। फागण वद चौदश थी जामनगर मां शिक्षापत्री नी कथा वांची। वैशाख बद २ थी ७ सुधी माणावदर मां शिक्षापत्री नी कथा वांची। भादरवां मां वांटवा वाला डोक्टर नी शिक्षा पत्री नी कथा माणा वदर मां सप्ताह वांचो। आश्विन मां जूनागढ हरिदिग्विजय नी कथा वांची।

* संवत २०२३ :—

मां कार्तिक बद मां सणोसरा कथा वांची। पछी सियालो अढ़ी २।। मास ऊपलेटा बन्ने मंदिरो मां रोकाणा। देश ना गामड़ाओ भायावदर विगेरे मां फर्या। आश्विन शुद १२, १३ मां जूनागढ़

श्री गुणातीतानन्द स्वामी शताब्दि अक्षर निमिते त्रण दिवस संस्कृत गुणातीतानन्द स्वामी वार्ता वांची। ३१०००। अेकतीस हजार नो फालो, धर्मशाला नो जीर्णोद्धार माटे नोंधायो हतो।

* २०२४ :—

संवत २०२४ मां कार्तिक शुद मां राजकोट संत्सगिजीवन पारायण वांच्युं हतुं। जाम वंथली चार दिवस रोकाया हता। मागशर वद ६ : ना ऊपलेटा देश फरवा गया हता। माघ वद पांचम नां भायावदर गया हता। चैत्र वद मां भक्तितनयदासजी स्वामी पाछल जूनागढज सप्ताह कथा वांची हती। वैशाख शुद ६,१०,११ मुंबई मां महा शताब्दी पाटोत्सव मां व्यास पीठे शिक्षापत्री नी कथा वांची हती। वैशाख बद मां बोरीवली तथा कांदीवली गया हता। जेठ शुद मां पुना फूगेवाड़ी गया हता। त्यां थी कराड गया हता। जेठ शुद नोम ना सांजे थाना थइ ने परवारा जूनागढ समैया मां पहोच्या हता। जीर्णोद्धार समिति बोलावी हती। भादरवां मां मोरजर देश फरवा गया हता। तथा ध्राफा गया हता। दिवाली अे पाछा जूनागढ़ मां, ने दिवाली जूनागढ़ करी।

* २०२५ :—

संवत २०२५ मा कार्तिक मां राजकोट पारायाण वाच्युं हतुं मागशर मां मोरजर गया हता। पछी माघ मां राजकोट, जामनगर, गोंडल माणावदर, शापुर मां जीर्णोद्धार ना फाला माटे फर्याहता। तेनो समस्त रू० ३३०००। तेतीस हजार नो फालो थयो हतो।

संवत २०२५ नो प्रथम अषाढ़ मुंबई कर्यो हतो सत्संगीजीवन बीजु प्रकरण तथा पुरुषोत्तम मास कथा वांच्या हता। फालो १,५०,००० अेक लाख पचास हजार थयो हतो।

* २०२६ :—

संवत २०२६ मा बैशाख मां काशी लालजी ना विवाह मां शुद पांचमे पहोच्या हता। बैशाख शुदः ६ शनिवारे पंडित सभा बोलावी हती। संस्कृत व्याख्यान शास्त्रार्थ विगेरे थया हता। वैशाख शुद १० : रवि वारे वैदिक बसन्त पूजा नी सभा बोलावी हती। ते सभाओ तरफ थी शास्त्री जी महाराज ने खुशीयाली नी "वैष्णव विद्वत् सार्व भौम" ऊपाधि अर्पण थइ हती। पछी बैसाख सुद १२ ना बड़ोदरा जवा ऊपड़या हता। वड़ोदरा : १ दिवसे रोकाणा जाहेर व्याख्यान आप्यु हतु। अने पछी जूनागढ़े आव्या हता।

* २०२७ :—

संवत २०२७ मां हरिप्रसाद बापला स्वामी नी पाछल जूनागढ़ मां कथा वांची हती। राजकोट बेडी ना नाके नवे नामे करावेल मंदिरे कार्तिक मां कथा सप्ताह वांची हती। समाप्ति नी नोम नी राते जूनागढ़ नी धर्मशाला अग्नि वड़े भस्मि भूत थइ हती। बीजे दिवसे मंदिरे यज्ञ अने वाड़ि मां मोटे मंदिरे श्री घनश्याम महाराज ना रंग काम माटे करावबा थी पुनः प्रतिष्ठा महोत्सव कर्यो हतो। महोत्सब करी ने मागशर बद १२ ना जूनागढ़ रोकाणा हता। जीर्णोध्धार समिति नी बेठको लीधी हती।

* २०२८ :—

संवत् २०२८ मा बलेला खंढेर पड़ाव्या हता। मूलतल साफ कराव्यु हतुं। माघ मां बाबरीया वाड मां फालो लख्यो हतो। तेना ७६०००।– छोंतेर हजार नवा सभामंडप ना फालाना थया हता। प्रथम वैसाख सुदी मां वीरपुर कथा सप्ताह मां गया हता। त्यां थी अेक हजार फाला मां आव्या

हता । प्रथम वैशाख बद मां राजकोट मां सत्संगीजीवन नी कथा समाप्ति मां बाई ओ ना मन्दिर पूर्ण थवा ने निमित्ते यज्ञादि मां हाजर रहया हता ।

बीजी बैसाख २। बद मा खारा पाट मां नाना गोखरवाला मन जी पूना पटेल ने त्यां तेना नवा मकानो मां कथा सप्ताह तथा वास्ता मां गया हता । त्यां कथा समाप्ति सांजे फालो सिंहासन माटे नोंधायो हतो तथा मोटा गोखर वाला अमरेली चानगढ़ अे मली ने ३१००० अेक त्रीश हजार नो फालो नोंधायो हतो । जूनागढ़ आवी ने बीजी वैशाख बद १३ ना राजकोट लाडवा साहेब दामोदर खीम जी भाई ना नवा बंगलेवास्तु मां गया हता । पिपलाणा नासन्त शिक्षापत्री भणतां हता जेठ शुदः १५ पुनम पछी स स्वामी बालमुकुन्ददासजी नी चित्र प्रतिमा तथा अवतारी अवतारो नी मोटी चित्र प्रतिमा साथे लइ ने देव प्रकाश ने बोटाड़ मोकल्या हता ।

हरि कृष्णदास जी पुराणी अने देव प्रकाश बन्ने प्रतिमाओ ने लइ ने मुंबई गया हता । श्रावण मास पूरो रहया हता । अने प्रतिमाओ ना मुद्रण रंगीन कराव्या ना कोल करार करी छापनार ने सोंप्या हता । पछी जूनागढ़ आव्या हता । अेक वर्ष बाद ते प्रतिमा मुद्रित चित्रो तैयार थया हता । मोटीछबी ने पूना मां कढ़ावी हती । मुंबई थी प्रेस नी नुकशानी होवा थी ते काम थइ शक्यु नही ।

* २०२९ :—

संवत् २०२९ मां मागशर मां राजकोट भागवत कथा वांची हती । चैत्र मां गाम कालेज मां भागवत पारायण मां गया हता । नवा सभा खंड माटे सात हजार नो फालो थयो हतो, वाडी मां बंगलीं मां उतारो हतो वैसाख मां गाम गलोदर मां भागवत पारायण मां गया हता । त्यां थी नवा सभा मंडप माटे पांच हजार नो फालो नोंधायो हतो । बीजे समय जुनागढ़ व्यतीत कर्यो हतो । गढ़पुर मीठाई वाला शेठ तरफ थी थअेला ओरडा निमित्ते महोत्सव मां गया हता । सतत शास्त्रो सदा लखाता हता ।

* २०३० :—

संवत् २०३० मां मागशर पोष, अने माघ सुरत मां रहया हता । कथाओ वांची हती । अने ४६०००।– छेतालीश हजार नो फालो मोजेक माटे मल्यो हतो ।

चैत्र सुद मां राजकोट निर्मला बाइ अे नागरदास भाइ पति पाछल करावेला भागवत पारायण मां गया हता , वैशाख शुद ५ थी मोटा समढीयाला भागवत पारायण माटे गया हता । सत्संगी जीवन पारायणी छपाववा बावीस हजार नो फालो नोंधायो हतो बैसाख वद पड़वो हनुमानपरा दाता अे फालो आप्यो हतो, वद वीज खांभा करी वद त्रीज तोरी राम पर मां भागवत परायण वद चौथ थी अग्यारस सुधी वचायु हतु । अग्यार हजार फालो थयो हतो । वद १३ तोरी रहया हता । सारो फालो मल्यो हतो । चौदश वडींया करी हती । अमास चारण समढीयाला करी हती । पांच जार नो ५०००।– नो फालो नोंधायो हतो । जेठ शुद पडवाअे जूनागढ़ आव्या हता । जेठ समैयो कर्यो हतो । अषाढ़ श्रावण जूनागढ़ कर्या हता । तत्व प्रभावती मीमांसा किरणावली विगेरे रची पूरा कर्या हता । सत्संगी जीवन परायण पूरीं करी हती ।

संवत् २०३० आश्विन मां मोरजर गया हता । १२००० बाद हजार नो फालो कर्यो हतो । दीपोत्सवी जूनागढ़ करी हती । पाठशाला नवो होल चालू कर्यो हतो ।

* २०३१ :—

संवत् २०३१ मां बस लइ ने कार्तिक शुक्ल अेकादशी करवा धोलेरा धोलरा थइ वड़ताल (वलता वढावाण थइ) डोढ सौ वर्ष नो पाटोत्सव दर्शने गया हता । जूनागढ़ आव्या हता । मागसर मां

राजकोट त्रण दिवसो वचु भाइ ना पुत्र ने लग्नप्रसंगे आशिर्वाद देवा पधरामणी करवा वाहन वडे लइ गया हता।

तीर्थ मां सेवको ए स्मारक कर्यु हतु। जूनागढ नो नवो मोटो सभा मंडप पूर्ण थयो हतो। सोना चांदी नू सिंघासन पूर्ण थयु छे। गुणातीतानन्द जी स्वामी नो स्मारक ओटो करी पूर्ण कराव्यो छे। बैशाख ना पाटोत्सव मां नवा सभा मंडप मां सभा वेसवा वास्तु नक्की करावी सभा चालू करेल छे हवे रंग काम खंडो ना नक्की कराया छे।

* २०३२ :—

संवत् २०३२ ना वैशाख मां पाटोत्सव साथे मोटु भर्यु करवा जप यज्ञ करवा जाहेरात मेला अेली छे।

* २०३१ :—मां आश्विन कृष्णाष्टमी अे मोटी कुंकावाव मां प्रतिमा प्रतिष्ठापन थअेल छे।

ॐ ॥ श्रीस्वामिनारायणो विजयतेतमाम् ॥ ॐ

श्रीमतां श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदायदीक्षितानां दार्शनिकपञ्चानन-षड्दर्शनाचार्य-
नव्यन्यायाचार्य-सांख्ययोगवेदान्तमीमांसातीर्थानां पदवाक्यप्रमाणप्रमिति-
पारावारपारीणानां पण्डितवर्याणां—

श्रीकृष्णवल्लभाचार्य—

स्वामिमहोदयानाम्

अभिनन्दनपत्रिका

भो ! भो ! मुमुक्षुविद्वज्जनसहृदया महात्मानः श्रीमन्तोऽत्र
स्तम्भतीर्थनगरे समुपस्थिताः सर्वशास्त्रकुशलाः—

श्रीकृष्णवल्लभाचार्यस्वामिमहोदयाः !

सम्प्रति किल भारतवर्षे शिथिलप्रायसनातनवैदिकधर्मस्योज्जीवनाय विविधग्राम-नगराणि पर्यटद्भिर्भवद्भिः स्तम्भतीर्थ (खंभात) नगरमागत्य नागरिकबृहत्सभायां श्रुतिशास्त्रादिसिद्धान्तमनुसृत्य जगज्जीवेश्वरपरमपुरुषार्थादिधार्मिकतत्त्वावबोधकानि प्रवचनानि कृत्वेदानीन्तनेभ्यो जनेभ्यो धर्मोपदेशान्दत्वाऽत्रत्याः प्रजाः सम्यक् सन्तोषिताः, भवतां भक्तिज्ञानादिविवेकनिपुणतां दृष्ट्वा समयोचितां व्याख्यानपरिपाटीञ्चावलोक्य परमामोदवन्तो वयम्, अतः सद्गुणाख्यं हार्दिकं वाङ्मयमभिनन्दनमर्पयामः साभारप्रदर्शनं च कुर्मः ॥

श्रीस्तम्भतीर्थे विशदे सुरम्ये श्रीस्वामिनारायणमन्दिरे वै ।
व्याख्यानमालार्पितया जनेभ्यो धर्मोपदेशोऽहरहः प्रसङ्गे ॥ १ ॥
श्रीकृष्णस्य प्रियोऽयं नयविनययुतो भारते लब्धकीर्तिः
मीमांसासांख्यतीर्थे श्रुतिशिरसि महापण्डितः सर्वशास्त्रे ।
श्रुत्वैतद्धर्मतत्त्वप्रवचनमभवत् स्तंभतीर्थे प्रसिद्धं
लोका ज्ञानञ्च लब्ध्वा परमसुखवहं प्राप्नुवन्ति प्रशान्तिम् ॥ २ ॥
लक्ष्मीपतिः स भगवाँश्छ्रीमन्नारायणो विभुः ।
स्तंभतीर्थे निवसतां करोतु कुशलं सदा ॥ ३ ॥
जयन्तु ते सुज्ञमहाशयाश्च युष्मत्प्रयत्नः सफलः सदा स्यात् ।
कुर्मस्स्तवं श्रीहरिसन्निधौ जीयासुश्चिरं कौ परमार्थसिद्धये ॥ ४ ॥

आषाढ शुक्लैकादशी
विक्रम संवत् २०००
खंभात.

भवदीयः
यमुनाशंकर-देवशंकर-शास्त्री
मंत्री-श्रीगुर्जरराष्ट्रसनातनवैदिकधर्मप्रचारिणी
सभा-खंभात.



॥ श्रीमदौपनिषदः परमपुरुषो विजयते ॥

विद्वत्सम्मानपत्रम्

श्रीमद्वाराणसीविविधशास्त्रीयविद्यानिधानविपश्चिद्वरेण्याय नव्यन्यायशास्त्राचार्याय सांख्ययोगवेदान्तमीमांसादिदर्शनशास्त्रान्तःप्रविष्टपाण्डित्याय विद्याध्ययनोपयोगिन्यायसाङ्ख्ययोगादिशास्त्रीयविशदकिरणावल्यादिव्याख्याविरचयित्रे विद्वज्जनहार्दिकस्नेहपात्राय श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदायाश्रिताय पण्डितश्रीकृष्णवल्लभाचार्याय श्रीवाराणसेयविद्वत्सभायां समुपस्थितपण्डितमण्डलेन **"वैष्णवविद्वत्सार्वभौम"** इतिसदुपाधिः सम्प्रदीयते ।

[दिनाङ्कः ९-५-७०]

शुभाशंसकः

काशीस्थविद्वत्समाजस्य प्रतिनिधिः

वासुदेवद्विवेदी शास्त्री

वाराणसीस्थ-सार्वभौम-संस्कृत-प्रचार-कार्यालय-

सञ्चालकः

To.

Pdt. Navya Nyayacharya,

Sjt. Krishnavallabhacharyaji Maharaj Shree.

Dear Sir,

We the satsangis of Surat have undergone an excellent enjoyment on account of gettiny, a marvellous and wonderful speech daily. We have attended mang a sadguru of our sect, upto this time but we must say that we were never attracted so much as this time.

Your graceful and spiritual speech has the enormous power to attract the audience for hours together. Your speech, if I do not forget, then, is not a human one. but an exhuberence overflow that is running from the mouth of a divine spirit.

At the same time it is a noteworthy thing of your speech, that it is always full of interesting examples that are generously selected from our ancient 'CLASSICS.' We wish you always, to be here with us, but to our ill luck we are not fortunate enough to get our wish fulfilled.

Oh 'RARE SPIRIT' of the Satsang we earnestly request you to make us blessed by your godly speech in the early–earliest future, according to your convenience.

We hope that you will always keep the satsangis of Surat in your heart.

We beg to remain Sir
Your most obedient 'Charan raj' Sevaks.
For and on behalf of
Satsangis of SURAT.

श्रीमद् दार्शनिक पंचानन-षड्दर्शनाचार्य-नव्यन्यायाचार्य-सांख्य-योग-वेदान्त-मीमांसा-
तीर्थ सदगुरु स्वामी पंडित शास्त्री श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजो ने राजकोट नां
हरि भक्तो तरफ थी अपायेल मानपत्र

मान पत्र

प० पू० सदगुरु शास्त्री श्रीकृष्णवल्लभाचार्य जी,

अमो राजकोट ना हरिभक्तो आप श्री नु अत्रे थी जामनगर प्रति प्रयाण थतां अमारा हृदय नी अमिओ अने आप प्रत्येनी लागणी मां थी उद्भवता अमारा अवाज ने आ प्रसंगे शाब्दिक रूप आपी कृत कृत्यता अनुभवीअे छीअे।

राजकोट ना मंदिर ना महंत पदे आपना आगमन बाद बे वर्ष ना टुक समय मां आपे आपनी लाक्षणिक शैली थी, विद्वता अने ज्ञान नी श्रोताजनो ने जे प्रसादी आपी सुधा रस नुं पान कराव्युं छे, तेमज मंदिर बांधकाम नां पूर्णता, घनश्याम महाराज नी जुने मंदिरे थी धामधुम साथे नवा मंदिरे पधरामणी, लक्ष्मीनारायण देव हरिकृष्ण महाराज, अने धर्म भक्ति अने श्रीजीमहाराज नी नवी मूर्तिओ नी प्रतिष्ठा, ध, धु, आचार्य महाराज श्री नी अत्रे पधरामणी करावी देव नी उतरावेल आरती, मंदिर ना शिखरो पर सुवर्ण कलश नुं स्थापन, संतो माटे नवी धर्मशाळा नुं अने सभा गृह नुं बांध काम, तेमज शीखर बंध मंदिर ने अनुरूप अेवी नोबत वगड़ावबा नो प्रबंध आदिक आपनी प्रेरणा थी थयेल कार्यो माटे राजकोट नो तमाम सत्संग आपनो हार्दिक आभारी छे।

आपे मंदिर ना हित मां जे कार्यो करी बताव्या छे ते सौ कोई ने मार्गदर्शक बने, आपनी विद्वत्ता, ज्ञान, अपरिग्रह, भक्ति, उपासना, उद्दात चारित्र्य, शान्त प्रकृति, निखालस स्वभाव अने सत्संगीओ प्रत्ये नी दयालु वृति थी आपे सत्संग मां सारो समास कर्यो छे। आपने आपने अे रीते संप्रदाय नी सेवा नो विशेष-विशेष लाभ श्री हरि सदा आपे अने आप श्री जी महराज नो दिव्य संदेशो फेलावी सत्संग नी वृद्धि करी लोको ना जीव ना कल्याण नो मार्ग सरल करशो।

परम कृपालु परमेश्वर श्री जी महाराज ने अमे प्रार्थिअे के आपने दीर्घायु आपी सत्संग नो प्रचार अने प्रसार आप द्वारा करावे।

लि०

सतसंग ना दासानुदास हरि भकतो.

विजयसिंहजी रतन सिंहजी
(लोधिका बापा साहेब)
मूल जी देवराज टांक

राजाराम पुरुषोत्तम भट्ट
जेठा लाल बाल जी मोरी
झवेरी नारण दास प्रेम जी भाई

माणावदर नगर पंचायत

सन्मान पत्र

श्री सनातन धर्म धुरंधर विशिष्टाद्वैत सिद्धांत प्रवर्तक श्री वैष्णव महामंत्र समर्पक लोक कल्याण कारक जन शान्ति प्रद शुद्ध ज्ञान प्रदर्शक आचार्य वर्य सनातन धर्म सम्राट १००८

श्री नरेन्द्र प्रसाद जी महाराज श्री ना करकमलो मां

माननीय आदरणीय आचार्य श्री

आजे माणावदर नी जनतावती माणावदर नगर पंचायत ने आपनु स्वागत करतां खुब आनंद थाय छे भगवान श्री स्वामिनारायण नी छत्र छाया नीचे माणावदर नी भूमि ना संतानो आपनुं स्वागत करे तेमां कई अनुचित नथी। आजे अमो आपनू स्वागत करता धन्य बन्या छीअे। माणावदर नी भूमि ऊपर घणा महान भक्तो थइ गया जेमां भक्त शिरोमणी मयाराम भट्ट तथा गोबिंदराम भट्ट। विदेही स्थिती वाला पटेल पर्वत भाई तथा पटेल भीभ भाई बिगेरे मुख्य छे. आ महान भक्तो माटे माणावदर गौरव ले छे।

आप श्री अे माणावदर मध्ये शिखर त्रण समलंकृत महा मंदिर बंधाववा नी आपना सेवको ने आज्ञा आपी अने टुंक समय मां भव्य नव्य सुशोभित सुदृढ़ मंदिर तैयार करावरावी तेमां मुर्तिओनी प्रतिष्ठा आप श्री ना शुभ वरद हस्ते करावी ने श्रेयार्थीओ माणावदर नी जनता ना आत्म कल्याणार्थे दैवी मार्ग आप श्री अे काय मी स्थापित कर्यो छे। आ शुभ कार्य बदल अमो आपना हार्दिक आशीर्वाद ना पात्र बन्या छीअे। आवा यज्ञ महोत्सव अने धार्मिक कार्य अहिं थता रहे अेवी शुभ आशिषो अमो मागीअे छीअे।

श्री स्वामी नारायण मंदिर मां मुर्तिओ नी प्रतिष्ठा प्रसंगे आप श्री अे माणावदर नी जनता ने आध्यात्मिक ज्ञान दान द्वारा उपकृत कर्या छे तेमज आपना संप्रदाय ना सु प्रसिद्ध पंडित प्रवर शास्त्रि श्री कृष्ण वल्लभाचार्य स्वामी द्वारा पांच दिवस पर्यन्त जे आध्यात्मिक ज्ञान वृष्टि द्वारा लोको ने नवजीवन अर्पण करेल छे ते बदल पण अमो आभारी छीअे आ शुभ प्रसंग ने दीपाववा आप शास्त्रीजी उत्तर प्रदेश मां वीराजताहता त्यां थी गरमी ताप ने नहि गणता दैहिक कष्ट सहन करी ने प्रवास खेडी ने पधार्या छो ते थी आपना सवै सेवको तथा अमो खूबज ऊपकृत थया दीये। आज थी एक वीस वर्ष पहेंला

आप आचार्य ना परम पुज्य पिता श्री ये माणा वदर पधारी माणा वदर नी जनता ने ज्ञान दर्शन नो जे लाभ आप्यो हतो ते आज आपना दर्शन थी ताजोज होय तेम अनुभवाय छे।

अन्त मां अमो परम कृपाणु परमात्मा पासे प्रार्थना करीये छीये के तेओ आप श्री ने दीर्घायु बक्षे अने आपना अध्यात्मिक ज्ञान दर्शन थी लोको नुं जीवन नव पल्लवित थाय तेवी कामना सह अमो वीरमीये दीये।

नगर पंचायत
माणा वदर (गुजरात)
ता. ११-५-६६

अमो दीये आपना
अरजण रव जी पटेल (सभापती)
माधव जी नान जी मकुम (ऊपसभापती)
नारायण गोविंद यादव (सदस्य)
सेवा दास झीणा राम ,,
करमसी जेठा भाई ,,
तेजा भाई राम जी ,,
वाला भाई हीरा भाई ,,
तथा माणा वदर नगर पंचायत ना
अन्य सदस्य श्री ओ।

विशिष्टन्यायशास्त्रस्य

तत्त्वप्रभावल्याः हार्दं मननम् (भूमिका)

महामहोपाध्याय टी. गणपतिशास्त्री

राजकीय प्राध्यापक, त्रिवेन्द्रम्

गौतमीयन्यायविद्या सर्वन्यायमूर्धन्या सर्वन्यायगर्भतत्त्वान्तरप्रवेशवती प्रोक्तैव साऽऽन्वीक्षिकी सर्वेक्षणकारिणी सन्देहहारिणी तत्त्वनिर्णयप्रचारिणी मेधाबद्धारणायोगिनी पञ्चावयवादिप्रयोगिणी बह्वंग-प्रत्यंगसंरोहिणी महाविद्या प्रोच्यते। एषा बहुभिर्विद्वद्भिर्बहुधा सुसंस्कृतिं नीताऽपि नवीनां नवीनां संस्कृतिं भावयमाना सर्वोत्तरप्रधानैवाऽवशिष्यते। अन्यविद्यानां वैशाल्ये विशालतां प्रयाति गहनतां प्रकटयति तर्ककर्कशतामुद्भावयति, पाण्डित्यं द्योतयति सार्वज्ञ्यनिभतां वितरति स्वप्रसादं सर्वेभ्योऽर्पयति तेजस्विनः करोति स्वप्रकाशतां वर्धयति परप्रकाशतां परिहरति बुद्धायाऽपि प्रबोधं ददाति विद्वत्त्वतर्पणं सम्पादयतीति किमु वक्तव्यमान्वीक्षिक्याविषये।

सेयं न्यायपरिशुद्धिरूपा विशिष्टन्यायस्वरूपाऽपि च प्रकाशते। लाघवगौरवादिविचारैरेवं सम्पद्यते, तत्र स्वरूपाणि वेषान्तराणि भजन्ते, विदुषामन्वीक्षणवैलक्षण्यादेवं भवति। यथोपपन्ना अप्यर्था अन्वीक्षणेनाऽन्यथाऽप्युपनीयन्तेऽधिकार्थानपि समावेशयन्ति सिद्धानपि ह्रासयन्ति, इत्येतत्सर्वं तार्किक-प्रतिभामाहात्म्यम्। तत्त्वप्रभावलीनामको नव्यन्यायग्रन्थो विशिष्टन्यायात्मकोऽत्र पण्डितधुरन्धरश्रीकृष्ण-वल्लभाचार्येणाऽऽविष्कृतः, स चाऽधिकान् पदार्थान् व्यवहार्यान् कुक्षीकृत्य विश्रुतो विद्यते। ग्रन्थोऽयं समयानुसारेण समीचीनो जातः, विंशकलितानांविशीर्णदशानामपि तदंगप्रत्यंगपदार्थानामेकपिण्डात्मकः सुपाण्डित्यविषयो जात इति वीक्ष्य प्रमोदते हृदयम्। पण्डितप्रवरा अप्येनं कीर्तयन्ति युगानुरूपं मूर्धन्य-मिति। मुक्तावलीन्यायवत् परीक्षाक्षेत्रे रक्षणाऽर्होऽयं परिष्कृतसमस्तपदार्थानामावेदको महार्क इव समुदितोऽस्ति तत्त्वमुक्तावलीग्रन्थः सुतत्त्वदृष्ट्या सुसम्मतिविषयश्च, एतादृशाः पण्डिताः पण्डितक्षेत्रेऽपि दुर्लभा यत् आर्षान् ग्रन्थान् रचयन्ति। भारतभूमेः स्वात्मजा एते विद्यादायादा विद्वांसो विद्याविकासान् कुर्वन्तो मातुराशीर्वादानर्जयन्ति, युगानुरूपं विद्याप्रवाहं प्रवर्तयन्ति च। ग्रन्थोऽयं सम्पूर्णश्चतुःखण्डात्मकोऽपि बहुविद्वद्विषयसंपूरितो दर्शनप्रतीकतां भजते। मन्ये परीक्षाक्षेत्रेषु ग्राह्यो भविष्यतीति। बहूनां ग्रन्थानां विषयाणामत्रैकमत्येन निहितानामपि लाभप्रदः सन् चिरेणाऽचिरेण वा पाठ्योऽपि भविष्यति। सर्वशास्त्रो-पकारक इति ग्रन्थेनाऽनेन सह तत्कर्ता श्रीकृष्णवल्लभाचार्यो पण्डितवर्यो बार्हस्पत्यातिरेकिणीं कीर्तिं प्राप्नोतु॥

योगदर्शनस्वामिनारायणभाष्यभूमिका

महामहोपाध्याय पं० शिवदत्त शर्मा

भूतपूर्व प्रधान पं० ओरियेन्टल कालेज, लाहौर

योगस्य पारोनास्ति, यत् ब्रह्माण्डे तत् पिण्डे, पिण्डप्रविष्टस्य ब्रह्माण्डप्रवेशात् विभूतीनां तत्र पारो नास्ति, सिद्धीनामैश्वर्याणामिति च नास्ति। पातञ्जलदर्शनं वाचस्पतिटीकायुक्तं व्यासभाष्यसहितं तथा भोजदेववृत्तिसहितं सुप्रमाणमध्ययने चोपादेयं वर्तते, घेरण्डसंहिताऽपि योगदर्शनसामाना भवति। गोरक्ष-पद्धतिरपि सरलयोगबोधप्रदावर्तते। विज्ञानभिक्षुकृतानि योगवार्तिकानि च वर्तन्ते। योगियाज्ञवल्क्य-संहिताऽपि योगज्ञानमयी वर्तते। शिवसंहिताऽपि हठयोगक्रियादिवर्णयित्री वर्तते। शिवस्वरोदयः, षट्चक्र-निरूपणम्, कुण्डलिनीजागरणम्, सुषुम्णाब्रह्मरन्ध्रयानम्। इत्यादिग्रन्थैर्योगो विभिन्नक्रियाभिर्विशदीकृतः। एतेषां पूर्णं वर्णनं निजात्मन्येव योगिराजश्रीकृष्णवल्लभाचार्यमहाराजेन श्रीस्वामिनारायणभाष्ये बहुधा बहुविधाभिर्वर्णितम्, ज्ञानमार्गा अपि विशदीकृताः, संयमार्थं न वर्णिता अपि संयमयोग्या ब्रह्माण्डरचना ईश्वररचना ब्रह्मरचनाश्च परमेश्वरभवनरचनां यावत् सर्वारचनाः पृथक्कृतया सुसूत्रनिभनिवेशपद्धतिना सभाष्यविवेचनेन वर्णिताः, नेतिधोत्याद्या नान्तरीयकक्रियाः जन्मौषधिमन्त्रसमाधिसिद्धयोऽपि पृथक्कृतया वर्णिताः, एतद्भाष्ये बहूनामावश्यकतत्त्वानां समावेशोविद्यते। काश्यामेव पण्डितैः सुप्रशंसापात्रीकृतमिदं भाष्यम्। भोजवृत्तिकिरणमपि सरलं कृतम्। योगिक्षेत्रेषु योगशास्त्रं पल्लवितं सत्फलं सद्रसं विजयते। एतद्भाष्यमवलोकनार्हमिति निवेदयामिपरीक्षार्हं चेति सम्मतिं प्रददामि॥ प्राप्तं भाष्यं हृदयेन स्वीकरोमि च॥

Bhavnagar, 18-6-38.

My dear Sequierra Saheb,

I have had occasions to often write to you in the past. But the present occasion, on which I am writing to you is unique in that I have had no such occasion to write to you in the past nor do I think it is likely to recur in the future. Further, it is altogether an impersonal matter and so. I write to you with all the greater freedom.

After this rather mystifying preliminary words, I will come to the subject proper. The Swaminarayan Temple at Junagadh is one of the leading temples of the Sect and it has in the past tradition has it housed many learned and pious men. But never before in its history has it perhaps had the previlege, I venture to think of having as one of its imates such a learned and erudite Sadhu as Shree Krishna Vallabhacharya, whois at present residing there. The Pandit Shree Kri. vallabhacharya was on s-hort visit to Bhavnagar a few days ago and I happened to meet him in a casual way and the short time I was privileged to spend in his company will remain with me a life-long memory. I am no Sanskrit scholar and it would be presumptuous on my part to venture an opinion in such a matter. But it would be no exaggeration to say that the masterly exposition the panditji gave re. the conception of God according to different schools of thought and also as to how they could all be reconciled simply stunned me and the rest of the company alike by its manner of presentation and the wealth of learned citaterns which he went on pouring out without any effort in support of his thesis.

So far as I know, at least kathiawar has no other pandit who can approach him much less equal him. He spent from early boyhood about two decades in kashi pursuing Sanskrit studies and among other degrees that he has obtained may be mentioned the following :—

(1.) Acharya in Navya-Nyaya (2) Vedanta-Tirtha (3) Mimansa-Tirth (4) Sankhya-Tirtha and (5) Sastri in Nyaya.

I attach herewith copies of the diplomas granted to him. I was told by one who knew that he was balking about that even in kashi, the home of Sanskrit learning, the pandit Shri kri. V. has assigned to him the third rank among the learned pandits of kashi although his age today is less than 34. Further, the panditji is a most prolific writer both in Hindi and in Sanskrit and he has to his credit many learned productions, a selected list of which is attached herewith.

My first object in writing to you is to request you that over busy as you are with official work, you will please make time to seek and cultivate the acquaintance of such a learned man who is so easily accessible to you and benefit by his company. There is nothing about the panditji of that sectarian narrowness which too often marks otherwise pious and learned Sadhus of this type and I know, you are sufficient of a cosmopolitan not to allow superficial differences of creed and religion to stand in the way of recognition of true worth and merit.

Another and particular request, I have to make, is that you will please use your good offices in the proper quarters to see that the panditji is recommended at the first opportunity to the Government of India as being in every way worthy of receiving the high distinction of MAHA MAHOPADHYAYA. In kathiawar, so far, only two personages have been awarded this distinction viz. Maha Mahopadhyaya Shri Shankerlal Shastri of Morvi and Maha Mahopadhyay Hathibhai Shastri of Jamnagar. Junagadh is, of course, a Muslim state. But Islam says : "Seek knowledge even if it is to be found in China", and further because Junagadh is Moslim, its recommendation of a Hindu pandit would carry even greater weight and would be without the suspecion of any personal predilectionor partiality. Junagadh should be proud to have such a personality residing at its capital and the State cannot better show its recognition of the worth and value of the pandit Shreek. than by being instrumental even if indirectly, in having the distinction of Maha Mahopadhyava conferred on the panditji.

As I have said at the outset, it is altogether in an impersonal spirit I am addressing this letter to you and I have no doubt but that you will take it in that light. I should only add that I am only eager that rather anyone else in Junagadh you should have the credit of first moving in this matter and obtalning a fitting recognition for the panditji.

With kind regard,

I remain yours,

P. S. If you would permit me, I would forward to the panditji, after hearing from you, a copy of this letter for his private information also requesting him to send to you copies of such of his publications as are available.

To

The Honourable the Resident
for the States of Western India,
Rajkot C. S.

Honourable Sir,

We, the undersigned, residents of Jetpur most hunbly and respectfully beg to bring to Your kind notice the name of Swami Shree Krishnavallabhacharya for conferring on him the title of Mahamohopadhyaya.

He belongs to the Swaminarayan sect of the Hindu religion. It is a sect wirich has housed many learned and pious man but we venture to believe that never before in its history, had it had the previlge of having as one of its inmates such a learned and eradite Pt. as Swami Shree Krishna-Vallabhacharya.

It is no exaggaration to say that the masterly exposition Swamiji gives regarding the conception of God according to different schools of thought and as to who can all be recognised is simply marvellous. The manner of his presention and the wealth of his learning which he goes on pouring to his spelbound audience is really charming.

He is now 35 Years of age and is at present residing in Jetpur in the Swaminarayan Temple. He is a life celebate. He is further a prolific writer and has to his credit several learned production both in Hindi and Sanskrit.

He raceived his education at Kashi. the seat of Sanskrit learning. A title of Navya-Nyaya was conferred on him by the Government Sanskrit College Examination Board in 1935 by its Certificate No. 59 of 1-12-35.

The title of Sankiya-Tirth was awarded to him in 1934 by the Bengal Sanskrit Association by its Certificate No. 1057 of 8th June, 1934. Similarly, the title of Wedant-Tirth and Mimansa-Tirth were awarded to him by the same association in November, 1935 and November, 1937 by its Certificate Nos. 1148 and 1835. Copies of all these certificates are attached herewith.

So far as we are aware, only the marginally noted Gentlemen of Kathiawar have been conferred the high distinction of Mahamohapadhyaya.

1. Shree Shankerlal Shastri of Morvi.

2. Shree Hathibhai Shastri of Jamnagar.

We therefore request that as Swami Sbree Krishnavallabhacharya is predominently worthy of that distinction, You will be pleased to recommend for the title after such further inquiry as You deem fit about his eligibility for the same.

We beg to romain
Sir

Your most obedient servants.

JUNAGADH STATE

Willingdon Farm,

Junagadh. 26-6-1938.

Dear Mr. Surati,

I was glad to receive your kind letter of the 18th instant. Sorry I could not reply to you earlier as I was out of Junagadh for a few days.

I will shortly meet Pandit Shri Krishna Vallabha-Charya and when Mr. Nonteath returns to Junagadh, introduce the Pandit to him. It will then be Possible to recommend him for the distinction.

With best wishes,

Yours sincerely,

Sd. J. X. Sequierra.

सांख्यकारिकायाः प्राक्कथनम्

भूतपूर्वः—डॉ० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल एम्. ए. एल-एल, बी.

हिन्दू यूनिवर्सिटी, वाराणसी.

श्रीमद्भगवत्कपिलाचार्यविरचितं मात्रे प्रोद्दिष्टं सांख्यज्ञानं सांख्यशास्त्रात्मकमिदानीं वर्तते। माया संसारिणी। आत्मा न संसारी। किन्तु उभयोः सापेक्षसंयोगः सृष्टिसञ्चालकः, निरपेक्षसंयोगः सृष्टिनिवर्तकः। निरपेक्षता उभयज्ञानेन। आत्मना अव्यक्तं व्यक्तं ज्ञातव्यम्। स्वंज्ञात्वा निवर्तते। एतदुपरि पञ्चविंशतितत्त्वानि प्रामाणिकानि प्रतिपादितानि, सांख्यदर्शनं मुख्यं शास्त्रम्। सांख्यकारिका गौडपाद-भाष्यान्विताऽपि दर्शनमिव प्रमाणभूता। ईश्वरकृष्णरचिताः कारिकाः माठरभाष्यान्विताः। श्रीकृष्ण-वल्लभाचार्येण गौडपादभाष्यकिरणं रचितम्। सांख्यकारिकायाः श्रीवाचस्पतिविरचिततत्त्वकौमुद्याः श्रीमद्दार्शनिकपञ्चाननविखिलशास्त्रनिष्णात १०८ श्रीकृष्णवल्लभाचार्यरचिता किरणावली सर्वोपरिटीका वर्तते। सांख्यस्य श्रीविज्ञानभिक्षुकृतसांख्यप्रवचनभाष्यमपि कारिकातुल्यप्रतिष्ठितम् एकात्मवादपरं वर्तते। अत्रैव सप्ततिपदार्थाः षष्टितन्त्रविस्तारः सांख्यमीमांसाद्याश्च समाविष्टा भवन्ति। सांख्यकारिकाणां स्वामिनारायणभाष्यं श्रीकृष्णवल्लभाचार्येण सर्वदर्शनप्रधानतत्त्वविचारगर्भितं सुविस्तृतं विरचितं यदव-लोकनेन सांख्याऽपेक्षितपदार्थानामाध्यात्मिकानामपि सुगमोऽवगमो भवति। एतद्भाष्यं किरणावली किरणं चेति तु त्रयं यावत्पदार्थाऽनवशेषं संजातमिति। परीक्षोपयोगीदं त्रयमपि पठनार्हमस्ति। मयाऽऽद्यन्त-मवलोकितं सम्मतं च, नूतनोऽपि पण्डितः श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः प्राग्भवीयः प्राचीनतमः सांख्याचार्य इव मेऽवभाति। प्राचीनतमपदार्थसंभृतमपि सांख्यशास्त्रं सरलीकृतं वीक्ष्य प्रसन्नो भवामि। अस्त्वभ्यासे एतत्प्रवृत्तिरिति॥

सत्संग वर्तमान

ली. पटेल गोविंद नाथाभाइ

मोम्बासा मंदिर नो प्लान पास थयो छे ने हवे तेनुं काम-काज धमधोकार चालु छे आ मंदिर ना सिंहासनमां चित्र प्रतिमाओ पधरावववानी छे ने अेक तख्तो प्रसादिक चीजो नो राखवा मां आवेल छे तो कोई संतो या हरि भक्तो श्रौ जी नी प्रासादीक चीजो चरणारविन्द नख केस विगेरे मोकलशे तो आमां पधरावववा मां आवशे ने त्याना नाम पण लेखवामां आवशे परदेश मां हजारो हरिभक्तो तेना दर्शन करसे ने आ नीर्गुण प्रसादि ना दर्शन करि कृतकृत्य थशे जेने तेनु महद फल आपनार ने मलशे प्रासादिक चीजो श्री स्वामी नारायण ना सतसंग मंडल पोष्ट बोकस १२८४ मोम्बासा अथवा अफ्रीका थी आवेला पटेल हरमान भाई मकन दास पटेल गाना वाया आनंद अे सरनामे मोकलवा मां आवशै तो तेओ मोम्बासा मोकलवानी सगवड करशे आ मंदीर नी प्रतिष्ठा वखते स्वामी नारायण मंत्रो नो योग्य विधि करवा मां आवशे तो आ षडक्षरी मंत्र लखवानु काम सौ ने आग्रह भारी विनंतो छे सांभळवा प्रमाणे गाना ना युवको ये ५० लाख मंत्रों आनिमित्ते लखी मोकलवा तैयारी करि छे। गामो गाम ना युवको तथा युवतीयो, संतो तथा हरिभक्तो जरूर आ काम करवा मां सहकार आपे अे अमारी विनंति छे।

श्री हरमान भाई मकनदास पटेल नासिक आश्रम मां आव्या हता बे दिवस रही केटलीक सूचनाओ करी अने सत्संग ना समग्र त्यागिओने माटे भणवानि सुंदर सगवड भणावनारा पंडित अने आश्रम नी अेकांत भूमि जोइ घणाज संतोष पाम्या हता ते ओ श्री सत्संग नी सुधारणा अने प्रचार पुरवानी इच्छा धरावे छे, तेमा सत्संगनी दरेक संस्थाओ ये सहकार आपवा नी जरूर छे, सेवा करनारी दरेक संस्था अेकत्र थइ ने सेवा करशो, तो सत्संग मा धारेल सुधारो थइ शकसे अे अवश्य समजवानु छे तो सहकार आपवा सर्व प्रत्यै अमारी नम्र विनंति छे।

गामतोरी पुराणी भगवत जीवनदास जी अे आवी कथा वांची वातो करी सत्संगी ओ ने दश दिवस खुब आनन्द आप्यो छे, जीलणी ने दिवसे स्वामी श्री हरि प्रिय दास जी अे सुंदर पालखी शणगारी तेमां श्री हरि कृष्ण महाराज ने पंधरावी नदीये जल जीलाववा गया हता आ वखते बे हजार मानव मेद नी भराणी हती आ प्रसंगे स्वामी नारायण नाम नो १८ कलाक सुधी अखंड जप यज्ञ कर्यो हतो। पूर्णिमा ना रोज चित्र प्रतिमानी प्रतिष्ठा ब्राह्मण पासे वेदोक्त विधि थी करावी पुज्य शास्त्री जी अे आरतीं ऊतारी हती। पछी गाम ना बीजा गामो ना आवेला तमाम हरि भक्तो ने मीष्टान्न भोजन आप्यु हतुं। आ दरेक कार्य मां व्यवहार कुशण स्वामी हरि प्रिय दास जी तथा पटेल झीणा मेघ जी तथा पा. गोविंद नाथा भाई तथा पा. मोहन पोला भाई नथा पा. केशव पुंजा भाइ विगेरेअे सेवा करी प्रसंग शोभाव्यो हतो। आ प्रसंग ऊपर न्यायाचार्य शास्त्री कृष्णवल्लभाचार्यजी तथा जूनागढ़ना कोठारी पुराणी माधव पसाददास जी आव्या हता। अत्रे धार्मिक पाठशाला स्थापवा नी आवश्यकता पुंज्य शास्त्री जी अे जणावी तेथी कोठारी जी हस्तक पाठशाला खुली मुकवा मां आवेली छे। पुराणी भगवत जीवनदास जी अे २० विद्यार्थीओ ने शिक्षण आपी तैयार कर्या छे।

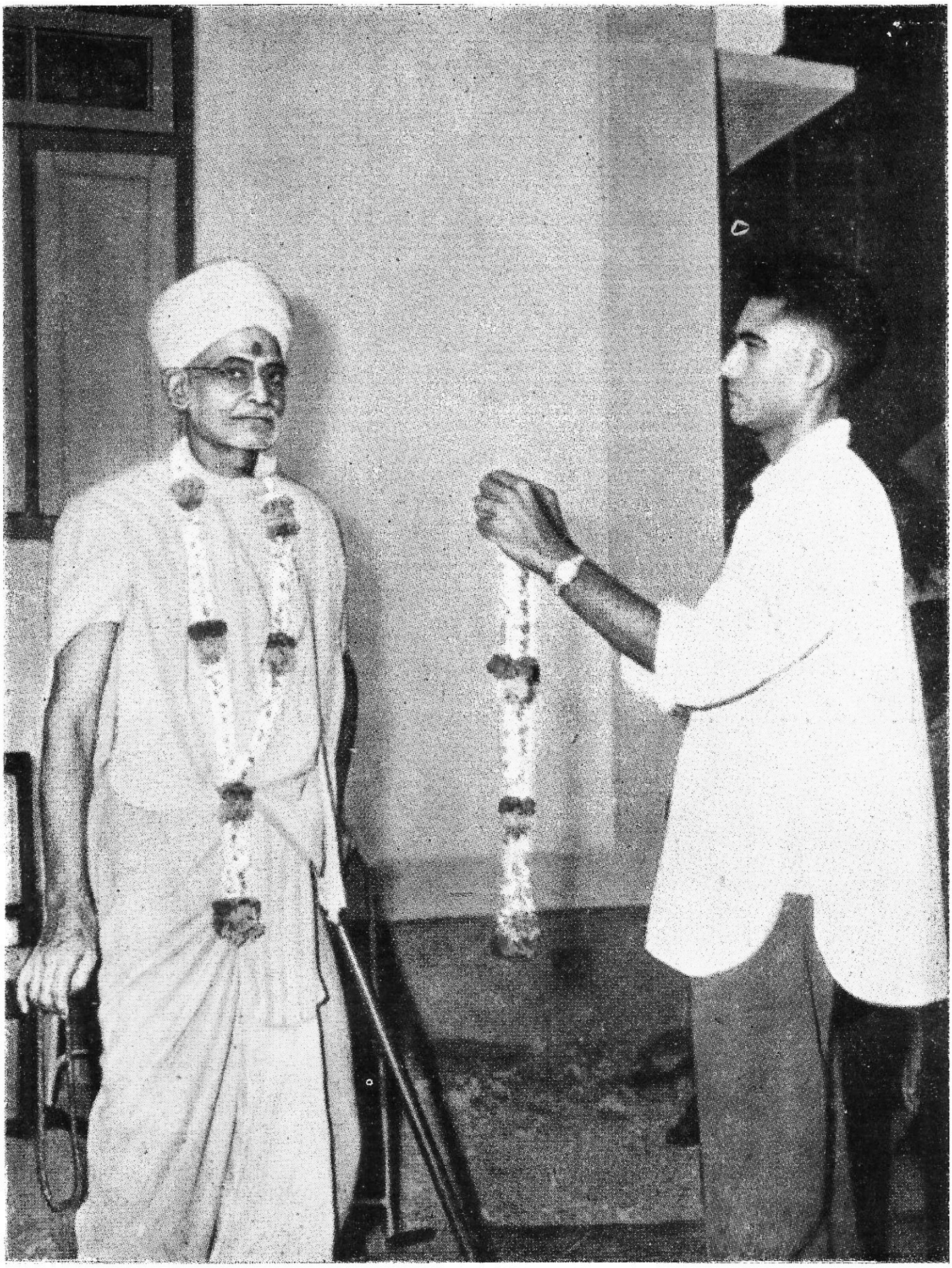

श्री कृष्ण वल्लभाचार्यजी महाराज को सभास्थल में पधारने समय
शिष्यजन पुष्पमाला समर्पित करते हैं। (पृष्ठ ५१

काव्यशास्त्रे वस्तु-चित्रण-कल्पः

डॉ० शिवप्रसाद भारद्वाजः Ph. D.

पंजाब यूनिवर्सिटी, होशियारपुर

[1]काव्यशास्त्राचार्यैः सकलसहृदयहृदयावर्जकस्य लोकोत्तरवर्णनानिपुणकवि[2] कर्मणः काव्यस्य रस एव प्रयोजनललामतया[3] स्वीकृतः। तस्य परिपाकश्च विभावानुभावसञ्चारिनिबन्धनः[4]। विभावा अप्यालम्बनोद्दीपनतया द्विविधाः स्थायिन उद्बोधहेतवः[5]। आलम्बनमपि कान्ताविचित्रवेषविन्यासशालिजनविशेषप्रभृतयो येषां दर्शनश्रवणादिना रतिहासादयः स्थायिनः प्रसुप्तकल्पस्याश्रय उद्बोधो भवति। उद्यान-नदीतीर-चन्द्रोदयादि बाह्य प्रकृतिनिरीक्षणादिनोद्बुद्धस्य स्थायिन उद्दीपनं सम्पद्यते। इत्थं कामं रत्यादयो भावा अन्तरङ्गा अमूर्ता अनुभूत्यात्मकाश्च, परं तेषामालम्बना न्युद्दीपनानि च स्थूलानि, मूर्तानि वस्तुजगत्सम्बन्धीनि च। अत एव विरूपाः सुरूपा वा प्रसादमया विषादात्मका वा स्थूल जगत्सम्बद्धाः पदार्थाः सर्वेऽपि काव्ये निबद्धाः सन्तो यथा प्रसङ्गं रसाङ्गतामश्नुवन्ति–इत्यभियुक्तोक्तिः[6]।

परं रुचीनां वैचित्र्यात् स्थूलजगत्येकस्य प्रमोदावहं वस्तु तदितरस्य विषादकरं सिद्ध्यतीति नाऽस्ति कस्याऽपि पदार्थस्यैकान्ततया सुख-दुःखात्मकता ततः कथं तद्दर्शनश्रवणादिना सामाजिकमात्रस्य सुखोद्भूतिरित्यापत्तौ साधारणीकरणसिद्धान्तस्य वर्ण्यपदार्थानां प्रत्यक्षायमाणतायाः स्वीकृतिः। तस्याऽयमाशयः—

काव्ये वर्ण्यमानः पात्राणां रागाद्युद्बोधः सामाजिकानां ताटस्थ्येऽकिञ्चित्करः। यथा लोके प्रतिदिनं लक्ष्यते यच् चैत्रस्य प्रेयस्या सह प्रेमव्यापारे मैत्रस्य तत्रौदासीन्यम्। एवं रामस्य सीतां प्रति रागोद्बोधं श्रुत्वाऽभिनयञ्च दृष्ट्वाऽपि न श्रोतुर्द्रष्टुर्वा तावत् काचित् प्रतिक्रिया यावन्न तस्य हृदयेऽपि भावोदयः सम्पद्येत। परं कथं सर्वस्याऽपि रागोदयः संभवेत्? सीतां प्रति जगन्मातृतया श्रद्दधानस्य भक्तिभावनया बाधितत्वात्[7]। अपरञ्च यस्यामेकस्य रुचिर्नतत्राऽपरस्याऽपीति रुचिभेदोऽपि विघ्नकरः।

---

१. सद्यः परनिर्वृतये काव्यप्रकाशे १, १। २. तत्रैव १।

३. न हि रसादृते कश्चिदर्थः प्रवर्तते। भरतनाट्यशास्त्रे ६

४. विभावानुभावसञ्चारियोगाद् रसनिष्पत्तिः। तत्रैव ६

५. रत्यादुद्बोधका लोके विभावाः काव्यनाट्ययोः।
आलम्बनोद्दीपनाख्यौ तस्य भेदावुभौ स्मृतौ॥—साहित्यदर्पणे ३, २८–२९

६. यस्मान्नास्त्येवासावचेतनवस्तुवृत्तान्तो यत्र चेतनवस्तुवृत्तान्तयोजना नास्त्यन्ततो विभावत्वेन।
—ध्वन्यालोके २

७. ननूक्तं भट्टनायकेन—"रसो यदा परगततया प्रतीयते तर्हि ताटस्थ्यमेव स्यात्। न च स्वगतत्वेन रामादिचरितमयात् काव्यादसौ प्रतीयते। स्वात्मगतत्वेन च प्रतीतौ स्वात्मनि रसस्योत्पत्तिरेवाऽभ्युपगता स्यात्। सा चायुक्ता सीतायाः। सामाजिकं प्रत्यविभावत्वात्। कान्तात्वं साधारणं वासनाविकासहेतुविभावतायां प्रयोजकमिति चेत्–देवतावर्णनादौ तदपि कथम्।
—ध्वन्यालोकलोचने (चौखम्बा) पृ० १८०–१

न च काव्य-दर्शन-श्रवणकाले सीतायास्तत्र सत्ता। सत्यां हि तस्यां परस्त्रियं प्रति रागस्पर्शेन पापातङ्कः परपरिग्रहाभिरत्याकाराभियोगाद् दण्डपातशङ्काच मन आकुलो कुर्यात्। असत्त्वानुभूतौ चाऽऽलम्बनाऽभावानुभवेन रागोदयस्यैवाऽसंभवान् मूल एव कुठार-पातः[1]। एवम् उभयतः पाशारज्जू। अतो विचक्षण-विलक्षणैः स्वीकृतं यथा रसादयनुभूतये प्रथममालम्बनोद्दीपनतया स्वीकृतानां कान्ताचन्द्रदर्शनादीनां प्रत्यक्षीभावस्य परमावश्यकं तत्र[2]। अत एव नाट्यस्यैव वास्तविककाव्यत्वम् उद्घोषितमभियुक्तैः[3]। तत्र हि दृश्यादि निर्माणेन चतुर्विधाभिनयवशेन च देशकालभेदेऽपि वस्तुस्थितिरिव प्रस्तूयते। श्रव्यकाव्ये तु तत्सर्वं शब्दशक्त्यैव सम्पाद्यते[4]। इयमेव वर्णना-नैपुणी कवेर्यत् कालान्तर भाविनोऽभूतपूर्वा वा व्यापारास्तया पुरो घटमाना इवानुभूयन्ते। अन्यथा कस्तावत् कवेरितिहासकाराद् विशेषः स्यात्[5] ?

एवम् आलम्बनादीनां मूर्तानां पदार्थानां कविप्रतिभानैपुण्यवशात् प्रत्यक्षतायां सम्पन्नायां तत्साहचर्यात् सामाजिकस्याऽपि मनसि प्रसुप्तकल्पस्य पूर्वं विद्यमानस्य रागस्योदयः संभवति। इयं तावदमूर्तस्य भावस्य साक्षात्कृतिः। तदर्थं चाऽऽलम्बनादिसामान्यानुभूतिर्नितरामपेक्ष्यते। वैयक्तिक भेदे हि विद्यमाने कुतः सर्वस्याऽद्वयी संवित् ? एवं स्त्री सामान्यानुभवेनालम्बनाद्वैतबोध आत्मनश्च रामादिना सहैकात्म्यानुभवे तादृशाऽमूर्तरत्यादि साक्षात्कारः सम्पद्यते[6]।

सैषा भावादि साक्षात्कृतिव्यवस्था। कवेरेव हि भावः काव्यद्वारेण रामादिपात्रवर्तितयोपस्थापितः सामाजिकेषु सञ्चार्यते[7]। ततश्च नायकस्य कवेः श्रोतुः समानोऽनुभवस्तत[8] इत्यभियुक्तोक्तं सङ्गच्छते।

यत्त्वाधुनिकैः काव्यालोचकैः—प्राचीनकाव्यशास्त्रिभो रसाद्यनुभवे न कवेर्भावस्य योगः स्वीकृत इत्युक्तं[9] तत्साहित्य शास्त्रतत्त्वाऽनवबोधमूलम्। कवेरन्तर्गतं भावं भावयन् भाव उच्यत इति भरतोक्त्यैव कवेर्भावस्य सर्वानुभूतिमूलत्वस्यैवोद्घोषितत्वात्।

---

१. पारिमित्याल्लौकिकत्वात् सान्तरायतया तथा।
अनुकार्यस्य रत्यादेरुद्बोधो न रसो भवेत्॥—साहि० ३,१८

२. वर्णनोत्कलिता भोगप्रौढोक्त्या सम्यगर्पिताः।
उद्यानकान्ताचन्द्राद्या भावाः प्रत्यक्षवत् स्फुटाः॥—अभिनव भारती, भाग १, पृ० २४०-४१

३. नाट्यात् समुदायरूपाद् रसाः, यदि वा नाट्यमेव रसाः।.....वयं तु ब्रूमः-
काव्यं तावन् मुख्यतो दशरूपकात्मकमेव।—तत्रैव १, पृ० २६१

४. काव्येऽपि च लोकनाट्यधर्मिस्थानीयेन स्वभावोक्तिप्रकारद्वयेनाऽलौकिक प्रसन्नमधुरौजस्विशब्दसमर्प्यमाण विभावादियोगादियमेव रसवार्ता।—लोचने पृ० १८६

५. न हि कवेरितिवृत्तमात्रनिर्वहणेन प्रयोजनम्। इतिहासादिनैव तत्सिद्धेः।—ध्वन्या० पृ० ३३६

६. व्यापारोऽस्ति विभावादे र्नाम्ना साधारणी कृतिः।—साहि० ३, ६
तत्प्रभावेण यस्याऽऽसन् पाथोधिप्लवनादयः।
प्रमाता तदभेदेन स्वात्मानं प्रतिपद्यते॥ ३, १०
... ... ।
साधारण्येन रत्यादिरपि तद्वत् प्रतीयते॥ ३, ११

७. कवेरन्तर्गतं भावं भावयन् भाव उच्यते।—नाट्यशास्त्रे ७

८. लोचने (चौखम्बा) पृ० ६२

९. डॉ० नगेन्द्र—रीतिकाव्य की भूमिका, पृ० ३६

आलम्बनादीनां प्रत्यक्षतापादनं च कवि-प्रतिभासहकृतशब्दसामर्थ्यवशात् सम्पद्यते। एतावानेव हि कवेः सामान्यस्य च वक्तुर्विशेषो यद् यत्र कविप्रयुक्तः शब्दव्यापारो वर्ण्यमानं पदार्थं प्रत्यक्षदृश्यमिवानुभावयति तत्र जन-सामान्येन वर्णितं वस्तु विवरणमात्रं प्रतीयते। यस्य वाणी न प्रभवति वर्ण्यं साक्षात्कारयितुं नाऽसौ कविः कविः। तस्य रागातिरेक संश्लिष्टतया हि वर्ण्यमानस्य परोक्षस्याऽपि पदार्थस्य प्रत्यक्षत्वं सिद्ध्यति।

पाश्चात्त्य काव्यशास्त्रे वर्ण्यार्थस्य प्रत्यक्षीकरणकला इमेजरी इति संज्ञया व्यपदिश्यते, वस्तुनश्च यद् ध्यामलं रूपं दर्शकस्य श्रोतुर्वा पुरस्तादायाति तदर्थम् इमेज इति परिभाषाया व्यवहारः क्रियते[1]। पाश्चात्यालोचकानां मतेन वर्ण्यपदार्थस्य मूर्तीकरण एव कवेरितिकर्तव्यता[2] तस्याः कलायाः स्वरूप विवेचने तैः पृथक् प्रबन्धा एव निर्मिताः। एकेन भारतीय-समीक्षकेण तत्प्रसङ्ग उद्घोषितं यथा भारतीयानां रसपाके साऽभिनिवेशत्वात् पदार्थानां बिम्बताऽऽपादने नाऽऽसीदभिरुचिरिति न तद् विषये विमर्शः कृत इति[3]। वस्तुस्थितिस्त्वन्यथैव, प्रथमं हि भारतीयाचार्याः पदार्थग्रहे प्रतिपाद्यस्य वस्तुनः साक्षात्कारमावश्यकं मन्वते। गो शब्देन सास्नालाङ्गूलादिमत्पिण्डविशेषे सङ्केतग्रह आचार्यैः स्वीकृतः। वैयाकरणानां मते वाक्यस्फोटेनाऽपि वस्तुसतोऽन्तर्दृष्टिगोचरत्वमेवेष्टम्। काव्यशास्त्रेऽपि ध्वनि-विवेचने बहुश उपपादितं यथा शब्दार्थः स्वं रूपं प्रकाशयन्नेवार्थं गमयति दीपवत्[4]। अर्थ शब्देन हि अर्थ्यत इत्यर्थः प्रयोजनम्[5]। इति व्युत्पत्ति वशाच् छब्देनोच्यमानं वस्त्वेव बोध्यते श्रूयमाण गकारादि वर्णसमुदाय मात्र ग्रहेण त्विष्टाऽसिद्धेः। एवं यदा शब्द श्रवणेन वस्तु स्वरूपस्यैवाऽनवगतिः तदा विवक्षिताऽभिप्रायावबोधस्य कथैवकेति तदर्थं पदार्थरूपसाक्षात्कारो नितरामपेक्षितः।

पुनश्च प्राचीनोक्त गुणेष्वर्थव्यक्तेः स्वरूपमपि[6] वर्ण्यपदार्थस्य प्रत्यक्षीकरणमेव यदन्तरा न प्रयोजनवैशद्यं स्यात्।

काव्ये चमत्कार-साधनानामलङ्काराणां च सविशेष उपयोगो वर्ण्यवस्तुनः प्रत्यक्षायमाणतायाम्। पाश्चात्त्यैर्यथा वस्तुनो बिम्बग्रहण उपमायाः (सिमिली) रूपकस्य (मैटाफ़र) तद्-द्वारेण च लक्षणाया उपयोगः स्वीकृतस्तथैव[7] भारतीयाचार्यैरपि। भारतीयतर्कशास्त्रे पदार्थस्वरूपनिर्णय उपमानाख्यस्याऽपरस्य प्रमाणस्य स्वीकृतिस्तत्र प्रमाणम्। गो सदृशो गवय इत्युक्ते वनं गतस्य गवयं साक्षात्कुर्वतो जनस्य पुरस्तात् स्मृति-वशेन तदेव वाक्यं प्रस्फुरति तद्-द्वारेण च लाङ्गूलककुदखुरविषाण्यादि रूपं गोः स्वरूपं बुद्धि गम्यं

---

१. What do we understand, then, by the poetic image ? In its simplest terms, it is a picture made out of words.....or an image may be presented to us in a phrase or passage on the face of it purely descriptive, but Conveying to our imagination something more than the accurate reflection of an external reality.

—C. Day Lewis : The Poetic Image 18.

२. It is better to present one Image in a lifetime than to produce Voluminous Works. Ezra Pound. The Poetic Image 25.

३. अखौरी ब्रजनन्दन प्रसाद : काव्यात्मक बिम्ब, पृ० ४५

४. ध्वन्यालोके पृ० ४२४। ५. अर्थ्यत इष्यत इत्यर्थोरसः। अभि० ६

६. अर्थव्यक्तिः स्वरूपस्य साक्षात् कथनमुच्यते। सरस्वती कण्ठाभरणे १,८१

७. An epithet, a metaphor, a simile may create an image. the Poetic Image 18.

जायते तत्सामान्यावबोधेन च गो सदृशत्वाद् गवयोऽयमिति धीरुत्पद्यते। एवं गोः स्वरूपस्य बिम्बग्रहणमन्तरा न गवयज्ञानं संभवतीति तत्रोपमाया औपयिकत्वं सुतरां स्फुटं सिद्ध्यति[1]।

उपमाया आधार उपमानोपमेययोः साम्यम् एव। तच्च शाब्दं वास्तवं च। वास्तवमपि प्रभाव-निष्ठं रूप-निष्ठञ्च। शाब्दं साम्यं केवले श्लेष उपयुज्यते[2] परं तु सर्वत्र। आह्लादनादि कर्म मुखस्य च चन्द्रस्य च तुल्यमेवेति तत्र प्रभाव-साम्यं फलति। यथा—

कमलमिव मुखं मनोज्ञमेतत्।
इत्यादौ हृदयावर्जकत्वं मुखकमलयोः समानम्।

परं यत्र वस्तुनोः सतोः स्वरूप-साम्यं विवक्षितं तत्र बिम्बप्रतिबिम्बभाव आश्रीयते[3]। एतस्य प्रयोजनं च स्वरूपगतवैशिष्ट्यस्य सौक्ष्म्येण याथार्थ्येन च निरूपणाद् उपमानोपमेययोः प्रत्यक्षायमाणता। यथा कालिदासस्य पद्ये—

पाण्ड्योऽयमंसार्पितलम्बहारः कल्पाङ्गरागोहरिचन्दनेन।
आभाति बालातपरक्तसानुः सनिर्झरोद्गार इवाद्रिराजः[4]॥

अत्रांसस्थितलम्बमानश्वेतहारो रक्तचन्दनानुलेपनः पाण्ड्यराजः प्रभातारुणकिरणशोणशिखरेण प्रपतत्फेनाच्छप्रस्रवणोज्ज्वलेन गिरिराजेनोपमित इति स्वरूपसाम्यमेव वस्तुनोः। पर्वतस्य शिलामयत्वेन तदीयो वर्णः श्यामो भवतीति सर्वविदितम्। शष्पादिविरहितस्थलेषु कृष्णतनुरुभयतः पतद्भ्यां फेनिलाभ्यां प्रपाताभ्यां सित उपरि विपतता बालारुणकिरणभरेणाधित्यकासु च रक्तो हिमालयः पाठकस्य श्रोतुश्च भावचक्षुषो गोचरे पतति। तत्साम्येन च स्वतः श्यामवर्णस्य वक्षोविभागप्रलम्बश्वेतहीरहारस्य प्रकल्पित रक्तचन्दनानुलेपलोहिताङ्गस्य च प्रांशुव्यायतवपुषः पाण्ड्यनरेशस्य यथार्थं स्वरूपं मूर्तमिव पुरःस्फुरल् लक्ष्यते। अत्र बिम्बम् उपमानस्य गिरिराजस्य रूपं प्रतिबिम्बं च पाण्ड्यस्य, गिरिपतिरूपसाक्षात्कारवशेनैव हि पाण्ड्यस्याकृतिः प्रकाशमायाति।

अत्र पाण्ड्योऽद्रिराजश्चोभावपि मूर्तौ। क्वचिच्चामूर्तेनोपमानेन मूर्त उपमेय उपमीयते। तेन च मूर्तामूर्तयोर्बिम्बप्रतिबिम्बभाव आपद्यते। तत्र रूप साम्यं प्रभावसाम्यं चाऽपि संश्लिष्येते। यथा—

अभिनवबधूरोषस्वादुः करीषतनूनपात्[5]। इति। अत्र शीतकाले जनानां सेकसुखः करीषाग्निर्नववध्वा रोषेणोपमितः। स्वादुत्वं च साधारणो धर्मः। रोषः खलु भावात्मकत्वेनाऽमूर्तो मूर्तस्य गोमयाग्ने-

---

१. उपमितिकरणमुपमानम्। संज्ञासंज्ञिसम्बन्धज्ञानमुपमितिः, तत्करणं सादृश्यज्ञानम्। तथाहि कश्चिद् गवयशब्दवाच्यपदार्थमजानन् कुतश्चिदारण्यकपुरुषाद् गोसदृशो गवय इति श्रुत्वा वनं गतो वाक्यार्थं स्मरन् गोसदृशं पिण्डं पश्यति। तदनन्तरम् 'अयं गवयशब्दवाच्य' इत्युपमितिरुत्पद्यते।
—तर्कसंग्रहे उपमानखण्डः

२. स्फुटमर्थालङ्कारावेतावुपमा समुच्चयौ किन्तु।
आश्रित्य शब्दमात्रं सामान्यमिहापि संभवतः॥—रुद्रटकाव्यालङ्कारे ४,३२

३. तत्र क्वचिदनुगाम्येव धर्मः। क्वचिच्च केवलं बिम्बप्रतिबिम्बभावापन्नः। क्वचिदुभयम्।
—रसगंगाधरे २

४. रघुवंशे ६,६१।

५. शृङ्गारप्रकाशे भाग २, पृ० ४५४।

रूपमानतया प्रस्तुतः। करीषाग्निः खलु नहि काष्ठगताग्निवत् प्रज्वालं ज्वलत्यपि तु निर्धूमोऽपि भस्मित-च्छन्नस्तापार्थिन सुचिरं मन्द सेकदानेन सुखयति। एवं नववधूरपि चण्डिकेव न प्रज्वलन्ती गृहकर्म कुर्वाणाऽपि मौनं स्थितौदासीन्य प्रकाशनेन रोषं व्यञ्जयन्ती प्रियस्य सुखमावहति। इत्येवमत्र वधूरोषेण सह गोमयाग्नेरौपम्यं रूपसाम्यकृतं परं परिणतौकरीषाग्निसेक सुखस्य वधूमूकरोषानुभूतिजन्यसुखेन सादृश्यं च प्रभावगतमिति उभयमत्र चमत्कारावहम्। साम्यस्य चाऽस्य संविदात्मकं मूर्तीकरणमिति साधारणी करण रीत्या प्रत्यक्षत्वम्।

एषैव स्थितिः कालिदासस्य—

सञ्चारिणी दीपशिखेव रात्रौ यं यं व्यतीयाय पतिंवरा सा।
नरेन्द्रमार्गाट्ट इव प्रपेदे विवर्णभावं स स भूमिपालः[1]॥

इति ख्याते पद्ये द्वे संश्लिष्टे उपमे। प्रथमायां खलु लोकचाकचक्यावहरूपप्रकर्षोज्ज्वला नृपान्नृपं संक्रामन्तीन्दुमती सञ्चारिण्या रूपशिखया तुलिता। स्वयंवरागतः प्रत्याख्यानेन नैराश्यमापन्नो नृपश्च राजमार्गस्थितेनातिक्रान्तकाचदीपकर प्रहरिणाऽट्टेनोपमितः। अत्र तावदनेकानि सूक्ष्माणि वस्तुचित्राणि प्रस्तुतानि कविना।

१—अस्मिंस्तावद् दीपकोज्ज्वलरूपवत्या इन्दुमत्याः सन्निधानेन संजातया वरणाशयाच दीपितस्य नृपस्यो ज्ज्वलीकृताऽऽकृतिः।

२—एतस्मिन् द्वितीये चित्रे गाढान्धकारे निमग्नस्याट्टालस्य यामिककरगतकाचदीपमञ्जूषायाः क्षणं प्रकाश पातेनो द्दीप्तता।

३—तृतीयेऽस्मिन् राजकुमार्यास्तं नृपं विहायाग्रतो गमनेन दीपप्रकाशस्याऽपगमे जातेऽट्टस्याऽधिकतरतमोमग्नता। प्रत्येकं चित्रं स्वतन्त्रमपीतरेण संश्लिष्टम्। अप्रकृतचित्रस्य प्रकृतचित्रं प्रति हेतुतेति नाऽन्यतरस्य निरपेक्षत्वं व्यर्थत्वञ्च। इत्थमयं बिम्बप्रतिबिम्बभाव उपमितवस्तु प्रत्यक्षीकरणमात्र प्रयोजनः।

रूपकालङ्कारस्याऽपि वस्तुबिम्बप्रस्तवने महानुपयोगः। पाश्चात्यैर्मेटाफरव्यपदेशेन रूपकालङ्कारस्य तन्मूलभूतायाश्च लक्षणाया बिम्बनिर्माण औपयिकत्वम् लक्षणाद्वारेण व्यञ्जनाया ध्वने र्वा बिम्बग्राहकत्वम् उक्तम्[2]। व्यङ्ग्यार्थोऽपि स्फुटतरत्वाद् वाच्यायमानोऽलङ्कारव्यपदेशं भजत[3] इति काव्यशास्त्रसिद्धान्त सरणिः। रूपकादिषु साम्यस्य व्यङ्ग्यत्वेऽपि स्फुटतरत्वेन न ध्वनित्वम्। लक्षणाया अर्थावबोधे कीदृशो योग इति विचिकित्सायां तु जगन्नाथ कृतं विश्लेषणं साहाय्यकरम्[4]।

ध्वनिना वस्तुबिम्बप्रत्यायने स्फोटसिद्धान्तस्य निदर्शनं पूर्वं प्रस्तुतमेव। काव्ये तदनुगुणबिम्बाव-

---

१. रघुवंशे ६,६८

२. द्रष्टव्यं टिप्पणं २३।

३. व्यङ्ग्यस्य यत्राप्राधान्यं वाच्यमात्रानुयायिनः।
समासोक्त्यादयस्तत्र वाच्याऽलङ्कृतयः स्फुटाः॥—ध्वन्या० पृ० १३०
एवं—न केवलमन्योन्यविरुद्धवाच्यवाचकभावव्यङ्ग्यव्यञ्जकभावसमाश्रयत्वान्न तादात्म्यमलङ्काराणां ध्वनेश्च यावत् स्वामिभृत्यवदङ्गिरूपाङ्गरूपयोर्विरोधादित्यर्थः।—लोचने पृ० १३१

४. द्रष्टव्यं रसगङ्गाधरे २, उपमाबोधविचारः।

बोधे भव्यमुदाहरणं कालिदासस्य कुमारसम्भवात्। कविस्तपस्यन्त्या भगवत्या उमायाः प्रथमवृष्टिबिन्दु-पातकृतामवस्थां पर्यायालङ्कारद्वारेण वर्णयति—

स्थिताः क्षणं पक्ष्मसु ताडिताधराः पयोधरोत्सेधनिपातचूर्णिताः।
वलीषु तस्याः स्खलिताः प्रपेदिरे क्रमेण नाभिं प्रथमोदबिन्दवः॥[1]

अत्र वाच्यार्थप्रतिपत्त्यनन्तरं तपोनिष्ठायाः पार्वत्या योगशास्त्रेणोक्ताऽऽसन-स्थितिर्वर्णिता। यथा षक्ष्मसु वृष्टि-बिन्दूनां क्षणमवस्थानकथनेन तस्या दृष्टेर्नासाग्रवर्तितयाऽर्धमुकुलितत्वं सूच्यते सम्प्रेक्ष्य-नासिकाग्रं स्वम्[2] इति भगवद्गीतासु पठितत्वात्। अधरताडनकथनेन मुखस्योपांशुजपव्यग्रतया विवृतत्वं गम्यते। पयोधरोत्सेधनिपातेन स्थिरासनस्थितत्वं वक्षसश्च ऋजुतया पुरोवर्तित्वमवगम्यते[3]। एषा मुद्रा न ध्वनिमन्तरा कुतोऽपि प्रतिपत्तिमर्हति।

पुनश्च तृतीयकक्षापातिन्यर्थे पार्वती-पक्ष्मणां सघनकोमलत्वमधरदलस्य सुकुमारता वक्षोजयोः काठिन्यं नाभेर्गहनत्वं च ध्वन्यन्ते। ततश्च चतुर्थकक्षायां सामुद्रिकलक्षणलक्षिततया गौर्याः पद्मिनीत्वं द्योत्यते। द्वितीयतृतीयकक्षागतार्थयोश्च प्रत्यक्षीभावेन बिम्ब-निर्माणम् इति प्रकृत-सिद्धिः।

बिम्बप्रतिबिम्बभावस्य दृष्टान्तालङ्कारे निदर्शनायां चाऽपि सक्रियतया तयोरलङ्कारयोरपि वर्ण्यवस्तु बिम्बग्राहणोपयोगिता प्रतिपादिता भवति। दृष्टान्ते धर्मसहितस्योपमेयस्योपमानस्य च बिम्ब-प्रतिबिम्बभावे पर्यवसानम्[4]। एवमुपमेय पक्षस्य पूर्णस्योपमानपक्षस्य च प्रत्यक्षीभावोऽत्र जायते। यथा—

त्वयि दृष्ट एव तस्या निर्वाति मनो मनोभवज्वलितम्।
आलोके हि हिमांशो र्विकसति कुसुमं कुमुद्वत्याः॥[5]

अत्र नायक-दर्शने सति नायिकाया मनोभवाग्निनिर्वाणम् इत्येकोऽर्थोऽत्र विवक्षितः। अपरश्च चन्द्रालोकदर्शने कुमुदकुसुमविकासलीलेतिरूपः। प्रथमेऽमूर्तानुभूतिरपरस्मिंस्तु मूर्तदृश्यस्येति विशेषः। तयोश्च बिम्बप्रतिबिम्बभावेन संविदात्मकं प्रत्यक्षगोचरं चं चेति बिम्बद्वयमुत्पद्यते।

संभवद्वस्तुसम्बन्धायां निदर्शनायां मिथः सामान्यानुभवेन वस्तुद्वयस्यैव बिम्बग्रहणं जायते परस्परं च तयो र्बिम्बप्रतिबिम्बभावः। यथा—

कोऽत्र भूमिवलये जनान् मुधातापयन् सुचिरमेति सम्पदम्।
वेदयन्निति दिनेन भानुमानाससादचरमाचलं ततः॥

अत्र मुधा परतापकानां परिणामे विपत्प्राप्तिरित्येको वृत्तान्तः। यावद्दिनं भुवनं परिताप्य

---

१. कुमारसंभवे ५,२५

२. समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः।
सम्प्रेक्ष्यनासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन्॥ ६,१३

३. तु० अत्र तपस्यन्त्या देव्या देहोपरि निपततां प्रथमवृष्टिबिन्दूनां क्रियास्वभाववर्णने देव्याः समाध्यु-चितावस्थानाऽभिव्यक्तिद्वारा चिरनिदाघतप्तदेहोपरिनिपतनेन सुखपारवश्यसम्भ्रमहेतौ प्रथमवृष्ट्य-विष्यविहिता समाध्यवस्था व्यज्यते। किं चैभिरेव विशेषणैर्देव्या लोकोत्तरं सौन्दर्यमभिव्यज्यते।
—चित्रमीमांसायां (सुधासंहितायां) पृ० २४–२५

४. दृष्टान्तस्तु सधर्मस्य वस्तुनः प्रतिबिम्बनम्।—साहि० १०,५१

५. काव्यप्रकाशे (आनन्दाश्रम सं०) पृ० ४५५

सायाह्ने सूर्यस्याऽस्तमनम् इत्यपरः। एवमुभयोर्बिम्बप्रतिभावे लोके तादृशवृत्तान्तयोः प्रतिदिवसं दृश्यमानत्वात् प्रत्यक्षीभावः।

अभवद्वस्तुसम्बन्धायामपि च द्वयोः पदार्थयोर्वाक्यार्थयोर्वोपमेयोपमानभावे पर्यवसाने सति द्वयोर्बिम्बप्रतिबिम्बभावः सम्पद्यते।[1]

रूपकालङ्कारे साङ्गेऽपि चोभयोरुपमेयोपमानयोर्बिम्बप्रतिबिम्बभावसिद्धिः। यथा—

उदयशिखरिशृङ्गप्राङ्गणेष्वेव रिङ्गन्
सकमलमुखहासं वीक्षितः पद्मिनीभिः।
विनतमृदुकराग्रः शब्दयन्त्या वचोभिः
परिपतति दिवोऽङ्के हेलया बालसूर्यः॥[2]

इत्यत्रोदयमानः सूर्यो बालत्वेनाऽऽरोपितोद्यौश्च मातृत्वेन। एकदेशविर्तिरूपकस्योदाहरणमिदं प्राङ्गणे रिङ्गतो बालक्रीडां निरीक्ष्य परिहसन्तीभिः सादरं निरीक्षितस्य मात्रा चाकारितस्य तस्या अङ्कमाश्रयितुं करौ व्यानमय्य लम्बमानस्य बालस्योदयगिरिशिखरे स्थितस्य कमलिनीर्विकासयतः समन्तात् प्रसारितसुकुमारकिरणजालस्य कूजद्विहगकुलकलरवप्रत्युद्गतस्य रवेश्च बिम्बं प्रस्तौति।

स्वभावोक्तेरलङ्कारस्य तु कर्मैव वर्ण्यमानस्य पदार्थस्य याथार्थ्येन प्रत्यक्षतापादनम्।[3] यथा शिवे प्रहर्तुमुद्यतस्य कामस्य चित्रं कुमारसम्भवे—

स दक्षिणापाङ्गनिविष्टमुष्टिं नतांसमाकुञ्चितसव्यपादम्।
ददर्श चक्रीकृतचारुचापं प्रहर्तुमभ्युद्यतमात्मयोनिम्॥[4]

शरप्रहारार्थं यादृशी मुद्रा धानुष्कस्य भवति तादृश्येवात्र चित्रिता कविना। एतदेवाऽभिलक्ष्य टीकितं नरेन्द्रप्रभसूरिणा—

अत्र धनुर्धरसंस्थानमीदृगेव स्यादिति।[5]

स्वभावोक्तेरुपयोगो यावद् वर्तमानवस्तुनो वर्णनं क्रियतेऽतीतानागतयोस्तु साक्षात्करणाय भाविकमुपयुज्यते। तत्र वर्णयितुरागवृत्तेसन्मिश्रता विशेषेणाऽपेक्ष्यते तद्-द्वारेणैव तथात्वबुद्धेरुत्थानात्। यथा—

---

१. संभवन् वस्तुसम्बन्धोऽसंभवन् वाऽपि कुत्रचित्।
यत्र बिम्बानुबिम्बत्वं बोधयेत् सा निदर्शना॥—साहि० १०, ५१-५२

२. शिशुपालवधे ११,४७

३. स्वभावोक्तिस्तु डिम्भादेः स्वक्रियारूपवर्णनम्।—काव्यप्र० १०,१११

४. कुमारसंभवे ३,७०

५. न खलु वस्तुस्वरूपमात्रवर्णनमलङ्कारस्तत्त्वे सर्वत्राऽलङ्कारप्रसङ्गात्। सूक्ष्मः कविमात्रगोचरो यो वस्तुनः सन् विद्यमानो भावः परिस्पन्दविशेषस्तस्यवर्णनं 'सुधासोदरयागिरा प्रकाशनं सा पुनः स्वभावोक्तिः। इयं च संस्थानाऽवस्थानवेषव्यापारादिभिः स्वरूपैर्मुग्धाङ्गनाडिम्भतिर्यङ्नीचादिभिराश्रमैर्देशकालशक्तिसाधनादिभिश्चहेतुभिरनेकधा भिद्यते। यथा-सदक्षिणा० इत्यादिः। अत्र धनुर्धरसंस्थानमीदृगेव स्यादिति।—अलङ्कारमहोदधौ ४,४२

इच्छया क्रियतामद्य प्रतिकर्म तवोत्तमम् ।
संप्रभाण्यवसज्जन्तां तवाङ्गे भूषणानि च ॥
साधु पश्यामि ते रूपं संयुक्तं प्रतिकर्मणा ॥[1]

इयं सीतामभिलषतो रावणस्य तां प्रत्यनुनयोक्तिः । तेनाऽभीप्सितं तस्याः प्रतिकर्म प्रस्तुतेऽक्रियमाणमपि भावदृष्ट्या कृतमिव लक्ष्यते ।

समासोक्तिरप्रस्तुतप्रशंसा, उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्तिः सूक्ष्मं चाऽन्येऽलङ्कारा वर्ण्यस्य बिम्बग्रहणाय सुतरामुपयुज्यन्ते । अन्यैः संसृष्टाः स्वतन्त्रा वा ते सर्वेऽपि वर्णनीयं वस्तु प्रत्यक्षकल्पं विदधति । यथा—

रुद्धापाङ्गप्रसरमलकैरञ्जनस्नेहशून्यं
प्रत्यादेशादपि च मधुनो विस्मृत भ्रूविलासम् ।
त्वय्यासन्ने नयनमुपरिस्पन्दि शङ्के मृगाक्ष्या
मीनक्षोभाच्चलकुवलय श्रीतुलामेष्यतीति ॥[2]

अस्मिन् पद्ये स्वभावोक्त्या संसृष्टोत्प्रेक्षा चतुर्थे चरणे स्थितयोपमया संवलिता च । अत्र विरहिण्या यक्षिण्या मेघाऽऽसन्नीभाव शुभसूचकशकुनवशाद् भ्रुवि विस्फुरणम् उत्प्रेक्ष्यते । एवं तस्या नयनदशा यथावर्णितं बिम्बरूपेण श्रोतुःप्रतीतिपथमवतरति ।

अतिशयोक्तेरलङ्कारस्य भेदेऽप्यभेदोक्तिरूपः प्रकारो रूपकातिशयोक्तिरिति[3] व्यपदिष्टोऽपि वर्ण्यवस्तूनां बिम्बस्य प्रस्तवने प्रयुज्यते । प्रतीकानां प्रयोगे एवालङ्कारः साधीयान् भवतीति न खलु भूयोवक्तव्यम् । अप्रकृतबिम्बसामान्येन तेन प्रकृतबिम्बं तत्प्रतिबिम्बभूतं प्रस्तूयते तथा चोपमायामिव तत्राऽपि बिम्बद्वयं प्रत्यक्षतामायाति । यथा—

स्मृताऽपि तरुणातपं करुणया हरन्ती नृणा-
मभङ्गुरततनुत्विषां वलयिता शतैर्विद्युताम्
कलिन्दगिरिनन्दिनी तिटसुरद्रुमालम्बिनी
मदीय-मतिचुम्बिनी भवतु काऽपि कादम्बिनी ॥[4]

अत्र पण्डितराजो जगन्नाथः स्व-रसगङ्गाधरं प्रणिणीषु स्तदादौ मङ्गलकामो भगवच्छ्रीकृष्णरूपामात्मन इष्टदेवतां ध्यायन् कादम्बिनीत्वेन प्रस्तौति, श्रीकृष्णस्य श्यामवर्णत्वेन प्रसिद्धिरिति वर्णसामान्येव तदीया तनुः कादम्बिनीत्वेनाऽध्यवसीयते । आतपतप्तानां ताप-हरणं चपल-चपलावलयितत्वं नेघमालाया लोकसिद्धमेव । भगवानपि करुणदृष्ट्या जनानां त्रिविधतापहारी विद्युद्द्युतिसमानरुचां गोपिकानां मण्डलेन परिवृतो यमुनाकूलस्थ कदम्बभूरुहतलस्थित इत्युभयोः साम्यमाश्रित्य भगवद्रूपं कादम्बिनीत्वेनाध्यवसितम् । अत्र प्रथमं कादम्बिन्याः स्वरूपं श्रोतुर्मतिपथमायाति ततश्च भगवद्-रूपमिति कादम्बिनी भगवतोः प्रतीकत्वेन प्रस्तुता ।

नहि तावदेतावदेव, संस्कृतकाव्यशास्त्रिभिर्व्यापाराणां मूर्तकिरणमभिलक्ष्य वक्तृ-वाच्याद्यौचित्यमभिलक्ष्य यमकानुप्रासादीनां शब्दालङ्काराणां वृत्तिशय्यादीनां च स्वरूपं लक्षितम् । एतैर्हि वर्ण्य-पदार्थस्य

---

१. वाल्मीकिरामायणे ५,२०,२१–२२

२. मेघदूते २,३२

३. रूपकातिशयोक्तिः स्यान्निगीर्याध्यवसानतः ।—कुवलयानन्दे ३६

४. रसगङ्गाधरे १,१

तद्व्यापारस्य च ध्वनिचित्र-निर्माणं सुकरं सम्पद्यते। अत एव कोमल-ध्वनि-समूहस्यावृत्त्या कङ्कणादिशब्द-स्यानुकारः परुषवर्णावृत्त्या कर्कशध्वनेरनुकरणं क्रियते। तेषु २ स्थलेषु तत्तद्गुणव्यञ्जकध्वनिकृत एवानुप्रासः प्रशस्तः। तथाहि—

जराजर्जरितैः पर्णैः शीर्णकेसरकर्णिकैः।
नालशेषैर्हिमध्वस्तैर्न भान्ति कमलाकराः॥[1]

इति पद्ये रेफसंयोगावृत्त्या शुष्ककमलपत्राणां मर्मरध्वनिरनुकृतः। अन्यत्र तु सुकुमारवर्णप्रयुक्तानु-प्रासेन तादृशकुसुमस्रजः स्पर्शस्याऽपि व्यञ्जनं कृतम्। यथा—

अप्येणपत्न्युपगतः प्रिययेहगात्रैस्तन्वन् दृशां सखि! सुनिर्वृतिमुच्यतो वः।
कान्ताङ्गसङ्गकुचकुङ्कुमरञ्जितायाः वन्यस्रजः कुलपतेरिहवाति गन्धः॥[2]

अस्मिन् पद्ये न्त-ङ्ग-ङ्कु-ञ्ज सदृश मधुरध्वनीनां प्रयोगेण कोमलाया वन्यस्रजः श्रीकृष्णः वक्षसा गाढ-संसर्गं समासोक्त्या च नायिकत्वेन व्यवहृतायास्तस्या प्रिय-गात्रगाढाश्लेषां ध्वन्यते।

इत्थं दिङ्मात्रेण प्रस्तूयमानेऽत्र विषये सारतो वक्तव्यमिदं भवति यथा भारतीय-काव्यशास्त्रा-चार्याणाम् एकान्ततोऽयं राद्धान्तो यथा काव्ये वर्ण्यमानं वस्तु केवलं वर्णनत्वेन न प्रस्तूयते। तथात्वे तस्येति हासादे र्न कोऽपि विशेषः स्यादितिवृत्तमात्रत्वात्। किं वा तत्र कवेर्नैपुण्यं स्यादुभयत्राऽविशेषात्। यथा नानाऽऽकृति भाण्डसमूहनिर्माणेन प्रजापतिपदवाच्यात् कुम्भकाराद् वेधसो महानयं विशेषो यत् तत्सृष्टाः प्रजाश्चेतनाचेतनात्मिका मतिविद्यादिसमन्विता भवपरिस्पन्द सम्पन्नाश्च। तथैव लोकतः कवेरयं महान् विशेषो यत् स स्व-प्रतिभा परिस्पन्दवशात् स्थूलजगति वर्तमानमवर्तमानमपि वा पदार्थं कल्पनावैचित्र्येण यथेच्छं पुरःस्फुरन्तमिव प्रस्तौति। तदीयेच्छैव वस्तुनश्चेतनाचेतनत्वस्य निर्णायिका। यदुक्तम्—

भावानचेतनान्यपि चेतनवच्चेतनान्यचेतनवत्।
व्यवहारयति यथेष्टं सुकविः काव्ये स्वतन्त्रतया॥[3]

एवमचेतनाश्चेतना वा सर्वेऽपि पदार्थास्तदीयभावविद्युत्स्पर्शेन तरङ्गिता रसयितुः पुरः स्फुरन्त इव भासन्ते। तत्रैव तस्येति कर्तव्यता निहिता। इति।

●

---

५. मूर्धिनवर्गान्त्यवर्णेन मुक्ताष्टठडढान् विना।
रणौ लघू च तद्व्यक्तौ वर्णाः कारणतां गताः॥
अवृत्तिरल्पवृत्तिर्वा मधुरा रचना तथा॥ साहि० ८,३-४
अत्र रसगङ्गाधरकृतं विवेचनं विशेषेण प्रमाणम्। १ आननम्।

६. वाल्मीकिरामायणे ३,१६,२४

७. श्रीमद्भागवते १०,३०,११

८. ध्वन्यालोके पृ० ४६८

पञ्चरात्राऽऽगम-रामानन्द व कबीर-सम्प्रदाय

पं० दूलेराम वेदान्ती बाबा वेदान्ताचार्य

फैजाबाद

रामानन्द—कबीर, सन्यासी, उदासीन, निर्मला, दादू, तुलसीदास, सूफी, ईशा, नानक, कानफट्टे गेबी, ओंबाबा, आदिक कई ज्ञात अज्ञात सम्प्रदाय अद्वैतवाद में निर्भर है। बात बात में निरञ्जन निराकार कहते रहते हैं, श्रुतिवाक्यों के आधार पर यह कहना अनुचित नहीं हैं, विद्वानों के लिखे शास्त्रों के आधार पर दृढ़ हुई बात को कहते ही रहेंगे, इतमें जल्दी से एकत्वदृष्टि समत्वदृष्टि अविभक्त-त्वदृष्टि सर्वमीश्वरमयदृष्टि व्यापृत होती रहती है। रागद्वेषादिनिवृत्ति तो शमदम उपरति तितिक्षा सन्तोष सद्गुरुसेवन विषयदोषदर्शन तत्त्वशास्त्रवाँचन आदि से वेदान्तवाक्यपरिशीलन से जरूर हो जाती है, उपनिषत् गीता व वेदान्तसूत्र अति उपयोगी हैं, उनके अभ्यास से अभ्यासी पावन हो जाता है, अपरविद्याएँ बहुत काम करती हैं, परब्रह्म अक्षरधाम प्राप्ति के लिये तो पराविद्या हि मुख्यसाधन है। पराविद्या के वाक्यों में से द्वैत, द्वैताऽद्वैत, विशिष्टाद्वैत, शुद्धाऽद्वैत, केवलाऽद्वैत, आचार्यों ने खींचे हैं, दृष्टिसृष्टि, सृष्टिदृष्टि, अजातदृष्टि, मिथ्यात्वदृष्टि, व्यावहारिकदृष्टि, सत्यदृष्टि, आदि निर्गलितार्थ बताये हैं। रामानुजाचार्य तथा रामानन्दाचार्य ने विशिष्टाद्वैतवाद् वर्णित किया है।

अयोध्यावासी श्रीरामानन्दाचार्य जीव माया ईश्वर तीन तत्त्व मानते हैं, भगवत्कृपा से तीन तत्व की समझ आती है। वेद और आगम-नारदागम इनको प्रमाण ही हैं। रामानन्दमते पंचीकरणप्रक्रिया से सर्वत्र भूतभौतिक होने से जहीं जो कुछ आछा-पतला ज्ञान होता है सभी सत्य है, रामानन्दस्वामी ने ब्रह्मसूत्रपर आनन्दभाष्य लिखा, रामानन्दभाष्य में भगवान् रामचन्द्रजी को पर तत्त्व परब्रह्म कहे हैं। सर्व सर्वात्मक है इसमें व्यासजी की सम्मति रक्खी है। पदार्थों में रामानुजाचार्यवत् रामानन्दाचार्य निर्भर हैं, भोक्ता जीव, भोग्य माया, ये दो ब्रह्म के शेष हैं, ब्रह्म शेषी श्रीराम हैं शेषी से शेष अलग नहीं पड़ते, विशिष्ट हो रहते हैं, तीनों की सत्ता कायमी है, श्रीराम ही चेतन अचेतन के अधिपति नियामक है, वही जगत् का उपादाननिमित्तकारण शेषद्वारा है, सीतापति श्रीरामचन्द्र विशिष्टाद्वैत परब्रह्म है, उपनिष-द्विद्याः श्रीसीता रामचरणों में वाचक होके सेवा करती हैं, रामचन्द्रजी साकेतधामाधिपति हैं, रामस्वरूप ध्येय है। श्रीरामतापनी उपनिषद् में श्रीराम को परब्रह्म करके गाये हैं, योगिजन जिसमें रमते हैं वह राम है, निर्विकल्प समाधि राम में लेते हैं, परमेश्वर का त्रिपात् नित्यविभूति आनन्दलोक अयोध्याधाम साकेतधाम आदि नाम से हैं ये अप्राकृतदिव्यविभूति के लोक हैं, सभीचीजें दिव्यविभूति की नित्य है, वह शुद्धसत्त्वमय है, विरजानदी के पार वह धाम है, उसमें अपराजिता पुरी है, अनेक प्रकार से सर्वत्र शृङ्गारित तेजस्वी रहती है, वहाँ बुद्धिनिर्मल सर्वप्रकाशा स्वप्रकाशा ही रहती है, इसका अयोध्यानाम है, अपराजिता नाम है वैकुण्ठ भी नाम है। अथर्ववेद में ब्रह्मपुरी अयोध्या कही है। वहाँ द्वारपाल दिव्यपार्षद दिव्यपार्षदानीयाँ हैं, श्रीशोभित दिव्यमहामण्डप है, उसमें सिंहासन है, उसमें सभी दिव्य साज-समाज-सामग्रीयाँ आयुध आभूषण आदि हैं, सीतोपनिषद में श्रीभूनीला सीतारूप देवीयाँ हैं, अनेकरूप धारिणी सीता है। भगवान् श्रीराम जग में आवें तब उनके सेवकवर्ग वैकुंठ भी भूमि पर आते हैं सेवते हैं,

साथ में चले भी जाते हैं। लक्ष्मण शेष है, भरत चक्रावतार है, शत्रुघ्न शंखावतार है, नित्यमुक्त भी आते आते हैं सेवते हैं, इस मत में भी मर्यादापुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजी हैं, वासुदेव संकर्षण अनिरुद्ध प्रद्युम्न यह चतुर्व्यूह राम लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न नाम से प्रकट हैं, ज्ञानबल ऐश्वर्यवीर्य तेज शक्ति वाले हैं। राम में छ हैं, तीन में दो-दो हैं, भगवान् के कूर्म वाराह नृसिंह मत्स्य वामन आदि विभवावतार होते हैं। मर्यादा राम श्रीराम माने गये हैं, पर्शु राम आवेश माना गया है, साधु सभी स्वरूप माने गये हैं, हनुमानजी आदि नैष्ठिक यति अवतार शीलावतार माने गये हैं, तुलसीदास रामानन्दीय रामभक्त थे, उपासनानुसार मुक्ति प्राप्ति मानी है। अर्चावतार गाँव-गाव में चौरे में श्रीराममन्दिर में समग्र भारत में प्रतिष्ठित सीतारामलक्षण हैं, रामानन्दस्वामी साकार उपासक रामानन्दी बापु सब साकार उपासक हैं। अन्तर्यामी भगवान् राम है, उपद्रवों से रक्षक हनुमानजी हैं, अन्तर्यामी फलप्रदाता श्रीराम है। सीताजी स्वयं महामाया दिव्या है। भक्तों को मोक्षप्रदा है, बद्धजीव गुरुमन्त्र से कृपा से मुक्त होते हैं, मुक्त में से नित्यमुक्त में मिल जाते हैं। श्रीराम ने विभीषण को अभयदान दिया था, योगिजन सुषुम्णाद्वारा देवलोक तथा ब्रह्मलोक में जाते हैं। विरजा को पार कर श्रीराम की दिव्यसभा में जाते हैं, रामानन्द व कबीर के शिष्य हंस होके अविनाशी लोक में अनन्तकाल श्रीराम का आनन्द लूटते हैं, वहाँ आनन्द के अब्धि हैं, वहाँ दिव्य देहवाले अनन्तस्वरूपधारनेवाले हंस नित्य मुक्त हैं, ये नित्यमुक्ता भगवत्संकल्प के साथ निज-संकल्प मिलाकर सेवते हैं। धाम में काल प्रभु नहीं होता, लीलाजगत् में असर करता है, जगत् माया के २४ तत्त्व वाला है। माया जड़ है जगत् में माया के शरीर हैं, धाम में शुद्ध सत्त्वमय शरीर हैं। कारण विशिष्ट राम है कार्य भी विशिष्ट राम है, कारण कार्य एक है सभी राममय है, इस प्रकार समझने से भक्ति बढ़ती है मोक्ष में जाना होता है, रामानन्द का विशिष्टाद्वैत है, रामानन्दीया निजसम्प्रदाय को श्रीसम्प्रदाय कहते हैं। गुरुपरम्परा सीतानाथ से रामानन्दाचार्यद्वारा मानते हैं। मन्त्र स्वतन्त्र हैं। श्रीरामायनमः, श्रीरामचरणं शरणं प्रपद्ये आदिक विभिन्न है॥

कबीर साहब तो श्रीराम में सुरति लगाने पर भाव भगति करने को कहते हैं, रामनामसिद्धि योग से राम योग होगा, षट्चक्र वेधोगे तो ब्रह्म योग होगा, उलटे पवन द्वारा षट्चक्रवेध न करके मेरुदण्ड का सिरा में सुन्नि में प्रवेशने से सारा आकाश पुष्पित सुगन्धित हो उठता है, परमज्योति के प्रकाश में अनन्ततारों और बिजली की चमककासा अनुभव होता है, अनहद नाद सुनाता है, तब बेहद में जाना होता है, उस प्रकाश को अनन्त परब्रह्म का तेज कहा है, उस निराकार में मन अमनस्क हो जाता है, आतमराम प्रेमभक्ति में झूलता है, अमृतरसपीता है शाश्वत आनन्द मीलता है, वासना मिटती है, आन्तर ज्योत से जगत् समग्र प्रकाशमय दीखता है, सहजहरिलीला प्रत्यक्ष दीखती है, कबीर साहब ने कहा है—यह अवस्था अखण्डित राम के आतमलीन की सहजसमाधि है।

इस समाधि मिलाने के लिये भगत लोग जग्याएँ में भक्ति करते हैं सारे भारत में रामानन्दीय श्रीराम की व कबीर की जग्याएँ हैं, राम की मूर्तियाँ हैं, साकार उपासना है। सखी भक्ति की उपासना ज्यादातर है, परमेश्वर एक पुरुष हैं, बाकी सब आतमाएँ सखीयाँ हैं, सखी भक्ति से अपार प्रेम होता है, प्रेम से सोऽहं हंस हो जाता है। परब्रह्म की सुरता शबल ब्रह्म में आती है उसकी सुरता जहाँ-जहाँ आती है वहाँ-वहाँ भगत सखीयाँ बनबन कर उनका पति ब्रह्म की सेवा करके निराकार निरंजन ब्रह्मलोक में पहुँचना हो जाता है। देशभेद से सगुण साकार श्रीसीताराम के भक्त, निर्गुण निरंजन निराकार में जाने का वायदा करते हैं। रामानन्दजी का जो श्रीसम्प्रदाय साकार प्राप्ति का है, वह कबीर की शाखाओं

में रामसखीयाँ होते-होते आत्मा सो परमात्मा में लीनता का अन्त में पहूँचते हैं। बाहर की रामसेवा भक्ति, अन्दर की आत्मभगति सुरता, तब ऊर्ध्व जाते ब्रह्मरन्ध्र से प्रकाश में जाना ब्रह्मप्रकाश में ब्रह्मानन्द में तल्लीन हो जाना पर्यवसान माना है, यह सभी ने माना ऐसा नहीं है, जहाँ जिस काफले का ज्ञान मिलने लगा वहाँ विभिन्न मत से साकार से निराकार में सखा से सखी रूप में एकता से अद्वैतरूप में हो जाने के प्रसंग खड़े हो गये हैं। जैसी उपासना वैसी प्राप्ति, इस प्रकार से एक ही मत में अनेक पन्थ निकल पड़े हैं। किन्तु साकार जैसा सुख नहीं है। इस प्रकार सम्प्रदाय के अंगों के परिवर्तन हो जाते हैं॥ उपासक को सोचकर भजना चाहिए, जिसमें प्रीति उसे भजना॥ भावनानुसार भगवान् पाये जायँगे॥

पञ्चरात्रागम-रामानुज सम्प्रदाय

पं० रामशरणशास्त्री वेदान्तभूषण

द्रविडी, बेंकाक

आत्मा माया ईश्वर तत्त्वत्रय तो अनादिकाल से है ही, श्रुतियाँ तीनों का प्रतिपादन नित्यत्वेन करती हैं, 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' इसके अनुसार माया तथा आत्माओं की ईश्वरसत्ताधीन व्याप्य सत्ता है, ब्रह्म में दोनों आश्रित है, शरीर हैं, पराधीन हैं, श्रुतिमूलक तर्क प्रमाण है, अन्यथा नहीं, माया प्रकृति है माया नियन्ता परमात्मा है, माया परमात्मा की शक्ति भी है, ब्रह्म में रहे माया व आत्मा में अवस्थाएँ बदलती हैं, परिणामाऽवस्था हुआ करेगी, ब्रह्म का अचिदंश माया विशिष्टस्वरूपा जगद्रूप से होती है, सत्कार्य है। ईश्वर सर्वशक्तिमान् हैं अघटित घटना समर्थ है, उसमें दोष कोई नहीं होता, गुणरूप ही होता है। ब्रह्म में सजातीय समान का भेद, विजातीय विषय का भेद नहीं है, स्वागतभेद तो है ही, सगुण है। रामानुज मत में जगत् तथा ईश्वर दोनों सत्य है, सगुण साकार ब्रह्म उपास्य है, शक्तिमत् है, व्यापक है, स्वेच्छा से नानाविध संसार को सर्जता है, चिज्जीवात्मा, अचिन्माया दोनों से सम्बद्ध विशिष्ट सजातीय विजातीय भेदरहितं विशिष्टं ब्रह्म विशिष्टाद्वैत कहाता है, नानात्व निषेध तो विषयों की स्वतन्त्र स्थिति का है, अतः सर्वमेव ज्ञानं सत्यमिति रामानुज सिद्धान्त से सत्ख्याति भी प्रसिद्ध है। रज्जुसर्पज्ञान में भी तेज जल पृथिवी अन्धकार तत्त्वों की वहाँ हाजरी है वे स्वरूप से ही दीखते हैं। निर्गुणत्व वर्णन तो मायिक गुणरहित तत्त्वपरक समझना। शरीर के विकार जीव को नहीं हैं वैसे माया व जीवात्मा की अवस्थाएँ शरीरी में नहीं है, शरीरी निर्विकारी है, नियामक अन्तर्यामी साक्षी है, वास्तविक स्वरूप ब्रह्म अपरिणामी है, विक्रिया रहित है। जीव ईश्वर माया के भेद तथा तत्त्वों के भेद कायमी हैं। रामानुजमते अभेद मुख्य है भेद गौण है, आत्माऽणु है, ज्ञाता आत्मा चिद्रूप है, ज्ञान तो आत्मधर्म है, अणुजीव ज्ञानशक्ति से शरीर को चेतता है, कर्मज्ञान से भक्ति उदय होता है, निष्काम कर्मद्वारा बोध से भक्ति ततः मुक्ति होती है। भक्ति व प्रपत्ति से प्रसन्न परमात्मा मोक्ष में रखते हैं, मुक्ति में परमात्मा के समान होता है सब आनन्द भोगता है सशरीरी दिव्यशरीरी होता है, परमात्मा में नियामकपना ही अधिक है। मायावी को स्वमाया पराभव नहीं करती, माया ब्रह्म को पराभूत नहीं करती, त्रिगुणमयी है, वह भक्तिवाले के पास निर्गुणा भी बन जाती है, उसको अत्यर्थप्रीति दर्शन समानाकार निरन्तर स्मरणरूप भक्ति से मुक्ति मिलती है, माया अमाया हो जाती है। पंचीकरण प्रक्रिया से सर्वत्र सर्वांश भूतांश होने से ज्ञान भी यथार्थ ही होता है। रामानुजभाष्ये नारायणस्य वैशिष्ट्यं वासुदेवस्य विष्णोरिति चाऽस्ति। सर्व सर्वात्मक होने से सत्ख्याति मुख्य है। धर्मि द्रव्य प्रधान है, अद्रव्य जो सत्त्व रजः तमः शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध शक्ति व संयोग का आधार द्रव्य है। बुद्धिः सात्त्विकी, प्रकृति काल जडद्रव्य है, पराक् चेतन द्रव्य नित्य विभूति और धर्मभूत ज्ञान है, प्रत्यक् चेतन भी जीव ईश्वर है, भोक्ता भोग्यं प्रेरिता च तीनों द्रव्य नित्य संयुक्त हैं, परमेश्वर निमित्त उपादान कारण है, साकार विविध शक्तिशाली समाभ्यधिक रहित सर्वगत सर्वज्ञ त्रिविध परिच्छेदरहित सर्वाराध्य चेतनाऽचेतनशरीरी भवति, स नारायण विष्णु वासुदेव है। नित्यविभूतिः त्रिपाद्

विभूति अप्राकृतलोकः वैकुण्ठ लोक उसके धाम के नाम हैं। प्रकृति से पर है, प्रकृति ब्रह्मलोक के मध्य विरजा नहीं है, उसे तैर के भगवल्लोक में जाना होता है, वैकुण्ठ लोक में वैकुण्ठपुरी है, उसमें महामण्डप है, सिंहासन है, शेषपर्यंक है, पर्यंक में भगवान् नारायण श्री भूलीला देवीसहित विराजते हैं। उपकरण—कौस्तुभ श्रीवत्स गदा पाञ्चजन्य शार्ङ्गधनुः कौमोदकी तदावरक चक्र शर वनमाला ये सब क्रमशः पुरुष प्रकृति महत् सात्त्विकाहंकार ज्ञान अज्ञान मन दशेन्द्रिय श्रीनारायण को सेवते हैं। परम पुरुष देवी आभूषण आयुध सहित अवतरते हैं, धामगमनक्षणे साथ ले जाते हैं। वैकुण्ठ अवतरता है मुक्तों भी अवतरते हैं।

भगवान्—पर, व्यूह, विभव, अन्तर्यामी, अर्चा, अवतार होते हैं। वही परवासुदेव अपरवासुदेव-रूपद्वारा ऐश्वर्यवीर्यगुणयुक्त मन के अधिष्ठाता प्रद्युम्न होते हैं, तथा शक्तितेजगुणयुक्त अहंकार के अधिष्ठाता अनिरुद्ध होते हैं, तथा ज्ञानबलगुणयुक्त जीव के अधिष्ठाता संकर्षण होते हैं, तीन कीं उपासना ऊपर वासुदेव में होती है, तब परवासुदेव की प्राप्ति होती है। परब्रह्म परमात्मा पर है। छः गुण मुख्य—गौण सभी में हैं॥

व्यूह—वासुदेव प्रद्युम्न संकर्षण अनिरुद्ध ये चार व्यूह हैं।

विभव—सजातीय प्राकट्यवाले विभवावतार कहाते हैं, कूर्म, वराह, नृसिंह, वामन, परशुराम श्रीराम बलभद्र श्रीकृष्ण आदि विभव हैं। इनमें मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम है, लीलापुरुषोत्तम श्रीकृष्ण है। जैसी ध्यान उपासना भक्ति वैसी प्राप्ति होती है। वृन्दावनादि धाम में भी दिव्य है। भाष्यकार सभी विभवभक्त हैं वे उपास्य इष्टभगवान में श्रुतियों के समन्वय करते हैं।

अन्तर्यामी—सभी के अन्तः स्थित हो के शासक स्वरूप है, भगवान् भक्त जीव को कर्मानुसार ध्यान में हृदय में साक्षिरूप में रहकर सुखदुःखादि अनुभव कराते हैं, भगवान् निर्लेप हैं। अन्तर्यामी सभी में है मूर्तियाँ में भी वही है, श्रीरामानुजाचार्यजी अन्तर्यामी को पुण्डरीकाक्ष कहते हैं, बोधायनवृत्ति श्रीरामानुजभाष्य विशिष्टाद्वैतपरायण है।

अर्चाऽवतारः—प्रतिष्ठित प्रतिमा स्वरूप है, कल्याणदेवस्य सन्निधौ अर्चावतारो बलभद्रोऽभूत्, प्राणप्रतिष्ठा भक्तैकाग्रता भगवन्निवास कराते हैं। मूर्तिका आभिरूप्य होना चाहिए।

आवेशाऽवतार भी कहीं पशुराम आदि को आचार्य को गुरु सद्गुरु को कहें हैं।

स्वरूपाऽवतार—सभी सन्त को कहे हैं, इनके सम्प्रदाय हैं।

सम्प्रदाय—उपदेश आचार्य सद्गुरु मन्त्र शिष्य समुदाय दीक्षा मन्दिर मूर्तियाँ शास्त्र उपासना व्रत नियम नियतवेष जयन्ती उत्सव कथापारायण दैहिक आध्यात्मिक समर्पण शरणागति प्रपत्ति पुण्ड्रादि चिह्न यम नियम ध्यान मनन सत्संग ताजीकरण में जोन्दा रहता है तथा बढ़ता जाता है। वर्तमानसमय में तो ज्यादेतर मानव मन्दिर धन साधुवंश पर महत्ताको गौरवता को विशालता को भजता है। संघ में शक्ति सम्प्रदायशक्ति है।

जीवात्मा भोक्ता है—नित्य ज्ञाता ज्ञानाश्रय कर्ता भगवच्छरीर भगवदधीन स्वप्रकाश अणु प्रतिशरीरभिन्न असंख्य हैं। जीव में तीन प्रकार लगाये है। १ नित्यमुक्त, २ बद्ध, ३ मुक्त। नित्यमुक्त दिव्य हैं भगवत्संकल्पमय हैं धामवासी नित्यसूरि हैं भगवदिच्छा से अवतरते हैं। कर्मबन्धनवाले संसारी बद्ध हैं। पुनर्जन्म में न आवें वे मुक्त कहाते हैं। आतिवाहित देवताएँ मुक्तों का सम्मान करती हैं। भगवान् के अंक में बैठते ही गुणाष्टकवाले होके दिव्यसारूप्य में यथेष्ट स्वरूपधारी सर्वकाम परिपूर्ण भोगते हैं। आनन्द रस धारा को भोगते हैं।

परिदृश्यमान जगत् जड है भोग्य है मायिक तत्त्वमय है, बद्धजीव भोगता है। काल भगवान् की शक्ति है नित्य द्रव्य है, भगवान् का नाम भी काल है, भगवान् की लीला का साधन है, लीलाविभूति में कालनामक शक्ति को आगे रख के भगवान् लीला करते रहते हैं। काल जागता रहता है। धाम में काल नहीं काम करता। १ माया, २ महत्तत्त्व, ३ अहंकार, ४ मनः, ५ श्रोत्र, ६ त्वक्, ७ चक्षु, ८ रसना, ९ घ्राण, १० वाक्, ११ हाथ, १२ पग, १३ पायु, १४ उपस्थ योनि, १५ शब्दतन्मात्रा, १६ स्पर्श, १७ रूप, १८ रस, १९ गन्ध, २० आकाश, २१ वायु, २२ तेज, २३ जल, २४ पृथिवी, २५ जीवात्मा, २६ परमात्मा, इतने तत्त्व हैं, काल प्रकृति आदि गीने हैं, गुण भी गीने हैं। इनकी भी गिनती अधिक हैं। काल, तीन गुण संयोग शक्ति, शब्दादि गुण मानने चाहिए। प्राण भी तत्त्व मानना ही होगा, प्रसिद्ध है। बुद्धि की अवस्थाएँ इच्छा आदि हैं।

सूक्ष्म चित् अचित् विशिष्ट ब्रह्म कारण है, स्थूल चित् अचित् विशिष्ट ब्रह्म कार्य है, दोंनों ब्रह्म एक हैं, विशिष्टाद्वैत एक है। भगवान् संकल्प से निमित्त कारण हैं, शेषों से उपादान कारण हैं, काल से सहकारी भी बनते हैं, श्रीं नारायण ने श्री लक्ष्मी से विशिष्ट अद्वैत स्वरूप का उपदेश दिया; अनादि सृष्टि से यह उपदेश चला आता है, श्री रामानुजाचार्य आदिक इसकी ताजगी करते हैं॥ सब शब्द शरीर विशिष्ट परमात्मवाचक हैं, सब विशिष्टाऽद्वैत रूप से 'एकमेवाऽद्वितीयं ब्रह्म' है। 'अहं ब्रह्मास्मि' ब्रह्मतनु अस्मि ज्ञान मोक्षोपयोगी है, भक्ति से प्रपत्ति आरात् उपकारक हैं। पार्षद या पार्षदानी बनने में भगवदिच्छा सहित स्वेच्छा या स्वेच्छा सहित भगवदिच्छा हेतु है। सेवा से भगवान् का दिव्य आनन्द लेते रहना मुक्ति है। अनेक रूप धारना बड़ा सायर्थ्य है।

सामवेद, पंचरात्रागम, श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदाय

पं० हरिशरण द्विवेदी शास्त्राचार्य, वेदान्तशास्त्री

पटना

सभी सम्प्रदाय वेद आगम आदि से प्रकट हुए माने जाते हैं, परब्रह्म अवतारी के अवतार से अनन्य भक्त का उपदेश मिलने में विशिष्टाद्वैत शुद्धाद्वैत द्वैताऽद्वैत द्वैत व अद्वैत-केवलाऽद्वैत संक्षिप्त परिचायक शब्द समग्र सृष्टिरूप कार्य में कारणमय प्रभु के ज्ञान का फैलावा से सम्प्रदाय परिचित होता है, ज्ञान में अज्ञान के स्वरूप विवेचन से भी सत् ख्याति असत्ख्याति अन्यथाख्यति अनिर्वचनीय मिथ्यात्व-ख्याति आत्मख्याति शून्यत्व परिचिति क्षणिकत्वादि परिचितियाँ भी विद्वानों ने संक्षिप्त में कह कर उन पर सिद्धान्ती ग्रन्थ रचे हैं।

श्री स्वामिनारायण सम्प्रदाय को, सरयूपारीण पाण्डे विप्र धर्मशर्मा के घर भक्तिदेवी में अवतारी परब्रह्म स्वयं प्रकट होके वनवास के बाद सौराष्ट्र महागूजरात में स्थापित करनेवाले हैं, उन्होंने सामवेद की मीलती संहिताएँ नारदपंचरात्र की प्राप्त संहिताएँ श्री मद्भागवत गीता ब्रह्मसूत्र आदि के तात्पर्यानुसार पारम्परिक विशिष्टाद्वैत ज्ञान को ही मुख्य आधार में रख कर तथा वैष्णव रीतियों को पोषण देके साम्प्रदायिक धर्म कर्म दीक्षा आचार्य जाप यज्ञ मन्दिर २४ अवतारों की पूजा शंकर ब्रह्मा विष्णु हनुमान् गणपति पार्वती सती लक्ष्मी महालक्ष्मो गायत्री सावित्री सूर्य आदि को मन्दिरों में प्रतिष्ठा-पित करके त्रिदर्ण में ब्रह्मचारी सन्त शीलव्रत की दीक्षा त्यागाश्रम प्रवर्तायें हैं, वर्ण आश्रम के धर्म योग के अष्टांग सांख्य का ज्ञान जैमिनि का यज्ञ यागादि वेदान्त का व्याससूत्र उपनिषदादि तथा महाभारत रामायण १८ पुराण २१ स्मृतिशास्त्र और भी लोकहितकर प्रवर्तित किये हैं, स्नान सन्ध्यादि षट्कर्म चालू रक्खे हैं, आत्मनिवेदीभक्ति चातुर्मास्य के नियम व्रत उत्सव महोत्सव जयन्ती आदि आदि प्रपोषित किये हैं, साकार सगुण स्वयं दिव्य सुमूर्त ही भगवान् आनन्दघन मूर्सि ब्रह्मलोक में है, अनन्त मुक्त सेवा में है, ब्रह्मधाम भी व्यापक प्रकाशरूप में ब्रह्मलोक तथा सुमूर्त स्वरूप में अक्षर ब्रह्मधाम सेवकरूप में वहाँ है, अनन्त शक्तियाँ भगवान् की सेवा में हैं, असंख्य आयुध उपकरण गुण ऐश्वर्य सभी सुमूर्त प्रकाशधम पुरुष पुरुषोत्तम की सेवा में हैं।

जब पृथिवी में पधारते हैं तब स्वयं स्वधाम स्वपार्षद स्वैश्वर्यादि स्वशक्तियों सहित पधारते हैं, तब ईश्वरसमूह ऐश्वर्यघन तथा जीव योगि यति मुनि समूह ज्ञानघन सुमूर्त सेवा के लिये पितृ ऋषि देव मानव आदि पधारते हैं।

ब्रह्मा की आवरदा के ३३ के वर्ष में ज्वालारुणाचल के वह्निरसों से दंदह्यमान स्वामीनगर व प्रजा की रक्षा के लिये अनादि श्री स्वामिनीसहित, अनादि श्री स्वामिनारायण नाम के अवतारी परब्रह्म का प्राकट्य हुआ था, उसके बाद वाराहकल्प में सप्त मन्वन्तर के २८ तम कलि में पाँच हजार वर्ष बीतने पर धर्मपुत्र श्री स्वामिनारायण अवतारी महापुरुषोत्तम ब्रह्मशील पुरुषोत्तम प्रकट हुए हैं, इन्होंने श्री नरनारायण भगवान् द्वारा प्राकट्य लिया। विशिष्टाद्वैत स्वीकार किया, किन्तु जीव माया ईश्वर को

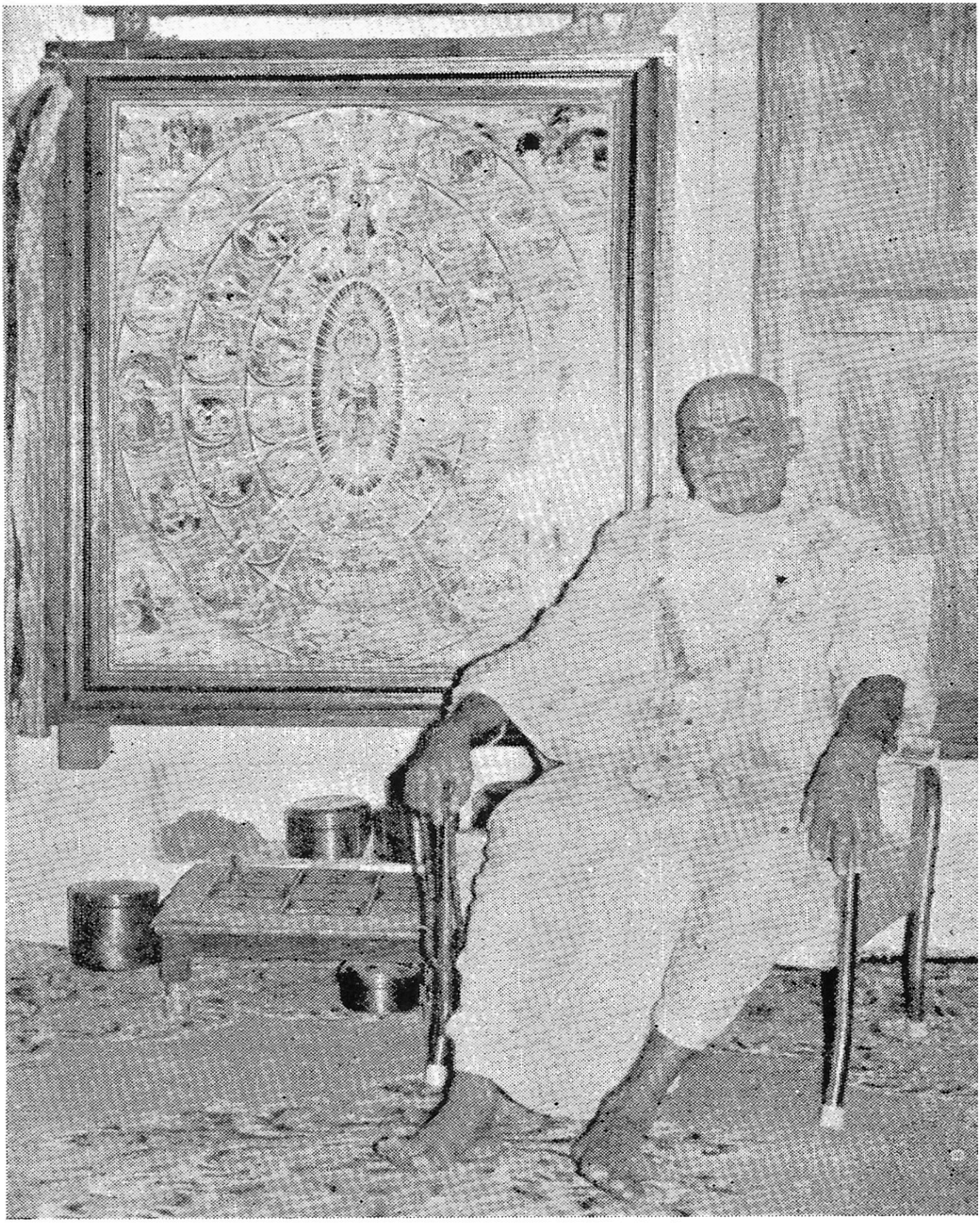

श्री[कृष्णवल्लभाचार्यजो महाराज ने आजीवन भक्ति के लिये प्रतिष्ठापित सभी अवतार पञ्चायतन देवदेवीयाँ चतुर्व्यूह सृष्टीश्वर दिक्पाल गायत्री सरस्वतो आदि के अवतारो मंडल की सेवा में निज समर्पित स्थिति ॥

स्वीकार करते हुए भी जीव ईश्वर माया ब्रह्म परब्रह्म पाँच तत्त्व स्वीकार किये, जीवात्माएँ ज्ञानघन स्वरूप हैं, ईश्वर वैराजादि ऐश्वर्यघन प्रधानपुरुष पर्यन्त हैं। माया तमोघन आश्चर्यकरी तीन गुणवाली (तमोघन) या रजोघन है। माया के २४ तत्त्व हैं। ब्रह्म स्वयं अक्षर ब्रह्म तथा वहाँ के मुक्त प्रकाशघन हैं। परब्रह्म आनन्दघन हैं। ये तत्त्व मुख्य हैं। दर्शनशास्त्र की प्रक्रियानुसार, द्रव्याणि परब्रह्म, ब्रह्म, मुक्त, अवतार, धाम माया ईश्वर जीव प्रधान महत्तत्त्व चित्त अहंकार मन ५ तन्मात्राएँ दश इन्द्रियाँ दस या पाँच प्राण पाँच भूत, ये द्रव्य में लिये हैं। द्रव्यगुण पदार्थ—सत्त्व रज तम ज्ञान कामना चमत्कार धर्म अधर्म प्रीति आकर्षण उपासना आदिक लिये हैं। केवल गुणों में—रूप रस गन्ध स्पर्श संख्या परिमाण पृथक्त्व संयोग तादात्म्य विभाग परत्व अपरत्व गुरुत्व द्रवत्व स्निग्धत्व शब्द सुख दुःख इच्छा द्वेष प्रयत्न संस्कार शक्ति स्थैर्य गीने हैं। कर्म—क्रिया—स्पन्द कम्प गति आस्फोटनलीनीकरण आदि हैं। जाति—साजात्य वैजात्य सामान्य अवान्तर उपाधि आदिक माने हैं। विशेष—सौलक्षण्यं वैलक्षण्यं व्यावर्तकत्व तत्त्वत्व हैं। सम्बन्ध—तादात्म्य सुयोज्यत्व संसिद्धत्व वृत्तित्व स्वरूप वैशिष्ट्य समवाय पर्याप्ति ये सब हैं। अभाव—प्रागभाव प्रध्वंसाभाव अन्योन्याभाव अत्यन्ताभाव अचिराभाव हैं ये पदार्थ निजमुखसे कहीं कहीं सुधासिन्धु में लिये हैं। यहाँ एकत्रित किये हैं।

एकान्तिकता—आत्मनिष्ठा धर्मनिष्ठा ज्ञाननिष्ठा भक्तिनिष्ठा स्वरूपनिष्ठा साधननिष्ठा तपोनिष्ठा स्वाध्यायनिष्ठा गुरूपसत्तिनिष्ठा सांख्यनिष्ठा योगनिष्ठा ब्रह्मनिष्ठा आदि प्रतिपादित हैं। धर्म अर्थ काम मोक्ष चार पुरुषार्थ कहे हैं। प्रमाण-विपर्यय विकल्प निद्रा स्मृति ये वृत्तियाँ भी कही हैं। सूक्ष्म मध्यम स्थूलाऽवस्था कही हैं। विक्षेप विघ्न उपाधि भी कहे हैं। प्राकृत वैकृत दानदक्षिणा ये तीन बन्धन भी कहे हैं। ऊर्ध्वगति अधोगति कही हैं। साम दान भेद दण्ड उपाय कहे हैं। कर्म प्रारब्ध सञ्चित क्रियमाण तीन कहे हैं। चार आश्रम चार वर्ण उनके सदाचार कहे हैं। शुद्धि मिथ्यात्व जन्म मरण विकार परिणाम विवर्त काल दिग् दुर्गुण दोष गुण भी कहे हैं। यथार्थज्ञान अयथार्थज्ञान प्रत्यक्ष अनुमान उपमान शाब्दबोध अर्थापत्ति अनुपलब्धि संभव ऐतिह्य चेष्टा सामान्यज्ञान प्रमा अप्रमा भ्रम तर्क स्मरण अन्वय व्यतिरेक व्याप्ति सद्धेतु फल, कथा वाद सिद्धान्त कामना चमत्कार अनुष्ठान दृष्टान्त प्रतिज्ञा हेतु उदाहरण उपनयन निगमन निग्रहस्थान जातिस्थान भी कहे हैं। मानवस्वरूप अवतारस्वरूप के मूल पुरुषोत्तम का स्वरूप दिव्य जो आत्मतत्त्व आनन्दघन शक्तिसंभृत एक ही तत्त्व दिव्य मूर्ति है, मुक्तों की प्रकाशघन ईश्वरों की ऐश्वर्यघन मूर्तियाँ हैं, विभूतिघन की आवश्यकता नहीं रहती, अक्षरधाम में सारूप्यमुक्ति कही है। प्रेमसेवा प्रपत्ति साधन हैं। अक्षरधाम में भगवत्समान दिव्यसरूपाकारा विद्यन्ते। श्रीस्वामिनारायण सम्प्रदाय के हार्दज्ञान के लिये, नित्यानन्दपण्डितरचित श्रीहरिदिग्विजय ग्रन्थ में तथा शतानन्दरचित हरिवाक्यसुधासिन्धु ग्रन्थ में तथा शुकानन्दरचित सत्संगिजीवन व शिक्षापत्री ग्रन्थ में पूर्ण मिलेंगे। वर्तमान समय में श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी के ग्रन्थ तत्त्वमुक्तावली-न्याय, ब्रह्मरसायनभाष्य-वेदान्त, श्रुतितात्पर्य-निर्णय-सिद्धान्त, सुधासिन्धुसारसन्दोहन, आदि आदि मार्मिक ग्रन्थ साम्प्रदायिक रहस्य जानने के लिये खूब उपयोगी है। मुक्ति के लिए 'अखिलभूमण्डलीयसाम्प्रदायिकमुक्तिव्यवस्था' 'गुणातीतब्रह्मोपनिषत्' 'प्रमात्वविमर्श' 'ख्यातिविमर्श' 'साकारत्वविमर्श' 'श्रीहरिस्वरूपनिर्णय' का सत्संगभाष्य अवलोकनार्ह है। पण्डितों को उपयोगी हैं।

ज्ञान भक्ति उपासना ध्यान स्मृति सेवानुसन्धान एक ही साधन पदार्थ में प्रयुक्त होते हैं, उपासना दर्शनसमानाकार प्रेमस्मरणसन्तान होते रहना चाहिए, स्वप्न में भी होना चाहिए, सगुणसाकार सुरूप दिव्य मूर्ति की उपासना ही करना, आतिवाहिक देवताएँ भी अक्षरमुक्त आते हैं धाम में ले जाते हैं।

अनादि श्रीकृष्णनारायण परब्रह्मपुरुषोत्तम के शरण में चरणों में रहना सेवना मुक्ति ही है। स्वरूपाविर्भाव आत्मचेतन ही भगवन्मूर्ति में प्रवेश करके समान सरूप हो जाता है, मुक्त अक्षर व परब्रह्म के स्वरूपों में एकमात्रामात्र भी विषमता नहीं हैं यह मुख्य सिद्धान्त है। भक्ति मुख्य साधन हैं मोक्ष में विरोधी को हठाती हैं स्वयं में मूर्ति बनती है भक्त को निरावरण सेवा में पहुँचाती है। विद्वद् दृष्टि से ब्रह्मसूत्र उपनिषद् गीता आदि पर भाष्य हैं, उपयोग लेने से खुलता हृदय हाथ में लगता है। काशीजी में श्रीस्वामिनारायण मन्दिर है विद्वान् गण इससे मार्क्स कर सकते हैं, संस्कृत ग्रन्थ भी विद्याविलास प्रेस औरियन्टलिया में मिलते हैं। उस पर से भी वैदिक सम्प्रदायपना का सार खींच सकते हैं। बहुत मर्म-विवेचन सम्प्रदाय पिण्ड में प्राप्त होगा।

इनके तत्त्वों के अनुसार जीव ईश्वर मायाविशिष्ट ब्रह्म है, ब्रह्म विशिष्ट परब्रह्म है इस प्रकार विशिष्ट ब्रह्माद्वैत या सर्व विशिष्ट ब्रह्म और ब्रह्म विशिष्ट परब्रह्म यह बात अर्थात् स्वीकारना पड़ता है। शुक्ति रजतवृत्ति मिलने से सत्समुच्चय ख्याति लग जाती है। आत्मा में परमात्मा सूक्ष्म साकार मूर्ति होने से आत्मा भी तदनुरूप साकार ही रहता है। मुक्ति में भी साकार ही है।

वेद-उपनिषत्-शांकरसम्प्रदाय

श्री धर्मानन्द स्वामी न्यायव्याकरणाचार्य, वेदान्ताचार्य

डिब्रूगढ, आसाम

वेदों में निराकार निर्गुण निर्धर्मक सत् सत्तामात्र नित्यज्ञान द्रव्य व्यापक एक ब्रह्म ही कहा है। ब्रह्म से अतिरिक आविद्यक संसार ईश्वर मायाजीव जड़ात्मक मिथ्या है, त्रिकाल में बाध्य है, ब्रह्मभिन्न सभी बाध्य होने से उनकी ज्ञप्ति उपासना गीनती आदि कुछ मत करना, निराकार में से शुद्धसत्त्वग्रहण करके हिरण्यगर्भ ईश्वर प्रथम साकार सगुण हुआ, वैराज़नारायण नरनारायण लक्ष्मीनारायण श्रीकृष्ण-नारायण सभी सगुण हुए वे सृष्टि के अन्त में निर्गुण निराकार मे चले जायँगे, इनको भज के सगुण मोक्ष में जाके तब निर्गुण मोक्ष में जाना, शम दम उपरति तितिक्षा 'अहं ब्रह्माऽस्मि' उपासना 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या' 'जीवो ब्रह्मैव' आदि ज्ञान से मोक्ष होगा, सगुण की भक्ति है अतः भक्ति ज्ञान का अंग है, मैं ब्रह्म हूँ यह ज्ञान ही आपको ब्रह्म बनायेगा, सगुणसृष्टि में सगुण नियम तो पालना ही पड़ेगा, निर्गुण ब्रह्म होने के लिये ज्ञान से अलावा कोई नियम नहीं है। ईश अवतार देव गुरु जीव शास्त्र विधि निषेध अविद्या के तत्त्व शरीर भोग्य स्वर्ग नरक धर्म अधर्म सभी मिथ्या है, ब्रह्म एक सत्य है 'ब्रह्माऽस्मि' ज्ञान से वे मिथ्या सब उड़ जायँगे, आत्मा ब्रह्म आविर्भूत होगा, यही मुक्ति है, उसको न धाम है न सेवा है न सुख लेने का है, आकाश की तरह चिदाकाश ब्रह्म है उसमें मिल जाना मोक्ष है, बाकी तो प्रधान पुरुष तक सगुण वासुदेव या नारायण तक सभी अनित्य है। ईश्वरों की अवतारों की भावना अर्चा आदि करना, उनके पास जाने की उत्कंठा नहीं रखना, ब्रह्म होने की उत्कण्ठा रखना। नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्तस्वभाव नित्यज्ञान प्रकाशात्मक ब्रह्म है, दोरडी में सर्प दीखता है वह ज्ञान का विवर्त है संसार दीखता है विवर्त है, ब्रह्म सत्यज्ञान होने से विवर्त उड़ जायगा, दीखती चीजें भी लीन हो जायगी, प्रतिजीव अविद्या अन्तःकरण एक-एक है, विद्या उपजने से अविद्या अन्तःकरण मिट जायँगे। यदि सगुणब्रह्म उपासेंगे तो स्वर्गादि उत्तर स्थलों में जाना होगा, निर्गुण सगुण दोनों उपासेंगे तो विदेह कैवल्य लेके ब्रह्म होना होगा, निर्गुण ब्रह्ममात्र उपासेंगे तो तुरन्त ब्रह्म होना होगा। अविद्याकृत देहादि सगुणाऽध्यास समाप्त होते ही विद्यावृत्ति फल को ब्रह्म को दीखला के लीन होयेगी आत्मा ब्रह्म है यही मुक्ति है। तेरा मत ठीक नहीं, मेरा मत ठीक है, इसमें तो शब्द संग्राम में जींदगी चली जाती हैं, ब्रह्म होना बाकी रह जाता है। प्रत्यग् आत्मा ब्रह्म है, 'अब्रह्मदृष्टिर्नाशनीया ब्रह्मदृष्टिः कर्तव्या' यह वेदान्त का सारार्थ है। संसारी जगत् संसारो व्यवहार के लिये सत् है। माया सत् नहीं है क्योंकि अन्त में बाधित होती है, माया असत् नहीं है क्योंकि हाल में सत्य उपयोग होता है। माया सत् असत् मिश्रित नहीं हैं, एकत्र दोनों विरोधी मिलने पर मूलतत्त्व उड़ जाता है। अत अनिर्वचनीय है, यह एक परिचायक नया नाम लगाया, ब्रह्म का अविद्या में प्रतिबिम्ब ईश्वर जीव हैं अविद्या उड़ जाने से प्रतिबिम्ब उड़ गया, बिम्ब ही ब्रह्म रह गया, वही मैं हूँ, ऐसा शांकरमत से समझना। जीव के विषय में 'परब्रह्म प्रतिबिम्ब जीव है, शुद्धसत्त्वमाया में चित्प्रतिबिम्ब ईश्वर है, मलिनाऽविद्या में चित्प्रतिबिम्ब जीव है, किम्वा आविद्योपाधिक जीव है, कार्योपाधि जीव है कारणोपाधि ईश्वर है, किम्वा बिम्ब ईश्वर है तो प्रतिबिम्ब जीव है तो बिम्बप्रतिबिम्बरहित ब्रह्म निर्गुण

निराकार है, घटाकाश भवनाकाश भूताकाश एक है तो देह चेतन ब्रह्माण्ड चेतन चिदाकाश ब्रह्म एक है। ब्रह्मात्मा अहंकारावच्छिन्नो जीव है, अज्ञानाश्रित चैतन्यं जीव है, सगुण ईश्वर जगदुपादान है, जीव तो कर्मभोक्ता है, अविद्या दोष है निमित्त है, माया ब्रह्म शक्ति है मगर ब्रह्मस्वरूप नहीं है, जगत् अविद्याद्वारा ब्रह्म का विवर्त है तो ब्रह्म शुद्ध हो बच जाते हैं। ब्रह्म सजातीय विजातीय स्वगत भेद रहित है, देवोपासना नास्तिक्य नहीं आने के लिये है, तुरीयावस्थं तुरीयातीतं च ब्रह्म, जीव ब्रह्मतदात्मक है भेद तो अज्ञानकृत है। विद्याद्वारा अविद्यालये ब्रह्मीभाव मुक्ति है। सच्चिदानन्दस्वरूप ब्रह्म है, नित्यं विज्ञानं ब्रह्म है, ज्ञानं मूल तत्त्व है, सत् स्वरूप आनन्द स्वरूप है स्वयंप्रकाश है सर्वप्रकाशक है, सर्वकल्पनाऽधिष्ठानभूता सर्व-विशेषरहित निर्गुण है अद्वितीय है, मुक्ति में आनन्दाभिव्यक्ति लोकोत्तर है, वेद पारमार्थिक सत्य नहीं है तो भी पारमार्थिक सत्यवस्तु को सूचित कर सकता है, वेदवाक्य प्रवाहरूप से नित्य है, वेद पूर्वसर्ग में थे उन्हें सगुण ईश्वर सम्भार कर ब्रह्मा आदिक को देते हैं, वेद से अतिसूक्ष्म तत्त्व की प्राप्ति होती है, अज्ञान जगत्प्रपंच का मूल है, अज्ञान चैतन्य से साक्षात् प्रकाशित होता है। 'अहं ब्रह्माऽस्मि' ज्ञान होने से 'अहं न ब्रह्माऽस्मि' यह अज्ञान निवृत्त होता है, सम्बन्ध भी निवृत्त होता है, जीव ईश्वर की उपाधि नष्ट होती है। जीव ब्रह्माऽभिन्न है यह सिद्धान्त आदर लेता है, ब्रह्मदर्शनं सर्वत्र समदर्शनं भेददर्शनतिरोधानं साक्षात्कार रूप है, परमपुरुषार्थो मोक्षो ब्रह्म सिद्ध ही हैं।

संन्यास के धर्म सभी त्याग भिक्षान्तभोजन मठ अरण्य में वास ब्रह्म में मग्नता स्थान के अबन्धन काषाय अंचल धारण लंगोट रखना विद्याचिन्तन ब्रह्मचिन्तन करना आश्रमवास करके उपदेश देना रागद्वेष शून्य रहना बसति का प्रसंग नहीं रखना भारत में विशेषकर सभी को शीलव्रत दिया है लिखाया भी है पलाया भी है अतः शील रखना नारीवर्ग का सहवास प्रसंग व्यवहार में नहीं रहना आदि-आदि धर्म ब्रह्मप्राप्ति में मददगार कहे हैं, वे पालते रहे तो मुक्ति में चले जाते हैं। त्यागी गृही की स्मृद्धि समान नहीं है। त्यागी की ऊर्ध्वगति है, गृही की निम्नगति है, गृही के लिये अनेक जन्म है, त्यागी के लिये अन्तिम जन्म है यह सोचना विचारना स्वकल्याण करना पर कल्याण करते जाना। हरिः ओं ब्रह्माऽस्मि जपते रहना। सभी सन्न्यास में सत् ब्रह्म में निज का न्यास दे देना मुख्य है॥

शैवागम—पाशुपतमत

श्री गुरुलिंगस्वामि न्यायाचार्य

जंगमवाडी, काशी

१. शैवागम-पाशुपत मत। १।

परब्रह्म शिवरूप में है, शिवजी के प्रतिपादक शास्त्र आगम है, वेदों के अर्थों का आगमन जिनमें हैं, वेदों के ज्ञान के लिये जिनकी प्रवृत्ति हुई है, वे आगम हैं, वेद स्वयं निःशेष ज्ञानमय है अतः निगम कहाता है, निगम आगम का ऐक्य है, परन्तु शिव परब्रह्म के लिये प्रधानतम होने से वे शैवागम कहे गये। शैवागम अट्ठाइस तमिल देश में प्रचलित थे, चालू युग में सर्वत्र प्रसिद्ध हैं। वे—'कामिक, योगज, चिन्त्य, कारण, अजित, दीप्त, सूक्ष्म, सहस्र, सुप्रभ, अंशुमत्, विजय, निश्वास, स्वायम्भुव, अनल, मार, रौरव, मकुट, विमल, चन्द्रज्ञान, बिम्ब, ललित, प्रोद्गीत, सिद्ध, सन्तान, सर्वोक्त, पारमेश्वर, किरण, वातूल' नाम से मुख्य हैं।

ये, शिव, जीव व माया को ले के प्रवृत्त हैं। शिव—परब्रह्म है। जीव पशु है। माया पाश बन्धन है। शिव की ज्ञक्ति भक्ति से बन्धन से छूट कर जीव मोक्ष में जाता है, जीव ही शिव हो जाता है। शिव पशुपति है।

इनका बिस्तार छत्तीस पदार्थों में पर्याप्त गीना है। एक परब्रह्म शिव छत्तीस से परे सैंतीसवे हैं।

१-शुद्ध परब्रह्म शिव, २-अपरब्रह्म शिव, ३-शक्ति, ४-सदाशिव, ५-ईश्वर, ६-शुद्ध विद्या माया, ७-कला, ८-विद्या, ९-राग, १०-काल, ११-नियति, १२-पुरुष जीव, १३-प्रकृति, १४-महत्तत्त्व, १५-अहंकार, १६—चित्त, १७-मन, १८-श्रोत्र, १९-त्वक्, २०-चक्षु, २१-रसना २२-घ्राण, २३-वाक्, २४-हाथ, २५-पैर, २६-पायु, २७-उपस्थ-लिंग-भग, २८-शब्द, २९-स्पर्श, ३०-रूप. ३१-रस, ३२-गन्ध, तन्मात्राएँ, ३३-आकाश, ३४-वायु, ३५-तेज ३६-जल, ३७-पृथिवी ॥

ये सब मिलकर सृष्टिस्वरूप हैं। एक एक व्यक्ति में ३७ तत्त्व हैं। इनके गुण कर्म धर्म सम्बन्ध परिणाम आदि असंख्य हैं।

सर्जनकाल में परब्रह्मसे,-कौन, कैसे, क्यों, कीदृश, किससे, किमात्मक, कहाँतक हुए ?, इन विषयों पर विद्वान् अधिक से अधिक सप्रमाण प्रविष्ट हुए हैं।

इनमें १ पाशुपत दर्शन, २ सिद्धान्तशैवदर्शन, ये दो द्वैतवादी हुए। तीसरा ३ वीरशैवदर्शन—भेदाऽभेदवादी हुआ। चौथा ४ शैव विशिष्टाद्वैतदर्शन शक्तिविशिष्टाद्वैतवादी हुआ। पांचवाँ ५ लकुलीश-पाशुपत-दर्शन-द्वैताऽद्वैतवादी हुआ।

छठवाँ ६ नन्दिकेश्वरदर्शन
सातवाँ ७ रसेश्वरदर्शन
आठवाँ ८ प्रत्यभिज्ञान-कौलदर्शन } ये तीन अद्वैतवादी हुए।

नववाँ ९ ब्रह्मेतरमिथ्यात्ववादी शांकरवेदान्त दर्शन केवलाद्वैतवादी हुआ। दशवाँ १० शाक्त-दर्शन—कालीवादी शक्त्यद्वैतवादी हुआ। वीरशैवदर्शन का अभिप्राय लिंगायत मत में प्रचलित हुआ है।

पाशुपत मत में—पति, पशु, और पाश, ये तीन होने से त्रैतवादी भी कहना अनुचित नहीं है। शिव और जीव भिन्न है, जीव शिव होता है तब अभेद है, क्योंकि शिव एक की सत्ता है, इस विचार से भेदाऽभेद कहना अनुचित नहीं है, जब शिवतादात्म्य मोक्ष माना जाय तब अभेद है, जब शिवसमानता मोक्ष माना जाय तब भेद है, अतः भेदाऽभेद भी कहा जा सकता है। पति, पशु और माया सृष्टिक्रम में भी हैं प्रलयक्रम में भी हैं।

पतिः—शिव पति है, ज्ञान क्रिया बाला है, नित्यमुक्त है, जीवों को लेके तत्त्वसहित मायाशक्ति शिव में अविभक्त समाविष्ट हो जाती है, वह परमशिव सिसृक्षासे तत्त्वों का प्राविर्भाव करता है। प्राणियों के कर्मानुसार भोग तथा मोक्ष के लिये वह सृष्टि, स्थिति, संहार, तिरोभाव, तथा अनुग्रह किया करता है। वह व्यापक भी है, नित्य है, अखिलतत्त्वकारण भी है, ज्ञानक्रिया स्वभानवाला भी है, केवल पूर्णानन्दस्वभाव परमशिव है, इसका सिसृक्षा के लिये पहला स्पन्द ही इच्छाशक्तितत्त्व है, अहमिति उल्लसित है, इस इच्छाशक्ति में अनन्त अवभास विशेष चित्र विचित्र जगत् रहता है। वह शिव की ज्ञानशक्ति में स्थित है, शिव का बहुस्वरूपत्वमपि ज्ञानशक्ति द्वारा है। शक्ति अविनाभाव सम्बन्ध से रहती है, विश्व शिवशक्तिसमुद्भूत है, शिव, सर्वज्ञता तृप्ति अनादिबोध स्वतन्त्रता अलुप्तशक्तिता अनन्तशक्तिता, ये छ भगों के आश्रय है। इनके अनुग्रह से मोक्ष सालोक्य सार्ष्टि सारूप्य सायुज्य सामीप्यादि भावनानुसार होता है। शिव शाक्त शरीर से दिव्यसाकार है।

ईशानमस्तकः तत्पुरुषवक्त्रः अघोरहृदयः वामदेवगुह्यः सद्योजातपादः ईश्वरः साकार इति ॥

पशुः—पशु आत्मा जीव अनेक हैं, अनाद्यविद्यामल पाश है, जीव सब शिव में हैं, वे अग्नि के विस्फुलिङ्गों की तरह शिवांश हैं चैतन्यमय हैं वे मलावृत होने से संसारी बनता है, गुरुप्रदत्तशिवदीक्षा द्वारा निर्मल होके शिवात्मक बनता है, मुक्त होता है।

पाशः—पाश से बद्ध जीवात्मा पशु है, पशु के निग्रह अनुग्रह में समर्थ शिव पशुपति है, पाश-मल-बन्धन जीवों के अवरोधक हैं, मल-कर्म-तथा माया ये तीन मल हैं, बन्धन करते हैं फांसे में रखते हैं, किसी को एक है, किसी को दो हैं, किसी को तीनों हैं, क्रमशः विज्ञानकल प्रलयकल सकल तीन भेद के बद्ध जीवों को अनुग्रह से पति दीक्षित करके श्रवण मनन निदिध्यासन का अवसर देते है, **विज्ञानकल**वाले को विद्येश्वर पद में पहूँचाते हैं, **प्रलयकल** जीवों को भुवनाधीश या गणाधीश मन्त्रेश्वर भी बनाते हैं, **सकल** जीवों को देवता आदि में रखते हैं, उत्तरोत्तर उत्तम गति में भी जाते हैं। एक शिवशक्ति सूक्ष्मतमा तिरोधान शक्ति नामक शक्ति तीन मलों की प्रेरक है, वह भी सूक्ष्म पाश में मानी है। यह सूक्ष्मपाश, जीवात्मा को अज्ञात निजस्वरूप करता है, रज्जु पाश से आणव मायीय कार्मज भी बनता है, आणव मल से इच्छाशक्ति संकोच, मायीय मल से ज्ञानशक्ति संकोच, कार्मज मल से क्रियाशक्ति संकोच होते हैं, इससे शिवतदात्मक जीवात्माएँ अपूर्णता अल्पज्ञता कुण्ठितकर्तृता मानने लगते हैं। गुरुप्रदत्त शिवदीक्षा द्वारा जीव नदीसमुद्रन्याय से शिव होता है। स्वरूपद्वैत होने पर भी शिवता में वर्तता है। यह पाशुपत दर्शन का सिद्धान्तसार कहा।

२. **सिद्धान्तशैव दर्शन का अभिप्राय**—

यह पाशुपत द्वैतवादी है, किन्तु सिद्धान्त में पहला तत्त्व जो १—शुद्ध परब्रह्मशिव कहा है वह नित्य शुद्धबुद्धमुक्त स्वभाव है, लिंग रूप और अवस्थाओं से पर है, छत्तीस तत्त्वों से पर वह परब्रह्मावस्था है, प्रलय होने पर माया के तत्त्व विलीन होने पर शक्ति भी अविभक्तरूप से विलीन हो जाती है, यह परमशिव की दशा है। सिसृक्षा में स्वयं निमित्त कारण बनकर शुद्ध माया या बिन्दु को उपादान बनाकर अपर शिव आदि तत्त्वों का प्राविर्भाव करते हैं, परम शिव के अनुग्रह से पति शिव अनादि मुक्त होता है और जीव मुक्त होते हैं।

क्रमशः पति, पशु और पाश को शम्भु पुरुष और माया, यद्वा शिव शक्ति और बिन्दु भी वर्णित हैं, शिव बन्ध मोक्ष से पर अवस्था में तत्त्वातीत हैं, ३६ तत्त्वों से परे हैं। यह अवस्था परमशिव की दशा है। इस परमशिव के पञ्च मन्त्र ही शरीर हैं, मन्त्र वाणी शब्द है, १—नाद, २—बिन्दु, ३—वर्ण, ४—पद, ५—वाक्य, ये पांच मन्त्र शरीर शिव है। अथवा ब्रह्म विमर्श बिन्दुनाद ध्वनिरूप में पंचविधता है। अथवा ब्रह्म परा पश्यन्ती मध्यमा बैखरी रूप में पंचविधता है। अथवा छन्दः शरीर है, १—उष्णिक्छन्द लोम, २—गायत्रीत्वक्, ३—त्रिष्टुप् मांस, ४—अनुष्टुप् स्नायु, ५—जगती अस्थि, पंक्ति मज्जा, बृहती प्राण है। अथवा १ ओं, २ ऋक्, ३ यजुः, ४ साम, ५ अथर्व, पांच शरीर हैं अथवा १ बीज, २ बिन्दु, ३ नाद, ४ शक्ति, ५ शान्तकला, ये पंचात्मकप्रणव शिवशरीर है। और भी १ ईशानशिरः, २ तत्पुरुषमुख, ३ अघोर हृदय, ४ वामदेव गुह्यांग, ५ सद्योजात चरण हैं। ये मन्त्र शिव तनु है, मन्त्रेश्वर शिव है, जीव साधना द्वारा मलों को क्षीण करके विद्येश्वर तक पहुँचता है। मन्त्र महेश्वर सदाशिव निर्गुण हैं। ब्रह्मा विष्णु रुद्र सगुण हैं। इस सिद्धान्त दर्शन में प्रकृति अपने ज्ञानगुणतत्त्व से अभिव्यक्त होती हुई अपना ज्ञान कराती है। यह प्रकृति मायाजन्य है। सिद्धान्त शैवदर्शन में पुरुष कर्ता भोक्ता द्रष्टा सभी कुछ है। पुरुष पशु तत्त्व में का है। शिव में दो शक्तियाँ हैं, १ बन्धकारिणी, २ मोचिका। शिव के अनुग्रह से शिव ही गुरुमूर्ति दीक्षा देके शिवसाम्य मोक्ष करता है। इसमें एक प्रक्रिया यह है कि—शिव कृपा करके जीवों को कर्मानुसार सुख-दुःखों के भोग कराते हैं, जीव कुछ भी प्रयास नहीं करता है। किन्तु भोक्ता ही बनता रहता है। प्रलय आने पर शिवजी उन्हें मुक्ति दे देते हैं। यद्वा जीव, स्वचर्या क्रिया योगसाधना आदि से योग्य होता है तब उसे शिव ज्ञान गुरु रूप में मिलते है, दीक्षा भी मिलती है, पञ्च मन्त्रादि द्वारा समाधिपूर्णता होने से आत्मस्वरूप का ज्ञानी जीव जीवनमुक्ति में वर्तता है, बाद में विदेहमुक्ति स्थिति आ जाती है। तदनन्तर **सिद्धान्तशैव** दर्शन में—मुक्ति मिलना कहा है, यह भी द्वैतवादिनी है। शिव व पुरुष की पृथक्ता बनी रहती है, पुरुष शिव नहीं होता है। शिव समान हो जाता है। भगवान् शिव के चरणों में पहुँचना ही मुक्ति है, इसमें शिवस्वरूप का अनुभव साक्षात्कार होता है, शिव के दिव्य सुख का आस्वादन होता है, सिद्धान्ती शिवदर्शन जीव को शिवभोग शिवाऽऽस्वादन कराता है।

३. **वीरशैव दर्शन का अभिप्राय**—

सिद्धान्तमहातन्त्र में—कामिकतन्त्र में शिवजी ने ही वीरशैवमत कहा है। वीरशैवदर्शनं महा-पाशुपतदर्शनं लिंगायतदर्शनं चेत्यनर्थान्तरं तात्पर्य में एकार्थता है। वीरमाहेश्वरतन्त्र, वीरशैवागम, वीरशैवागमप्राकार, वीरशैवागमोक्तचिन्हांकित गुरुलिंगजंगम भी प्रसिद्ध हैं।

शैव को सूक्ष्मतन्त्र में सातशैव कहे हैं, १ अनादिशैव, २ आदिशैव, ३ महाशैव, ४ अनुशैव, ५ अवान्तरशैव, ६ अन्त्यशैव, ७ वीरशैव, १ अनादिशिव परमशिव परब्रह्मशिव है। २ आदिशैवो दीक्षित

ऋषियों, ३ लोकपूज्य महान्त महाशैव, ४ क्षत्रियवैश्या अनुशैव, तथा ५ अवान्तरशैव। ६ अन्य सब अन्त्यशैव। ७ योगी ज्ञानी शैव वीरशैव हैं।

शिवागमानुसार महादेव के लिंग को त्रिकाल पूजे, भस्म रुद्राक्ष धारणकरे वे पाशुपतशैव कहाते हैं। लेकिन जो निगमागमानुसन्धान से शैवदीक्षालेके शिवलिंग को सर्वदा कर कण्ठ या हृदय में धारण करे तथा त्रिकाल पूजा करे वे महापाशुपतशैव कहाते हैं। महापाशुपतागम को वीरशैवागम कहते हैं, वीरशैवों के उपास्य सेव्य गुरुलिङ्गजंगमशैव हैं। लौकिक व पारमार्थिकता में विशिष्ट गुणयुक्त **वीर** कहाता है, शिव सम्बन्ध हो जाने से **शैव** कहाता है, वह वीरशैव है। वीरलिंगपूजक सर्वलोकक्षेमाभिलाषी वीरशैव कहाता है। वी—जीवशिवैक्यबोधिका विद्या, इस विद्या में रमने वाले वीरशैव कहाते हैं। रण में वीर वैराग्य से भी वीर स्वामिभक्त वीरशैव कहाता है। वीरशैव के तीन भेद कहे हैं—१ सामान्यवीरशैव, २ विशेषवीरशैव, ३ शिवोऽहमिति सर्वं शिवमयं इति ध्याता निराभारिशिवयोगी कथित है॥ 'लिंगायत-शैव—प्रथम **स्वगुरुदत्त इष्टलिंग में भक्ति** करता है व गुरुलिंग—जंगम की सेवा करता है। दूसरा एकोत्तर शतस्थलों का रहस्य गुरुमुख से जानकर विशेषधर्मानुष्ठान में रहता है। तीसरा शिवमयजगत् तथा निज को देखता है। तीसरा संसारसुख त्याग के शिव में चित्त के लय करता रहता है। दण्ड कौपीन काषाय जटा वल्कल धारता है। या तो मुण्डी रहता है मृगचर्मादि धारता है मिताशी नियताहार निराभारी कहाता है। यह शिवपूजा में सत्यात्मक पुष्प चढ़ाता है, क्षमा-माला देता है, किसी को पीडता नहीं है, परोपकार करता है, सभी में शिव की भावना करता है, रागद्वेषरहित होता है। यह कर में मोक्ष रखता है, अवधूत संन्यासी योगी पाशुपत शिव लिंगी वीर वीरशैव महामाहेश्वर यति नाम से भी कहाता है।

इस वीरशैव दर्शन को भेदाऽभेदवादी भी कहा गया है, शिव से जीव भिन्न भी है, मोक्ष में अभिन्न भी है। विद्याशक्तिविशिष्टाद्वैत भी वह है, विशेषाऽद्वैत, द्वैताद्वैत भी कहाता है, अपरशिव परमशिव में अद्वैत रूप से है अतः शिवाऽद्वैत भी कहाता है॥

भेदप्रतिपादकाः शिवाः, भेदाऽभेदप्रतिपादका रुद्राः, अभेदप्रतिपादका भैरवाः, इत्यपि शैवागमे विभागः। इसमें शाक्त, शैव, वैष्णव, पाशुपत, का पालिक भी भेद हैं। शाक्त में ६४ तन्त्र हैं। काश्मीर में १-ईश्वराद्वयम्, २-वीरशैवं शिवाद्वैतं शक्तिविशिष्टाद्वैतं, ३-शैव सिद्धान्तो द्वैतं, विशिष्टाद्वैतं च॥

४ शैवविशिष्टाद्वैत-दर्शन का अभिप्राय-शक्तिविशिष्टाद्वैत-दर्शन—

अपरशिवे मायाशक्तिः प्रलये लीना सृष्टौ स्थूलाऽऽवरणात्मिका शिवज्ञानावरणात्मिका शिवभानम् अभानमिव कारयति, परमशिवस्वरूप तो स्वतः प्रकाशस्वरूप ब्रह्म है, इस ब्रह्म में चेतनाऽचेतनात्मक विश्व का प्रादुर्भाव तथा लय होता है। निःशून्य लिंग में ओंकाररूप शक्ति का स्फुरण होता है, तब महालिंगपर्यन्त विकास होता है। सानन्द प्रपञ्चाकार परिणाम होता है, परब्रह्म अनादिस्वरूप स्वतः सिद्ध है, नित्य निरञ्जन है, आणवादि मलसम्बन्ध रहित है। इस ब्रह्म का लक्षण—**अनन्तशक्तिविशिष्टजगतका** निमित्त तथा उपादान कारण पशुओं के पाश का नियामक, तथा सकल निष्कल स्थूल व सूक्ष्म जो चित् तथा अचित् इनका प्रकाशरूप सत्य ज्ञानरूप तथा अनन्त कल्याणगुणाश्रय वह ब्रह्म है। वह ब्रह्म ही परब्रह्म समझना।

परब्रह्म महदादितत्त्वों का स्थल है, चराऽचर जगत् का अधिष्ठान है, वीर शैव सिद्धान्तानुसार-स्थलम्-स्थ स्थानं, ल लयः, यत्र सृष्टिस्थिति प्रलयाः श्रयन्ते, समस्त तत्त्व के उद्भव तिरोभाव वाला,

विश्व के प्रति निमित्त उपादान कारण है, वह स्थलपदवाच्य परात्पर परब्रह्म है। इसका नाम है सर्व-शून्यनिरालम्बलिंगम्, विश्वस्वरूप है वही विश्वातीत है। विश्वोत्पत्तिलय का केन्द्र है। तत्त्वों का आधार है, स्थल, ब्रह्म सच्चिदानन्द है, प्रकाशस्वरूप है, स्व में स्वविनोदार्थ निज को आविर्भावित व तिरोभावित करते हैं। यह शुद्ध सत्तास्वरूप है। सर्वतत्त्वाश्रय तत्त्व परिणत रूप है तो भी तत्त्वातीत है। आध्यात्मिकाऽनुभूतिगम्य है। लीलासृष्टि मुख्य है।

सृष्टिस्तु तल्लीलामात्रम्, परमात्मा निज विनोद के लिये नाना रूप में मोद प्राप्त करता है, मोद भी लीला मात्र है, शुद्धाऽशुद्ध सृष्टि परब्रह्म की लीला है। वीरशैव दर्शन में लिंगं शून्यं निरालम्बं सूक्ष्मतमं शुद्ध सत्त्वस्वरूप है। यह शुद्धोन्मेष से प्राक्तन अवस्था है, शुद्धोन्मेष महासंकल्प है, १-सर्वशून्य निरालम्बलिंगावस्था, २-निःशून्यलिंगावस्था, ३-शून्यलिंगावस्था, ये ब्रह्म की सूक्ष्मावस्थाएँ हैं, पहली महासत्ता, दूसरी ओंकारशक्ति शून्यस्मारिकाऽवस्था, तीसरी महाचित्तावस्था। निष्फलचित्तावस्थासे चिन्नाद चिद्बिन्दु चित्कलाएँ ऊपजती हैं। एषा घृतकाठिन्यवत् मूर्तिः सच्चिदानन्दलक्षणाब्रह्म। समष्टिमूर्तिः द्वितीयम्। तृतीये अकार उकार मकारों का प्रस्फोट होता है। समष्टिः महालिंग है, केन्द्र महाचित्त है॥ इस प्रकार वीरशैव सिद्धान्त वर्णित है॥

शिवः प्रकाशस्वरूपः है, शक्ति विमर्शरूपिणी है, स्वतन्त्रा है, इसकी शुद्धाऽशुद्धसृष्टि होती है, सृष्टि आभासरूप है, आभास द्वैत का है, वह अद्वैत में हुआ; सृष्टि परशिव से भिन्न नहीं है। परमशिव स्वानन्द के लिये परिणमन पाते हैं, वीरशैवदर्शनमें शैवविशिष्टाद्वैतमें ओंकारशक्ति है। प्रत्यभिज्ञान-सिद्धान्तिविशिष्टाद्वैत में विमर्शिणी शक्ति है। दोनों विलक्षण हैं। स्वातन्त्र्येण विमर्शिणी सदाशिव ईश्वर विद्या व तत्त्वरूपों में परिणत होती है, यह शक्ति विशिष्टाद्वैत है। ओंकार रूप में शब्दविशिष्टाद्वैत है।

शिवकी आत्मविषयक अहं स्फुरणा है, वह विमर्शिनी है। शक्ति विना शिव निःसार पाषाणनिभ है, शिव विना शक्ति अकिञ्चित्करी होती है। १-शिव स्वप्रकाश है। २-विमर्शिनी शक्ति अहंप्रकाशा, यह शिव का चैतन्य स्वातन्त्र्यं कर्तृत्व विज्ञातृत्व स्फुरत्ता सार हृदयस्पन्द आदि कहाती है। स्वाश्रय शिव में द्वैतत्व कराती है। अद्वैतता को ढाँपती है। शिवशक्ति दोनों होने से द्वैतत्व है, अद्वैत में द्वैतत्व होने से द्वैताऽद्वैतत्व है। शक्तिविशिष्ट शिव होने से शक्तिविशिष्टाद्वैतत्व भी है। परमशिव में अपरशिवका शिव विशिष्टाद्वैतत्व भी है।

३. ज्ञान क्रिया निमेष ही सदाशिवनामक तृतीय तत्त्व होता है, अहमांश आच्छादित होता है, इदमांश स्फुर ने लगता है। बाह्यसत्ता लगने से सत् सदा शिव नाम बनता है।

४. बाह्य निमेषावस्था से विषय स्फुट होने से विषयप्रधान विमर्श चलता है उनके ईश शिव ईश्वरावस्थ कहाते हैं।

५. अहमिदमंशों की शिव में सर्वमहं विमर्श विद्यातत्त्व पंचम कहाता है।

६. द्वैत ही स्फुट दिखता है जिससे, यहाँ मायात्मक परिणाम छठवाँ हुआ, सर्वानुस्यूतता का संकोच हो गया। शरीरेन्द्रिय सम्बन्धी अल्पज्ञ हो गया, नित्यतृप्त्यभाव नित्यत्वाऽभाव स्वातन्त्र्याऽभाव लग गये।

इस प्रकार १-परब्रह्मशिव, २-अपरशिव, ३-विमर्शिणी, सदाशिव, ४-ईश्वरबाह्यनिमेष, ५-सम विद्यातत्त्व, ६-मायातत्त्व, ७-कला ८-विद्या, राग, ९-काल, १०-नियति, ११-जीवात्मा होना, १२-१३-जडविषयरूपता, प्रकृतितत्त्वम्, १४-महत्तत्त्व, १५-अहंकार, १६-चित्त, १७-मन, २७ दश

विश्व के प्रति निमित्त उपादान कारण है, वह स्थलपदवाच्य परात्पर परब्रह्म है। इसका नाम है सर्व-शून्यनिरालम्बलिंगम्, विश्वस्वरूप है वही विश्वातीत है। विश्वोत्पत्तिलय का केन्द्र है। तत्त्वों का आधार है, स्थल, ब्रह्म सच्चिदानन्द है, प्रकाशस्वरूप है, स्व में स्वविनोदार्थ निज को आविर्भावित व तिरोभावित करते हैं। यह शुद्ध सत्तास्वरूप है। सर्वतत्त्वाश्रय तत्त्व परिणत रूप है तो भी तत्त्वातीत है। आध्यात्मिकाऽनुभूतिगम्य है। लीलासृष्टि मुख्य है।

सृष्टिस्तु तल्लीलामात्रम्, परमात्मा निज विनोद के लिये नाना रूप में मोद प्राप्त करता है, मोद भी लीला मात्र है, शुद्धाऽशुद्ध सृष्टि परब्रह्म की लीला है। वीरशैव दर्शन में लिंगं शून्यं निरालम्बं सूक्ष्मतमं शुद्ध सत्त्वस्वरूप है। यह शुद्धोन्मेष से प्राक्तन अवस्था है, शुद्धोन्मेष महासंकल्प है, १-सर्वशून्य निरालम्बलिंगावस्था, २-निःशून्यलिंगावस्था, ३-शून्यलिंगावस्था, ये ब्रह्म की सूक्ष्मावस्थाएँ हैं, पहली महासत्ता, दूसरी ओंकारशक्ति शून्यस्मारिकाऽवस्था, तीसरी महाचित्तावस्था। निष्फलचित्तावस्थासे चिन्नाद चिद्बिन्दु चित्कलाएँ ऊपजती हैं। एषा घृतकाठिन्यवत् मूर्तिः सच्चिदानन्दलक्षणाब्रह्म। समष्टिमूर्तिः द्वितीयम्। तृतीये अकार उकार मकारों का प्रस्फोट होता है। समष्टिः महालिंग है, केन्द्र महाचित्त है॥ इस प्रकार वीरशैव सिद्धान्त वर्णित है॥

शिवः प्रकाशस्वरूपः है, शक्ति विमर्शरूपिणी है, स्वतन्त्रा है, इसकी शुद्धाऽशुद्धसृष्टि होती है, सृष्टि आभासरूप है, आभास द्वैत का है, वह अद्वैत में हुआ; सृष्टि परशिव से भिन्न नहीं है। परमशिव स्वानन्द के लिये परिणमन पाते हैं, वीरशैवदर्शनमें शैवविशिष्टाद्वैतमें ओंकारशक्ति है। प्रत्यभिज्ञान-सिद्धान्तिविशिष्टाद्वैत में विमर्शिणी शक्ति है। दोनों विलक्षण हैं। स्वातन्त्र्येण विमर्शिणी सदाशिव ईश्वर विद्या व तत्त्वरूपों में परिणत होती है, यह शक्ति विशिष्टाद्वैत है। ओंकार रूप में शब्दविशिष्टाद्वैत है।

शिवकी आत्मविषयक अहं स्फुरणा है, वह विमर्शिनी है। शक्ति विना शिव निःसार पाषाणनिभ है, शिव विना शक्ति अकिञ्चित्करी होती है। १-शिव स्वप्रकाश है। २-विमर्शिनी शक्ति अहंप्रकाशा, यह शिव का चैतन्य स्वातन्त्र्यं कर्तृत्व विज्ञातृत्व स्फुरत्ता सार हृदयस्पन्द आदि कहाती है। स्वाश्रय शिव में द्वैतत्व कराती है। अद्वैतता को ढाँपती है। शिवशक्ति दोनों होने से द्वैतत्व है, अद्वैत में द्वैतत्व होने से द्वैताऽद्वैतत्व है। शक्तिविशिष्ट शिव होने से शक्तिविशिष्टाद्वैतत्व भी है। परमशिव में अपरशिवका शिव विशिष्टाद्वैतत्व भी है।

३. ज्ञान क्रिया निमेष ही सदाशिवनामक तृतीय तत्त्व होता है, अहमांश आच्छादित होता है, इदमांश स्फुर ने लगता है। बाह्यसत्ता लगने से सत् सदा शिव नाम बनता है।

४. बाह्य निमेषावस्था से विषय स्फुट होने से विषयप्रधान विमर्श चलता है उनके ईश शिव ईश्वरावस्थ कहाते हैं।

५. अहमिदमंशों की शिव में सर्वमहं विमर्श विद्यातत्त्व पंचम कहाता है।

६. द्वैत ही स्फुट दिखता है जिससे, यहाँ मायात्मक परिणाम छठवाँ हुआ, सर्वानुस्यूतता का संकोच हो गया। शरीरेन्द्रिय सम्बन्धी अल्पज्ञ हो गया, नित्यतृप्त्यभाव नित्यत्वाऽभाव स्वातन्त्र्याऽभाव लग गये।

इस प्रकार १-परब्रह्मशिव, २-अपरशिव, ३-विमर्शिणी, सदाशिव, ४-ईश्वरबाह्यनिमेष, ५-सम विद्यातत्त्व, ६-मायातत्त्व, ७-कला ८-विद्या, राग, ९-काल, १०-नियति, ११-जीवात्मा होना, १२-१३-जडविषयरूपता, प्रकृतितत्त्वम्, १४-महत्तत्त्व, १५-अहंकार, १६-चित्त, १७-मन, २७ दश

शिवगुणगाना, इत्यादि करते रहना, जिसमें लोकविघ्न न करें। गुरुद्वारा शिवस्वरूप हो जाना॥ लकुलीश-पाशुपतदर्शन द्वैताऽद्वैतवादी है शिव ही द्वैत हो के फिर अद्वैत हो जात हैं, लीलाभोग के लिये द्वैत होते हैं। दुःखों की परम्पराएँ हाजिर होने से सुख की असंख्यमूल्यता होती है, इस अभिप्राय से संसारी स्वयं बनकर असंसारी हो जाते हैं।

७. रसेश्वर शैवदर्शन का अभिप्राय—

प्रत्यक्ष शरीर में रसों का ओषधियों का जड़ीबुट्टीओं का प्रयोग किया करिए, जिससे कामानन्द असीम मिलेगा। संसार का पार देनेवाला पारद कहाता है, शिव शरीर से धातु पारद हुआ, वह शिव-स्वरूप है, ओषधिस्वरूप में उपयोग करने से जीवन्मुक्ति का सुख मिलता है। रस और रसायनों से शरीर की रक्षा करना, दिव्य शरीर बनाना, रस हरज है अभ्रक गौरीज है, उनके उपयोग से षाट्कोशिक तनु का दिव्यत्व दार्ढ्य होता है। मृत्युभय मिटता है। मृत्यु दारिद्र्य नाश होता है, महेशादि देव, काव्य काव्य आदि दैत्य, बालखिल्यादि मुनिजन, सोमेश्वरादि नृप, कपिल, कापालि, आदि आदि रसौषधि पान करके जीवन्मुक्त विचरते हैं, रस स्वयं व्याधि हरता है, मृत को जीवाता है, देह को देवताई बनाता है। रस तथा अभ्रक दोनों स्वेदन मर्दन मूर्छन स्थापन पातन निरोध नियम दीपन भोजन जरणा नाशन गर्भद्रुति बाह्यद्रुति क्षारण रागसारण क्रामण वेध आदि आदि फल ऊपजाते हैं। दृढयुवा मुक्त्यर्हः, मुक्तौ षोडशवर्षस्वरूपवत्त्वात्। विष्णुस्वामि प्रभृति ने मुक्ति में नवयुवशरीरवत्त्व मुक्ति कही हैं, अजर अमर कराने में समर्थ रस ही है। रससत्कार से सभी शिवलिंग तृप्त होते हैं। रस से दिव्य देह बनाना, योगाभ्यास से परम पद में चले जाना। यहाँ कहीं महा आनन्द में रहना परम पद है। ब्रह्मत्व प्राप्त कर सदा विचरण करता है। अद्वैतवादी है।

चार्वाकों की नास्तिक प्रथा है, उससे यह आस्तिक प्रथा प्रशंसनीय है। ग्राह्यत्व में अनास्था ही है, अनित्य होने से।

७. नन्दिकेश्वर शिवाद्वैतवाद का तात्पर्य—

सालंकायनस्य पुत्रः शिलादः, शिलादयस्य नन्दिकेशः, अयं शिवब्रह्मपरायणः शम्भुप्रसादेन दिव्य-वाहनतां प्राप्तः, नित्यमुक्तो वर्तते, तेन शिव एव परब्रह्म आराधितः, शिव एव स्वशक्त्या चिद्भागे विश्व-मुन्मीलयति, स्वेच्छया विश्व बनाता है। कामी कामः काम्यम्, शंभु संकल्प से इष्ट जगत् बनाता है, काश्मीर में कामकदर्शन स्वीकृत है। 'अइउण ऋलृक् १४ सूत्रों पर जगत् रचना कही है। षट्त्रिंशत् तत्त्व माने हैं। नन्दिकेश ने पञ्चप्राण तीन गुण माने हैं।

अइउण्—अः=परमेश्वर निर्गुण, इ-माया शक्ति से, उ-व्यापक सगुण, ण्-हुए थे। **ऋलृक्**—ऋ-परमेश्वरः, लृ-माया मनोवृत्ति, क्-दिखलाते भये। **एओंग्**—ए-प्रज्ञान स्वरूप प्रज्ञानात्मा, ओंग्-प्रणय स्वरूप है। **ऐऔच्**—ऐ-मध्याशक्तिसबलित सगुण, औच्-निर्गुण भी है। **हयवरलण्**—पंचभूत-सृष्टिः। **ञमङणनम्**—शब्दादि पञ्चगुण। **झभञ् घढधष्**—पञ्चकर्मेन्द्रिय। **जबगडदश्**—पञ्चज्ञानेन्द्रिय। **खफछ् ठथचटतव्**—पञ्चप्राण तीन अन्तःकरण। **कपय्**—प्रकृति पुरुष। **शषसर्**—तीन सत्त्वरजस्तमः। **हल्**—शंभूः-अविद्याहन्ता।

इस प्रकार इसमें चौदह सूत्रों के ३७ तत्त्वपदार्थ परायण शब्द ब्रह्माद्वैत शिवाद्वैतवाद नन्दिकेश्वर दर्शन का तात्पर्य है। सूत्रसमाम्नाय में परब्रह्म की उपासना से मोक्ष होगा। यह **क्रमदर्शन** व्याकरणदर्शन में मिलित है। पृथक्तया शैवदर्शन कराया है।

८. काली-कौला-गम-दर्शनम् —

काली, 'जन्माऽऽद्यस्य यतः' जिस काली से आद्य ब्रह्म का प्राकट्यादि हुआ, वह ब्रह्माणी पर-ब्रह्माणी माँ, ब्रह्म की माँ शिव की माँ सभी की माँ परतत्त्व है, आत्मा सभी अपर तत्त्व है, परतत्त्व काली माँ दो स्वरूप धारण करती है, भोग्य व भोक्तृ, **भोग्या** शक्ति विद्या माया अविद्या अनन्तस्वरूपा होती है, **भोक्ता** चेतना चैतन्यं प्रकाश साक्षि परब्रह्म ब्रह्म पति पशु पुरुष प्रकृति तत्त्वाधिष्ठाता आदि आदि चैतन्यस्वरूपा स्वयं होती है, स्वयं युगलस्वरूप होती है। जडचेतनात्मिका कालीस्वरूपोद्भवा सृष्टिः, काली की उपासना करके काली में प्रवेश करते हैं। प्रलय में भी काली में प्रवेश करते हैं। ब्रह्मलोक भी काली का प्रकाश है, वहाँ ब्रह्म कालीस्वरूप है, भगवान् कालीपुत्रः, नारायणो नाराजात कालीसुत है।

काली स्व में का भाव बाहर फेंकती है, बाहर के भावों को अन्दर में खींचती है। काली से शिव हुआ भैरव हुआ, भैरवी हुई, भैरवीयोगचक्र कामरूप पीठ में मच्छन्द नामक महात्मा द्वारा प्रसृत हुआ, त्र्यम्बकवंशीयो सोमानन्द सोमशैव हुआ, मच्छन्द कुलदर्शन करनेवाला हुआ। कौलदर्शन शिवागम में गीना गया।

कुल के अर्थ—स्थूल सूक्ष्म पर प्राण इन्द्रियादि समूह कार्यकारण।

कुल—बोधस्वातन्त्र्यम्।

कुल—परमेश्वर का भैरवभानु के किरणचक्र भासा।

कुल—जिसमें विश्व ऊपजता है लीन होता है ब्राह्मी।

कुल—प्रसृत जगत्।

कुल—पारमेशी शक्ति सामर्थ्य स्वतन्त्रता ओज बलवीर्य।

कुल—शिवा शक्ति।

कुल—पृथिव्यादि तत्त्व।

कुल—निर्गुण निराकार परम माताजी।

ऐसे कुलवाली कौलशक्ति कौलशैवमतप्रतिपादिता काली महामाता परमा माता है, माता सबसे बड़ी है, पिता उसके उदर में गर्भ में हृदय में समा जाता है। यह कौल दर्शन अद्वैत दर्शन है, इसमें दक्षिण-वाम-मार्ग गर्भित हो जाते हैं। पञ्चमकारी का शक्ति प्राधान्य मत है, दक्षिण मार्ग में शिव प्राधान्य मत है। दोनों मत कालीकौलदर्शन में समाविष्ट है। इसमें भोग से मोक्ष माना गया है। इसमें छत्तीस तत्त्व हैं, परं तत्त्वं महा माता है वह ३७वाँ है। माता स्वयं इच्छा ज्ञान क्रिया शक्तियों की ईक्षिका है।

९. अघोरमत, कापालिकमत-शाक्तमत-भैरवीमत—

घोर है पाप, निष्पाप शिव अघोर है। कपाल खोपड़ी रखनेवाले महाकाल शंकर है। शक्ति सभी शंकर की मूर्तियाँ हैं, अर्धनारीश्वर में रहती हैं। अघोर, कपाल और शक्ति को मुख्य लेके, भैरव शंकर का रूप है। ललाट का पुत्र है, भैरवी मुद्रा को मुख्य लेके, कई उपासक अंग-उपासक बन गए हैं।

कोई भैरव, कोई महाकाल, कोई शक्ति, कोई काली, कोई माया, कोई प्रकृति, कोई शिव, कोई ब्रह्म, कोई परब्रह्म को आगमों द्वारा शैव दर्शनों के आधार पर उपासते हैं, सभी का ध्येय मोक्ष है, शिव होना या शिव में रहना, शक्ति में समर्पित होना, या निर्गुण निराकार में मिलना, जिस किसी प्रकार से मोक्ष में जाने का आगमों में अनुसन्धान है। निर्मल भावना से तरेगा, भोगभावना से डूबेगा, शास्त्र गुरु मन्त्र एक तरफ ही रह जायगा। निर्मल भावनावाले के लिये ये सब उपयोगी हैं॥

अथर्ववेद और उसकी रहस्यमयी शक्ति

क्षीरस्वामी देवदत्त शास्त्री

सर्वशास्त्र निष्णान्त, अल्हाबाद

वैदेह जनक के बहुदक्षिणयज्ञ के अवसरपर कुरुपाञ्चालदेश के ब्रह्मविद्, वेदविद् ब्राह्मणों की सभा में विदग्ध शाकल्यने याज्ञवल्क्य से प्रश्न किया—

कतिदेवा याज्ञवल्क्य इति

महर्षि याज्ञवल्क्य ने क्रमशः ३००३, ३३, ६, २, १½ देवों का विवरण देते हुए अन्ततोगत्वा सर्वमूलक एक देवस्वरूप का विवरण ब्रह्म (ऋषि समाज) में प्रस्तुत किया—

कतम एकदेव इति । प्राण इति । स ब्रह्म तदित्याचक्षते ।—बृ० उ०

—वह एकदेव कौन है ? वह प्राण है, उसे ही ब्रह्म कहा जाता है। महर्षि याज्ञवल्क्य द्वारा एकदेव (प्राण) का जो सिद्धान्त स्थिर किया गया, उसी को आगे चलकर अनेक ऋषियों, महर्षियों ने विभिन्न स्थलों पर प्रतिपादित किया है। चारों वेदों, समस्त उपनिषदों, ब्राह्मणों, आरण्यकों, संहिताओं में प्राण की महिमा का स्तवन किया गया है।

शतपथ ब्राह्मण (४।४।१।१५) का कथन है कि प्राण ही सब देवों में ज्येष्ठ, श्रेष्ठ और वरिष्ठ है। प्राण के स्थित रहने पर अन्य सब देव इसी ब्रह्मपुरी में (शरीर में) निवास करते हैं। प्राण ही इस शरीररूपी नौका का प्रतिष्ठान है—

प्राणो वै सुशर्मा सुप्रतिष्ठानः

अथर्ववेद के प्राणसूक्त (११।५) में विविध प्रकार से प्राण की महिमा का यशोगान किया गया है। तथा अथर्ववेद (७।५३) में प्राण और अपान को देवताओं का वैद्य अश्विनीकुमार कहा गया है, और उनसे प्रार्थना की गई है कि—

हे अश्विनीकुमारो, मृत्यु से हमें दूर करो तुम देवों के भिषक हो।

हे प्राण और अपान, तुम इस शरीर को मत छोड़ो। तुम दोनों सयुज (संयुक्तसखा) बनकर यहीं बसो, जिससे यह मनुष्य शतायु हो।

प्राचीन ऋषिगण सोम्य, मधु तथा दुग्ध पान करके ब्रह्मवर्चस्व तथा अमृतत्त्व प्राप्त करते थे। वे प्राणविद्या की सतत उपासना करते थे। सनातन योग विद्या का दूसरानाम 'प्राणविद्या' है। प्राण के रहस्य का ज्ञान प्राप्त करना ही योग-सम्प्राप्ति है। प्राणायाम के द्वारा आरोग्यता का सम्पादन, दीर्घायुष्य प्राप्त करने की विधि को अथर्ववेद 'दैवीचिकित्सा' कहता है। प्राण और अपान इन दो अश्विकुमारों को भलीभाँति रोक रखने से सुस्वास्थ्य, दीर्घजीवन, नवयौवन प्राप्त किया जा सकता है। प्राणायाम करने से शरीरस्थ रस पुनः यविष्ठ बनते हैं। प्राणविद्या का रहस्यबोध प्राप्त करने के पश्चात् ऋषियों ने योग-विद्या का आविष्कार किया जो अमृतत्त्व प्रदान करती है।

अथर्ववेद में ऋग्वेद, यजुर्वेद के समान जो ऋचाएँ हैं उनके अतिरिक्त इस वेद में अनेक विध ऐसी क्रियाएँ हैं जो लाभ कारक भेषज हैं। ब्रह्मविद्या, आत्मविद्या और योग विद्या से संबंध रखने वाले अधिसंख्यक सूक्त और ऋचाएँ अथर्ववेद में हैं। अथर्ववेद यह नाम ही चित्तवृत्तियों के निरोध एवं स्थित प्रज्ञता का अर्थ रखता है। इन विषयों का विशद वर्णन अथर्ववेद में है। 'अथर्वा' शब्द का निर्वचन करने से स्पष्ट ज्ञात होता है कि—

थर्वतिश्चरतिकर्मा तत्प्रतिषेधः

अर्थात् चंचलता, चित्तवृत्तियों का निरोध एवं स्थित प्रज्ञता की अवस्था और साधनों का प्रतिपादक वेद अथर्ववेद है। इस वेद में आध्यात्मिक, आधिदैविक, आधिभौतिक सभी प्रकार की कर्मज-व्याधियों एवं भवव्याधियों के निवारण सम्बन्धी सूक्त एवं मन्त्र हैं। यही कारण है कि अथर्ववेद के लिए अथर्ववेद में 'भेषजा' का प्रयोग हुआ है—

ऋचः सामानि भेषजा मंजूषि—११।६।१४

गोपथ पूर्वार्द्ध में (३।४)—

योऽथर्वाणस्तद् भेषजं तदमृतम्
यदमृतं तद् ब्रह्म।

इस उल्लिखित अनुवाद से यह प्रमाणित होता है कि अथर्ववेद में सभी प्रकार के शारीरिक, मालिक आदि रोगों की निवृत्ति के उपायों का प्रातिपादन हुआ है। ताण्ड्यब्राह्मण (१२।९।१०) का कथन है कि अथर्ववेद के सूक्त आधि-व्याधि के निवारण से सम्बन्ध रखते हैं—

भेषजं वा आथर्वणानि

तथा वही (१६।१०।१०) यह भी कहता है कि अथर्वा ऋषि द्वारा दृष्ट अथर्ववेद के मन्त्र देवों के लिए भेषजप्रतिपादक हैं, जिनसे आरोग्य की प्राप्ति होती है—

भेषजं वै देवानामाथर्वणः भैषज्यायैवारिष्ट्यै।

भेषज प्रधान होने से अथर्ववेद आयुर्वेद का उद्गमस्थल माना जाता है—

इह खल्वायुर्वेदो नाम यदुपाङ्गमथर्ववेदस्य—(सुश्रुत सूत्रस्थान अ० १०)

अथर्ववेद में पदार्थविज्ञान, मनोविज्ञान, अक्षरविज्ञान, कर्मजव्याधिविज्ञान, आयुर्विज्ञान, चिकित्साविज्ञान, प्राकृतिकविज्ञान का विवेचन तथा आधियों, व्याधियों को दूर करने के लिए अनेक प्रयोग विशदरूप से निहित हैं।

आयुर्वेदविषयक नौसूक्त, विविध औषधि भैषज्य विषयक पच्चीस सूक्त, रोगादि निवारण विषयक बत्तीस सूक्त, विषनाशनविषयक—जिनमें विष, विषदूषण निवारण सम्बन्धी सभी प्रकार के प्रयोगों के सात सूक्त हैं। जितने भी प्रकार के कृमि, कीटाणु होते हैं और जो शरीर में प्रविष्ट होकर अनेक प्रकार की व्याधियाँ उत्पन्न करते हैं उनको दूर करने के विविध उपाय तीन सूक्तों में हैं। असुर-प्रभाव, कृत्यादूषण, पिशाच प्रभाव, दस्युपीडा, ईर्ष्या, अलक्ष्मी आदि नाना प्रकार के जो अरिष्ट होते हैं, उनसब को दूर करने के उपाय और प्रयोग बारह सूक्तों में बताए गए हैं।

अथर्ववेद में उल्लिखित मन्त्र विद्या का यदि वर्गिकरण किया जाए तो उसके पाँच प्रकार होते हैं—

१. संकल्प, आवेश

२. अभिर्श, आर्जन

३. आदेश

४. मणिबन्धन

५. कृत्या, अभिचारकर्म

१. दुरित, दुष्पापों, दुष्प्रवृत्तियों और दुःस्वप्नों को दूर करने के लिए 'संकल्प' अथवा 'आवेश' मन्त्रों का प्रयोग किया जाता है—

परोऽपेहि मनस्पाप किमशस्तानि शंससि।
परेहि न त्वा कामये वृक्षां वनानि संचरगृहेषु गोसु मे मनः॥—अथर्व० ६।४५।१

दुःस्वप्ननाशन सूक्त के तीन मन्त्रों में से यह पहला मन्त्र है। कुशा और अपामार्ग (रवि-पुष्प योग में उत्पादित) द्वारा जल से अभिसेचन करते हुए इस मन्त्र को पढ़ा जाता है।

कायिक, वाचिक, मानसिक पापजन्य व्याधियों को दूर करने के लिए रोगी के शिर पर केवल हाथ रखकर उपर्युक्त सूक्त के तीनों मन्त्रों को पढ़ते हुए रोगी को रोग मुक्त होने का संकल्प करने मात्र से रोगी आधि-व्याधि से मुक्त हो जाता है।

यदि कोई व्यक्ति निरन्तर श्रम करते रहने पर भी अपने कार्य-व्यापार में सफलता नहीं प्राप्त कर पाता है अथवा धूर्तों, ठगों, दुष्टों द्वारा उसका बना बनाया काम बिगाड़ दिया जाता है, तो सफलता प्राप्त करने के लिए अथर्ववेद (६।४५।१) के मन्त्र से संकल्प कर कार्य करने से निश्चय ही सफलता मिलती है।

विभिन्न प्रकार की आधियों-व्याधियों या रोगों को दूर करने के लिए संकल्प द्वारा अथवा शक्ति संपात् द्वारा सिर्फ एक ही मन्त्र अमोघ है—

अवेहि मनस्पतेऽपक्राम पुरश्चर।
परो निर्ऋत्या आचक्ष्व बहुधा जीवतोमनः॥—२०।९६।२४

इस मन्त्र से या तो रोगी पर शक्ति संपात् किया जाए या उसके शिर पर हाथ रखकर संकल्प किया जाए निश्चय ही रोगी रोग मुक्त हो जाता है।

जो व्यक्ति कायर, कुटिल, कामी और कमजोर हो उसे तेजस्वी, वर्चस्वी और बलवान बनाने के लिए अथर्ववेद के तीसरे काण्ड के २२वें सूक्त के छह मन्त्रों द्वारा संकल्प किया जाए।

२. अभिमर्श का तात्पर्य शरीर के अंगों को शिर से पाँव तक हथेलियों द्वारा स्पर्श करना है। अभिमर्शन से शारीरिक और मानसिकरोग दूर होते हैं। अभिमर्श विद्या के मूल मन्त्र ये हैं—

अयं मे हस्तो भगवानयं मे भगवत्तरः।
अयं मे विश्वभेषजोऽयं शिवाभिमर्शनः॥
हस्ताभ्यां दशशाखाभ्यां जिह्वा वाचा पुरोगवी।
अनामयित्नुभ्यां हस्ताभ्यां ताभ्यां त्वाभिमृशामसि॥—४।१३।६-७

दोनों हाथों की हथेलियों और दसों अंगुलियों से रोगी के सर्वांग शरीर को स्पर्श करते हुए यह मन्त्र जब पढ़ा जाता है तो रोगी के शरीर में रोमांच, कम्पन और सनसनाहट पैदा होती है। केवल एक सप्ताह में ही रोगी स्वस्थ हो जाता है।

३. मन और मस्तिष्क के विकार दूर करने के लिए 'आदेश' मन्त्रों का प्रयोग किया जाता है।

'आदेश' को संवशीकरण भी कहा जाता है। मन्त्रों की भावना के द्वारा विकार दूर करने की यह आथर्वण प्रक्रिया है—

यदि वो मनः परागतं यद् बद्ध मिह वेह वा।
तद् आवर्तयामसि मयि वो रमतां मनः॥

इस मन्त्र से आदेश किया जाए तो मानसिक विकार दूर होते हैं चंचल चित्त, अव्यवस्थित व्यक्ति एक काम को छोड़ कर दूसरा, तीसरा करते हैं और सफल नहीं हुआ करते हैं। अथवा जो व्यक्ति लापरवाह, काम के प्रति उदासीन, असमीक्ष्यकारी, दुर्विनीत, अर्द्धविक्षिप्त, सन की होते हैं—उन व्यक्तियों पर निम्नांकित आदेश मन्त्र का प्रयोग करने से तुरन्त लाभ होता है—

अहं गृभ्णामि मनसा मनांसि मम चित्तमनु चित्तेभिरेत।
मम वशेषु हृदयानि वः कृणोमि मम यातमनुवर्त्मनि एत॥

प्रयोक्ता रोगी को सम्बोधित करते हुए उक्त मन्त्र से आदेश देता रहे तो चोर, डाकू, उद्दंड, ठग, हत्यारे, अनाचारी, उन्मादी, चिन्तित आलसी, कामचोर, अनुशासनहीन, ईर्ष्यालु व्यक्ति प्रयोक्ता के अनुगत हो जाते हैं। अनुगत हो जाने के बाद प्रयोक्ता निम्नांकित मंत्र का प्रयोग उस पर करे—

अग्निष्टे निशमयतु यदि ते मन उद्युतम्।
कृणोमि विद्वान् भेषजं यथानुन्मदितोऽसति॥

इस मन्त्र की प्रयोगविधि इस प्रकार है—

आम की लकड़ी में अग्नि प्रज्वलित कर कपूर, चन्दन और तुलसी के बीज से उपर्युक्त मन्त्र पढ़ते हुए आहुति दे। जिस पर प्रयोग किया जाए उसे हवन करते समय सामने बैठा लिया जाए फिर हवन के धुएँ से उस व्यक्ति का अभिमर्शन वही उक्त मन्त्र पढ़ते हुए करना चाहिए।

आदेश विद्या के अनेकानेक मन्त्र अथर्ववेद में हैं—जीर्ण ज्वर, पीत ज्वर, मन्थर ज्वर, आन्त्रिक ज्वर, एकान्तरा, तिजारी, चौथिया, राजयक्ष्मा ज्वर, स्नायुदौर्बल्य, हृदयदौर्बल्य, पक्षाघात आदि रोगों को दूर करने के लिए अथर्ववेद (५।३०।८-९) मंत्रों का विधिवत् प्रयोग करना चाहिए। उन्नत जीवन, यशस्वी जीवन और पदोन्नति के लिए अथर्ववेद के ८।१।६ मंत्रादेश का प्रयोग करना चाहिए।

४. मणिबन्धन का प्रयोग रोग-दोष, पाप, शाप, बाधा, संकट को दूर करने के साथ युद्ध में विजय प्राप्त करने में किया जाता है। अथर्ववेद में अञ्जनमणि (४।९) शंखमणि (४।१०) अभीवर्तमणि (१।२९), प्रतिसरमणि (८।५), वरणमणि (१०।३), जङ्गिडमणि (२।४ तथा १९ और ३४-३५), पर्णमणि (३।५). शतवारमणि (१९।३६), स्राक्त्यमणि (२।११ और ८।५) और औदुम्बरमणि (१९।३१) उल्लिखित हैं।

मणि का तात्पर्य कवच या ताबीज है। वनस्पतियों की जड़, पुष्प, पत्ते आदि अभिमंत्रित करके बाँधे जाते हैं। उपर्युक्त बताई गई मणियाँ वानस्पतिक हैं। रत्न या मणि नहीं।

५. कृत्या दूषण को दूर करने के लिए तथा अभिचार कर्मों के प्रभाव को शमन करने के लिए अथर्ववेद (१०।१।१-३२) के ३२ मंत्रों द्वारा हवन, अभिसेचन किया जाता है। कृत्यः परिहरण के लिए अथर्ववेद के ५।१४ सूक्त के १३ मंत्रों का प्रयोग किया जाता है। कृत्या और अभिचारकर्म का परिगणक अरिष्ट में किया गया है।

इनके अतिरिक्त अथर्ववेद में राज्यशासन, विजयसाधन, राजराष्ट्रसाधन, संग्राम, शत्रुनाशन, सुखसम्पत्प्राप्ति, पशुसंरक्षण, उद्योग-व्यापार, अधिदैवत प्रकरण, गृहस्थ प्रकरण, ब्रह्मचर्यप्रकरण, वानप्रस्थ, संन्यास प्रकरण और अध्यात्म प्रकरण हैं।

श्रुतितात्पर्यनिर्णय-समीक्षणम्

पं० ब्रजकान्त झा

व्याकरण साहित्याचार्य न्यायोत्तमोत्तीर्ण, अल्हाबाद

यदि नामेयं श्रुतिर्न स्यात् तदा परात्पर परमेश्वर परमात्मपरमेष्ठिपरब्रह्मादिपदप्रतिपाद्यस्य मोहान्धकारनिकरनिवृत्ति परायणाऽनन्तज्ञानैश्वर्यविरतिमतः कर्मसापेक्षशर्माऽशर्मदायकजगदुत्पत्तिस्थितिप्रलयविधायकस्वाश्रितसंसृतिनिवारकसकलविघ्नविघातकस्वर्गाऽपवर्गकारकसकलाऽमंगलहारकचराऽचरव्यापकस्य सर्वकर्माणि कुर्वतोऽपि तत्राऽलिप्तस्य दिव्यवसनभूषणवनमालिनो दिव्यलोकनिवासिनो दिव्यवृन्दावनविहारिणो दिव्यविग्रहधारिणो दिव्यव्यवहारचक्रचूडामणेस्तस्य परनारायणस्य संकल्पादुत्पद्यमानमपि जगदिदम्परस्परसंकीर्णतामुपदधद् विनाशमियात्। सा च श्रुतिः सुखदुःखस्वरूपप्रियाऽप्रियकरेऽस्मिन् संसारसागरे सर्वेषां सर्वत्र सर्वदा सर्वथा व्यवहारकारणीभूतसर्वविषयकज्ञानाय सर्वस्मै व्यवहाराय चोत्पत्तिमभिव्यक्तिं वा नीतेषु प्रत्यक्षादि प्रमाणानां मूर्धन्यतामासादयत्सु शब्देषु दिनकरकरनिकरायमाणेषु सर्वतः प्रथमा सर्वेषु प्रधाना सर्वेषामाराध्या पूज्या प्रातःस्मरणीया चाऽस्तीति नाऽविदितं विद्याविनोदभाजां विदुषाम्। तदुक्तं वाक्यपदीयकृता भर्तृहरिणा 'न सोऽस्ति प्रत्ययो लोके यः शब्दानुगमादृते। अनुविद्धमिव ज्ञानं सर्वं शब्देन भासते'। अपरत्रोक्तम्—'वेदशब्देभ्य एवाऽऽदौ पृथक्संस्थाश्च निर्ममे'। इदमत्राऽकूतं यदादौ सृष्टेरुत्पत्त्यव्यवहितोत्तरक्षणे श्रुत्यैव सकला व्यवस्थाः—'अयं ब्राह्मणोऽयं क्षत्रियोऽयं वैश्योऽयं शूद्रः' 'अयं ब्रह्मचर्याश्रमोऽयं गृहस्थाश्रमोऽयं वानप्रस्थाश्रमोऽयं सन्न्यासाश्रम' इत्याद्याश्चाऽसंकीर्णतामादधानाः प्रादुरभूवन्, तथा चाह—पुरुषसूक्तम्—'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः। उरू तदस्य तद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽजायते'त्यादि। एवमेव प्रविभक्तानां ब्राह्मणादिवर्णानां कर्मविभागोऽपि कृतो यथा 'अध्ययनाऽध्यापनयजनयाजनदानतद्ग्रहणानि षट्कर्माणि ब्राह्मणानां विहितानि, क्षत्रियाणां च सहवेदाऽध्ययनेन राष्ट्ररक्षणादीनि, वैश्यानां पुनर्वेदाऽध्ययनसहितकृषिगोरक्षावाणिज्यादीनि, शूद्राणां च वेदाध्ययनरहितानि सेवादीनि। तदेवं स्वस्वकर्माणि कुर्वाणा लोका ऐहिकाऽऽमुष्मिकशर्मसिद्धिं लभेरन्। तथा चाऽऽह श्रुतिः 'यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्। ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः'। 'कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः'। प्रस्थानत्रयघटकश्रीमद्गीताऽपि तमेवाऽर्थमनुवदति—'स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः'। 'कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः'। एवमादिगुणगुणाऽलंकृता श्रुतिस्त्रिपथगेव कर्मादित्रिकमार्गगामिनी सकलेष्टफलसाधनभूता सकललोकहिताय कर्मकाण्डं भक्तिकाण्डं ज्ञानकाण्डमिति काण्डत्रयमुपदिशति। प्रतिदिनं स्वपाठकर्तृभ्योजनेभ्यः स्वर्गाऽपवर्गादिफलं दिशति, पुनः सा 'उत्तिष्ठत जाग्रत वरान्निबोधते'त्यादिवाक्यकदम्बेन प्रमादादिमहादोषनिद्रानिद्रिताञ्जनानजस्रं जागरयतीत्यलमत्रातिपल्लवितेन।

अथ लौकिकवैदिकसकलशब्दा 'सर्वेसर्वार्थबाधकाः' इति योगिदृष्ट्या, नानार्थकस्थले चास्मद्दृष्ट्या तात्पर्यं विना मूकाऽन्धपंगुवदखिलनिजकार्यसम्पादनायाऽलं नैव स्युः, तद् यथा 'सैन्धवमानये'त्युक्ते तात्पर्यं विना भोजनकालेऽपि सैन्धवपदप्रतिपाद्याऽश्वमानयेत्, अथ च संग्रामकाले लवणं समानयेत्, इत्थमेव कदाचित् कश्चित् कथयति—'नेपालादागतोऽयं नवकम्बलवानि'त्यादौ तात्पर्याऽनभिज्ञः कश्चिदेवमपि वदेत्—

श्रुतितात्पर्यनिर्णय-समीक्षणम्

पं० ब्रजकान्त झा

व्याकरण साहित्याचार्य न्यायोत्तमोत्तीर्ण, अल्हाबाद

यदि नामेयं श्रुतिर्न स्यात् तदा परात्पर परमेश्वर परमात्मपरमेष्ठिपरब्रह्मादिपदप्रतिपाद्यस्य मोहान्धकारनिकरनिवृत्ति परायणाऽनन्तज्ञानैश्वर्यविरतिमतः कर्मसापेक्षशर्माऽशर्मदायकजगदुत्पत्तिस्थितिप्रलयविधायकस्वाश्रितसंसृतिनिवारकसकलविघ्नविघातकस्वर्गाऽपवर्गकारकसकलाऽमंगलहारकचराऽचरव्यापकस्य सर्वकर्माणि कुर्वतोऽपि तत्राऽलिप्तस्य दिव्यवसनभूषणवनमालिनो दिव्यलोकनिवासिनो दिव्यवृन्दावनविहारिणो दिव्यविग्रहधारिणो दिव्यव्यवहारचक्रचूडामणेस्तस्य परनारायणस्य संकल्पादुत्पद्यमानमपि जगदिदम्परस्परसंकीर्णतामुपदधद् विनाशमियात्। सा च श्रुतिः सुखदुःखस्वरूपप्रियाऽप्रियकरेऽस्मिन् संसारसागरे सर्वेषां सर्वत्र सर्वदा सर्वथा व्यवहारकारणीभूतसर्वविषयकज्ञानाय सर्वस्मै व्यवहाराय चोत्पत्तिमभिव्यक्तिं वा नीतेषु प्रत्यक्षादि प्रमाणानां मूर्धन्यतामासादयत्सु शब्देषु दिनकरकरनिकरायमाणेषु सर्वतः प्रथमा सर्वेषु प्रधाना सर्वेषामाराध्या पूज्या प्रातःस्मरणीया चाऽस्तीति नाऽविदितं विद्याविनोदभाजां विदुषाम्। तदुक्तं वाक्यपदीयकृता भर्तृहरिणा 'न सोऽस्ति प्रत्ययो लोके यः शब्दानुगमादृते। अनुविद्धमिव ज्ञानं सर्वं शब्देन भासते'। अपरत्रोक्तम्—'वेदशब्देभ्य एवाऽऽदौ पृथक्संस्थाश्च निर्ममे'। इदमत्राऽकूतं यदादौ सृष्टेरुत्पत्त्यव्यवहितोत्तरक्षणे श्रुत्यैव सकला व्यवस्थाः—'अयं ब्राह्मणोऽयं क्षत्रियोऽयं वैश्योऽयं शूद्रः' 'अयं ब्रह्मचर्याश्रमोऽयं गृहस्थाश्रमोऽयं वानप्रस्थाश्रमोऽयं सन्न्यासाश्रम' इत्याद्याश्चाऽसंकीर्णतामादधानाः प्रादुरभूवन्, तथा चाह—पुरुषसूक्तम्—'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः। उरू तदस्य तद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽजायते'त्यादि। एवमेव प्रविभक्तानां ब्राह्मणादिवर्णानां कर्मविभागोऽपि कृतो यथा 'अध्ययनाऽध्यापनयजनयाजनदानतद्ग्रहणानि षट्कर्माणि ब्राह्मणानां विहितानि, क्षत्रियाणां च सहवेदाऽध्ययनेन राष्ट्ररक्षणादीनि, वैश्यानां पुनर्वेदाऽध्ययनसहितकृषिगोरक्षावाणिज्यादीनि, शूद्राणां च वेदाध्ययनरहितानि सेवादीनि। तदेवं स्वस्वकर्माणि कुर्वाणा लोका ऐहिकाऽऽमुष्मिकशर्मसिद्धिं लभेरन्। तथा चाऽऽह श्रुतिः 'यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्। ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः'। 'कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः'। प्रस्थानत्रयघटकश्रीमद्गीताऽपि तमेवाऽर्थमनुवदति—'स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः'। 'कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः'। एवमादिगुणगुणाऽलंकृता श्रुतिस्त्रिपथगेव कर्मादित्रिकमार्गगामिनी सकलेष्टफलसाधनभूता सकललोकहिताय कर्मकाण्डं भक्तिकाण्डं ज्ञानकाण्डमिति काण्डत्रयमुपदिशति। प्रतिदिनं स्वपाठकर्तृभ्योजनेभ्यः स्वर्गाऽपवर्गादिफलं दिशति, पुनः सा 'उत्तिष्ठत जाग्रत वरान्निबोधते'त्यादिवाक्यकदम्बेन प्रमादादिमहादोषनिद्रानिद्रिताञ्जनानजस्रं जागरयतीत्यलमत्रातिपल्लवितेन।

अथ लौकिकवैदिकसकलशब्दा 'सर्वेसर्वार्थबोधकाः' इति योगिदृष्ट्या, नानार्थकस्थले चास्मद्दृष्ट्या तात्पर्यं विना मूकाऽन्धपंगुवदखिलनिजकार्यसम्पादनायाऽलं नैव स्युः, तद् यथा 'सैन्धवमानये'त्युक्ते तात्पर्यं विना भोजनकालेऽपि सैन्धवपदप्रतिपाद्याऽश्वमानयेत्, अथ च संग्रामकाले लवणं समानयेत्, इत्थमेव कदाचित् कश्चित् कथयति—'नेपालादागतोऽयं नवकम्बलवानि'त्यादौ तात्पर्याऽनभिज्ञः कश्चिदेवमपि वदेत्—

भक्तिरसपानातुराणां स्वाभीष्टदायको ज्ञानातुराणां च निरवद्यज्ञानविज्ञानप्रापकश्चाऽध्येतृणां विविधव्युत्पत्त्याधायकोऽस्तीति मन्ये ।

ग्रन्थेऽस्मिन् त्रयो भागाः सन्ति, तत्र प्रथमभागे विशिष्टवैशद्याख्ये सकलजगत्प्रख्यातवेदविहिताऽसाधारणसाधनभक्तेस्तदंगभूतानां ज्ञानधर्मवैराग्याणां च पल्लवितभाषया प्रामाणिकसुरगिरा च समुपबृंहणं चकास्ति, तत्र च परमाया भक्तेर्मोक्षकारणत्वमिति द्वितीयपृष्ठपर्यन्तं प्रतिपादितमस्ति, तद्धि 'तमेतं वेदाऽनुवचनेन ब्राह्मणा विविदिषन्ति यज्ञेन दानेन तपसाऽनाशकेने'त्यारभ्य 'अमृतस्य नाऽऽशाऽस्ति वित्तेने'त्यन्तश्रुतिवाक्यानां तात्पर्यम्—आत्मनिष्ठस्थाश्रयप्रकारतासम्बन्धावच्छिन्नविशिष्टीयाऽनन्दात्मकमोक्षं प्रति स्वस्नेहीयविशेष्यताकप्रकारताकत्वसंसर्गावच्छिन्नसेवायाः कारणत्वमित्यत्राऽस्तीति निरूपितम् । तदनन्तरम्—अथ द्वितीयं साधनं ज्ञानं तच्च जडचेतनविवेकरूपमित्यादिना ज्ञानस्य तदन्तरितनिर्विकल्पकसविकल्पकप्रत्यक्षस्य विशदतया निरूपणम् । तदनन्तरं—कारणकार्यात्मकसाकारसगुणदिव्यविशिष्टपरब्रह्मणो निरूपणं द्वाविंशतमे पृष्ठे 'एतैः कारणवाक्यैः कारणं सत् सूक्ष्मावस्थापन्नं सूक्ष्मावस्थापन्नजडचेतनशरीरकमित्यादिना कृतम् । ततः परब्रह्म व्यापकत्वबोधकानि श्रुतिवाक्यानि नानात्वनिषेधबोधकानि श्रुतिवाक्यानि आत्मपरमात्मभेदाऽबबोधकानि वेदावाक्यानि मोक्षसाधनश्रुतिवाक्यानि गुरूपासनाबोधकवाक्यानि वैराग्यादिबोधकश्रुतिवाक्यानि परमावश्यकजीवात्ममायेश्वरब्रह्मपरब्रह्मणां साधुविचारो विशिष्टब्रह्माऽद्वैतपरको निरूपितोऽस्ति ।

ग्रन्थस्याऽस्य द्वितीयभागे परब्रह्मणो व्युत्पत्त्यर्थं विधायाऽस्य स्वरूपनिर्णयाय वेदपुराणादितः प्रमाणभूतानि वाक्यानि समुद्धृत्य तदर्थं विविच्य चतुर्दशभुवनविवरवर्तिवस्तुजातानां साकारत्वं प्रदर्श्य परब्रह्मणोऽपि साकारत्वं न्यायसिद्धमिति प्रतिपाद्य निराकरत्वं निरस्तम् , तत एव १६५ तमे पृष्ठे ग्रन्थकृता श्रीमच्छ्रीवल्लभाचार्येण प्ररूपितं यद्विचित्राऽनेकशक्त्याश्रयत्वं साकारत्वं, प्रकृतौ जीवात्मनि बन्धनाऽनुकूला परमेशे मोक्षानुकूलाऽन्तर्यामिणि नियामकत्वानुकूला सुशुद्धसत्त्वानुकूला साक्षित्वात्मिकेति स्वरूपाऽऽधाराऽऽकारनिबन्धना, प्राविर्भावतिरोभावाऽवस्थाश्रयं साकारं सूक्ष्मतन्मात्रेन्द्रियाऽहंकारविज्ञानात्मकपरमात्मतद्गुणसामर्थ्यैश्वर्यशक्तिचमत्कारादि सर्वमपि साकारमिति निराकारत्वं सर्वथाऽनैकान्तिकमिति ।

तृतीयभागे ग्रन्थकृता सर्वव्यवहारहेतूनां ज्ञानानां प्रामाण्यं स्वतः परतो वा गृह्यत इति एतद्विषयमाश्रित्य सर्वदार्शनिकविचारः प्रदर्श्यते यथा नैयायिकानां मते प्रमात्वमप्रमात्वं वा परतो गृह्यते, सांख्ययोगानां मते स्वतो गृह्यते बौद्धानां मते प्रमात्वं स्वतो गृह्यतेऽप्रमात्वं च परतो गृह्यते, आर्हतानां मतेऽप्रमात्वं तु परतः वेदान्तिनां मते प्रमात्वं स्वतोऽप्रमात्वं तु परतो गृह्यते, रामानुजादिवैष्णवानामप्येतदेव सम्मतम् विशिष्टब्रह्माऽद्वैतवादिनां तु प्रामाण्याऽप्रामाण्ये साक्षिभास्ये इति नूतनः पन्था आद्रियते । नकुलीशपाशुपतशैवादिनामप्येतत्स्मृतिसमानाभिहारित्वमिति फलतः समापतति, आगमिकानां स्फुटिताऽर्थिनां निगमाभिसन्पन्नानां प्रामाण्याऽप्रामाण्ये स्वतः परश्चेत्युभयथा गृह्येते न त्वेकान्तत इति, आर्थवादिकानामैतिह्यजुष्टानां चैते परतो ग्राह्याऽग्राह्ये न तु स्वतः, सत्त्वप्रकर्षितात्मनां तु सार्वज्ञ्योदये सर्वथा प्रमात्वं स्वत एव गृह्यते नेतरदितिसुतरां परमेशस्य स्वप्रामाण्यं शाश्वतिकमिति नाऽस्मिन् ग्राह्याऽग्राह्यत्वप्रस्थानमत्यंकुरोऽपि परमात्मज्ञानं प्रामाण्यवदिति बार्हस्पत्यानां मते प्रमात्वाऽप्रमात्वे स्वतः एव गृह्येते, वैतण्डिकानां तु नैकं नोभयं नाऽन्यतरं वेति संक्षेपतः संगृह्य, ततः १६७ पृष्ठादारभ्य २१० पृष्ठान्तं विस्तरतस्तत्तन्मतविषयकविमर्शः प्रदर्शितः ।

ततश्चदार्शनिकक्षेत्रे परमप्रसिद्धानां ख्यातीनां विचारः कृतः, तद्यथा—'रंगे—इदं रजतमिति ज्ञानं सर्वेषां ख्यातं विमतिस्थानम् । एतद्वैमत्यं तज्ज्ञानालम्बनकम्, अत्र ज्ञाने विषयः सन् वाऽसन् वा सदसन्

वाऽनिर्वाच्यो वाऽन्यथारूपो वाऽभिनवो वाऽन्यथारूपो वा विवर्तविषयो वा परिणतो वांऽशतो द्वेधा वा शक्तितादात्म्यो वा बाह्यात्मको वा कारणकूटो वा मृदुपचयो वाऽवस्तुरूपो वा निरूपाख्य इति वा विमर्शमात्रं वा शाश्वतो वा क्षणिको वा समनियतो वाऽसमनियतो वा समकालो वाऽसमकालो वेत्यादीन् सम्भवितविकल्पानुदाहृत्य तत्तद्दार्शनिकमते तथा तथा ख्यातिरिति विस्तरतो निरूपितम्, तत्र जैनमतसिद्धं प्रत्यक्षं प्रमाणं सेन्द्रियप्रत्यक्षं निरिन्द्रियप्रत्यक्षं च निरूपयता ग्रन्थकृता निरिन्द्रियप्रत्यक्षभेद-भिन्नानां मतिज्ञानश्रुतज्ञानाऽवधिज्ञानमनःपर्ययज्ञान केवलज्ञानानां पल्लवितविचारं विधायाऽनुमानोप-मानाऽगमप्रमाणानि विविच्य जैनमतसिद्धपुण्याऽपुण्याऽऽस्रवसंवरनिर्जरबन्धमोक्षाणां सुचारुतया विचारप्रसारं विधायसूक्ष्मेक्षिकया सकलदार्शनिकमतविचारप्रचारः प्रदर्शितोऽस्ति ।

अथ पाण्डित्योदधिवैष्णवविद्वत्सार्वभौमपण्डितपण्डितेन श्रीकृष्णवल्लभाचार्येण जातिवैशद्य-निरूपणे—अथ केयं जातिरिति प्रश्नवाक्यादारभ्याऽव्याप्त्यतिव्याप्त्यसंभवरूपदोषभयरहितजातिलक्षणं लक्षयता तदन्तःपातिब्राह्मणक्षत्रियवैश्यशूद्राणां स्वरूपाणि प्रदर्शितानि, तद्यथा—'जातकर्मादिभिर्यस्तु संस्कारैः संस्कृतः शुचिः । वेदाऽध्ययनसम्पन्नः षट्सु कर्मस्ववस्थितः ॥ शौचाचारस्थितः सम्यग्विघसाशी गुरुप्रियः । नित्यव्रती सत्यपरः स वै ब्राह्मण उच्यते ॥ सत्यं दानमथाऽद्रोह आनृशंस्यं दया घृणा । तपश्च दृश्यते यत्र स वै ब्राह्मण संस्मृतः ॥ क्षत्रजं सेवते कर्म वेदाध्ययनसंगतः । दानाऽदानरतिर्यस्तु स वै क्षत्रिय उच्यते ॥ वाणिज्या पशुरक्षा च कृष्यादानरतिः शुचिः । वेदाध्ययनसम्पन्नः स वैश्य—इति संज्ञितः ॥ सर्वभक्षरतिर्नित्यं सर्वकर्मकरोऽशुचिः । त्यक्तवेदस्त्वनाचारः स वै शूद्र—इति स्मृतः' ॥ इत्यादिभिर्बहुभिः प्रामाणिकवाक्यैः ब्राह्मणादयो निरूपिताः ।

अथ ३०० पृष्ठतः ३०५ तत्रपृष्ठान्तं भक्तिरसविचारः कृतः, तत्र समासभेदादर्थभेदोऽर्थभेदाद्-विचारभेदः, तथाहि—भक्तिरेव रसो भक्तिरसस्तस्यविचारः, भक्त्या साधनरूपया बोध्यः प्राप्य आस्वाद्यश्च यः परमात्मरूपो रसः स भक्तिरसस्तस्य विचारः, अथ च भक्तिश्च रसश्चेतिर्भक्तरसौ तयोर्विचारो भक्तिरसविचारस्तत्र भक्तिर्यद्यपि भगवन्नामोच्चारणरूपा भगवत्स्मरणरूपा भगवदर्चनरूपा भगवच्चरित्र श्रवणरूपा भगवता सह गुह्यभाषणरूपा भगवच्चरणकमलवन्दनरूपा भगवद्दास्यरूपा भगवद्विषयकप्रेमरूपे-त्यादिरस्ति, तास्तत्र प्रेमरूपा सेवारूपा च समुपवर्णिता मुख्या ।

रसः क इति प्रश्ने, स द्विविधो वाच्यरूपो वाचकरूपश्च, तत्र वाच्यरूपो रसः एकरसानन्दघन-चैतन्यमूर्तिः, वाचकरसो ब्रह्मरसः कामरसोऽलंकाररसो वेषरसो भोगरसः प्रेमरसो रसो वै सः सर्वरसः सर्वानन्दवर्ती रसो भगवान् श्रीहरिकृष्णः । यद्यपि काव्यविदाम्मते यथा दुग्धमेवाऽम्बलसंयोगाद्दधिसम्पद्यते तथा विभावाऽनुभावसंचारिभावसंयोगाद् रत्यादिस्थायिभावो रसः सम्पद्यते, स चाऽखण्डानन्दचिन्मयो वेद्यान्तरस्पर्शरहितो ब्रह्मानन्दसहोदरो लोकोत्तरचमत्कारप्राणः स्वाकारवदभेदेनभासमान आस्वाद्यते, स च पुनः शृंगारादिभेदेन नवविधोऽपि लोके विद्वद्गोष्ठीषु काव्यशास्त्रेषु च परमप्रसिद्धिमागतस्तथापि तथाविधस्य तस्य तदनुवर्तमानत्वं ज्ञेयमिति ।

ततः ३१४ पृष्ठपर्यन्तम् परमात्मनि शास्त्रवाक्यानि 'स्वामिनारायणोऽस्माकमास्ते'इत्यारभ्य 'तस्यांऽशो वासुदेवस्तु कर्मणोऽन्ते विवेश हे'त्यन्तानि समुल्लिखितानि । ततः ३१९ पृष्ठान्तं भगवतश्चिह्न-बोधकपुराणोपपुराणवाक्यानि 'हस्ते तुदक्षिणे चक्रं दृष्ट्वा तस्य पितामहः' इत्यादीनि 'ब्रह्मणो जुह्वतो वह्नि यावद्देशस्थितं सुरै'रित्यन्तानिसन्ति ।

अथ 'काणादं पाणिनीयं च सर्वशास्त्रोपकारकमि'तिवस्तुतः काणादं न्यायशास्त्रं सर्वेषु शास्त्रेषु सर्वासु भाषासु सर्वेषु वचनेषु चोपकृतिं चमत्कृतिं च जनयतीति सर्वलोकेषु प्रसिद्धमस्तीति किमत्राऽनल्पकल्पनेन, तच्च न्यायशास्त्रं नव्यप्राचीनभेदेन द्विधा भिन्नमिति न्यायपदमत्र वैशिषिकस्याऽप्युपलक्षकम्, तत्पुनः पदार्थविवेचने वादिनः प्रतिवादिनो वा विजये पार्थस्यगाण्डीवमिव रामस्य बाणमिवाऽमोघमस्ति, पुरा किल मन्थराविहितचञ्चलमतिकैकेयीप्रार्थितवरदानाऽधीनदशरथाऽऽज्ञप्तवनवासाय श्रीरामचन्द्रोऽनुजलक्ष्मणजनकतनयासमेतो गौतममुनेराश्रमं जगाम तत्र न्यायमधीयानः कश्चिदन्तेवासी श्रीरामचन्द्रमभिधत्ते—यद्भवान् पितुराज्ञया वनवासाय इयद्दूरमागतस्तन्निरर्थकम्, यतो वने वासो वनवासः, स च वनत्वावच्छेदेन वासो वनवासोऽथ च वनत्वसामानाधिकरण्येन वासो वनवासस्तद्यदि प्रथमपक्षस्तदाऽसंभवश्चतुर्दशभुवनविवरवर्तीनि यानि वनानि सन्ति तत्र सर्वत्र वासाऽसंभवात्, यद्युत्तरपक्षस्तर्हि—अयोध्यासमीपतरवर्तिवनवासेन कृतार्थः स्यादिति तत्रोत्तरमकुर्वन् शपनवचनमाह 'गौतमीविद्यः शृगालो भवे'ति, तदिदं शपनमुखकृपावाक्यम्—सृगः सृमतौ, प्रतिपक्षिप्रक्षेपसाधनरूपः, अतिमतिगतिमान्, तथा आलः—अलभूषणादौ, आलयति, ला आदाने, आलाति भूषणलाभः, अतिमतिर्गतिभूषणलाभो भवेति तात्पर्याऽर्थ आशीर्वादस्तं प्राह रामः, इत्येवं नैयायिका ब्रह्मविद्यावन्तोदार्शनिका भगवत्कृपया दिगन्तविजयिनो भवन्ति पण्डितमण्डलमूर्धन्या वर्तन्ते सर्वभूमिष्वद्यापीति ।

नव्यन्यायस्यमूलकर्ता मिथिलादेशमुकुटायमान—भङ्गरौनी—ग्रामवास्तव्यगंगेशोपाध्यायः पण्डितमण्डलमण्डनोऽन्तेवासिनिकरसंसेव्यमानपादारविन्दो विद्याभासुरभूसुरसमूहतोष्टूयमानगुणगणाऽलंकृतश्चक्रवर्तिचूडामणिचुम्बितचरणयुगलो निजविद्योपहसिताऽमरगुरुर्जगद्गुरुरासीत् । तस्यैव विदुषोऽन्तेवासिपरम्परायां रघुनाथमथुरानाथजगदीशगदाधरादयः समभूवन्, ते च नव्यन्यायशास्त्रं प्रसारयामासुः । तत्र च व्याप्तिविचारो हेतुविचारो हेत्वाभासविचारश्चाऽधिकप्रसिद्धिं निनाय । तत्र हेतुरिति लिङ्गम्, लीनं प्रत्यक्षाऽविषयमर्थं गमयत्यवबोधयति व्याप्तिवशादिति लिङ्गमनुमितौ साधनम्, हेतौ त्रयोधर्मा नित्यमपेक्षितास्ते च पक्षवृत्तित्वसपक्षसत्त्वविपक्षाऽवृत्तित्वरूपाः, अपेक्षितधर्माणां त्रिविधत्वात् हेतोस्त्रैविध्यम्, केवलान्वयिकेवलव्यतिरेक्यन्वयव्यतिरेकिभेदात्, हेत्वाभासे तु पुनः पक्षाऽसत्त्व सपक्षाऽवृत्तित्वविपक्षसत्त्वसत्प्रतिपक्षितत्वबाधितत्वरूपा पंचाऽन्यतमधर्मा अपेक्षितास्तत एव हेत्वाभासस्य पञ्चविधत्वमवसेयमिति व्यभिचारिविरुद्धाऽसिद्धसत्प्रतिपक्षितबाधिताः पञ्चहेत्वाऽभासाः असद्धेतवो व्यवह्रियन्ते ।

तत्त्वबुभुत्सुकथा वादः, विजिगीषुकथा जल्पः, स्वपक्षसाधनाहीनकथा वितण्डेति तिस्रः कथा वादजल्पवितण्डान्यायशास्त्रे परमप्रसिद्धिमापन्नास्तत्र जल्पकथायां वितण्डाकथायां च हेत्वाभासोऽधिकतयाऽपेक्ष्यते, यतश्च शास्त्रार्थकालेवादी प्रतिवादी वा निजप्रतिभावलेन परहेतुं हेत्वाभासतां नयति निजहेत्वाभासमपि सद्धेतुतां गमयतीत्युक्तम्—'विरुद्धं हेतुमुद्भाव्य वादिनं जयतीतरः' इत्यादि । एतादृशमपि नव्यन्यायशास्त्रं साम्प्रतं शक्तिवादव्युत्पत्तिवादख्यातिवादप्रामाण्यवादविधिवादव्याप्तिवादहेत्वाभासवादादिभिश्छात्राणामसाम्प्रतमित्येव नहि किन्तु तन्नामश्रवणान्मृगाधिराजस्य शब्दं श्रुत्वा मृगा इवाऽन्तेवासिनो दूरतः पलायन्ते, तस्मादत्र ग्रन्थे ग्रन्थकृता श्रीमता पण्डितश्रीकृष्णवल्लभाचार्येण 'कथाछलेन बालानां नीतिस्तदिह कथ्यते' इति वत्तेषामत्र तत्र प्रवेशाय निबद्धं नव्यन्यायस्य तत्त्वचिन्तामणेः सामान्यनिरुक्तिदीधितिगादाधर्याः क्रोडम्, क्रोडमिदं येन क्रोडेकृतं स्यात् तस्य कदापि पदार्थविवेचने बुद्धिरवकुण्ठिता न स्यादिति, ततो यावद्ग्रन्थसमाप्तिर्विशिष्टाद्वैतरामानन्दमतशैवतविशिष्टाद्वैतशक्तिविशिष्टाद्वैतविशिष्टब्रह्माऽद्वैतानां सारूप्यवैरूप्ययोर्निरूपणं कृतम् ।

नात्यनल्पीयसि श्रुतितात्पर्यनिर्णयनामकेऽस्मिन् ग्रन्थे ग्रन्थकृताऽगाधधीमता श्रीकृष्णवल्लभाचार्येण स्वामिधर्मेण वेदानुपवेदानितिहासान् पुराणान्युपपुराणानि न्यायवैशेषिकसांख्ययोगमीमांसाविविधवेदान्तशास्त्राणि जैनबौद्धचार्वाकशास्त्राणि शैवपाशुपतलिंगायतरसेश्वरशाक्तशास्त्राणि काव्यशास्त्राणि च समालोड्य भक्तिज्ञानकर्मवैराग्याणां विचारो भक्तेः प्राधान्यविमर्श आत्मपरमात्मविचारस्तत्तद्दार्शनिकमतविचारो मोक्षविचारोऽपूर्वतत्त्वविचारः ख्यातिविचारः प्रामाण्यविचारो जातिविचारो भक्तिरसविचारो भगवतश्चिह्नानि चाऽन्यवस्तून्यपि सुचारुतया सुभाषया सन्दृब्धानि, तदस्य ग्रन्थस्य कस्याञ्चिद्विश्वविद्यालयीयपरीक्षायाम्प्रवेशः स्यात् तदाविद्यार्थीनां सहचमत्कारेण महानुपकारो भवेत्, ग्रन्थो ग्रन्थकर्तुः परिश्रमश्च सफलतां भजेत ।

पुनः सोऽयं ग्रन्थः सफलशुभगुणगरिष्ठो व्युत्पत्तये वरिष्ठः सुकृतीनां विदुषां चेतस्सु चमत्कृतिकरो रुचिकरश्च पिपठिषूणामन्तेवासिनां च सद्बुद्धि प्रदस्त्वरितं सर्वदिग्देशगामी यथा स्यात्तथाऽऽशास्य भगवन्तं सकलसद्गुणनिलयं श्रीस्वामिनारायणपरमात्मानमभ्यर्थ्य च विरमामि नमामि भजामिचेति शम् ।

आचार्याणां समतायोगः

प्रजाराज्य विज्ञानालय

वेदान्ताचार्य, न्यायाचार्य, सोल्थोट-रे-मीनर, मोस्को, एशिया

सर्वेऽपि भवन्तु राज्याऽऽचार्याः, न तु देवाचार्याः, परलोकाचार्याश्च, यत् अत्र तत् सत्यम्, लोकौन्नत्यं सत्यम्, देवपरलोकाऽवलम्बनं तु मानसमात्रम्, न तु शारीरं बाह्यं वा, तथा सति अनौन्नत्य-प्रसंगात्, विषमत्वे नैजाऽर्थकत्वम्, एतत्स्वार्थात्मकम् तत् परस्याऽनिष्टकरम्, अवरोधात्, यत् अनवरोधं तत् समानग्राह्यं, समानेऽविषमाधीः सुखकर्त्री शान्तिपरा गृध्नारहिता, ममाऽधिकमिति तृष्णारहिता, सा श्रेयःकरी, तथाविधाः संस्काराः कर्तव्या विद्वद्भिः, सर्वैरपि ते कर्तव्याः, प्रसह्य तु राज्ये न कारणीयाः, दशोऽनन्नो न भवेत्, मानवोऽनुद्यमो न भवेत्, नार्योऽव्यापृता न स्युः, कुटुम्बं भारभूतमुपाधिकृत् मा स्यात्, अन्नपानाऽम्बरभवनार्थं चिन्तनं मा दह्यात्, मानवा निष्कर्माणो निरालम्बना उदासीना मा भवेयुः, यथासह्यकर्मारूढा यथावश्यकफलस्मृद्धाः सुखनिद्राः सुखजागरणाः सम्पद्येयुः राज्येतराऽर्थिनो मा स्युः, पृथिवी राजकीया, मानवा राजकीयाः, आयोव्यय उद्योगाः सर्वे राजकीयाः, राजा च जनतागतो न्यायो नीतिः समतावृत्तिरिति। दत्तवृत्तिकाः प्रजाः चौरा न स्युः, कार्यालसा न स्युः, संग्रहदोषिता न स्युः, क्लेशव्याकुला न स्युः, अनास्था अरक्षिण्यश्च न भवेयुः, व्यक्तिः स्वयं स्वस्यराजा, राजा च राज्यम्, राज्यं च जनता, जनता च व्यक्तयः, ऐक्ये न स्वाश्रयो दोषः, उत्पत्त्यविषयत्वात्, स्वाश्रयः परस्पराश्रयोऽपि च राज्यात्मको राज्याश्रयो गुणः, सुखसाधनत्वात् गुणत्वम्, कर्तव्यं धर्मः, राज्यादेशस्य कर्तव्यं धर्मः, राज्यस्य स्वाराज्यत्वात् स्वात्मकत्वात्। यद्यपि प्रजाराज्ये स्वयं राजा, तथापि यः प्रबलः स राजा, प्रबलस्य शासनम् निर्बलस्य न शासनम्, तर्हि निर्बलः पीड्यते बलिना, सत्यम्, बली तु राजनीतिः, राज्यनियमो बली, न व्यक्तिर्बली, राज्यनियमस्य स्वाराज्यत्वात्, नियमाः सर्वैः पाल्याः, यथापात्रं च नियमाऽऽरोहः पात्रता तु विभिन्ना, राज्यांऽगानि बहूनि, यदंगे यत्पात्रता उपयुक्ता भवति, तत्र तन्नियोजनम्, अयोग्ये नियोजनं न योग्ये योजनम्, यदि जाड्यधीः, जाड्यकार्यनियुक्तिः, काष्ठहारस्य काष्ठोपार्जने, पशुपालस्य पशुपालने, कृषीश्वरस्य कृषिकर्मणि, उद्यानपालस्योद्याने, गृहनिर्मातुर्गृहनिर्माणे अम्बरवयकस्य वस्त्रवयने नीतिज्ञस्य न्यायालये क्रूरस्य सीमरक्षायां, ओषधिज्ञस्य भिषक्त्वे, पण्डितस्य विद्यालये, खण्डितस्य खण्डितालये, प्रमदानां रासायन्यादिषु, विदुषीणामध्यापने, जडानां पात्रशुद्ध्यादौ, निर्युक्तिः योग्या नियुक्तिः, उद्यमवत्त्वे राज्यकृता नियुक्तिः, समानाऽपि सा योग्यतानुसारिणी, शास्यशासकताऽपि निर्देशादि-मात्रा, उपकरणं परिकरणं सर्वं राजकीयम्, तदपि चिन्ताशून्यम्, दासदास्यो राज्यदत्ताः, तत्रापि ममता-शून्यत्वं साम्यम्, दायादत्वमेव राज्यस्य, न तु प्रजायाः, प्रजाया दायादं राज्यं, साधनानि राज्यस्य, नाणकं राज्यस्य, कणा अपि राज्यस्य, भोजनादि राज्याऽनुमतमेव अथ व्यक्तीनामेवं समानता, तर्हि विषमता कुत्राऽप्यस्ति न वा ?, अस्ति शरीरविषमत्वे विषमता, नार्याः मुख्यं नारीमात्र कार्यं गर्भधारणं, पुरुषस्य कार्यं बीजप्रदानम्, तद् वैजात्ये न समानम्, किन्तु युगलस्य विषममेव, विषममपि समं कर्तुं यथाशक्ति यतितव्यम्, अयत्ने सयत्नेऽप्यसिद्धे तत् त्यक्तव्यम्। इत्येवं समता त्यागिनां चापि भवति, श्रीकृष्ण-वल्लभाचार्यो महाराजस्त्यागाश्रमी, अपरिग्रहः सर्वसमः विद्यापरिग्रहः सर्वसमः, आत्मवत् सर्वभूतेषु पश्यन् समतावान् तत्रसः, इत्येवं स्वजीवने श्रीकृष्णवल्लभाचार्यस्वामिमहोदयस्य प्रगल्भं पाण्डित्यं सर्वान्प्रति समं, अध्यापने समभावनां ज्ञापयतीति, बालनारीधेन्वनाथादिषु समतावानिति भारतीयो भाग्यवान् विद्वद्धौरेयोऽयं निष्पक्षपातेन सर्वशास्त्रव्याख्याता वर्तते समतमः। सोऽयं समताविद्यायां विजयवान् भवत्विति ममाऽभ्यभिनन्दनम्।

शब्दब्रह्म-पाणिनीय का मत

पं० रमानाथ वैष्णव

साहित्याचार्य, व्याकरणाचार्य, हुई-इण्डोनेशिया

दर्शनों ने ब्रह्म को नित्यविज्ञान, नित्य आनन्द, नित्यप्रकाश, नित्यद्रव्य, नित्यचैतन्य, नित्यशब्द, नित्यशक्ति, इत्यादि रूप में या स्वरूप में वर्णित किये हैं। बुद्धिभिन्नता से भिन्ननाम भिन्न कारणता भिन्न प्रक्रिया आदि लगाये हैं। परब्रह्म ब्रह्म दो नाम से ज्यादा परिचय है। पतञ्जलि भाष्यकार का प्रथम वाक्य है 'अथ शब्दानुशासनम्' शब्दब्रह्म आकाश है आकाश ही शब्दब्रह्म है, परा दिव्या ब्रह्ममूर्ति शब्दब्रह्म है व्यापक है कारण है उसकी पहली अवस्था पश्यन्ती देखती वाणी सूक्ष्मा ज्ञान है, दूसरी अवस्था मध्यमा प्राणरूप परिणाम सूक्ष्म प्राण है. तीसरी अवस्था वैखरी स्वर आवाज शब्द स्थूल शब्दरूप है, वैखरी में शब्द परिणाम परा का परिणाम अर्थ है, वे अर्थ जगत् रूप पदार्थ बन गये, परा से उत्पन्न होके वैखरी पदार्थ तक आये फिर प्रलय में परा में प्रविष्ट हो जायंगे' यह हुआ एक मत।

दूसरा मत—व्यापक सूक्ष्म निराकार शब्द ब्रह्म है, ब्रह्म की दूसरी अवस्था शक्ति अवस्था विमर्श विचार विज्ञान है, ब्रह्म की तीसरी अवस्था प्राणरूप बिन्दु सक्रिय है, यहाँ ओं का बीज उद्भूत हुआ, तब चौथी अवस्था में नाद सूक्ष्मझणकार चालू हुआ, तब पाँचवी अवस्था में नाद में से ध्वनियाँ नीकल पड़ीं, हल सब दो प्रकार की ध्वनियाँ मिल कर शब्दरूप में हुई, शब्द व्यापक है।

यहाँ विचार करिए, अनुभव करिए बोलकर तपास करिए, दो अक्षर भी एक साथ में बोला ही नहीं जाता है, एक अक्षर बोल के तब सटासट दूसरा अक्षर उमटता है लग पड़ता है तब तीसरा तब चौथा, राम शब्द में **र आ म अ** एक के बाद दूसरा उठेगा, एक क्षण में दो भी नहीं मिलता, तो शब्द कहाँ से बनेगा, एक क्षण में एक शब्द कभी नहीं बनता, न तो बनेगा, पहला अक्षर बोला गया उसमें लगा स्वर या व्यंजन दूसरा अक्षर उठाओगे तब क्षण में पहला नष्ट भी हो जाता है, दूसरा बोला नष्ट हुआ तब तीसरा अक्षर उठता है, कभी दो वर्ण दो अक्षर दो स्वर एक क्षण में एक स्वरूप में उच्चरित नहीं होते। अतः अनुच्चरित जो कोई एक अवस्था वह ब्रह्म है 'अ' ब्रह्म है, उससे आ दो मात्रा क्रमित हो गई, वैसे सभी क्रमित है द्विक्षणिक है एक क्षणिक नहीं है, द्विक्षणिक जगत् है एक क्षणिक या एक तत्त्व ही ब्रह्म है, एक शब्द का विकार जगत् है, जगत् में बाल्यस्थिति में अक्षर के बाद अक्षर मिलाने की स्कूल सीखना पड़ता है, सभी लोग अक्षर समाम्नाय को सीखते हैं, शब्द बने हैं बनाये हैं बनते हैं उसके क्रम का अभ्यास करते हैं, तभी भाषायें होती हैं पढी जाती हैं, क्रम आनुपूर्वी अव्यवहित पूर्व उत्तर वर्णस्थापना सभी सीखना ही पड़ता है, **राम, र** बोला लीन हुआ, श्रवण से **र** संस्कार समझ ज्ञानकोटडी में गया, वह वहाँ पहुँचा उतने में तो **आ म** बोला गया, उनके संस्कार ज्ञान भी पहुँचा, ज्ञान कोठरी से मिला क्रम लगकर ज्ञान मर गया क्रम संस्कार रह गया, उसका अभ्यास ही **राम राम राम** है, इस प्रकार शब्द जगत्मय है जगत् शब्दमय है, शब्द ज्ञानमय है ज्ञान ब्रह्म है।

इस रीति से पाणिनि या अन्य शब्द शास्त्रों ने एक-एक वर्ण पकड़कर एक दूसरे में मिलाये हैं, प्रकृति पद धातु प्रत्यय आदि नाम रखकर मिलाये हैं तब भाषा बनी है, भाषा व पदार्थ वाग् व अर्थ

शब्द व ब्रह्म एक है 'एकमेवाद्वितीय ब्रह्म है। अ कंठ से अवाज हुआ वह कण्ठ के ऊपर प्राण के साथ आया, प्राण मुख में कई जगह में ठकराया, वहाँ-वहाँ अ का विकार स्वरूप आगे-आगे बढ़कर इ उ ए ऐ ह ए क ख ग घ आदि अ के विकार हुए, सारी भाषाएँ अ में से हुई हैं। अ ब्रह्म है सभी सृष्टि का सूक्ष्म निराकार प्रथम कारण है, तब साकार कारण व कार्य होता है, एक ही अ अक्षर शब्द है, उनमें अभ्यास से देशदेशान्तर के ध्वनि एक ही क्षण में स्थूल होते हैं सुने जाते हैं सूक्ष्म में परिवर्तित होने का चालू भाषा में व्याख्यान में बखत ही नहीं मिलता, इसलिये समग्र सृष्टि शब्द ब्रह्ममयी है। शब्दानुशासन में वाक्यपदीयदर्शन में—'शब्दानुशिष्टि संस्कारवेदनीया' बताते हैं। वेद की सुरक्षा के लिये व्याकरण का महेनत है, वेद के शब्द ठीक बनाये गये हैं, उनके फेरफार नहीं करना, बाकी के लिये जिम्मा नहीं लेते। यही पढाई है, पढाइ में फेरफार है ही, नक्की बनाया, श्रुति ने बना के रख दिया—

"चत्वारि शृंगा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तास्ते अस्य।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महोदेवो मत्याँन् आविवेश"॥

(म० ना० १०।१)

शब्द में नाम, आख्यात, उपसर्ग, निपात, ये चार शिखर शृंग शींग माने गये हैं। इनके भूत भविष्य वर्तमान तीन काल के लिये लडादि बनाये हैं, तीन काल पैर हैं। शब्द को दो मस्तक हैं, शब्द नित्य है कार्य भी है। सात हाथ— तिङ के सहित सात सूबे विभक्तियाँ हैं, तीन स्थान में उरस कण्ठ शिर: में तीन स्थलों में बद्ध है। इसको वृषभ कहा है, इन उक्त स्वरूप में तैयार होके मुख से बाहर वर्षता है अत: वृषभ कहा है, ज्ञान के अनुसार बरसता है, ज्ञान ब्रह्म है ज्ञान कारण है, ब्रह्म में से ज्ञान द्वारा शब्द बरसता है। रोरवी-होता है रागरागिणी बनता है। महो महान् देव: व्यापक परमात्मा महादेव शब्द बन कर मर्त्यों में प्राणसहित प्राणिओं में प्रविष्ट होके रहता है। इस प्रकार जगत् ब्रह्म की एकता कही है।

पातञ्जल महाभाष्य में शब्द व ब्रह्म एक करके गाया है, शब्द में स्फोट है अर्थ को फोड़ता है वह स्फोट भी ब्रह्म है, शब्द फूटता है अर्थ में लगता है अर्थ भान कराता है, जगत्कारण स्फोटनामक निरवयव ब्रह्म शब्द रूप में होता है। वर्णों से अभिव्यंग्य स्फोट है, नादाभिव्यंग्य स्फोट वाचक वाक्यपदीय दर्शन में कहा है। वर्णों से माला बनती हैं स्फोट भी विस्तृत अवस्था में होता है, शब्द द्रव्य है स्फोट द्रव्य है ब्रह्म भी द्रव्य है, शब्दार्थ ब्रह्म ही है, शब्द ब्रह्म में निष्णात होगा वह परम ब्रह्म को पायेगा, भक्ति करने से नामरटन से प्रभु प्राप्ति होगी।

वेदान्तों के विचार में से पृथक् हुए न्यायदर्शन

पं० नेमचन्द्र सूरि
सप्ततीर्थ, भामो

गौतम मुनि ने प्रमाणों से प्रमेय की सिद्धि के मार्ग में विघ्नरूप या उपकरण रूप ज्ञान के विभिन्न भाग, संशय तर्क विपर्यय अप्रमा आदि को बतलाये, शब्दों से वाद-विवाद होने में उपयोगी प्रयोजन दृष्टान्त सिद्धान्त अवयव निर्णय वाद जल्प वितण्डा हेत्वाभास छल जाति निग्रहस्थान आदि विस्तार से वर्णित किये, प्रत्यक्ष अनुमान उपमान शब्द प्रमाणों को उनके उपयोगी सभी गुण धर्म सन्निकर्ष व्यापार ग्राहक व्यावर्तक साधक भी वर्णित किये, शक्ति लक्षणा आसत्ति योग्यता सन्निधि अर्थतात्पर्य आदि विवेचित किये, गुण कर्म धर्म जाति आदि पदार्थ विवेचित किये, इनके नाम लक्षण परीक्षाएँ लिख लिख के ठीक न्याय निष्कर्ष कर बताया। इनकी रचना का मुद्दा तो यह था कि वेद में आत्मा परमात्मा मोक्ष उनके स्वरूप व साधन यथार्थ जानना, ये वेदान्त की चीजें हैं, सामना करनेवाले बौद्ध जैन चार्वाक-परमात्मा कोई स्थायी एक है नहीं, आत्माएँ सभी ज्ञान या भौतिक विकार है, क्षण क्षण में बदलते रहते हैं अनित्य हैं मोक्ष की तो बात ही क्या, परलोक के लिये झूठे गप्पे हैं, धर्म कर्म स्वभाव यहीं है, मरा तो भूत भौतिक क्षणिक हो गया, गया सो गया, न आता है न जाता है। इत्यादि उटपटांग बातों को खण्डित करके पुनर्जन्म मोक्ष कर्मफलप्रद परमात्मा साक्षी, पदार्थ तत्त्वज्ञान आदि आदि का विवेचन खूब किया, इस पर बड़े-बड़े नैयायिक हुए न्यायशास्त्र सूक्ष्म कठिन विशाल बना दिया, वर्तमान युग में न्यायशास्त्र आन्बीक्षिकी विद्या सभी शास्त्रों में पैठ गयी हैं, बौद्धों ने क्षणिकता ज्ञानधारात्मकता आत्मस्वलक्षणता शून्यात्मकता पर जोर दिया, पकड़ी बात नहीं छोड़ते, उनके विचार उनकी प्रणाली पर तिब्बत सिक्यांग चीन इन्डोचाईना जापान में सीयाम बर्मा में प्रचलित हैं। हिन्दुस्थान ईश्वरोपासक अवतार प्रति श्रद्धा-वाला वेदान्ताश्रित है। जो ईश्वर से विरुद्ध है, वे अन्य देश में स्थिरतावाले हुए हैं। इन्होंने यह बात मुख्य रक्खी 'जो सत् दीखता है वह सब क्षणिक है जैसी बदलियाँ' वैसे ज्ञान स्मरण स्वप्न सब क्षणिक है वह ज्ञानात्मा भी क्षणिक है। दीप की ज्योत निकलती रहती है भिन्न ही हैं मगर एक सी दीखती है, उसी प्रकार सभी चीजें बदलती रहती हैं वे एक नहीं हैं भिन्न धाराएँ हैं सजातीय का ग्रहण होता है, घर की चीजें आदि सूक्ष्म रूप में बदलती ही रहती हैं, ज्ञानधारा संस्कारधारा पुण्यधारा जीवनधारा ये सभी चलती रहती हैं, कठिन संस्थान होने से पित्तल का घड़ा पत्थर आदि ए० से भासते हैं, किन्तु सभी का कठिन सा भी परिवर्तन होता है। सभी चीजें परमाणुओं के पुञ्जरूप हैं।

जब नैयायिकों ने परमाणु नित्य है ईश्वरेच्छा से द्वयगुणक त्र्यगुणक चतुरणुक रज कंकड़ पिण्ड बड़ी चीजें बनती हैं, अवयवों से अवयवी बनते हैं, लम्बे काल रहते हैं। आत्मा परमात्मा परमाणु नित्य हैं अतः सृष्टि प्रवाह नित्य ही चला आता है। आत्मज्ञान करके परमात्मोपासना से तीन दुःखों का नाश या सच्चिदानन्द स्वरूप में रहना अथवा प्रभु के चरणों में रहना मोक्ष कहा है, इस प्रकार का वेदान्त न्यायरूप में लड़ने में व ज्ञानरूप में मोक्ष में उपयोगी रचा गया, इनका न्यायशास्त्र मुख्य नाम प्रसिद्ध हुआ, आस्तिक दर्शन शास्त्र भया।

अब कणाद ऋषि ने निज बुद्धि से वस्तु की गिनती कर ग्रन्थ लिखा, जिसमें प्रत्यक्ष दीखती चीजों को क्रमशः समझने लगे, द्रव्य गुण कर्म सामान्य विशेष समवाय अभाव नाम के पदार्थ स्वीकृत करके विवेचित किये, पृथिवी जल तेज वायु आकाश काल दिग् आत्मा मन, द्रव्य माने गये, इनके गुण रूप रस स्पर्श संख्या परिमाण पृथक्त्व संयोग विभाग परत्व अपरत्व गुरुत्व द्रवत्व स्नेह बुद्धि सुख दुःख इच्छा द्वेष प्रयत्न धर्म अधर्म संस्कार गुण माने गये, द्रव्यों में रहने की व्यवस्था किया, क्रियायें जातियाँ

उपाधियाँ, भी सूत्रों में परीक्षित किये, अभाव तो अर्थात् सिद्ध मान लिया, परमाणुओं के सूक्ष्मपना होने से उनके भेद के लिये विशेष नामक तत्त्व स्वीकार किया, इस पर वैशेषिक न्याय कहलाया, इतने पदार्थों के तात्त्विक ज्ञान से अज्ञान मिटता है प्रमाज्ञान होता है साधन साध्यज्ञान होता है, आत्मा परमात्मा नित्य है मोक्ष में जाना है, इस पर वेदान्त ही यह लिखा गया वह निज नाम से वैशेषिक व न्याय में मिश्रित हो जाने से न्यायशास्त्र प्रसिद्ध हो आया। इस पर न्याय पदार्थ सीखने में बड़ी सुभीता हुई, इसके पर कई ग्रन्थ लिखे गये वे परीक्षाओं में न्यायवैशेषिक एक ही रूप में रक्खे गये। इन्होंने—

जैनों का मत का खण्डन किया, ज्ञान को दो तीन चार क्षण तक स्थायी मान लिया, द्रव्यों से द्रव्यगुणकर्म की उत्पत्ति मानी, जैनों ने जो 'घट है' 'नहीं है' 'शब्द वाच्य है' 'अवाच्य भी है' 'है नहीं है' तो फिर अभाव पदार्थ में आखीर चला जायगा, अतः सभी शून्य है अभाव है, बीज के दो दल बाष्प से छूटे होने पर अंकुर निकलता है, बीज से अंकुर नहीं हुआ, बीज ध्वंस से हुआ, अभाव से भाव पदार्थ होते हैं, सभी कारण उपमर्दित होने से कार्य निकलता है, अतः अभावकारणक सृष्टि, पुद्गल आत्मा में द्रव्य में गुण में सभी में जहाँ लगे हैं धर्म अधर्म पुद्गलों को भोगने के लिये मध्यम परिमाण मध्यम परिणामी शरीर मान लिया जीव का छोटा बड़ापना सच्छिद्रपना मान लिया, संवर निर्जर के बाद कर्म भाररहित होके अपने से उपर्ली सिद्ध शिला में पहोंचेगा विमल विज्ञान उदित होगा, वहाँ स्थिरता होगी, इत्यादि स्वीकृत किया, सभी जन्तुमय होने से अदृश्य दृश्य हिंसा नहीं होनी चाहिए, अहिंसा प्रधान रक्खी, जल का उपयोग कम रक्खा, ईश्वराऽऽराधना को मोक्ष में कारण नहीं माना, कर्मभार मिटाने के व्रत गच्छ करते रहना, वृत्तियाँ शुद्ध करना ऊँची भूमि के वायुमण्डल पवित्र होते हैं वहाँ वास करना, अन्न जल भिक्षा से लेना, निर्वाह करना, जीवों को भागवती दीक्षा देना उन्हें तारना स्वयं तर जाना, कर्म अपने करें अपने भोगें और फलप्रदाता ईश्वर को बीच में रखना यह बात झूठी है, ईश्वर ही नहीं है, मोक्ष में आलोकाकाश में जायेंगे सभी ईश्वर ही है। इसके कर्म पर प्रमाण पर ग्रन्थों के ग्रन्थ लिखे गये हैं।

न्यायवैशेषिक दर्शनों ने जैमिनि दर्शन ने वेदान्त ने उनका खण्डन किया, परमेश्वर साक्षी कर्मफलप्रदाता है मोक्ष में ब्रह्मलोक में आत्मा जाता है, व्यापक होने से सभी जगह है। सांख्य योग न्याय वैशेषिकों ने आत्मा व्यापक माना है मन छोटा परिच्छिन्न है जहाँ योग होगा वहाँ सुखदुःखादि होता रहेगा यह तर्कशान्ति किया है। विद्वान् ज्यादे होने से नये तर्क से लिखने पर साहित्य बढ़ जाता है, इस युग में सभी के साहित्य बढ़ गये हैं।

सांख्य ने बुद्धियोग से आत्मा में संसार माना है तत्त्व ज्ञान से पौरुषेय बोध होने से योग मिट जाता है तब आत्मा निर्गुण निराकार व्यापक रह जाता है माया हट जाती है यही मोक्ष मान लिया है, यह वेदान्त की प्रक्रिया थी मगर ब्रह्म को छोड़ देने से वेदान्त में गिनती मिट गई, सांख्य का स्वतन्त्र झण्डा ऊठा। योग में वही मिलती है किन्तु परमेश्वर का भक्ति ध्यान उपासना रक्खी है, अतः योगशास्त्र सांख्य से उत्तम गीना गया, मीमांसकों ने यज्ञ याग में देवताओं की उपासना वर्णित किया, सर्वत्र अन्तर्यामी विष्णुनारायण फलप्रद भी माना गया, अतः मीमांसा योग न्याय वैशेषिक वेदान्त ये सेश्वर माने गये, सांख्य को भी सेश्वर में ले लेने के लिये यत्न किये गये हैं। मगर चार्वाक जैन बौद्ध का शास्त्रवाद सेश्वर में नहीं है अतः इन्हें पृथक् कर दिये। भारत के कोई भी सम्प्रदाय सद्गुरु द्वारा स्थापित है गुरुरूप हरि और परमेश्वर हरि को भजते हैं, तब भी क्षणिकवादी अभाववादी भी स्थापकों को तो मानते भजते ही हैं। अतः शरणागति बिना उद्धार नहीं है यह सारांश है।

वेद-उपनिषद् भागवताधार-वैष्णव सम्प्रदाय

पं० श्री वल्लभचरण वेदान्ताचार्य

मथुरा, वृन्दावन

सभी वैष्णव साकार दिव्यमूर्ति परब्रह्म के उपासक हैं परब्रह्मद्वारा सृष्टि है, भगवान ने अनेक रूप धारण किये हैं अनादिश्रीकृष्णनारायण ने श्रीकृष्णस्वरूपधारण किया, श्रीकृष्णभगवान ने स्वमूर्ति में से राधिका आदिक शक्तियाँ को प्रकट किया, उनका यथेष्ट आनन्दविहार सेवा के लिये गोलोक धाम बसाया, असंख्य मुक्त मुक्तानीयाँ गोप गोपिका रूप में भगवान् की सेवा के लिये गोलोक में बसने लगे। भगवान् श्रीकृष्ण शुद्ध परमब्रह्म ही एक है अद्वैत हैं, उनकी मूर्ति में से विद्याशक्ति अविद्याशक्ति भी प्रकट हुयीं, आत्माएँ सभी प्रकट हुएँ, स्वलीला में सभी का भगवदिच्छा से पार्थक्य दीखने लगा, अतः शुद्ध अद्वैत ही सभी कुछ है, उनसे प्रेम करके शुद्ध अद्वैतस्वरूप समझ के उनके गोलोक में जाना तथा उनके साथ परमब्रह्मलोक में चलेजाना आत्यन्ति की मुक्ति है। जीव अपने साधनों से शरीर मन सम्पत्ति से गुण क्रिया लीला भावना से भगवान् को सेवे। साम्प्रदायिक ज्ञानभक्ति से भगवान् को पावें।

१. **श्रीवल्लभाचार्य** सम्प्रदाय रुद्रसम्प्रदाय कहाता है, श्रीमान् नारायण ने शंकर-रुद्र को उपदेश दिया, उसने अपान्तर्तमा को उपदेश दिया, उसने विष्णुस्वामी को उपदेश दिया, यह शुद्धाद्वैत उपदेश श्रीवल्लभाचार्यजीने भागवतकथाएँ द्वारा प्रसृतकिया।

२. **श्रीमाध्वाचार्य का** ब्रह्मसम्प्रदाय कहाता है, श्रीमान् नारायण ने ब्रह्माजी को उपदेश दिया, ब्रह्माजी ने नारद को उपदेश दिया, नारदजी ने व्यास को उपदेश दिया, व्यासजी ने मध्वाचार्य को द्वैत उपदेश दिया, आनन्दतीर्थ ने इस उपदेश का प्रचार किया।

३. **श्रीरामानुजाचार्य का** श्रीसम्प्रदाय है, श्रीमन्नारायण ने लक्ष्मीजी को उपदेश दिया, लक्ष्मीजी ने विश्वक्सेन को उपदेश दिया, विश्वक्सेन ने पराशर को उपदेश दिया, पराशर ने पूर्णकांची को उपदेश दिया, पूर्णकांची ने वरवरमुनि को उपदेश दिया, वरवरमुनि ने श्रीरामानुज को उपदेश दिया, श्रीरामानुज-मुनि ने विशिष्टाद्वैत उपदेश प्रसृत किया।

४. **श्रीनिम्बार्काचार्य का** द्वैताऽद्वैत सम्प्रदाय है, श्रीमान् नारायण ने सनकादिकों से उपदेश दिया, सनकादिकों ने नारदजी से उपदेश दिया, नारदजी ने गर्ग ऋषि को उपदेश दिया, गर्ग ऋषि ने निम्बादित्य को उपदेश दिया, निम्बार्काचार्य ने द्वैताऽद्वैत उपदेश का प्रचार किया।

श्रीवल्लभाचार्यजी का रुद्रसम्प्रदाय, श्रीमाध्वाचार्यजी का ब्रह्मसम्प्रदाय, श्रीरामानुजाचार्यजी का श्रीसम्प्रदाय, श्रीनिम्बार्काचार्यजी का सनकादिसम्प्रदाय कहाता है। श्रीरामानन्दाचार्यजी का श्रीसंप्रदाय कहाता है, रामानुजाचार्य व रामानन्दाचार्य में उपासना वैष्णवता ज्ञान भक्ति इष्टता आदि मीलते झूलते हैं।

५. **श्रीशंकराचार्यजी का** सम्प्रदाय शांकरसन्याससम्प्रदाय कहाता है, अद्वैतब्रह्म में से सगुणब्रह्म सगुण ईश्वर हिरण्यगर्भ हुए, उससे विराट् हुआ, विराट से शिव हुए, शिवजी ने पार्वतीजी को ज्ञान

दिव्या, पार्वतीजी में माण्डुक्यादि महर्षिओं को ज्ञान दिया उन महर्षिओं की ज्ञानपरम्परा में से श्रीशंकराचार्यजी ने निर्गुणनिराकार अमूर्त व्यापक नित्यविज्ञानब्रह्म का उपदेश शास्त्र द्वारा फैलाया।

६. श्रीस्वामिनारायण सम्प्रदाय उद्धवीय वैष्णव सम्प्रदाय लिखा गया है। परब्रह्म स्वयं स्वामिनारायण अवतारी परमात्मा ने अक्षरब्रह्म वहाँ के मुक्त आदि को साथ ले के पृथ्वी में प्रकट हुए, उन्होंने विशिष्टाद्वैत ज्ञान प्रकृतिपुरुष को दिया था, प्रकृतिपुरुषने प्रधानपुरुष को दिया था, प्रधानपुरुष ने महाविष्णु को दिया था, महाविष्णुते वैराजपुरुष को दिया था, वैराजपुरुष ने श्रीविष्णु को दिया था श्रीविष्णु ने श्रीरामानुजमुनि को दिया था श्रीरामानुजमुनि ने श्री रामानन्दस्वामी को दिया था श्रीरामानन्दस्वामी ने श्रीस्वामिनारायणवर्णी द्वारा ज्ञान को फैलाया इसमें जीव ईश्वर माया ब्रह्म परब्रह्म पाँच तत्त्वों को पहले ही प्रकट किया, पाँच तत्त्वों का ज्ञान चार विशिष्ट परब्रह्म है, तीन से विशिष्ट ब्रह्म है ब्रह्म से विशिष्ट परब्रह्म है, यह ब्रह्म का साक्षिपना व्यापकपना प्रकाशपना अपना किरणपना आदि-आदि उपदेश में कहे हैं, जिनका समन्वय विशिष्टब्रह्माद्वैत में होता है, अतः श्रीस्वामिनारायण-सम्प्रदाय श्रीस्वामिनारायण नामपर उद्धवाऽवतार श्रीरामानन्दस्वामि का सम्प्रदाय का परिवर्तन हो गया, श्रीस्वामिनारायण के प्रवर्तित ज्ञानभक्ति धर्म वैराग्य उपासना व्रत नियम दीक्षा आचार सेवा मन्दिर आचार्य पञ्चायतन देव यज्ञ याग कर्मकाण्ड वैष्णवचिह्न वेष हरिभक्त त्यागीवर्ग सांख्ययोगीनारी-त्यागीवर्ग ग्रन्थ उत्सव महोत्सव सभी प्रवृत्त है, इस सम्प्रदाय में सभी वैष्णवसम्प्रदायों का समन्वय हैं, तो भी सम्प्रदायों में शाखान्तर होना संभव है, सभी में मानव समुदायाऽधीन शाखाएँ नीकलती हैं, गुरु नानक सम्प्रदाय में अकाली शिवस निर्मले आदि शाखाएँ हुई हैं, अद्वैत सम्प्रदाय में शैव शाक्त शांकर आर्य आदि शाखाएँ हुई हैं। शाखाएँ खुलती हैं किसी अभिनिवेश के बल से, मानवों को नया प्रिय होता है, प्राचीन का संस्कार नहीं है, समझानेवाला नया मीलता है, कोई खामी निकाल के नया उठाव ले लेते हैं स्वतन्त्रता सब को प्रिय है, अभिमति भी प्रिय हैं, अहंममता काम कर जाती है, ये नये पन्थ के हेतु हैं। होते ही रहेंगे।

७. वल्लभ सम्प्रदाय शुद्धाद्वैत प्रसिद्ध है, वल्लभाचार्यजी अनलाऽवतार है, उन्होंने ब्रह्मसूत्र पर अणुभाष्यलिखा है, निर्गुणभक्ति व ब्रह्मज्ञान को स्वीकारा है, वे पुष्टि सम्प्रदाय कह के अनुग्रह में अर्थ घटाते हैं, अनुग्रह ही कृपामार्ग है, सालोक्य सार्ष्टि सामीप्य सारूप्य एकत्व आदि को नहीं इच्छता केवल सेवा को चाहता भक्त आत्यन्तिक भक्तिवाला है। स्थायी शृंगाररस प्रधान रखना, स्वामिनी बनना, प्रभु ही कामस्वरूप है, वह भक्त के भोक्ता है, प्रीतिसेवा से गूढ कामात्मा भगवान् को सेवना, भक्ति से वश करना। आत्मा अणु है ब्रह्माऽभिन्न है ब्रह्मांश है, शुद्ध संसारी मुक्त उसकी अवस्थाएँ हैं, जीवात्मा सच्चिदानन्दात्मकब्रह्म में से नीकलता है, तब आनन्दांशतिरोभूत होता है, जीव में विद्यासम्बन्ध मीटता है तब शुद्ध भी कहाता है, वैराग्यसांख्ययोगतपभक्तिद्वारा सन्तसमागम से मुक्ति में जायगा, ज्ञानगुणशरीर में व्याप्त होता रहता है। प्रवाही जीव विषयासक्त संस्कारहीन आसुरी कोटिका होता है, भक्तिनियमवाला परमेशपूजापरायण कर्मज्ञान की मर्यादावाला मर्यादी कहाता है। गोपांगनासमान 'श्रीकृष्णः शरणं मम' जाप परायण श्रीपुरुषोत्तमपरायण रहे वह पुष्टि कहाता है, श्रीकल्याणरायजी ने दश प्रकार जीवों के कहे हैं—१—केवलप्रवाह—भगवदिच्छा से जायमान जीव। २—केवल मर्यादा जीव—प्रजापरायण फलासक्त मोक्षेच्छुकजीव। ३—पुष्टिप्रवाहजीव—भगवत्स्वरूपाऽनभिज्ञभक्ति उपासनावाला श्रुतदेवसमान जीव। ४—पुष्टिमर्यादाभक्त—स्वरूपाऽनभिज्ञ भगवद्गुणज्ञ श्रवणमननवाला जीव अर्जुनसमान। ५—मर्यादा पुष्टिजीव—विधिमर्यादापालक भगवदनुग्रहवाला अम्बरीषसमान जीव। ६—पुष्टि-पुष्टि भक्तः—

भगवत्स्वरूपगुणगानपरक लीलारहस्यज्ञ विशेषानुग्रहवाला नारदप्रल्हादजी समान जीव। ७—शुद्ध पुष्टि जीव—प्रभुप्रेमसंभृत साधनहीन सर्वस्वार्पक गोपीसमान जीव। ८—प्रवाहस्थ पुष्टिमिश्रित जीव—भगवद्भजनानुकूलकर्मकर्ता। ९—प्रवाहस्थमर्यादामिश्रित जीव—केवल सत्कर्मकर्ता। १०—प्रवाहस्थ प्रवाहमिश्रित जीव—लौकिककार्यपरायण हिंसक आसुर जीव।

पुष्टि शरीर से आनन्द से अभिन्न है, आनन्दब्रह्म से नरनारी दोनों हुए, सृष्टि भी आनन्दरूप ही है, कारण कार्य अभिन्न है, अक्षरब्रह्म मर्यादा सृष्टि का उपादान कारण है, भगवल्लीलामय सृष्टि भगवद्रूप ही है। भक्तगण भी ऐश्वर्य वीर्य यश श्री ज्ञान वैराग्य आदि गुणवाले हैं, ध्वजवज्रधनुश्चक्र स्वस्तिक आदि चिह्नवाले भी हैं। भगवान् प्रकट हो के घर पर जाके भक्तों के मनोवाञ्छित पूरते हैं, भगवान ने गोपीयों का तामसभाव मिटा दिया, भगवान् भजनीय है, नियामक स्नेह है, भगवान् हृदय में विशेष आविर्भूत है, वासना नाश करते हैं, गुणगान करते रहना, असमर्पित वस्तु का त्याग पालना, अर्पण होने से शुद्धि होती है, ब्रह्मसम्बन्ध लेना, अपने स्वामी को अर्पित प्रसादी ग्राह्य है वह दान नहीं कहाता। भगवान् को न अर्पण करे तो अनन्याश्रय नहीं कहाता। आत्मनिवेदन से सभी दोष निवृत्त होते हैं। ज्ञान से भक्ति श्रेष्ठ है, ब्रह्मसम्बन्ध बिना वस्तु निर्दोष व पावन नहीं होती, भगवान् की कृपा से पात्रता होती है तब प्रेमावस्था आसक्ति भक्ति का व्यसन होना, भगवान् में क्रीडन करना ही निरोध है श्रीकृष्ण में निरोध समाधिवाले मुक्ति में पहुँचते हैं। भगवल्लीला भी निरोधावस्था है, भगवान में आसक्ति जीवधर्म है। सत्त्वनिवृत्ति होने से नित्यलाला में प्रवेशते हैं आश्रयप्राप्ति ही सर्वस्व है।

८. **माध्वाचार्य** श्रीचैतन्यमहाप्रभु से गौडीयसम्प्रदाय प्रचार हुआ, भगवन्नामगुणकीर्तन मुख्य करना, नेत्रों में अश्रुधारा बहे, गदगद कण्ठ हो जाय, सर्वांग पुलकित हो जाय। 'हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे' भजन कीर्तन करना। ब्रह्म में भेद नहीं है, उनकी शक्तियाँ नीकल आती हैं, संधिनी संवित् आह्लादिनी, सन्धिनी स्थिति शक्ति है संवित् ज्ञानशक्ति है आह्लादिनी आनन्दशक्ति हैं। दृढ़ प्रेम से भगवद्भक्ति करना, निष्काम कर्म से चित्तशुद्धि करना, आत्म-समर्पण बड़ा साधन है, भगवान् की अचिन्त्या शक्ति माया है उसे तैरना प्रेमभक्ति करना सानुराग भक्ति करना गोविन्दाकारचित्तवृत्ति करना, प्रेम से सेवना, श्रवण कीर्तन स्मरण चरणसेवन अर्चन वन्दन दास्य सख्य आत्मनिवेदन आदि विधान है, प्रेम तो बिना विधान भी अनहद होता है, विधि से सुराग प्रेम पराभक्ति होते हैं, शंकर ने पार्वतीजी से कहावज्र अंकुश कमल ध्वजादि चिह्नित भूमि में भरत लेटने लगा था। वल्लभाचार्य व चैतन्यगोस्वामी ने भक्तिज्ञान वैराग्य से प्रेमभक्त्या भगवत्प्राप्ति कही है। प्रेमभक्ति श्वपाक को भी पावन करती है। भगवान में शक्ति अभिन्न है अद्वैत है, शक्तिमत् पर तत्त्व है, सत्संग सन्तकृपा तो मुख्य चाहिए, सन्त सेवा, सन्त कृपा, सन्तधर्मश्रद्धा, सन्तकथाश्रवण, भगवत् रति, विवेकज्ञान आत्मभान, भक्तिदृढता, भगवत्तात्त्विकस्वरूपज्ञान, इनसे भगवद्गुणों का आविर्भाव, आनन्दा-विर्भाव होता है, पितृभक्ति मातृभक्ति पतिभक्ति स्वामिभक्ति ब्रह्म की प्रसन्नता के लिये सभी श्रेष्ठ हैं, सकामा भक्ति से निष्कामा भगवत्प्रसन्नता कामा सर्वोत्तम है। श्रीकृष्णानुकूलशीलन बड़ी भक्ति है, यही गौडीयवैष्णवों का परमपुरुषार्थ है। परमाणु से सृष्टि होती है, भगवान् कर्ता है, अतः भेदवाद है।

९. **श्रीनिम्बार्काचार्य** द्वैताद्वैत को मानते थे, भेदाऽभेद भिन्नाऽभिन्न पर ध्यान देते थे 'द्वा सुपर्णा' श्रुति में जीवब्रह्म का भेद कहा ही हैं, 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' में अभेद भी कहा है, भेदाऽभेद समबलक है, वाक्यो में अभेद भेदनिषेध व भेद तीनों मिलते हैं, सत्ता स्वतन्त्रा व परतन्त्रा दो ही हैं, स्वतन्त्र परब्रह्म है,

प्रकृति व जीव परतन्त्र हैं, स्वतन्त्र में अभेदवाक्य ठीक है, भेदनिषेधक तो प्रकृति व जीव की स्वतन्त्रसत्ता निषेधक हैं, भेदप्रतिपादक का परतन्त्रसत्ताबोधकत्व है, सभी स्वार्थ में प्रामाणिक हैं। कर्म ज्ञान भक्ति का समुच्चय कर बताया है। सुदर्शन चक्र को आज्ञा मिली वह निम्बार्काचार्य रूप में प्रकटित है, प्राचीनतमो वैष्णवसम्प्रदायो निम्बार्कसम्प्रदायः, इसके उपास्य प्राणप्रिय राधामाधव हैं, राधामोहन श्रीकृष्ण ही है, सर्वज्ञ सेक्षणसाकार जगत्कर्ता गोपीजन वल्लभ द्विभुज वंशीधर मुकुटधारी पीताम्बरधारी नटवरवेष श्यामसुन्दर राधावल्लभ नन्दनन्दन श्रीकृष्ण परब्रह्म है, ज्ञानावतार व्यास कहते है 'कृष्णस्तु भगवान् स्वयम' है अन्य श्रीरामनृसिंह विष्णुवामनादि सायुध हैं वे प्रेमरस के अपोषक हैं, श्रीकृष्ण प्रेमरस के पोषक हैं, वे अवतार तो अंश कला आदि होते हैं, भागवदुक्त श्रीकृष्ण एव ब्रह्म सूत्र भाष्यविषय हैं, उपनिषत् ब्रह्मसूत्र भागवत एकविषय कृष्णविषयक हैं, द्विभुज श्रीकृष्ण को गायत्री भर्गशब्द से, कहती है, भर्ग विष्णु श्रीकृष्ण राधाकृष्ण सहस्रशीर्षा क्षराऽक्षरातीत पुरुषोत्तम ही प्रतिपादित है, सर्वज्ञ सर्वशक्तिमत् अनन्तगुणवान् सौन्दर्य माधुर्य लावण्य सोकुमार्य सौगन्ध्य सौवर्ण्य सौस्वर्य गोपीजनवल्लभ श्रीवृन्दावनचन्द्र नित्यनवघनश्याम परमेश्वर सर्वात्मा जगदभिन्ननिमित्तोपादानकारणरूप प्रणववाच्य जगद्बीज ईशेश प्रेम सर्वात्म सर्वरस सर्वभूम सर्वाधिकप्रियतम परमात्मा श्रीकृष्ण का ध्यान करना श्रीनिम्बार्काचार्य ने कहा है, श्री आह्लादिनीशक्ति राधा है, परमविष्णुश्रीकृष्ण का वामभागात्मिका भगवदभिन्नैव कथिता राधा मोहन युगलोपासन करना, आह्लादिनी राधा है, ऐश्वर्यशक्ति लक्ष्मी श्री हैं, नित्यदाम्पत्य इनके हैं, श्रीराधामाधव युगलं तत्त्वं सर्वविद्या वेद्य हैं, युगलोपासना अज्ञाननाशिका है, न केवल कृष्ण न केवल राधा उपासनीय है, युगल ही उपासनीय है, युग्मरूप ही परब्रह्म है, जप ध्यान कीर्तन युगल का करना, राधेश्याम राधेश्याम श्याम श्याम राधे राधे, राधेकृष्ण राधेकृष्ण कृष्ण कृष्ण राधे राधे। यह जप मन्त्र कहा। 'जय राधे जय राधे राधे जय राधे जय श्रीराधे। जय कृष्ण जय कृष्ण कृष्ण जय कृष्ण जय श्रीकृष्ण'। यह कीर्तन मन्त्र है। राधा माधवौ समानप्रिय है, राधा में आत्मता राधेश में आत्मेशता करना प्राणात्मा प्राणेशात्मा वे ही हैं। स्वतन्त्र तत्त्व परमात्मा है, स्वामी से सेवक भिन्न ही है, ऋक् यजुः साम भारत पांचरात्र मूल रामायण शास्त्र है, वे तो स्वामिशक्ति को स्वामिस्वरूप ही कहते हैं, माधुर्यज्ञान राधा को है, मुग्धता आशंका से विस्मयरस ऊपजता है, लोलतामन्दता से स्मरावह वक्षावक्षी आनन्द होता है, तन्द्रा खेद से सेवा आनन्द बढ़ता है, मात्सर्य क्रोध हिंसा से सत्य की रक्षा होती है, भ्रमता लोलता से कौतुककारिता होती है, असत्य से कोपादिरस उद्भवता है, विश्वविभ्रम से जीवमात्र पर अनुग्रह होता है, विषमता पराधीनता आकांक्षाओं से भक्तानुग्रह होता है, मौग्ध्यादिगुण लीलावत् अभिन्न है, दृप्त जीव अर्चिमार्ग द्वारा जाता है, आर्त जीव कृपार्द्र होके गरुडादि द्वारा जाते हैं, रुचिभक्त तो भगवान् में प्रवेश पा जाते हैं, कृत्स्न शक्ति व्यंजी पुरुषोत्तम होते हैं, अकृत्स्नशक्तिव्यंजो विलास अंश कला कहाते हैं, जैसी उपासना उसमें पैठ जाते हैं, कार्यत्व कारणत्व तदुभयरूपत्व राधाजी तीनमय है, वैकुण्ठ नित्य है ब्रह्मात्मक है, उस पर द्वारवतीपुरी है, उस पर मधुपुरी है, उस पर गोकुल भगवद्धाम है, भगवान ने की हुई चित्शक्ति लीला सनातनी है, प्रकृति कालद्वारा लीला तो दैत्यवधादिरूपा कभी कभी की है, पूर्णाऽऽविर्भाव से भगवान्, अपूर्ण आविर्भाव से विलास अंश कहाते हैं। विधि से भक्ति साधन है, रुचि से भक्ति साध्य है, तमःशब्दित सूक्ष्मशक्तिकपुरुष से ब्रह्माण्ड होता है, उसमें सहस्रशीर्षावपुष से भगवान् आते है, भगवान् परम कारण है सर्वान्तर्यामी भी है, उससे ब्रह्मा रुद्र होते हैं, विष्णु तो सर्वकार्यार्थ देवों में प्रवेश करता है, उसका स्वेच्छा से अभिव्यक्ति है, विष्णु साक्षात् दिव्य सर्वेश्वर है, सर्ववेद वाच्य हरि है, निर्गुण का अर्थ है प्रकृति के गुणरहित। कृष्ण का अर्थ है विभुचैतन्य, जीवप्रकृति काल तो चिज्जड है।

ज्ञानस्वरूप ज्ञाता आत्मा कर्ता है, जीव भी ईश्वर भी। विभु परमात्मा स्वद्वारा जगत्कर्ता, स्वायत्तवृत्तिकप्रकृतिद्वारा जगदुपादान है, प्रकृति जीवात्मक प्रपञ्च से तदाश्रय ईश्वरभिन्न हैं, जगज्जन्मादि-हेतुत्वं स्वरूपलक्षण है, जगत्परमार्थ सत् है, जीव अणु है, अनेक है, ज्ञानस्वरूपजीव में ज्ञानगुण भी है ज्ञान गुण नित्य है, तथापि स्वरूप सामर्थ्य से अल्प है, ब्रह्मभिन्न हैं किन्तु ब्रह्मांश हैं, अंशी भगवान् है, इनके सामने माया लीन होती है, तब स्वरूप साक्षात्कार होता है, सत्संग से ज्ञानानन्दात्मक भगवत्सम्बन्ध द्योतन होता है, अविद्याध्वंस मोक्ष है, दुःखहानि सुखलाभ मोक्ष है। जडजीव से भगवान् का भेद है, अभेदवाक्य विश्व का तदायत्ततदात्मकता कहता है। शक्ति शक्तिमान् का अभेद कहता है, भगवदाविर्भावों में स्वगत भेद का निवारण भी करता है। भक्ति ज्ञान कर्म तीन मुक्तिप्रापक प्रस्थान हैं। समप्रधानता भी है, समुच्चय भी है। भक्ति भी कर्मरूप है, भेद तो है ही, किन्तु राघावत् अभेद भी हो जाना, तब फिर भेदाऽभेद कहना उचित है। जगत् प्रकृति द्वारा भिन्न होता हुआ भी ब्रह्मप्रकृति अभिन्न होने से अभिन्न भी है। इसलिये भेदाऽभेद ठीक है।

पुष्टिमार्गीय भक्ति

डॉ० गोवर्धननाथ शुक्ल

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, अलीगढ़ विश्वविद्यालय, अलीगढ़

पुष्टिमार्ग आचार्य वल्लभ से उद्भावित एक भक्ति मार्ग है, जिसका स्रोत भी अन्य भक्तिमार्गों की भाँति श्रीमद्भागवत ही है। आचार्य ने अपने भक्तिमार्ग के लिए प्रस्थान चतुष्टय माने हैं। उनमें श्रीमद्भागवत की गणना अन्तिम है और इसकी चर्चा समाधि भाषा के रूप में की गई है।[1] जिज्ञासु एवं भक्तिसाधनारत व्यक्ति के लिए श्रीमद्भागवत ही ऐसा ग्रन्थ है जो उसकी समस्त जिज्ञासाओं का समाधान करता हुआ भगवत् तत्त्व का साक्षात्कार करा देता है। आचार्य ने मानव जीवन का चरम लक्ष्य भगवद् भक्ति को ही माना है उन्होंने स्पष्ट कहा है—"पूर्णानन्दो हरिस्तस्माज्जीवैः सेव्यः सुखार्थिभिः।"[2] अर्थात् पूर्ण आनन्द स्वरूप श्रीहरिः ही हैं इसलिए सुख चाहने वाले जीव को सदैव उनकी (श्रीहरि की) ही सेवा करनी चाहिए। क्योंकि ज्ञानमार्ग भ्रान्तिमूलक है अतः बुद्धिमान् सदैव कृष्ण का ही भजन करे।[3] कृष्ण तत्व ही श्रीमद्भागवत का प्रतिपाद्य 'भगवान्' है। गीता उपनिषदादि वेदान्त ग्रन्थों में ब्रह्म एवं स्मृतियों में परमात्मा कहा गया है। ब्रह्म अथवा परमात्मा का चिन्तन ही सम्भव है। चिन्तन में जब रसात्मक अनुभूति का समावेश हो जाता है तब ब्रह्म अथवा परमात्मा का 'भगवान्' रूप भक्त अथवा साधक के समक्ष प्रत्यक्ष होता है। यह प्रत्यक्षानुभूति एक रसदशा है। जो मोक्ष दशा से अनन्त गुनी आनन्द विधायिनी है। आचार्य ने कहा है, "मोक्षाधिक रसस्तु।" अर्थात् मोक्ष से रस दशा ऊँची है। अतः ब्रह्मानन्द से ऊपर उठाकर भजनानन्द में लगाने के लिए ही श्रीमद्भागवत ग्रन्थ और उसमें प्रतिपादित दशविध लीलाओं का और उनमें भी निरोध लीला का मुख्य प्रयोजन है। निरोध लीला का साक्षात् अनुभव अथवा योग साधना एक ही मत है। पातंजल योगसूत्र में चित्तवृत्तियों के निरोध को ही 'योग' कहा है।[5] इस निरोध तत्त्व की सिद्धि भगवदनुग्रह अथवा भगवान् की कृपा के बल से ही होती है। कृपा अथवा अनुग्रह भगवान् का परमधर्म है। इसलिए इसकी श्रीमद्भागवत में 'पोषण' लीला नाम दिया गया है।[6] 'पोषण' अर्थात् अनुग्रह। 'पुष्टि' शब्द इसी पोषण का स्त्रीलिङ्ग 'क्तिन्' प्रत्यय लगकर बना है। 'पुष्टिमार्ग' अर्थात् अनुग्रह मार्ग। इस मार्ग में वैदिक लौकिक साधनों से भगवत्प्राप्ति नहीं मानी गई, अपितु भगवान् की कृपा से ही उनके अनुग्रह से ही उनकी प्राप्ति है। वे जिसका कृपापूर्वक वरण करें–

---

१. वेदाः श्रीकृष्णवाक्यानि व्याससूत्राणि चैव हि।
समाधिभाषाव्यासस्य प्रमाणं तच्चतुष्टयम्॥ तत्वदीप, नि० ७ शा० प्र०

२. श्रुतिगीता ७

३. ज्ञानमार्गो भ्रान्तिमूलस्ततः कृष्णं भजेत् बुधः॥ श्रुति ११

४. वेदान्ते च स्मृतौ ब्रह्म लिंगं भागवते तथा।
ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानिति शब्द्यते॥ शा० प्र० ६

५. योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः॥ पातं० योग० सू०

६. पोषणं तदनुग्रहः॥ श्रीमद्भागवत २।१०।४

चाहे वही उनको प्राप्त कर सकता है। श्रुति ने भी इस तथ्य का समर्थन किया है।[1] अतः आचार्य साधना बल स्वीकार नहीं करते साध्य अर्थात् भगवान् का कृपा बल ही साधक का बल है। भगवान् की कृपा विशुद्ध भगवान् की मर्जी पर ही है। तदर्थ भगवान् के प्रति निश्छल प्रेम चरम दैन्य और तीव्र इच्छा यही अपेक्षित है। जप, तप, तीर्थाटन, ज्ञान साधना अथवा इष्टापूर्ति आदि अन्यान्यसाधन सब व्यर्थ है। निष्केवल प्रेम ही भगवान् को पाने के लिए अपेक्षित है। साधक उस प्रेम को ही घनीभूत करे। एक मात्र भाव पुष्ट प्रेम की प्रधानता से आचार्य वल्लभ के मत में यह मार्ग लौकिक वैदिक आदि भगवत्प्राप्ति के मार्गों की अपेक्षा पुष्टि मार्ग उत्कृष्ट है। इसीलिए आचार्य अपने भक्ति मार्ग को 'स्वतन्त्र भक्ति मार्ग' मानते हैं। उत्कृष्ट प्रेम में विधि और निषेध नियामक नहीं होते। विधि और निषेधों का संगठन वेदों अथवा शास्त्रों का काम है। विधि निषेध मर्यादा के विधायक होते हैं। अतः मर्यादा मार्ग में ही इनकी अपेक्षा है। अतः आचार्य ने पुष्टि प्रवाह मर्यादा मेद ग्रन्थ में इनका अन्तर स्पष्ट कर दिया है। वे कहते हैं 'जब मैं भक्ति मार्ग कहता हूँ तो मेरा तात्पर्य पुष्टिमार्ग से ही होता है।[3] और वेदों के अनुसरण करने से मर्यादा का तात्पर्य होता है।[4] सबसे अधिक उत्कर्ष भक्ति अथवा पुष्टि का ही है यह निश्चित है।[5] वैदिक धर्म विधि निषेधात्मक है और कृतियों से ही साध्य है, भगवान् अविकृत एवं अव्यय हैं वे कृतियों अर्थात् धर्म कृतियों से साध्य नहीं, वे अप्रमेय हैं अतः ज्ञान से भी साध्य नहीं, वे निर्गुण हैं अतः भजन, दान, जपादि देह धर्म होने से वे भजनादि से भी साध्य नहीं। वे एक मात्र स्नेह से ही साध्य हैं। स्नेह भाव पुष्ट होता है। भगवान् भाव रूप हैं अतः भाव से ही साध्य हैं, सुबोधिनी में आचार्य श्री ने स्पष्ट लिखा है 'स्नेह एवमयि न तु कृति' मुझमें (भगवान् में) स्नेह ही अपेक्षित है। मुझे 'कृति' (बाह्य साधनों) की अपेक्षा नहीं। मुझसे सम्बन्धित समग्र जीव समूह स्वयं सहज ही प्रीतिमयता को प्राप्त होता है।[6] "इसीलिए पुष्टिमार्ग में विधि निषेधात्मक कर्म मार्ग की तथा पूर्व सिद्ध ज्ञान एवं भक्ति की लेश मात्र भी उपयोगिता नहीं।[7] तात्पर्य इतना ही कि वैदिक धर्म और पुष्टि धर्म पृथक् हैं।

इसी प्रकार पुष्टिमार्ग अन्य भक्ति मार्गों से भिन्न है। ज्ञान मार्ग भ्रान्तिमूलक है।[8] धर्म साधना विधि प्रधान है। आत्म ज्ञान से मानसिक शान्ति अवश्य प्राप्त होती है किन्तु परमानंद की नहीं।[9] धर्म साधना से प्राप्त होने वाले स्वर्गादि फल नाशवान् हैं। धर्म साधना जनित पुण्यों के क्षीण होने पर गीता के अनुसार "क्षीणेपुण्ये मृत्युलोकं विशन्ति" मृत्युलोक में पुनः आना पड़ता है।

इस प्रकार सभी प्रकार की धर्म साधनाएँ कृति-साध्य, क्लेशदायक, दुराराध्य एवं महज्जन संपादनीय हैं, वेदविद् विप्र से लेकर स्त्री शूद्रादि पर्यन्त सभी के लिए समान रूप से समाराधनीय,

---

१. यमेवैषवृणुते तेन लभ्यः ॥ कठो०
२. लौकिकवैदिक मार्गापेक्षया पुष्टिमार्ग उत्कृष्टः ॥ सुबो०
३. भक्तिमार्गस्य कथनात् पुष्टिरस्तीति निश्चयः ॥ पु० प्र० म० भेद श्लोक २
४. वेदस्यविद्यमानत्वान्मर्यादापि व्यवस्थिता ॥ वही श्लोक ३
५. सर्वत्रोत्कर्षकथनात्पुष्टिरस्तीति निश्चयः ॥ पु० प्र० म० भेद ४
६. मम सम्बन्धिन। सर्व एव जन्तवः स्वयमेव प्रीताः भवन्ति ॥ सुबोधिनी
७. पूर्वसिद्ध ज्ञान भक्त्योर्नात्रोपयोगः ॥ सुबो०
८. ज्ञानमार्गोभ्रान्तिमूलः ॥ सुबो०
९. आत्मज्ञानेऽपि शान्तता परं न परमानन्दः ॥ सुबो०

श्रेयस्कर एवं सुलभ यदि कोई भक्तिमार्ग ही है। क्योंकि इस भक्ति मार्ग में साधन और साध्य का भेद नहीं,[1]। यही इस मार्ग की विलक्षणता है। इस मार्ग में भगवत्प्रेम ही साधन है और वही साध्य है। प्रेम करने वाले को भगवान् सत्वर अंगीकार कर लेते हैं, फिर उसकी पात्रता पर विचार नहीं करते। यही अंगीकार ही उनकी अनुकम्पा है जिसका श्रीमद्भागवद्गीता में स्पष्ट संकेत है। "तेषा मेवानुकम्पार्थं" अर्थात् उनके ऊपर अनुकम्पा करने के लिए ही "इस अनुकम्पा अथवा अनुग्रह से ही साधक को लौकिक वैदिक सभी प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं।[2] भगवान् के इस अगीकार में भक्त की योग्यता का विचार नहीं। पुष्टि भक्ति की यह भी एक प्रचण्ड विलक्षता है। अन्यथा दूसरे भक्ति मार्गों में भक्त की पात्रता, साधना सभी के अनुरूप फल की प्राप्ति कही गई है। परन्तु पुष्टि पथ में ऐसी कोई बात नहीं। केवल प्रभु निष्ठा ही वहाँ सर्वस्व है। इस प्रभुनिष्ठा के समक्ष पुष्टिमार्ग में धर्मनिष्ठा को भी हेय कर दिया गया है।[3] क्योंकि समस्त धर्मों का तात्पर्य तो भगवान् ही हैं, पुष्टि भक्त उन सबका समावेश भगवान् में ही जानकर धर्म निष्ठा के पीछे दौड़ कर प्रभु प्रेम में मतवाला बनकर उनके प्रेम के लिए ही प्रयत्नशील होता है। इसी को लक्ष्य में रखकर अर्जुन जैसे भक्त को भगवान् ने श्रीमद्भगवद्गीता में सीख दी थी—"सर्व धर्मान् परित्यज्यमामेकं शरणं व्रज।"

अर्थात्—"हे अर्जुन! तू सब धर्मों का परित्याग कर केवल मुझ एक ही की शरण में जा।"

धर्मनिष्ठा के परित्याग की स्थिति में भक्त में अपने प्रभु के सुख की सापेक्षता जग जाती है। और लोक वेद की सापेक्षता का शमन स्वयमेव हो जाता है।[4] भक्त की कोई इच्छा नहीं रह जाती। भगवान् ही अपनी इच्छा से उसका वरण कर लेते हैं। उस भगवत्कृत भक्त वरण में अणुमात्र भी कोई हेतु नहीं होता। केवल भगवदिच्छा ही प्रधान होती है।[5] इस प्रकार पुष्टि भक्ति में दैन्य और निस्साधनता ही मुख्य है। भक्त में दैन्य और निस्साधनता ही मुख्य है। भक्त में दैन्य का आविर्भाव उसके हृदय में भगवान् का ही आविर्भाव समझा जाता है। इस प्रकार के भगवद् आविर्भाव से भक्त की अशेष लौकिक इच्छाओं का विसर्जन स्वयमेव हो जाता है उसके लिए केवल एक ही कर्तव्य रह जाता है—भाव पोषण। भाव पोषण ही उसके भजन का एक मात्र लक्ष्य होता है। इसके विनिमय में वह भगवान् से रंचमात्र भी किसी प्रकार की वासना या इच्छा नहीं रखता।[6] पुष्टि भक्ति में भगवान् से वणिक् वृत्ति रखना ही सबसे बड़ी भूल है। भक्त के लिए सर्वाधिक हेय यही वस्तु है। जबकि अन्य भक्ति मार्गों में भक्ति के साथ लौकिक वासनाएँ एवं दैन्य शून्य दंभ अनजाने में लिपटे चले आते हैं।

---

१. सर्वसाधनराहित्यं फलाप्तौयत्र साधनम्।
फलं वा साधनं यत्र पुष्टिमार्गः स कथ्यते॥ पुष्टि० मा० ल० १

१. अनुग्रहेणैवसिद्धि लौकिकी यत्र वैदिकी॥ पुष्टि० मा० ल० २

२. धर्मनिष्ठा यत्रनैव पुष्टिमार्गः स कथ्यते॥ ,, ४

३. न लोक वेद सापेक्ष्यं सर्वथायत्रवर्तते।
सापेक्षतास्वामिसुखे पुष्टिमार्गः स कथ्यते॥ पु० ल० ६

४. वरणे दृश्यते यत्र हेतुर्नायुरपि स्वतः।
वरणं च निजेच्छातः पुष्टिमार्गः स कथ्यते॥ वही ७

५. भजने यत्र सेव्यस्य तोषकारकृतिः क्वचित्।
पोषणं भावमात्रस्य पुष्टिमार्ग स कथ्यते॥ वही १३

पुष्टि भक्ति के उपर्युक्त स्वरूप निरूपण के पश्चात् इस भक्ति के आलम्बन पर भी विचार कर लेना समीचीन होगा। जैसाकि कहा जा चुका है पुष्टि भक्ति में साधन एवं साध्य की भिन्नता नहीं है। पुष्टि भक्ति में लक्ष्य सीधे भगवान् न होकर भगवत्प्रेम ही एक मात्र लक्ष्य या उद्देश्य होता है। भक्त का रागात्मक हृदय जो भाव भावित है वही प्रभु स्थानीय है। वहीं प्रभु का आविर्भाव माना गया है। भगवदाविर्भाव ही भक्ति मार्ग में परम फल माना गया है। अनुभवगम्य भगवान् परमानंद स्वरूप है। परमानंदत्व अनुभूति की वस्तु है। जीव को "परमानंद" का अभाव है यही जीव का जीवत्व है। अभाव की ही पुष्टि भक्ति में विरह की संज्ञा दी गई है। और इस प्रकार परमानंदस्वरूप भगवान् से भक्त का "भाव-सम्बन्ध" पुष्टि पथ में स्थापित किया गया है। इसे लौकिक उदाहरण द्वारा प्रभुचरण हरिराय जी ने स्पष्ट किया है कि जिस प्रकार कोई कन्या साग्रह अपने पतिदेव को अपना सर्वस्व समर्पित करके उसके (पति के) परोक्ष में उसके विरहजन्य क्लेश को स्वीकार करती है उसी प्रकार भक्त भी भगवान् का विप्रयोगात्मक भावरूप क्लेश स्वीकार करता है। विरह अथवा विप्रयोग रस राज शृंगार का एक रूप है। इसलिए पुष्टिमार्ग में भगवान् को रसात्मक कहा गया है। हरिराय जी ने स्पष्ट घोषणा की है :—

रसात्मकः श्रुतिशिरः सिद्धः स पुरुषोत्तमः।
रस शृंगार एवास्ति नाट्य सिद्धान्त सम्मतः॥[1]

उपनिषदों में जिस पुरुषोत्तम की चर्चा की गई है वह रस रूप है और वह रस तथा शृंगार एक ही तत्त्व है। यही नाट्यशास्त्र का भी सिद्धान्त है। नाट्यशास्त्र के प्रणेता भरतादि आचार्यों ने शृंगार के अतिरिक्त किसी को रसराज माना भी नहीं है। सभी अन्य रस शृंगार के साथ सम्बन्ध रखते हैं। यदि उनका सम्बन्ध शृंगार के साथ नहीं है तो वे "रस" नहीं कहे जा सकते। जिस प्रकार स्वर्ण बड़ों के अथवा बड़े काम में आने के कारण ही स्वर्ण है उसी प्रकार अन्य रस यदि शृंगार के उपकारी हैं तब तो रस हैं, अन्यथा व्यर्थ हैं। अथवा कुछ और हैं—रस नहीं।[2] शृंगाररस संयोग एवं वियोग इस प्रकार द्विदलात्मक है। संयोग शृंगार रसशास्त्रीय क्रिया प्रधान है विप्रयोग भाव प्रधान। अतः संगोगात्मक भगवान् लोक वेद प्रथित चतुर्व्यूहात्मक पुरुषोत्तम है तथा विप्रयोगात्मक भाव गूढ़ केवल भक्तों के अनुभव गम्य हैं। ये अनन्त कोटि लीला नायक नित्य नूतन है।[3] वासुदेव संकर्षण, प्रद्युम्न अनिरुद्धादि व्यूहात्मक भगवान् का कार्य भूभार हरण, पूतनादि दैत्यों की मुक्ति प्रदान है जबकि भावात्मक शुद्ध सत्त्वात्मक भगवान् अपने निज भक्तों के लिए वसुदेव अथवा कृष्ण रूप में "दिव्यतत्व" ग्रहण कर लेते हैं।[4] वही मूल रूप पुरुषोत्तम नन्दगृह में कृष्ण रूप में प्रकट हुए। संक्षेप में पुष्टि भक्ति के आराध्य और सेव्य नन्दात्मज कृष्ण हैं। यही चराचर के आश्रय और श्रीमद्भागवत महापुराण के प्रतिपाद्य हैं।

---

१. श्री पुरुषोत्तमस्वरूपाविर्भाव निर्णयः—श्लोक २
२. यथैवोपकृतिः सर्वा महतां स्वर्ण निर्मिता।
शृंगारस्य तथा कार्ये रसाएवोपयोगिनः॥ वही ४
३. अनुभूति प्रमाणैकवेद्योमानान्तरातिगः।
अनन्तकोटिलीलानामाश्रयो नित्यनूतनः॥ श्री पुरू० स्व० ११
४. वासुदेरस्तुभवतानामन्तः करण मूर्तिमान्।
तमादौस्वामिश्री कृत्यभावात्माव्यक्ततांगतः॥ वही २३

तस्मादेकेन मनसा भगवान् सात्वतां पतिः।
श्रोतव्यः कीर्तितव्यश्च ध्येयः पूज्यश्च नित्यदा॥ १-२-१४

समस्त वेद उन्हीं का गान करते हैं। समस्त यज्ञ उन्हीं के लिए हैं। समस्त योग उन्हीं का उद्देश्य रखते हैं, समस्त धर्म क्रियाएँ उन्हीं के लिए होती हैं। समस्त ज्ञान उन्हीं का स्वरूप है। समस्त तप उन्हीं के लिए किये जाते हैं। समस्त धर्मों के वही लक्ष्य हैं। वे ही चराचर की गति हैं।

वासुदेव परा वेदा वासुदेव परा मखाः।
वासुदेव परा योगा वासुदेव पराः क्रियाः।
वासुदेव परं ज्ञानं वासुदेव परं तपः।
वासुदेव परो धर्मो वासुदेवपरागतिः॥ श्रीमद्भाग० १।२।२८-२९

इन्हीं भगवान् वासुदेव ने सृष्टि रचना की इच्छा से षोडश कलापूर्ण होकर "पौरुष रूप" को ग्रहण किया।[1] यही "कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्" है। आचार्य वल्लभ ने इन्हीं "परम तत्त्व" को एक मात्र भजनीय बताया। इनके अतिरिक्त किसी अन्य को यदि कोई भगवान् कहता है तो विद्वान् उसे ही असुर पुकारते हैं—

जानीत परमं तत्वं यशोदोत्संग लालितम्।
तदन्यदिति ये प्राहुरासुरांस्तानहो बुधाः॥

आचार्य के मत में 'ब्रह्म' यही यशोदोत्संग लालित श्रीकृष्ण हैं। ये हीं भगवान् श्रीकृष्ण पुष्टिमार्ग में निर्दोष पूर्ण-गुण-विग्रह पुरुषोत्तम हैं। वे ही सबका नियमन करते है। अशेष गुण समूहों के एक मात्र आश्रय होकर भी वे गुणातीत हैं। अलौकिक धर्मो से युक्त हैं अतः सगुण हैं। प्राकृत धर्मों से परे हैं अतः निर्गुण हैं। आनन्द मात्र कर पाद मुखोदरादि होने से विग्रहवान् अथवा साकार हैं। प्राकृत अवयवों से रहित होने के कारण निराकार भी हैं। इस प्रकार वे निर्दोष पूर्ण गुण विग्रह भगवान् हैं। उन्हें पूर्ण ब्रह्मत्व घटता है। वे श्रीकृष्ण सर्व रूप होकर भी सबसे बढ़कर हैं—'यतो भगवान् सर्वरूपोपि सर्वस्मादतिरिच्यते।' इनकी सेवा ही पुष्टिमार्गी भक्ति है। यह पुष्टिमार्गीय भक्ति सायुज्य मोक्षदात्री है। तं भजन् निर्गुणोभवेत् इतिवाक्यात् कृष्ण सायुज्यमेव निर्गुणा मुक्तिः। अतः फल के तारतम्य से यह निर्गुण भक्ति सगुण भक्ति से भिन्न है। नृसिंह वामनादि अन्य अवतारों की भक्ति सगुण भक्ति है। देवी गणेश, शिव, सूर्यादि भगवान् के विभूति रूपों की श्रद्धाभाव से की गई पूजा अर्चा पूजा मार्ग है। तथा इन देवताओं की प्रसन्नता के उद्देश्य से लिये गए जपादि 'उपासना' कहे गये हैं। उपासनायां मंत्र एव प्रधानम् 'अतः लौकिक कामनाओं की पूर्ति को उत्तेजना देने के कारण आचार्य वल्लभ इसे दोषावह बताते हैं। यह उपासना मार्ग भी पुष्टि भक्ति से भिन्न है। ज्ञान मार्ग क्लेशदायक है। अतः भक्ति समन्वित ज्ञान को ही आचार्य श्रेष्ठ बतलाते हैं। 'ज्ञानीचेत् भजते कृष्णं तस्माज्ज्ञास्त्यधिकः परः' ज्ञान संवलित भक्ति को आचार्य ने मर्यादा अथवा शास्त्रीय भक्ति कहा है।

श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पाद सेवन, अर्चन, वंदन, दास्य, सख्य एवं आत्म निवेदनात्मक नवधा भक्ति साधना रूपा भक्ति पुकारी गई है, क्योंकि यह भक्ति साधनसापेक्ष है। यह साधन रूपा-भक्ति भी भागवत प्रतिपादित है। इसे ही शास्त्रीया, मर्यादा, विहिता (वैधी) अथवा जीव-साध्यादि नामों से पुकारा गया है।

---

१. जग्राह पौरुषं रूपं भगवान् महदादिभिः॥ १।३।६

आचार्य वल्लभोपदिष्ट भक्ति साधन निरपेक्ष होने के कारण फलरूपा कहलाती है। इसमें भक्ति अथवा प्रेम का फल भक्ति अथवा प्रेम ही है। यह साधन भक्ति से मूलतः भिन्न है। अतः इसे 'स्वतन्त्र भक्ति' की संज्ञा दी गई है। यह परम दुर्लभ महद् विमृग्य है। यही अविहिता अथवा प्रेम लक्षणा पुष्टि-भक्ति है। इसमें श्रवणादि प्रेम के परिणाम स्वरूप स्वयमेव आ घुसते हैं। श्रवणादि नवधा भक्ति से प्रेम का उदय नहीं अपितु नवधा ही प्रेम के परिणामी हो जाती है।[1] दूसरे शब्दों में फलरूपा भक्ति और कुछ नहीं शुद्ध प्रेम ही है। यह भक्ति नितान्त निरपेक्ष और स्वतन्त्र है। इसके आगे समस्त साधन निष्प्रयोजन हैं। सांग साधन भक्ति से सायुज्य मोक्ष मिलता है। फलरूपाभक्ति का लक्ष्य विशुद्ध भजनानंद है। आचार्य कहते हैं :

"यो भजनानंद : स तुब्रह्मानंदतः शास्त्रीयभक्त्या नंदतश्च कोटि गुणाधिकः, अनिर्वचनीयश्च।" यही महानन्द है। 'अयं महा नंदः। एत्फलंज्ञानमार्गेपि दुर्लभम्।[2]"

'सेवा' इसी भक्ति योग का दूसरा नाम है। 'भज्' धातु प्रकृत्यर्थ ही सेवा या सेवन है। इसलिए आचार्य ने स्पष्ट कहा है कि इस मार्ग में भजन ही सेवा है।[3] इसीलिए पुष्टिमार्ग को 'सेवामार्ग' भी कहा गया है। सेवा तभी सम्पादनीय होती है जब आन्तर प्रेम हो। इस प्रकार भक्ति तत्व के निरूपण में आचार्य गूढ़ से निगूढ़ होते चले गये हैं।

पुष्टि भक्ति को आचार्य ने निर्गुणा भक्ति भी कहा है। वे कहते हैं 'अस्मत् प्रतिपादितश्च नैर्गुण्यः[4]' इस निर्गुण भक्ति योग का स्रोत भी श्रीमद्भागवत है। जिस प्रकार गङ्गा का जल प्रवाह, निर्बाध, प्रतिबन्धरहित पर्वतों का भी भेदन कर निरन्तर समुद्र की ओर ही रहता है उसी प्रकार मेरे गुणों के श्रवण मात्र से समस्त प्राणियों के हृदयों में स्थित मुझमें लोक वेद के बन्धनों से अनवरुद्ध मन अनवरत रूप से लगा रहता है। इसी को निरन्तर भक्ति योग' कहते हैं।[5] काल तथा कर्म के प्रतिबन्ध से अनवरुद्ध यह भक्ति योग बिना किसी फलाशा के सहज भाव से उदय होता है। और एक बार उदय हो जाने पर फिर यह कभी निवृत्त नहीं होता। संक्षेप में श्री वल्लभाचार्य प्रतिपादित भक्ति का तात्पर्य है—केवल पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण की प्रेममय सेवा। फलाशा रहित सेवा ही 'अहैतुकी सेवा कही जाती है। 'सेवा' सेवा के लिए ही हो और रस लक्ष्यान्विता हो तो वही आत्यंति की भक्ति है। रस ही इस भक्ति का परम फल है।[6]

भगवान् कहते हैं कि इस प्रकार की रसमयी भक्ति प्राप्त कर लेने पर भक्त सालोक्य, सार्ष्टि (समान ऐश्वर्य), सामीप्य, सारूप्यादि मुक्ति देने पर भी वह इन्हें नहीं चाहता क्योंकि वह मेरी परम

---

१. प्रेमैवतस्मिन्नवधोक्त भक्तिस्तत्रोपयोगो खिलसाधनानाम्।

२. सुबोधिनी

३. अस्मिन् भजनं सेवैव। सुबो०

४. सुबोधिनी।

५. मद्गुणश्रुतिमात्रेण मयि सर्वगुहाशये। मनो गति रविच्छिन्ना यथागंगाम्भ्यासोऽम्बुधौ॥
लक्षणं भक्तियोगस्य निर्गुणस्य ह्युदाहृतम्।
अहैतुक्य व्यवहिता सा भक्तिः पुरुषोत्तमे॥—श्रीमद्भागवत ३।२९।११

६. "सेवाऽऽत्यन्तिकी या स्वतो रस भावं प्राप्ता,
सेवनान्यत् फलमंगीकारयति॥—सुबोधिनी

फल रूपा सेवा या फलात्मिका निर्गुण भक्ति से वह विमुख नहीं होना चाहता।[1] इसी को लक्ष्य कर गोस्वामी तुलसीदास ने कहा है :

अस बिचारि ते तज्ञ सयाने। मुकुति निरादरि भगति लुभाने॥[2]

व्रज भक्तों ने कहा है—'एक व्रज रज चो मुक्ति वारुं रे।' गुजराती नरसी कहते हैं-'मुक्ति छै एमनी दासी रे।' क्योंकि मोक्ष के ब्रह्मानन्द से भजन का महानन्द अधिक बड़ा है—'ब्रह्मानन्दात् महानन्दो भजने वर्तते स्फुटम्।[3]' यह भक्ति योग स्वतन्त्र कहा गया है। क्योंकि यह भी भगवान् की तरह अपने प्रमेय बल से स्वतः सिद्ध है। यही पुष्टि भक्ति है। इसे ही स्नेहात्मिका सेवा कहा गया है। यह फल रूपा है। सेवा भी भगवत्कृपा या अनुग्रह से ही लभ्य है। आचार्य वल्लभ ने कहा है, "सेवा च पुष्टि मार्गे सस्नेहा कृपा फलं चैतत्" अर्थात् स्नेहात्मिका सेवाप्रभु की कृपा से लभ्य है। अतः इस भगवदनुग्रह का अनुष्ठान गुरु कृपा से ही सम्भव है। आचार्य से उद्भावित इस मार्ग से भगवत्सेवा का अधिकार उसी को है जिसने विधिवत् आचार्य वंशज गोस्वामी बालक से विधिवत् दीक्षा ले ली है। गोस्वामीविट्ठल नाथ जी ने अपने सर्वोत्तम स्तोत्र में यह घोषणा कर रखी है 'पृथ्वी पर भक्ति प्रचार के लिए ही आपने (आचार्य वल्लभ ने) अपने वंश की स्थापना की और उस वंश में अपनी भक्ति का अशेष माहात्म्य भी स्थापित कर दिया।[4] अतः सेवा दीक्षा वल्लभ वंशज से ही लेने से सेवाधिकार प्राप्त होता है। यह दीक्षा पुष्टिमार्ग में 'ब्रह्म सम्बन्ध कही जाती है। इसमें तीन तत्त्व समाहित है—१-भगवान् से भक्त का सम्बन्ध, २-सर्वस्व समर्पण तथा ३-भगवान् की शरण में गमन। इसीलिए इसे 'आत्म निवेदन' भी कहा गया है। दीक्षा विधि और आचार्य द्वारा भक्त के सम्पूर्ण आत्म निवेदन को पुष्टिमार्ग में कन्या के विवाह और उसको वर को समर्पण करने के समान कहा गया है। विवाह के उपरान्त ही कन्या को अपने पति की सेवा का अधिकार होता इसी प्रकार ब्रह्म सम्बन्ध अथवा आत्म निवेदन के उपरान्त ही भक्त को भगवत्सेवा का भी अधिकार होता है। अतः अधिकार प्राप्ति अत्यावश्यक है।

दीक्षा में भक्त अपनी रुचि के अनुकूल अपने भाव जगत् में भगवान् से सम्बन्ध स्थापित करने में स्वतन्त्र है। वह चाहे तो दास्य भाव प्रभु आराधना करे चाहे कान्ता भाव से, चाहे पुत्र भाव से। सम्बन्ध भावना सेवा से दृढ़ दृढ़तर होती जाती है। आत्म निवेदन दूसरा तत्व सर्वस्व समर्पण है। अपने आराध्य प्रभु से भक्त कुछ भी बचा नहीं रखता। बिना समर्पित किये कुछ भी ग्रहण नहीं करता। असमर्पित वस्तु का त्याग उसका दृढ़ नियम होता है 'सामि भुक्त' अथवा अर्ध भुक्त वस्तु के समर्पण को वह अपराध मानता है। समर्पित के ग्रहण और असमर्पित के त्याग के कठोर नियम के पालन के परिणाम स्वरूप उसमें 'अन्यता' आ जाती है। वह किसी अन्य देवता का आराधक नहीं होता न स्वतः वहाँ गमन ही करता है। न वह अपने आराध्य से किसी वस्तु की प्रार्थना या याचना करता है।[5] क्योंकि ऐसा

---

१. सालोक्य सार्ष्टि सामीप्य सारूप्यैकत्व मप्युत।
दीयमानं न गृह्णन्ति विनामत्सेवनं जनाः॥

२. उत्तरकाण्ड—मानस

३. सुबोधिनी।

४. भुवि भक्ति प्रचारैक कृते स्वान्वयकृत्पिता।
स्ववंशे स्थापिताशेषस्तमाहात्म्यः समयाबहः॥—सर्वोत्तम स्तोत्र २२

५. अन्यस्य भजनं तत्र स्वतो गमनमेव च।
प्रार्थना कार्यमात्रेऽपि ततोऽन्यत्र विवर्जयेत्॥ विवेकधैर्या-१४

करने से उसके प्रभु के अन्तर्यामित्व को बाधा पहुँचती है। इस प्रकार वह अनन्यता और समर्पण के दो चक्रों वाले पुष्टि रथ पर सवार होकर वह जीवन के सुख दुःख के मार्ग को अनायास तय करता चलता है। 'आत्म निवेदन' के तीसरे तत्व शरण गमन से भक्त को निश्चिन्तता प्राप्त हो जाती है। उसे जागतिक योगक्षेम की तनिक भी चिन्ता नहीं रहती। उसका विश्वास होता है भगवान् उसके लिए सब कुछ स्वयं ही करेंगे।[1] उसके लिए उसके प्रभु या आराध्य की प्रतिज्ञा होती है :

अनन्याश्चिंतयतो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥[2]

योग क्षेम से निश्चिन्त हो जाने से भक्त में अपने एकमात्र आश्रय (भगवान्) के प्रति भावना दृढ़ होकर उसमें विवेक जग जाता है। विवेक की व्याख्या करते हुए आचार्य ने कहा है—भगवान् सब कुछ मेरे (भक्त के) हित में ही करेंगे ऐसा विश्वास ही विवेक है।[3]

इस प्रकार के विवेक को पुष्ट करते रहने से साधक अथवा भक्त को प्रत्येक स्थिति में भगवान् का विश्वास रहता है और वह उत्तरोत्तर भक्ति साधना में अग्रसर होता जाता है। दीक्षा अथवा ब्रह्म सम्बन्ध लेने के उपरान्त भक्त अपना सारा समय भगवत् सेवा में ही व्यतीत करता है। सेवा का फल सेवा ही है। पुष्टि भक्त सेवा से कभी पराङ्मुख नहीं होता। सेवा से उसके बीज भाव को पोषण मिलता है। यह सेवा तीन प्रकार की कही गई है। —तनुजा २-वित्तजा ३-मानसी। इनमें भी "मानसी सेवा" सर्वोत्तम है।[4] भगवान् में साधक के चित्त प्रवणता ही सेवा है।[5] भगवान् में चित्त की प्रवणता से संसार के दुःखों से निवृत्ति होती है और ब्रह्म का बोध होता है।[6] यही पुष्टि भक्ति का चरम लक्ष्य है। "मानसी सेवा का यही तात्पर्य है। इस सेवा की साधना में तीन विघ्न हैं—१-उद्वेग २-प्रतिबन्ध तथा ३-भोग। उद्वेग चित्त की अस्थिरता अथवा घबराहट है। प्रतिबन्ध लौकिक बन्धन, जीविका का बन्धन अथवा समय का अभाव है। भोग इन्द्रियों की तृप्ति लालसा है। इन तीन कारणों से सेवा अथवा भगवान् में चित्त की प्रवणता नहीं हो पाती। एतदर्थ गुरु से दीक्षा[7] शास्त्र चिन्तन एवं सत्संग आदि अनेक उपाय हैं। इन सबके लिए धैर्य और विश्वास की आवश्यकता होती है। कठोर सगुण साकारवादी आचार्य वल्लभ ने इसी दृष्टि से भगवान् की स्वरूप सेवा पर बल दिया है। स्वरूप सेवा भी वे व्यक्तिगत रूप से करने का ही आग्रह करते हैं। इसीलिए अपने दीक्षित भगवत्सेवकों (शिष्यों) को उन्होंने सेवाधिकार देते हुए किन्हीं किन्हीं को भगवत्स्वरूप भी दिये। वार्ताओं में आया है "असुक के माथे भगवान् पधराये" से तात्पर्य भगवान् का स्वरूप सौंपना है। पुष्टिमार्ग में भगवत्स्वरूप निजी निधि के रूप प्राणाधिक प्रिय और जीवनसर्वस्व होता है। उसे "पुष्टिमार्ग" की पद्धति (प्रणालिका) के अनुसार राग, भोग, शृंगार,

---

१. एव सदा स्म कर्तव्यं स्वयमेव करिष्यति।
प्रभुः सर्व समर्थो हि ततो निश्चिन्ततां व्रजेत् ॥ चतु० श्लोक० २

२. श्रीमद्भगवद्गीता ९।२२

३. विवेकस्तु हरिः सर्वं निजेच्छातः करिष्यति ॥—विवेकधैर्य—१

४. कृष्णसेवासदाकार्या मानसी सा परामता। सि० मु० १

५. चेतस्तत्प्रवणं सेवा। सि० मु० २

६. ततः संसारदुःखस्य निवृत्तिर्ब्रह्मबोधनम् ॥ सि० मु० वही

७. सेवाकृतिर्गुरोराज्ञा—नवरत्न—७

त्रिविध रूप से अष्टयाम सेवा करते रहने से मन की चिन्ता, चंचलता, उद्वेग, प्रतिबन्ध आदि सभी क्रमशः नष्ट होते चले जाते हैं।

सूरादि अष्टछापी कवियों का संपूर्ण कीर्तन साहित्य सूरसागर, परमानंद सागर, कृष्ण सागर, कुंभनदास कीर्तन संग्रहादि—राग सेवा के ही अन्तर्गत है। प्रातःकाल मंगल दर्शन से लेकर संध्या की आरती और शयन तक भगवान् की अष्टयाम चर्चा के आधार नित्य सेवा का पद-साहित्य उद्भूत हुआ और इस प्रकार पुष्टिमार्गीय वर्ष जन्माष्टमी से लेकर भाद्रपद कृष्ण सप्तमी तक के समूचे वर्ष के उत्सवों पर गाये गये उत्सव कीर्तन वर्षोत्सव के नाम से ही अभिहित हुए।

पुष्टिमार्ग की राग सेवा ने ही व्रज भाषा साहित्य के भंडार को विपुल भावमणियों एवं रत्नों से भर दिया। अष्टछापी कवियों के अतिरिक्त पुष्टिमार्ग के शतशः भक्त कवियों ने राग सेवा के अन्तर्गत अनंत पदों की रचना की है। इन पदों का लालित्य और माधुर्य अनुपम और अनूठा है। ये पद व्यक्तिगत अनुभूति और कल्पना के आधार पर तो हैं ही इनका मूल स्रोत श्रीमद्भागवत महापुराण का दशम स्कन्ध है। श्रीकृष्ण का अनन्त लीला "क्षीराब्धि" ही इस समस्त पद साहित्य स्रोत है।

इसी प्रकार भगवान् के स्वरूप में साक्षात् पुरुषोत्तम की भावना को पुष्ट करते हुए उत्तमोत्तम भोज्य पदार्थों को स्वयं तैयार करके प्रभु को निवेदन करना भोग सेवा है। इसमें नित्य भोग तथा ऋतु अनुसारी वर्षोत्सवों के भोग सभी आ जाते हैं। दूध दही आदि गोरस एवं उससे बने पदार्थ, फल तथा पोषण देने वाले अन्यान्य अनेक प्रकार के पक्वान्न दिन में छः या आठ बार भगवान् को निवेदित करना भोग सेवा है।

इसी प्रकार सेव्य स्वरूप को नित्य अनेक प्रकार से शृंगार करना मुकुट, काछनी, टिपारा, मोरपंख, कुण्डल, चिबुक बेसरादि से भगवद् विग्रह का शृंगार करना तथा वर्ष के विभिन्न उत्सवों पर विशिष्ट शृंगार करना, शृंगार सेवा है। इस प्रकार पुष्टिमार्गीय भक्त भगवत्सेवा के ही माध्यम से जगत् के भोगों के संपर्क में आता है और भगवान् को निवेदित अथवा समर्पित करके ही प्रसाद रूप में उनका ग्रहण करता है। अन्यथा नहीं। बिना समर्पण के सिद्धान्त रहस्य में कहे गए पाँचों प्रकार के दोषों की निवृत्ति नहीं होती। अतः भगवान् की असमर्पित वस्तुओं का वर्जन पुष्टि भक्ति का प्रमुख सिद्धान्त है।[1] जागतिक भोगों का रसास्वादन स्वदेह अथवा अपनी इन्द्रियों की तृप्ति के लिए न कर उसे भगवत् स्वरूप जीव मात्र को वितरित कर अपना भाग ही ग्रहण करना पुष्टि भक्ति का उपनिषद् प्रतिपादित मुख्य सिद्धान्त है।[2]

पुष्टिमार्गीय राग, भोग शृंगारात्मक त्रिविध सेवा सेवक की भक्ति साधना को बल देती है। साथ ही उसे निश्चिन्ति बनाकर क्रमशः स्वरूपानंद की प्राप्ति करती है। स्वरूप के साथ तादात्म्य ही सायुज्य मुक्ति है। इसे ही अलौकिक दान कहा गया है। इसे पाकर भक्त सदैव तुष्ट और भगवद् गुणगान में रत रहता है। गुण चिन्तन और गुण कथन से भक्त को भौतिक दुःख अथवा क्लेश नहीं होते।

---

१. अन्यथा सर्वदोषाणां न निवृत्तिः कथचन।
असमर्पितवस्तूनां तस्माद्वर्जनमाचरेत्॥ सि० रह० ४।९

२. ईशावास्यमिदं सर्वयत् किंच जगत्यां जगत्।
तेनत्यक्तेन भुंजीथाः मा गृधः कंस्य स्विद् धनम्॥ ईशा० १

आचार्य जी ने घोषणा की है : "गुणैर्हरेः सुखस्पर्शात्र दुःखंभाति कर्हिचित्। इसीलिए भगवद् गुणगान रसिक भक्त ज्ञान मार्ग का अवलम्बन नहीं लेता। श्रीहरि का कीर्तन ही उसको वरणीय है। इस फलरूपा पुष्टि भक्ति के लिए सर्वात्म भाव से आत्म समर्पण एवं आराध्य के प्रति अनन्य भाव ही अपेक्षित है। इस भक्ति की परम अधिष्ठात्री व्रजांगनाएँ ही मानी गई हैं, क्योंकि भक्ति की परम रसानुभूति चरम विरहवेदना एवं तन्मयता उनमें ही मानी गई है। इनको ही लक्ष्य कर भगवान् ने कहा है—ताः मन्मनस्कामत्प्राणामदर्थेत्यक्तदैहिकाः। ये गोपियाँ तीनों प्रकार की आसक्तियों, स्वरूपासक्ति, लीलासक्ति, भावासक्ति की अधिष्ठानभूता थीं।

भारतीय सन्त

महामहोपाध्याय पं० रामकृष्ण शर्मा शास्त्री 'अव्यय'

संस्कृत अनु० केंद्र रघुनाथ मन्दिर, जम्मू

आर्यसंस्कृति के विशाल साहित्य-भण्डार में संतों की अपनी एक विशेष परम्परा है। मुख्यतया संत-जीवन को हम दो श्रेणियों में बँटा पाते हैं। एक में प्राकृत-संत और दूसरी में लौकिक-संत। प्रकारान्तर से इन्हें स्वयंसिद्ध और शास्त्रसिद्ध भी कहा जा सकता है। साधना अथवा अभ्यास-क्रिया का सतत संयोग तो प्रायः दोनों अवस्थाओं में मौलिक उपादान समझा जायगा। यह साधना एक या अनेक जन्मों की धरोहर के रूप में भी प्राप्त होती देखी जाती है। आप किसी भी युग का इतिहास पढ़ लीजिये, सब में संत-जीवन के अनेक उत्कृष्ट उदाहरण दृष्टिगोचर या श्रवणगोचर हो सकते हैं। संसार में ऐसा कोई देश नहीं है, जहाँ किसी न किसी रूप में संतों का आविर्भाव न हुआ हो। विश्व इतिहास में हम निष्पक्षतया इस बात को सुपरीक्षित प्रयोग के तौर पर परखने की क्षमता रखते हैं।

इस पर भी भारतवर्ष को तो संतों का घर ही समझना चाहिये। आर्यशास्त्रों में समन्वय-दृष्टि से अगर हम देखें तो यह रहस्य खुल जाता है कि संतों की परम्परा में श्री भगवान् (सगुण-रूप) को ही सर्वादिम संत मानने में हम बाध्य न होंगे। तब इसमें शंका को कोई स्थान नहीं कि संतों की परम्परा का आदिस्रोत कौन या कहाँ से निकला है। एक सत् ही संतों का सम्मत उपास्य है।

यह बात दूसरी है कि इस परम्परा को कहीं भक्त, कहीं गुरु, कहीं आचार्य आदि की परम्परा की संज्ञा दे दी गई है। किन्तु मूलतः संतों के लक्षण इन पर्यायों में यथानुरूप अन्तर्निहित हैं। यद्यपि भारतीय सत्साहित्य के विशाल भण्डार में यत्र तत्र सर्वत्र संतों के लक्षणवाक्यों को बहुधा दोरराया गया है, किन्तु सूक्ष्मदर्शन से उन सब में तालमेल है।

संक्षेप रूप में संत-लक्षणों में सर्वत्र यह वर्णन मिलता है कि संत-पुरुष रजोगुण, तमोगुण से रहित तथा सत्त्वशील होते हैं। वे जन्म, जरा तथा मृत्यु के दुःखों को नहीं गिनते। किसी से द्वेष नहीं करते। वैसे ही किसी पर राग भी नहीं रखते, और न कभी मायिक प्रेम में बँधते है। वे प्रकृति और निवृत्ति की इच्छा नहीं करत। उनको प्रकाश और प्रवृत्ति का मोह नहीं होता। वे उदासीन के समान संसार में विचरण करते हैं। कभी सत्त्वादिक गुणों से चलायमान नहीं होते। उन्हें कोई प्रिय या अप्रिय नहीं होता। वे पत्थर तथा काँचन को समान गिनते हैं। स्तुति या निन्दा की स्पृहा नहीं करते। मान-अपमान में समान बुद्धि रखते हैं। मित्र तथा शत्रु को समानता से देखते हैं। अव्यभिचारिणी भक्ति करके परब्रह्म की उपासना करते हैं। एकान्त का सेवन करते हैं। किसी तरह के सांसारिक-प्रापंचिक कार्यों का आरम्भ नहीं करते। इन्द्रियों के विषयों पर वैराग्य रखते हैं। मन को नियम में रखते हैं। संकल्प का संन्यास करते हैं। बस, ये ही सच्चे संत हैं।

परन्तु बनावटी संत रजोगुण, तमोगुण से भरपूर होते हैं। उनको न शान्ति है और न तत्त्व का विनिश्चय। वे तो जगत् के जंजाली जीव ही हैं। संसार में विचरते हुए वे द्वेष, क्लेश, मानभंग और निन्दा के ही भोगी होते हैं। दर्शन करते ही वे जीव, चित्त तथा वित्त के हरने वाले ही हैं, किन्तु संसार में फँसे हुए जीवों को सदुपदेश देनेवाले नहीं।

शुद्ध, सात्त्विक संत जहाँ प्रेम, वीरता, ब्रह्मभाव, धर्मप्रियता, दयालुता तथा सुशिक्षादान से श्रेय प्राप्त करके यम, नियम, आसन, दम, स्वाध्याय, तप, आर्जव, अहिंसा, अक्रोध, शान्ति, क्षमा, अद्रोह के भोगी हैं, वहाँ संसारी संत दम्भ दर्प, घमण्ड, पारुष्य, अज्ञान के भोगी हैं। भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र जी ने स्पष्ट (गीता में) कहा है, कि प्रथम दैवी तथा दूसरी आसुरी संपद् है। दैवी संपत्तिवाले तो यथार्थ संत ही हैं। उन संतों का संग ही सत्संग है। भिन्नता-द्वैत का परित्याग करके एकनिष्ठा से संत-सेवा करनी चाहिये। यह संत-सेवा ही जीव को सन्मार्ग में चलाकर चिदानन्द के ध्यान में मग्न-मस्त बनाया करती है, आदि-आदि।

इन लक्षणों से यह स्पष्ट है कि सत् की जो-जो विशेषताएँ हैं, वे सभी संतों में भी प्रकट हो जाती हैं। शास्त्र भेद से यद्यपि कोई ज्ञानी-संत, कोई भक्त-संत और कोई कर्मयोगी-संत कहलाता है, परन्तु सत् का सारभूत सामर्थ्य सब में अन्तरंग हो बैठा है। केवल बहिरंग-दर्शन से इन संतों की विभिन्न या विचित्र गति का कोई अनुमान लगाना, अपने आप में एक भारी भूल हो सकती है। शान्त, महान्, वसन्त की तरह लोकहितसाधक, भयंकर भवसागर से स्वयं तरे हुए और केवल करुणा से ही दूसरों को तारने वाले सत्पुरुष (संत) बड़े विलक्षण होते है।

"सत्", एक है, संत भी तदनुसार एकत्व के प्रमाण हैं। स्रष्टा और सृष्टि में एकता एवं अनेकता का व्यावहारिक भेद-दर्शन स्वयं इस तथ्य का समुद्बोधक है कि "एक से अनेक और अनेक से फिर एक" यही उत्सर्जन-उपसंहार अर्थात् आविर्भाव-तिरोभाव की प्राकृत-लीला है। सर्वेश्वर के अतिरिक्त इस लीला का सशक्त वर्णन करने में संतों का ही सामर्थ्य दृष्टिगोचर हो सकता है।

यदि वेद ईश्वरीय वाणी हैं, तो दर्शन-शास्त्र संतों की वाणी हैं। एक "सत्" की अनेकता से व्याख्या करने वाले संत ही हैं। ब्रह्मवाद, जीववाद और मायावाद की यह त्रिपुटी ही भारतीय दर्शन की आधारभूमि है। निर्गुण या सगुण ब्रह्म का ज्ञान योग, भक्ति, निष्काम कर्म आदि साधन-प्रक्रियाओं से साक्षात्कार करने वाले भी संत ही हैं। वास्तव में संत-महिमा का बखान करना कोई आसान काम नहीं है। इतने पर भी लोकशिक्षा, स्वाध्याय-क्षुधा-निवृत्ति, धर्मतत्व जिज्ञासा प्रभृति सत्कामनाओं की परिपूर्णता के लिये कुछ न कुछ कहना-कहाना, सुनना-सुनाना, लिखना-लिखाना भी शास्त्रीय अभ्यास में गिना जाता है। अपने-अपने समय के अनुभवपूर्ण प्रवचन, सदुपदेश और लेखों की स्वयं या शिष्यों द्वारा संग्रहीत करके संतों ने भावी पीढ़ियों के लिये शास्त्रीय-ऐतिहासिक पद्धति को चालू रखा है। धर्मप्राण या ज्ञानप्रधान प्राचीन वैदिक युग से लेकर स्वार्थप्राण या विज्ञानप्रधान नवीन वैज्ञानिक युग तक यह प्रणाली प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रगतिशील है। हाँ, यहाँ इतना अवश्य कहना पड़ेगा, कि आज जिस सम्मान या प्रभाव से "नेता" शब्द सर्वोपरि मान लिया गया है, प्राचीन भारत में "संत" शब्द भी कहीं इससे कम आदर नहीं पाता था। यदि हम सावधान होकर इस शब्द की खोज करें, तो कोई आश्चर्य नहीं कि इसकी सत्ता और महत्ता सार्वभौम ही प्रतीत होगी।

मर्त्य को अमरत्व की ओर ले जानेवाली सत्प्रेरणा देना भी संतों का ही एक परोपकारी स्वभाव है। अपने नैसर्गिक सत्स्वभाव से संत-जन सदा सर्वकल्याण की सद्भावना से ही सब काम करते हैं। गतिशील काल के गुणधर्मों को आत्मसात् करते हुए संत लोग सर्वदा अपने चिरन्तन ध्येय की ओर निर्भय एवं निश्चल भाव से अग्रेसर रहते हैं। संतों में यद्यपि स्थूलमान से विविधता की रीति प्रचलित पाई जाती है, किन्तु मूलतः अपनी और दूसरों की अभ्युदय तथा निःश्रेयस की साधना को बढ़ावा देने में उनकी एकनिष्ठा में कोई अन्तर नहीं पड़ता। प्रस्थानभेद से ही संतों का विभाग-सा हुआ चला आ रहा है। कोई एक वैष्णव संत, दूसरा शैव संत, तीसरा शाक्त संत और फिर उनमें भी अन्यान्य मत-मतान्तरों या संप्रदायों में अनेक बँटवारे "पंथ" नाम से हो गये हैं।

एक ही "सत् तत्त्व" की संप्राप्ति के लिये स्वाधिकार या योग्यताशक्ति से साधना करने वाले संतों में पृथक्-पृथक् दीक्षाक्रम भी विद्यमान हैं। श्रुत, अधीत एवं स्वानुभूत समुपलब्धियों का लोकोपकार के लिये अथवा अस्ति नास्ति के झगड़ों को निपटाने के लिये संतों ने देश काल या समाज की आवश्यकतानुसार भी शिक्षाक्रम को जारी रखा है। हमारे इतिहास में मौनी संत बहुत कम हुए हैं। अधिकतर तो ऐसे ही हुए हैं कि जिन्होंने शास्त्रचर्चा को प्रमुख मान कर उसके प्रचार-प्रसार के आजीवन प्रयत्न किये और कुछेक अपवादों को छोड़ कर, वे सदा अपने ईश्वरीय-साक्षात्कार के सदुद्देश्य में सफल होकर, अपने अनुयायियों को भी कृतार्थ करते रहे। सत्संग में संत-समागम और सत्-शास्त्र (श्रेष्ठ ग्रन्थ) का एक जैसा महत्त्व है।

इस कथन में कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि अगर संत न हों, तो यह संसार हमेशा अग्निज्वाला की तरह जलता ही रहे। संतवाणी को संजीवनी-सुधा कहा जाता है। साहित्य के क्षेत्र में भी सत्साहित्य का विपुल भण्डार संतों की ही देन है। भारतीय दर्शन में जिस सूक्ष्मतम वस्तुतत्त्व को विविधता से संतों ने समझाने की चेष्टा की है, उसके अन्तरङ्ग एवं बहुरङ्ग अस्तित्व को स्वीकारने में किन्हीं हठवादियों को छोड़ कर प्रायः समस्त विश्व के तत्त्वदर्शियों ने सराहनीय समर्थन प्रदान किया है।

अगर आज विश्व के किन्हीं विज्ञानप्रधान देशों को एकमात्र विज्ञान पर ही गर्व है, तो हम भी यह कहने में कोई संकोच नहीं करेंगे कि भारत-संतानों की अपने पूर्वज, प्रकृति के सौम्य-संतों की परम्परा से संप्राप्त, ज्ञानप्रधान विज्ञान पर ही अपना अटूट विश्वास है और इस विश्वास का अतीत, वर्तमान एवं भविष्य में भी और अधिक सुदृढ़ता प्रदान करने में भारतीय संतों का बहुत बड़ा योगदान समझा जायगा। भौतिक शक्ति को ही सर्वस्व मानने वाले महानुभाव, यदि कहीं मानवता को अशान्त भटकन को समाप्त करने (शान्ति देने) में समर्थ होते, तो यह काम कभी का पूरा हो चुका होता। मगर ऐसा हुआ नहीं। कोई हठवादी माने या न माने, किन्तु यह एक स्थिर सत्य है कि मानवता केवल भौतिक विभूतियों से ही पूर्णता को नहीं पा सकती। इसके लिए अवश्यमेव हमें औपनिषद् मार्ग के संप्रवर्तक, तत्त्वदर्शी संतों के अमर उपदेशों पर आधारित, सर्वकल्याणकारी, एकतामूलक, समन्वयवादी दृष्टिकोण के प्रचार-प्रसार करने वाले सत्साहित्य को अपनाना ही होगा।

इस संदर्भ में यह चर्चा भी अपने लाभ की है कि आज आजाद हिन्दुस्थान के नवनिर्माण में जुटे हम लोग पुरानी और नयी अच्छाईयों को हृदयंगम करने और बुराईयों को दूर हटाने के लिए कटिबद्ध हैं। सर्वतोमुखी प्रगति के लिये, जैसा कि मैंने पहले निवेदन किया है, ज्ञान और विज्ञान को स्वानुकूल दिशा में सम्मिलित करके चलने से अपना और दूसरों का कल्याणपथ संप्रदर्शित हो सकता है।

इस भव्य समायोजन के लिये संतों की आदर्श परम्परानुसार सत्साहित्य-निर्माता, अपनी शती के महान् संत स्वामी श्रीकृष्णवल्लाभाचार्य जो तो बधाई के पात्र हैं ही। क्योंकि ये संतों में विद्वान् और विद्वानों में संत हैं। लेकिन वर्तमान की सामाजिक, सांस्कृतिक और शैक्षणिक आवश्यकताओं के अनुकूल भावात्मक एकता के समर्थक पूज्य स्वामी जो के सम्मान में अभिनन्दन-ग्रन्थ का संपादन करने वाले संत-सेवक सज्जन भी धन्य हैं, जिन्होंने विशाल भारत के अभिन्न-अंग गुजरातराज्य में एकजुट होकर इस परम शुभ कार्य को संपन्न करने का दृढ़ संकल्प कर लिया है।

मैं समझता हूँ कि इस प्रकार के पवित्र एवं संप्रेरणाप्रद समायोजनों से संत परम्परा के भारतीय संतों का आमूल ऐतिहासिक महत्त्व सर्वसमक्ष होकर अपना प्रभावी उत्कर्ष बढ़ाने में सफल होगा।

❀ जय भारत भारती ❀

नाट्य-प्रयोक्ता

पं० सीताराम चतुर्वेदी M. A. M. A. M. A. I. T.

बेनियाबाग, वाराणसी

नाटक दृश्य-काव्य है इसलिये वह चारों प्रकार के अभिनयों के द्वारा लोक के समक्ष उपस्थित किया जाना चाहिए। अभिनव-नाट्यशास्त्र में नाटक या रूपक की यह परिभाषा दी गई है—

नाट्यकार-कृत-प्रसिद्ध-कल्पित-कथाधार-ग्रथित-रचनानुसारतः रंगपीठे प्रयोक्तृ-शिक्षितनटाभिनय-संबादसंगीतादिजन्यरस-द्वारा प्रेक्षकाणां विनोदविश्रान्त्युपदेशजनकं कार्यं नाटकं रूपकं था।'

[किसी प्रसिद्ध या कल्पित कथा के आधार पर नाट्यकार-द्वारा रचित रचना के अनुसार नाट्यप्रयोक्ता-द्वारा सिखाए हुए नट जब रंगमंच पर अभिनय तथा संगीतादि के द्वारा रस उत्पन्न करके प्रेक्षकों का विनोद करते, उन्हें उपदेश देते और मनःशान्ति प्रदान करते हैं, उस प्रयोग को नाटक या रूपक कहते हैं।]

नाट्यकार-द्वारा रचित रूपक के लिये नटों को शिक्षा देनेवाला नाट्यप्रयोक्ता कैसा हो, कौन हो, उसमें क्या गुण हों, वह किस प्रकार नटों को चुने, उन्हें कैसे शिक्षा दे तथा अभिनय और संगीतादि के द्वारा रंगपीठ पर नाटक का प्रयोग कराकर प्रेक्षकों के हृदय में कैसे रसोत्पादन करके उनका मनोविनोद करता हुआ उन्हें उपदेश और शान्ति प्रदान करे ? यह विचारणीय प्रश्न है।

भरत ने अपने नाट्यशास्त्र के पैंतीसवें अध्याय में प्रयोक्ताओं के साथ सूत्रधार, पारिपार्श्विक, विट, शकार, विदूषक और चेट की गणना की है और इनके लक्षण भी विस्तार से बताए हैं। शारदातनय ने अपने 'भावप्रकाशन' के दशम अधिकार में जहाँ सूत्रधार, पारिपार्श्विक आदि की व्याख्या की है वहाँ उन्होंने इनका वर्णन करते हुए—'संगीतशास्त्रस्य च प्रयोक्तृणां लक्षणं व' कहकर इनका विवरण दिया है।

नाट्य-प्रयोक्ता वह व्यक्ति है जो विशेष पर्व के योग्य खेलने के लिये नाटक चुने, उसके लिये उचित अभिनेता या नट चुने, चुनकर नाटक की भूमिका वितरित करे, वितरण करके उन्हें चारों प्रकार के अभिनय (आंगिक, वाचिक, आहार्य, सात्त्विक) की शिक्षा दे, संगीत सिखावे और नाटक की शिक्षा पूरी होने पर उस नाटक को यथा—विधि रंगमंच पर प्रयोग करावे। इतनी बातें जो कर सके वही हमारी परिभाषा के अनुसार नाट्य-प्रयोक्ता हो सकता है। भरत ने अपने सूत्रधार के ये ही लक्षण बताए हैं—

गानस्य च वाद्यस्य पाठ्यस्याप्यजभावविहितस्य।
शास्त्रोपदेशयोगात्सूत्रज्ञः सूत्रधारस्तु॥

(सूत्रधार वह है जो नाटक के गीत, वाद्य और पाठ्य के उचित संयोग को नाट्यशास्त्र के उपदेशानुसार ठीक-ठीक प्रयोग करने की कला जानता हो।)

उसका लक्षण भरत ने यह बताया है—

तत्र सूत्रधारगुणान् वक्ष्यामः।
पुण्याभिधानमेव तल्लक्षमभिमतवाक्यसंस्काराः।
तालविधानज्ञता, स्वरवादित्रतत्त्ववेदनं च॥

चतुरातोद्यकुशलः शास्त्रकर्मसु शिक्षितः ।
नानापाखण्डकार्यज्ञो नीतिशास्त्रार्थतत्त्ववित् ॥
वेश्योपचारनिपुणः कामशास्त्रविचक्षणः ।
नानागीतप्रचारज्ञो रसभावविशारदः ॥
नाट्यप्रयोगकुशलो नानाशिल्पसमन्वितः ।
पादच्छन्दोविधानज्ञः सर्वशास्त्रविचक्षणः ॥
ग्रहनक्षत्रतत्त्वज्ञो देशव्यापारपण्डितः ।
पृथिवीद्वीपवर्षाणां पर्वतानां जनस्य च ॥
प्रमाणचरितज्ञश्च राजवंशप्रसूतिवान् ।
श्रोता शास्त्रार्थकाराणां श्रुत्वा चैवावधारकः ॥
अवधार्य प्रवक्ता च शक्तश्चैवोपदर्शने ।
एवंगुणस्तथाचार्यः सूत्रधारो विधीयते ॥

(अब हम सूत्रधार के गुण बताते हैं—उसके गुण सब शुभ ही शुभ होते हैं। जो सब अवसरों के उपयुक्त वाणी का प्रयोग करना जानता हो, तालों के प्रयोग की विधियाँ जानता हो, चारों प्रकार के बाजे बजाने में कुशल हो, नाट्यशास्त्र के सब कर्मों में कुशल हो, अनेक प्रकार के पाखंड रच सकता हो, नीतिशास्त्र के तत्त्व (अर्थात् उचित-अनुचित) को भली-भाँति समझता हो, वेश्याओं साथ व्यवहार करने में (अनेक प्रकार का वेश बनाने में) तथा कामशास्त्र में चतुर हो, अनेक प्रकार के गीतों का प्रचार अर्थात् विधान जानता हो, कला और भाव का पंडित हो, नाट्य का प्रयोग करने में कुशल हो, अनेक प्रकार के शिल्प जानता हो, पिंगल और छन्दों के विधान जानता हो, सब शास्त्रों का ज्ञाता हो, ग्रहनक्षत्रों के तत्त्व समझता हो, शरीर की सब चेष्टाओं को भली भाँति जानता हो, पृथ्वी, द्वीप, वर्ष, पर्वत और जनता का प्रामाणिक जीवनचरित जानता हो, राजवंश में उत्पन्न हुआ हो, शास्त्र के अर्थ बतलानेवालों की बात भली-भाँति सुनता हो, सुनकर समझता हो, समझकर उसका प्रवचन करता हो तथा उसका प्रयोग करने में समर्थ हो वही आचार्य सूत्रधार कहलाता है।)

आगे सूत्रधार के स्वाभाविक लक्षणों का वर्णन करते हुए भरत कहते हैं—

स्वाभाविकान्गुणाँश्चैव गदतां मे निबोधत ।
स्मृतिमान्मतिमान्धीर उदारः स्थितवाक्कविः ।
अरोगो मधुरः क्षान्तो दान्तश्चैव प्रियंवदः ।
मन्युदोषविनिर्मुक्तः सत्यवाग्दक्षिणः शुचिः ॥
अलुब्धः प्रतिपत्तौ च स्वाभाविकगुणास्त्वमी ।

(आगे में सूत्रधार के स्वाभाविक गुण बताता हूँ। सूत्रधार को मेधावी, बुद्धिमान्, धैर्यवान्, उदार, अपनी बातका पक्का, कवि, स्वस्थ, मधुरभाषी, क्षमाशील, सदाचारी, प्रियवक्ता, अक्रोधी, सत्यवादी, सबको प्रसन्न रखनेवाला, व्यवहार में शुद्ध तथा सम्पत्ति प्राप्त होनेपर भी लोभ न करनेवाला होना चाहिए।)

मंजराज यशोभूषण के रचयिता अभिनव कालिदास ने भी सूत्रधार की परिभाषा का उल्लेख करते हुए कहा है—

आसूत्रयन्गुणान्नेतुः कवेरपि च वस्तुतः ।
रंग-प्रसाधन-प्रौढः सूत्रधार इतीरितः ॥

[जो नाटक के नेता के गुणों और कवि की रचना के गुणों को संक्षेप में एकत्र कर दे सकता हो और रंगमंच के सम्पूर्ण संस्कार में प्रवीण हो वही सूत्रधार कहलाता है ।]

शारदातनय ने अपने 'भावप्रकाशनम्' के नाट्य-प्रयोग-भेद-प्रकार-विशेषनिर्णय नामक दशम् अधिकार में सूत्रधार-शब्द का निर्वचन इस प्रकार किया है—

सूत्रयन्काव्यनिक्षिप्तवस्तुनेतृकधारसान् ।
नान्दीश्लोकेन नांद्यन्ते सूत्रधार इति स्मृतः ॥

[जो व्यक्ति काव्य अर्थात् नाटक में आई हुई कथा-वस्तु, नाटक के नायक तथा नाटक में रसों का रूप नान्दी के अन्त में नान्दी श्लोक के द्वारा समझा देता है वह सूत्रधार कहलाता है ।]

अतः नाट्यप्रयोक्ता के जिन गुणों की सूची ऊपर दी गई है वे सभी गुण नाट्य-प्रयोक्ता में होने ही चाहिए जो दुर्भाग्यवश आजकल के नाट्यप्रयोक्ताओं में देखने को नहीं मिलते । (कविवर श्रीकृष्ण-वल्लभाचार्यस्वामीजीविरचित-श्रीश्वेतायनसंहिता उपर्युक्त विषयों से भरी पड़ी है) ॥

सन्त कवि नानकदेव

श्री त्रिलोचन सिंह बिन्दरा, एम्. ए.

टी. एस. बिन्द्रा निवास, नियर सिविल कोर्ट, सिविल लाइन, होशियारपुर

श्री नानकदेव जी का जन्म १४६९ ई० में, तलबंडी नामक ग्राम में, पटवारी श्री कालूराम खत्री के घर हुआ। इनकी माता का नाम तृप्ता था, सत्रह वर्ष की अवस्था में इनका विवाह बटाला निवासी मूलचन्द खत्री की कन्या सुलक्खना से हुआ। इनके घर श्रीचन्द और लक्ष्मीचन्द नाम के दो पुत्र भी उत्पन्न हुए। नानकदेव जी बालावस्था से ही साधु प्रवृत्ति के थे। इनका किसी नौकरी या व्यवसाय में मन नहीं लगता था। बचपन में इनकी शिक्षा पं. ब्रजनाथ शर्मा तथा मौलाना कुतुबद्दीन के पास हुई। नानकदेव जी को हिन्दी, फारसी तथा संस्कृत का अच्छा ज्ञान था। इनका मन गृहस्थी में नहीं लगा और इन्नोंने देश विदेश का पर्याप्त भ्रमण किया तथा अनेक जैन साधुओं, मुसलमान फकीरों, योगियों तथा सन्तों का सत्संग किया। इस प्रकार से वे बहुश्रुत तथा निजी अनुभव के धनी थे।

श्री नानकदेव जी समय-समय पर जो पद रचते रहे उनका संग्रह होता रहा। फिर बाद में श्री अर्जुनदेव जी ने १६०४ ई० में नानकदेव जी के पदों को अन्य सन्तों के पदों सहित 'श्री गुरुग्रन्थ साहिब' नामक ग्रन्थ में संकलित कर दिया। इस ग्रन्थ में नानकदेव जी की वाणी को रागों के क्रम से रखा है। प्रत्येक राग में वाणी का क्रम इस प्रकार है—(क) सबद (शब्द), (ख) असट-पदीयाँ (अष्टपदियाँ), (ग) छंत (छंद) और (घ) वारां (वारें) यदि किसी राग में 'सबदे' नहीं है, तो असटपदियाँ पहले रखी गई हैं। यदि असटपदियाँ भी नही हैं, तो छंत रखे गए हैं। तीनों नहीं हैं तो वारें ही रखी गई हैं। सबदों, असटपदियों, छंतों और वारों के अतिरिक्त कुछ रागों में कुछ वाणियाँ खास-खास नामों से सम्बोधित हैं, जैसे रागु 'मारू' में नानक जी की विशेष वाणी 'सोलहे' के नाम से विख्यात है।

नानक देव जी की वाणी में आध्यात्मिक पक्ष के अतिरिक्त, सामाजिक तथा राजनीतिक पक्ष का भी वर्णन पाया जाता है। नानक जी ने अपनी वाणी में इन चारों पदों के सम्बन्ध में अपने विचार रखे हैं।

राजनीतिक दृष्टि

संत-कवियों में नानकदेव जी ऐसे कवि थे, जिनकी देश की दुर्दशा के ऊपर पैनी दृष्टि थी। इन्होंने अपनी वाणी में देश की राजनीतिक दुर्दशा का मार्मिक चित्रण किया है। नानक जी ने तत्कालीन राजाओं और उनके कर्मचारियों का चित्रण क्या ही सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया है—

"राजे सीह मुकदम कुत्ते।
जाइ जगाइन बैठे सुत्ते॥
चाकर नहदा पाइन्हि घाउ।
रतु पितु कुतिहो चटि जाहु॥
जिबं जीआं होसी सार।
नकीं वढीं लाइतबार॥"

अर्थात्—इस समय राजागण सिंह के समान हिंसक तथा चौधरी लोग कुत्ते के समान लालची हो गए है। वे सोई हुई प्रजा को जगाकर उसका मांस भक्षण कर रहे हैं। राजाओं के नौकर अपने तीव्र नाखूनों से घाव करते हैं और लोगों का खून कुत्तों (मुकद्दमों) के द्वारा चाट जाते हैं। जहाँ (परलोक में) प्राणियों के कर्मों की छानबीन होगी, वहाँ उन लाइतबारों की नाक काट ली जाएगी। इस प्रकार से नानक देव जी ऐसे पहले धार्मिक सन्त हैं जो राजनीतिक दुर्व्यवस्था को सहन न कर सके और जिन्होंने इसके विरुद्ध आवाज़ उठाई।

सामाजिक दृष्टि

नानक देव जी सामाजिक दृष्टि से भी क्रान्तिकारी सुधारक थे। उन्होंने जाति प्रथा, रूढ़ियों, कुरीतियों, बाह्य आडम्बरों और स्त्री-दुर्दशा के प्रति कबीर जी के समान ही जोरदार आवाज उठाई। जाति-प्रथा के सम्बन्ध में नानक जी ने अपने विचार इस प्रकार से प्रकट किए हैं—

"जाणहु जोति न पूछहु जाती आगै जाति न है॥"

अर्थात् मनुष्य मात्र में स्थित परमात्मा की ज्योति को ही समझने की चेष्टा करो जाति-पाँति के टंटे-बखेड़े में मत पड़ो। यह निश्चित समझ लो कि आगे (वर्णव्यवस्था के निर्माण से पूर्व) कोई भी जाति-पाँति नहीं थी। नानक देव जी ने हिन्दू जाति की उपेक्षित स्त्री जाति को भी गौरव के आसन पर बिठाने का पूर्ण यत्न किया है। उन्हों ने धर्म को बाह्याडम्बरों और रूढ़ियों से मुक्त कराने का प्रयत्न किया। इसीलिए जो व्यक्ति जिस अवस्था में था, उसे उसी स्थिति में ऊपर उठाना चाहा। उन्होंने धर्म के आन्तरिक भावों को ग्रहण करने के लिए बल दिया और उन गुणों को अपनाने के लिए मनुष्य को प्रेरित किया, जिनसे मानवता का कल्याण हो, भ्रातृ भाव बढ़ें, सहृदयता, सहिष्णुता की भावना का प्रसार हो, लोग सत्य, संयम, नियम, दया, लज्जा आदि गुणों की ओर आकर्षित हों। उन्होंने धर्म पर आचरण न करने वाले और प्रदर्शन मात्र करने वाले लोगों की निन्दा की है, जैसे—

"पड़ि पुसतकि संधिआ बादं।
सिल पूजसि बगुल समाधं॥
मुखि झूट विभूखण सारं।"

अर्थात् पुस्तकें पढ़ते हैं, संध्या करते हैं, किन्तु उस संध्या के वास्तविक रहस्य को नहीं समझते। पांडित्य-प्रदर्शन के निमित्त वाद-विवाद में रहते हैं। पाषाण की पूजा करते हैं और बगुले की भाँति झूठी समाधि लगाते हैं। सच्ची समाधि के आनन्द से बहुत दूर हैं। मुख से झूठ बोलकर लोहे के गहने को सोने का दिखाते हैं, अर्थात् झूठ के बल पर बुरी वस्तु को अच्छी बनाकर दिखाना चाहते हैं।

परम पुरुषार्थ

नानक देव जी ने परमात्मा-प्राप्ति ही को जीवन का परम पुरुषार्थ और फल स्वीकार किया है। परमात्मा की प्राप्ति में उन्होंने कर्म, ज्ञान, योग और भक्ति सभी की सार्थकता बतलाई है। नानक देव जी ने अपने मूल मन्त्र अथवा बीजमन्त्र में परमात्मा के स्वरूप की व्याख्या इस प्रकार की है—

"१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ,
निरवैर अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि।"

अर्थात् वह एक है, ओंकार स्वरूप हैं (शब्द अथवा वाणी है), वह सत्य नाम वाला है, करतार है, आदि पुरुष है, भय से रहित तथा वैर से रहित है, वह काल से रहित स्वरूप वाला (मूर्ति) है। वह अयोनि और स्वयंभू (सैभं) है, और उपर्युक्त गुणों वाला परमात्मा गुरू की कृपा से प्राप्त होता है। इसी मन्त्र में एक प्रकार से नानक जी का समस्त आध्यात्मिक सिद्धान्त निहित है।

विचार (क) सृष्टि की सत्यता

नानक देव जी ने सृष्टि-रचना का समय अनिश्चित माना है। उन्होंने सृष्टि को मिथ्या न मानकर सत्य माना है।

सचे तेरे खंड सचे ब्रह्मंड।
सचे तेरे लोअ सचे आकार ।

नानक देव जी के अनुसार सृष्टि की उत्पत्ति परमात्मा के हुक्म से होती है और अन्त में सृष्टि विलीन भी उसी परमात्मा में हो जाती है।

जिसते उपजै तिसते बिनसै।

(ख) माया का स्वरूप

नानक देव जी ने माया को स्वतन्त्र न मानकर परमात्मा के अधीन माना है, उनकी वाणी में स्थान-स्थान पर माया के प्रबल स्वरूप का चित्रण मिलता है। नानक-देव जी ने माया को उस बुरी सास के रूप में माना है, जो जीवात्मा रूपी वधू को पति-परमात्मा से मिलने नहीं देती।

सासु बुरी घरि वासु न देवै,
पिर सिउ मिलण न देइ बुरी।

नानक देव जी ने सत्-संगति, सद्गुरु-प्राप्ति, नाम जप, प्रेमा भक्ति आदि को माया से छुटकाराट पाने के साधन माना है।

(ग) जीवों की अनन्तता

नानक देव जी के अनुसार जीव अनन्त हैं।

तिनके नाम अनेक अनंत।

और उनकी उत्पत्ति परमात्मा के हुकुम से होती है। मायाग्रस्त होने के कारण जीव अनेक योनियों में भटकते रहते हैं और अन्त में साधन-सम्पन्न होकर जीव परमात्मा में ही विलीन हो जाता है—

'तुझ ते उपजहि तुझ माहि समावहिं'।

(घ) अद्वैतभाव

नानक देव जी ने आत्मा और परमात्मा में अभिन्नता मानी है—

आतम महि रामु, राम महि आतमु।

और इसीलिए आत्म को सत्, चित्, आनन्दस्वरूप, अजर, अमर, नित्य तथा शाश्वत माना है। मनुष्य का परम पुरुषार्थ नानक देव जी ने आत्मापरमात्मा के एकत्व दर्शन में ही माना है—

"आतमा परमात्मा एको करै।"

गुरु नानक जी का काव्य

नानक देव जी सन्त पहले हैं कवि बाद में। कविता उनका उद्देश्य नहीं थी बल्कि वह समरथ का परवाना एवं सन्देश पहुँचाने की साधन थी, साध्य नहीं थी। परन्तु फिर भी उनकी काव्य-गगरी में अमितरस एकत्रित हुआ है जो कि किसी भी साहित्य का शृङ्गार हो सकता है। नानक जी की वाणी को प्रबन्ध काव्य के तो अन्तर्गत नहीं रखा जा सकता, परन्तु काव्य के प्रकारों को ध्यान में रखने से उनकी वाणी 'मुक्तक' अथवा 'गीत' के अन्तर्गत आ सकती है। नानक जी के अधिकांश पद भावयुक्त हैं, इसीलिए उनकी वाणी में शान्त, शृङ्गार, करुण, वीर, रौद्र, भयानक, अद्भुत तथा हास्य रसों का समावेश स्वतः हुआ है। नानक जी की वाणी में शान्तरस की प्रधानता है—

'-सबदि रंगाए हुकमि सवाए।
सची दरगह महलि बुलाए।
सचे दीन दइआल मेरे सहिबा.
सचे मनु पतीआ वणिआ॥"

नानक जी के काव्य में शृङ्गाररस के भी दोनों वियोग एवं संयोग पक्ष मिलते हैं जैसे—वियोग पक्ष में—

"नानक मिलहु कपट दर,
खोलहु एक घड़ी खटु माला।"

इसी प्रकार अन्य रसों का भी सुन्दर वर्णन है।

नानक जी की वाणी में रूपकों के प्रयोग का भी बाहुल्य है। और वे प्रयुक्त रूपक कवित्व से पूर्ण हैं। उन्होंने जीवन के साधारण व्यापारों से रूपकों को चुनकर अपूर्व आध्यात्मिकता, सांकेतिकता-और गंभीरता भर दी है। अमृत-रस वाली मदिरा बनाने की प्रणाली नानक जी ने इस प्रकार के रूपक द्वारा अभिव्यक्त की है—

गुडकरि गिआनु, धिआनु करि धावै,
करि करणी कसु पाईए।
भाठी भवनु, प्रेम का पोचा,
इतु रसि अमिउ चुआईए॥"

(परमात्मा के ज्ञान को गुड़ बनाओ, ध्यान को महुआ और शुभ करणी को बबूल की छाल—इन सबको एक में मिला दो। श्रद्धा को भट्ठी और प्रेम को पोचा बनाओ) इस प्रकार अमृतरस वाली मदिरा चुवाओ।

नानक देव जी प्रकृति की गोद में पले थे, इसलिए प्रकृति के प्रति उनका उत्कट प्रेम था। प्रकृति की अनेकरूपता के सहारे उन्होंने परमात्मा की महत्ता बतलाई है। नानक देव जी ने तुखारी राग के बारह माहा में बारहों मासों का हृदयग्राही चित्रण किया है। इस प्रकार नानक देव जी का प्रकृति चित्रण अत्यन्त मोहक और आकर्षक बन पाया है।

नानक देव जी अत्यधिक पर्यटनशील थे, वे जहाँ भी जाते थे, उसी स्थान की बोली में वहाँ के निवासियों को उपदेश देते थे। इस प्रकार से उनकी भाषा खिचड़ी या सधुक्कड़ी हो गई है। नानक जी

की भाषा में पंजाबी बोली के अतिरिक्त खड़ी बोली, व्रजभाषा, रेखता (हिन्दी एवं फारसी का मिश्रण) सिन्धी तथा लहंदा आदि बोलियों का मिश्रण स्पष्ट दीखता है जैसे—

आपि तरै संगति कुल तारै।
भईले उदासी रहउ निरासी।

नानक देव जी ने भाषा को सजीव, भाव पूर्ण और प्रवाह-युक्त बनाने के लिए स्थान-स्थान पर प्रतीकों का सहारा लिया है—

उतरि अवघटि सरवरिन्हावै—अवघटि = विषयों की घाटी एवं सखरि = सत्संग के सरोवर।

नानक जी की भाषा में संगीत के माधुर्य का अद्भुत् प्रवाह है—

"आपे दाना आपे बीना। आपे आपु उपाइ पतीना।
आपे पउणु पाणी बैसंतरू आपे मेलि मिलाई है।"

नानक देव जी ने अपने काव्य में मुहावरों एवं कहावतों का भी स्थान-स्थान पर प्रयोग किया है, जिससे उनकी भाषा की व्यावहारिकता बढ़ गई है। जैसे—

"नानक जो बीजै सो खावणा करतै लिखि पाइआ।"

नानक देव जी की भाषा की अनूठी विशेषता यह है कि उसके वाक्यांश अथवा तुक पंजाब की सामान्य जनता की सूक्तियों के रूप में प्रवेश पा चुके हैं, जैसे—

जेही सुरति तेहा तिन राहु।,
सोचै सोचि न होवई जे सोची लख वार।"

इससे पता चलता है कि नानक देव जी का सन्त कवियों में अपना ही एक अनूठा स्थान है। नानक देव जी के समय में देश की स्थिति राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से पतनोन्मुख थी, ऐसी स्थिति में सन्त नानक देव जी ने काव्यमयी पदों द्वारा लोगों को उपदेश देकर एक युगपुरुष का कार्य किया है। सन्तकवि नानक देव जी का व्यक्तित्व असाधारण एवं बहुमुखी है।

आर्यों के जन्मस्थान विषयक विभिन्न मत

डॉ० कृष्ण लाल, M. A Ph. D., D. Litt.

प्रवाचक, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

आर्य कौन थे ? क्या कभी 'आर्य' नाम की कोई जाति थी ? आर्यों के जन्म-स्थान पर विचार करने से पूर्व स्वाभाविक रूप से ये प्रश्न सम्मुख आते हैं। इन प्रश्नों का कोई निश्चित उत्तर सम्भव नहीं। वैदिक संहिताओं में विशेष रूप से तथा सामान्य रूप से संस्कृत साहित्य में 'आर्य' शब्द केवल सुसंस्कृत, सभ्य व्यक्ति के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। परन्तु फिर भी आधुनिक विद्वानों की समान धारणा के अनुसार 'आर्य' नाम भारोपीय भाषा-परिवार के अन्तर्गत वर्गीकृत भाषाओं (वैदिक, संस्कृत, संस्कृत मूल की भारतीय भाषाएँ, यूनानी, लातीनी, रूसी, स्लाव, जर्मन, फ्रांसीसी प्रभृति) को अब या पहले बोलने वाले लोगों को दिया गया है। इन भाषाओं की कुछ मूलभूत समानताओं के आधार पर यह माना जाता है कि इनके बोलने वाले अवश्य ही कभी एक जाति के रूप में एक साथ रहे होंगे। और इसी कारण बहुत समय से विद्वान् इस प्रश्न का समाधान खोजने में प्रवृत्त रहे हैं कि इस जाति का मूल-स्थान कौन-सा रहा होगा ?

कुछ विद्वानों ने भूगर्भशास्त्र के आधार पर इस प्रश्न का समाधान करने का प्रयत्न किया है। उदाहरणार्थ श्री बालगंगाधर तिलक एवं डी मॉर्गन ने इस जाति के प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद की भूगर्भीय व्याख्या के आधार पर आर्यों का जन्म-स्थान क्रमशः उत्तरी ध्रुव तथा शिविरदेश (साइबेरिया) बताया है। इनके मत का प्रमुख आधार ऋग्वेद में वर्णित दीर्घ रात-दिन और सुदीर्घ उषःकाल है।

पेंका नामक विद्वान् के अनुसार आर्यों का मूल स्थान स्केंडिनेविया है और पोशे के अनुसार यह स्थान जर्मनी होना चाहिए। इन विद्वानों की मान्यता का आधार मानव-शास्त्र है। उनका कहना है कि इन्हीं स्थानों पर हमें शक्तिशाली ऊँचे कदवाली तथा गौरवपूर्ण मूल आर्य जाति प्राप्त होती है।

परन्तु मूल आर्यों की शरीर-रचना का हमारे पास कोई प्रमाण नहीं है। इसके अतिरिक्त भाषा और जाति का सदैव अभिन्न सम्बन्ध नहीं रहता है। जातियाँ बहुत बार अपनी भाषा छोड़कर विदेशी भाषा अपना लेती हैं। अतः इस समस्या का समाधान करते हुए जाति, देव तथा इतिहास की अविच्छिन्नता के परिप्रेक्ष्य में भाषा की समानता का अध्ययन अधिक उपादेय समझा गया।

बेन्फ़े, गाइगर प्रभृति विद्वानों ने यह तर्क प्रस्तुत किया है कि भारोपीय भाषाओं में एशिया के सुपरिचित हाथी, सिंह, बाघ, ऊँट आदि पशुओं के वाचक समान नाम नहीं हैं, अतः आर्यों का जन्मस्थान एशिया में न होकर कहीं यूरोप में होना चाहिए। परन्तु यहाँ यह नहीं भूलना चाहिए कि एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाती हुई जातियाँ नये परिवेश में पुरातन प्रकृति को भूल जाती हैं।

अनेक विद्वानों ने दक्षिणी रूस को आर्यों का जन्म-स्थान बताया है। भारोपीय भाषा-परिवार मुख्य रूप से 'कैंटुम' और 'सतम्' इन दो वर्गों में विभाजित है। इनका मूल आधार यह है कि संख्या १०० के लिए प्रयुक्त होने वाला शब्द एक वर्ग में कण्ठ्य ध्वनि से आरम्भ होता है और दूसरे में तालव्य अथवा दन्त्य (श या स) से आरम्भ होता है। दक्षिणी रूस एक ऐसा मध्य स्थान है जहाँ वह मूल ध्वनि एक

ही रही होगी। परंतु वहाँ से पश्चिम अथवा पूर्व में आर्यों के प्रव्रजन से उस ध्वनि में उपर्युक्त परिवर्तन हुए होंगे। परन्तु इस मत के अपवाद रूप कैंटुम वर्ग की विशेषताओं वाली तोरवारी भाषा का स्थान पूर्व में है। अतः यह भी युक्तिसंगत प्रतीत नहीं होता।

हर्ट महोदय के मतानुमार आर्य जाति का भारत-ईरानी समूह यूरोप से काकेशस को पार करके एशिया में प्राविष्ट हुआ और फिर ईरान में बस कर पंजाब की ओर अग्रसर हुआ।

कुछ विद्वानों ने यहाँ तक कहने का साहस किया है कि तुलनात्मक भाषा-विज्ञान द्वारा पुनर्निर्मित शब्दावली को जितनी निकटता से लिथुआनी भाषा ने सुरक्षित रखा है उतना न तो संस्कृत ने और न ही उससे उद्भूत भारतीय भाषाओं ने। अतः लिथुआनिया ही आर्यों का मूल स्थान होना चाहिए। इसके अतिरिक्त संस्कृत में मूर्धन्य ध्वनियों की उपस्थिति और अन्य भारोपीय भाषाओं में उनके अभाव से भी यही निष्कर्ष निकलता है कि आर्य मूल रूप में भारतीय नहीं थे। परन्तु तथ्य यह है कि मूल ध्वनियाँ सबसे अधिक वैदिक भाषा में सुरक्षित हैं। मूर्धन्य ध्वनियों की व्याख्या भारत के चारों ओर हिमालय आदि में अनार्य जातियों की उपस्थिति और उनकी भाषा के प्रभाव से की जा सकती है।

पूर्वी अनातोलिया में प्राप्त प्रागैतिहासिक मृद्भाण्डों की मक्दूनिया के मृद्भाण्डों से समानता के आधार पर गोत्से नामक विद्वान् ने यह मत प्रस्युत किया कि भारोपीय हित्ती यूरोप से आकर पूर्वी और मध्य एशिया में बस गये। परन्तु यहाँ यह समझ पाना कठिन है कि वे यूरोप के निकट पश्चिम एशिया में ही क्यों नहीं बसे।

ब्राण्डेस्टाइन के मतानुसार प्राचीन भारोपीय शब्दावली से संकेत मिलता है कि आर्यों का मूल स्थान कोई पर्वतपादस्थ घास का मैदान होगा। यह मैदान यूराल के दक्षिण में स्थित पश्चिमोत्तर किरगिज का मैदान हो सकता है। इसी स्थान में प्राचीन भारोपीय शब्दावली के सुपरिचित वराह, भेड़िया लोमड़ी, रीछ आदि पशु पाये जाते हैं। परन्तु इस कल्पना में यह समझ नहीं आता कि भारोपीय भाषा कौन सी भाषा थी और उसका कौन सा साहित्य है जिससे शब्दावली ग्रहण की गई है? निस्सन्देह आर्यजाति का प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद है जिससे उक्त घास के मैदान का कोई संकेत नहीं प्राप्त होता।

कुछेक विद्वानों ने यह भी कहा है कि सीरिया, बोगजकोई आदि की भाषा वैदिक के बहुत समान है। अतः ये भाषाएं समकालीन होंगी। इसके अतिरिक्त ईरानी भाषा वैदिक से अधिक आद्य है, अतः वह वैदिक से पुरानी होनी चाहिए। बोगजकोई से आर्यों का सम्बन्ध ईरान से पीछे हटते हुए हुआ होगा। पामीर का पठार ही वह मूल स्थान होना चाहिए जहाँ से आर्य ईरान और सीरिया में आये। परन्तु वस्तुतः वैदिक में भाषा का रूप सीरिया और बोगजकोई की भाषा से प्राचीन है। इसके अतिरिक्त यह भी सम्भव नहीं प्रतीत होता कि पामीर जैसा ऊसर और विरक्त प्रदेश उत्साही आर्य जाति का जन्मस्थान रहा होगा।

पिक्टेट ने मूल आर्यों का निवास मध्य एशिया में सिद्ध करने का प्रयत्न किया है क्योंकि यह स्थान मूल भारोपीय भाषा से अत्यल्प भेद वाली अवेस्ता और संस्कृत के स्थान के समीपतर है। परन्तु हम देखते हैं कि वैदिक सबसे आद्य भाषा है, अतः आर्यों का मूल स्थान इसके प्रदेश के निकट होना चाहिए।

कार्पेंटर के मतानुसार आर्य भाषाओं के समान शब्दों के अध्ययन से आर्यों के यायावर होने के संकेत मिलते हैं। और मध्य एशिया में कैस्पियन सागर के पूर्वी प्रदेश में यायावर जीवन की परिस्थितियाँ

प्राप्त होती हैं। परन्तु आर्यों को यायावर बताना अत्यन्त प्रमादपूर्ण है क्योंकि समान शब्दों से आर्यों का कृषि-कुशल होना भी सम्यक् सिद्ध है।

मेयर का विचार है कि भारतीय सभ्यता १५०० ई० पू० से आरम्भ होती है। उससे कुछ ही पूर्व भारोपीयों का चित्रण सीरिया की मिस्री मूर्तिकला में हुआ है। तदनुसार सीरिया और भारत के मध्य स्थित ईराक का पठार आर्यों का जन्म-स्थान होना चाहिए। परन्तु भारतीय सभ्यता का जो काल मेयर महाशय ने दिया है, उसे केवल उपहासास्पद ही कहा जायेगा।

आर्यों के बाहर से भारत-प्रवेश के पक्ष में एक तर्क यह भी दिया जाता है कि भारत के मूल निवासी द्रविड़ थे और आर्यों ने उन्हें दक्षिण में धकेल दिया था। परन्तु इसके पक्ष में ऋग्वेद के जो मन्त्र अथवा मन्त्रांश उद्धृत किए जाते हैं, वे महर्षि दयानन्द एवं अन्य विद्वानो द्वारा अन्यथा सिद्ध किए गये हैं। यह बहुत स्पष्ट है कि जिन मन्त्रों के जातियों के वर्णन बताये गये हैं, वे वास्तव में प्राकृतिक वर्णन हैं।

परन्तु उपर्युक्त विद्वानों के इन मतों के विपरीत यह एक रोचक तथ्य है कि प्राचीन भारतीय साहित्य में कहीं भी आर्यों के बाहर से भारत में आने का उल्लेख नहीं है। अतः डा० लक्ष्मीधर के अनुसार यह मानने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए कि आर्य मूल रूप से भारतीय थे और यहाँ से वे इधर उधर बिखर गये और परिवेश के अनुसार रंगरूप और भाषा में परिवर्तित होते गये।

उनका प्रमुख तर्क यह है कि क्योंकि वैदिक में स्वर (उदात्तानुदात्तस्वरित) मूल रूप में सुरक्षित है, अतः भारत ही आर्यों का जन्म-स्थान होना चाहिए। यदि आर्य कहीं बाहर से आये होते तो इतनी सूक्ष्मतापूर्वक स्वरों को सुरक्षित रखना सम्भव नहीं था। अन्य भाषाओं में स्वर इस प्रकार सुरक्षित नहीं हैं।

आर्यों के किसी भी अन्य प्रदेश से पूर्व प्राचीनतम आर्य वाङ्मय वेद की रचना भारत में ही हुई है। यदि आर्य भारत में बाहर से १५०० ई० पू० के लगभग आये होते (जैसा कि यूरोप को आर्यों का जन्मस्थान बताने वाले मानते हैं) तो उसी काल में एकदम वेद जैसे विशाल वाङ्मय का सृजन उनके द्वारा असम्भव था। क्योंकि जैसा कि वे विद्वान् मानते हैं भारत में आते ही उन्हें साहित्यरचना के निमित्त शान्तिपूर्ण समय नहीं मिला—मूलनिवासियों के साथ उनके संघर्ष निरन्तर होते रहे। इसके अतिरिक्त यदि आर्य बाहर से आये होते तो वे भारत में भी अपना कोई पुरातन (बाहर का) साहित्य सुरक्षित रखते। यह कल्पना करना कठिन है कि वेद की रचना करने वाली जाति ने उससे पूर्व सर्वथा किसी साहित्य की रचना न की हो।

विश्व की अन्य सभी आर्य-भाषाओं से तुलना करने पर पता चलता है कि वैदिक भाषा में मूल आर्य भाषा के अधिकतम धातु और अधिकतम शब्दरूप हैं। यह रूपविविधता एवं रूपसमृद्धि केवल उसी मूल स्थान पर सम्भव है जहाँ वह भाषा अविच्छिन्न रूप से निरन्तर अधिकतम जनों द्वारा बोली जाती हो। अतः भारत ही वह मूल स्थान हो सकता है।

वैदिक भाषा में भाषा का आद्यरूप सुरक्षित है, वह केवल मूल स्थान में सुरक्षित रह सकता है—जहाँ अन्य जनों के आकस्मिक आगमन जैसी बाधा उपस्थित न हो। इस स्थिति में यदि हम यह कल्पना करें कि आर्य भारत में बाहर से आये तो यह भी कल्पना करनी पड़ेगी कि वे नितान्त अकेले आये और भारत में नितान्त अकेले रहे। परन्तु मानव इतिहास में यह सम्भव नहीं। साथ ही वेद में भी इस प्रकार के एकाकीपन के संकेतों का अभाव है।

भारत ही आर्यों का जन्मस्थान हो सकता है क्योंकि वैदिक संस्कृत में मध्य एशिया अथवा यूरोप के विदेशी पदार्थों के नामों का अभाव है। वैदिक भाषा में विद्यमान अत्यल्प तथा कथित सैमेटिक शब्दों को सुगमतापूर्वक भारत और बैबिलोनिया के व्यापारिक सम्बन्धों के आधार पर गृहीत शब्द बताया जा सकता है।

हिम, पर्वत, भूर्जपत्र, मधु, वृक्ष, धान, व्रीहि, यव इत्यादि जिन पदार्थों के लिए विभिन्न भारोपीय भाषाओं में समान नाम हैं वे पदार्थ किसी-किसी देश में एक-एक करके दूर-दूर मिलते हैं, एक साथ नहीं। अतः उन देशों में से कोई भी अविभक्त आर्य जाति का सुसंगठित जन्मस्थान नहीं हो सकता। जहाँ पर ये सब वस्तुएँ एक साथ उपलब्ध हों वह स्थान केवल भारत का पश्चिमोत्तर हिमालय का प्रदेश (मैदानों सहित) हो सकता है।

यदि आर्य भारत में बाहर से आये होते तो वेद में कहीं उनके मूल स्थान का उल्लेख अवश्य होता, परन्तु ऐसा नहीं है। इसके अतिरिक्त प्राचीनतम वैदिक सूक्तों में वर्षगणना शीत ऋतु के अनुसार (**शतं हिमाः**) प्राप्त होती है और कुछ परवर्ती सूक्तों में यह गणना शरद् ऋतु के अनुसार है (**शरदः शतम्**)। परन्तु इन दोनों प्रकार के सूक्तों की शैली में कोई अन्तर नहीं। वर्षगणना पद्धति में यह परिवर्तन शैली के परिवर्तन के बिना तथा कालान्तर के बिना यूरोप इत्यादि से आने पर सम्भव नहीं।

'सात' के लिए मितन्नी शब्द **'सत्त'** की व्युत्पति केवल संस्कृत के **सप्त** से सम्भव है, अवेस्ता के **हप्त** से नहीं क्योंकि वह स्वयं **सप्त** से व्युत्पन्न है। इससे यह सिद्ध होता है कि आर्य मूलरूप से भारत में ही थे। बेबीलोन के कस्साइट लोगों में भारतीय आर्यदेवताओं **सूरिअ, मरुत्तस्, वुगुस्** (भग), **इन्दस्** (इन्द्र) के नाम प्राप्त होते हैं। इन्होंने १७६० ई० पू० में बेबीलोन में अपना राजवंश स्थापित किया था। इन्होंने **सिमाली के रूप में हिमालय** की स्मृति सुरक्षित रखी है। इस आधार पर आर्यों का उस काल से पूर्व हिमालय के निकट भारत में होना सिद्ध होता है। इसके अतिरिक्त संस्कृत की एक विशेषता यह है कि भारोपीय परिवार की भाषाओं के जिन शब्दों का परस्पर साम्य नहीं, उनका संस्कृत से साम्य है यथा ट्यूटोनिक **चुनिग**, लिथुआनी **ओज़ी**, लातीनी **उलुकुस्**, यूनानी **पोलिस्** और अवेस्ता **हैज़ा** के लिए संस्कृत में क्रमशः **जनक, अज, उलुकस्, पुरस्** एवं **सदस्** शब्द हैं। इससे सिद्ध होता है आर्यों का मूल प्रदेश संस्कृत का ही मूल प्रदेश भारत होगा।

डॉ० लक्ष्मीधर के मत में यह सम्भव है कि आर्यों को बाढ़ जैसी किसी विपत्ति के कारण अपना मूल स्थान छोड़ना पड़ा होगा। कश्मीर की इस आकस्मिक बाढ़ का विशद वर्णन नीलमत पुराण में हुआ है। शतपथ ब्राह्मण में भी इस बाढ़ का पौराणिक वर्णन है। परन्तु सेमेटिक और ईरानी भाषाओं में इस बाढ़ के जो वर्णन मिलते हैं वे अपूर्ण एवं खण्डित हैं और कहीं से लिए गये प्रतीत होते हैं। अतः कश्मीर के आसपास का प्रदेश ही आर्यों का मूल स्थान रहा होगा।

अविच्छिन्न भारतीय परम्परा के अनुसार भी हिमालय या उसके आसपास का उत्तरी भारत का प्रदेश आर्यों का मूल स्थान प्रतीत होता है। डा० लक्ष्मीधर का कहना है कि भारतीय परम्परा में सदैव उत्तराखण्ड को बहुत पवित्र माना जाता रहा है, **'उत्तरकुरु'** शब्द स्वर्ग के अर्थ में प्रयुक्त होता है।

वेद में सरस्वती के उत्तरी भू-भाग को सप्तसिन्धु कहा गया है। इसकी पुष्टि ईरानी **'हप्त हिन्दू'** से होती है। ऐसी ही मान्यता अविनाशचन्द्र दास की है। उनके अनुसार यह स्थान उत्तर में कश्मीर तक, पश्चिम में गान्धार, दक्षिण में राजपूताना समुद्र एवं पूर्व में (गंगा के मैदान सहित) पूर्व समुद्र

तक विस्तृत था। परन्तु सप्त सिन्धु शब्द ऋग्वेद में आने पर भी यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि इससे भूमि की सात नदियाँ ही अभिप्रेत हैं और वे सात नदियाँ उपर्युक्त प्रदेश की ही सात नदियाँ हैं। स्वामी दयानन्द ने सात नदियों का अर्थ सात जलाशय (चार भूमि के—समुद्र, नदी, कुंआ, तालाब, तीन अन्तरिक्ष के—निकट, मध्य एवं दूरदेशस्थ) किया है (ऋ० १।३२।१२ स्वा० द० भाष्य) उनके अनुयायी अन्य विद्वानों ने सप्त सिन्धु को मन और बुद्धि सहित पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ भी माना है।

डा० लक्ष्मीधर ने ऋ० ८।१९।३७ के मन्त्रांश **सुवास्त्वा अधि तुग्वनि** पर यास्क का भाष्य (नि० ४।१५) **'सुवास्तुर्नदी। तुग्व तीर्थं** भवति। तूर्णमेतदायन्ति।' उद्धृत करते हुए सुवास्तु को आधुनिक भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तरी सीमाप्रान्त का तीर्थ स्वात बताया है।

अन्त में डा० लक्ष्मीधर के अनुसार 'आर्यों की भाषा में रूपों की विविधता, जनजाति-जीवन, जातीय देवता, अग्नि के द्वारा पूजाविधि, सूर्योपासना को देखते हुए शीत एवं काष्ठ-समृद्ध हिमालय ही इन सबका आधार हो सकता है।

कुछ अन्य विद्वानों ने परम्परा और जनश्रुति के आधार पर भारत के मध्यदेश (स्थाण्वीश्वर) तथा कजंगल (राजमहल की पहाड़ियाँ) और हिमालय तथा विन्ध्य के बीच का प्रदेश अथवा आर्यावर्त (उत्तर भारत) को ही आर्यों का आदि स्थान माना है।

सार रूप में यह कहा जा सकता है कि यद्यपि आर्यों के मूल स्थान के रूप में भारत का कोई एक स्थान निश्चित न किया जा सके, तथापि इतना अवश्य कहा जा सकता है कि समस्त रूप में वह स्थान भारत ही हो सकता है क्योंकि यहाँ ही प्राचीनतम आर्य भाषा एवं संस्कृति की अविच्छिन्न धारा प्रवाहित होती रही है।

'स्वामी श्रीजी'

श्री सहजानन्दपादपांसवो विजयन्तेतमाम्

डॉ० नारायण भगत, वेदान्ताचार्य वाचस्पति D. Litt.

श्री अक्षर पुरुषोत्तम मन्दिर, अक्षर भवन, मुंबई

सर्वेषामवताराणामुद्गमं परमं गुरुम् ।
वन्देऽहं सहजानन्दं गीतं वेदैरनारतम् ॥

अस्मिन्संसारे अनेके जीवा जायन्ते म्रियन्ते च परन्तु तस्यैव जननं सार्थं यो लोकेभ्यः किमपि नवीनं समप्यं अन्येषां कल्याणेन सह नैजमपि कल्याणं विधत्ते ।

परमवन्दनीया विद्वत्तल्लजाः श्रीकृष्णवल्लभाचार्याः तेषु अनन्यतमं स्थानं निर्वहन्ति इति कथनं न स्तावकं किन्तु सर्वथा तथ्यमेव ।

अहन्तु मन्ये सर्वावताराणामवतारिणा भगवता श्री पूर्णपुरुषोत्तमेन स्वामिनारायणसैद्धान्तिक-तत्त्वज्ञानस्य प्रचाराय प्रसाराय च श्रीकृष्णवल्लभाचार्याणां जननमकारि, नोचेत्कथं उपमानहीनत्वं ज्ञाने अस्यायास्यत् । अनेकवासनावेष्टितो जीवः स्वोत्पत्तिकालावच्छेदेनैव कषायैः कलुषितः सन् महामोहान्धकासारे निपत्थ मायापाशेन निगडितो निःश्रेयसपथं परित्यज्य विषयविषरूपान् भोगानेव भुंक्ते, इति सर्वेषामनुभवसिद्धम् ।

पुत्रलक्षणानि दोलायां प्रतिभान्ति इति लौकिकाभाणकं सफलीकुर्वन् श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः खेलार्हे बाल्यकाले एव लौकिक सम्पत्तिपूर्णं गृहं निजपितरौ सम्बन्धिनश्च परिहाय ब्रह्मपरब्रह्मज्ञाननिधिसद्गुरुवर्यश्रीबालमुकुन्ददासस्वामिपदाम्भोजं संश्रित्य परमपावनीं कषायक्लेशविपाटनदम्भोलिसमां श्रीस्वामिनारायणीयदीक्षां समाश्रित्य ज्ञानसंवर्धकं कमपि विलक्षणं तेजःपुञ्जं समलभत । लघीयसा कालेनैव प्राथमिकं सूरगव्यध्ययनं सम्पाद्य निजगुरूणामाशीर्बलेन भगवतः श्रीस्वामिनारायणस्य प्रेरणया च गिरिजेशपुरीं वाराणसीमलङ्कृतवान् अनुपमवैदुष्यार्थम् । तत्र बहुकालं वसतिं विधाय तार्किकसार्वभौम-पण्डितप्रकाण्डश्रीवामाचरणभट्टाचार्यप्रभृतीनांचरणसरोजच्छायायां नव्यन्यायप्राचीनन्याय वैशेषिकसांख्ययोगप्रभृति तन्त्राणि स्वशेमुषीप्रभावेण करतलीकृत्य दार्शनिकपञ्चाननषड्दर्शनाचार्यादीन् महतः उपाधीन् सर्वकारोपहारीकृतान् सम्प्राप्य न्याय सिद्धान्तमुक्तावलितर्कसङ्ग्रहयोरुपरि तत्त्वावबोधपूर्णे विद्वच्छात्रयोग्ये किरणावलिनामिके टीके वीतन्य संस्कृतसमाजस्य महान्तमुपकारं व्यधात् अत्र भवान् । १९३५ इस्वीये वत्सरे स्वामिनारायणसिद्धान्तानुगं वेदान्तसारनामकं पुस्तकं रुद्रसंख्याप्रकरणैः परिपूरितं स्वोपज्ञं प्रकाशीकृत्य न केवलं वेदान्तानुगानां किन्तु सर्वसम्प्रदायानां कृतेऽपि वरस्वरूपमेव ।

अत्रप्रथमे प्रकरणे द्रव्यादिलक्षणानां निरूपणं विधत्तं विद्यते । द्वितीये प्रकरणे कालादीनां प्रतिपादनं कृतमस्ति । तृतीये प्रकरणे जीवदेहेन्द्रियप्राणप्रभृतीनां सुपरिष्कृतं सम्यङ निरूपणं विहितमस्ति । चतुर्थे प्रकरणे ईश्वरनिरूपणं विधाय हिरण्मयादीनां परिष्कृतं स्वरूपं प्रदर्शितमस्ति । पञ्चमे प्रकरणे सविभागं मुक्ततत्त्वं प्रतिपाद्य तेषां निवासस्थानं सेवाप्रकारं च दर्शितवान् । षष्ठे सप्तमे च प्रकरणे ब्रह्म-

परब्रह्मणोर्निरूपणं सर्वसुगमं सम्पाद्य लेखकः स्वकीयलेखन्याः कौशलं ख्यापितवान्। अन्तिमे प्रकरणे नारायणमहेशयोरनन्यत्वं प्रदर्श्य विपरीतवासनावतामज्ञानपटलं समूलघातमजीघनत्।

इस्वीये वत्सरे १९३९ तमे श्रीमत्पतञ्जलिमहर्षिप्रणीतयोगदर्शननामके महाग्रन्थे श्रीकृष्णवल्लभाचार्यस्वामिनारायण भाष्यं भोजवृत्तौ 'किरण' टीकां च वितेने। भाष्यग्रन्थस्य कलेवरं ३२४ पृष्ठैः परिवृंहितमस्ति। योगशास्त्रस्यानुत्तमे भाष्यग्रन्थे बहूनां विषयाणां निबन्धनं कृत्वा योगस्य परमोत्तमं रहस्यं ग्रन्थकृत् ख्यापितवान्।

आर्हतमतचार्वाकमतबौद्धमतानामाक्षेपपुरस्सरं कृत्वा खण्डनं स्वसिद्धान्तं प्रातिष्ठिपत्।

प्राधान्येन पदार्थतत्त्वात्मवादबन्धवादप्रमाणवाद भक्तिप्रकार ब्रह्मपरब्रह्मभेदप्रकारान् महता विस्तरेण प्रतिपादितवान्। आत्मन एकत्वं वेदान्तिमतेनोपस्थाप्य तस्य खण्डनं अचीकरत्। विभिन्नमतीयं बन्धानां स्वरूपं प्रदर्शितवाँश्च।

वशीकरणवैराग्यम् अपरवैराग्यभेदान् विदेहमुक्ति सम्प्रज्ञातभेदान् असम्प्रज्ञातभेदान् योगिभेदात्समाधिभेदान् निरूप्य प्रेमभक्तिश्रवणभक्तिस्मरणभक्तिकीर्तनभक्तिअर्चनभक्तिवन्दनभक्तिदास्यभक्तिसख्यभक्तिविशेषाणां सम्पङ्क्तया विश्लेषणं सम्पादितवान्।

३२२ तमे पृष्ठे ततः क्लेशकर्मनिवृत्तिः इति सूत्रव्याख्यायां जीवन्मुक्तेः स्वरूपं 'न ह वै सशरीरस्य प्रियाप्रिययोरपहतिरस्ति' इति पूर्वपक्षमुपस्थाप्य दुःखात्यन्तनिवृत्ति परममुक्तिस्वरूपमुपपाद्य दुःखनिदानात्यन्तोच्छेदिका गौणीभूता जीवन्मुक्तिरियं परममुक्तिद्वारभूतेति निरूपितवान् भाष्यकारः।

अनन्तरं च 'तदा सर्वावरणमलापेतस्य ज्ञानस्यानन्त्याज्ज्ञेयम्।' इति सूत्रेण जीवन्मुक्तस्य पुरुषस्य कषायाणां विनशनं प्रदर्शितवान्।

भोजवृत्ति किरणटीकायां ग्रन्थकारेण दुरूहाणां विषथाणां स्फुटीकरणं मतिकौशलेनविहितमस्ति इति स्फुटमेव तद्ग्रन्थाध्येतृणां विदुषाम्।

अखिलभूमण्डलीयसाम्प्रदायिकमुक्तिव्यवस्थानामक ग्रन्थो मनुसंख्यकैः प्रकरणैरूपबृंहितवान् श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः।

तत्र प्रथमे प्रकरणे भगवतोऽवतारधारणप्रयोजनं प्रदर्श्य अंशावतारावेशावतारविभूत्यवतारपूर्णावतारपरिपूर्णावताराणां परिष्कृतं स्वरूपं प्रदर्शितवान्। पर्यन्ते च भगवतः स्वामिनारायणस्य अनेकैः चमत्कारैः पूर्णावतारित्वं निरूप्य धामाधिपतित्वं प्रातिष्ठिपत्।

द्वितीये प्रकरणे चतुर्दशलोकानां वर्णनं सप्रमाणमुपस्थाप्य पौराणिकपद्धत्यनुसारेण द्वीपवर्णनं विधाय अष्टावरणानां निरूपणं सविस्तरं प्रकटीकृत्य स्वामिनारायणोपासना आवरणभङ्गकारिणीति निजगाद।

तृतीये प्रकरणे प्रथममुक्तेः स्वरूपमुपपाद्य तेषां मूलप्रकृतौ अथवा तत्कार्येषु लयं प्रतिष्ठाप्य सहस्रं त्वाभिमानिकाः बौद्धाः दश सहस्राणि—इति वायुपुराणस्य प्रमाणं स्वविषयपुष्टयै उपस्थापितवान् ग्रन्थकृत्।

चतुर्थे प्रकरणे द्वितीयमुक्तेः स्वरूपमुपपाद्य तेषां लयं चिदाकाश उपपाद्य आर्हतमतीयां मुक्तिमुपदर्श्य च वेदनारायणसम्प्रदायावलम्बिनामपि विराट्पुरुषे लयं सम्पादितवान्।

पञ्चमे प्रकरणे तृतीयमुक्तिस्वरूपमुपपाद्य भैरवादिलोके गमनं तेषां भवतीति निश्चिकाय।

यावतामपि चिदाकाशे लयमुपपाद्य तत्समानोपासकानामपि तादृशेषु लोकेषु विलयनं सप्रमाणं व्यातनोत्।

एवं विभिन्नमुक्तिस्वरूपाणि निगद्य चतुर्दशे प्रकरणे आत्यन्तिक मुक्त्युपायं नैष्ठिक ब्रह्मचर्यं ब्रह्मनिष्ठसत्पुरुषसमागमञ्च निगद्य मायिकसुखविनाशपूर्विकामात्यन्तिकां मुक्तिं निबबन्ध दार्शनिकचक्रचूडामणिः श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः।

'विशिष्टाद्वैतेऽपि विशिष्टब्रह्माद्वैतत्वम्' इति महानिबन्धे स्वामिनारायणसिद्धान्तानुगं परमं सिद्धान्तं संग्रथ्य स्वामिनारायणानुगानां महतीमुपकृतिं सम्पादितवान्। तत्र 'न वा अरे सर्वस्य कामाय सर्वं प्रियं भवति किन्तु आत्मनः कामाय सर्वं प्रियं भवत्यादिश्रुतिभिः विशिष्टाद्वैतं श्रुतिस्मृतितर्कप्रमाणादिसर्वसहं सुसमञ्जसं तत्वमपृथक्सिद्धसूक्ष्मस्थूलचिदचित्तनुकमेकमेवाद्वितीयं ब्रह्मेति निरवद्यं सम्मतम्' 'सन्मूलाः सौम्येमाः प्रजाः' 'यतो वेमानि भूतानि जायन्त येन जातानि जीवन्ति यत्प्रयन्त्यभिविशन्ति' 'तत्सृष्ट्वातदेवानुप्राविशत्' इत्यादि वेदवाक्यैश्च इदं निश्चिकाय।

अग्रे च आचार्यवरः

जीवात्मानः, माया, ईश्वराः, ब्रह्म, परब्रह्मेति पञ्चतत्त्वानि स्वामिनारायणसिद्धान्तानुगामीनि श्रुत्यादिसिद्धानि उज्जग्राह। तत्र जीवात्मनां विभिन्नानि स्वरूपाणि नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानाम्' इत्यादिना प्रदर्शयामास।

'अजामेकां लोहितशुक्ल कृष्णां बह्वीः प्रजाः सृजमानां सरूपाः' इति निगमवाक्येन मायायाः स्वरूपं दृढी चकार। 'तमीश्वराणां परमं महेश्वरम्' 'सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपाद'। ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति' इत्यादि श्रुतिस्मृतिवाक्यैः ईश्वराणां स्वरूपं निबबन्ध।

'यदक्षरं वेदविदो वदन्ति तदाहुरक्षरं ब्रह्म सर्वकारणकारणम् विष्णोर्धाम परं साक्षात्पुरुषस्य महात्मनः' 'एतद्धयेवाक्षरं ब्रह्म एतद्धेयवाक्षरं परम्' 'एतद्धयेवाक्षरं ज्ञात्वा यो यदिच्छति तस्य तत्' 'परा यथा तदक्षरमधिगम्यते' 'तथाऽक्षरात्संभवतीह बिश्वम्' 'यः सर्वज्ञः स सर्वविद् यस्य ज्ञानमयं तपः 'यदर्चिमदणुभ्योऽणु यस्मिंल्लोका निहिता लोकिनश्च तदेतदक्षरं ब्रह्म' इत्याद्यनेकैर्विभिन्नोपनिषद्वाक्यैः' अक्षरस्य प्रतिष्ठापनं व्यधात्। एतस्यैवाक्षरस्य प्रशासने गार्गि सूर्याचन्द्रमसौ विधृतौ तिष्ठतः' इत्यादिनाऽक्षरस्य सर्वाधारकत्वं प्रशासकत्वञ्च न्यबध्नाच्च।

'अथातो ब्रह्मजिज्ञासा' इत्यत्र ब्रह्मशरीरकं परब्रह्म प्रस्तुतमस्ति। आनन्दमयोऽभ्यासात्' 'आनन्दमात्रकरपादमुखोदरादि' 'यः सर्वज्ञः स सर्वविद' 'यो वेत्ति युगपत्सर्वं प्रत्यक्षेण सदा स्वतः' 'अपहतपाप्मा विजरो विमृत्युर्विशोको विजिघत्सोऽपिपासः सत्यकामः सत्यसङ्कल्पः' 'उत्तमपुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः' 'अन्तर्बहिश्च तत्सर्वं व्याप्य नारायणः स्थितः' 'यः स्वभक्तेभ्यो रमते स मे सर्वस्वम्' 'स काल कालो गुणी' 'य एषोऽन्तरादित्ये हिरण्मयः पुरुषो दृश्यते हिरण्यश्मश्रुः हिरण्यकेशः आप्रणखात् सर्वस्व सुवर्णस्तस्य यथा कप्यासं पुण्डरीकमेवाक्षिणी' इत्यादि श्रुति स्मृतिसन्दोहैः परब्रह्मणः स्वरूपमुपपाद्य यद् बद्धं तज्जीवतत्वं 'बन्धनात्मकं मायातत्वम्' 'अनयोरधिष्ठातृदेवतासाक्षिमुक्तैश्वर्यायुधांशाद्यात्मकेश्वरतत्वम्। एतत्त्रयं सर्वदाऽक्षरब्रह्मणा ओतं प्रोतं च भवतीति स्थूलसूक्ष्मचिदचिद्विशिष्टमक्षरब्रह्मैव परब्रह्मणः शरीरभूतं तदेब जगज्जन्मादिकारणं भवतीति परब्रह्मणः स्वरूपं प्रतिपाद्य विशिष्टाद्वैतेऽपि बिशिष्टब्रह्माद्वैततत्वं निरचैषीत् आचार्यवरः। किञ्च श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः चतुर्भिरध्यायैर्गुणातीतोपनिषदं विरचय्य अक्षरोपासनाया परमं सिद्धान्तं गुरुपरंपरागतं प्रकटीकृत्य 'अस्मिन् सम्प्रदाये एकमेवाऽद्वितीयम्' इति वाक्यस्य सफलत्वं व्यतानीत्।

न्यायसिद्धान्तमुक्तावल्यां किरणावली—तर्कसंग्रहकिरणावली—न्यायबोधिनीपदकृत्ययोष्टिपणी—योगसूत्रस्वामिनारायणभाष्यं—सांख्यतत्वकौमुदीकिरणावली—स्वामिनारायणवेदान्तसारः—

हितोपदेशमित्रलाभकिरणावली—शिक्षापत्री—किरणावली—श्रीगुणातीतानन्दस्वामिवार्ता—शिक्षापत्री—अखिल भूमण्डलीयसम्प्रदाय—मुक्तिव्यवस्था—तत्वप्रभावली ख्याति—विमर्शः प्रमात्वविमर्शः जातिविमर्श-वचनामृत प्रामाण्यहेतवः सूत्राणि च श्रुतितात्पर्यनिर्णयः साकारत्वनिर्णयः श्रीहरिस्वरूपनिर्णयस्य सत्सङ्ग-भाष्यम् सुधासिन्धोर्ब्रह्मरसायनभाष्यम्—अवतारावतारित्वे पुराणादिवचनानि, चित्सुखी टिप्पणी, कवि-काव्यगौरवम्, तत्वमुक्ताकलापनायकरसकिरणावली प्रभृति ५५ ग्रन्थानां निर्माणं विधाय संस्कृतसमाजस्यैव न अपि तु सगस्तस्य भूमण्डलस्य वाचामगोचरं परमोपकारं सम्पाद्य श्रीकृष्णवल्लभाचार्यो न भूतो न भविष्यतीति वाक्यमन्वर्थमचीकरत्।

गुणिगणगणनारम्भे निपतति कठिनीमुसंभ्रमाद्यस्य।
तेनाम्बा खलु सुतिनी चान्याः तन्नामधारिण्यः॥

वाचस्पतिमहानिबधे यदायदा मूढमतिरभवम् तदातदा एतेषां परम कृपालूनां साक्षात्परंपरया पत्रप्रेषणद्वारेण च मामकीनमन्धकारमस्तमितं कृत्वाऽपरिमितं साहाय्यम्मेऽदुः श्री आचार्यचरणाः। अतस्तेषामधमर्णोऽहं आजीवनं प्रत्युपकर्तुम समर्थोऽहं केवलमनेन लेखेन मामकीनां जिह्वां पावनीं कृत्वात्मानं धन्यं मन्ये। अस्मिँल्लेखे आगतास्त्रुटयो भवेयुस्ताः सर्वाः क्षमेरनिति प्रार्थनां प्रणामांश्च कृत्वा विरमामि।

हेयप्रत्यनीककल्याणगुणनिधिः श्रीजीमहाराजः सर्वावताराणामवतारी श्रीगुणातीतानन्दस्वामी अनादिमूलाक्षरमूर्तिरस्ति इति स्वामिनारायणभगवतः सिद्धान्तरहस्यज्ञानं श्रुतिस्मृतिप्रभृत्यनेकैः प्रमाणै-र्निरूप्यविपरीतवासनावासिनामज्ञानपटलं दूरीचकार श्रीकृष्णवल्लभाचार्यः।

भगवान् सहजानन्द एतेषां नैरुज्येन सह दीर्घायुष्ट्वं कृत्वा सम्प्रदायस्य पुष्टिः स्वसम्प्रदायसम्बन्धि-ग्रन्थैरेवे भवतीति सिद्धान्तानुसारेण सत्साहित्यादिना उत्कृष्टां सेवां विदध्युः श्रीआचार्यचरणाः इति भगवन्तं सहजानन्दं भूयो भूयोऽभ्यर्थये।

ग्रन्थग्रन्थिविभेदकान् बहुविधान् सम्पाद्य रम्यान् भवान्,
ग्रन्थान् भाष्ययुतान् सुसारमहितान् किन्नो चकारावनौ।
आचार्यं मुनिपुङ्गवं गुरुगुणं श्रीकृष्णनामार्चितम्
नत्वाहं हृदयेन सद्गुरुवरं जिह्वां च कुर्वेऽमलाम्॥

सुधासिन्धोः ब्रह्मरसायनभाष्यस्य भूमिका

वेदान्ती स्वामी श्री चिदानन्दपुरी, न्यायाचार्य-वेदान्ताचार्य

शान्तिकुंज, जि० बाँकुरा, ताजपुर, बंगाल

अस्य ग्रन्थस्य २६२ तरंगाः सन्ति, तरंगेषु प्रधानतया विषयाः मोक्षतत्साधनात्मकाः, तत्र विषयविभागोऽस्ति मूलत एव महद्भिः कृतः। परावाणीविभागोऽपि ग्राह्यो भवति वेदवत्, चमत्कारान्वितवचनामृतानुशीलनवतां तत्तदभ्यासाधिक्येनाऽऽध्यात्मिकसन्तोषोभवत्येव, सुधासिन्धुरयं प्रेमलक्षणाभक्तिं प्रतिजनान्प्रेरयति, सदाचारपरायणान् करोति ज्ञानविज्ञाननिष्णातान् सम्पादयति, वैराग्यान् उत्पादयति, भागवतधर्मात्मिका भक्तिरत्र पुष्टिं प्रयाति, आत्यन्तिककल्याणमपि प्रददाति। सुधासिन्धुर्भागवतधर्ममाहात्म्यज्ञानविषयवैराग्यपराभक्तीरुपदिशति, चतुष्टयसमन्वयोऽत्र श्रीस्वामिनारायणपरमात्मना सर्वजीवहितावहः कृतोऽस्ति।

अत्र सतां समागमं पृथक्-पृथक् स्थितानि संख्यया मिलितानि त्रयस्त्रिंशद्वचनामृतानि प्रतिपादयन्ति। भगवति वृत्तिरक्षणं पृथक्-पृथक् स्थितानि मिलित्वा चतुर्दशसंख्याकानि वचनामृतानि कारयन्ति। भगवद्ज्ञानप्रतिपाकानि नवसंख्याकानि विद्यन्ते। भगवति प्रीत्यर्थपराणि षड् विद्यन्ते। भगवन्माहात्म्यबोधकानि पञ्चदश भवन्ति। भगवन्निश्चयकारकाणि एकोनविंशतिः सन्ति। सर्वविधसमज्ञप्तिप्रदानि द्वासप्ततिर्वचनामृतानि सन्ति। आत्मज्ञानप्रदानि पञ्चदश भवन्ति। भक्तपक्षबोधप्रदे तु द्वे एव स्तः। भगवदुपासनाशिक्षकाणि नववचनामृतानि सन्ति। विषयखण्डनकराणि षट् सन्ति। वासनाविवेचकानि अष्टसंख्याकानि भवन्ति। मानेर्ष्यादिविवेचकानि सप्त सन्ति। सत्संगे वर्धकानि ह्रासकानि च सप्तदश सन्ति। सांख्ययोगज्ञानप्रदानि चत्वारि सन्ति। वेदान्तप्रक्रियापराणि अष्ट भवन्ति। सम्बन्धिषु स्नेहस्य निषेधकानि त्रीणि सन्ति। प्रतिलोमवृत्तिकराणि षट् सन्ति, नियमाऽऽज्ञापालनकारकाणि पञ्चसन्ति। वैराग्यस्वरूपबोधकानि चत्वारि सन्ति। एतानि संघशो द्वाषष्ट्यधिकानि द्वेशतेचेति २६२ संख्याकानि वर्तन्ते। तेषां ब्रह्मरसायनं भाष्यम्, सर्वदर्शनविषयगर्भकं भवति। ग्रन्थोऽयं प्रश्नोत्तरात्मको निबद्धोऽस्ति। एकविंशत्यधिकानि षट्शतानि प्रश्नोत्तराणि भवन्ति। एतादृशोऽयं वेदनिभो ग्रन्थः, २६२ उपनिषदात्मको ब्रह्मविद्यामयोऽस्ति, ब्रह्मरसायनभाष्यकर्ता विद्वत्सार्वभौम—पण्डित श्रीकृष्णवल्लभाचार्यो विद्यतेऽभिनन्दनपात्रोत्तम इति। पण्डितप्रवरोऽयं ज्ञानसागरोऽस्ति, तत्त्ववेत्ता चास्ति, सर्वविधन्यायज्ञोऽस्ति, सर्वतत्त्वकारणद्वारकार्यमतिको भवति। तत्त्वस्वरूपज्ञो वर्तते। दार्शनिकोऽयं विद्वान् आस्तिकनास्तिकसमस्ततर्काऽर्णवो वर्तते। यस्याऽविदितं किमपि नास्तीति नाऽतिशयोक्तिं मन्ये। स्वयं श्वेतायनो व्यासो व्यासावतारो भगवदतार इति नाऽस्याऽऽल्पज्ञयं विद्यते। सोऽयं जगदुद्धारकृत् अवतीर्ण इति।

अनेन श्रीसत्संगभाष्यं 'मानवो भगवान् धामगः, धामगो भगवान् मानवः, उभयश्चैक एव, दिव्यस्तदात्मक इति सगुणः साकार इति सर्वाकारो दिव्याकार इति च प्रतिपादितं सर्वोपासकानां हितकरज्ञानप्रकाशकरम्। अतः सर्वप्रत्यक्षदर्श्ययं प्रतिभाति। अनेन 'सर्वं साक्षादि'ति साक्षात्कारसूत्राणि रचितानि, अतः सर्वसाक्षाद्द्रष्टा भवतीति। साक्षी यः सोऽयमपि भवतीति। योग्यमेतत् दिव्यविभूतिपुरुषस्य। व्यासस्याऽर्जुनस्य च दिव्यचक्षुर्मत्त्वमिवाऽस्यापि भवतीति सर्वज्ञ इति सः। सोऽयमेतादृङ्महाभाष्यविधाता भगवानिति तु निःसन्देहं भवति। नाऽत्राऽधिकं वक्तव्यम्॥ अस्य ग्रन्थाऽध्ययनेनाऽपि सर्वज्ञकल्पाभविष्यन्तीति भारतोपकारी प्रभुरयं साधुर्विजयते॥ इति।

THE AUTHENTICITY OF THE *UTTARAKĀṆḌA* OF VALMĪKI'S *RĀMĀYAṆA*

By

JAGANNATH AGRAWAL

Head of Department of Sanskrit, Punjab University, Hoshiarpur.

Eminent Western scholars like Alfred Weber,[1] H. Jacobi[2] and M. Winternitz[3] have held the *Uttarakāṇḍa* of Vālmīki's *Rāmāyaṇa* as spurious and a later addition. This view seems to be based on two arguments: (1) Rāma is represented in this book as a divine being, an incarnation of Viṣṇu, and (2) "the thread of the narrative is frequently interrupted, and numerous brahmanical myths and legends are inserted" Both these arguments are neither so weighty nor conclusive as to force the conclusion arrived at. In the *Uttarakāṇḍa* one comes across little talk about Rāma as an incarnation of Viṣṇu, and it is only in the last canto of this book that Rāma is identified with Viṣṇu, and he is invited by a divine voice to merge himself in his own lustrous form. However, we still find that upto the last he is regarded as a human being, who leaves this mortal world by entering into the waters of the Sarayū. So far as the legends contained in this book are concerned they are a logical necessity for the proper completion of the poem, and cannot be dubbed as interruptions to the narrative. If we examine the *Uttarakāṇḍa* in the light of authentic ancient literary tradition, we shall find that far from being spurious, this book constitutes an integral part of the Rāmāyaṇa, which bereft of this, would remain incomplete. We must remember that the sixth book close with the coronation of Rāma, after his return to Ayodhyā, having vanquished the demon king Rāvaṇa. A number of important events, which form an inseparable part of the Rāma story, sueh as the exile of Sitā, the birth of Lava and Kuśa, the performance of the *Aśvamedha* sacrifice and the ultimate union of Rāma with his sons, will remain untold.

A study of Kālidāsa's *Raghuvaṃśa* makes it crystal clear than he had before him a text of the *Rāmāyaṇa* in whieh the seventh book was its integral part. The first thirty-four cantoes of the *Uttarakāṇḍa* give an account of the origin, rise and

---

1. *Uber* das *Rāmāyaṇa.*
2. *Das Rāmāyaṇa, Geschichte und Inhalt.*
3. *A History of Indian Literature,* vol. I, 495 f.

fall of the demon kings. Kālidāsa has specifically referred to this fact and has even assigned a reason for its inclusion. He says :

सभाजनायोपगतान् स दिव्यान् मुनीन्पुरस्कृत्य हृतस्य शत्रोः।
शुश्राव तेभ्यः प्रभवादिवृत्तं स्वविक्रमे गौरवमादधानम् ॥[1]

"Having honoured the divine sages who had come to felicitate (him) he heard from them, the account of the origin etc. of the foe who had been slain, which imparted weight to his own prowess". This is what we actually find in the very beginning of the *Uttarakāṇḍa*, where the sages headed by Agastya narrate to him the origin and rise of the demon race. Now, an account of the prowess and glory of the demons who were ultimately slain by Rāma, obviously tends to enhance the prestige of Rāma. It has been well said by Daṇḍin, the rhetorician, that an account of the merits of the foil, tends to enhance the greatness of the hero :

वंशवीर्यश्रुतादीनि वर्णयित्वा रिपोरपि।
तज्जयान्नायकोत्कर्षवर्णनं च धिनोति नः ॥[2]

The account of Kālidāsa in the *Raghuvaṃśa*, closely follows the narrative of the *Uttarakāṇḍa*. Both tell us about the departure of distinguished guests and allies who had come for Rāma's coronation, and in the sequence we find Rāma inquiring from Sītā, about her heart's desire. In her reply she expresses a wish to visit the scenes of their previous exile. In both the works, news is brought to Rāma about the people talking critically about Sītā's sojourn in Laṅkā, and the consequent resolve of Rāma to exile Sītā. Abandoned by Lakṣmaṇa in the forest, she finds shelter in Vālmīki's hermitage. In canto XV of the *Raghuvaṃśa*, Kālidāsa tells us about the menace of the demon Lavaṇa, persecuted by whom the sages repair to Rāma for help. Śatrughna is sent to punish the demon.

On his march he makes a halt at the hermitage of Vālmīki. The same night Sītā gives birth to the twins. Śatrughna proceeds to Mathurā and kills the demon Lavaṇa. The next incident in both the works relates to the penance of Śambūka, which causes the untimely death of a Brāhmaṇa's son, and Rāma kills the Śudra ascetic who had infringed the time-honoured law of *Varṇāśramadharma*. The next event described both in the *Raghuvaṃśa* and the *Uttarakāṇḍa* is the letting loose of the horse by Rāma for the performance of the *Aśvamedha* sacrifice. While the sacrifice is in progress, there arrive the two sons of Rāma—Lava and

1. *Raghuvaṃśa*, XIV, 18.
2. *Kāvyādarśa*, I, 22.

Kuśa—reciting Vālmīki's composition, the *Rāmāyaṇa*. At the request of Rāma, the sage Vālmīki, comes to the court accompanied by Sītā, to show to the people that all doubts regarding her conduct were false and baseless. Kālidāsa, expresses in forceful language, the following oath of Sītā :

वाङ्मनःकर्मभिः पत्यौ व्यभिचारो यथा न मे ।
तथा विश्वंभरे देवि मामन्तर्धातुमर्हसि ॥[1]

"As I have not been unfaithful to my husband, in word, mind or deed, so O goddess—the sustainer of the universe, it behoves you to bear me in."

This verse of Kālidāsa is almost identifical with the following verses from the *Uttarakāṇḍa* :

यथाहं राघवादन्यं मनसापि न चिन्तये ।
तथा मे माधवी देवी विवरं दातुमर्हति ॥
मनसा कर्मणा वाचा यथा रामं समर्चये ।
तथा मे माधवी देवी विवरं दातुमर्हति ॥
यथैतत् सत्यमुक्तं मे वेद्मि रामात्परं न च ।
तथा मे माधवी देवी विवरं दातुमर्हति ॥[2]

"As I do not think of a person other than Rāma, even in mind, so it behoves the goddess earth, to grant me a chasm (to enter). As I worship Rāma with mind, act and word, so it behoves the goddess earth to grant me a chasm. As it is my truthful assertion that I do not know anyone other than Rāma, so it behoves the goddess earth to grant me a chasm."

The use of the words यथा and तथा both by Vālmīki and Kālidāsa shows, that this oath of Sītā as worded by Vālmīki was universally known in India in the time of Kālidāsa, so that even that verstile poet stuck to the popular expression. It may be reasonably inferred, therefore, that in the time of Kālidāsa, the *Uttarakāṇḍa* was undoubtedly regarded as a genuine part of the *Rāmāyaṇa*.

That Kālidāsa drew upon the *Rāmāyaṇa* for writing his epic poem, is undoubtedly clear from his own remarks as embodied in the following verse :

अथवा कृतवाग्द्वारे वंशेऽस्मिन्पूर्वसूरिभिः ।
मणौ वज्रसमुत्कीर्णे सूत्रस्येवास्ति मे गतिः ॥

"Or rather, I can effect entry into this (mansion in the form of the race of Raghu) in which an entrance has been made by the poets of yore by means of the

1. *Raghuvaṃśa*, xv, 81.
2. *Rāmāyaṇa Uttarakāṇḍa*, 97, 15-17.

muse, like the thread in a gem which has been perforated by a jewel-perforating needle." Here, Kālidāsa is evidently speaking of Vālmīki, under the general appellation of 'Poets of yore'. Mallinātha, the learned commentator of Kālidāsa's works, remarks in this context as follows :

पूर्वैः सूरिभिः कविभिर्वाल्मीक्यादिभिः ॥

That explains the close correspondence between the narratives as contained in the XIV and XV cantoes of the *Raghuvaṃśa* and the *Uttarakāṇḍa* of the *Rāmāyaṇa*.

Some three hundred years after the time of Kālidāsa, another great poet, Bhavabhūti who flourished in the eighth century of the Christian era, has also incorporated in his famous drama, the *Uttararāmacarita* several incidents of the *Uttarakāṇḍa* such as the longing of Sītā to visit the scenes of their early exile her calumny and consequent banishment, the killing of Śambūka by Rāma, etc. Bhavabhūti, has expressly stated in the following verse, that his work is a dramatised version of the story composed by the poet who was conversant with the Supreme Spirit :

पाप्मभ्यश्च पुनाति वर्धयति च श्रेयांसि सेयं कथा ।
माङ्गल्या च मनोहरा च जगतो मातेव गङ्गेव च ॥
तामेतां परिभावयन्त्वभिनयैर्विन्यस्तरूपां बुधाः ।
शब्दब्रह्मविदः कवेः परिणतां प्राज्ञस्य वाणीमिमाम् ॥

"This narrative cleanses the sins, and augments blessings. It is auspicious and charming like the Ganges, the mother of the universe. Let the learned honour this same mature utterance of the wise poet conversant with the Supreme Spirit, cast in the form of theatrical actions."

Here again, we find Bhavabhūti declaring in unequivocal language that the subject matter of his drama has been largely drawn from the *Rāmāyaṇa*. As the incidents narrated in the *Uttararāmacarita* are found in the *Uttarakāṇḍa* only, it means it was regarded as a genuine part of Vālmīki's work.

Lastly, we cannot ignore the fact that Vālmīki had been commissioned by Brahmā to write a complete history of Rāma.[1] If we omit the *Uttarakāṇḍa*, then several important events, such as the banishment of Sītā, the killing of Śaṃbūka, the performance of the *Aśvamedha*, which are very well known facts are left out

1. Cf. रामस्य चरितं कृत्स्नं कुरु त्वमृषिसत्तम ।
Rāmāyaṇa, I, 2, 32

and the *Rāmāyaṇa* cannot be described as रामस्य कृत्स्नं चरितं—the complete narrative of Rāma, as its author had planned it to be.[1]

I am very glad to learn that a Felicitation Volume is being presented to Svami Krishnavallabhacharya, a deep scholar of Sanskrit and the author of a good number of works and commentaries in Sanskrit. This is a step in the right direction, for it has been said, "All honour where honour is due." It is moreover the tradition of this land of the Bharatas to honour its learned—सरस्वती श्रुतमहतां महीयताम्.

I wish a long and fruitful life to the Vaishnava scholar.

P.O. : Purhiran,
Distt. : Hoshiarpur, (Punjab)
16-5-'76.

Jagannath Agrawal
Retired Reader in the Departments of Sanskrit and Ancient Indian History, Culture & Archaeology.
Punjab university, Chandigarh.

---

1. It may also be stated that verses purporting to show that the *Rāmāyaṇa* ends with the sixth book, are not genuine. The following two verses may be taken as typical instances.

आदिकाव्यमिदं चार्षं पुरा वाल्मीकिना कृतम् ।
यः शृणोति सदा लोके नरः पापात् प्रमुच्यते ॥

This statement is obviously not of Vālmīki himself but of a later writer. Vālmīki himself could not have described his work as archaic, nor could he have stated that it was written in olden times (पुरा).

The second verse identifies Rāma with Viṣṇu.

रामायणमिदं कृत्स्नं शृण्वतः पठतः सदा ।
प्रीयते सततं रामः स हि विष्णुः सनातनः ॥

In this verse Rāma is expressly described as an incarnation of Viṣṇu. So this is also a later addition.

THE NEW PHILOSOPHY OF TIME

By

Shrimati Soma Mirza

My revered father Karmayogi J.L.K. Jalali has given the world a new philosophy of Time, a new interpretation of Space, and defined Matter, subjecting the last to change, changing change or what may be called incessant change, and the small book *The Triad of Time Space and Matter* propounds this philosophy in the context of the Shri Bhagvat Kala Sahasranama Stotram in Sanskrit. Shri M.B. Shah's pilgrimage to Kashmir on a Holy mission of acquainting people and securing opinions and commendations of great personages on the occasion of the presentation of an *Abhinandan Grantha* to the great Saint and Scholar Swami Shri Krisna Vallabhacharya ji, has invited this contribution to that Grantha. While speaking of the great service Shri Krishna Vallabhacharyaji has rendered to the cultural and philosophical world by his four dozen lucubrations in Sanskrit and a few in Hindi and Gujrati, and the intimate scholarship he has displayed in treating almost all the aspects of Vedanta philosophy and the Ṣaḍ-darshanas, a scholarship of not only a high order but bordering on versatility, one feels tempted and so do I that I should speak of and write on a subject which should invite scholars and savants to think of making an effort to give up for a while the commonly trodden path, and cross over into a new field, "pastures new" and enjoy a pleasurable walk on Boulevard going round the shores of Finite-Infinity and ultimately leading to that Blissful Beatitude, called by hitherto unfamiliar name of Infinite-Infinity.

After all what is that Philosophy. The great religions of the world, the philosophies of and current on this terrestrial globe, have left nothing untouched, unprobed. To be told that there is something new excites and certainly must excite, curiosity and interest. The Triad batters all the parochial and sectional barriers of separatism, and in the modern political philosophy of our India is Secular, and presents one universal field of immense dimensions where there is no distinction of caste or creed, sex or age, and where the faithite and the agnostic, the orthodox and the unorthodox, the Believer and the non-believer are equally received, warmly welcomed and entertained to rich repast of universality, brotherhood and mutualism without discrimination of high and low, colour and

paint, personal hobbies and crotchets, and asked to see for themselves that they are all converted to One Faith, One Belief and One Oneness.

Karmayogi Jalali talks of Kāla (Time) as the one God of all—a God, who is seen, visualised and realised in His Physical Form, and to understand Whose Non-Physical Form one has to make a little effort. And this Form would appeal to the Man of the World, who has been taught all these ages to believe in an Unknown God, impalpable, beyond human understanding, understandable. This Physical form is called Bhautika (or Material) and the Non-Physical is said to be a-bhautika; or better they are known as *Dravyātmaka* and *Adravyātmaka*. And the Bhagvat-Kāla-Sahasranāma expounds these forms in simple terms and simple language. For the purpose of common understanding in understandable language, the author of the Triad has given us a simple physical representation (on Page 107 of the Triad) of Matter, Space and Time. The five elements of Earth, Water, Fire, Air and *Ākāsha* are and compose the whole Matter, which has been defined in terms of the Earth with a defined radius. Earth and other elements have been represented as Spheroids, concentric and enveloping, the Earth being the smallest round which goes the Water Spheroid, which in turn is covered by the Fire Spheroid, the Air enveloping this Fire spheroid and in turn being covered by the ākāsha. Beyond ākāsha is *Kham* or Space which covers all these spheroids. And the whole is enveloped and covered by Tima (Kāla).

The five elements, which are called *Basicals* are the only indestructible elements, which form and compose the whole Matter, and this Matter is subject to change, infinitestimal change, but change which is recurrent, incessant and unstopping. And this change is responsible for the diversity that we see, for the non-similarity between any two so-called similar things, for distinction, discrimination and dissimilarity in Man himself, in sentients, in non-sentients, and all. Nothing is destroyed, everything only undergoes change, change in a second, in a millionth of a second, in a trillionath of a moment. And this Matter experiences this change wrought by Time acting through Space for there is nothing if there is no Time.

What is the position of Man in this Matter, the Material, physical world ? Yes, he is given a limited field, which has been so well expressed by the simile of a lion, who is made the master of a forest of 100 kilometres with every sort of game provided, a master of all he surveys. In this forest, which is fenced by a 50 metre mesh-wire, the lion roams and wanders. One day he thinks of surveying

his forest field, and comes upon the fencing. Beyond that fencing he finds other land, a wider expanse, and in the consciousness of being the lord of the forest, wants to jump over the fence and see for himself what there is beyond and whether he can count himself as master of that too. He jumps, once, twice but only bruises his paws and then returns crestfallen to his lair. He realises he is master of the given field and in that too be is guided and under the supervision and command of some Unknown Power. Man is the highest of the species, and he has been so made that he himself does not and cannot know how he has been made, and how he is led, guided, inspired to act and behave. It is all unintelligible and ununderstandable. Nobody has known and nobody will know it.

The Triad believes in the Day-and-Night Chaturyugī, and divides the twenty-four hours into Satya, Tretā, Dvāpara and Kali. But the wonder is that these four Yugas have been so described as give even Kali or the Iron Age the characteristics of "Tamas in action, Self-Withdrawal, Test and Trial" and attributes no dark designs or abrupt fall from Truth as generally believed. The Satya begins at 2.30 in the night and is followed by Tretā at 10 A.M., which in turn is succeeded by Dvāpara (or Copper Age) at 4–30 P.M., the Kali winding up the round (10 to 2.30), the process being incessant and interminable. And for Man there is no disappointment or discouragement, dismay or frustration, provided he "regulates" himself and knows that whatever has eome into being is and has been by the Will of That Supreme Power, Kāla (Time). He has to know that he is a dependent agent and is activated to act or not to act by a Power which is beyond the ken of Intellect and Knowledge, and that things happen, cannot but happen because the Triad is incessantly acting in which Man has no hand, and the results produced are not within the mental compass of Man. He has only to submit and surrender.

The Triad confirms the attributes of Sattva (harmony), Rajas (Activity) and Tamas (Inertia) in Matter, which vary in different degree and dimension in the five Basicals of Earth, Water, Fire, Air and ākāsha, the last possessing the highest percentage of Sattva, while the Earth does that of Tanas (inertia). And these attributes are responsible for the variety of creation, moveable, immovable (apparently so, for in fact there is nothing as immovable, which is a relative calculation and representation) sentinets, non-sentients, visible or invisible. And these *guṇas* (attributes or qualifications) give Matter a cohesiveness and cohesion that produces order and balance.

In short the Philosophy of Time (Kāla) is a positive philosophy and a philosophy of faith and optimism. It only wants Man to act and behave as Man knowing full well that within his limited field he has to be answerable for every action he does and as such he has to so behave as to make the world an abode of world-brotherhood, of universalism and Mutualistic Responsibility, and not be a mere machine of money-minting cupidity, which sacrifices every good thought, intention and act at the altar of mechanic self-comfort, self-convenience to the detriment of fellowship, fraternalism and citizenship of the terrestrial globe. How to behave, how to know the Reality, the Truth, the Supreme Power is what the Triad teaches. And with the author of the Triad, I also say Kaloham (I am Time).

VEDIC CONCEPT OF MĀYĀ AND ITS LATER DEVELOPMENT

By

Dr. B. B. Chaubey

Lecturer, VVBISGIS, Punjab University, Hoshiarpur.

In Indian Philosophy the word *Māyā* has been used as a technical term conveying the sense of 'illusion'. In Vedic texts it occurs very frequently in many declensional forms such as *Māyām, Māyaya, Māyābhiḥ,* and so on. However, these words in the Vedic texts, do not seem to have been used in the sense of 'illusion' as we find in the Indian philosophical texts. The concept of *Māyā* as 'illusion' is definitely a later development. An attempt, therefore, is being made in this paper to discuss what original sense the word *Māyā* conveyed in the Vedic texts and how it later developed into a philosophic concept conveying the sense of illusion :

In the ṚV., the oldest literary monument of the world, the word *Māyā* seems to have been used in the sense of 'occult power', and it is applied both to the gods and to the demons. When it is applied to the former it is in good sense and when to the latter it is in a bad sense.[1] Skandasvāmin, Veṅkaṭa Mādhava, Sāyaṇa and other Indian commentators usually render the word *Māyā* by *Karma*[2] 'action' or *Prajñā*[3] 'intution' when it is applied to the Gods, but by *Kapaṭa*[4] 'cunning', 'guile' or *vañcanā*[5] 'deception' when it is applied to the demons. The apparent opposite rendering of one and the same word does not make bother a student of

---

1. Macdonell : *'Vedic Mythology'*, Strassburg, 1897, p. 24.

2. मायाः कर्मनामैतत्—Sā. on ṚV. X. 5. 3; 9; मायया कर्मणा—Sā. on ṚV. IX. 73. 5; 9; Veṅkaṭa on ṚV. I. 160, 3; IV. 30. 120.

3. माया प्रज्ञा । प्रज्ञावन्तो देवाः अस्य सोमस्य मायया प्रज्ञया—sā. on ṚV. IX. 83. 3; देवानां मायासु प्रज्ञामेव एतां मन्यन्ते—Sā. on ṚV. X. 88. 6; मायया स्वप्रज्ञानेन—Sā. on ṚV. X. 85. 18; माया प्रज्ञा—Veṅkaṭa on ṚV. III. 61. 7; मायाभिः प्रज्ञाभिः—Skanda on ṚV. VI. 63.5; माया प्रज्ञा—Uvaṭa on Yv. XI. 69; प्राणवतो मायां प्रज्ञां मीयते ज्ञायते अनया माया प्रज्ञा—Mahīdhara on Yv. XIII. 44.

4. मायिनं नानाविध कपटोपेतम्—Mudgala on ṚV. I. 11.7; मायिनं कपटवन्तम्—Mudgala on ṚV. V. 30.6.

5. मायाविनं स्यं तं प्रसिद्धं वञ्चयितारम्—Mudgala on ṚV. I. 80.7; मायाः शठप्रज्ञा—Skanda on ṚV. I. 117.3; मायाभिः वञ्चनाभिः—Sā. on ṚV. X. 147.1.

philology, for he very well knows that changes in the meanings of the words often take place due to the various reasons. Here the change in the meaning of the word *Māyā* from 'occult power' to 'cunning' or 'deception' is a case of degradation; a word originally giving a good sense might he used as giving a bad sense when the word is applied to the bad thing.

The divine dominion of the Gods is referred to with the word *Māyā*. Varuṇa is the most powerful deity with whom the word *Māyā* is very frequently associated Varuṇa's *Māyā* is so great that nobody can resist it. Through his *Māyā* he standing in the air, measures out the earth with the sun or with a measure (ṚV. V. 85.5). His *Māyā* rests in the heaven wherefrom the sun shines, rain comes (ṚV. V. 63.4). It is the *Māyā* of Mitrā Varuṇā that causes the sun to travel at many places (ṚV. III. 61.7), with the *Māyā* of Parjanya Mitrāvaruṇā cause heaven to pour down rain (ṚV. V. 63.3). Riches come through the *Māyā* of Mitrāvaruṇā (ṚV. I. 151.9). They are said to have guarded the ordinances through *Māyā* (ṚV. V. 63.7). The epithet *Māyin* is mainly applied to Varuṇa among the Gods (ṚV. VI. 48.14; VII. 28.4; X. 99.10; X. 147.5). Indra is also associated with *Māyā*. His heroic deeds are performed by his *Māyā*. It is the *Māyā* of Indra by which he surrounds the river Paruṣṇī (ṚV. IV. 30.12). With his *Māyās* he is said to have destroyed the demons (ṚV. viii. 14.14). Like Varuṇa the epithet *Māyī* has been applied to Indra also (ṚV. X. 99.10; X. 147.5). He killed Vṛtra by his *Māyā* (ṚV. VI. 22.7). The epithet *Māyinaḥ* is also applied to the Maruts (ṚV. I. 64.7; V. 63.2). The Maruts are called *Sumāya* (RV. I. 88.1). They clothe heaven with the clouds with their *Māyā* (ṚV. V. 63.6). The Ṛthus are said to have measured out the heaven and earth with their *Māyā* (ṚV. I. 159.4). They obtained their share in the sacrifice with their *Māyās* (ṚV. III. 60.1). Agni purifies the Universe with his *Māyā* (ṚV. I. 160.3). Tvaṣṭṛ is said to have prepared cups by his *Māyā* for gods for their drinking of Soma (ṚV. X. 53.9). The epithet *Māyinī* is applied to Vāk (ṚV. IV. 48.1). By their *Māyā* the Aśvins are called *Māyinā* (VI. 63.5), *Māyāvinā* (ṚV. X. 24.4). They rule over all by their *Māyā*. To produce fire was thought of as a work of wisdom ; Aśvinā produced it going together ; hence, they were Māyāvinā. Dyāvāpṛthivī or the Araṇī (two fire-sticks) produced the fire ; hence they were *Māyinī* (ṚV. X. 5.3). Pūṣan is said to protect the *Māyā* (ṚV. VI. 58.1). It is the *Māyā* of gods that Agni becomes chief in the night and sun in the morning (ṚV. X. 88.6). With the *Māyā* of Soma all the Gods are Māyāvins. They get their power from the draught

of Soma (ṚV. IX. 83.3). They are called *Māyinaḥ*. Earthly sacrificers are also called *Māyinaḥ* (ṚV. IX. 73.4; V. 44.11).

As we have already stated the epithets *Māyinaḥ* and *Māyāvinaḥ* are applied also to demons in general, and *Māyinam* and Māyāvinam to Vṛtra, Namuci, Śuṣṇa and so on individually in particular. With demons, whether in collective or in individual, *Māyā* means 'cunning', 'guile', deception, etc. Men of evil crafts are *Māyin* (ṚV. 1. 39.2) or *Durmāyu* (ṚV. III. 30.15). The demons use their *Māyā* against the gods (VII. 104.24) but they cannot overcome the primal and firm ordainments of the gods (ṚV. III. 56 1) On the contrary, the *Māyā* of the Gods is powerful. Indra with his *Māyā* destroys the demons who are *Māyinaḥ* (ṚV. I. 80.7). He destroyed the animals of the Māyāvins (VII. 3.19). *Māyavins* give up their *Māyās* before Indra (ṚV. III. 38.7). The adjective *adevī*[1] 'demoniac' or 'imgodly' has been applied to the *Māyā* of the demons. Everywhere Indra is said to have destroyed the demoniac *Māyā* of the demons. He is invoked to undo the Māyā of the enemies (ṚV. VI. 45.9) and take the thunder in his right hand to throw away their all Māyās—(ṚV. VI. 18.9; 22.9). He destroyed all the Māyās of greedy Śuṣṇa (ṚV. VI. 20.4). He checked and stayed the Śuṣṇa's wiles and magic (ṚV. V. 31.7). Having drunk of the pressed soma he baffled the *Māyās* of the demons (ṚV. II. 11.10); having overcome the *Māyās* of the *Māyāvins* be gave life to the sun, the dawn, and the heaven (I. 32.4). He destroyed the Māyās of Pipru (ṚV. X. 138.3) Vṛtra (ṚV. X. 111.6) and other Dasyus (ṚV. X. 73.5). After overcoming the *Māyās* of the demons he won soma (ṚV. VII. 48.5). Both Indra and Viṣṇu together destroyed the Māyā of the Vṛṣaśipra in the battle (ṚV. VII. 99.4). Varuṇa himself as a *Māyin* destroys the *Māyās* of the demons (ṚV. VIII. 41.8). Agni is also said to have conquered the demoniac *Māyā*. He is invoked to burn the *Māyins* (ṚV. VIII. 23.14). Aśvins freed the sage Atri with his people baffling the *Māyās* of the Dasyu (ṚV. I. 117.3). Soma (Indu) is said to have undone the *Māyās* of his foe (VI. 44.22). The river Sarasvatī is invoked to cast down those who scorn the gods and the brood of every Bṛṣaya skilled in *Māyic* arts (VI. 61.3).

In the Ṛgveda 'assuming various forms' too seems to be one of the most important function of *Māyā* and in this form it is applied both to the most power-

1. प्रादेवीर्मायाः सहते दुरेवाः—ṚV. V. 2.9 ; इमे नरो वृत्रहत्येषु शूरा विश्वा अदेवीरभि सन्तु मायाः—ṚV. VII. 1.10.

ful gods as well as to the most cunning demons. Indra[1] assumes form after form effecting *Māyic* changes in his body (ṚV. III. 53.8). He takes various forms by *Māyā* (ṚV. VI. 53.18). Indra is above all the *Māyās* of the demons (V. 44.2). The sun and the moon move one after the other by their *Māyā* (ṚV. X. 85.18). Dūṣan assumes various forms one bright and other dark like day and night dissimilar in colour through *Māyā* (VI. 58.1). It is the *Māyā* through which Agni assumes various forms—head of the world as fire in the night and as sun in the morning.

It is the *Māyā* through which demons assume many guileful forms. Vṛtra through his *Māyā* once assumed the form of a deer to deceive Indra[2]. He had beset the waters through his *Māyā* (ṚV. V. 30.6). A demoness was torturing men through her *Māyā* (ṚV. VIII. 104.24).

The word *Māyā* in the sense of 'illusion' which is definitely a later development, seems to have been used by a Vedic seer in a passage wherein it is said that 'O Indra, waxing in body when thou wast roaming telling thy might among the people all which they called thy battles was 'illusion'; thou didst find foe neither now nor before'.[3] Commenting on this verse Sāyaṇa renders the word *Māyā* by *Mṛṣā* 'untrue', 'illusion'.[4] In another stanza of the tenth Maṇḍala it is said that 'he who does not know the meaning of speech wanders with illusion thereof like a sterile cow which is simply an illusion of

---

1. रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव तदस्य रूपं प्रतिचक्षणाय ।
इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते युक्ता ह्यस्य हरयः शता दश ॥ (ṚV. VI. 47.18)
प्रतिरूपः प्रतिगतो रूपैः इन्द्रः ।··· किञ्च इन्द्रः मायाभिः प्रज्ञाभिः पुरुरूपः बहुरूपः ईयते गच्छति ।
—Skanda on ṚV. VI. 47.18
इन्द्रः कर्मभिः बहुरूपः गच्छति इति ।—Veṅkaṭa Mādhava on ṚV. VI. 47.18.
नानाविधं रूपं भावयति भवति स्वाम् तनुं परितः मायाः कुर्वन् । याभिर्जनान् मोदयति ता माया उच्यन्ते ।
—Veṅkaṭa Mādhava on ṚV. III. 53.8.

2. यद्धत्यं मायिनं मृगं तमु त्वं माययावधीः··· ।—ṚV. I. 80.7.
मृगम् मृगरूपमापन्नम् तम् वृत्रम् ।—Mudgala on ṚV. I. 80.7.

3. यदचरस्तन्वा वावृधानो बलानीन्द्र प्रब्रुवाणो जनेषु ।
मायेत्सा ते यानि युद्धान्याहुर्नाद्य शत्रुं ननुपुरा विवित्से ॥—ṚV. X. 54.2.

4. हे इन्द्र तन्वा शरीरेण स्तोत्रेण वा वावृधानः वर्धमानः जनेषु प्राणिषु बलानि प्रब्रुवाणः वृत्रवधादिरूपाणि सामर्थ्यानि प्रकर्षेण कथयन् अचरः इति यत् संचारं कृतवानिति यदस्ति ते तव सा गतिः मायेत् मायैव । मृषेत्यर्थः । किञ्च यानि युद्धानि शत्रुविषयाणि आहुः ब्रुवते पुराविद ऋषयः तान्यपि मायैव ।
—Sāyaṇa on ṚV. X. 54.2.

a cow.[1] A sterile cow, as a matter of fact, is an illusion. It appears as a cow but virtually it is not the cow as such because it does not give milk.[2] A man desirous of milk when goes to that cow he is deceived. This example, of illusioned speech to some extent, may be regarded as identical to that of a serpent in arope as Śaṅkarite Vedāntins most generally use. The speech is only illusion to him who does not know the meaning thereof. The rope is there but it cannot be used for any purpose as long as there is a serpent due to illusion of the seer (draṣṭā). Simillarly the speech is there but it cannot give the desired fruit as long as its meaning is not understood. A rope can be utilized only after knowing that it is not serpent but a rope. Similarly the speech can be proved fruitful only when its meaning is clearly understood.

While commenting on a stanza[3] of the tenth Maṇḍala of the ṚV. Sāyaṇa describes *Māyā* as comprising of three *guṇas* (Triguṇātmikā)—*Sattva, rajas* and *tamas*, and associates it with the none-attributed *Brahman.*[4] When *Brahman* is associated with Māyā, he is called Jivātman. Actually, there is no difference between *Paramātman* and Jivātman. The wise ones realize the identity of the two in their hearts. Thus they attain the great *Brahman* who is *saccidānandasvarūpa.* The whole universe rests in him. From the fact that only the *Brahman* is true this idea might have come that all the universe but *Brahman* is 'illusion', 'untrue'. In the ṚV. I. 164.46, it is stated that the ultimate reality is one; the sages call it by various names.[5] All plurality is, as a matter of fact, different verbal expression.

---

1. अधेन्वा चरति माययैष वाचं शुश्रूवां अफलामपुष्पाम् ।—ṚV. X. 71.5.
2. एष अविज्ञातार्थः पुरुषः अधेन्वा धेनुत्वविवर्जितया कामानामदोग्ध्र्या देवमनुष्यस्थानेषु वाक्प्रतिरूपया मायया चरति ।'''यथा वन्ध्या पीना गौः किं द्रोणमात्रं क्षीरं दोग्धीति मायामुत्पादयन्ती चरति यथा वन्ध्यो वृक्षोऽकाले पल्लवादियुक्तः सन् पुष्यति फलतीति भ्रांतिमुत्पादयंस्तिष्ठति तथा पाठं प्रब्रुवाणः चरतीत्यर्थः ।

—Sāyaṇa on ṚV. X. 71.5.

3. पतङ्गमक्तमसुरस्य मायया हृदा पश्यन्ति मनसा विपश्चितः ।
समुद्रे अन्तः कवयो वि चक्षते मरीचीनां पदमिच्छन्ति वेधसः ॥—ṚV. X. 177.1.
4. असुरस्य असनकुशलस्य सर्वोपाधिविहीनस्य परब्रह्मणः संबन्धिन्या मायया त्रिगुणात्मिकया अक्तं व्यक्तमभिव्यक्तम् । '''मायया अक्तं जीवरूपेणाभिव्यक्तमात्मानं विपश्चितो वेदान्तभिज्ञा हृत्स्थेनान्तर्मुखेन मनसा पतङ्गम् । पतति व्याप्नोतीति पतङ्गः परमात्मा । तं पश्यन्ति । 'उपाधिपरित्यागेन जीवात्मनः परमात्मना तादात्म्यं साक्षात्कुर्वन्तीत्यर्थः । अपि च ते कवयः क्रान्तदर्शिनो वेदान्ताभिज्ञाः समुद्रे । समुद्द्रवन्त्यस्मादभूतानीति समुद्रः परमात्मा । तस्मिन्नधिष्ठानभूतेऽन्तर्मध्ये सर्वं दृश्यजातमध्यस्तत्वेन विचक्षते विपश्यन्तीति । अतो दृश्यतिरिक्तस्य सर्वस्य मिथ्यात्वाद्वेधसो विधातारस्ते मरीचीनां वृत्तिज्ञानानां पदमधिष्ठानभूतं सच्चित्सुखात्मकं यत्परं ब्रह्म तदेवेच्छन्ति । तच्चखप्राप्तिमेव कामयन्ते ।--Sāyaṇa on ṚV. X. 177.1.
5. इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान् ।
एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः ॥—ṚV. I. 164.46.

In the Puruṣa Sūkta (ṚV. X. 90) the whole universe is said to be Puruṣa alone.[1] There again it is clearly stated that all universe is equal to Puruṣa; nothing exists which is beyond the Puruṣa. However, the reverse equation is not possible. It cannot be said that Puruṣa is equal to the universe for He is even beyond the universe.[2]

The concept of *Māyā* as *tamas* which metaphorically means 'ignorance' though certainly a later concept, may be seen in its germ form in the Ṛgveda. The Svarbhānu, a demon, is said to have spread his *Māyā* in the form of darkness beneath the sun. Indra with his power and Atri with the power of his sacred *Mantra* removed the *Māyā* of the demon (ṚV. V. 40.6; 8) and disclosed the sun concealed therein.

The word *Māyi*, besides having the similar sense,[3] seems to have taken a new concept in the Atharvaveda. Here *Māyā* assumes a mythical personality and she belongs to the demon-class. How did Māyā become associated with the demons is described in a form of myth in the Atharvaveda, as follows : 'She (virāj) ascended ; she came to the *Asuras* (demons); the *Asuras* called to her : O Māyā come, of her Virocana son of Prahrāda was young; the metal-vessel was vessel; her Dvimūrdhan son of Ṛtu milked; from her he milked 'illusion' (Māyā); that illusion the *Asuras* subsist upon; one to be subsisted on becometh he who knoweth thus :[4] From this statement of the Atharvaveda it is also clear that *Māyā* was born of *Māyā*. The Atharvaveda at another place clearly states that *Māyā* was born of *Māya*.[5] The snakes are said to have assumed wondrous forms by the *Māyās* of

---

1. पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् ।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥—ṚV. X. 90.2.

2. स भूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ।—ṚV. X. 90.1.
एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पुरुषः ।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥—ṚV. X. 90.3.

3. AV. vii. 81.1 (cf. ṚV. X. 85.18); AV. viii. 2.3 (cf. ṚV. VI. 58.1). etc.

4. सोदक्रामत्सासुरानागच्छत्तामसुरा उपाह्वमन्त माम् एहीति ।
तस्या विरोचनः प्राह्रादिर्वत्स आसीदयस्पात्रं पात्रम् ।
तां द्विर्मूर्द्धात्स्यौधोक्तां मायामेवाधोक् ।
तां मायामसुरा उपजीवन्त्युपजीवनीयो भवति य एवं वेद ।
—AV. VIII. 10[4] 1-4.

5. बृहती परि मात्राया मातुर्मात्राधि निर्मिता ।
माया ह जज्ञे मायाया मायाया मातली परि ॥—AV. VIII. 9.5.

Assuras (AV. VI 72.1) The sick and healthy persons are said to drink the medicinal preparation (*Mantha*) putting on as magic the form of the two Aśvins (AV. II. 22.6). Luck is invoked to obtain winning stakes in the gambling by *Māyā* (AV. IV. 38.3). Carbuncle (*Maṇi*) is supposed to ward off all magic effects done by the demons (AV. XIX. 27.5).

In the Śukla Yajurveda Saṁhitā, the word *Māyā* occurs almost in the same sense as that in the Ṛgveda and the Atharvaveda. Agni is praised not to destroy the *Māyā* of Varuṇa (YV. XIII. 44). Uvaṭa and Mahīdhara render Māyā as *Prajñā*. Mahīdhara says that *Māyā* is so called because through it a thing is known.[1] *Ukhā*, a sacrificial pot, personified as a goddess, is said to have made *Māyā* with food.[2] Assuming various forms is also said to be the function of Māyā in the Yajurveda.[3]

In the Śatapatha Brāhmaṇa *Māyā* is said to have been produced by the gods. Śatapatha says : 'Now Soma was in the heaven and the gods were here on earth. The gods desired 'would that Soma might come to us; we might sacrifice with him when come. They produced those two 'illusions' (*Māyās*) viz. Suparṇī and Kadru. Suparṇī for sooth was *Vāk* (speech) and Kadru was this earth. They caused discord between them.'[4] The story told in the Atharvaveda about how did Māyā become associated with the demons, is further developed in the Śatapatha Brāhmaṇa. The Śatapatha says : The *Asuras* straightway approached Prajāpati. To them he gave darkness (*Tamas*) and illusion (*Māyā*); for there is indeed what is called the illusion of the *Asuras*. Those creatures it is true, have perished but creatures still subsist here in the very manner which Prajāpati ordained unto them.'[5] The Rām to be sacrificed has been called

---

1. मायां प्रज्ञां मीमते ज्ञायतेऽनया माया प्रज्ञा ।—Mahīdhara on YV. XIII. 44.

2. हंहस्व देवि पृथिवी स्वस्तय आसुरी माया स्वधया कृतासि ।—YV. XI. 69.
'''स्वधयाऽन्तेन निमित्तेन त्वमासुरी माया प्राणसम्बन्धिनी प्रज्ञा कृतासि । असूना प्राणानामियमासुरी । यद्वा असुरसम्बन्धिनी माया अचिन्त्यरचनारूपं चित्रं वस्तु भूत्वा यद्वत् प्रतिभाति तद्वत् त्वमपि स्तनरचनायुक्ता निष्पन्नासीत्यर्थः ।—Mahidhara on YV. XI. 69.

3. इन्द्रो वृत्रमवृणोच्छर्धमीतिः प्रमायिनाममिनाद्वर्पणीतिः ।—YV. xxxiii. 26. cf. ṚV. VI. 47. 18.

4. दिवि वै सोम आसीत् । अथेह देवास्ते देवा अकामयन्त नः सोमो गच्छेत् तेनागतेन यजेमहीति तऽएते मायेऽ असृजन्त सुपर्णी च कद्रुं च । वागेव सुपर्णीयं कद्रुस्ताभ्यां समयं चक्रुः ।—ŚB. III. 6.2.2.

5. अथ हैनं शश्वदप्यसुरा उपसेदुरित्याहुः । तेभ्यस्तमश्च मायां च प्रददावस्त्यहैवासुरमायेतीव पराभूता ह त्वेव ताः प्रजास्ता इमाः प्रजास्तथैवोपजीवन्ति यथैवाभ्यः प्रजापतिर्व्यधात् ।—ŚB. II. 4.2.5.

the mightly thousand fold *Māyā* of the *Asura*.[1] *Māyā* is the Veda for the *Asuras*. In the Aśvamedha sacrifice some magic tricks where performed on the seventh day after those (three) offerings have been made.[2] The divine person is said to have once assumed the form of Māyā. The Śatapatha gives the reason that the demons served the divine person under the name of *Māyā* (magic power). Thus in whatever form they serve him that indeed he becomes.[3]

From the above references to the word *Māyā* occurring in the Saṁhitās and Brāhmaṇas it is obvious that in these two periods of Vedic literature, the word *Māyā* was used more or less, in the sense of action, art, wisdom, extra-ordinary or supernatural power with gods, and in the sense of magic, trick, deception, sorcery etc., with the demons. Till a considerable late period it was not used in the sense of 'cosmic illusion'. In the Puruṣa Sūkta (ṚV. X. 90) everything is said to have been created by the Puruṣa. In the Deva-Sūkta (ṚV. X. 72) of the Ṛgveda creation is said to have come into existence out of *asat*,[4] but here *asat* daes not mean *Māyā* or illusion. In the Sāṁhitic and Brāhmaṇic literature nowhere creation is said to be untrue, unreal or illusion.

The earlier Upaniṣads deal with the word *Māyā* only in explaining the verses of the Ṛgveda wherein the word has occured; e.g. the Jaiminīyopaniṣad quotes three verses from the Ṛgveda;[5] Bṛhadāraṇyakopaniṣad quotes one of the same verses which Jaiminīyopaniṣad has quoted.[6] While explaining these verses the said Upaniṣads express the same concept of the *Māyā* as has been expressed in the Saṁhitās. In the Saṁhitās and the Brāhmaṇas almost every god has been called '*Māyin*', but the term *Māyā* has not been used for the performance done by him. For the first time in the Śvetaśvatara Upaniṣad it is said that Parameśvara created this universe by His *Māyā*;[7] hence, He is *Māyī* and what he has created is Māyā.[8]

---

1. महीं साहस्रीमसुरस्य मायामिति ।—ŚB. VII. 5. 2-20.
2. अथ सप्तमेऽहन्···तस्यासुरा विशस्तऽ इम ऽ आसत इति कुसीदिन उपसमेता भवन्ति तानुपदिशति माया वेदः सोऽयमिति कांचिन्मायां कुर्यादेवमध्वर्युः सम्प्रेष्यति ।—ŚB. XIII. 4.3.11.
3. ···रयिरिति मनुष्या मायेत्यसुराः स्वधेति पितरो···यथा यथोपासते तदेव भवति ।—ŚB. X. 5.2.20.
4. देवानां पूर्व्ये युगेऽसतः सदजायत ।—ṚV. X. 72.2.
5. रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव ।—(ṚV. VI. 47.18)—Jaim. Up. I. 44.1;
   रूपं रूपं मघवा बोभवतीति (ṚV. III. 53.8)—Jaim. Up. I. 44.6;
   पतङ्गमक्तमसुरस्य मायया (ṚV. X. 177.1)—Jaim. Up. III. 35.1.
6. रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव (ṚV. VI. 47.18)—Bṛhad. Up. II. 4.19.
7. अस्मान् मायी सृजते विश्वमेतत् तस्मिंश्चान्यो मायया संनिरुद्धः ।—Śveta. Up. 4.9.
8. मायां तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तु महेश्वरम् ।
   तस्यावयवभूतैस्तु व्याप्तं सर्वमिदं जगत् ॥—Śveta. Up. 4.10.

Parameśvara is *akṣara* 'undeclinable', *amṛta* 'immortal and he who knows Him is freed from the world (*Viśvamāyā*).[1]

With the introduction of *Ātman* as a identical to the *Brāhmaṇ* in the Upaniṣads the denial of the existence of the empirical World became firmly established. The entire philosophy of the Upaniṣads moves round the pivot viz. 'Ātman is Brāhmaṇ'. It became an imperative to exclude all that was not the *Ātman*. Intellect (*Buddhi*), Mind (*Mānas*), Body (*Śarīra*) or the Universe (*Jagat*) is not *Ātman*; hence, they are unreal. Upaniṣads preached the doctrine that '*Brāhmaṇ* is real and the Universe is unreal'; *Ātman* is Brāhmaṇ and nothing else. Though nowhere in the Upaniṣads it is said that the Universe is *Māyā* 'illusion', yet from the frequent statements made therein that the Ātman is only reality, it is implied that all except Ātman is unreal or illusion. It is in this sense that the word Māyā is mainly used in the post vedic philosophical texts. Śaṅkara in his commentaries on the Upaniṣads and the Vedāntasūtra has always used the word Māyā in the sense of 'illusion'. It is the material cause of the Universe, which is, according to Śaṅkarites unreal.

There was still a difference between the implied sense of the word *Māyā* as illusion as envisaged by the teachers of the Upaniṣads and the Vedāntin's concept of Māyā as 'illusion'. According to the Upaniṣads when Ātman 'self' is known everything known, because everything is part and parcel of Ātman; and hence provisionally real to certain extent. When *Ātman* is not known nothing is known. In the Bṛhadāraṇyaka Yājñavalkya says : 'when the self is seen, heard, perceived and known;[2] he who imagines plurality, goes from death to death[3] on the other hand Vedāntins regard this Universe as absolutely unreal like a mirage. In the Upaniṣads *Ajñāna* 'ignorance' is an absence of true knowledge; with the knowledge of self it does not exist. But in later Vedānta it is an active force by which the self undergoes a delusion. According the Vedāntins self cannot be realized as long as this Universe is there, because it is a barrier in the self-realization. But in the Upaniṣads there is no such barrier. The existence of the Universe does not least affect the self, for

---

1. क्षरं प्रधानममृताक्षरं हरः क्षरात्मानावीशते देव एकः ।
तस्याभिध्याद्योजनात् तत्त्वभावाद् भूमश्चान्ते विश्वमायानिवृत्तिः ॥—Śveta. Up. 4.9.

2. आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यो मैत्रेय्यात्मनि खल्वरे दृष्टे श्रुते मते विज्ञात इदं सर्वं विदितम् ।—Bṛhad. Up. IV. 5-6.

3. मनसैवानुद्रष्टव्यं नेह नानास्ति किंचन ।
मृत्योः स मृत्युमाप्नोति य इह नानेव पश्यति ॥—Bṛhad. Up. IV. 4.19.

all is the Ātman. Chāndogya Upaniṣad clearly says: 'the Ātman is above and below, behind and before. This Ātman is all the World.'[1]

To sum up, beginning from the time of the Saṁhitās and down to the period of six systems of Indian Philosophy we find a gradual development in the concept of Māyā; in the former the word being used in material sense while in the latter in subtle sense. The Vedic religion is essentially optimistic one. The great objects which Vedic Aryans would secure were long life for full hundred years, heroic offsprings, prosperity, health, in a word, all pleasure of this earth. Hence, this earth and earthly life were true for the Vedic Aryans. So when they used the word *Māyā*, it did not convey the sense of untrue or illusion. It originally meant 'activity'. Any activity was known as *Māyā*. Skill is necessary to get any work performed successfully, so Māyā, meant skilful act. Without some inner knowledge skillful act is not possible, then the word Māyā meant *Prajñā* 'wisdom', 'knowledge'. With knowledge one can perform such acts that cannot be performed otherwise. It was more than physical power, and then *Māyā* meant supernatural power. Gods as well as demons in the vedas have been called *Māyin* because they act; they act skilfully; they have koowledge to act; and they can perform supernatural work. In the Atharvaveda supernatural acts were usually performed by some magic, so there *Māyā* meant 'magic'. In this connection we must know that the word *Māyā* was applied simply to the magician's art, not to what he created by his magic. In course of time magic was thought as a baseful act and thus it became associated to the demons. This is the significance of the story referred to in the Atharvaveda and the Śatapatha Brāhmaṇa about how did *Māyā* become associated with the demons. In the late hymns of the Ṛgveda and in the Upaniṣads the Universe is said to have been created by the 'Supreme self'. His art of creating the Universe was thought of as *Māyā*. As time went on the concept of *Māyā* as an art of creation was transferred to the sense of creation itself and consequently in the sense of 'cosmic illusion' in later Vedānta.

---

1. अथात आत्मादेश एवात्मैवाधस्तादात्मोपरिष्टादात्मा पश्चादात्मा पुरस्तादात्मा दक्षिणत आत्मोत्तरत आत्मैवेदं सर्वम्।
—Chāndogya Up. VII. 25-2.

GĪTĀ AS A GUIDE TO CONDUCT IN EVERYDAY LIFE

By

K. V. SARMA

Acting Director,

Vishveshvaranand Institute, Panjab University,

Sadhu Ashram, Hoshiarpur.

Amongst the various ways in which the teachings of the *Bhagavad Gītā* could be understood, assimilated and acted upon, that which pertains to everyday life in the modern world is, perhaps, more pertinent today than any other. With due deference to the study of the *Gītā* from the textual, historical, philosophical, social and cultural points of view, it has to be maintained that the views expressed in the *Gītā* as to how life has to be lived has a unique practical value even in present-day conditions. Unlike several other treatises of philosophical import, *Gītā* abounds in dictums on ideal life. And the assimilation of these dictums could inculcate in man a kind of intuitive knowledge, stimulating in him the right thought and inducing him to the right action as odd situations confront him in day to day life, For this reason, if not for any other, it is of utmost utility to study the *Gītā* from this point of view.

The dictums contained in the *Gītā* are, at times, direct and, at other times, implied. Often, they transcend the personal and domestic spheres and extend to aspects of national and international life, in the social, religious and cultural fields. Though addressed to an individual, *viz.*, by Lord Krishna to Arjuna, they are intended for humanity in general and take under their purview men and women of all age-groups, belonging to the different social orders, the varied professions and persuasions, diverse stages of intellectual evolution and of different mental attitudes and outlook. It would, therefore, be possible for one and all to be benefitted through some dictum or other of the *Gītā* towards character building and reformation of conduct in private and public life.

The teachings of the *Gītā* so far as human conduct is concerned, could be broably classified into two, to wit, those which are to be applied by the individual to his own self and those which are applicable in his dealings with others. The former would coaduce to the physical, mental and spiritual elevation of the individual, tending to mould his personal propensities, attitudes and habits, enabling

him to conduct himself correctly to his own 'self.' The latter ministers to his proper conduct with the outside world and institute a relationship, which, when practised by all, could usher in a universal moral order, transforming the world, as it were, into a zone of contentment, peace and plenty.

Human conduct being the formal expression of personal attitudes and outlook, a significant part of the teachings af the *Gītā* is devoted to giving a proper directive to these by pointing out to man the right way of viewing himself and what is around him. It tells him that every being, animate or inanimate, has a soul which is eternal and that the physical body is transcient; therefore, to grieve over the injury or destruction of the latter is meaningless. Man's worldly life, his belng good or bad, his happiness and suffering, all are governed by his own actions, past and present. At the death of the body, each individual soul carries along with it the results gained and the qualities acquired by previous sctivities. It is up to the individual to exalt his soul through correct understanding and by leading a righteous life or to degrade it by leading a wicked life. Since mind is above matter, it is always possible for man to redeem himself by means of good actions and by resorting to the grace of the Supreme Spirit. On this background, divers aspects affecting man are set out by *Gītā*, for him to choose what is beneficial and reject what is not, to elevate himseif ultimately or be condemned.

The prime attitude that one has to develop in oneself, an attitude which would enable him to conduct himself properly, at all times towards his own 'self' and to the world at large is equanimity *(Samatā)*, towards everything. An outlook which would not differentiate between pleasure and pain, praise and abuse, friend and foe and stone and gold[1], is one which it would be difficult to attain, but it is one which would greatly conduce to one's ideal conduct under trying circumstances. So also is the will to avoid intense love and hate,[2] knowing fully their origin, nature and demouement.[3] To these have to be added self-control *(Jitendriyatā)* contentment *(santuṣṭi)* and quietude *(śānti)*.

---

१. समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्टाश्मकाञ्चनः ।
तुल्यप्रियाप्रियो धीरः तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः ॥

२. नाभिनन्दति न द्वेष्टि । (२·५७)

३. ध्यायतो विषयान् पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते ।
सङ्गात् सञ्जायते कामः कामात् क्रोधोऽभिजायते ॥
क्रोधात् भवति सम्मोहः सम्मोहात् स्मृतिविभ्रमः ।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात् प्रणश्यति ॥ (२·६१–६२)

Ideal conduct could, indeed, be expected of a person who has cultivated the attitudes mentioned above. Thus, he will appreciate the human bent *(prakṛti)* to be ever active.[1] He will realise that to be up and doing is better than sitting idle and that unless one is active, life would have been lived in vain.[2] But he will direct the said activity through beneficial paths, avoiding those that are undesirable. He would tend to act without attachment *(kāmasaṅkalpavarjita)*[3] and without expectation *(tyaktvākarmaphalāsaṅgam)* but with a full heart and independently.[4] He would feel as if such action is his duty, his commitment *(adhikārā)*.[5] The *Gītā* spells out how one should act and how one should not act.[6] It also indicates the attitude one should develop in performing his duties.[7] It is instructed that one should not skip over one's obligatory duties,[8] and that one's own

---

१. न हि कश्चित् क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत् ।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः ॥ (३·५)

२. नित्यं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायोऽप्यकर्मणः ।
शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्ध्यत्यकर्मणः ॥

३. यस्य सर्वे समारम्भाः कामसङ्कल्पवर्जिताः ॥ (४·१९)

४. Cf. : त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रयः । (४·२०)

५. Cf. : कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ॥ (२·४७)

६. Cf. : नित्यं सङ्गरहितमरागद्वेषतः कृतम ।
अफलप्रेप्सुना कर्म यत् तत् सात्त्विकमुच्यते ॥
यत्तु कामेप्सुना कर्म साहङ्कारेण वा पुनः ।
क्रियते बहुलायासं तद् राजसमुदाहृतम् ॥
अनुबन्धं क्षयं हिंसामनवेक्ष्य च पौरुषम् ।
मोहादारभ्यते कर्म यत् तत् तामसमुच्यते ॥ (१८·२३–२५)

७. Cf. : मुक्तसङ्गोऽनहंवादी धृत्युत्साहसमन्वितः ।
सिद्ध्यसिद्ध्योर्निर्विकारः कर्ता सात्त्विक उच्यते ॥
रागी कर्मफलप्रेप्सुर्लुब्धो हिंसात्मकोऽशुचिः ।
हर्षशोकान्वितः कर्ता राजसः परिकीर्तितः ॥
अयुक्तः प्राकृतः स्तब्धः शठो नैष्कृतिकोऽलसः ।
विषादी दीर्घसूत्री च कर्ता तामस उच्यते ॥ (१८·२५–२८)

८. Cf. : यज्ञ–दान–तपः–कर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत् ।
यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम् ॥ (१८·५)

duty is best done by oneself.[1] It is also emphasized that one has to rise entirely on one's own efforts.[2]

Alongside the above, it is also necessary to curb certain harmful tendencies and avoid undesirable habits. Among these are : Vanity *(ahaṁkāra)*, egoism *(ahaṁ–vāda)*, ignorancy *(ajñāna)*, meloncholiness *(śoka)*, stubborness *(stabdhatā)*, dishonesty *(śathaṭā)*, indolence *(ālasya)*, despondence *(vishāda)*, procrastination *(dīrghasūtratā)*; fear *(bhaya)* and folly *(pramāda)*. It is also necessary to put down, conscientiously, the passions, such as desire *(kāma)*, anger *(krodha)*, greed *(lobha)*, delusion *(moha)*, pride *(mada)*, quarrelsomeness *(mātsarya)*, attachment *(rāga)* and hate *(dvesha)*.

On the other hand. one's conduct towards the outer world should be governed by such positive qualities as would contradict the above–mentioned negative qualities and also help in inducting their opposities. Among such positive qualities which one should imbibe, cultivate and assimilate are : Fearlessness, clean living, constant concentration on wisdom, spirit of sacrifice, aptitude to study the scriptures, austerities, frankness, harm–lessness, truthfulness, absence of wrath, spirit of renunciation, quietude, straightforwardness, compassion, nongreed, courtesy, modesty, firmness, valour, forgiveness, fortitude, purity and freedom from hate and pride :

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः ।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥
अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम् ।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम् ॥
तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता । (१६·१–३)

It is necessary to draw special attention, here, to two aspects of general conduct advocated by the *Gītā*. It emphasizes the basic equality of life in man or beast, learned or ignorant :

विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि ।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः ॥ (५·१८)

Again, it is pointed out that one who experiences the unity of life sees his own 'self' in all beings and therefore looks upon all with an impartial eye :

---

१. Cf. : श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः परधर्मात् स्वनुष्ठितात् ।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः ॥ (३·३५)

२. Cf. : उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् ।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः ॥ (६·५)

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः ॥ (६·२९)

The second precept is to be friendly with all and never to terrify others :

अद्वेषः सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव सः ॥ (१२·१३)
यस्मिन् नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः ॥ (१२·१४)

The *Gitā* would invoke every one of its serious students to be a model of conduct, since the man in the street requires leaders whom he could follow with confidence. And :

यद्यदाचरति श्रेष्ठः तद्तदेवेतरो जनः ।
स यत् प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥ (३·२१

Indeed, a close adherence to the precepts of the *Gitā* could reform the strife-stricken world of to day and enable the evolution of a society characterised by peace, contentment and mutual love.



द्रव्यदाना—पाटिल मनजीभाई पूनाभाई सांगाणी, गाँव—नाना गोखरवाला,
जिला अमरेली, सौराष्ट्र महागुजरात (पृष्ठ ६१६ क)



पाटिल मनजीभाई के पुत्र-पौत्र आदि परिवार, नाना गोखरवाला।

(पृष्ठ ६१६ ब)



मनजीभाई के परिवार–सन्नारीवर्ग (माताएं, पत्नियां, पुत्रियां, बालिकाएँ) आदि ।

(पृष्ठ ६१६ ग)

भगवान् महावीर विषयक दुर्लभ हस्तलिखित ग्रन्थ

डॉ० सुरेन्द्र कुमार आर्य

प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन

प्राचीन उज्जयिनी महावीर की तपस्या भूमि से संबन्धित रही है। प्रतीकार्थ में यह तो सिद्ध ही है कि यहाँ महावीर स्वामी द्वारा प्रसारित धर्म पर्याप्त विकसित था। जयसिंह पुरा जैन पुरातत्व संग्रहालय में १०वीं शताब्दी की निर्मित महावीर प्रतिमाएँ सुरक्षित हैं। मालवा प्रदेश में लगभग ३१४ महावीर प्रतिमाएँ इधर एक वर्ष में प्राप्त हुई हैं और मालवा के जैन पुरातत्व सर्वेक्षण में हमने (मैंने व डॉ० पद्मश्री वाकणकर ने) ७५४४ प्राचीन मूर्ति-मंदिर, हस्तलिखित व जैन पट्टचित्र अंकित किए हैं। महत्त्वपूर्ण पुरातात्विक जैन उपलब्धियों के अतिरिक्त यहाँ के सिंघिया प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान में महावीर भगवान् विषयक दुर्लभ हस्तलिखित ग्रन्थ प्राप्य हैं, जिन पर इधर कुछ भी प्रकाशन कार्य नहीं हुआ है। इस अभिनंदन-ग्रन्थ में इन दुर्लभ ग्रन्थों की संक्षिप्त रूपरेखा सर्वप्रथम प्रकाशित की जा रही है।

शोध प्रतिष्ठान में कुल ९ हस्तलिखित ग्रन्थ महावीर के चरित्र, स्तवन व इतिवृत्त पर सूचना देते हैं, सुरक्षित हैं।

१. **महावीर स्तवन**—इसका विषय जैन स्तोत्र है व इसके ग्रन्थकार लगभग श्रावक हैं जिन्होंने इसे विक्रम संवत् १५२१ में रचा था। इस प्रति के लेखक हैं मुनि मतिसागर। लिपि जैन-नागरी है और भाषा—राजस्थानी। यह पूर्ण ग्रन्थ हैं। आकार २५ × ११ से० मी०। पंक्ति ११ अक्षर २४। चौबीसवें तीर्थंकर के रूप में महावीर का इतिवृत्त इससे ज्ञात होता है। इस ग्रन्थ में महावीर की मूर्ति निर्माण के लक्षण दे रखे हैं। यह महत्वपूर्ण कृति है।

२. **महावीर नो रास**—इस ग्रन्थ के रचयिता धर्म सागर मुनि व रचनाकाल वि० सं० १६८४ है। आकार २५ × ११ से० मी०। पंक्ति १६ अक्षर ४१ हैं। महावीर विषयक गेय पद इसमें सम्मिलित हैं।

३. **महावीर स्वामी ना चरित्र**—यह तीसरा महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसमें भगवान् महावीर के परिधान, वस्त्र, कंकण आदि राजसी वेष की चर्चा है। महावीर के पिता व परिवार उनका प्रारम्भिक जीवन वर्णित है। ग्रन्थ के प्रारम्भ से राजा नंदिवर्द्धन का उल्लेख व सरस्वती की प्रार्थना है।

४. **महावीर देव वृहद स्तवन**—इसके ग्रन्थकार समय सुन्दर मुनि है। भाषा गुजराती व लिपि—जैन नागरी है। हस्तलिखित ग्रन्थ क्रमांक ६५८६।२ है। महावीर विषयक अनेक जानकारी इसमें है। महावीर का ज्ञानप्राप्त व दिव्य स्वप्न इसमें चित्रित हैं। कृति का निर्माणकाल १६०५ वि० सं० है।

५. **महावीर स्तवन टब्बा सहित**—इसके ग्रन्थकार अभयदेव सूरि हैं। भाषा-प्राकृत मिश्रित गुजराती है। आकार २५·५ × ११·५ सें० मी० है। पंक्ति १८, अक्षर ४८ व पत्र १३ हैं। इसमें महावीर की स्तुति व मूर्ति प्रक्षालन की विधि है। ग्रन्थ क्रमांक ६९९७ है।

६. **महावीर द्वात्रिंशिकावृत्ति सहित**—ग्रन्थ के लेखक उदयसागर सूरि। यह संस्कृत भाषा का ग्रन्थ है। अनेक कथाएँ इसमें संभवित हैं।

७. ग्रन्थ क्रमांक ७, ८ व ९ में महावीर चरित की हस्तलिखित तीन प्रतियाँ हैं। भवभूति द्वारा रचित नाटक की ३ प्रतियाँ हैं। प्रथम का क्रमांक ११९०, द्वितीय का ७५४८ व तृतीय का ७५४८ है।

उपरोक्त हस्तलिखित ग्रन्थ भगवान महाबीर के इतिवृत्त व कृत्य पर सूचनाएँ देता हैं। सभी महत्त्वपूर्ण कृतियाँ हैं। पत्र का संपादन व प्रकाशन किया जा सकता है पर अभी तो इन ग्रन्थों की जानकारी जैन-जगत को होना चाहिये।

॥ श्रीहरिः शरणं मम ॥

पं० श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी के इस विषय में-

प्रत्यभिनन्दन

अपने देश को सर्वोच्च कोटि में स्थान देने के लिये महामहाविद्यालयों का होना आवश्यक है, यह धनों के प्रवाहों से हो सकता है, धनलाभ धनोपार्जक उद्योगपतियों द्वारा होता है, वे व्यापारादि पर विशेष आधार रखते हैं, व्यापारों का टिकाव फलद्रूप जमीनों में उत्पन्न अन्नादि पर रहता है, उपजानेवाले खेतीकार हैं, यह सौराष्ट्र खेतीप्रधान देश है, कृषि गोधन वाणिज्य आदि धर्म के सहारे से वृद्धि पाते हैं, इन तीनों द्वारा आप लोग देश के धार्मिक विद्यालयों के पोषक होईए।

उत्कृष्ट दान से स्वर्गसुख तथा मोक्षानन्द को पायँगे, दान से यह मातृभूमि प्रसन्नतापूर्वक उपर्ली भूमिकाओं में भेजेगी, दान अध्ययन और भगवद्योग करनेवाले के लिये ये तीनों मुक्तिदशा में पहुँचाने का सामर्थ्य रखते हैं, परोपकारी धनी के घर में करुणा उदारता विनीतता सौहार्द सत्कार समवृत्ति आदि सद्गुण रहते हैं जो भक्ति में सामेल होते हैं, कलुषित धनवाले के घर में कदर्यता लुब्धता मक्खीचूसता क्रूरता निष्कारुण्य अतिस्वार्थिता अनुपकारिता अनाश्रयिता दुराशयता आदि आदि दुर्गुण रहते हैं, जिनसे सत्संग के सत्कार्य में बाधाएँ उपस्थित होती रहती हैं, कार्यों में असफलता भी पैदा होती है, दुरित के गंज लगे रहते हैं, दुःखों के बद्दल बरसते रहते हैं, कुकर्मों के रण में खर्चा की नदियाँ बह जाती हैं, उनके प्रवाहों में बहकर संसार समुद्र की अधःगतिओं में आ जाते हैं, मानव जन्म से प्रभु ने दी हुई सम्पत्तियाँ द्वारा अभ्युदय व मोक्ष प्राप्त कर लेना, वृद्धों के आशीर्वाद ले लेना, आशीर्वादों से अपनी सन्तति पशुधन लक्ष्मी कुटुम्ब आरोग्य पैदाश सभी निर्विघ्न सुरक्षित बढ़ते जाते हैं।

धन तो नदीपूर की तरह आता जाता है, इसका सदुपयोग करके महासरोवर या भूगर्भ के जल के खजाने के समान पुण्यों के खजाने प्राप्त कर लेने चाहिए, इनसे विद्यालय विद्वान् और सत्संग करते रहना चाहिए, जिनसे सभी लाभ ही लाभ होते रहेंगे, आपके नगर में धर्म भक्ति और परमात्मा को मिलानेवाले विद्यालय उच्च कोटि की संस्था के रूप में बढ़ों, यह मेरी तरफ से भी जन्मभूमि की जनता तथा सौराष्ट्र के प्रति-प्रत्यभिनन्दन है॥

अभिनन्दनों से अरसपरस उजाला होता ही रहेगा, स्वार्थी और नास्तिकों को भी उजाला तो रुचिकर ही है, मगर विरुद्धार्थ में परिणत होके परिताप कराता है, विरोध में सन्तोष मनाता है, वैसा इस क्षेत्र में कुंकुमवापी भूमि में न हो। कई लोग, उन्नति प्रख्यातनाम यशस्वी कार्य, आदि को सहन न करने के स्वभाववाले, जलते हृदय से खण्डन में उतरकर हलके आवाज निकाल देते हैं, वैसे को पहचान के इनसे दूर रहेंगे तभी उत्कृष्ट कार्य होते चलेंगे भजन करना तीर्थ करना पावन होना प्रभु में समर्पण रहना

पवित्र विचारना पवित्र करना पवित्र रहना, मन्दिर विद्यालय सत्संगशाला अन्नसत्र सप्ताहमहोत्सव जयन्तीमहोत्सव बाल-अनाथ भोजन आदि-आदि करते-कराते रहना।

मैं तो सन्त हूँ, मगर मेरी स्वसमान दृष्टि से आप सब मेरे ही कुटुम्ब हैं, मेरे कुटुम्ब को मुझ-समान भक्ति-परोपकारधर्मवाला देखूँ, तभी विशेषतः प्रभु में आराधना द्वारा आप का विशेष-विशेष अतिभला कर सकूं, सौराष्ट्र में व कुंकावाव में बड़े-बड़े चमत्कारी दिव्यपुरुष हो गये हैं, उनके स्मारक कुंकावाव में हों, जीनसे कुंकावाव स्वयं सौराष्ट्र नगर नाम से प्रख्यात हो, जैसे काशी का नाम बाराणसी है वैसे कुंकुमवापी का नाम सौराष्ट्र नगर होना चाहिए, आप जरूर सौराष्ट्र को गौरवभरी सम्पत्तियों के स्मारक कुंकावाव में करेंगे और कुंकावाव को सौराष्ट्रनगर बनायँगे, इस भूमि में मीठा जल भूगर्भ में बहुत है, उनके पातालकूप द्वारा प्रवाह सतत उछलउछलकर उपर से चला जा रहे जिससे पानी की नहर कायमी हो जाय, इसका उपयोग सौराष्ट्र नगर के लिये लाभदायक हो, यहां बड़े बड़े मन्दिर बड़े बड़े विद्यालय बड़ी बड़ी धार्मिक व भक्तिमय संस्थाएँ बड़े बड़े अन्न वस्त्र दानों के धर्मक्षेत्र गौ ब्राह्मण सन्त अनाथ व गरीबों के लिये सत्कार सौराष्ट्र नगर में होता रहो, यह मेरा हृदयगर्भ में पड़ा हुआ आप के प्रति हार्दिक अभिनन्दन है, कुंकावाव के विद्यालयों में से अच्छे अच्छे विद्वान् प्रकट हों, बड़े बड़े विश्वविख्यात महापुरुष प्रकट हों, बड़े बड़े राज्यपुरुष प्रकट हों बड़ी बड़ी बहनें माताएँ विश्वविख्यात विदुषीदेवीयाँ प्रकट हों, वैसा मेरा सुमूर्त होनेवाले भावि के लिये भी अभिनन्दन हों, भारत के तथा विदेशों के बड़े बड़े विद्वान्-विख्यात काशी कलकत्ता नालन्दा हरिद्वार बसरा काश्मीर जम्मू तिब्बत नेपाल कोसल देहली मथुरा उज्जैन इन्दौर पाटलीपुत्र पूना मद्रास भूतपुरी अलीगढ़ बड़ौदा श्रीनगर मद्रास आदि आदि के अनेक उच्च कक्षा के उच्च उच्च पदवीधारी नामचीन प्रकाण्डविद्वानों के अभिनन्दनों से आज मैं मुझे अभिनन्दन के यथार्थ पात्र मानता हूँ, मेरे में गहरी विद्याएँ कहां तक बसी हैं इनकी स्वरूपसीमा मैं भी नहीं जानता, मैं मुझे अर्ध जलभरा कुंभ की तरह चेष्टित समझता हूँ, मगर सन्त कृपाओं से विद्वद्वर्य गुरुवरों की करुणा से श्रीहरि की मेहरबानी से मीठी नजरों से छलकता नहीं हूँ, मैंने जीवनभर में किसी का पराभव करने का यत्न ही नहीं किया है न तो करता हूँ, विनीतता के साथ के ये सद्गुण न मालूम कहाँ से आ बसे हैं, हृदय की कोमलता के साथ ये सब, समय समय में मीले हुए पूजनीय विद्वानों के सुरवाग्देवताओं की कारणावस्था व अव्यक्ताऽवस्था में, सत् स्वरूप के सभी अभिनन्दन ही, होते आये हैं, वे आज प्रसन्नता के साथ पाषाणभूमि की गिरनारीस्थली में निवसित मुझ स्वल्प विद्वान को खोज खोज के स्थूलस्वरूप में सभी अभिनन्दन, आशीर्वादस्वरूप में प्रकट हो आये हैं, मेरा धन्यभाग्य है।

पृथुराजा को विद्वद्विप्रजन गुरुओं के आशीर्वाद भाविकार्यों में प्रकट हो आये थे, मेरे में जो आशीर्वाद प्रकट हो आये हैं उनसे ही मेरी बुद्धि का विपर्यय विकल्प अन्यथात्व संशय भ्रम आदि सब क्षीण हो गये, तत्त्वज्ञान की विभिन्नप्रणालियों के प्रकाश छलक आये, तात्त्विक सभी प्रस्थानों के न्याय-विचार की धाराएँ स्वयं झलकने लगीं, इनके सहारे से कई नवीन ग्रन्थ रचनाविषय हो गये, जिन पर कलम चलाता हूँ उन विषयों की ट्रेनें भरी हुई हृदय में हाजिर हो जाती है, यह फल मामूली आशीर्वादों का नहीं है बल्कि धुरन्धर दैवी विद्वानों के सुरतरुवर समान गुरुजनों के आशीर्वादों का फल है, लेनेवाला तो तैयार ही रहता है, मगर दिव्यचक्षुःदेनेवाले दुर्लभ हैं, आप गुरुदेव सुहृन्मित्र व सेवकजनों की सुप्रसन्नताभरी दृष्टि से ही मेरा मानवभाव में से दिव्यभावों का अभिनन्दन प्राप्त हुए, जिन्होंने मेरी अनन्तगुना किम्मत बढ़ायी, सचमूच मैं अब अपण्डिताऽवस्था से पण्डिताऽवस्था में आया, मुझे मानिनता

हुई कि पण्डितप्रकाण्ड गुरुजनों ने आज मुझको पाण्डित्य दिया, सचमूच लोक मुझे पण्डितजी कहा करते थे यह सार्थक हुआ, अब तीनों लोक में मुझे विद्वान् स्नरूप में पहचानेंगे, मेरा सभी यत्न सफलता में झेलने लगा, अब कोई कमी नहीं रही, सभी पुरुषार्थ पा गये, आपलोगों को इनका बदला देने में असमर्थ ही हूँ, मगर स्वात्माऽर्पण करने में समर्थ हूँ, समर्पित मुझे अपनाईएगा यही प्रार्थना है।

भविष्य में मेरे स्थापित विद्यालय में अच्छे सात्त्विक विद्वान् प्रकट होने को आपके अभिनन्दन सुमूर्तचमत्कार से काम करे वैसी प्रार्थना करता हूँ, राष्ट्रों के कर्णधारों से भी यही माँगता हूँ—आप के विद्यालयों में भारतीय संस्कृतिवाली विद्याएँ पोषण प्राप्त करें, अभिनन्दन उक्त प्रकार के पोषण में सजीवन चलते ही रहें।

पढ़ना पहली अवस्था का कर्तव्य है, पढ़ाना दूसरी अवस्था का कर्तव्य है, उन विद्याओं का परिष्कृतरूप में पचाना तृतीय अवस्था का कर्तव्य है, उन्हें अभिनन्दनों से शान्ति देना चतुर्थ—अवस्था का कर्तव्य है, सभी प्रजा में यह क्रम बराबर चला आता है, आज चतुर्थ अवस्था में मेरी आत्मा को दिव्य विद्वान् आत्माओं ने अभिनन्दन दिया यह मेरे वरलोक के लिये भी अभिनन्दयिता होता रहेगा, मेरी तरफ से भी उसी तरह सभी प्रकारों में अभिनन्दयिता बना रहेगा ॥

विद्याएँ सुदृष्टियाँ ऊपजाती हैं, इनसे अजातशत्रुता भी प्रकटती है, अजातशत्रु को किसी से भय नहीं होता, सर्वत्र स्थित परमेश्वर से मित्रता का भान सभी में हो आता है, अहिंसाप्रतिष्ठा में अहिंसक के आगे वैरिओं के वैर भी निर्वैरता में परिणत होते हैं, शान्तिसागर मिलता है, इससे विद्वान् सुखी होते हैं, अन्य को सुखी करते हैं, सभी वर्ण के बालक आध्यात्मिक विद्याएँ पढ़कर परमात्मा को प्राप्त कर लें, इस प्रकार का साम्यभाव आप की कुंकुमवापी में तथा विद्यालयों में हो, अभिनन्दन इस प्रकार के पोषण देनेवाले उद्भवों, यह मेरा भी अभिनन्दन उन अभिनन्दनों में सामेल हो, समाज का भला होना अभिनन्दन का फल है, व्यक्तियों के उत्साह बढ़ना प्राथमिक प्रेरणा है, अच्छे बड़े विद्वान् होते रहने में अभिनन्दन सार्थक होते रहने की श्रीहरि से याचना है।

सारे शरीर में संवेदनारूप ज्ञानतत्त्व व्यापता हुआ, दर्शन मनन अभिमनन चिन्तन बोधन और अभिनन्दन के भावों को भजता है, सच्चिदानन्द आत्मा में चैतन्यतत्त्व में कायमी चिदंशरूप स्थिर रहता हुआ अन्तर्यामी साक्षी के सहारे से सभी प्रकार के अभिनन्दनों को प्रकाशता भी है, अन्यत्र भेजता भी है फिर विषयाकाराऽन्वित होता हुआ उसी स्थिरभावात्मक स्वभवन में विश्रान्ति ले लेता है, इस हेतु से वैसी स्थितियाँ के स्वरूपों में सभी अभिनन्दन एक दूसरे से आप-ले करते हैं, वह सुख-शान्ति में परिणत हो तभी अभिनन्दन-नाम सार्थक है, जन्मभूमि में प्रकट हुआ बालक अपनी आत्मा में अभिनन्दनवाला ही है, किन्तु जीवन की अवस्थाओं के हिसाब से शरीर, पदार्थ, मातापिता, परीवार, घर, स्कूल, नगर, देश, राष्ट्र, धर्म, विद्या, अभ्युदय, अन्ततः निःश्रेयस में भी, अभिनन्दन को चाहता ही रहता है, जितनी कुछ बाह्य चीजें संसर्ग में आती हैं उनके प्रति स्वाभिनन्दन करता हुआ उनके अभिनन्दयिता स्वयं सर्जनहार होता चला जाता है, इसमें अभिनन्दनों के साथ में कभी निरानन्दन या तो निकन्दन भी आ पड़ता है, ये निरानन्दनादि जिसमें स्थान न लें वैसे अभिनन्दन आज आप की तरफ से मुझे मिल रहा है यह मेरे चतुर्थ आयुष्य में तथा आगे भी शाश्वताभिनन्दन रूप में बर्तो यह कायमी माँगता हूँ, मेरा प्रेरित अभिनन्दन भी आप के प्रति समोत्तम कक्षा में उद्भवो, यह भी विशेषतः श्रीहरि से माँगता हूँ।

परा, अपरा, तथा दोनों विद्याएँ यहीं के विद्यालयों में पढ़ायी जायँ, अपरा विद्या व्यवहार में उपयोग देयगी, परा विद्या ब्रह्म उपासना में उपयुक्त होगी, दोनों जीवन की तमाम अवस्थाओं में शान्ति

देयगी व दोनों लोक में सहायक रहेगी, अभिनन्दन में इस प्रकार का अभिनन्दन भी आप दे रहे हैं, मैं भी इन्हें अन्तरात्मा में तथा अन्तःकरण इन्द्रियाँ में व शरीर में भी धारण कर लेता हूँ, तथा आप से विशेष प्रार्थना करता हूँ आप भी उक्त प्रकार में अभिनन्दन को धारण करें ॥

अभिनन्दन तो सभी को सभी विजयी कार्य में दिया जाता है, पण्डित लोक पण्डित को अभिनन्दन देते हैं "प्रवृत्तवाक् चित्रकथः ऊहवान् प्रतिभानवान् । आशु ग्रन्थस्य वक्ता च यः स पण्डित उच्यते" (भारते) ॥ 'व्यवहारे तथा शास्त्रे परिष्कारे नवोन्मिषे । तत्कालपारदृश्वा यः पण्डितो ग्रन्थि-भेदकृत्' इत्यादिरीति से पण्डितको अभिनन्दन विशेषरूप से प्रतिष्ठितता के लिये होता है, वैसी प्रतिष्ठितता प्राप्त करने का उपदेश भी अभिनन्दन में समाया है ॥

जिस देश के जिस भूमि के जिस गाँव के जो पुत्र हों वे अपनी जन्मभूमिरूप माता को भी गुरुदक्षिणा दे सकते हैं, विद्यार्थी विद्यागुरु को दक्षिणा देके कर्जा से छूट जाता हैं, भूमिपुत्र भी किसी योग्य दक्षिणा प्रदान कर कर्जा से छूट जाता है, आज मैं कौन सी दक्षिणा दूँ जिस कर्जा से छूटूँ, मुझे देखकर आप लोग खुशी होते हैं—अभिनन्दन देते हैं, इससे मेरी आत्मा कृतकृत्य होती हुई परमेश्वर की तरह आपमें समर्पित हो गयी है, कर्जा से छुट्टी मनाती है, मेरे विद्याध्ययन से आपके यहाँ निमित्तमात्र से विद्यालय होने लगे, मेरे भजनभक्ति त्याग से आप लोग भक्ति में विशेष बढ़ने लगें, यही निमित्तमात्र रूप से कर्जा अदा करने की तकमें गुलतान मेरी आत्मा आपके प्रति उसी प्रकार का भी अभिनन्दन देती है कि—मेरे पर मातृभूमि का कोई कर्जा अविदित भी हो तो उसे किसी प्रकार से सर्वज्ञ भगवान् देवता लोग धर्ममूर्ति आदि के साथ साथ अन्तरात्मा भी मुक्तता में पार उतारें ।

प्राचीन काल में कुमार व कुमारिकाओं में विद्याभ्यास मुख्य कर्तव्य समझा जाता था, ज्ञान चर्चाओं में तत्त्वज्ञान मिलाना उत्तम इष्ट था, अच्छी विद्वत्ता प्राप्त होने पर परीक्षाएँ होती थीं, पास होने पर उपाधि प्रदान होता था जो आजकल भी हो रहा है, यही बड़ा अभिनन्दन का सुमूर्त रूप स्वयं आनन्द दे रहा है, वैसे उत्तीर्णता के आनन्द में यह अभिनन्दन उत्तेजक हो ॥

भगवान् के अभिनन्दन के लिये सभी को अधिकार है, मानवों के बदलने से चाहे कुछ भी परिवर्तन हुआ हो, मगर परमात्मा के सब बालक सभी प्रकार के अभिनन्दनों के पात्र हैं, पुमान् व प्रकृति को अपने अपने कार्य निभाने में जो कुछ अधिकार दिये हैं, उनमें रहते हुए हीं वे अभ्युदय व निःश्रेयस प्राप्त कर सकते हैं, सभी को व्यवहार व आध्यात्मिक स्थितियों के लिये विद्या की जरूरत है, विद्याओं के उपार्जन में कुमार व कुमारिओं का अधिकार है, यज्ञ याग पूजन दानादि विशेष कर्मों के लिये पति-पत्नी के अधिकार हैं, भक्ति भजन त्याग के लिये वानप्रस्थ वृद्ध वृद्धाओं के अधिकार हैं, इन अधिकारों में उत्तीर्णों को अभिनन्दन की पात्रता है, नारायण की शक्तियाँ लक्ष्मीजी श्रीभूलीला विभूति विकुण्ठा, ब्रह्मा की सावित्री, गायत्री, शंकर की सती पार्वती, श्रीकृष्ण की राधिका जी गोपियाँ, सूर्य की प्रभा, इन्द्र की इन्दिरा, दक्ष की असिक्नी, पलिक्नी वीरिणी, हिमगिरि की मेना, ऋषियों की अरुन्धती लोपामुद्रा कला ख्याति अनुसूया, गार्गी मैत्रेयी, पाण्डु की कुन्ती, दशरथ की कौशल्या आदि असंख्य देवियाँ ब्रह्मवादिनी विदुषियाँ हो गई हैं, वे पातिव्रत्य-परायण रहती हुई जगन्माताएँ अभिनन्दन पात्र शास्त्र-इतिहासों में लिखी गई हैं, इन सौराष्ट्र की देवियों के प्रति मेरा भी वैसा अभिनन्दन है, जो व्यवहार व ब्रह्मचिन्तन के लिये योग्यतावाली हों, सभी भारतीय नारी वर्ग के लिये उन्हीं ईश्वरिणी माताओं के अंश मानव धर्म व भागवतधर्म की प्रतिमारूप होने का मेरा अभिनन्दन है । आप लोग सत्य धर्म स्वाध्याय सावधानता में

स्वस्थ रहते हुए मातापितागुरु आचार्य अतिथि अनाथ सेवक आदि के प्रति देववत् पूज्य आदर सत्कार भरे वर्तनवाले हों, सत्संग करिए, हित करिए, वल्लियों को वृक्षों की नाईं आधाररूप होइए, मकान के स्तम्भरूप होईए, शरीर के पाँवरूप होईए, देश के जीवक होईए, राज्य के अंगभूत, विद्यालयों के जीवरूप, जनता के प्राणरूप, और परमात्मा के निवासभूमि रूप होईए, यह भी मेरा अभिनन्दन है।

मन्दिर आश्रम क्षेत्र मठ विहार शाला आदि में शुभ विद्या प्रदान होता रहो, प्राचीन समय में आर्यावर्त त्रिविष्टप हिमालयोपत्यका आदि में आदिवासी महर्षिगण विद्याएँ पढ़ाते आये हैं, वसिष्ठमहर्षि के दस हजार शिष्योंवाला आश्रम लिखा गया है, इस युग में प्राचीन विद्यालयों की तक्षशिला विक्रमशिला नदियाशान्ति वल्लभी सारनाथ चार काशी मिथिला आदि भूमियाँ प्रसिद्ध थीं, और है भी, विद्याएँ पढाई जाती हैं, विद्वान् प्रकट होते जाते हैं, इनके अभिनन्दन प्रवाह सतत चालू भी हैं, काशी में शिवकुमार शास्त्रीजी, बच्चा झा, वामाचरणभट्टाचार्य, बालकृष्णमिश्र, जयदेवमिश्र, दामोदरलालजी गोस्वामी, नित्यानन्द पन्त, आदि दिगन्त यशस्वी विद्वान् पुरुष, मधुसूदनसरस्वती, उदयनाचार्य, कुमारिलभट्ट, वाचस्पतिमिश्र, आदि के स्मरण करानेवाले धुरन्धर विद्वान् होते आये हैं, गोपीनाथ कविराज, राजेश्वर-शास्त्री, बदरीनाथ शुक्ल, दक्षिण में वीरराघवम्, बंगाल में मधुसूदन भट्टाचार्य, पूना में पाण्डुरंग गोस्वामी, आदि अनेक विद्वान् विद्यमान हैं, जिनसे समग्र भारत विभूषित झलकता है, भारत के गौरवरूप ये गुरुजन विद्याओं में बृहस्पतिस्वरूप हैं, इस प्रकार के दैवी शक्तिवाले आप सभी के अभिनन्दनों से मेरी आत्मा विरामस्तर को अनुभवती है, बड़े बड़े विद्यालयों के संस्कृत अंग्रेजी हिन्दी स्वभाषा आदि के धुरन्धर विद्वान् लोग भी फिलोसोफर महापुरुषों के अभिनन्दन प्राप्त करके आज इस मानवसन्त जीवन में मुझे साक्षात् रामानुजाचार्य वल्लभाचार्य निम्बार्काचार्य मध्वाचार्य शंकराचार्य गुरुनानक जिनेन्द्रमुनि बुद्ध भगवान् रामानन्दस्वामी सहजानन्द स्वामी आदि अभिषिक्त भगवत्-आचार्यों के प्रत्यक्ष अभिनन्दन प्राप्त करने का आनन्द प्राप्त हो रहा है, मेरे समान अकदरदान को भी ढूँढकर श्री भारतसरकार ने कदरदान पात्र बनाया यह एक मेरा अतिरोभावी आनन्द का खजाना उपजाया है, इसके लिये भारत सरकार को मेरे लक्षातिलक्ष अभिनन्दन हैं, प्रजासत्तकसुराज्य चिरशाश्वत रहो ॥

अभिनन्दन ग्रन्थ देश के लिये बड़ा भारी चिरस्थायी सिक्का है, विद्वत् रत्नों के स्मारक हैं, इसमें कोई अनेरा रस रहता है जो जीवनभर मधुरता को हटने नहीं देता, प्रफुल्लित माधुर्य नया नया निपजता रहता है, उदासीन स्थिति में स्वाभिनन्दन को याद करने से आनन्द का प्रवाह उत्साह-खुशियाली हो आते हैं, जहाँ बड़े बड़े गवैये लोग संगीत के महोत्सव उजवाते हैं, वहाँ श्रोता श्रावक दोनों पक्षों में तथा दर्शकों में भी आनन्द के फुहारे छूटते हैं, यह आनन्द प्रशंसा के मूर्त रूप में फलित होता है, वही आनन्द वाह वाह के वातावरण में अभिनन्दन सा हो जाता है, इस प्रकार का अभिनन्दन सर्वत्र स्थित है, आनन्द की नदियाँ उपजानेवाला अभिनन्दन कोई अलौकिक अजोड जादू है, समस्त समाज को आनन्दित करनेवाला अभिनन्दन ब्रह्म का किसी अंश है, ब्रह्म विमर्श बिन्दु नाद ध्वनि रूप में सुमूर्त होके ब्रह्मानन्द देनेवाला होता है, परा पश्यन्ती मध्यमा वैखरी स्वरूप में प्रसरता हुआ अभिनन्दन तो मिष्ट ही मिष्ट रहता है।

प्रभु की इच्छा भक्तों पर प्रसन्नतारूप में बरसती है वह प्रसन्नता प्रभु के अंशों में अवतरती है, अवतारी महापुरुषों की प्रसन्नताएँ जगत् की विभूतियों के ऊपर सतत स्थान करती हैं, वे ही प्रभु की अच्छी विभूति पर अभिनन्दन रूप में जाकर ठहरती है, जिससे ब्रह्मानन्दसमान तृप्ति अनुभवविषय होती

ही रहती है, एक के अभिनन्दन से हजारन जनों को अभिनन्दन अनुभवविषय होता है, यह भगवान् की प्रसन्नता का ही फैलाव है, वह कभी सत्य-संकल्पत्वरूप में तथा विद्वद्गुण में सुमूर्त रूप लेता है, वह भारतीयदर्शनशास्त्रों के तत्त्वों का सुपोषण–विकास रूप ही होता जाता है।

विद्याओं के लिये भारत देश पारावार है, कई भौतिक सामाजिक व्यावहारिक औद्योगिक वैकासिक रासायनिक नैयमिक शासनिक संयमित तात्त्विक दैहिक लौकिक पारलौकिक नैतिक प्रातिभासिक वैकासिक आध्यात्मिक मौक्षिक औपनिषदिक आदि आदि विद्याएँ भारत देश रूप महासागर में प्रकट होके मिल गयीं व मिलती जा रही हैं, भारत में भवन कलाएँ चित्रकलाएँ जेवरकलाएँ योगकलाएँ हवनकलाएँ देवार्चनकलाए प्रासादकलाएँ ज्ञान गान ध्यान कलाएँ मन्त्र जादू टोना कलाएँ श्राद्ध पारायण कथा कलाएँ ग्रन्थन रचना नवनिर्माण कलाएँ किल्ला सैन्य व्यूह कलाएँ, विविध विद्याएँ आदि आदि नयी नयी कलाएँ भारत में खिलती आ रही हैं, उनके द्वारा अभिनन्दनकलाएँ विद्युत्प्रकाश की तरह सभी दृश्य अदृश्य कलाओं को प्रकाश देती आई हैं, और देती रहेंगी।

अभिनन्दन कई प्रकार के होते हैं, क्षणिक, स्थायी, जीवनस्थायी व अनन्तकालस्थायी भी, तथा ग्रामव्यापी देशव्यापी वसुन्धराव्यापी, तथा अज्ञव्यापी सुज्ञव्यापी दिव्यद्रष्टृव्यापी भी, एवं स्वरूपवर्षी समाजवर्षी जगद्वर्षी भी, एवं शून्यपरिणामी उपकारपरिणामी प्रोत्साहनपरिणामी भी, एवं क्लेशफलक व्ययफलक लाभफलक अफलक भी, इत्यादि में विद्वान् सन्त के प्रति अभिनन्दन उच्चकोटि में स्थान लेते है तथा उच्च कोटि के फल देते हैं, आपके ये अभिनन्दन सदा के लिये उत्कृष्टता में स्थिर हों, पुराण में नारद जी के लिये कथा है कि वह सात-मन्वन्तर तक गानकलाएँ सीखते रहे, पर जब लक्ष्मी जी से अन्त में सीख लिया और द्वारिका में भगवान के समीप में गाया तब भगवान ने उसे अभिनन्दन दिया कि—नारद !, अब तुम तुम्बुरु के समान गायनकला में पूर्ण हो गया है। अनसूया को पातिव्रत्य में तीन देवों ने अभिनन्दन दिया था। सावित्री को यमराज ने पतिभक्ति में अभिनन्दन दिया था। गार्गी को याज्ञवल्क्य ने आत्मज्ञान में अभिनन्दन दिया था, रैक्व को आत्मार्पण में देवताओं ने अभिनन्दन दिया था, हनुमानजी को श्रीरामचन्द्रजी ने अभिनन्दन दिया था, याज्ञवल्क्य को विद्याओं में समितिसदस्यों ने अभिनन्दन दिया था। किसी कार्य में सफलता प्राप्त करनेवाले को जो धन्यवाद दिया जाता है, वह अभिनन्दन का स्वरूप ही है, व्याख्यान में रस आने पर सभास्थजनसमूह तालियाँ बजा बजा कर खुशियालो दिखलाते हैं वह भी अभिनन्दन का स्वरूप है, उत्सव उत्साह सम्मेलन सत्कार परितृप्ति संतोष आदि अभिनन्दन के स्वरूप में घुलमील जाते हैं, आनन्दाऽतिरेक उछलता है, चिरायमान होता रहता है, एक नयी जड़ीबुट्टी अभिनन्दन का मूलस्वरूप बन पड़ती है, वह अभिनन्दन के आनन्दांऽकुर को उपजाया करती है, आनन्द की वल्ली कल्पवल्ली समान ऊपजती रहती है, आत्मानन्द में मिलती हुई इसकी झाँकी कराती है, वैसी आनन्द-लहरीयाँ अभिनन्दन द्वारा आप में भी स्थान लेवें, यह मेरी ओर से अभिनन्दन है, अभिनन्दन का स्वरूप तत्त्व है—मानस या आत्मा को आनन्द में समर्पित कर देना।

श्रद्धा भक्ति प्रेम विश्वास आश्चर्य इष्टलाभ साफल्य, सार्वजनिक वा वैभागिक सिद्धि करनेवाले में अपने को अनेरा आनन्द ऊपजाता है, वह इच्छानिवृत्ति से निवृत्त भी हो जाता है, एकत्र निवृत्त होने के समय या उत्तरोत्तर अन्यजनो में भी वही आनन्द बहता रहे,—इसका आपूरक तत्त्व अभिनन्दन है, अभिनन्दन के सहारे से किसी कारण द्वारा कमजोर हो गया जीवन बलिष्ठ हो जाता है, अन्य विजयों के लिए भी सामन्त भाव को भजने लगता है, मृत्युसम भयंकर प्रतिद्वन्द्वी को भी नहीं गीन कर कठिनाईयाँ

व विपत्तियों को हटा कर देश के लिए सुसमृद्ध सम्पत्तिओं का देनेहार होता है, तब फिर आनन्द का अभिरूप अभिनन्दन आनन्दाऽनुभूति में बरतने लगता है, अपरोक्षानुभूति में रहता हुआ ब्रह्मसाक्षात्कार कराने में भी उपयुक्त हो जाता है, बड़े बड़े अभिनन्दनों से महातृप्ति हो आती है, अन्य महत्त्वाऽऽकांक्षा की वृत्तियाँ विरमित हो जाती हैं, तब ब्रह्मकल्पतरु मिलने से परमश्रेयः भी प्राप्त करा देता है, अभिनन्दन में वैसी असंख्य शक्तियाँ पड़ी हैं, अभिनन्दन पानेवालों को वे शक्तियाँ जाग्रत ही होती हैं, परीक्षक को ज्ञात होती हैं, इस स्थिति में ब्रह्मानन्द देनेवाला अभिनन्दन स्वयं सच्चिदानन्दरूप में भी उर्वरित बन जाता है, अभिनन्दन का स्वच्छ धवल प्रकाशमय स्वरूप झलकता है, उद्वेलित तरंगे उठने लगती हैं।

आत्मा प्रकृति या विज्ञान-द्रव्य से ऊगजनेवाले सभी तत्त्वों में द्रव्यों की सूक्ष्म सम्पत्तियाँ अवतरती हैं, अतः सूक्ष्मरूप से शिवस्वरोदय, षट्चक्रनिरूपण, शिक्षासंग्रह, योगशास्त्र, स्वरशास्त्र, संगीत आदिक में वायुतत्त्व बीजतत्त्व विज्ञानःस्वर राग इत्यादि में भात भात के रंग बताये हैं, उन्हीं तत्त्वों को लेके प्रकट हुए अभिनन्दन ग्रन्थ के विषय में आनन्द व रंगजमावट पीढ़ी प्रपीढ़ी परम्परा से अवतरते हैं, सन्त के शास्त्रीय अभिनन्दन में सात्त्विक वर्ण अवतरता है, जो प्रकाश प्रभा विज्ञान तेज चमक सत्त्व आदि में अनुभूत होता है, राजकोय अभिनन्दनों में रक्त रंग प्रायः अवतरता है, लडायक संहारक अभिनन्दनों में प्रायशः नीलरंग अवतरता है, सत्संग के अभिनन्दन आमन्त्रण पूजन आदि में देवता कार्य फल के अनुरूप रंग चित्र विचित्र रूप अवतरते हैं, श्वेत पाण्डुर उजला रंग आखीर को अवस्था में ऊपजता है, जिसमें ऊपजते ही सात्त्विकता होती है, उसमें प्रथम से कोमलतावाली चरम अवस्था ओतप्रोत होती है, उसमें प्रधान रूप में आनन्द ही बसता है, ये कुंकुमवापी स्थल में प्रकट हुए व अनेक भूमिकाओं से विद्वानों ने भेजे हुए अभिनन्दन अनेक रंगों से रंगित हैं, जिनके फल भी कुंकावावनगरी में सभी मानवों के लिये सभी प्रकार के अभ्युदय के साथ आनन्द में ऊपजते जायँ व प्रजा का गौरव बढ़ाते जायँ, यह भी मेरा अभिनन्दन है।

इस मानवीय अभिनन्दन को परमेश्वरीय अभिनन्दन में सामेल होने की प्रार्थना करता हूँ, भारतीय कलाएँ आसपास के देशों में प्रविष्ट हुई हैं, वहाँ की जनता ने बड़े प्रेम से अपनायी हैं, भारतीय संस्कृति विद्या अन्य सभी देशवासी धीमन्तों ने निज प्रजा में प्रचरित की है, इन पर दृष्टि देने से ज्ञात होता है—भारत सभी देशों के अभिनन्दनपात्र है, भारतीओं में भारतीय विद्याएँ अभिनन्दनपात्र हैं, विद्वान् लोग सन्तजन विशेषतः अभिनन्दन के पात्र हैं, जिनमें अभिनन्दनों के पायें भूगर्भ-व्योमपटल प्रदर्शी प्रासादों के आधारभूत हो गये हैं, जिन पर विद्यालयें स्थान स्थान पर उत्भूत हो रहे हैं, इन पायेदार सम्पत्तियों को भी मेरा अभिनन्दन है—जो अविचल पायेदार ही बनी रहें।

अभिनन्दन आन्तरिक धन है, वह बाहर सुमूर्तस्वरूप में झलकता है, कवियों की कहानियाँ, रसिकों की रसिकता, कार्यशीलों की प्रोत्साहितता, उपकारकों की उपकारिता, दानेश्वरों की प्रदानिता, गुरुओं की उपदेशिता, आचार्यों की गरिष्टता, कुटुम्बियों की सुजनता, सत्ताधीशों की सुकारिता, निर्धनों की सुबाचिता, अशक्तों की आशीर्वादिता, देशवासियों की मानसिक-मूर्तता, नाणावटीओं की भव्यभवनता, आराधकों की आराधना, ये सब सूक्ष्म मध्यम व स्थूल रूप में अभिनन्दन-नाम को स्वीकारती हैं, तभी स्वस्वरूप में सफल भावभरी हो जाती हैं, वैसे आपके अभिनन्दन सुमूर्तता को धारण करो, मेरा अभिनन्दन उनमें मिलकर उपकारक हो वैसी परमेश्वर से प्रार्थना करता हूँ, सौराष्ट्रभूमि अभिनन्दन-प्रासादों से सुशोभित होती चले, ईश्वर इन्हें निभाते चले।

सभी विद्याओं में साहित्य सरल है मगर अति गहरा है, दुनियाभर के कविजन थाह लेने लगे तो भी साहित्य का थाह नहीं ले सकेंगे, चित्रवर्णन, खेलों के निरूपण, सुरूपी देखाव, व रुचिकरी रसभरी चेष्टाएँ लिखने लगे तो भी उनका अन्त नहीं आता, भिन्न व्यक्ति भिन्न अभिप्राय भिन्न चेष्टाएँ भिन्न कालक्रम, इनका अन्त कोई नहीं पाता, अन्त लेने की इच्छावाला आरम्भ करता है आगे चलता है तब तक में अन्त्येष्टि में समाप्त हो जाता है। डीलनटाम्स-नामक चैष्टिक-लेखक ने फिल्म का एक 'सिनारियो' ही लिख दिया, उसका अच्छे अच्छे परीक्षकों ने अति उत्कृष्ट साहित्यिक कृति के रूप में मुक्तकण्ठ से अभिनन्दन किया, क्योंकि—इष्टविषय हो गया, अनेक रस परोसनेवाला साहित्यिक परिवेषक जरूर रसगर्धियों के अभिनन्दन-पात्र होते हैं, सभी देशों में रसगर्धी मानव ज्यादे मिलेंगे, अतः बॉटिंग में रसाभिनन्दन बढ़ ही जायँगे, मगर इतना कहना आवश्यक है कि—रसगर्भीओं में से ब्रह्मरस के आस्वादी ऊपजेंगे, ऊपजानेवाले व्यवस्थित-विद्यालय मुख्य होते हैं, अतः मेरा अभिनन्दन उस प्रणाली में भी ब्रह्म-रसाऽऽस्वादी के लिये विशेष बल करे तथा अजर-अमर फलों में सार्थक बनें।

अनेक व्यास भगवानों ने स्वात्मा में स्थित व्यष्टि-समष्टि में ध्यान लगाकर अनेक इतिहास लिखे हैं, समय पलट जाने से वे सब सत्य ही निपजते हैं, और कथाकारों द्वारा अभिनन्दित होते हुए वे इतिहास जनता द्वारा भी अभिनन्दित होते जाते हैं, उनमें जूठापन की दृष्टिवाले चीड़िये लोग तो विपरीतपने के अभिनन्दन में गूँगलाते रहते हैं, मगर सत्य देखेंगे तब यथार्थ में बरतने लगेंगे, मेरा उसी प्रकार के याथार्थ्य के लिये इस भूमि में अभिनन्दन सदा के लिये जाग्रत होता रहो, साक्षी प्रेरित चैतन्य के स्तरों में जो जो अभिनन्दन प्रकट होते जायँगे वे सभी साक्षि दृष्टि के विषय यथार्थ ही होते हैं, हमें साक्षी ब्रह्म, सत्य अभिनन्दन प्राप्त कराते रहो, वर्तमान समय में अभिनन्दन प्रकट होता हुआ भविष्य के पात्रों के लिये जीवितसा रहता है, अतः भावी भी लक्ष्य सभी अभिनन्दनों के लक्ष्यरूप में अनिवार्य है, श्रीहरि सभी के लिये अच्छे अभिनन्दन प्रकटाते रहो।

जिनके ग्रन्थ जनता को रंजन करते हैं, वे ग्रन्थ लेखक ग्रन्थों द्वारा अभिनन्दन के पात्र हो चूकते हैं, साधारण जन भी जिनके ग्रन्थों से तत्त्वज्ञान सुमूर्त पाते हैं वे स्व-उल्लास व्यक्त करते हैं, उल्लास से अभिनन्दन जन्म पाते हैं, वैसा मेरा भी अभिनन्दन सबके प्रति हो, लेखक तात्त्विक सैद्धान्तिक भावनाओं को प्रकट करते हैं, मानवजाति उन शास्त्रीय भावनाओं को अपनाती है, तभी से लेखक मानव जाति के बड़े प्रतिष्ठित होते हैं, यह प्रतिष्ठा अभिनन्दन के स्वरूप में भेंट रूप हो जाती है, वैसी प्रतिष्ठावाले आप लोग हो। कोई लक्ष्मीनारायणसंहिता द्वारा व्यासप्रतिमा को अभिनन्दन देते हैं, कोई सांख्ययोग वेदान्त के भाष्य द्वारा आचार्याऽवतार को अभिनन्दन देते हैं, कोई न्यायवैशेषिक ग्रन्थों की टीकाएँ द्वारा तार्किक-नैयायिकपने को अभिनन्दन देते हैं, कोई अति गहन शक्ति ख्याति प्रमात्व व्युत्पत्ति आदि वाद ग्रन्थों द्वारा उच्च कोटि के पाण्डित्य को अभिनन्दन देते हैं, कोई अनेक पद्यबद्ध ग्रन्थों के द्वारा कवित्व को अभिनन्दन देते हैं, कोई आलंकारिक आध्यात्मिक पदपारावारिक सार्वभौमिक अभिनन्दन देते हैं, कोई वक्तृत्व लेखकत्व अध्यापकत्व शास्त्रवादत्व के विद्वत्ताभरे अभिनन्दन देते हैं, कोई नैष्ठिक ब्रह्मशील सन्त स्थिति के तथा भक्ति के अभिनन्दन देते हैं, कोई पृथिवीसमान क्षमा के, अपरिवर्तन स्थिति के, विनीतता के, भी अभिनन्दन देते हैं, वैसे चमत्कारिक वाक्सिद्धिमय अभिनन्दन भी देते हैं, सभी के अभिनन्दन परमात्मा से अनुग्रहवाले यथार्थ सफल भी हैं, मेरा अभिनन्दन उन अभिनन्दन उन अभिनन्दनों के साथ मिलकर आपके प्रति भी उन्हीं फलों में हो।

यह बात जरूर होती है कि—जिनके प्रति प्रेमिप्रशंसकों की कमी न हो उनके प्रति अभिनन्दन की भी कमी नहीं रहती है, प्रशंसा गुणों से स्थान लेती है, जितने जिनके अभिनन्दन, उतने उन व्यक्तिओं के हार्दिक प्रेम सिद्ध होते हैं, जितने प्रेमों के सागर, उतनी ही कलाओं के सागर प्रशस्त व्यक्तियाँ साबीत होती हैं, एक व्यक्ति में अनेक द्रष्टा मन्ता विज्ञाताओं की प्रशंसाएँ जूट जाने पर वे सिद्ध कर ही देती हैं कि सभी प्रशस्त कलाओं की क्षेत्रभूमि प्रशंसापात्र परमपुरुष सभी अभिनन्दित विद्याओं की मूर्ति प्रकट प्रमाण है। इसको प्रशंसा द्वारा अपरिचित लोग भी पहचानने लगते हैं, यथार्थ पहचानने पर आत्मलाभ प्राप्त कर लेते हैं, यज्ञ में अदृष्टतत्त्व दिखलाई नहीं देता, काल की क्षणप्रक्रिया चीजों पर तुरन्त दिखलाई नहीं देती, मानस के परिवर्तन उसी क्षण में ज्ञात नहीं होता, किन्तु सभी परिणामसील हैं, दृश्यों की तरह स्वकार्य करके कहीं विराम भी ले लेते हैं, अदृश्य के अदृश्य भी हो जाते हैं, वे अपने कार्य दृश्यों में प्रकटाकर ही तिरोहित हो जाते हैं, प्रशंसा व अभिनन्दन खूशियाली भी उसी प्रकार व्यक्तित्व का उत्कृष्ट स्वरूप जमाते हुए स्वयं न्यूनता में मार्ग लेते जाते हैं, आखिरी स्वरूप में ब्रह्मप्रसन्नता में समाविष्ट हो जाते हैं, ये सभी अभिनन्दन ब्रह्मस्वरूप देनेवाले हों, यह मेरा भी सन्तस्वरूप द्वारा अभिनन्दन है।

शास्त्र नाट्य सरघस प्रदर्शन आदिक प्रशंसा के अभिनन्दन रूप में सुमूर्त ही रचे गये हैं, जिन दृश्य से ऐतिहासिक प्रसन्नताएँ नयीसी रहती हैं, सीनेमा के दृश्य इष्ट का बोध देता हुआ पुरातत्त्वों के नये स्वरूपों को खड़ा करता है, चलती अविदित प्रणालीयों को प्रकाश में लाता है, अनभिनन्दन के साथ-साथ अभिनन्दन को बहाता है, ग्राम्य अभिनन्दन दील में जँच जाता है, इसे ले लेकर द्रष्टा लोग कई दिन तक उस दृश्य के सहारे गूलतान रहते हैं, नयी राज्यगद्दी नया विवाह नया आचार्यपद नया द्रव्योपार्जन नये आविष्कार अतर्क्यलाभ नयी सिद्धियाँ नया संगम आदि आदि प्रशस्त-अभिनन्दन आत्माओं को गहरी प्रसन्नता में बरतानेवाले चिरंतन बन जाते हैं, आखोर परमेश्वर में अभ्यस्त रीति को निपजाते हैं, ऐसे अभिनन्दन आपके प्रति मेरे प्रति भी प्रकट होते रहों।

आलोचकों को मूर्तिमती भावनाएँ व्यक्ति की योग्यता में मिल कर उजले उत्कृष्ट वन्दनीय बना देती है, व्यक्तिओं के इतिवृत्त पाठ्यक्रम में भी स्थान लेते हैं, विद्यालयों में उनके अभ्यास द्वारा बोध पाठवाले छात्रगण स्वयं उन स्वरूप में प्रकट हो आते हैं, तब उन अभिनन्दनों की सफलता पर्याप्त होती है, शास्त्रकार जनता के प्रति अपनी समज्ञप्ति के प्रवाह बहाते हैं, जनता उन्हें अभ्यस्त कर लेती हैं, अपनी नयी ज्ञप्तियों को उनसे मिलामिलाकर प्रकाश में लाती है, तब जनता से अभिनन्दन प्रकट होते है, वे लिटरेचर फिलोसोफर लेक्चरर राईटर टीचर थोटर डोक्टर आदि को विषय करके उनके कीर्तिध्वज बन जाते हैं, गहराई को व्योम-वितान बनाते हैं गम्भीरता में से सरलता ऊपजाते हैं मार्मिकता को हार्दिक व अपरोक्ष बना देते हैं, अभिनन्दन लेने-देने वाले में जा-जाके वास करके कई प्रकार की वेदनाओं को मिटाते हैं, शान्तियाँ स्थापते हैं, प्यासे को जल की तरह तृप्तिलहरीयाँ व आनन्दलहरीयाँ को देते हैं, वैसे अपने परस्पर अभिनन्दन सफल हों।

देश में अच्छे अच्छे दिगन्त विख्यात कवि लोग हो गये, कई कवियों ने राजा-प्रजा के गुण गाये, दुर्लभ कविवरों ने परमेश्वर तीर्थ सन्त सतीयों के गुण गाये, उन्हें जो जो अभिनन्दन मिले हैं वे सारे देश की प्रजा के उत्कृष्ट गुण सामर्थ्य ऐश्वर्यों के हैं, तार्किकों के स्थान की तरह कविवरों के स्थान विशाल हैं, जिनकी प्रतिभाएँ समग्र सृष्टि में व्याप्त होके असृष्टि में पहूँचती हैं, इससे वे बड़े चतुर्गुणित ऋषि-महर्षियों की प्रतिमाएँ बनते हैं, बुद्धि प्रतिभा परमेश्वर की ज्ञानशक्ति से बढ़ती ही जाती है, नये नये

कल्पतरु बढ़ते जाते हैं, इनकी शाखाएँ सुफोरमभरी सुरसदार फलभरी दिगन्तों में पहूँचती हैं, देवगणों के अवकाश में जाके छूती हैं, उनके लिये अभिनन्दन जो जिस प्रकार का होता हो वह आपके अभिनन्दनों के प्रति मेरा भी अभिनन्दन है, जो बृहस्पति व जगत्पति के चरणों में समर्पित हो।

गौरव स्वरूप में प्रशंसा भी अभिनन्दन का रूप है, बड़े बड़े कृपालु विद्वानों के अभिनन्दन एक छोटेसे सौराष्ट्र देश में वास करनेवाले मेरे सम व्यक्ति के लिये हो रहे हैं, भारतीय विद्याओं के उपासक चिन्तक प्रचारक नवीन स्वरूपप्रद विद्वान् व्यक्ति में प्रीति से स्वीय भारतीय विद्याओं की जीवनी में समर्पित हुए निज शिष्य प्रणाली में उछरे हुए मुझमें जो जो अभिनन्दन प्रार्पित किये हैं वे सभी माता सरस्वती के लिये अभिनन्दन हैं, मेरा भी प्रेम इस प्रणाली में है, नहीं कि कीर्ति में, या ख्याति में, ये सब तो माताजी के प्रताप से ओतप्रोत हो रहते हैं, अतः निःस्वार्थ विद्वानों के अभिनन्दनों में मेरा अभिनन्दन भी निःस्वार्थ रूप में समर्पित हो।

मानव मानवों द्वारा शाबासी की झंखना करता है, अन्य से नहीं, परीक्षक मानवों से ही शाबासी मिलती है, निरपेक्ष व अपरीक्षितों से नहीं मिलती, न तो आशाविषय भी होती, कोई भी कृति जिनके लिये है उनसे अपनायी जाय तभी वह अभिनन्दित हो चूकती है, विभिन्न विषयक परीक्षक यदि उन सर्वतोमुखी विद्वज्जनों को धन्यवादों से अभिनन्दित न करें तो हताश हो जाते हैं, निष्फलता को सोचते हुए अवतार बिताते हैं, वैसा शोकित अवतार न जाय, उत्साहित अवतार बीते, इनका कारण सुप्रतिष्ठित परीक्षकों का अभिनन्दन है, आपके उस प्रकार के अभिनन्दनों से मेरा उत्साहित स्वरूप चलता रहेगा, जन्मभर के अभ्यासों के परिश्रम तथा ग्रन्थलेखन के परिश्रम तथा तत्त्वचिन्तन के परिश्रम तथा अपरिग्रह के पराभव आदि आदि इस अन्तिम अवस्था में विलीन हो गये, इसके लिए भी आपके जीवन प्रदान के प्रति नेरे अनेकाऽनेक अभिनन्दन हैं, जो भविष्य के सुकृतियों के प्रति भी प्रकट होते रहें। नीपजते गुणियल को आगे बढ़ने के लिये अभिनन्दन बड़ा आधार है, तथा आपूरक है, आरब्ध कृतियों के पार सीमा में पहुँचाता है, इसमें सर्वविध साफल्य प्राप्त होता है, एक तरफ से अनुत्साह मिलने पर दूसरी तरफ से प्रोत्साहन प्राप्त होने से पाण्डित्य शान्ति में ठण्डक देता है, अभिनन्दन शीतलता के रूप में मित्र बनकर प्रवासी के प्रवास में सफलता देता है, सफलता देनेवाले शीतल अभिनन्दन आपके हैं वे मेरे अभिनन्दन को भी शीतल स्वरूप में परिणत करें, विरह घबड़ाहट को मिटावे, सुक्षमता देवे।

मनुष्यों के हृदय वाणी में, वाणी के भावार्थ ग्रन्थ में प्रकट होते हैं, ये भाव ईश्वरप्रदत्त होने से सभी में विराजमान परमेश्वर उन भावों के प्रति सौहार्द बताते हैं, वह सौहार्द ज्ञातृजनों के द्वारा प्रकाशित होता है, वैसा सौहार्द अभिनन्दन रूप में सुमूर्त मिलता है, अतः परमेश्वर व विद्वज्जनों का प्रत्यक्षदर्शन अभिनन्दनों में होता है, यह लाभ मुझे मिला है, दूर दूर के गुरुजन आज अभिनन्दन रूप में अभिनन्दनग्रन्थ में दर्शन दे रहे हैं, जिस दर्शन से मेरे विविध कल्याण उपस्थित हो रहे हैं, व्यास भगवान् अरण्य में राजा युधिष्ठिर से मिले, तब युधिष्ठिर के सभी परिश्रेयः के प्रस्रवण बहने लगे, "तवाऽऽत्मयोनेरिह किं न धत्ते" आप प्रभु पधारने से मेरे में क्या क्या नहीं बस पाया, सभी कुछ मिल गया, आपके अभिनन्दनों से मुझे सभी कुछ मिल गया, आज मैं पूजनीयों के आशीर्वादों से धन्य पात्रत्व मानता हूँ।

अभिनन्दन मनोरञ्जन में फैलता है, लौकिक प्रसन्नता के लिये उदासीनता को दूर करने के लिए कई प्रकार की गीतियाँ अभिनन्दन रूप में गायी जाती हैं, उन्हें सुनकर श्रोतृवर्ग अपनी दुःख नदियाँ सुखाकर सुखसागर में न्हाता है आनन्द मानता है, पुत्रोत्सव, विवाहोत्सव, पट्टाभिषेक इत्यादि में ये गीतिकाएँ आनन्दों के आनन्द देती हैं, ये भी लोककृत अभिनन्दन हैं, समग्र दुनिया इन गीतिका द्वारा

सुखीपना मानती है, वहाँ पण्डिताई काम नहीं आती, अवसरज्ञताई काम देती है, शरत्पूर्णिमा, होलिका, सावन आदि में सामूहिक सरसाई काम देती है, यौवनोद्भेद में व्यंजकताई काम देती है, सखीयन में ठट्ठाई काम देती है, वहाँ वहाँ भी उन्हीं रीतियों के अभिनन्दन रचे जाते हैं, जो सुखदायी हों, वैसे अभिनन्दन भी भगवत्प्रसन्नतार्थ सुखदायी हों।

जो कोई काम भगवदर्पणात्मक व देश-प्रजा के हितार्थक होता हो वह आशीर्वाद का पात्र है, वर्ण के तथा आश्रम के धर्मवाले जन आशीर्वाद पात्र हैं, चौथा आश्रम त्यागाश्रम ब्रह्मशीलाश्रम सदा के लिये आशीर्वाद पात्र है, अपरिग्रही सन्त जरूर आशीर्वाद-पात्र है, मुझे भी वैसा आशीर्वाद-पात्र समझ के ही अभिनन्दन देना, मैं समझता हूँ—मेरा साधुधर्म है, शान्ति का आश्रम है, क्षमा में रहना ही सहन करना ही धर्मव्रत है, आपत्तियाँ आने पर भी कहीं राज्य न्यायालय का दर्वाजा नहीं खटखटाया, ईश्वरेच्छा से जो बदल आये उन्हें नमता दिया शान्ति का ही आश्रम लिया, उपद्रवों का पान किया, अन्यत्र जीवन का स्थिर सुख में जीवनी चलाई, अभी भी वही स्थिति है, मानव में देवबुद्धि रखने से विनीतता स्वयं रहती है, इस प्रकार के उत्तम सन्न्यास के लिये आपके अभिनन्दन मुझे फलीभूत हो, मेरा भी वैसा ही सुखद अभिनन्दन सभी के प्रति हो, यही मंगलमय प्रशस्त अभिनन्दन प्राप्त किया है व कर रहा हूँ तथा ही करता रहूँगा, जहाँ सुरक्षा सुशासन सदुपदेश अचौर्य आदि सद्गुणवाली प्रजा बसेगी वह नगर देश भी अभिनन्दन के पात्र हैं, जहाँ शान्ति वहाँ अभिनन्दन, बराबर होता ही रहता है।

गुरुकुलों की तरह जिस भूमि में विद्यादानार्थ बालकों के सुरक्षण किये जायँ, वैसी भूमि भ अभिनन्दन पात्र है, जहाँ चतुर्दश विद्याओं का, चार उपाय, चार पुरुषार्थ, शमदमादि साधन तथा धर्मभक्ति शील आदि व्रतों का पावन पालन वातावरण छाया रहता हो वह भूमि सदा के लिये पूजनीय सत्करणीय अभिनन्दनीय आशीर्वादनीय दानार्पणाऽर्हणीय तथा संभालनीय है, वैसे आदर्शवाले प्रजाजन जरूर अनुकरणीय व अभिनन्दनीय हैं, जो ग्राम नगर देश से सम्बन्ध रखकर देश की व निज की उन्नति परायण हैं वे ग्राम नगर व देश परस्पर स्वकर्तव्यपालनपरक होते ही हैं, वे निवास के फल सुखद अति-सुखप्रद पाते हैं, सुस्मृद्ध अवस्थाएँ भोगते हैं, परोपकारादिद्वारा जनता अपने धर्म को अदा करती हैं। महाविद्यालय, जलाशय, वृक्षारोपण सुगममार्गरचना धर्मार्थभवन जलप्रथाविधान अनाथालय अपंगालय फलिबगीचानिर्माण देवेश्वरमहोत्सव सत्संग आयोजन भजन कीर्तन व्रत आदि आदि सत्कार्य सभी अभिनन्दनों से भरे रहते हैं, उन्ही प्रजा को अभिनन्दन मिलता है, परमात्मा का भी वही सन्देश है—मेरे धर्मों को साहाय्यप्रद हो, वे मेरे अभिनन्दन-पात्र हैं, देश में दानी महादानी बढ़ों, वेदशास्त्रज्ञ पण्डित नीपजो, उन्नतिशील प्रजा हो, श्राद्ध होता रहो, तीर्थ हो, प्रचुर धान्य हो, धनोपार्जन खूब खूब होता रहो, अतिथि आते रहो, आशीर्वाद मिलते रहो, तृप्ति रहो, सभी अंगन में पूर्णाशा बरता करो, हमारी सादाई लुप्त न हो, लोक राजी राजी रहो, सुख प्रेरते रहो, सुशब्द सुनाते रहो, ईश्वरीय दूतों द्वारा सदा रक्षा होती रहो—ये सभी अभिनन्दन हैं, इनके सुपात्र होने का अभिनन्दन आपसे चाहता हूँ।

इस युग में सभी के विकास हो रहे हैं, मौज-मजाओं के साथ-साथ हैरानगति, धनाढ्यता के साथ दरिद्रता, औदार्य के साथ मक्खीचूसता, विज्ञान के साथ अविद्या, सम्पत्ति के साथ तृष्णा, उन्नति के साथ अवनति, स्वर्गदर्शनों के साथ वेदना-अनुभव, भोगों के साथ रोग, श्वेताई के साथ ठगाई, आश्वाशन के साथ कापट्य, स्नेह के साथ छेतरपिण्डी, उपार्जनों के साथ कवलीकरणता, सिद्धियों के साथ पतितता, सत्ताओं के साथ अतृप्ति, मीठाश के साथ मलिनता, सुरक्षणों के साथ अकस्मात्, आस्तिकता के साथ

नास्तिकता, नियमित उल्लासों के साथ अमर्यादा, घी क्षेत्रों में अहन्ता, सार्वजनिक में ममता, शान्तिगृहों में कलह, शोभनस्थितियों में स्वतन्त्रता, तत्त्वनिर्णयों में अतत्त्ववाद, और अविनीतों का साम्राज्य भी विकसित होते जा रहे हैं, अभिनन्दनों के साथ दुरभिनन्दन भी हाजरी देता है, मैं प्रभु से प्रार्थना करता हूँ अभिनन्दनवर्षी सात्त्विक विद्वानों के अभिनन्दनों के विकास में विपरीत दुरभिनन्दनों का बल मत हो, देश सुखी हो, सनेत्र हो, बलिष्ठ हो।

प्राचीन-समय में विद्वानों द्वारा समुद्रगुप्त को भी बड़ा भारी अभिनन्दन मिला था, राजा समुद्रगुप्त कविराज कहलाता था, वैसे विक्रमादित्य तथा विद्वान् भोजराजा को भी संस्कृत धर्मराज्य प्रजाहित पाण्डित्य आदि आदि के अभिनन्दन मिले थे, कवि कालीदास कवि भारवी कवि श्रीहर्ष कविमाघ आदि आदि बड़े अभिनन्दन-पात्र हो गये, जिनके अभिनन्दन प्रत्येक मानव में जीवित हैं, विद्वान् रघुनाथशिरोमणि, विद्वान् मथुरानाथ, विद्वान् गदाधर, विद्वान् जगदीश, विद्वान् मधुसूदन सरस्वती, विद्वान् कुमारिलभट्ट, विद्वान् वाचस्पति मिश्र, विद्वान् नाथयामुन, ये बड़े बड़े विद्वान् समग्र दुनिया में अभिनन्दन-पात्र विद्यमान से हैं, विद्वान् बच्चाझा, विद्वान् बालकृष्णमिश्र, विद्वान् वामाचरणभट्टाचार्य, विद्वान् पण्डितराज राजेश्वरशास्त्री विद्वान् वीरराघवाचार्य आदि आदि अनतिदीर्घकालीन तथा विद्यमान भी बड़े बड़े वाग्देवताधिष्ठित विद्वत्समुदाय, श्रीशिवकुमार शास्त्रीजी के स्मरण कराने वाले विद्वानों के अभिनन्दन चौदह भुवनों में बढ़कर विजय पाते हैं, जो कहीं भी किसी के समीप में अभिनन्दन नहीं हो सकते, वैसे विद्वद्गुणों के अभिनन्दनों से आज कुंकुमवापी नगरी सचमुच चिरंजीवी अभिनन्दित हो गई है।

जो कोई आत्मा में अभिनन्दन के पात्र होते हैं वे उनकी शक्तियाँ द्वारा अच्छे कार्य करने पर ही अभिनन्दन के पात्र होते हैं, कविजन काव्यशक्तियों से विद्वज्जन विद्याशक्तियों से, देव देवताईशक्तियों से, जनसमुदाय विकास शक्तियों से, परम पुरुष ब्राह्मी शक्तियों से अवतारी पुरुष स्वदिव्यकार्यशक्तियों से सुप्रशस्त व अभिनन्दनीय होते हैं, समग्र सृष्टि की कारण भगवान ने ग्रहण की हुई शक्तियाँ, उपादान कारणभाव को भजती हैं, प्रभु इनके द्वारा सर्वत्र अभिनन्दनीय स्वयं ही है, चेतन तत्त्व चेतना बिना अपूर्ण सा रहता है, चेतना चेतनाविना अनाश्रिता अनस्तिता में चली जाती है, अतः जगत् के माता-पिता के स्वरूप नारायणी नारायण आदि सभी प्रकृति पुरुष रूप में समष्टिव्यष्टियाँ भगवल्लीलाविभूतियाँ दृश्य हो रही हैं, प्रभु प्रकृति को अभिनन्दन देते हैं, भगवान् अपने कार्य को अभिनन्दन दते ही रहते हैं, कार्य जडचेतनात्मक समस्त द्रष्टवर्ग निज संचालक को अभिनन्दन देते ही रहते हैं, विद्वान् लोग इसी प्रकार इस कुंकुमवापी नगरी को अभिनन्दन दे रहे हैं, यह सत्य है कि आप परमेश्वर व परमेश्वरी को अभिनन्दन दे रहे हैं, मेरा भी अभिनन्दन आपके अभिनन्दनों में मिलकर जनता-जनार्दन रूप परमात्मा में समर्पित होता हुआ अनेक लाभ देनेवाला हो, राधालक्ष्मीजी की तरह विद्यादि शक्तियाँ प्रभु ने ही ऊपजायी हैं, वे प्रभु के ही कार्य करती हैं, वे शक्तियाँ तथा सन्तस्वरूप ये भगवान में तदात्मक हैं, अतः सन्त के साथ भगवान् तथा भगवतीयाँ के भक्तिमय सभी अभिनन्दन आप सबकी चढ़ती कला रक्खें।

जो कुच्छ आनन्द है परमात्मा का है, जल के मिष्टरस अनेक स्वरूप में पार्थिव औषधियों में मिलते हैं, परमात्मा एक आनन्द रस स्वरूप है, ब्रह्म सभी में विभिन्न रूपों में मिलते हैं, कुण्डलिनी जाग्रत् करके योगिजन उन्हें प्राप्त करते हैं, उपासक भक्ति द्वारा स्नेह द्वारा प्राप्त कर लेते हैं, कृपा द्वारा स्वयं प्राप्त होते हैं, हृदयाकाश में आनन्दाऽभिनन्दन स्वरूप में भगवान ही दिये लिये जाते हैं, अद्वैत या द्वैत प्रक्रिया से वे ही अन्तर्नियामक प्रभु ईश्वर ब्रह्म पुरुष रूप में अभिनन्दनपात्र हैं, 'अहं ब्रह्माऽस्मि' भी

आत्मतत्त्व के अभिनन्दनरूप में है, 'स्वेन रूपेण अभिनिष्पद्यते' यह भी प्रभु के साथ निज सुमूर्त रूप का अभिनन्दन व्यक्त करते हैं, अवास्तविक अर्थात् व्यावहारिक व प्रातिभासिक के अभिनन्दन भी वास्तविक सत्परमात्मा के प्रति समर्पित होते हैं, क्योंकि अभिनन्दन के विषय सभी प्रशंसनीय परमात्मा की ही शक्तियाँ हैं, उनकी ही चीजे हैं, उपनिषदों के सभी तत्त्वों की सत्यता में तात्पर्य निकलता है, सत्यता बहुधा तो विचारशीलों की ज्ञानधारा से विभिन्न हुई हैं, एतावता सत्यता शाश्वती नहीं मिटती, सब कोई—मुक्ति, नित्यसुख, दुःखात्यन्ताभाव, स्थिर आनन्द स्थिति, स्वरूप को स्वीकारते हैं, तब यहां जो था वह शाश्वत सत्य ही आखिर में रहा, अतः सत्यत्वानुपूर्वी कभी विपरीतानुपूर्वी नहीं होगी, सत्यानुपूर्वी भी यदि आविर्भावधर्मिणी हो तो तिरोभावधर्मिणी भी होती है, तिरोभावावस्था में उनकी सत्य सूक्ष्मता की हाजरी दिखलाने के लिये भी अभिनन्दन बड़े चमत्कारी स्तर हैं, जिनसे तिरोहित वस्तु भी चेतनों के पास अतिरोहितसी दिखने लगती है, परमात्मा स्वयं यदि अभिनन्दन के अधिष्ठान हो तो ज्ञाता ज्ञेय ज्ञान का ऐक्य ही अभिनन्दन का ही ऐक्य करता है, वह अभिनन्दन जगत् के लिये व्यापक होकर कभी न कभी समग्र सृष्टि के लिये उपयोगी होता है, कोई न कोई व्यापक आविष्कार ऊपजा के जगत् के लिये बड़ा लाभप्रद होता है।

आत्मा के आगन्तुक ज्ञान लीन हो जाते हैं, अनुभव संस्कार स्मृतियाँ इनकी धाराएँ भी लीन हो जाती हैं, किन्तु चित्-चैतन्य जो नित्यज्ञानात्मा आत्मस्वरूप स्वयं प्रकाश है वह कभी लीन नहीं होता, विद्वानों के प्रकट स्वरूप अभिनन्दन ज्ञान स्वप्रकाशज्ञान में मिल जाने से वे शाश्वताभिनन्दन हो जाते हैं, ऋषि महर्षि योगी अवतारी पुरुष, उनके उपयोग से फिर सत्ययुगादि के धर्म स्थापते हैं, इसी की पुष्टि में कहा है—'धाता यथापूर्वमकल्पयत्' इसी प्रकार के अभिनन्दन शाश्वत हो जाते हैं, जिनकी दृष्टि में साधन व साध्य भगवान ही है उनके दिये अभिनन्दन भी भगवान के लिये हैं, साध्य के अभिनन्दन साधन-सापेक्ष है, साधन के अभिनन्दन साध्य के लिये तैयार है, अपने सभी अभिनन्दन साधन-साध्यात्मक हों।

मानवीय परिच्छिन्न आत्माओं की तरफ से दिये जाने वाले अभिनन्दन परिच्छिन्न हो सकते हैं, ज्ञान की परिच्छिन्नता से वैसा है, परं परमात्माऽन्वित जीवसाक्षिस्वरूप चैतन्य में प्रकट हुए अभिनन्दन सर्वज्ञकर्तृक होने से सार्वज्ञ्य के स्तर को अपनानेवाले होते हैं, वे वास्तविक भाव को भजनेवाले हैं, त्रुटियों से रहित होते हैं, वैसे आप के अभिनन्दन मेरे प्रति हों।

जो परमात्मा के निवास से सदा प्राप्य है, प्राप्ति के विषय नहीं होने पड़ते, वैसे आप के आप के अभिनन्दन मेरे में प्रकाशित ही हों। अज्ञात या ज्ञात के स्वरूप में यदि हों तो वे भी स्वरूप ज्ञानमात्र में प्रकाश को विशेष झलकाने वाले हों।

अनेक सन्त विद्वानों ने, समाधिस्थितिवाले योगी, नैष्ठिकमहायति, ऐश्वर्यशीलचमत्कारी, वचनसिद्धसिद्धिशाली, संकल्पसिद्धनिधिशाली दैवतसिद्धस्वर्गनिवासी ज्ञानविज्ञानसिद्धबृहत्त्वशाली वैराग्य-शीलनिर्मोही आत्मनिष्ठब्रह्मशाली सर्वसद्गुणशाली भी विशिष्ट महामहिमशाली कहकर उन अर्थों में अभिनन्दन दिये हैं, मुझे दिखता है कि ईन सब से न्यून हूँ, परं आप के आशीर्वादों से उन पथ पर चलते चलते वैसे अभिनन्दनों की स्वरूपयोग्यता बढ़ती हुई वास्तविकता में जरूर पहुँचायगी, अत एव मुझे भी एक बड़ा आनन्द मिल रहा है जो मेरे निःश्रेयस के लिये सहायक अभिनन्दनों द्वारा अखण्ड आ रहा है। ज्ञानयोग कर्मयोग भक्तियोगों के आनन्द भी मिलते रहेंगे, महापुरुषों का यह उत्तम गुण है जो स्वयं सर्वथा पूर्ण होने पर भी परमपुरुष से किसी प्रकार की अपूर्ति को हठा के पूर्णता को इच्छे, आप के अभिनन्दन मेरे उक्त लाभ के लिये हों।

इन्द्र के आशीर्वाद से कामदेव शंकर के प्रति विजय लेने गया, परन्तु आशीर्वाद कहनेवाला स्वार्थी था, और पराभूत करने के लक्ष्य पात्र शंकर भगवान् ब्रह्म स्थितिक निःस्वार्थी थे, इस प्रकार की विषमता उपस्थित थी, योगीश्वर की सिद्धि हठनेवाली नहीं थी, कामबाण का प्रयोग करने पर नेत्र खुलते ही ब्रह्मस्वरूप में जो नहीं ही है वह चोट लगाने आया, उसी अपराध से बड़ों का तेज सहन नहीं करनेवाला अल्पमात्र कामदेव भस्म हो गया, फिर तो कृपालु भगवान् ने, अपराधिओं के अपराध न गीनकर रचना के अंगरूप ओतप्रोत आकर्षणशक्ति को सजीवन करना ही अनुगुण मानकर दण्ड के बाद फिर सर्जन भी कर दिया, प्रभु के अभिनन्दन से आज समग्रसृष्टि में वही कामदेव व्यापक हो के सत्कार पाता है, वामन भगवान की कृपा से इन्द्र भी देवराज्य भोगता है, पात्र में की गई कृपा आशिष आदि अभिनन्दन स्वरूप में सुखद होते हैं, अल्प पात्र में असुखद भी हो जाते हैं, आप गुरुजन मेरी अल्प पात्रता को दूर कर आशीर्वादात्मक अभिनन्दन देवें जिससे सभी सुखप्रद ही रहें।

आदरसत्कार भगवान् के गुण हैं योगीजनों के पास मधुरवाणी आदरसत्कार हार्दिक स्नेह सदा बसते हैं, गुरुजनों के अभिनन्दन अल्पपात्र के प्रति भी श्रेयः कीर्ति गौरव श्रेष्ठपात्रता इत्यादि देनेवाले होते हैं, आप के अभिनन्दन मेरे लिये सदा उसी विधि से फलरूप हों। अभिनन्दनों से पात्र की पात्रता अभिनन्दक जनों की स्थिति के समान स्थिति देनेबाली होती है, मुझे भी उसी प्रकार फलीभूत हो, दुर्गुण दूर हो, सद्गुणनिवास हो, दिव्यपाण्डित्य हो, सात्त्विक स्थिति हो, निर्लिप्तयोगिता हो, अपुनर्जन्म हो, भक्ति में गरकावपना हो, इत्यादि माँगता हूँ।

आत्मा की विभूति रूप अभिनन्दन सदा आनन्द में स्थिर रखते रहो, मेरी अवस्था भी चतुर्थ भाग को भजती है, अतः जरूर निःश्रेयस के लिये अभिनन्दन फलीभूत होयंगे, अब निरोध-तपस्या का अवसर है, आप के आशीर्वाद निरोध में मुझे बरतावने लगे—यह प्रार्थनीय है। किसी फल के अनुसन्धान से पूरेपूरा किया हुआ प्रयत्न कभी अप्रतकर्य सत्फल भी देता है, सात्त्विक-अध्ययन आज अप्रतर्क्य सत्फल दे रहा है, यही मेरी अपुनरावर्तन-नामक यात्रा में साहाय्यप्रद है, इससे मुझे आत्यन्तिक विरति की पूर्वावस्था भी मिल रही है। संसार की थकावटें छूट गई, अपवर्ग की ताजगी आने लगी है, भगवान् विष्णु की सखी दासी लक्ष्मीजी तथा कौस्तुभमणि के समान सुख शान्ति व उज्ज्वलता देनेवाले अभिनन्दन अनेक कौस्तुभ मणि बनकर आत्मा में उजाला दे रहे हैं, पारिजात के समान सुगन्ध देनेवाले हो रहे हैं, विजय देनेवाले हो रहे हैं, सभी अभिनन्दन मधुर सृष्टि के अमृतफल हैं, अनेक पण्डितों को ऊपजानेवाले बीजों से भरे फल हैं, अभिनन्दनों का उपदेश है—दोषत्याग गुणग्रहण संसार के उपकार आत्मा के निःश्रेयस, तथा इनके साधनों में यत्नशीलता, इन अभिनन्दनों के प्रकाश में निकलनेवाली भाग्यशाली लोग जरूर ऊन सद्गुणों के लिये यत्न करेंगे, जिससे महापुरुषों के अभिनन्दन सृष्टि को अच्छे अच्छे फल देनेवाले सार्थक हों, मेरे लिये तो सतत सार्थक हों।

अभिनन्दनों में—उत्कृष्ट व्यक्तिविचार, सुकृतवर्णन, चारुचरित्रचित्रण, आकांक्षणीय जीवनोपकथन, रुचिकर कारण कार्यों के सुमूर्तवर्णन, अच्छे नये आविष्कार, ग्राह्य रस लाभ, आदिक ग्रथित होते हैं, जिनकी जितनी विद्वत्ताभरी शेमुषी प्रतिभा उतनी ही उस व्यक्ति में स्तरों की रचनाएँ स्वरूप लेती हैं, समीक्षक जनों के मस्तिष्क में भी उन्हीं के विशेष स्तर होते जाते हैं, वे आश्रित जनों के ग्राह्य स्तर बन जाते हैं, गम्भीर भावभरे अभिनन्दन सिद्धप्रतिभावाले योगिजनों को तुरन्त संस्कार में पैठकर उत्तम रचना करते हैं, नये आविष्कार नयी भावी प्रजा के लिये अतीव उपकारकारक होते हैं, वैसे अभिनन्दन इस अवसर में जरूर मिलते रहो तथा उक्तरूप में फलीभूत होते रहों।

सभी शास्त्र प्रायः एक लेखक से मूर्तसुरूपता को प्राप्त होते हैं, एक हृदय से प्रकट भी होते हैं, नाट्यशास्त्र प्रायशः बहुत ज्यादे हृदयों को मिलाकर संगठित पिण्डित हृदय से सुमूर्त को प्राप्त होता है, अभिनन्दन शास्त्र तो अनेक स्वतन्त्र हृदयों से प्रकट हुए अंगों की विभिन्न मननधाराओं का एकत्रित महाह्रद या सागर के समान सुमूर्त रूप को धारण करता है, एकत्रित बड़े पात्र में विश्रान्ति लेता है, और समग्र दुनिया के हृदयों के उत्साहों को बढ़ा देता है अभिनन्दनीय की कक्षा को चाहनेवाली असंख्य श्रोतृ जनता को उसी कक्षा में पहुँचाने वाला होता है, अभिनन्दनों में कल्पित-कल्पना को स्थान नहीं मिलता, वार्तमानिक प्रात्यक्षिक प्रसिद्ध व्यक्तित्व का, गुणभण्डारों का, निष्पन्न सुकार्यों का तथा भावी आशास्पद उज्ज्वलताओं का प्राधान्य रहता है, अभिनन्दनों के बाहुल्य कुछ विशिष्ट निवेदनों में व्याप्त होता है, अभिनन्दन शब्दस्वरूप में व्यक्तित्व का प्रतिनिधि है, व्यक्ति ही स्वयं अनेक स्वरूपों में व्यस्त होता है, वह अभिनन्दनों से समस्तस्वरूप में उपलब्ध होता है, व्यस्त विद्वानों का ऐकमत्य ही सामस्तिक स्वरूपोद्भावक होता है, सुसद्गुणी बड़े बड़े किम्मती परिष्कृत महापुरुष कहीं कोणे में पड़े हों उन्हें अभिनन्दन देशों में विख्यात बनाते हैं, इससे देश भी अधिक गौरवास्पद होता है, अभिनन्दन एक मूर्तिमान् कीर्तिमणि है, उसे पहननेवाला समग्र पृथिवी में सुकीर्ति से प्रख्यात होता है, इस प्रकार का अभ्युदयस्वरूप अभिनन्दन अपरिमितता में स्थान लेता है, प्राचीन समय से होते आये विकासों के परम विकास वर्तमान में अनवधि विकास दीखता है वैसे ही प्राचीन रीति से चले आये अभिनन्दन जगत् के ग्रन्थों में विस्तृत पड़े हैं, वे सभी वर्तमान समय के असीम विकसित अभिनन्दनों में अनवधि विकासानन्द के स्थान लिए दीखते हैं, भविष्य में भी "विकासानां प्रवाहेभ्यो विकासा अभिनन्दने। ईयन्तां भाविनैजानां प्रजानामभिनन्दने"। प्रगतिशील युग में त्रिलोकि-गतिक-मानव उपलब्ध हो रहे हैं, उनके लिये त्रिलोकगतिक अभिनन्दन जरूर निजस्वरूपों की कल्पित कर रहे हैं।

श्रव्य चरित्रों की अपेक्षा दृश्य चरित्र चमत्कार उत्कृष्ट है, अधिक प्रामाणिक यथार्थ-स्वरूपापन्न-स्थितितक होते हैं, इन पर प्रशस्तियाँ सर्वानुरंजक होती है, जीवित चमत्कारिक व्यक्ति के लिये प्रत्यक्षाऽभिनन्दन सच्चा अभिनन्दन है, प्रत्यक्षानुभव, व्यक्तिसहवासानुभव, व्यक्तिकृतकार्याऽनुभव, व्यक्तिरचितशास्त्रानुभव, व्यक्ति का यशोवितान विस्तार, व्यक्ति की सुवास, जगत् जनता में प्रसिद्धि, दुनिया में प्रसृत प्रख्याति, ये सब पूर्ण अभिनन्दन हैं। उक्त प्रकार के सत्य अभिनन्दन के लिये सुपात्र भूमि कुंकुमवापी हो रही है, जिसका बालक विद्वान् सन्त अभिनन्दनों द्वारा बधाये जा रहा है।

ये अभिनन्दन भागवत-धर्मान्वित वैदिकशारदाऽभिनन्दन हैं, धर्म-ज्ञान-मूर्ति के अभिनन्दन धर्मज्ञान के अभिनन्दन भी है, इन दोनों के निवास से ही व्यक्ति अभिनन्दन-पात्र होती है, साथ में शीलव्रत विशेष भक्ति वैष्णवता आदिक समस्त जगत् के लिये अभिनन्दनीय हैं, उनके उपासक सन्त विद्वान् जरूर जगत् द्वारा अभिनन्दनीयता के यथार्थ पात्र हैं, ऐसा यह स्वरूपाभिनन्दन धर्मज्ञान शील भक्ति के अभिनन्दनों में मिल कर जगद्विजयी हों।

निरवधि स्नेह का अन्त हो जीवनान्त में परिणत होता है, विद्याप्रेमी आत्मा का स्नेह का अन्त भी विद्या के ही जीवनान्त में हो जाता है, विद्या ही जीवनवाले महापुरुष जगत में धर्मस्तम्भ हैं, उन पुरुषों के आशीर्वादात्मक अभिनन्दन भी विद्याप्रेमी के जीवन को पुनर्जीवन बनाये रखते हैं, ऐसा न होने पर भी जगत की शृंखलाएँ टूट जायँ, अस्त व्यस्त हो जायँ, जगत् निर्विद्य हो जायँ, परमेश्वर के आदेश अलभ्य हो जायँ, निःश्रेयस के मार्ग विच्छिन्न होने से देव मानवादि परम्परा भी पाशवी-परम्परा में गीनती लेनेवाली हो जाय, इससे पुरुषार्थ-विरोधी सभी अनर्थ उत्कृष्ट बनने से सृष्टिरचना का अभिप्रेत

मुद्रा बिलकुल न रहे, सृष्टिरचना निष्फलसी हो जाय, तत्साफल्यार्थ ही धार्मिक उत्तेजना रूप में आशीर्वाद व अभिनन्दन दिये जाते हैं, जिनसे प्रभु के तात्पर्यार्थ अक्षत निभे जाते हैं, आप के अभिनन्दनों में मेरा इस तात्पर्य का अभिनन्दन मिलित हो।

अभिनन्दन विद्वानों का एक कवन है, वह रसभरा होता है, बाँचनेवाले को आनन्द ऊपजाते हैं, आनन्द ब्रह्म का रूप है, ब्रह्म से सम्बन्धवाला गुणगरिम यह अभिनन्दन सभी के लिये अभिनन्दन है, विद्वान् लोग अतिप्रसन्न होते हैं कि सौराष्ट्र में एक उच्चकोटि के पण्डित की जन्मभूमि कुंकुमवापी नगरी आज पण्डितों के धन्यवादों का पात्र बन रही है, पश्चिम काशी का स्मरण कराती है, जो काशी के विद्वान् जन्मसिद्ध प्रातिभविद्वान् वहाँ प्रकट हुए हैं, यह कुंकुमवापीनगरी का अभिनन्दन काशीनगरी का ही अभिनन्दन है, जो काशीनगरी के पण्डित को धारणकरनेवाली है, अतः सभी विद्याओं के स्थान बनेगी, इन अभिनन्दनों से वैदिक विद्याएँ भी अपनी अभ्यासमयी अवस्था की इस भूमि में राह देखा करती हैं, यहाँ विविध विद्वानों का नगरवेदविद्यानगर बसो, सभी विद्याएँ मानवों में व्याप्त हो के बसो, मानवों को विद्याओं के अतिथि बनाओ।

चन्द्र अमृत देता है, आतप पाचनशक्तियाँ देता है, मेघ आर्द्र पल्लवितज्ञा देता है, पति सन्तोष देता है, राजा आश्रय देता है, गृहिणी विरति देती है, विद्याएँ सभी कुछ देती हैं। अभिनन्दन कृतियाँ आनन्द को अभिव्यक्त करनेवाली सभी सफल ही हैं।

भारत भगवान का भक्त है, भारत की प्रजा भक्तिरूप ब्रह्मरसायन पीती रहती है, बालपन से ही पीते रहने से आगे की अवस्थाओं में पान का अभ्यस्त हो जाता है, नवीन आश्चर्य नहीं रहता, बड़ी-बड़ी संहिताएँ तो भारतीय व्यासों के आसानी भरे स्वभावसिद्ध सद्गुण हैं, महापण्डितजन आध्यात्मिक भौगोलिक खगोलिक ब्रह्म गोलिक आदि पर्यन्त वर्णनवाले निबन्ध लिखते ही रहते हैं, ज्ञान में भी वही ग्रथन होता रहता है, जिसमें परमेश्वर प्रातिभविषय दिखते ही रहते हैं, वैसे महाकाव्य महाइतिहास जिन धुरन्धरपण्डितों से प्रकट होते हैं उनके प्रति समग्र भारतीय परिष्कृत ज्ञाताओं को आनन्दी होना स्वाभाविक रसायन स्वरूप हो ही जाता है। महाभारत स्कन्दपुराण पद्मपुराण रामायण भागवत आदि के अन्तर में लीला चरित्र विज्ञान सुमूर्तरूप से प्रकटित गाये सुनाये जाते हैं, सामान्य प्रजा भी उस श्रवण से ब्रह्मोन्मत्तता में बरतने लगती है, कई संहिताएँ विद्यमान हैं, श्रीश्वेतायनीयसंहिता सवालक्ष से अधिक श्लोकों में चारों युगों के धर्मभरी अलौकिक आख्यानमयी कलाविज्ञान सर्जन देवर्षि मानवादि के इति-वृत्तों से शोभती हुई किसके हर्ष स्थानरूप न हो, सभी के हर्ष स्थान हुई है, इसके हजारन अभिनन्दन आये हैं, आते भी रहते हैं, जिन्होंने प्राप्त नहीं किया वे तो उस संहिता के लिये तलखते रहते हैं, कहाँ से मिले और कब अनुभूत हो, कई विद्वानों ने इसको अमूल्य प्राप्ति के लिये खोज किया, बिना मूल्य मिलती नहीं, मूल्य २५१ से अधिक है, संस्कृत के निर्धन व्यक्ति कहाँ से पावे, परन्तु सनातनधर्म के पाये मजबूत करानेवाली वह आज अनेक अभिनन्दनों से बधाई जारही है, उसमें मेरा अभिनन्दन भी मिलजुल के मुझे वैसा ही और कार्य के लिये उत्साह दे वैसे आप से आशीर्वाद माँगता हूँ।

अभिनन्दनों में शतायु सरस्वतीसेवा आदिक सफल होना माँगता हूँ, श्वेतायनीयसंहिता के आगे अन्य संहिताएँ बचकानीसी हो जाती हैं, अधिक से अधिक आकर्षक यह संहिता आदि व्यास श्वेतायन व्यास के आवेश से प्रकट की गई है, इसमें सभी व्यासों के प्राण हैं, इसमें अन्तिम कवि ने प्राचीन मध्यम नवीन सभी युगों की धर्मादि परिष्कृति निपजायी हैं, यह अपने समय में अधिकतम विराटता को जड़चेतन सृष्टि की विशालता को सेन्द्रिय व इन्द्रियातीत अनुभूतियों को प्राचीन निबन्धों से भी विशिष्ट गहराइयों

को, भक्तिस्तोत्रादि अनुष्ठानों को, पृथ्वी की सार्वभौमिक प्रजाओं के मूलों को, भगवत्सम्बन्धों को, सर्वांगीण वृत्तान्तों को, अपने में संग्रहती हुई सभी विद्वानों के अभिनन्दन-पात्र बनी है, यही लेखक का अभिनन्दन ही है।

महाकाव्य महाउपन्यासों से भरपूर यह विराट्ग्रथन बाह्यावरणों को काट कर आन्तरसृष्टि ब्रह्म में पहूँचता हुआ आश्रितों को ब्रह्मस्तरो में पहूँचाता है, इसमें छोटे से छोटे भी शरीरी भगवत्सम्बन्ध से निकृष्ट अर्पण से भी ब्रह्मात्मक हो जाने के वृत्तान्त पाये जाते हैं, प्राचीनतम प्रारम्भिक सर्जन से लेके आजतक के दिव्य अदिव्य सभी वृत्तान्त इसमें विद्वानवर्गद्वारा अभिनन्दनीय हो रहे हैं, एक अवतार में यह न लिखा जाय-ऐसे विद्वानों के तर्क ऊठते हैं, किन्तु वैसे और भी ग्रन्थ लिखने में व्यासों को क्या कठिन है, जिनकी लेखिनी अति अप्रतिहत ग्रथन-कवन करती जा रही है, छन्दोबद्ध नदीयाँ बहती रहती हैं, जिनके विज्ञानों में सृष्टिसागर उछलते हैं, उनको अनेक संहिताएँ संकल्पों में हाजिर रहती हैं, इनके अभिनन्दन से व्यास भगवान का अभिनन्दन हो जाता है, इसके द्वारा अभिनन्दक लोग परमपद के भागीदार हो जाते हैं।

जिन्होंने माँ बाप गुरुजनों की आज्ञा वहन की हो वे तो अभिनन्दन के पात्र हैं ही, पर देश के लिये जो तन मन धन कुरबानी कर देते हैं वे तो ईश्वर के तुल्य सम्मान पात्र हैं, आप लोक भारत की प्रजा द्वारा सम्मान-पात्र हैं, मैं तो आपकी छाया में सम्मान-मधुरता ले रहा हूँ, इससे अपना कल्याण मानता हूँ, अनेकानेक प्रतिद्वन्द्वी उपस्थित होने पर आपके आशीर्वादों ने उन्हें उडाये, मुझे सम्मान-पात्र बनाया, इससे अधिक क्या कौनसा लाभ है, जो परमपुरुषार्थ के लिये मिलना चाहिए, मिल गया, असहनी अक्षमी विषैली दृष्टिवाले गरली हृदयवाले भी आज पवित्र आशीर्वादों को पढ़-सुन कर अच्छी स्थिति में असामर्थ्यावलम्बन से बरतने लग गये, ये भी आपके आशीर्वादों का प्रभाव है।

मैं सबसे क्षमाप्रार्थी हूँ, परलोक में जिनसे मेल रहे वहाँ बास अच्छा होता है, यहाँ बेमेल के व्यक्तियों से भेद ही अनुत्कृष्ट आवरण बाधा करेगा, उसे साथ ले के परलोक में भी बाधा करेगा, अतः वैसा आवरण यहीं लुप्त हो जाय—यही प्रार्थना है। मुझे माँ ने कहा था—"बेटा सन्त-स्थिति में जाना व रहना हो तो खूब खूब पढ़ना" यह माताजी का आशीर्वचन फलीभूत हुआ है, माता-पिता के तुल्य विद्वद्गणों के वचन आज अधिक फलीभूत हो रहे हैं, रामायण में एक पद्य है—"सन्ति दुःसंस्थिताः कुब्जा वक्राः परमदारुणाः" कुबड़े टेढ़े कुटिल कटिभंगे लोग महाभयंकर होते हैं, वे अभिनन्दन को न तो अपनावेंगे न तो अच्छे मानेंगे, किन्तु अग्नि को प्रकट कर अन्तर में जलते रहेंगे, उनके वे दोष नष्ट होने के लिये भी अभिनन्दन हो, समान अधिक सद्गुण प्राप्ति के लिये भी स्पर्धा फलदायिनी हो यही प्रार्थनीय है व वांछनीय है। अक्षम पुरुष पर का बूरा ही चाहता है, वह चाहे मेरु पर भूमि को छूने लायक ऊँचा हुआ हो तब भी अभिनन्दन-पात्र कभी नहीं होता। जनता रावण कुंभकर्ण शिशुपाल का दुर्गुण ही गाती है, अच्छे पात्र के उत्तम अभिनन्दन के लिये गुरुजन सहित जनता अति उत्साह भरी सजावटों से आनन्दित होती है, स्वर्ग सदृशता होती है, गोलोक वैकुण्ठ के आनन्द भासते हैं, सभाएँ समाज बाजार मण्डलीयाँ अद्भूत स्वरूप में देवों की तरह उत्साहित शोभती हैं, इस प्रकार के अभिनन्दनों के प्रति मैं लाखों बार समर्पित हूँ।

दूर दूर के अभिनन्दन आके मेरे में ठहरते हैं, उन्हें मैं आदर सत्कार पूर्वक सेवने के लिये मेरे में बास देता हूँ, सदा मेरी रक्षा करने की प्रार्थना करता हूँ।

पृथ्वी वसुन्धरा है शूरधरा है विज्ञयोगिधरा है सन्तधरा है रत्नधरा है फिर भी अपक्वधरा भी है, अपक्वों के लिये भी वसुन्धरा रत्नधरा है, तो भी दैवी विनीत संयमी दयालु धर्मशील त्यागशील विद्याशीलों के प्रति अपक्व मण्डलीयाँ मण्डलीश्वर अनन्य अनुरक्त भावना से नहीं देख सकते, प्रतिघातों को निपजानेवाले होते हैं, उन्हें अभिनन्दन तो बड़ा दावानल बन जाता है, उनके प्रति उनके ही वे दावानल अमृतरसायन हो,—यह गुरुजनों से प्रार्थनीय है, मेरे लिये तथा उनके लिये भी सुखप्रद हो, जगत् में कपटवस्त्र धारनेवाले की कमी नहीं है, षड्यन्त्रीयों की, विश्वासीयों के दील तोड़नेवाले की कमी नहीं है, ईर्ष्यालु दीलवाले तो परप्रतिष्ठा देख ही नहीं सकते, उनकी जिन्दगी ही वैसी कमाणी में अभ्यासी बनी रहती है, अदेखाई से परोन्नतिभंजक बनते हैं, मगर परमात्मा भंजक के गर्वगंजन हैं, गर्वी ही भंगता है, सन्तपुरुष सुरक्षित ही रहते हैं, भगवान् इस अभिनन्दन में उचित करते रहें, क्षुद्रजन समृद्ध पुरुषों की प्रशंसा नहीं सहता हुआ बाबरे की तरह बकवाद में आरूढ़ होता है, उन्हें वैसी स्थिति में न जाने देने की प्रभु से प्रार्थना करता हूँ, तारणहार परमपुरुषों को हलके विचारशीलों ने मार भी डाले हैं देशनिकाल भी किये हैं, कुचरित्री कह कर उड़ाये हैं, वैसे भारतभूमि के अपक्वबेर किसी महा गीदड़ के भक्ष्य न हो जाने की प्रभु से प्रार्थना करता हूँ, उनको यह अभिनन्दन पथ्य हो। उनके ब्रह्मरन्ध्र महाप्राणों की झड़प से उद्भ्रमित-चक्रावे न देने लगने की प्रभु से प्रार्थना करता हूँ। दुर्घटना के चक्रावे सुघटना में उनके लिये सुखप्रद बनें। उद्दण्ड कपटी क्रोधी ईर्ष्यालु अति अभिमानी घटाटोपी मानव क्या क्या नहीं करता, सब कुछ यमदूतों की तरह कर सकता है, उनकी आत्मा इन अभिनन्दनों से सुरदूतसी हो।

अभिनन्दनीय पुरुष कोई परमपुरुषसा मालूम पड़ता हो, तभी उनमें अभिनन्दन प्रेरित किये जाते हैं, जिन्होंने तैरकर दूसरों को तारने के लिये जीवन ईश्वरार्पण किया है, संसारीओं से ऊपजाये मान-अपमान पराभव सहन किये हैं, जीवन के विविध अनुभव लिखे हैं, श्रेयः में सदा सचेष्ट रहे हैं, त्याग में महान् भाव को भजते हैं, विद्या में जन्म खपा दिया है, शास्त्रों में प्रवृत्ति रही है, उन्होंने समग्र जीवन लोकार्थ व ईश्वरार्थ कर रक्खा है, अतः सभी गहरे अनुभवों में कष्ट पाये हैं, जिनका सभी जीवन बड़ी कठिनाईयों में बीतता है, उसमें भी जन्मजात बहुविध प्रतिभा समाज के हितार्थ प्रयुक्त है, जिनमें सम्प्रदायाचार्यत्व यथार्थ है, महर्षित्व भी यथार्थ है कवित्व भी यथार्थ है भाष्यकारत्व पाण्डित्य यथार्थ है, उनके लिये अभिनन्दनों की नदीयाँ सतत बहेंगी ही।

अगणित अपार साहित्य देवभाषा में गूँथे गये हैं, आगम निगम ब्राह्मण गीताएँ संहिताएँ सूत्र पुराण उपपुराण इतिहास स्मृतियाँ श्रुतियाँ धर्मशास्त्र तत्त्वशास्त्र भौतिकशास्त्र खगोल भूगोल शास्त्र काव्य अनेक विद्याएँ देववाणी में गूँथे गये हैं, देववाणी पढे देव ही दीखता है, देव के समान सुसन्मान पाता है, संस्कृत वाणी की कठिनता गम्भीरता बहुत है, अनुवाद करना कठिनसा हो जाता है, देववाणी में असीम संस्कृतियाँ समायी हैं, इन्हें सुरक्षित रखने के लिये विद्यालय स्थापित किये जाते हैं, विद्वानों के जीवन को सहारा दिया जाता है, आजीवन जीवनी श्रीकृष्णार्पण करनेवाले उन विद्वानों को सांस्कृतिक रक्षा के लिये ही अभिनन्दन दिये जाते हैं, आपके अभिनन्दन के हेतु सदा के लिये अन्यविद्यालयों की माफक कुंकुकवापी में भी विद्यालयों में सफल होते जायँ, इस प्रकार मेरा भी उनके साथ अभिनन्दन है।

चमत्कारी मन्त्र चमत्कारी अनुष्ठान संस्कार देववाणी द्वारा किये जायँ वे अतिचमत्कार प्राकट्यपूर्वक सुफलित होते हैं। कालीचतुर्दशी की रात्रि को मन्त्र अनुष्ठान द्वारा कई देव-स्वरूप दृश्य हो जाते हैं, मन्त्रसिद्धि द्वारा कर्म भी होते हैं, अतः पण्डित, देव, तथा संस्कृत के लिये ये आपके अभिनन्दन खूब ऊँचे दर्जे की संस्कृति को बढ़ा रहे हैं, वे सदैव संस्कृति को बढ़ाते रहें। साम, स्तोत्र, शस्त्र, यज्ञ,

गीतिका, आदिक में दिव्यता भी बढ़ती हुई श्रोताओं को अलौकिक भावना ऊपजाती है, संस्कृत कथा सप्ताह इत्यादि भी जनता में अलौकिकता पैदा करते हैं, इसके लिये सभी अभिनन्दन विशेषतः सार्थक हों।

जो कुच्छ है अप्रतिहत ब्रह्म चैतन्य व्यापक सर्वास्तित्व में विद्यमान है, चित्-चैतन्य सच्चिदानन्द है, जहाँ आनन्द है वहाँ ब्रह्म चैतन्य है, शरीरिओं को खाद्य-पेय से निजानन्द में मिलित आनन्द उपलब्ध होता है वहाँ भी ब्रह्म चैतन्य है, आनन्दघन पर ब्रह्म स्वयं स्वीय ब्रह्मतनु द्वारा सर्वत्र आनन्दाऽभिनन्दन दे रहे हैं, आनन्दों की लहरीयाँ विकसाते हैं, आनन्दसंभृत तत्त्व भी आनन्द है वही ज्ञातृ ज्ञान प्रकाश स्वप्रकाश है स्वप्रकाशघन ब्रह्म है आनन्दघन व प्रकाशघन चिदानन्द है, वही नित्य शाश्वत अविनाशी है स्वरूपसत् है, सदा ही है, आत्मसत् ब्रह्मसत् परब्रह्मसत् , उनके नित्यसम्बन्धवाले भी सत् , जो कुछ सत् है वही चिदानन्द है, चिदानन्द से अन्वित जो है वह सत्य है, सत्य की उपलब्धि होती है, दिव्योपलब्धि भी उपलब्धि ही है स्थूल उपलब्धि सूक्ष्मोपलब्धि में बसी है, सूक्ष्म है चित्-चैतन्य ब्रह्मप्रकाश, पर ब्रह्म का सार्वज्ञ्य स्वप्रकाश आनन्दघनित सार्वज्ञ्य निजस्वरूप से ब्रह्मप्रकाश सार्वज्ञ्य में तद्रूप में अवतरता है, ब्रह्मचित् चैतन्य स्वान्तर्भूत समस्त व्यस्त तत्त्वों में स्वोद्भाविपदार्थों में कारणाऽवस्थ होके अनुस्यूत रहते ही हैं, वही आनन्द वही चैतन्य वही सत्स्वरूप वही सच्चिदानन्दात्मा बृहत् वही सच्चिदानन्दात्मा व्यष्टि अबृहत् ज्ञातृ स्वप्रकाशयितृ सर्वप्रकाशयितृ व्यवस्थित है, कारणप्रकाश विज्ञान सार्वज्ञ्य, स्थूल कार्यप्रकाश उजाला ज्ञान बुद्धि प्रतिभा आभा कान्ति दीप्ति विमर्श विचार व्यवहारक्षेत्रात्मक स्तर, पर-ब्रह्मने इसमें दोनों सूक्ष्म विज्ञान स्थूलविज्ञान ज्ञातृज्ञेयात्मक विषय उद्भूत किया। विज्ञान से सृष्टिसर्जन में स्थौल्यभाग को भजने लगे, तत्त्वस्वरूप में गीने गये, पहले सगुण ब्रह्म स्वकल्पित मायापति में, तथा प्रधान पति, तत्त्व पति, त्रिदेव, महर्षिगण, पितृगण, मानव, पशु, पक्षी, कीट तरु तृणादि में अभिन्न तादात्म्य से सम्बद्ध रखते हुए ही उनकी बुद्धिप्रकाशधाराएँ प्रसारते हैं, धीधाराओं में आन्तरिक व बाह्यजगत् का भास स्वभावतः उद्भवता है, भास आभास अनुभव अनुभूति अपरोक्ष साक्षात् मति स्वरूप में विकसता है, सभी व्यवहारों के सूक्ष्म स्वरूप बुद्धि स्वयं प्रत्यक्ष अनुमान उपमान शाब्द अर्थापत्ति अनुपलब्धि संभव ऐतिह्य चेष्टा मौन इत्यादि में विभक्त बनती हुई पदार्थों का सत्यत्व दिखलाती हुई प्रमा धी हो जाती है, बाहरली प्रमाएँ पदार्थों का आविर्भाव तिरोभाव अस्थिराऽवस्थाओं को ग्रहण करती हुई उन्हें तजने का उपाय सोचती है। सदा स्थिर आत्मब्रह्म परब्रह्म मोक्ष आदिक का अवलम्बन करके तन्मयी हो जाती है, परमात्मप्रेरित वह वेदशास्त्र आदि स्वरूप में निजाश्रय में से फैलती है, वह पदविद्या वाक्यविद्या प्रमाणविद्या अलंकारविद्या कलाविद्या उद्योगविद्या स्वास्थ्यविद्या समष्टिव्यष्टिविद्या अगणिततत्त्व साधन साध्य द्वार फलभोग लयादि-विद्याएँ के स्वरूप में रहती हैं, सभी स्वेष्टविद्याएँ मिष्ट ही हैं आनन्दप्रद हैं अभिनन्दन लाने वाली हैं आनन्दपूर्णता में पहूँचाती हैं, वेदों में सभी विद्याएँ हैं, किसी न किसी रूप में स्वल्प भी बीजमात्र भी जरूर हैं, कर्मकाण्ड यज्ञयाग संस्कार कर्मादि, ज्ञानकाण्ड व्रत उपासना भक्ति आदि, सेवाकाण्ड वफादारी आदि, सूत्रग्रन्थ संहिताग्रन्थ आख्यान इतिहासादिक में फैली हैं। ज्ञान-काण्डीयविद्या शास्त्रदर्शन आध्यात्मिक ग्रथनों में फैली हैं, विशालशीलमहर्षिओं ने सच्चिदानन्द स्तर का अवलम्बन रख के ही तर्कवितर्कवाद तत्त्वनिर्णयादि किये हैं, विपरीत आभास को मिटा के यथार्थ अवभास के लिये यत्न किये हैं, वेदों में जो कुछ है वह ईश्वरीयविज्ञानात्मक होने से सत्-अवभासमय ही है, अनन्तर हुए परिच्छिन्नदृष्टिक विमर्शीओं के विपरीत आभास न हो जायं, इस हेतु से विज्ञान का विख्यापन किस प्रकार का होना चाहिए, इस पर सभी गतानुगतिक समारोहित हुए हैं, संसार त्यजने के लिये

निकृष्ट बतलाने के लिये भ्रान्तियों को पहले पकड़ कर वहाँ जो ज्ञान विपरीतभान अज्ञान के प्रवाहों को लगातार पकड़ के प्रख्यापनरूप में ख्यातियाँ प्रसिद्धि में लाई गई हैं, आभास की ख्यातिओं का अवगम होने से त्याज्य को तजकर मोक्ष में पहूँचने के लिये यथार्थ धी के सहारे सच्चिदानन्द को अवगत करके विश्रान्ति लेने तक धी-व्यापार किये गये हैं।

अच्छे-अच्छे विद्वानों ने ख्यातिवाद अपनाया है, मृगतृष्णिका उत्पादक मरुमरीचिका-जल में मृगों का ज्ञान-जल भान अयथार्थ है, वैसा ही जगत् है, इसको समझना व तजना,–भ्रान्तियों के क्षेत्र में—

नैयायिकों की—'जल रहित किरणों में जलभान-अन्यथा ख्याति है।

मीमांसको की—'हृदय-स्फुरित सत्यजल की वहाँ–सत्यख्याति है।

स्वामिनारायणों की—'किरण, जल, स्फुरित वृत्तिजल, मिलकर सत्-समुच्चयख्याति है।

रामानुजों की—'विरल जल होने से सत् जल की सत्ख्याति है। आयुर्वेद की भी सभी रसायन-शक्तियाँ सर्वत्र होने से सत्ख्याति ही है। प्रभाकर मीमांसकों की—बहिर्जल सच्चा ख्यापन नहीं है अतः अख्याति है। कुमारिभट्ट की—'हार्दिक जल मिलता है अतः' हार्दिक-सत्ख्याति है। मुरारिमिश्र की—वहाँ वृत्तिविषय आन्तरिक जल है अतः आन्तरिक-सत्ख्याति है।

सांख्ययोगों की—मध्यम कार्य जल है स्थूल कार्यात्मक नहीं है अतः सत्कार्यख्याति भी अख्याति-रूप है।

केवल योगशास्त्र की—विकल्पवृत्तिक जल असत् होने से असत्ख्याति है।

क्षणिक विज्ञानवादी योगाचारों की—आन्तर ज्ञप्ति जलात्मक बाहर आयी वह आत्मा ही है अतः आत्मख्याति है।

सौत्रान्तिक तथा वैभाषिक बौद्धों की—ज्ञानात्मा बाहर परिणत हुआ है अतः आत्मख्याति है।

शून्यवादी माध्यमिकों की—सभी वस्तु शून्य में परिणत होने से शून्य असत्-असत्ख्यातिरूप है।

जैनों की—किसी वस्तु एक स्वरूप ही नहीं है अतः अनैकान्तिकता ख्याति है।

चार्वाक-लोकायतिकों की—साक्षाद् दीखता यथा स्वरूप सत्य है साक्षात् है अतः साक्षात्-ख्याति है।

माध्वों की—समान रूप दृश्य होने से सारूप्य-ख्याति है।

वाल्लभों की—लीला का आभास दीखने से लीला भासख्याति है।

निम्बार्कों की—किरण भिन्न होने पर भी जल से अभिन्न भासने से भेदाऽभेदख्याति, ज्ञानाऽज्ञान-ख्वाति, सत्यासत्यख्याति, तथा दृष्टि-सृष्टि-ख्याति भी कहाती है।

शांकरों की—किसी प्रकार का ब्यान टिकता नहीं अतः अनिर्वचनीय-ख्याति है।

शब्द ब्रह्म-वादीओं की—वहाँ व्यापक शब्दस्तर में मरीचि समूह में जलाऽवलोकन शक्ति की विवर्त ख्याति है।

प्रत्यभिज्ञानवादीओं की—अन्यत्र दृष्ट का दृश्य हो रहा है अतः प्रत्यभिज्ञान-ख्याति है।

पाशुपत शैवों की—पशुपतीष्ट विषय जल दीखता है उसकी रचनारूप विषयताख्याति है।

सिद्धान्ती शैवों की—किरणाधिष्ठान विरूप दीखता है अतः वैरूप्यख्याति है।

लाकुलीश-शैवों की चाकचक्य भिन्न भिन्न हैं वे अभिन्न भासते हैं, अतः भिन्नाऽभिन्नचाकचक्य-ख्याति है।

विशिष्टाद्वैती शैवों की—दो द्रव्य के संसर्ग झलकते हैं अतः संसृष्टख्याति है।

वीरशैवों की—जलस्फुरणा किरणस्फुरणा में मिल जाने से स्फूर्ति-वैवर्त्य-ख्याति है।

नन्दिकेश-शैवों की—शीवात्मा उस रूप में दीखते हैं अतः आभासवृत्यात्मख्याति है।

रसेश्वरशैवों की– सिद्ध में असिद्ध ऊपज गया है अतः सिद्धयसिद्धिख्याति है।

कालीक्रम-शैवों की नेत्रसंयुक्तकिरणक्रम जलविकल्पक्रम में मिल गया है अतः क्रमवैकल्पिकी ख्याति है।

कौलशैवों की—सभी के कुल ब्रह्मशिव ही वह लीलारूप है अतः कुललीलाख्याति है।

ऐन्द्रजालिकों की—वह दैवी किरणशक्तिजन्य दृश्य जलमात्र है अतः सर्वत्र मान्त्रिकशक्तिख्याति ही है।

परमसर्वज्ञ की—जो कुछ दृश्य बनावट वह सत्यस्वरूप ही है अतः वैसा जल वहाँ उमटता ही है, उसमें सत्यतादात्म्यख्याति ही है।

गंगेशोपाध्याय की रीति तो नये धर्म भी ऊपजते रहने से द्रव्य में धर्मान्तर आ जाने से अभिनव-धर्मात्मक भ्रमख्याति है।।

जब जगत् इस प्रकार के ख्यापन में द्रष्टाओं को रुकता है, तो अजगत् जहाँ है मोक्षस्थिति है वहाँ के सृष्टिसर्जक में तथा स्वरूप में ब्रह्म में ब्रह्मलोक में वैसा नहीं होना चाहिए, अगर जो कुछ होगा सो नित्य सत्स्वरूप ही प्रामाणिक होगा, अतः सत्-प्रमाख्यापन द्वारा इस जगत् को तज कर प्रामाणिक सत् ब्रह्म स्थान मोक्ष आत्मा परब्रह्म को प्राप्त करने चाहिए, इस सत् फल के लिये शास्त्र अभिनन्दनीय है। अतः सभी प्रकार के अभिनन्दन आज मिलकर मुझे उन उन पण्डितों के बुद्धिगम्य परब्रह्म प्राप्ति विषय में पहूँचाने के लिये आशीर्वाद रूप में फलीभूत हों, सभी के लिये आयुष्यान्त में ब्रह्मस्थिति व परब्रह्म प्राप्ति के लिये अवगत स्वरूप हो ऐसी बुद्धि विकसित रहो, यह मेरा भी अभिनन्दन है। धी का विकास विद्यालय-सेवन से होगा, वैसे सभी विद्याओं के विद्यालय इस लोमश क्षेत्रस्थ कुंकुमवापी नगरी की सीमा में विशाल स्वरूप में सौराष्ट्र महानगर सौराष्ट्र नगर नाम से हो, विद्यालयों द्वारा विकसित प्रमाबुद्धि आध्यात्मिक परब्रह्म तक पहूँचती है, जगत् को असार दिखलाती है, प्रत्याख्यान के फल में ब्रह्मरस का आविर्भाव होता है, आत्मतत्त्व रसमय भासता है स्वयम् आनन्दित होता है, वह अभिनन्दन स्वरूप से निष्पन्न भी होता है, ब्रह्मपात्रता बनाता है, मोक्ष का संचरण बढ़ता है, परब्रह्म-माधुर्य उछलता है, आनन्दसागर में झेलता है, बाह्य मिथ्याभूत से ऊपर के स्तर में उड्डयन करता है, जहाँ जावे वहाँ बुद्धि-रूप पंख से फिर भी आगे आगे बढ़ने का बल पाता है, जगत्-मिटने से जो आनन्दघन प्रकाशघन ज्ञानघन ऐश्वर्यघन स्तरों का समुद्र आता है, वहाँ वहीं को मुद्रारूप प्रभु में स्थिर होता है, ये सभी अभिनन्दन मुद्रित प्रभु में सहयोगी बनानेवाले हों। सभी जगत् स्वस्वभाव में पूर्णता से प्रशस्त बनता है, जो अपरिच्छिन्न पूर्णता में हैं उनके प्रति अभिनन्दन अभिनन्दनीय व्यक्ति को पूर्णता मिले वह आप सबको भी मिलो।

शास्त्रों में सम्बन्ध विषय प्रयोजन व अधिकारी के औचित्य पर ध्यान दिया जाता है, व्यक्ति के औचित्य विषयों के औचित्य वाच्यताशक्तिजन्य अर्थों के औचित्य देशप्रणाली के औचित्य अवसरों के औचित्य फलों के औचित्य समाज के प्रशस्तियों के व सिलसिला के औचित्य, अपने औचित्यस्वरूप में हों तो वे सभी उचितता के योग में ही अभिनन्दनीय हैं, सचमुच विद्वान् लोग औचित्य की योग्यता को ले के ही प्रशस्तियाँ देते हैं, उन प्रशस्ति पात्र में निर्दोषता स्वभाव से ही सिद्ध हो जाती है, तथा अभिनन्दनों के आनन्द आने लगते हैं, जो भाविक्रिया-स्वरूप में प्रकट होने पर अभिनन्दनीय और विज्ञ सात्त्विक दिगन्त

यशस्वी पुरुष प्रकट होते जाते हैं, उनके लिये अभिनन्दन एक प्राग् अवस्थामय परमपुरुषार्थसा हो जाता है, अतः ये अभिनन्दन वैसे पुरुषों को प्रकटावें ॥

अभिनन्दनग्रन्थ सभी विद्याओं का उद्बोधक है, इसमें अनेकविद्याएँ विद्वानों द्वारा प्रस्तुत भी होती हैं, अनेक सद्गुण प्रशंसित होते हैं, भावी अनेक विकास के आशीर्वादप्रद भी होते हैं, अनेक प्रकार की उन्नति व्रत तप मेहनत के परिशीलन पर प्रसन्नताएँ भी होती हैं, अनेक भावी महामहा ऐश्वर्यशाली होने के सूचन भी होते हैं, अनेकविध कष्टवाली जीवनी भी वर्णित होती है, विविध संयम ऐश्वर्य सामर्थ्य प्रभाव प्रताप चमत्कार भी वर्णित होते हैं, नये आविष्कृत विद्यांगो के प्रदर्शन भी होते हैं, अभिनन्दन योग्य यतिपुरुष के लिये तो नर में से नारायण-प्रतीक खड़े कर देते हैं, अंशावतार आवेशावतार कलावतार विभूत्यवतार देवतावतार आदि की झाँकी कराते हैं, किसी-किसी सूक्ष्म विशेषणों की प्रणाली सूक्ष्मब्रह्मस्थिति तक रूपक में पहुँचाती है।

अलौकिक मानस कल्पित नैसर्गिक अनुभव प्रातिभप्रेरणा द्वारा विद्वान् अध्ययनाऽवलम्बन से नीपजता है। सचमुच विद्वत्ता से निकले हुए परिष्कृत विचार ग्रन्थ में निहित होते हैं वे ही विद्वान् का मूल्य आंकते हैं। मूल्यांकन के मूर्तस्वरूप अभिनन्दन हैं, निगूढ मूल्यों के प्रकाशक अभिनन्दन होते हैं, प्रशस्तियाँ किसी प्रकार से मानव को देवताई बनाती हैं, दैवी गुणगणशोभित यति मुनि विप्रविद्वान् ईश्वर की सीढ़ी में आरूढ होने लगते हैं, आखिर में ईश्वर में या तो ईश्वर के चरणों में कायमी स्थिर हो जाते हैं, अभिनन्दन उनको उसी स्थिति में जाने के सूचक होते हैं, परिकर्म कराते हैं, व पूतजन को पतित पावन प्रभु के प्रतीक में स्थापते हैं, वैसे ये अभिनन्दन जन्मसिद्ध योगियों के लिये भी निकट ब्रह्मता को करानेवाले हों, यह भी मेरा प्रार्थित है।

चार वेद, छः अंग,—शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, और ज्योतिष, तथा आन्वीक्षिकी न्यायविद्या, मीमांसा वाक्यविद्या, स्मृति धर्मविद्या, पुराण ऐतिहासिक विद्या, ये चौदह विद्याएँ तीनों लोक में व्याप्त हैं, ये विद्याएँ गद्य-पद्य में ग्रथित हैं, ग्रथन एक स्वरूप है, कवन गायन आदेशन आदिक चतुर्दश में ही हैं, तर्कविद्या—आन्वीक्षिकी ही है, वेदत्रयी वेदो में हैं, वार्ता जीविका धर्मशास्त्र स्मृतियों में हैं, उपार्जनात्मक अर्थ शास्त्र भी धर्मशास्त्र में ही है, भूस्तरशास्त्र खगोल भूगोल रसायन गणित नियम कायदे स्वभाव कलाएँ अलंकार आदिक भी चतुर्दश में ही प्रकरण उपप्रकरणों में ग्रथित ही हैं, एक कार्यकारित्वसंगति अंगसंगति उपोद्घातसंगति उत्संगसंगति हेतुतासंगति अवसर इष्टता आदि-आदि संगतियों से वे विद्याएँ चतुर्दश में ही अन्तर्भूत हैं, शरीर में अन्तः बाहर अस्थि नाडीयाँ रोम नख भी शरीर में ही गीन लिये जाते हैं, संयोगी द्रव्य भी मल कच्चर कफ आदि माने जाते हैं, धातु भी है मगर सभी शरीरान्तर्गत हैं, चतुर्दश विद्याएँ व्यापक विशालकाय में है, वहाँ अभिनन्दन दिये जाते हैं, अभिनन्दन से और भी विशेषताएँ हों।

सृष्टि प्रत्यक्ष है परन्तु उसके निगूढ तत्वों का वेदादि में वर्णन है, चतुर्दश विद्याओं में नैसर्गिक पारिश्रमिक प्राद्भावित संकल्पित कृतियाँ भी समाविष्ट ही होती हैं, निगूढ-तत्त्वों की सुन्दरता ग्राह्येष्टता उपयोगिता आदिक गद्य-पद्य द्वारा उनके ज्ञाताओं ने वर्णित कर जगत् में प्रजा के आगे धर दी हैं, गद्य के विद्वान् भी खरे तान में आजाते हैं तब छन्द में काव्यादि के भी स्वरूप वहाँ-वहाँ देते चलते हैं, काव्यशास्त्र सभी के लिये समन्वित है, वह चतुर्दश से परे वाबय है, अन्तर्गत ही है, सभी प्रकार चैष्टिक आलंकारिक श्रांगारिक सौरतिक तत्त्व भी गूंथे जाते हैं किये जाते हैं लिये जाते हैं रसों में भोगे जाते हैं, आखिर

चित्-चैतन्य की प्रतिभा धी में विश्रमित किये जाते हैं, इनके आश्रय जो व्यक्ति-व्यक्तित्व में आये उनके लिये चारु चमत्कार सुघटनाएँ अभिनन्दनों में वर्णित की जाती है। द्रष्ट श्रोतृ भन्तृ जनों के लिये वैसा व्यक्तित्व प्राप्त कराने के सूचन दिये जाते हैं, व्यंजना से ये निर्गलित होते हैं, मेरी यह प्रार्थना है, विद्वानों के अभिनन्दन इस रीति से भाविजनों के व्यक्तित्व को देने के लिये सहायक हों।

संस्कृत वाङ्मय अभिनन्दनों से भरे हुए हैं पूर्वपक्ष उत्तरपक्ष तत्त्व निर्णय आदिक भी अभिनन्दनों से भरे हैं जिन्हें अवगत करके विद्वान् सदा के लिये खुश होते हैं, अपने को देवताई स्वरूप में समझने लगते हैं हजारन के तारणहार हो जाते हैं, आतिवाहिक देवताओं के काम सार से हैं, ये सब अभिनन्दनों के प्रभाव से होते हैं, शास्त्र स्वभाव से ही लालित्यभरे होते हैं, उनमें अभिनन्दन लालित्यतम होते हैं, व्यक्ति का लालित्य अभिनन्दनों से खीलता है, वही सौन्दर्य व्यक्ति में सुमूर्त होकर जगत् के पूजनीयपने में पहुँचता है। विद्या के सौन्दर्य अभिनन्दन हैं, अभिनन्दन के सौन्दर्य दैवी चमत्कारों में हैं, चमत्कारों के सौन्दर्य ब्रह्मदशा में हैं, ब्रह्मदशा के सौन्दर्य मोक्ष में विराम लेते हैं, सभी के लिये इसी प्रणाली के अभिनन्दन हों।

अभिनन्दनों के आनन्द व्यक्ति के प्रति प्यारवाले को ऊभारता है, बिना प्यार के लोग अयोग्यता तथा स्वमहत्ता, अन्य गौरव, निजीय बौद्धाभिमान, उत्कर्षाऽसहिष्णुता, अदेखाई, वितण्डा, अपकर्षहेतु, विपरीत वाणी, अवनति, आडम्बर, हीनता, निकृष्टपात्रता, कापट्य, अन्याश्रितसामर्थ्य, धनद्वारा कार्यसिद्धि, पाण्डित्यशून्यता, व्यक्तित्वहानि, अन्यदुर्गुण, स्वश्रेष्ठत्व, अन्योपस्थापन, नाटकीय निजीय दुःख, प्रतारकधर्मध्वज, व्रतहीनता, विविधतुच्छता, अनभिमत-उपस्थापन, अश्लीलजल्पन, पीछा पकड़ना, उतार पाड़ना, भगा देना, यशोहानि, लोकापवाद, अप्रांतेयता, असत्पुरुषत्व, आडम्बर, आसुरत्व, तिरस्कृतियाँ, एवंविध जितनी कुधी चले उतनी कल्पनाएँ अभिनन्द्य पात्र में लगाते हैं, केवल निजीय महत्ता अभिनन्द्य की हीनता आदि में उसके तान हैं, ऐसों को प्रभु फलप्रद सुबुद्धि जन्मान्तर में भी देवें—यह प्रार्थना है॥

प्रत्यभिनन्दक लोकों द्वारा ही अभिनन्दनों की किम्मत वढ़ती है, अभिनन्दनीय व्यक्ति की सुवास फैलती है, फल में अमृत-सुन्दरता प्रसरती है, विषैली कद्रूपता तो निन्दकों को ही ढूँढ़कर उनमें बसती है, जो चीज स्वाभाविक मणि है वह मणि ही रहेगा, सर्वज्ञ समझकर स्वीकारेगा, अजापाल तो कंकड़ जान के फेंक देयगा, मणि उसके भाग्य में ही नहीं है, वह भी कंकड़सा ही रहेगा, वैसे तो इस जगत् में गली में बसते हैं, अभिनन्दनीय पुरुष तो राजचम्पाओं के, तथा अमर फलों के बगीचे में रहते हैं, वे सुवास से सुरभिप्रेमिओं को अपने पास खींचते हैं, सुरभिप्रेमी आत्माएँ उन्हें खींच के स्नेह डोरी से निज के प्रति आकृष्ट रखते हैं, समग्र जगत् में इस प्रकार अभिज्ञ सर्वज्ञों की चढ़ती कला ही रहती है, अनभिज्ञ ईर्ष्युकों की पड़ती स्थिति ही होती है, उनको भविष्य में गुणग्राहिता द्वारा अभिनन्दनपात्रता हो, वैसे इन अभिनन्दनों से प्रभु से प्रार्थनीय है॥

पाण्डित्य के प्रति स्नेह अनुभव साक्षिक ऊपजता है, पाण्डित्य सदा हृदयंगम होता है, बह लाया नहीं जाता, न तो भगाया जाता, व्यर्थ प्रयत्नशील लोक इसके अनभिज्ञ होने से कुयत्न में झके रहते हैं, मगर 'जन्म ओषधि मन्त्र तप समाधि आदि जन्य सिद्धियाँ, तथा ऊह शब्द अध्ययन आदि सिद्धियाँ, पूर्व उपार्जित पुण्य तप आदिक द्वारा तथा प्रभुप्रसन्नता सत्पुरुष विद्वान् गुरुवर्ग आदि के कृपाकण से मिलती ही हैं, उन्हें टालने के लिये यत्नशील अतः निज में उक्त साधन साध्य के बाजवाले सिद्ध असद्धेत्वाभासी या

अन्यथा सिद्धिक हों धाते हैं, वे अज्ञानी होने से निरयी ही रहेंगे, असुघड़ को असुघड़ ही अच्छी लगती है, उत्कर के जीव को उत्कर की कचरापट्टी ही सुगन्धित लगती है, कीड़ा सुगन्ध में मर जाता है, ग्रामीण विद्वान्, वल्कलवाले ऋषि, स्वप्रातिभ सार्वज्ञ्य से तथा योग समाधि, ऐश्वर्य, आदि से मनोहारी ही होते हैं, आदरणीय पूजनीय तथा प्रातःस्मरणीय होते हैं वे ही आतिवाहिक देवताएँ हो के ब्रह्मलोक में पहूँचाते हैं, उनके प्रति आसुरी सम्पत्तिवाले खिन्न से रहते हैं, उनमें प्रतिभाएँ ऊपजते ही जल जाती हैं, प्रातिभशक्तियों के अंकुर ही मोड़े जाते हैं, अभिनन्दनों से विपरीत धी वाले ज्वलन में अर्पित न हो जायँ, अमृतवर्षा में अर्पित होते चले, वैसा परमेश्वर के प्रति प्रार्थनीय है, चिरकाल में अनेक जन्मों में भी अभिनन्द-पात्र बनें यह प्रार्थनीय है।

जंजाली लोक अपनी कुबुद्धि के पडल से विज्ञानियों के नेत्रों में धूली फेंक के उन्हें अनभिज्ञ जानकर अपनी स्वार्थसिद्धि उनके स्वार्थ में आगे धर कर करते ही रहते हैं, वे वैसी स्थिति के परीक्षित हो ही जाते हैं, विज्ञानी लोक सह ही लेते हैं अज्ञानी आनन्द मानते हैं, कोई भी सिद्धि बबड़ने से नहीं होती, घर्षण व्यय आत्मार्पण इत्यादि से होती है, अभिनन्दन सब सिद्धि देनेवाले होते हैं, अभागियों के लिये ही असिद्धि में परिणत हो जाते हैं, अभागियों की लक्ष्मी बिच्छू होके भाग जाती है, सुभागियों के लिये आशिष नलीयर में जल की तरह जमा वनकर मिष्ट मावा बनती है, दुर्भागियों के सुभाग्य होने की प्रभु-प्रति प्रार्थना है।

अभिनन्दनों के माधुर्य आस्वाद आत्मा में होता है, वहाँ आनन्द लहरीयाँ उठती हैं, आनन्दघन ब्रह्म का आस्वादन सतत होता है, स्वप्रकाशानन्द चिद्धन स्तरों के घनीभाव में आत्माएँ सार्वभौम सुख-सागर में झेलती हैं, अलौकिक दिव्य साक्षात्कार के बिषय हो जाते हैं, ब्रह्म की अलौकिक रमणीयता ओतप्रोत मिल जाती है, ऐश्वर्य चमत्कार असीमित आ जाते हैं, मानव भावनाएँ अभिनन्दनों द्वारा प्रकट-स्वरूप लेती हैं, सब स्वरूप प्रीति स्नेह प्रेम रति उल्लास आनन्द सुख उत्सव भरे बनते हैं, प्रति व्यक्ति में वैसे अभिनन्दन तो प्रतिदिन होते उद्भवते रहते हैं, मगर विशिष्ट व्यक्तियों की तरफ से उद्भवने पर ब्रह्मानन्दास्वाद मिलता है जो कभी नहीं हटता, निज में प्रत्यक्ष आनन्द है वही सजातीय परोक्ष में भी होता है, स्व-स्वेतरों के आनन्द-स्तर ब्रह्मसम्बन्ध से ऐक्यभाव को जब प्राप्त करें तब ब्रह्मानन्दानन्द मिल जाता है, स्वचेतना में उर्वरित होता रहता है, तभी सर्वसामान्य महानन्दास्वाद आता है, मुक्त्यवस्था में यह है, जीवनमुक्त्यवस्था में अंश भी मिल जाय तो ब्रह्मानन्द महानन्द की योग्यता आ जाय, आत्म-साक्षात्कार सुरूपात्मोपलब्धि अपने में कर्म ज्ञान भक्ति को समेट कर प्राकट्य लेती है, यह उपलब्धि ही ज्ञप्तिग्राह्य स्वरूपसा प्राकट्यरूप में है, वही प्रकटाऽभिन्न है, तव आस्वादाऽभिन्न बनती है, और अभिनन्दनों के आस्वादन के 'सः अश्नुते सर्वान् कामान् सह ब्रह्मणा विपश्चिता' के विषय सचमुच होता है, यह आनन्दित चैतन्यलब्धि आप सभी जनता को अभिनन्दन द्वारा मिले यह भगवान् से मेरी प्रार्थना है।

तत्त्वज्ञान अपरोक्षानुभूति आत्मा की आनन्दभरी चेतनाशक्ति जब पूर्ण स्वरूप में युवती हो जाती है तब पाण्डित्य उसके भूषणरूप हो जाता है, अभिनन्दन उसके प्रशस्त सेवक बन जाते हैं, व्यक्तियों के प्रवाह इसके अभिजन हो जाते हैं, उसका साम्राज्य ब्रह्मदशा में सुरक्षित हो जाता है, इस प्रकार के अपरोक्षानुभव का आप जनता को होने की ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ। दुःखदुरितों की हाजरी से आनन्द की तमन्नाएँ ऊठती हैं इष्ट में प्रीति को बढ़ने के कारण बनती हैं, दुःखदुरित अनिष्ट होते हुए भी अनादि काल से सत्य है, उसकी निवृत्ति सत्य है, यह आनन्द में परिणत होती है, अतः अभिनन्दन आनन्द में परिणत हैं।

वैष्णवभक्त, शैव, बौद्ध, जैन, शाक्त, सभी ब्रह्मप्रीति-स्वरूप के मिष्ट साधन दुःखदुरित को मानकर अपनाय के ब्रह्मरस में गोता लगाने को चल पड़ते हैं, जहाँ निर्वाण वहाँ ब्रह्मरस मिलता है, आत्मीय भावनाओं के स्वरूपसमूह एक पिण्डरूप आनन्दाऽपरोक्षानुभूति में मुमूर्त होते हैं, अभिनन्दनात्मक अंगो से अंगी आनन्दघन पुरुष आत्मपुरुष में प्रविष्ट होता है वह निर्वाणपद का आनन्द उपजाता है, उससे मुक्ति सुख जिन्दे को भी प्राप्त होता रहता है, वैसे ये अभिनन्दन भारत की प्रजा को भले सुन्दर रूप से फलीभूत हो अखण्डित अखण्डभूमिरूप पारितोषिकरूप तथा अखण्डिततृप्तिरूप हो, पहले श्रवणादि आनन्द तब मानसानन्द बाद में बौद्धिकानन्द और चित्-चैतन्यानन्द अन्त में ब्रह्मानन्दरूप में सभी अभिनन्दन परिपाक को पानेवाले हों।

अभिनन्दनजन्य आनन्द सब आनन्दो की टोच हैं, शारीरानन्द समृद्धयानन्द साधनानन्द परिकरानन्द सत्ताधिकारितानन्द विज्ञानानन्द अनवलम्बिस्वातन्त्र्यानन्द दिव्यानन्द भोगानन्द, ये सभी हैं तो आनन्द ही, मगर प्रशंसानन्द अभिनन्दनानन्द तत्क्षण में सेर-सेर लोहू चढ़ा बढ़ा देता है, आनन्द वैसे काम करते हैं, जो अभिनन्दनानन्द काम करता है, मरणपथारी पर पड़ी व्यक्ति भी अभिनन्दनानन्द मिलने से इष्टता के जीवन को स्वभवन में संसृष्ट करके दो चार दिन और जिन्दा रहता है, वैसे अभिनन्दनानन्द सभी के लिये जीवन डोरी हो।

नारायण विष्णु शिव आदि की शक्तियाँ आनन्द कलाएँ हैं, राधाजी कृष्णकला आनन्द मूर्ति है, बंसी आनन्द चुम्बन लहरी है, प्रकृतियाँ आनन्द की लहरियाँ हैं, बाह-बाह के अभिनन्दन की क्षेत्रभूमियाँ हैं, विद्याएँ सभी आनन्दभूमियाँ हैं, नन्द नन्दन आनन्द अभिनन्दन ये तर तम अवस्थाओं को लेते हैं, अभिनन्दन भी प्रत्यभिनन्दन का सापेक्ष शुद्ध चैतन्य में ब्रह्मसत्ता में परब्रह्मशरण में बसवाट पाते हैं, वे भी मुक्तरूप से अभिनन्द्य की स्तुति करते हैं, विशिष्ट स्तुति से सामरूप में अभिनिष्पन्न हो के गुण ऐश्वर्य शक्तियाँ की तरह मुक्तता को भोगते हैं, ऐसी स्थिति के आप के सभी अभिनन्दन योग्यपात्र के लिये मुक्त्यानन्द देनेवाले हों।

ब्रह्मचैतन्य ही आत्मचैतन्य तथा चित्-चैतन्य में अपने को प्राप्त होता है, अपने अभिनन्दन उस चैतन्य के धर्म हैं, अतः दिव्य अलौकिक पारलौकिक अपवर्गानन्द देनेवाले हों।

परमात्मा स्वयं कवि है दार्शनिक है तत्त्ववेत्ता सर्वज्ञ है, उसकी परा शक्ति ब्रह्मने जगत्-सृष्टि जीव ईश्वरों के आनन्दार्थ की है, आनन्द से सभी ऊपजे हैं आनन्द में रहे हैं आनन्द में लीन होते हैं, फिर आनन्दरूप जगत् प्रकट होता है, आनन्दोल्लास के वेद, महर्षिवाणी में देव गाथाएं, और आचार्यों द्वारा आत्म मुक्तिसाधन के अभिनन्दन प्रेरित होते हैं, उनमें आनन्दतत्त्व व्यापक है रसभरा है अभिनन्दनभरा है, वह आत्मानन्द ब्रह्मानन्दभरा है, मांगलिक प्रेरणाओं में भी वही है, अभिनन्दन के रूप में वही एक है, उसे अद्वैत कह पुकारा है, वह सभी भिन्नो में ऐक्य लाता है ऐक्य में ले जाता है, सामंजस्य में उतारता है आनन्दोल्लास करता कराता है, सर्वकालिक सार्वजनीन सदोद्धारकृत् सर्वत्रोपस्थित स्ववाणीरूप वेदों द्वारा धर्म मठ सम्प्रदाय जमानेवाला वही अद्वैत परमेश्वर है, उनकी परम्परा में छन्द काव्य अलंकार तत्त्व विमर्श आध्यात्मिक पदार्थ प्रकट होते आये हैं, वे कृत श्रम व्यक्तिओं के अभ्यास द्वारा निरन्तर जीवित रहते आये हैं, उनमें से ऋषि पितृ देव मानव नाग आदि के इतिहास ग्रथित बनते आये हैं और ग्रन्थरूप में प्रसरते जाते हैं, अतः ब्रह्म में ब्रह्मविद्या छन्दोविद्या अभिनन्दित हुई लौकिकाऽभिनन्दनों से ओप चढ़ाई हुई जगत्-जनता को भी ओप चढ़ाती हैं, साधारण लोग भी गीतिकाओं में सनातनधर्मों को

गाते हैं, अभिनन्दनों के ओप चढ़ाते हैं तथा जीवित ही रखते हैं, इनके आधार पर सभी संसारी मानव आत्मज्ञप्तिप्रद ग्रन्थ ग्रथन करते आये हैं वह उन्ही की प्रसादी है, मेरे ग्रन्थ भी उन्ही महर्षिओं की प्रसादी है, इनके अभिनन्दन उन्हीं वेदों के वेद वक्ताओं के अभिनन्दन हैं, मेरा अभिनन्दन भी उन्हीं में सामेल हो, वेदों के उत्तराधिकारी विद्वान् अभिनन्दन के पात्र इस लिये होते हैं, जो वेदों के रक्षण के लिये निज-लेखिनी चलाते हैं वे आदि कवि के रूप में भी वर्णित होते हैं, उनके वंश के मध्य कविलोक ऐतिहासिक सुवृत्तिक हो जाते हैं, बाद में तो चर्वितचर्वणसा यत्न जमता रहता है, इनको वैदिक प्रवृत्ति के लिये, अभिनन्दन योग्य ही है, मुझे योग्य बनाया व अभिनन्दित किया है यही मेरा उत्तमयुगी जीवन का सुधारा है, लाभ ले के बावरा न बन जाय, विजयी होने पर भी अक्षम न बन जाय, सुशक्त होने पर भी विनीतता को न तजे, गम्भोर स्वरूप में से उछल न जाय, इत्यादि गुणगौरव अभिनन्दनों द्वारा ज्ञात होते हैं, अभिनन्दनों के ज्ञाताजन अनिन्द्रिय न हो शोकित न हो उत्फुल्ल न हो दीनदरिद्र न हो, भाषावृत्त वृत्तान्तज्ञ हो, सर्जन शिल्पज्ञ हो, ग्राहकशक्तिमान् मेधावान् ग्रहणधारणपटुतावान् गर्भाऽभिप्रायज्ञ हो अप्रतिहतधीगति हो नवनवोन्मेषशाली हो, उनमें अभिनन्दन आनन्दप्रद होते हैं।

संस्कृत भाषा को चालू युग में कई लोक मृतभाषा या निष्फल भाषा मानते हैं, उनको संस्कृत से धन बाहुल्य नहीं मिलता है, अतः वैसा तिरस्कार होना संभवित है, मगर अब तो धन देने वाली देववाणी बनी है, युग आगे बढ़ा है, समग्र दूनिया संस्कृत के लिये मरी फीटती है, समग्र दूनिया के विद्यालय और विद्वानों में संस्कृत का स्थान जमा हुआ है, सभी कोई राजभाषी भी संस्कृत पंडितों से अभिनन्दन चाहते हैं, फिलासोफियाँ संस्कृत में से प्रकटी हैं, तत्त्वज्ञानी लोक संस्कृत में से तत्त्वों को ढूंढकर अपने तत्त्वज्ञान आगे बढ़ाते हैं, में तो संस्कृत अंग्रेजी हिन्दी गूजराती में गोता लगाता हुआ भी संस्कृतज्ञों से अभिनन्दन पा के विशेष आनन्दित होता हूँ, अन्यभाषाज्ञ भी संस्कृतज्ञ होने से मुझे ज्यादा आनन्दप्रद होता है, संस्कृत में से सभी भाषाएँ प्रकटी हैं, संस्कृत की आत्मजाएँ हैं, उनकी तनू में संस्कृत विषय तत्त्वकण अवतरे ही होते हैं, अतः उनके पोषक अभिनन्दन मेरे आनन्दसागर हो पड़ते हैं, आप सभी को वे आनन्द-सागर हों। इन्डलिश में एम्० ए० तक पहूँचने पर भी मैंने सारा जीवन संस्कृत तत्त्व विमर्श में ही समर्पित किया है, जब जूनागढ़ बाबदीन कालिज में बोम्बे युनिवर्सीटी की सम्पूर्ण मेट्रीक परीक्षा पसार किया तभी से उसमें काम चलाउ व्यापार वाणोव्यवहार रक्खा, विकास में मन ही नहीं लगा, काशी कालिज में एम्० ए० तक जाने पर भी संस्कृत में पारगामी प्रवृत्तियाँ में रस ही रस मिलाने में गरकाव रहता था, वैसे मेरे शरीर इन्द्रिय अन्तःकरण आत्मा आदि संस्कृत के ही कणों के पण्डित हो गये हैं, जो मेरे लिये आप लोग अभिनन्दन दे रहे हैं, मुझे गुरुजनों की सेवा फली, सरस्वती माता के आशीर्वाद फलित हुए, विद्वानों के अभिनन्दन पथ्य हुए, अब मेरे सभी पुरुषार्थ सिद्ध हुए, जनता को भी यही अभिनन्दन है, आप को उसी प्रकार फलीभूत हो।

मैंने भोंसले सरकार के इन्दौर के महाविद्यालय में एक मास प्रिन्सिपल पद लिया था, महा-महोपाध्याय श्रीपाद शास्त्रीजी विद्यमान थे, शिवनाथ झारखंडीजी ने काशी से मुझे वहाँ भेजा था, महामहोपाध्याय श्रीगोपीनाथ कविराज की प्रेरणा भी रही, मगर मुझे पराधीनता में असन्तोष हुआ, त्यागवृत्ति बलवती थी, मैंने उस पद त्याग दिया, बाद में श्रीमंगलदेव शास्त्रीजी प्रिन्सिपालसाहब द्वारा विषयनिर्वाचन शिक्षण समिति में तथा परीक्षक विभाग में नियुक्त किया, थोड़े समय बाद जन्मभूमि महाराष्ट्र गुजरात—सौराष्ट्रदेश में निजीय श्रीस्वामिनारायणसम्प्रदाय में ही आश्रित वर्गों के आकर्षण से व मेरा दील की उमेद से जा के रहना ही उचित समझा, जब जामनगर पश्चिमकाशी के मन्दिर में महान्त

रूप में था, वहाँ एक सायन्स के प्रिन्सिपाल दर्शन को आते थे, मुझे यह इच्छा ऊपजी कि इन्दौर काशी व जामनगर के प्रिन्सिपाल पदों में वेतन में फरक जरूर होगा, इस इच्छा निवृत्ति के लिये उसने नमस्कार करने पर मैंने पूछा—यहाँ वेतन कितना होगा ?, वह कहे—आपको क्या जरूरत है ?, जो होगा, सो लायकात वेतन देती ही है, मेरी इच्छा तो बूझ गई, मगर उसमें पद का अभिमान भरा स्तर दिखलाई दिया, तभी से निष्फल इच्छास्वरूपों को हवन में ही दे देने का कायमी अभ्यास रक्खा, अन्य के प्रश्न के उचित जवाब बोलना, स्व से प्रश्न ही नहीं निकालना, यह अभ्यास मेरे में अति बढ़ता हुआ दृढ़ हो गया, जो मौन व्रत में मुझे आनन्द दे रहा है, अभिनन्दन के फल जनता को भी इच्छाशान्ति व पात्रतानुसार ब्रह्मानन्द का अनुभव देने वाले हों।

शृंगार कुमार कुमारिकाओं में मन्मथोद्भूत होता है, भक्तों ने वह सभी भगवान में जोड़ दिया है, सभी प्रकार के अभिनन्दन भगवान में लगाये जाने से ब्रह्मानन्द के रससहोदर बनते हैं, परब्रह्म में समर्पण के लिये काम में आ जाते हैं, रस-युग में कोने-कोने से परब्रह्म-भक्ति बढ़कर सर्वविद्याओं के संग्रहालयसमान परिपक्व फल में स्थिरताबाली हुई है, सभी अभिनन्दन भक्ति में सामेल हों। कोई भी साधना अभिनन्दन दिलाती है, सभी वृत्तिओं में चाक्षुषवृत्ति तेजस्विनी योग्यपदार्थों के बिम्बों को अपने में ले लेती हैं, वृत्ति-विकृत सूक्ष्म प्रतिबिम्ब कहा जाता है, किसी केन्द्र पर दृष्टि स्थिर करके धारणा लगाना, तब ध्यान में ततः समाधि में पहूँचना हो सकेगा, नासाग्र वृत्ति-स्थैर्य के बाद अर्न्तदृष्टि होने से प्रातिभदृष्टि बढ़ेगी, आत्मीयशक्ति का सिमटाव होने लगता है, षट् वा सप्त चक्रों में से तेजःप्रवाह वश होने लगता है, शब्दब्रह्म खूलता है, ब्रह्मरस तक पहूँचना होता है, एकाग्रता के साथ नाम स्मरण से निरोधफल भी पाया जाता है, भगवन्मूर्ति आत्मा में दीखने लगती है, परब्रह्म का आनन्द सागर मिलने लगता है, परमगुरु सत्गुरु गुरुरूप हरि के दर्शन धारणा ध्यान से चिच्चैतन्य अपरोक्ष साक्षात्कार स्वरूप में बढ़ता है, परब्रह्म-सहित समस्त ब्रह्मलोक ब्रह्मसृष्टियाँ और प्राकृत सृष्टियाँ भी दिव्य स्वरूप में ही दीखती हैं।

अद्वैतियों में पहले सगुण ब्रह्म उसके बाद निर्गुण ब्रह्म में ऐक्यम्। षट्चक्रनिरूपण में—१-गुदोर्ध्व मूलाधार चक्र, भूतसृष्टिजय। २-स्वाधिष्ठान चक्र, लिंगमूलप्रदेशस्थम्, कामदेवजय। ३-नाभिमूल में मणिपूरचक्रम्, स्वर्गविजय। ४-हृदय में हृत्पंकज हृदयचक्रम्, सत्यलोक विजय। ५-कण्ठदेश में विशुद्ध चक्रम्, ईश्वरलोक विजय। ६-भ्रूमध्यस्थ आज्ञाचक्र, वैकुंठ गोलोक विजय। ७-ब्रह्मचक्रं ब्रह्मरन्ध्र, इससे ब्रह्मलोकगति कही है। षट्चक्र विवरण टीका में रंग बीज देवता दल भूत शक्ति स्वरूप ध्यान फल आदि बताये हैं, तथा क्रमशः भूत इन्द्रिय मन चित्त अहंकार महत्तत्त्वों के विजय बताये हैं, आत्मब्रह्म ब्रह्मरन्ध्र से परब्रह्म के लोक में पहूंचना, आदि-आदि बताये हैं।

योगदर्शन में—'नाभिचक्रे कायव्यूहज्ञानम्'। 'कण्ठकूपे क्षुत्पिपासानिवृत्तिः'। 'मूर्धज्योतिषि सिद्धदर्शनम्'। 'हृदये चित्तसंवित्'। इन सूत्रों द्वारा शरीर भूत भौतिक सृष्टि देवतागण ईश्वरसमूह आदि के विजय मायामुक्तता व परमेश शरण में स्वरूप प्रतिष्ठा कैवल्य तथा उपासनाकाण्ड योगकाण्ड बताये हैं।

पुराणों में चौदह भुवन अष्टावरण विराट् सूत्रात्मा अव्याकृत महाकारण जितकर भगवद्धाम के वासी होना बताया है, धाम के नाम भिन्न-भिन्न हैं। महानारायणोपनिषत् आदि में ब्रह्मांडों के बाहर कई प्रकार के वैकुण्ठ धाम, उनसे परे महाशून्य, तब महाब्रह्मलोक बताये है। कोई-कोई पुराण में वैकुण्ठ गोलोक की रचना तथा महाप्रलय में तिरोभाव भी बताये हैं। पद्मपुराण में चार वैकुण्ठ कैलास उन पर गोलोक, इसके पर परमात्मा का लोक, बताये हैं। साकेतधाम भूमाधाम श्वेतद्वीपधाम अव्याकृतधाम आदि भी वर्णित किये हैं।

वेदान्त प्रक्रिया में पंचीकरणभूत, उस पर वैराज, तब सूत्रात्मा, अव्याकृत, महाकारण, अथवा विराट् महाविष्णु ईश्वर प्रधानपुरुष प्रकृतिपुरुष, सगुणब्रह्म वर्णित किये हैं, निर्गुणब्रह्म व्यापक कहा है। महाभारत व भागवत में परवासुदेव अपरवासुदेव तब अनिरुद्ध प्रद्युम्न संकर्षण, तब ईश्वरसृष्टियाँ विराट, ब्रह्म विष्णु महेश, स्वर्ग मृत्यु पाताल सृष्टियाँ, वर्णित हैं, इनको जितने से परवासुदेव से मिलना होता है।

श्रीस्वामिनारायणप्रभु के ग्रन्थों में षट्चक्र, परा पाश्यन्ती मध्यमा बैखरी, ब्रह्मनाद, ब्रह्म विमर्श बिन्दु नाद ध्वनि, परब्रह्म, नवधा भक्ति, प्रपत्ति शरणागति, त्रिदेव त्रयस्त्रिंशत् देवताएँ, यज्ञ याग, ईश्वरावतार, शक्तियाँ, योगी, यति, छ प्रकार शरण, चौदह लोक, अष्टावरण, वैराज महाविष्णु प्रधान पुरुष, प्रकृति पुरुष, वैकुंठादिधाम, ब्रह्मधाम, परब्रह्म के मुक्त परब्रह्म साकार सगुण मुक्ति आदि बताये हैं। वैष्णवों में सगुण साकार परमेश्वर के पास जाना सेवा करना मुक्ति मानी हैं।

शैवों में सगुण साकार शिव के कैलास में जाना या तो निर्गुण में मिलना मुक्ति मानी है। शाक्तों में ब्राह्मी माता में मिलना शक्ति में शक्त का लीन होना मुक्ति मानी है। कबीरामत में षट्चक्र को वेधना, कुण्डली जाग्रत करना, सुषुम्णा द्वारा प्रकाश मार्ग में आगे बढ़ना, गुरु ब्रह्म के सहारे परमगुरु परब्रह्म में अर्पित हो जाना, पहली अनिराकार मुक्ति, बाद में असाकार हो जाना मुक्ति मानी है। गुरु नानकदेव ने निर्गुण निराकार के रूप में गुर्वाज्ञानुसार वर्तन से ही पहूँचना मुक्ति मानी है, गुरुधर्म रक्षा करना ही मुक्ति का साधन है, महामुक्ति ही महा स्वर्ग है, निर्गुण निराकार में पहूँचना ही अन्तिम पुरुषार्थ है। राधास्वामी ने षट्चक्रों को पार कर तब त्रिकुटी हंसमुखी से आगे बढ़ना, परब्रह्म के निवासरूप दशम द्वार में पहूँचना, ब्रह्मांडों की सीमा छोड़ना, महाशून्य के मैदान में दाखल होना भँवर गुफा में सोऽहं सोंऽहं—पुरुष को परखना, पकड़ के तब उपर सच्चे लोक में अनामीपुरुष अलखपुरुष अगमपुरुष के सहारे सहारे राधास्वामी के धाम में ब्रह्मलोक में पहूँचना, यह मुक्ति है, गुरुध्यान से परमगुरु परमात्मा को पायँगे, गुरुभक्ति, अवतार उपास्ति, व परमात्मप्राप्ति सभी के लिये सामान्य न्याय ही है, पारसमणि के स्पर्श से लौहा सुवर्ण बनता है, पारस नहीं बनता, प्रदीपमणि से अन्यदर्शन उजाला में होता है प्रदीप नहीं बनता, चन्दन से सुगन्ध मिलता है चन्दन नहीं बनता। चिन्तामणि या कल्पवृक्ष तो स्वस्वरूप बनने का संकल्पवाले को तद्रूप बना देते हैं, वैसे सत्पुरुष से सत्गुरु सत्संग से ब्रह्म बन जाते हैं। सत्गुरु ब्रह्म बना देते हैं।

प्रणामी निजानन्दी सम्प्रदाय में परमधाम का प्रतिबिम्ब अक्षरधाम में, इसका प्रतिबिम्ब चिदाभास में, इसका प्रतिबिम्ब केवल ब्रह्म शबल ब्रह्म तथा वैराजादि सृष्टि में पड़ता है, श्रीराजजी की परब्रह्म की ही समी लीलाएँ तथा सुरताएँ आयी हैं, उन्हीं के तारतम्य ज्ञान-मन्त्र द्वारा उस परमात्मा में मिलना उत्तम मुक्ति है, अक्षर में तो सब कोई जाते हैं, इस प्रकार जीव ईश्वरब्रह्म परब्रह्म के स्वरूप सभी के घर में हैं, शक्तियाँ भी सभी के घर में हैं, मधुर रतिरस भी सभी के घर में हैं। उपासना भक्ति ज्ञान कर्म चार साधन विभिन्न हैं।

कई प्रकार के शैव, शिवभक्ति द्वारा उद्भावित संसार में, पराविद्या नित्यानन्दस्वरूपा चिन्मयी शिवा शक्ति चेतना के तन्मयभाव के द्वारा शिवस्वरूप में पहूँचना मानते ही हैं। चाहें पदार्थों के प्रकार भिन्न हो, पंच शिव आदि प्रकार, शक्तियों के प्रकार, विभिन्न है, तो भी ब्रह्मरूपता में तो व्यासजी के सूत्रानुसार उपनिषदों के बोधानुसार निगम आगमादिक के सहारे उन्हीं ब्रह्मदशा द्वारा परब्रह्म प्राप्ति करना सभी आन्तर प्रधान महाविद्याओं के उद्देश हैं, उन्हीं तात्पर्य पर दिये गये सभी अभिनन्दन आज कुंकुमवापी को बड़े भाग्य से मिले हैं, वे अन्तिम परब्रह्म को प्राप्त कराते-कराते बीच की सभी कोटियों

के स्वर्ग भी यथाधिकारी जीवों को देते चले—यह भी मेरा एक अभिनन्दन है, जिसमें सभी देवताएँ ऋषि महर्षि पितृगण ईश्वरगण महामाया तथा ब्रह्म प्रसन्न रहे व क्रम मुक्ति भी देते चलें, यह प्रार्थनीय है।

आसामी ओंबाबा ने भी निज सम्प्रदाय में कई सत्यलोक की कोटियाँ चढ़ायीं हैं, उनके पर ओंब्रह्म के धाम में चक्रवेधी जा सकता है, वैसे ये अभिनन्दन सब चक्रवेधी बनते हुए ओंपरमात्मा के धाम में पहुँचानेवाले भी हों।

शुद्धाद्वैत में अनुग्रहमार्ग से ही सभी प्रकार के जीव तर जाते हैं, अनुग्रह के आगे काल कर्म स्वभाव माया हट जाते है, भगवान के प्रवेश द्वारा सभी पोषण पाते हैं, मर्यादा भी हट जाती है, प्रेम के आगे मर्यादा अकिंचित्करी है, भगवान् स्वयं साधन व साध्य बनते हैं, सभी कामनाएँ उड़ जाती हैं, इस प्रकार के भक्त को वर्तमानाऽवस्था ही गोलोक ब्रह्मलोक ब्रह्मानन्द है, आप सबको इस प्रकार के भी अभिनन्दन के फल हों। केवल कर्मवाद भी नैष्कर्म्य में जाना चाहता है, प्रज्ञापारमिता में पहुँचाने के लिये ये अभिनन्दन फिर भी सार्थक हों। मायिक कर्मरहित भगवत्सेवापरायणता में सफल हों। तथा आगत पूर्व साध्यदेवादि के प्रथम धर्मरूप में पहुँचाने वाले हों। गुरु की तन-मन-धनादि से सेवा मिलना भी आशीर्वादों का फल है, गुरुकृपा से भव कर्म आदि से मुक्त होयँगे, नरक प्रेतता तिर्यक्ता में नहीं जायँगे, बन्धन में नहीं पड़ना होगा, चित्त को वश करने में ये अभिनन्दन उपयुक्त हों, प्रज्ञापारमिता द्वारा विमल विज्ञानोदय में सहायक हों।

ये अभिनन्दन रामचन्द्र जी की तरह मर्यादा पालन करानेवाले हों, वामन जी की तरह जीव-लोक ईश्वरलोक ब्रह्मलोक पर्यन्त कदम भरानेवाले हों, श्रीकृष्ण की तरह लक्ष्मी देनेवाले दुःख हरनेवाले व शरण में लेनेवाले हों, विजय प्राप्त करानेवाले हों मित्रता को निभानेवाले हों भक्ति देनेवाले महत्ता और स्वाभाविक प्रेम को देनेवाले दैविता देनेवाले तथा अच्छे पीठ के उत्तराधिकारित्व देनेवाले हों। रामचन्द्रजी का आदेश सीताजी की तरह सतीयों के पतिव्रतात्व में हैं, श्रीकृष्ण के आदेश गोपीयों की तरह उनके पति तज कर भी भगवान में प्रेम कराने का है, कपिलदेव के आदेश आत्मा की निर्लिप्तता में हैं, ऋषभदेव के आदेश अहिंसा में हैं, पृथु के आदेश प्रजारक्षण में हैं, वामनजी के आदेश आसुरस्वभावों के शासन तरफ हैं, परशुरामजी के आदेश उद्दण्डों के गर्व टालने में हैं, सनत्कुमार आदि के आदेश वैष्णव सन्त धर्म में हैं, नारदजी के आदेश भक्ति कराने में हैं, दत्तात्रेय के आदेश समानब्रह्मदृष्टि में हैं, व्यासजी के आदेश तत्त्वज्ञान के साथ परमतत्त्व परमात्मा में लगाने के हैं। बुद्ध के आदेश जगत् के क्षणिकत्व में तथा शून्य स्वभाव में बतला के उसके परे स्थिति में ले जाने के हैं, मोहिनी के आदेश माया की मोहक चेष्टाओं को तजाकर अमोहक भगवान में तद्दास्य में लगाने के हैं। शंकर के आदेश निर्बन्ध अवधूत स्थिति में महायोगी-स्वरूप से रखने के हैं। पतञ्जलि के आदेश चित्त जितके परम पुरुष में लगाने को है, न्यायतर्क के आदेश परीक्षक होके शाश्वत दुःखध्वंस में पहुँचाने के है, उपनिषदों के आदेश ब्रह्मस्वरूप पहचानने में हैं, पुराण संहिता इतिहासों के आदेश आश्चर्यपूर्वक भगवान में लग्नि लगाने के हैं, सन्तों के तथा गुरुओं के आदेश प्रभुमय जीवन कराने में हैं, सभी के आदेश पर तत्त्व में लगाने के असंसारी बनाने के हैं, गृहस्थाश्रमीओं के आदेश धर्म अर्थ काम और मोक्ष मिलाने में हैं, सत्तावाले के आदेश सामदान भेद दण्डों में होते हैं, निर्बलों के आदेश प्रायः पराश्रय से निर्वाह के होते हैं, आचार्यों के आदेश जिस कामना से शरण में आवें उनको शरण में ले के उनके मनोरथ पूरण करने में होते हैं, भगवत्परम्परा गुरुपरम्परा या वंशपरम्पराओं में मूलपुरुष के आदेश अवतरते हैं, स्वार्थ के लिये गुणों के अनुसार आकर्षणद्वारा सभी को मूल पुरुष में लगन लगाने के लिये शास्त्रबोध है, फल में स्वार्थत्याग व मूल पुरुष के आज्ञावचनों

में रहने का है, किसी हेतु या अवरोध बिना की शरणागति भक्ति उत्तम होती है, वैसे शरणागतों को भगवान् स्वयं अर्पण होते हैं, जैसे कि बलि को वामन जी, व्रजवासीओं के प्रति श्रीकृष्ण सेवकों के प्रति स्वामी, मुक्ति भी भक्ति की दासी हो जाती है, जहाँ स्वामी सेवक के भक्त बन जाते हैं, सभी लोक चमत्कारीओं का आश्रय लेते हैं, उन्हें उपासते सेवते हैं, उनमें अनिष्ट भी देख लेते हैं, तब उन्हें छोड़कर सदा इष्ट प्रभु के अवतारों को उपासते सेवते हैं, परमेश्वर एक है किन्तु उपास्य अवतार अनेक हो गये हैं, जिनसे अनेक सम्प्रदाय चल पड़े हैं, उनके ध्येय उत्तम हैं, वे सभी सम्प्रदायअभिनन्दनीय हैं, सम्प्रदायों के आधार पर धर्म व भक्ति में लोक निर्भर रहते हैं, विश्वास सेअगम्य प्रभु को गम्य कर लेते हैं, खग मृग अग उद्भिज्ज नारी अज्ञ भी तैर जाते हैं, इस हेतु से ये सभी अभिनन्दन साम्प्रदायिक जनता के व्रतनियम सत्संग के लिये भी हों।

वेदमन्त्र लौकिक तन्त्र सत्पुरुषों के सूत्रों के अवलम्बनवाली सभी सगुरुजनता भिन्नेश्वरों के तथा परमेश्वर के आश्रय से तैर जाती हैं, शक्तियाँ बढ़ती हैं भक्ति सिद्धियाँ प्रकट होती हैं आत्मा ब्रह्म में अर्पित होते हैं स्नान सन्ध्या वन्दन पूजन भजन देवार्पण कीर्तन ध्यान आदिक में सुश्रद्ध जनता नित्यकर्म नैमित्तिककर्म काम्यकर्म में प्रीतिवाली होती हुई भी निष्काम कर्म में अन्ततः पहुँचती हैं, तब संसार में से छूटती है, पशु पक्षी कीट पतंगादि को देना अतिथि सत्कार करना पूर्वज आत्माओं की यादगीरी-पूर्वक जलांजलि फलांजलि देना गुरु ऋषि द्वारा शास्त्राध्ययन करना, देवों की उपासना चालू रखना, ये सब सदा के लिये क्षेमकुशल देने रखानेवाले हैं, इनको टिकाने के लिये अभिनन्दन हमारे प्रति सदा सकरुण रहें। वेदों के प्रामाण्य भी बराबर हमारे में अविचल रहे। मानव जाति में जो कोई सेवक महर्षि रक्षक राजर्षि दानप्रद दातार ज्ञानप्रद ज्ञानी तपस्वी संयमी नरनारीओं में साधुता रखनेवाले हों उनके लिये ये अभिनन्दन दृढ़ावस्थास्थापक बनें। ईश्वर देवता सत्पुरुष गुरु योगी ये सब चारित्र्य से उत्कृष्ट हैं तपों से दिव्य चमत्कारी होते हैं, सन्यासी तापसी सन्त परिव्राजक ब्रह्मशील निर्ग्रन्थक शाक्य त्यागी भाग्यशाली पोप बिशप लामा आरनाल आदि-आदि महापुरुषों में तपस्या की परम्पराएँ विजय पाने का बल देती हैं, हिरण्यगर्भ आदिक ने भी तप द्वारा कार्य सिद्धि की है, सिद्ध कपिलजी तथा उनके पिता कर्दम महर्षि ने बड़ी तपश्चर्या की थी, खाखी लोग पंचाग्नि तपते हैं, भक्ति की ही साथ में यह तपस्या है, संयम बाह्य होने से आध्यात्मिक मानस तप अति उत्कृष्ट होता है ब्रह्म की एकता तक पहुँचाता है, कोई शून्यता तक, कोई समेश्वरता तक, तप के फलों को स्वीकारते हैं, क्षणिकता में स्वात्मकता में शून्य में या ब्रह्म में पहुँचाने के लिये सबीज तपस्याएँ उपयुक्त होती हैं, ब्रह्म दो नहीं है, ब्रह्म में दूसरा नहीं है, ब्रह्म से न्यारा भी सत्तावाला दूसरा नहीं है, इस बात में ब्रह्मवादी विरमित होते हैं, शून्य से दूसरा नहीं है, दो शून्य नहीं हैं, शून्य में भी दूसरा नहीं है, यह ज्ञान होने पर भी शून्य है, वह क्षणिक होते हुए भी शून्य है, जब ऐसा है तो या तो शून्य ही है संसार है नहीं, हम तुम भी हैं नहीं, बात तो यह सभी को प्रिय न पड़ी, तब प्रेम की सत्यता को मानने लगे, प्रभु ईश्वर सर्वज्ञ में प्रेमभाव भी बढ़ने लगा, आत्मा का ईश्वर में श्रो में अर्पण होना अच्छा मनाने लगा, किन्तु इस प्रवाह में चारित्र्यसम्पत्ति से अतीन्द्रिय सत्ता प्राप्ति व परिस्थिति ही मिलाना उत्तम है, इस विचार से पाश मर्यादा बन्धन तजकर आत्मा को परमात्मा होना जँच गया, जो कुछ प्रणालियाँ बदलती हैं, उत्कर्ष में प्रविशती हैं, वे अभिनन्दनों के फलरूप हैं। मोक्षपर्यन्त के अभिनन्दन आप के आशीर्वादों के साथ फलित हों वैसा चाहता हूँ। भक्ति तपस्या योग ज्ञान आदि में भी चारित्र्यशुद्धि सभी जनता में बसी मुक्ति भी मीलती है।

न्यायशास्त्र प्रमाण प्रधान शास्त्र है, ज्ञानादि प्रमाणों द्वारा जगत् आदि प्रमेय की सिद्धि होती है, प्रमाण प्रमेय दोनों की सिद्धि प्रमाण से ही है, परन्तु प्रमाण करण है प्रमेयपदार्थज्ञान कार्य है, यह ज्ञान प्रमा यथार्थ हो तब सिद्धि, अयथार्थ हो तो भ्रान्ति, सभी के दर्शनों में यही व्यवस्था है, कारण-कार्य के सम्बन्ध आवश्यक होते हैं, सम्बन्धित कारणकार्यज्ञान फल है, सम्बद्ध कारण से सम्बद्ध कार्यप्रमा यदि निश्चित ही है तो ज्ञान सभी एकाधिक विषय ही है, यदि निर्विकल्पक के संग्रहार्थ अविशिष्ट अनेकविषयक ज्ञान प्रमा हो, तो विशिष्ट अनेक विषयक द्वितीय नम्बर जरूर प्रमा है प्रथम का व्यवसाय निर्विकल्पक, द्वितीय का अनुव्यवसाय सविकल्पक नाम दिया गया है, उसके बाद के ज्ञान विशिष्टानुव्यवसाय कहे जाते हैं, त्रिक्षण स्थायित्व के बाद तो संस्कार जन्य स्मरण ही होते हैं, वे भी प्रमा तो हैं, मगर अधिक न्यून हैं, तो प्रमाभिन्न कहना उचित है, ऐसे ज्ञानों में कारण की जगह दोष मिश्रितता है, जिससे टूटाफूटा ज्ञान होता है, अब निकट या अनिकट सभी ज्ञान के विषय होने से कई प्रमाणों द्वारा कई प्रकार की प्रमाएँ होती हैं, वस्तुओं के स्वरूप रूप प्रतिफलन ग्राहक शक्तियाँ भी मानी जायँ तो उनके द्वारा भी पदार्थ ग्राह्य प्रमाविषय होते हैं, किसी न किसी प्रकार से आलोचन के बाद पराऽऽलोकन होते हैं, उनके अनेक नाम हैं,—अनुमान उपमान शब्दज्ञान अर्थापत्ति अनुपलब्धि संभव ऐतिह्य चेष्टा मौनीज्ञान मानसज्ञान पौरुषेयबोध साक्षिचैतन्यप्रकाश प्रातिभज्ञान सार्वज्ञ्य आदि कई प्रकारो में भी जिनको जिन ज्ञानादिकों को उपलब्धि इष्ट हों उनको उनकी प्राप्ति हों, आप जनता इस विषय में भी अभिनन्दनों द्वारा प्रमा ग्रहण के योग्य हों, वैसे विज्ञान लाभ के लिये मेरा भी अभिनन्दन है। अर्थाकार प्रतीतियाँ वृत्तिरूप हैं, वे बाह्य आन्तर चित्त में व आत्मा में भी चैतन्यरूप से ग्राह्याकार धार्याकार भोग्याकार को लेके विश्रान्ति पाती हैं, अतः सर्व आत्मा में हो विश्रमित हैं, उनमें अच्छे बूरे अनुभूति साक्षात्कार ही ज्ञानीय सुखदुःखादि परिणामों में भासते हैं, वे ही जगत्-रूप हैं, ब्रह्मस्वरूप हैं, अन्ततः सभी अभिनन्दनें वहाँ तक सुख आनन्द सम्पत्ति देनेवाले हों, उत्कृष्ट प्रकाश देनेवाले हों,—यह मेरा प्रार्थनीय है।

वेदान्त सत् चित् आनन्द को ही लेते, अतिरिक्त यदि इनमें सामेल हों तो स्वीकारते हैं, न हों तो तज देते हैं, एक आनन्द को ही जानकार व कायमी स्वरूप में वर्णित किया है, सभी को ब्रह्मचिन्ता के लाभार्थ कुछ गूढ सा रखा है, जो परब्रह्म के स्मरण मनन में ही जीवन समाप्त होने से सभी अभिनन्दन फलित हो आते है यही उत्तम हैं, लेवल ब्रह्म एक है, विशिष्ट ब्रह्म एक है, शुद्ध ब्रह्म एक है, एकाऽनेक ब्रह्म एक है, अनेकात्मक ब्रह्म एक है, तत्त्व एक है, अनेक भी है, पिण्डीकरण से अद्वैत में लेना अयुक्त नहीं है, दो होये में स्वतन्त्र दो तरफ गाड़ी चलकर कहाँ जायगी इसका ठिकाना नहीं, एक दिशा में ही गाड़ी चले तो पार पहूँचेगी, हमारे जड़चेतन ज्ञान के स्तर सभी आत्मपर्यन्त परमात्मा में अर्पित हो जाना यह तचेतन ज्ञान के स्तर सभी आत्मपर्यन्त परमात्मा में अर्पित हो जाना यह सभी को इष्ट है तो आपके अभिनन्दन इस प्रकार से हमें परमात्मा में पहूँचानेवाले भी हों।

उपविषदों में तर्काऽनुसार विविध कारणवाद जगत् के प्रति दिखलाये हैं, उनमें प्रकृति व पुरुष तथा उभय भिन्न भी सामेल हैं अपरिवर्जनीय हैं, तब शक्ति व शक्तिमान् तथा दोनों के संसर्ग रखनेवाले कुछ निगूढ तत्त्व भी हैं, प्रकृति त्याज्य नहीं होती, स्वात्मक होने से, पुरुष तो स्व ही है, निगूढ़ तत्त्व को स्थूलता त्याज्य है, सूक्ष्मता को ढाँप कर स्थूलता का आवरणरूप हो जाती है, अतः वह उपदेश द्वारा समानसा हो जाने पर त्याज्यधी उदय होती है, त्याज्यधी का नाम वैराग्य उपेक्षा अनादर अज्ञान अन्ध तमः अप्रकाश संसार आदि आदि, उनके त्यजनार्थ साहाय्यप्रद भी होने चाहिए, वह है प्रकाश, यह सत्-स्वरूप को बना देता है अतः प्रमा प्रकाश है वह अन्तिम तक पहूँचाता है अतः दिव्न प्रकाश है, वह ब्रह्म

चैतन्य, परब्रह्म साक्षात्कार, अपरोक्षानुभव है, यह फल में जब इष्ट है, तो आपके सभी अभिनन्दन उसी प्रकार की व्यक्ति के लिये दिये गये हैं, ग्रन्थ द्वारा अध्ययन, मित्रता द्वारा तथा काशीनिवास व गुरुपरम्परा द्वारा व्यक्ति उस कोटि में जाने की योग्यता लेती है, यह समझकर ही आपने अभिनन्दन दिये हैं, आप आत्मा में राजी राजी हैं तब अभिनन्दन प्रसन्नताभरे भेज रहे हैं, विद्यालय में उपयुक्त होकर इष्टतम मोक्षस्थिति में भी पहुँचें, जनता भी इसी मार्ग से बढ़ें व विद्याप्राप्ति कर लें, इस फल में आपके अभिनन्दन उत्तम रीति से फलैक्य करते रहें, यह भी मेरे अभिनन्दन के साथ प्रार्थनीय है, सन्त की सन्तता सतता अभिनन्दनों से हो, सन्तता परब्रह्म तक पहुँचो।

प्राचीन तत्त्ववेत्ताओं के शास्त्रों के नाम दर्शनशास्त्र रक्खे गये हैं, इन तत्त्वज्ञानों से क्या दिखता है ? किसका दर्शन होता है ?। जवाब में—सभी तत्त्व पदार्थों का विशद मानस दर्शन विशद जड़चेतन दर्शन विशद आत्मपरमात्मदर्शन होते हैं। बाह्यचक्षु से आन्तर चक्षु से चित्-चैतन्य चक्षु से साक्षि चक्षु से तथा परब्रह्म चक्षु से भी योग्यता के अनुसम दर्शन होते हैं, अतः दर्शनशास्त्र नाम रक्खा गया है, सभी साक्षात् विषय ही है, अलौकिक मानस विषय, प्रातिभ विषय, धर्ममेघ विषय, सिद्धि विषय, समाधि विषय, ब्रह्मात्म चैतन्य विषय, नित्य विज्ञान विषय, सर्वप्रत्यक्षदर्शि विषय, सभी कुछ है, इन सब का जिसमें समावेश है वह दर्शदशास्त्र है, भौतिक जडदर्शन, उसमें तृण तक कन्द फलादिदर्शन, कण शाकादिदर्शन, उपकरण औषधियाँ रस कर आदि दर्शन, धातु धन मकान वाहनादि दर्शन, पक्षि पशु यान भूमियान गगन-यान जलयानादि दर्शन, ग्राम नगर राजधानी देशविदेशादिदर्शन, मानव प्रजा राजा नर नारी देवता महर्षि आदि के दर्शन, इनके व्यवहारदर्शन, स्वभावदर्शन, मिलनसारदर्शन, इन्द्रियदर्शन, आन्तरदर्शन, भोग सन्तति वंश दर्शन, चमत्कारी गुरु ईश्वर आदि दर्शन, वर्ण धर्म कर्म उत्सव महोत्सव दिन रात्रि जन्म मरण दर्शन, नवीन नवीन प्रदर्शन, तत्त्वों के दर्शन, दुःखदर्शन, तब साधनसाध्यादिदर्शन, केवल सुख आनन्ददर्शन, आत्मपरमात्मदर्शन, मोक्ष नित्यसुख आनन्ददर्शन, प्रलय महाप्रलय आदि के अत्रासदर्शन, अहं ममतानाश-दर्शन, दिव्य ब्रह्मता में शान्तिदर्शन, इत्यादि दर्शनों के सम्बन्ध शास्त्रों में हैं। इन दर्शनशास्त्रों द्वारा प्रकृष्ट विद्वद्गण जो जो अभिनन्दन दे रहे हैं सभी विषय के प्रत्येक अभिनन्दन दिव्य ब्रह्मता में शान्ति प्रदर्शन में फलीभूत हों, यह मेरा प्रार्थनीय है, अभिनन्दन मानव जीवन को शाश्वत जीवन में पहुँचानेवाले हैं।

नैयायिक सभी के लिये न्यायविद्योपार्जन की इच्छा विशेषतः रखते हैं, वेदान्ती वेदान्तज्ञानी बनाने की, सांख्ययोगी उनके शास्त्रज्ञानी बनाने की, मीमांसक यज्ञयागानुष्ठान कराने की, ब्रह्मज्ञानी स्वसमान स्थितिवाले बनाने की, कविलोक काव्यकुशलता कराने की, इच्छा धराते हैं, सभी लोक स्वविद्या कला प्रदान वृद्धि उत्कर्ष विजय की अभिलाषा मुख्य रखते हैं। आज पूजनीय आदरणीय स्पृहणीय अभि-वन्दनीय प्रशंसनीय अभिवर्धनीय आदि आदि अनेक विद्याओं के विद्वानों के अभिनन्दन कुंकुमवापी के लिये उसी के सन्त के लिये आ रहे हैं, उनकी आन्तरिक धारणाओं के लिये अंशतः फलीभूत वर्तमान भी विशेष करके फलीभूत हों, वैसी परमेश्वर से मेरी प्रार्थना है।

मानवसमाज ग्रहान्तगतिमान् सागरतलान्त प्रगतिमान् हुआ है, दूरदर्शन दूर श्रवण आदि में भी चैतन्यनिभ तत्त्वविकास में पहुँचा है, साथ साथ आत्मीय शान्ति स्थिति से वियुक्त होता जाता है, इस मानव समाज को मानवता के साथ रहने को ये अभिनन्दन फलीभूत हों, दर्शनशास्त्र जीवन सुखी रहने को बतलाते हुए पारलौकिक मोक्ष के लिये भी तैयारी करने के यत्न में रहते हैं, विद्वान् लोक इसी फल के लिये जगत् को अभिनन्दन दे के पारमार्थिक स्थिति प्राप्ति के साधनों का स्मरण कराते हैं, आपके

अभिनन्दन इन स्वरूपों में फलीभूत हों, सच्चा व्यवहार, शब्द, ज्ञान, भक्ति, मोक्ष, ये अभिनन्दनों के फल हैं, इसकी प्राप्ति के लिये भी प्रार्थना है, उक्त प्रकार के दर्शन करानेवाले ये अभिनन्दन आनन्द में पहुँचाने की कृपामूर्तियाँ हों।

निगम आगम तन्त्र पुराण आदिक में मायिक विहरण तृप्ति और अन्तिम शान्ति के लिये ग्रथन हैं, इनके अभ्यासी विद्वानों के अभिनन्दन भी उन्हीं साध्य शक्तियों से मिलित हो के ही प्रेरित किये जाते हैं, वे सभी अभिनन्दन लौकिक अलौकिक दोनों प्रकार के सुखों के लिये जनता को भी फलीभूत हों।

आप बालपने में अल्पज्ञानी थे, यौवन में चौजालविज्ञानी हुए, वार्धक्य में परलोक की तैयारी में वृत्तिवाले हुए हैं, जगत् के नये दर्शन बाकी नही है, आगे के नये दर्शन शाश्वती शान्ति में होने के साधनों को नहीं भूलने का सतत अनुसन्धान भी गोने जाते हैं, शास्त्र यह बतलाते हैं, अभिनन्दनों से शास्त्रीय दर्शन में लग्न रहना उपार्जनीय है, यह करते रहना, प्रिय आत्मा को प्रियतम परम आत्मा करना होना मोक्ष के लिये तैयार रहना आवश्यक उपार्जित कर लेना,—सभी को ऐसे अभिनन्दन मिलो।

परमाणुवाद में, मायावाद स्वभाववाद या अविद्या बाद में जड़वर्ग में तो असन्तोष ही रहता है, सन्तोष चेतन धर्म है, अन्तिम सन्तोष चेतन में ही ठहरेगा, चेतन द्वारा चेतन में नित्य सन्तोष मिलेगा, अचेतनाऽवस्थाओं का ऊपजाना या दिखलाना तो व्यापक चेतन का काम है, जो सभी के प्रति चेतना के साथ चेतनवत् करके काम लेते हैं, चेतन का जड़सा होना अनुचित ही है, अनुचितता का दूरी करण के लिये नित्य जड़तत्त्व माने गये, वे स्वयं तो चेतन के आधार पर सफल होते हैं, तब फिर व्यापक नियामक चेतन विशिष्ट ही चेतनीयैक्य स्वीकारना तार्किकवृत्ति को विराम देनेवाला है।

पृथिवी विशाल है, भारत, अरबस्तान, आफ्रिका यूरोप, अमेरिका, केनेडा, रशिया, चीन, जापान, ओस्ट्रेलिया, बर्मा, लंका, आर्टीक, इन्डलेन्ड ग्रोनलेन्ड आदि आदि हजारन अन्य अन्य टापू आदि आदि में जहाँ जहाँ मानव जाती हैं, उन्होंने अपनी आध्यात्मिक स्थिति के लिये जो अच्छे साधन माने हैं, उन सभी के लिये आप विद्वानों के ये अभिनन्दन पोषण करनेवाले हों, और जो जो उन्नति में निरोधक माने गए हों या निःश्रेयस न होने देनेवाले माने गए हों, उनका अनस्तित्व के लिये भी ये अभिनन्दन उपयुक्त आशीर्वादरूप हों, यह शुभेच्छा प्रकट करता हूँ, यहाँ के विद्यालयों में अभ्युदय निर्बन्धन अमायिक आत्मीय स्थिति प्रेयः के साथ निःश्रेयस देनेवाले अभिनन्दन आत्मीयविद्याओं के स्वरूपों में भी व्यक्त हों।

स्वसामर्थ्योपार्जित सत्कीर्तिवाले मानव मानवीयसंसार में श्रेष्ठतम हैं, सम्बन्धिओं की प्रतिष्ठा से प्रतिष्ठित मानव मध्यम है, जनता द्वारा जहाँ तहाँ से कीर्ति बटोरनेवाले कनिष्ठ गीने जाते हैं, स्वयं प्रकाण्ड विद्वानों के आशीर्वाद पात्र बनना ही एक स्वबल में गीना जाता है। क्योंकि परीक्षक योग्यता देख के बलपोषक होते हैं, मणिधर को स्वयं उजाला होता है, साधारण को अन्धेरा आवरता है, अन्धेरी स्थितिवाले को चाहे जितने प्रदीप देवें तो भी स्थिति तो अन्धेरी ही रहेगी, मणिधर के लिये द्युमणि भूमणि अन्तरीक्षमणि आन्तरमणि ऊजाले प्रेरने पर वह अनन्तगुणित उजालावाला होता है, विद्वानों में विद्वत् सम्प्रदायों में विद्वच्छात्रों में विद्वद्देशों में विद्वत्संसर्ग में, विद्वानों ने मुझे यथाकथंचित् पात्र समझकर प्रसन्नता से आशीर्वाद दिये हैं इनसे मेरा अन्धेरा उड़ गया, अमणिधर को मणिधरों में सामेल कर दिया, अब मेरी आत्मा में उसी प्रकार का उजाला भासने लगा है, मेरी स्थिति को श्रेष्ठतम बनाया है, प्रभु और प्रभुसमान-आप की कृपा से यह कुंकुमवापी नगरी सौराष्ट्र महागूजरात देश तथा देश की जनता में भी

मणिधरों के उजाले ऊपजने की मेरी प्रार्थना है, आपके आशीर्वाद फलीभूत हों, हमारा सम्मान यह एक गीनेगांठे प्रकाण्ड विद्वानों की भारमय-सम्पत्ति के समान हैं, आप के सम्मान सदा सूर्य-चन्द्र-समान प्रकाश देनेवाले होते रहें।

विद्यार्थी अवस्था के बाद भाग्यानुसार यत्नद्वारा अध्यापकता सत्ताधीशता आदिक पाते हैं, विद्यार्थी अवस्था आजीवन रहती चली आवे, और उत्तम अवस्थाएँ भी खीलती चमकती बखनाती हुई उत्तमोत्तमता में बसवाट करें, तो व्यक्ति जगत्पूज्य मान्य होता है, प्रामाणिकता उनमें अधिकतर रहती है, उपाध्याय विद्याधिकारी आचार्य वाईस चान्सलर कुलपति प्रधानाधिपति आदि आदि स्थानों में उच्च होद्दे पर पहूँचे हुए यदि बड़े सत्ताधीश समझ के विद्यार्थीओं की अवस्था को हटा दें तो विद्यार्थीओं की आराधना पर कौन ध्यान देयँगे, उनकी अवनति को दूर करने के सामर्थ्य कहाँ से आयेगा, अतः वर्तमान समय में जरूर बड़े बड़े बृहस्पति दिवस्पति भुवःपति वाचस्पति सत्तापति या विद्यापतियों के लिये ये आपको अभिनन्दन प्रार्थनीय इष्ट सद्गुणों में प्रसरते हुए विद्याभूमिओं को आगे बढ़ानेवाले अच्छे अच्छे छात्रों के लिये खूब खूब स्तम्भाधार हों, मन्द छात्रों को भी आपके पदों को अलंकृत करने के लिये बड़े जोरशोर के उत्साह बढ़ों व भारत भूमि वृहस्पतिओं से रिक्त न रहो यह मेरा प्रार्थनीय अभिनन्दन प्रत्यभिनन्दन है। अधिकोक्ति के लिये क्षमायाचना त्रूटियाँ के लिये शुद्ध दृष्टि-प्रार्धना ॥ शम् ॥ श्रीहरये नमः ॥

आपके आशीर्वाद पात्र सन्त

श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी-स्वामिनारायणः

वैष्णवविद्वत् सार्वभौम,-दार्शनिक पञ्चानन, षड्दर्शनाचार्य, नव्यन्यायाचार्य, सांख्ययोगवेदान्त-मीमांसातीर्थ, काव्यकुशलः ING. M. A. वाराणसी, क्विन्स कालिज विश्वविद्यालय,

वर्तसान समय श्रीस्वामिनारायणमन्दिरम् , भंडारके मेडे पर,

जूनागढ, सौराष्ट्र, महागूजरात ॥ भारत ॥

पं० श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी के विषय में—
संस्कृत प्रत्यभिनन्दनम्

मिथिलावास्तव्य—पं० रामनन्दन झा, व्याकरणाचार्य,

आयुर्वेद कालेज, जूनागढ़

मेर्वाख्यस्य पामीरशैलस्य परितः प्रथमम् आर्षमानवानां वसतिरभूत्, पृथिवीगोलकस्थहिमालयपर्वते सर्वोच्चतमम् अर्कशिखरं वर्तते, तदेव शिवगौरीशिखरं माउन्ट एवरेस्टशिखरं कैलाशात्मकं धाम विद्यते, उत्तरस्मिन् त्रिविष्टपं दक्षिणे नीपालयं भूतनाथालयं चेति वर्तते, तत्र तत्राऽऽर्षमानवाः प्रसृताः, शनैर्वर्धमाना हिमालयं परितो देशान् प्रति यथाऽनुकूलं वसतिरूपेण स्थिरीभूताः, अतिदूरखण्डगास्तु कालान्तरे भिन्नाऽऽचारा भिन्नभाषा भिन्नजातीयाश्च समुदायाऽनुरूपेण सम्पन्नाः, प्रथमाऽऽर्षप्रजासु ब्रह्मणाऽर्पितं वेदविज्ञानं प्रसृतं निगमाऽर्णवरात्रसंहितादिस्वरूपेषु भिन्नमहर्षिवंशेषु व्याप्तमिदानीं यावत् विशालाऽसंख्यशाखं देशसमाजपार्थक्यात् स्वतन्त्रविद्वत्प्रतिभाभिः सुप्रसृतं, सूत्रशास्त्रपुराणोपपुराणेतिहासनाट्यगायननृत्यशिल्पभौतिकविकासोत्तमयोगाभ्याससत्सम्प्रदायरसायनशक्तिदूरश्रवणदूरदर्शनाऽब्धितलनिरीक्षणभूगर्भाऽवलोकनस्वर्गादिविहरणशारीरभागपरिमार्जनविद्युद्विकासयान्त्रिकसाहाय्यमान्त्रिकदृश्यपरिवर्तनाऽऽध्यात्मिकदिव्याऽलौकिकसिद्धिसंकल्पसिद्धिप्रभृत्यगणितविकासा मूर्ततां प्राप्ताः सर्वत्र बौद्धिकभौतिकाऽऽत्मीयवादा व्याप्या विद्यन्ते, तत्र सर्वत्राऽऽर्षमूलकत्वमव्यभिचरति।

परब्रह्मेक्षितं साक्षिप्रेर्यम् आत्मनाऽभिलषितं प्रयत्नसाध्यं शरीरादिनिष्पाद्यं सर्वमपि विशिष्टं सुचेतनाऽन्वितं समुदितकारणसमूहितकार्यात्मकं पारमेश्वरीयं तज्जन्यं तत्स्थं तदन्तमिति सर्वं तन्मयमित्यालोक्याऽनुचिन्त्याऽवगत्य तमुपासीत परं श्रेयः प्राप्नुयाच्चेति सर्वाऽऽर्षसिद्धान्तः संस्कृतभाषाग्रन्थेषु वर्तते, लोकास्तथा समिच्छन्ति च, सुखांशानन्दांऽशलब्धिः सर्वप्राणीष्टा, सुखमात्मधर्मः, सात्त्विकाद्यंशोऽपि सुखम्, आनन्दस्त्वात्मीयः, आनन्दघनः परमात्मा, आत्मानन्दः श्रेष्ठः, ब्रह्मानन्दः श्रेष्ठतरः, परब्रह्मानन्दः श्रेष्ठतमः, तान् मुमुक्षुर्योगी मुक्तश्च भुञ्जते, अभिनन्दनाऽऽनन्दः सर्वत्र व्याप्तः, तत्तदात्मकः सर्वेष्टः विदुषां तु सुतराम्।

औषधादिसापेक्षमायुःशास्त्रं, कालसंभावितफलादेशसापेक्षं ज्योतिःशास्त्रं, गुणभंगादिपद्धतिना फलाकर्षकं गणितशास्त्रम्, अंगुलगुञ्जादिमानाऽधीनं दिगवगमकं गुरुत्वाऽवगमकं च मानशास्त्रं, यज्ञादिकाण्डाऽधीनाऽदृष्टस्वर्गादिगमकम् अनुष्ठानशास्त्रं, केवलात्मतृप्तिकारकं वेदान्तादिशास्त्रं, विविधाऽन्तरप्रसन्नताकारकं मनोरञ्जनकृत् नृत्यगीत्यलंकारादिशास्त्रं, निर्वाहसंपादकं कृष्याद्युद्योगशास्त्रं, रक्षाकारकशिक्षाप्रदं समरशास्त्रं, क्रीडारञ्जनतादिप्रदं कलाशास्त्रं, यथाकथञ्चिद्गम्यं सृष्टिशास्त्रं, कुण्डलीचक्रादिवेधकं योगशास्त्रं, भूगर्भज्ञापकं भूस्तरशास्त्रं, मेघाऽऽगमादिज्ञापकं वायुशास्त्रं, नियमसंरक्षकं राजशास्त्रं, भाग्याद्यभिव्यञ्जकं चिह्नरेखास्वाप्नशाकुनादिशास्त्रम्, मूल्यांकनगमकं हीरकरत्नादिशास्त्रं, विकाराऽवबोधकं धातुरसायनादिशास्त्रं, विजयादिसम्वेदकं व्यूहशास्त्रं, फलघटनासापेक्षं खगोलशास्त्रं, वायुगतितर्क्यं स्वरशास्त्रं, रूढव्यवहारबोधकं लोकशास्त्रं, सुखमयजीवनाऽऽवेदकं नीतिशास्त्रम्, यावत्सद्गुणसत्कार्यसौज-

न्योत्कर्षादिसम्वेदकम् अभिनन्दनशास्त्रमेतत्तु सर्वशास्त्रेभ्यो विचित्रकबन्धं सर्वोर्वरितभाग्यवतां कृते प्रकाशितं भवति ।

कुंकुमवाप्या भाग्यमुर्वरितमिदानीं वर्तते, यत्र महाविद्यालयादिप्रद्योतकं महाप्रकाण्डपण्डितसाधुजनसद्गुणादिप्रख्यापकं प्रेयःश्रेयस्करं सार्वभौमिकम् अभिनन्दनशास्त्रं प्रकाश्यते, सर्वत्र नयप्रवेशोऽपरिहार्य इव भव्यव्यक्तिविशेषेऽभिनन्दन-नयोऽप्यपरिहार्यः, विप्रतिपत्तिकविपत्तिभवने न्यायावतारः, उच्छृंखलितस्खलिताऽवनार्थको नयाऽवतारः, आकस्मिकाऽनियन्त्रिताऽवनतिनिरोधिमर्यादितरीत्यर्थको नीत्यवतारः, दीर्घकालपरिश्रमिताऽमिताऽऽयाससञ्चिताऽनुद्बोधकाऽऽवरणाऽऽवृतिकनिगूढगुणगणराश्युद्घाटनार्थकोऽभिनन्दनाऽवतारः, एतेऽवतारा निर्णयनिरभिनिवेशकौशल्याऽनुत्तमाऽऽनन्दफलमहर्द्धिमहान्यासाऽऽपूरकखनिवराः स्वर्गत्वप्रद्योतकाः प्रजायन्ते प्रजासु ।

तत्तदवतारसहोद्भवनधर्माणो गुणगिरिवराः सुगुणगर्भितभूमिभागेषु निसर्गोद्भवा विद्योतन्ते हि वीर्यबलशीलैश्वर्यतेजःप्रतापोपकारदानप्रश्रयाऽऽनन्दाद्याः स्वात्मप्रकाशाः स्वप्रकाशाः सर्वप्रकाशा अनन्तप्रकाशाः प्रजाप्रकाशकारिणः, एतत्सर्वं भवत्यनुयोगिप्रतियोगिविधाऽभिनन्दनयावत्पात्राणामिति ।

सत्यभिनन्दनपात्रे धीरतादक्षताभद्रताढ्यतासहिष्णुतासन्तुष्टतानैष्ठिकतामहोत्साहवत्तासमदृष्टितातत्त्ववादितासर्वतोभद्राऽभिलषिततायथोपपन्नमर्यादितास्थितप्रज्ञताविगतकल्मषतासमबुद्धिताजगदात्मभावितासमवृत्तिताहितकारितासमसेवितानिजात्मदर्शनवत्ताद्वन्द्वैकस्थितिमत्ताविमर्शज्ञप्तिमत्ताऽऽत्मकल्याणकामितामोक्षफलविद्यावत्तास्वर्गादिफलविद्यावत्ताजीवनफलविद्यावत्तास्वेष्टसम्पादनफलविद्यावत्ताद्या ज्ञानकर्मभक्त्याद्या वर्तन्ते ।

एते गुणाः सहोत्तरोत्थाना अनिवार्याः, अन्वीक्षणेन परीक्ष्यन्ते ह्येते गुणाः, अन्वीक्षणं परीक्षककृतं भवति, यद्विषयकमन्वीक्षणं सुप्रशस्तं ज्ञायते तदभिनन्दितं भवति, तस्मादभिनन्दनानि ह्यान्वीक्षिकीविद्यात्मकानि भवन्ति, सर्वपदार्थतत्त्वानां यथार्थनिरूपणमान्वीक्षिक्या भवति ।

आ-परब्रह्माऽऽपरमाण्वन्ततत्त्वानां बाह्यमान्तरं लौकिकम्-अलौकिकम् आर्थिकं पारमार्थिकं साधनीयं फलीयं तिरोभूतमाविर्भूतं दृश्यमदृश्यं च सर्वमपि वाच्यमवाच्यं ज्ञेयमज्ञेयं भावमभावं वाऽऽन्वीक्षिक्या परीक्ष्याऽभिनन्दितं भवति, अत आन्वीक्षिकी तर्कविद्या न्यायविद्या निर्दोषविद्या कर्मकाण्डविद्या जीविकाविद्या नियमनमर्यादादिविद्या शासनविद्याऽऽद्याः सर्वा अपि आन्वीक्षिकीगर्भगाः फलिकुर्वद्रूपोत्तराऽवस्थात्मिक्योऽभिनन्दनमय्यः प्रकाशन्ते प्रेरकेषु प्रेर्येष्वपि च ।

महर्षीणां सतां भगवदवताराणामाचार्याणां सद्गुरूणां च यत्र क्वाऽपि कृपाकणाऽवसेकस्तत्राऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्ध्यर्थफलक एव सोऽभिप्रेतो भवति, तदर्थं तेषामाविर्भावात्, एवं चाऽन्ततो व्याप्त्याऽऽध्यात्मविद्याऽऽत्मविद्या ब्रह्मविद्या साक्षिविद्या परब्रह्मविद्या पराविद्या मोक्षविद्येति परमस्थानीया परमपुरुषप्रापिका विद्याऽभिनन्दनेषु सर्वथाऽविनासम्बद्धा विलसति विलास्यात्मनां मोक्षाऽऽप्तिफलवत्त्वसम्पादिकेति विदुषामत्र प्रयुक्तान्यभिनन्दनानि तथाविधसर्वविद्याफलदानि भवन्तु ।

सर्वविद्याप्रतिष्ठाभूतायामान्वीक्षिक्यां सदाचारधर्मदर्शनं भागवतधर्मदर्शनं नीतिनयन्यायतर्कदर्शनं देशविदेशीयमानवजनतादर्शनम् उभयफलदर्शनं कर्मानुष्ठानदर्शनं वृत्तिव्यवहारदर्शनं तत्त्वज्ञानदर्शनं चाऽपवर्गदर्शनं चेति सर्वाणि दर्शनानि तत्तच्छास्त्राणि स्वाभिप्रेतेषु समन्वितानि सम्पद्यन्तेऽतोऽभिनन्दनानि तथाविधसमन्वयफलकानि भवन्तु, सर्वात्माऽन्तरात्मा परमात्मा श्रीर्हरिर्यया लभ्यतेऽभिनन्दनानि तस्यां विद्यायां सार्थकानि भवन्तु, संशयविपर्ययविकल्पकुतर्काऽऽह्यार्याद्यनपविद्धे विज्ञाने प्रमात्मके मानवाऽधिकारित्वप्रयोजकानि भवन्तु ।

कोऽयमात्मा ?, क्व गन्ता च ?, किमिदं बाह्यम् ?, सहयोगि वा न सहयोगि ?, अत्राऽवस्थानं ? परत्राऽवस्थानं ? विलयो वा ?, अदृश्यं सत्यं ? वेतरत् सत्यम् ?, नैसर्गिकं वहनम् ? आकृष्यमाणमन्येन वा तत् ?, श्रुतिफलं साक्षाद्भावि वा ? वाङ्मयमात्रम् ? जडमपि प्रेर्यते जडेन, चेतनेन, गर्भगतसमस्तव्यवस्थापकेन वा ?, स चाऽऽत्मतयाऽऽराधनीयो गताऽनुगतिको वा ?, नित्यप्रत्यक्षदर्शनुगतिको वा ?, भावि चापि मदिष्टं साधनलभ्यं वा, स्वयं तथाविधत्वादेवाऽऽवेद्यमात्रम् ?, उपासना सफला ? वा विश्रान्तिमात्रार्था ?, पवर्गो नित्यो वाऽपवर्गो नित्यः ?, नित्यविज्ञसंश्रयो वा ?, स्वबलाऽवधेयः ?,—इति तर्काणां संशयानां च विरामो ब्रह्मविद्यायां प्रकाशमानायां सत्यां सर्वथैव भवति, अथापि विद्यास्वनिविष्टानामात्मविश्वासोऽभिनन्दनविद्यया भवति, निरुत्साहस्य प्रोत्साहनकृतमर्जुनस्येव बलं सोत्साहं गुरुजनाभिबोधसहकृतं त्वनिवर्त्यं सम्पद्यते, अभिनन्दनैरानन्द्यतेप्रोत्साह्येतेऽनुष्ठेयेऽभिनन्दनपात्रम्, लोकसंस्थानं गुरुगौरवेणाऽक्षुण्णं प्रवर्तते, गौरवाणामपरस्वरूपाणि भवन्त्यभिनन्दनानि, देशसमाजसेवासु महत्त्वाऽऽकांक्षादिद्वारा प्रवर्तयन्ति साऽभिलाषं कर्मशीलं मानवम्, कर्मकुशलं चाऽऽन्तराऽऽनन्दितं भावयन्ति, देशसेवासमृद्धिधर्मवतां स्वसजातीयवृन्दवन्दितानां विश्रमुज्ञसमुत्साहितानां सुसाधनवतां विपरीतदुरिताऽनाकांक्षिणां जनतोत्कर्षध्येयपरायणानाम् अतर्किताऽऽपदपराभूतानां स्वार्थवृत्त्यमिश्रितमहाशयानां जीवनमभिनन्दनात्मकाऽऽन्तरीक्षिक्या विद्यया ऐहिकाऽऽमुष्मिकाऽऽनन्दसंभृतं सुमधुरं जीवनं सदामिष्टोद्गरणम् अनपूर्णतृप्तिकम् अनाविलसुखशालि चरित्रचारुत्वं स्वर्गर्द्धिसंभृतत्वं निर्बन्धनप्रहर्षणम् अनासक्तत्वं मुग्धताराहित्यं भगवत्स्वरूपाऽनुरूपित्वहृष्टत्वं व्युदस्तशोकादिकत्वं शुद्धसत्त्वोपाश्रयित्वं परमेश्वरविश्वासवत्त्वं भगवत्तोषतुष्टत्वं व्यष्टिसमष्टयैकात्मदृक्त्वं ब्रह्मस्वाराज्यप्रतिष्ठापनं तत्त्वसम्पत्प्रामाणिकत्वं चेति सम्पाद्यन्ते, देशान्तरेभ्यः समायाता अभिनन्दनविद्या भारताऽवनमिव तत्तत्खण्डाऽवनं प्रजाऽवनं विद्याऽवनं विद्यालयाऽवनम् अध्यापकाऽवनम् अध्ययनाऽवनम् अध्येत्रवनं च चिरंजीवीव प्रकरोतु ।

पितृपुण्यभूम्यात्मकं राष्ट्रं स्वीयत्वेन भावितं सत् स्वं पितृपुण्यभूमिजन्मानमपि राष्ट्रीयत्वमुपपादयतीति तत्तदर्थाऽन्वयशक्तिशालिभारतमपि पितृभूमिः पुण्यभूमिश्चात्मीयभूमिस्तत्र तत्र विभागेषु खण्डेषु प्रोद्भूता गुणगरिमविद्वाँसोऽपि राष्ट्रत्वोपपादितराष्ट्रीयत्वं निवहन्ते विद्यासम्बन्धात् विद्यालयसम्बन्धाद्गुरुपरम्परासम्बन्धात् समानशास्त्रीयत्वसम्बन्धात् महर्षिपरम्परारक्षकत्वसम्बन्धात् अन्ततो भारतीयत्वाऽभिमतिगोचरत्वाच्च, वैदिकाऽऽचारसंसृष्टपावनाऽवतारादिसमुपासनभक्त्यादिपावनधर्मभूमिकावत्त्वं पुण्यभूत्वं चापि भारते व्यापकं वर्तते तन्नान्तरीयकपूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरमध्यादिभूविभागानां पुण्यभूमित्वं व्याप्यं सुतरां निजीयत्वमावेदयतीति भारतीयविद्वद्धुरन्धराणां विविधान्यभिनन्दनानि स्वराष्ट्रभूमेः स्वजनस्य विदुषोऽपि च विषयाणि स्वस्वीयोत्कर्षाऽऽवहानीति भवन्तु निजाभिवन्दनवत् आनन्दप्रदानि श्रेयःप्रदानि च ।

स्वराष्ट्रीयजनताऽभ्युदयार्थं महाविद्यालयादिस्थापनं भवति, तत्र राष्ट्रोयाऽभ्युदयार्थं ततो निःश्रेयसार्थं च जनाः शिक्षणीयाः, शिक्षिताश्च सुव्यवस्थापका देशोन्नत्यात्मोन्नत्यादिसम्पादका भवन्ति कार्याऽकार्यविचक्षणा जायन्ते, कुशलाभिधोभिः स्वर्गमारचयन्ति भूमिम्, देवानाविष्कुर्वन्ति मानवान्, विभूतिमाविष्कुर्वन्ति स्मृद्धिम्, देवताः प्राविर्भावयन्ति प्रमदाः, महर्षीन् विपरिणमयन्ति मानवान्, सरस्वतीः सुरूपयन्ति कन्यकाः, सनकादीन् प्रभावयन्ति कुमारान्, कामधेनूरुत्पादयन्ति गाः, सर्वं दिव्यमिव संस्कारयन्ति शिक्षिताः प्रजाः, अभिनन्दनानि तु शिक्षितानपि शाणोल्लीढानासाद्याऽऽविर्भावयन्ति भव्यवाक्पतिसुरगुरुरूपान्, ज्ञानिजन्मानोऽभिनन्दनद्वारा राष्ट्रोत्थापनस्नातका भवन्ति, विद्यालयेषु पुण्यभूप्रजा ज्ञानविज्ञानसम्पन्नाः प्रजायन्ते इति तादृशविद्यालयानां स्थापनं कुंकुमवाप्यां भवतीति धर्ममूलं सुदृढं क्रियते,

पावनाऽन्तःकरणा आत्मवृत्तयो दैवसम्पत्समृद्धा ब्रह्माऽनलहवनाऽनुसन्धाना विद्वांसो विद्यापीयूषपाना राष्ट्रराष्ट्रीयविशिष्टव्यक्तीश्वरांश्च प्रेम्णाऽभिनन्दन्ति, ते, विद्वाँसः सत्पुरुषा अभिनन्दनैः स्वराष्ट्रेष्वेव परार्थं साधयन्ति निखिलकल्याणमावहन्ति विशिष्टपात्रं लक्ष्यं विधाय, तत्पात्रं वात्सल्यपात्रं कृत्वा शिक्षापयःप्रस्रवणान् पाययन्ति, पातव्यं च पेयं सुरसं शार्करं शारदं सलिलं सुशिक्षात्मकं स्वराष्ट्रीय-शिक्षकात् स्वराष्ट्रीयनिबन्धात् स्वराष्ट्रीयोपदेशात् स्वराष्ट्रीयसदाचारादिभ्यश्चेति, विदुषामभिनन्दनानि प्रोक्ताऽर्थशिक्षाप्रयोजकानि निष्पद्यन्तामिति । धीरगभीरदीर्घदर्शिव्यक्तित्वमभिनन्दनानि शिक्षालयरूपाणि भूत्वोद्भावयन्तु भारतीयचिन्तामणिनिभान् पौरुषेयधौरेयान् धन्यतापात्रप्रकाण्डान् ।

सर्वाऽपि शास्त्रविद्या राजविद्यया सह जनतासु यदि विनियुक्ता स्यात् तर्ह्येव जनतानामपि महानभ्युदयो भवेद्देशोऽपि विजयप्राप्तो भवेत्, मानवा अपि सुप्रसन्नाः प्रफुल्लमानसा भवेयुः, राज्यानुकूला महर्धयोऽपि विकसिताः, स्युः, एतत्सर्वं मिथोऽभ्युदयाऽभिलाषिणां देशोन्नतिविमर्शिनां स्वीयसौख्याभिदृग्वतांस्वपरसमानवृत्तिकानां स्वेष्टतया भवेदेव, आत्मवत् सर्वभूतेषु पश्यतामेवंविधाऽभिनन्दनानि सर्वथा सफलानि स्युरेव, समाजस्याऽभ्युदयो देशकालाऽनुसारेण चिन्तनीयः, विद्यालयोऽपि तथाऽनुकूलो विधापनीयः, अध्ययनमपि यथामेधं यथाऽऽयुष्कं यथोद्यमसम्पादकं यथाऽऽवश्यकं च कल्पयितव्यम्, तत्राऽभ्याससंस्कृता मानवा निजेश्वरीयज्ञानाऽऽनन्दक्रियाप्रभाववन्तो भवन्तः सन्तः स्वयं शक्ता अभिनन्दनपात्राणि च भवन्तो राष्ट्राऽऽयत्यभिनन्दनप्रवाहिणोऽपि भवेयुः, तथा विधाऽभिनन्दनफलानि सन्तु, सन्तु च विद्यालयेषु वेदोपनिषद्दर्शनेतिहासपुराणगणितभूगोलखगोलरसायनाऽऽध्यात्मकविज्ञानसंगीतव्याकरणयोगाऽऽयुष्यौषध्यणुभूस्तरधातुजलरत्नसमरमखग्रहगृहाऽनुविधानाऽनुष्ठानरीतिशिक्षणादिसार्वजनीनविद्याध्ययनानि यन्त्रतन्त्रमन्त्रदेहाऽऽन्त्रादिसाक्षात्प्रयोगाऽध्ययनानि चाऽपि सर्वविधाऽभिनन्दनफलानि ।

अथ शब्दार्थवत् चेतनजडस्थितिर्भगवज्जगत्स्थितिरिति शब्दग्रहणेऽर्थग्रहणवत् चेतनग्रहणे चेतनीयग्रहणवत् भगवद्ग्रहणे सर्वग्रहणं सर्वात्मकतया भगवद्ग्रहणमिति विद्वदभिनन्दनानि व्यक्तिगुणचमत्कारविधेयफलेतिवृत्तादिविषयाण्यपि चाऽन्तर्निविष्टसर्वद्रष्टृभगवद्विषयाणि विशिष्टविषयाणि भगवदर्पणात्मकानि भवन्ति भगवदर्पकाण्यपि भवन्ति भगवन्मयत्वाऽऽपादकान्यपि भवन्ति प्रकृष्टाऽभ्युदयनिःश्रेयसोभयफलानि जायन्ते, अभिनन्दनान्यभिनन्दनीयानलंकुर्वन्ति, भगवान् सर्वत्राऽवस्थितः सर्वाऽन्वितो व्यक्त्यन्वितः प्रशस्तश्चाऽभिनन्दनान्यपि समलंकरोति, अभिनन्दनं दोषाऽपनयनगुणाऽऽनयनव्यक्तिपरिचायनगौरवादीनि प्रकटीकरोति ।

अभिनन्दनानि स्पर्शमणिवत् जनतानां सौवर्णीं दशामुद्भावयन्ति, श्रेष्ठत्वं पूज्यत्वं द्योतयन्ति सौभाग्यं वर्धयन्ति, रमणीयमपि जलभृतं घटं कट्यां करेणाऽवधृतं रमणी रमणीयतमतामापादयतीतिवत् सुयोग्यमपि विद्वाँसं देशं नगरं जनजातं चाऽभिनन्दनानि सुयोग्यतममापादयन्ति, भाव्यार्थान् परिपुष्णन्ति चापि । 'नन्दनस्तु तनये हर्षकारिणी'तिहैमः । हर्षकारिणि व्यक्तिविशेषे नन्दनः, नन्दनपात्रे नन्दनप्रयोगः, व्यक्तिविशेषेऽपि हर्षोद्भावनार्थम् अभिनन्दनप्रयोगः, प्रहर्षा विदुषां विदुषोऽपि प्रप्रहर्षं जनयन्ति, नन्दनं प्रतिनन्दनं चाऽभितः सर्वदिग्देशवासिभ्यः, एतदभिनन्दनं सर्वगोचरं सर्वथा गोचरं सर्वोत्कर्षावहम्, कुंकुमवाप्यभिनन्दनानि तथाविधानि भवन्तु । अभिनन्दनजन्या आस्वादाः सर्वाऽनुभवगोचरा अलौकिका इव रसास्वादा मधुरास्वादा भवन्ति, व्यक्तितृप्तिरिव सामाजिकतृप्तिरपि चिरायतनं फलम् अभिनन्दनानाम्, मिष्टतमत्वं च तत्र सर्वान् प्रति, ज्वलनं त्वग्निस्वभावान् प्रति, शैत्यं तु जलस्वभावात् प्रति, रूक्षत्वं तु वायुस्वभावान् प्रति, कठोरत्वं तु पाषाणस्वभावान् प्रति, आनन्दप्रदत्वं तु चात्मीयस्वभावान्प्रति,

अतोऽवश्यमानन्ददायित्वमस्तु, अनभिनन्दनस्वभावानामपि स्वाभिनन्दनं त्वतिप्रियम् , भवत्वेवं सर्वात्मनामर्थतः प्रियतमं चिरन्तनेऽपि दीर्घेऽपि कालेऽवसरे समयेऽपि च विद्यालयेऽत्राऽधीत्याऽपि ।

अभिनन्दनमूल्यवतां त्वानन्दसन्तोषविरतिशान्तिसुखाऽवगमः सर्वथा भवति, आनन्दधामा भगवान् अभिनन्दनवाच्यो भगवान् , प्रेम्णाऽऽनन्दः, आनन्दवर्षी प्रेमा, सेवा प्रेममयी, सेवनं भगवत्प्रसन्नताकृत् , प्रसन्नताऽभ्युदयनिःश्रेयसकारिणी, तत्र सर्वत्र प्रवर्तन्तेऽभिनन्दनानि, आनन्दसरांसि, अभिनन्दनमाधुर्यस्रोतांसि सदाऽऽनन्दाभिसरोभ्यः प्रस्रवन्ति, प्रीतिस्नानैरवगाहनपरा ब्रह्मनैर्मल्यावहा भवन्ति ।

साध्वभिनन्दनानि साधुब्रह्मानन्दप्रदानि भवन्ति, रतिस्वादा आस्वाद्यन्ते रसा आनन्दघनाश्च भुज्यन्ते, ब्रह्मानन्दा उपलभ्यन्तेऽभिनन्दनैश्च प्रदीयन्ते । अभिनन्दनेषु चाऽऽत्मीयभावार्पणं व्यज्यते तेनाऽऽत्मार्पणमपि चोपस्थाप्यते, सर्वार्पणे स्वारस्यं परिवर्तते, स्वात्मकत्वेन स्वस्य सर्वात्मकविशिष्टत्वेन स्वाऽभिनन्दनमन्ततः सम्पद्यते, इमान्यभिनन्दनानि सर्वेषामात्माभिनन्दनान्यपि भवन्तु । अभिनन्दनमेकं शुद्धिकृन्मार्जनसाधनमपि भवति, अन्तःकरणानां विद्याऽध्ययनोपलब्धविशुद्धिद्वाराऽनुप्रबुद्धाऽऽनन्दोद्बोधनकृत्त्वं भवति, तदानीं शान्तिसागर उल्लसति, स्वार्थश्चेत् स विघ्नहृतो गरसागर आपद्येत, परार्थश्चेत् प्रमेश्वरप्रसन्नतार्थश्चेत् आराधनासागरः स आनन्दस्मृद्धिसागरः संपद्येत, अभिनन्दनानि आनन्दसागरमर्पयन्तु, भगवच्छरणमप्यर्पयन्तु, सच्चिदानन्दस्वरूपस्वामिसाक्षात्कारमप्यर्पयन्तु ।

अथ सृष्टौ नवीनरचनासु य उत्तीर्णः सोऽभिनन्दनीयो भवति प्राचीनमपि निगूढं यत्नैराविष्क्रियते नन्नवीनमित्युपचर्यते, सर्वं सत् सूक्ष्मावस्थं कारणावस्थं ब्रह्मावस्थं च, तदेव गूढं, ततस्तत्प्रक्रियया तदेव ससहायं मध्यावस्थं मध्यस्थूलं ततो वा महास्थूलम् अन्तिमं स्थूलं ततः पुनश्चिरं वा शीघ्रं पुनरस्थूलावस्थम्, जगत्प्रवाहस्य तथात्वात् तत्र रम्यं योग्यम् औपयोगिकं चारुतमं लोकोपकारकृत् उद्यमार्जनोपार्जनधनविद्याविज्ञानकलाऽऽविष्कारादि सर्वमौपयोगिकमभिनन्दनार्हम् । भवन्ति च प्राकारोद्यानमहामार्गसरोवरनगरनिर्माणयन्त्रनिर्माणजलभूव्योमयानविद्युद्यानवायुवार्तबिम्बप्रतिबिम्बदर्शनादीनि सत्तासिद्धिव्रतचमत्कारैश्वर्यादीनि रसायनादीनि चाऽभिनन्दनपात्राणि भवन्त्येव, भवन्तु तानि लोकाऽभ्युदयकल्याणाद्यर्थानि, व्यावहारिकतत्त्वप्रतिपत्तिप्रदानि सैद्धान्तिकतत्त्वप्रतिपत्तिप्रदानि च भवन्तु, मनोविक्षेपनाशकानि वासनाऽऽसक्तिनिवर्तकानि त्रिविधतापाऽपसारकाणि च प्रभवन्तु सम्यग्दर्शनप्रदानि यज्ज्ञानतपोदानश्रद्धाप्रदानि च संभवन्तु, संगविस्मयाऽस्थानप्रदानि निरतिशयाऽऽनन्दस्वरूपपरमार्थपदप्रदानि च भवन्तु, सर्वाऽनिष्टनिवर्तकानि समाधिसार्वभौमताऽऽसञ्जकानि च भवन्तु, सत्संगप्रदानि भगवत्साधुजनसंगतिप्रदानि सत्पुरुषतदात्मकभावाऽऽवेदकानि सदर्थप्रकाशकराणि च भवन्तु, अभिनन्दनानि ज्ञानविज्ञानसम्पन्नान् सदाचार्याप्तान् हुतसंघातभावान् शमदमादिसम्पद्वतः सुकृपावतः सत्पुरुषान् आविर्भावयन्त्वपि ।

अखण्डज्ञानात्मकं सर्वव्याप्तचेतनाशक्तिसमुद्भावकं रूपातीतगुणातीतनिरालम्बनस्वभावं ज्ञानेच्छाक्रियाकुण्डलिनीसमुपासितं सामरस्यपिण्डात्मकब्रह्माण्डात्मकनिरञ्जनात्मकोपासनाप्राप्यम् आनन्दाऽवस्थात्मकम् परमब्रह्मशिवात्मकं तत्त्वं सर्वेषामभिनन्दनानां प्रसादप्राप्तिरूपं भवतु, तत् क्लेशाऽतीतत्वे सति शान्त्युपलब्धिकृत् भवतु, बुद्धित्वप्रदातृ चाऽस्तु, वज्रयोगमार्गाऽवबोधकमस्तु, तन्त्रयानोपदेशपोषकं भवतु, सर्वतथागतज्ञानकृद्भवतु, महासुखात्मकज्ञानप्रदं योगप्रदं च भवतु, तत्त्वाऽधिगमकं चाऽस्तु, वज्राऽभिषेकं वितरतु, सहजानन्दम् आवर्षयतु, निर्वाणम् आकर्षयतु, ब्रह्मविहारलभ्ययोगोद्भावकमस्तु, अक्षरस्वरूपात्मकविशुद्धयोगदं भवतु, मुक्त्युद्भावकमस्तु, द्रव्यदेवतात्यागात्मकत्वमुपस्थापयतु, फलं स्वर्गादि च प्रापयतु, परब्रह्ममाहात्म्यमुद्भावयतु, विपत्तिवारणं समाचरतु, आत्मसंप्रसादनमातनोतु, आत्मवल्लभतां प्रोद्भावयतु, भगवत्स्नेहाधिष्ठानतां वर्धयतु, स्नेहरसलहरीरुत्पादयतु, परस्परप्रियतां वर्धयतु, एकीभावभावत्वमापादयतु,

कृतकृत्यतां सफलयतु, परमात्मस्वरूपाऽऽनन्दनन्दितां वितरतु, आनन्दानुभूतिं विकासयतु, आत्मगताऽऽनन्दांशाऽऽस्वादनमावेदयतु, भगवदीयपुष्कलानन्दरसास्वादमुद्भावयतु, शान्तिप्रीतिप्रियतावत्सलतामधुरताऽद्भुतताप्रसन्नता अर्जयतु, भगवत्प्रत्याययनमुत्तेजयतु, परमानन्दस्थायित्वं प्रकरोतु, भगवत्साक्षात्करणाऽऽह्लादं प्रसाधयतु, भक्तिरसं रसानन्दम् आनन्दघनं घनश्यामं च प्रददातु, एतत्सर्वमभिनन्द्ये भवतु ।

वैवर्तिकं ब्रह्म वा पारिणामिकं ब्रह्म तदुभयात्मकाऽभिनन्दनद्वाराऽनुभयात्मकाऽभिनन्दनद्वाराऽपि च प्राप्तिगतिज्ञप्तिविषयं भवतु, अधिष्ठानोपादानकजगन्मयनित्यचैतन्यं तद्विषयं चाऽभिनन्दनज्ञाप्यं भवतु, दृग्दृश्यात्मकविज्ञानयोग्यत्वं च भवतु, बिम्बप्रतिबिम्बोपहितोपधानतादात्म्याऽऽभासविषयाश्रयसाक्षीश्वरबोधोऽपि भवतु, विश्वतैजसप्राज्ञसाक्षिब्रह्मपरब्रह्माऽवबोधश्च भवतु, विराट्सूत्रात्माऽव्याकृतशुद्धात्मस्वरूपप्रमाप्रकाशो भवतु, ब्रह्मसाक्षात्कारोऽपुनरावृत्तिलक्षणः संभवतु, भूमिकाधर्मोर्वरितत्वं समुल्लसतु, असृष्टयभिनन्दनमपि प्रभवतु, छायाग्रहसत्यग्राहित्वं चाऽस्तु ।

अथाऽपि—अप्रमास्वरूपं प्रमात्मकं जायताम् , बाह्याऽऽकारानुकारितवृत्तिविषयग्राह्यप्रमाफलम् उपपद्यताम् , सर्वं ज्ञानं स्वविषयं प्रकाश्यताम् , यथावस्तुस्वरूपग्राहिप्रकाशः प्रजायताम् , कर्तृकर्मभावप्रयोगवाच्यार्थो विशिष्टोऽर्थः साक्षादिव जायताम् , प्रमात्वविमर्शविशेष्यविषयत्वं साक्षात् भास्यताम् , अनवद्यपारकारुण्यं सर्वानिष्टहरं सम्पद्यताम् , स्वरूपप्रमा प्ररूप्यताम् , चित्तरोधः समभ्यस्यताम् , आत्मरूपं परमसुखं समवद्योत्यताम् , अभिनन्दनवार्धिनाऽऽत्मज्ञानसम्पत्तिः प्रवर्ध्यताम् , भगवदनुग्रहसम्पादितदिव्यदृष्टिः प्रकाश्यताम् , अतीन्द्रियाऽर्थाऽवगमोजन्यताम् , सर्वं सर्वात्मकमितिविशिष्टधीः प्रवर्त्यताम् , सुषुम्णासृतिपरागतिर्निर्वर्त्यताम् , आविर्भूतगुणाऽष्टकब्रह्मप्रकाराऽभिज्ञत्वं विकास्यताम् , सत्त्वाऽब्ध्यानन्दाऽखण्डमिष्टरसः प्रलभ्यताम्, भगवत्संकल्पमयनित्यमुक्तत्वाऽऽविर्भावः सम्पद्यताम् , निमित्तोपादानैककारणव्यापकतत्त्वप्रकाशः प्रबुध्यताम् , उभयविभूतिगामित्वबलाऽऽधानमुद्भाव्यताम् , उपादानगोचराऽपरोक्षज्ञानचिकीर्षाकृत्यादिमान् प्रभास्यताम् , यत्कृपाजन्यसूक्ष्मसाक्षाधीसमालोचनविषयत्वं प्रवर्त्यताम् , युगलब्रह्मोपासना प्रवर्ध्यताम् , नित्यशुद्धबुद्धमुक्तस्वभावान्तर्यामितत्त्वमवगम्यताम् , कलासौन्दर्यदर्शनं प्रजन्यताम् , स्वतन्त्रोपयोगिकलोपकलाज्ञत्वप्रयोज्यमुखानि प्रवर्ध्यन्ताम् , काव्यसंगीतवास्त्वादिकलाप्रेरकपरब्रह्माऽऽस्वादोत्थापकयत्नप्रेरकशक्तयः प्रपुष्यन्ताम् ॥

लोकविलक्षणं व्यक्तिविशेषत्वमभिनन्दनान्यावेदयन्ति, तानि रसनादवास्तुब्रह्मकलाकाण्डान् प्रकाशयन्तु, लक्षणाऽलंकारगुणाऽवगुणप्रणालीध्वनिरसात्मकाऽलंकारान् उपस्थापयन्तु, हार्दिकरसप्रतीतिं पूर्णसंविन्माधुर्यं परमानन्दरसं प्रददतु, निरवच्छिन्नपरमानन्दाऽऽऽस्वादमभिव्यञ्जयन्तु, गुरुकृपाबोधस्पन्दोर्मि–प्रमेयगतशुद्धि–निर्विकल्पाऽनुभव–तुरीयाऽऽनन्दाऽशन–भगवदुपासनपूजनतादात्म्यरसाऽनुभावनपरसंविदुन्मेषलाभस्वरूपाऽनुसन्धानसातत्य–परस्थात्मप्रकाशमहामृतकलान्वितता–ऽकालकलिता–परमब्रह्मदशा–परमार्थता–साक्षात्स्वबोद्धृत्व–परमपद–स्वात्मपरमात्मप्रतिष्ठान्ता अवस्था आविर्भावयन्तु, योगानुशासनरसालफलमर्पयन्तु, तारकज्ञप्तिलभ्यसार्वज्ञ्यमापादयन्तु, ईप्सिताऽर्थप्रतिबन्धकनिराकरणमासादयन्तु, स्वेप्सितार्थाऽऽप्ति कल्पयन्तु, प्रवासाद्यापतितभयानि निवारयन्तु, मेध्याऽर्पितसर्वस्वोत्सर्गात्मकमहादानधियमाविर्भावयन्तु, नारायणपुरुषदृष्टप्रभावितस्तवनपात्रताधियमुद्भावयन्तु, भगवन्नित्यज्ञानात्मकतपांसि प्रकाशयन्तु, असत्सत्प्रज्ञानयज्ञादिलक्ष्याणि प्रभासयन्तु, भागवतवेदाद्यावर्तनफलीभूतनित्यज्ञप्तिमाविर्भावयन्तु, सविधिकवेदपारायणतपःपूततां भावयन्तु, समस्तदुरितक्षयपूर्वकपंक्तिपावनत्वमापादयन्तु, भारतीयताऽवनफलकवेदाऽऽराधनं सततं भावयन्तु, पौरुषेयाऽपौरुषेयश्रुत्याद्यर्थान् अवगमयन्तु, सर्जनकारणज्ञानप्रदशब्दार्थाऽध्ययनानि वर्तयन्तु, अनुवादकभूताऽर्थवादकगुणवादकशब्दमीमांसनं संकलयन्तु, वेदनिगमछन्दःश्रुत्याम्ना-

यत्रव्यादिबोध्यशब्दराशिप्रवेशयोग्यधियमुद्भावयन्तु, मन्त्रब्राह्मणकल्पसूत्रमीमांसाऽपेक्षवेदार्थान् प्रभासयन्तु, अपरोक्षसाक्षात्कारात्मकब्रह्मज्ञानमर्पयन्तु चेति ।

भगवदभिन्नस्वरूपाः सन्तो महात्मानो योगिवर्या आचार्याः कथावक्तार उपदेष्टारोऽध्यापका राजमान्याः प्रजामान्या गुणगरिमाणः पारिषदा अभिनन्दनप्रदातारः स्वीयत्वमन्तारो गुरुवराः सुहृदोऽनुहृदया नरनारीस्वरूपा विज्ञा जन्मभूतद्बालकरत्नहितकरप्रयत्नपरायणा उपस्थिताः सार्वभौमाः प्रेमप्रसन्नतावर्षिणो विद्वाँसोऽत्रैकवाक्यतामापन्ना आशीर्वादाऽभ्यवहारिणस्त्यागिगृहिण आबालवृद्धाः सत्कृतसज्जनाः ? भगवद्बुद्धचा भवतोऽभिवादये ।

श्रीमतां भवतां दर्शनेनाऽनुग्रहेण चाऽनुत्तरामिवोत्तमतमां तृप्तिमनुभवामि, भारतवर्षमिदं धर्मजीवनं ज्ञानविज्ञानधनं वैराग्यत्यागतपोव्रताऽध्वरादिसाध्वाचारं सेवाशरणभक्त्यादिपारमार्थिकनैष्कर्म्यव्याप्तं सदा विजयते, भारतीयस्मृद्धिसमनुष्ठातारो वयं धर्मादिस्मृद्धीनां पालयितारो वर्तामहे वत्स्यामहे च, एतत्तु भारतीयं नैसर्गिकमभिहितम्, नैसर्गिक एव ब्रह्मा सर्वेषां पितामहः, तस्म भगवताऽर्पिता वेदाः, ते च ब्रह्मसन्ततिषु प्रवृत्ताः, सर्वप्रजासु सामान्या अपि भारतीयप्रजासु सामान्यविशेषात्मकतां भजमानाः स्वयं जीवन्ति, मन्त्रब्राह्मणसंहितासूत्रशास्त्रपुराणेतिहासकाव्यकथानकादिसन्ततिस्वरूपैरपि विविधविद्याप्रपोषका वर्तन्ते, तदर्थपर्याप्ता विद्यालया धर्मालयाविशिष्टविज्ञानालयाः सत्संगालया विविधमूर्तयः सम्प्रदाया अपि चिरन्तनाः सन्ति सम्पद्यन्ते सम्पत्स्यन्ते चाऽपि, तत्र तत्र प्रथमाऽवस्थानां सदाचारशिक्षणं द्वितीयाऽवस्थानां समभ्युदयार्थकप्रोत्साहनं तृतीयाऽवस्थानां प्रतिलोमवृत्तिकाऽभ्यसनं चतुर्थाऽवस्थानां ब्रह्मसंयमवर्तनं च देशसमयसमाजसत्ताद्यनुकूलं वैदिकाऽभिप्रायाऽनुस्यूतं पुमर्थसंभृतं प्रतिद्वन्द्वपराभूतं प्रसृतं प्रवर्तेतेत्यस्माकं सर्वथाऽभीष्टतमं भवति, एतत्त्वस्त्येव तथाप्यनुवादितं मया भवद्भ्यः श्रावितं त्वायताविति कर्तव्यताकत्वार्थम्, भवतामभिनन्दनपात्रेण दृष्टान्तविधेन मयाऽपि भवद्भिरिवाऽभ्यर्थ्यते भारते सौराष्ट्रे कुंकुमवाप्यां विद्यालयादौ वैदिकादिसद्विद्यावन्तो वीरपुरुषाश्चमत्कारिसत्यश्च जायन्ताम्, सत्कर्मोपासनाज्ञानवत्यः प्रजाः प्रजायन्ताम्, धर्मज्ञानवैराग्यभक्तिप्रपत्तिमत्यश्च जनता जायन्ताम्, धर्मार्थकामभक्तिमोक्षाऽनुवर्तिन्यः सन्ततयो जायन्ताम्, आत्मवत् सर्वभुतहितकारिणो वंशाऽनुवंशाः प्रवर्तन्ताम्, गृहिणस्त्यागिसदृशास्त्यागिनो मुक्तसदृशाश्च प्रभवन्ताम्, समायोजितोऽयं समाजो ब्रह्मदृक् प्रजायताम्, दानदृक् साक्षिदृक् ब्रह्माऽनुगृहीतः सन् मोक्षदृक् च सम्पद्यताम्, यच्चाऽपेक्षितं पूर्वं पूर्वं साधनं द्वारं च तत्सर्वमपि सुनिष्पद्यताम्, कर्मकौशल्यं नैष्कर्म्यकौशल्यं च जायताम्, इत्यभिलाषाभिः सह भवतामभिनन्दनानि सभाजयामि । किञ्च—

विशिष्टसञ्जुष्टगौरवशालिन्यां भूमौ प्रतिसमयं महाविद्वांसो दार्शनिका विज्ञानिनः कलाविदो महाप्रतिभाशालिनः कविवरा लेखका अध्यापकास्तापसा योगिनश्च प्रादुरासन् प्रादुर्भवन्ति प्रादुर्भविष्यन्ति च, एतेषां हृदयानि शास्त्रस्वरूपाणि सर्वानाश्रितान् स्वाभिनन्दनैराप्लावयन्ति, अन्यदेशीयहृत्सु स्निग्धतां सद्भावनां समुदारतां भारतीयसममुकीर्तिमत्तां च प्रकटयन्ति, अहिंसादिव्रतवति भारते हिंस्राणामागन्तुकानामपि हृदयान्यहिंसाव्रतानि कुर्वन्ति, उपासनावन्ति सत्यादिधनानि च संरचयन्ति, सत्यप्रतिज्ञातफलवन्ति प्रविधापयन्ति । एवमेव भाविविधापनं भवदभिनन्दनानि यथासमयं सविशेषाऽपेक्षं कुर्वन्तु,—इति प्रार्थये ।

भगवतो भूगोलस्य भारतस्य महागौर्जरस्य च विशालतावत् विराट्सभेयं विशालतां भजते, कुंकुमवापीनगरी स्पष्टाऽपि विश्वेषां विदुषां विशालया विराट्सभयाऽद्य विशालतां भजते, विशालानामभिनन्दनानां विशालवर्षणेनाऽऽप्लावितोऽहम् अविशालोऽपि श्रीकृष्णवल्लभाचार्योऽहं महाविशालीकृतोऽतीव प्रहृष्यामि, यत्परिष्कृतमानवानां कर्तव्यमावश्यकं तत्तु क्रियते श्रीमद्भिः, तथापि कर्तव्येऽप्युदासीनानां

तदौदासीन्यं यथा न पराभावयेत् तान् , तथा प्रमार्ग्याऽस्माभिर्विधापनीयमिदानीम् , मनोऽहं कालबलाद्धर्मं संयोगबलादात्मसाक्षात्कारे नैराश्यबलात् संस्कृतविद्योपार्जने निष्फलतातर्कात् भक्तिकरणेऽविश्वासबलात् परोपकारेचेत्येवमौदासीन्यं बहुत्र लोकानां जायते वर्तते च, किन्तु धार्मिकसत्पुरुषबलाद् धर्मे, संयमाद्यभ्यासबलादात्मसाक्षात्कारे, निर्वाहाऽऽधिक्यलब्ध्याशाबलाद् वेदादिविद्योपार्जने, सफलनिदर्शनाऽनुसन्धानाद् भक्तिकरणे, पुण्यविश्वासबलात् परोपकारे च प्रावण्यं जायते, अस्माभिरेष्टव्यमर्थितमेवेश्वराग्रे यत् सत्फलार्थसाधनानि स्थापितेषु धर्मालयेषु संयमशालासु विद्यालयेषु भक्त्याश्रमेषु विश्वासिसत्संगेषु च सानुकूलान्यस्मदभिनन्दनानि भवन्तु, व्यापाराश्च नस्तत्र तत्र सदिष्टफला भवन्तु, उपकार्यजनसंघाश्चाऽस्मत्कृतसाहाय्यलाभवन्तश्च भवन्तु, देशा धर्माढ्या भवन्तु, अभ्युदयनिःश्रेयसाभिमुखाश्च भवन्तु ।

यस्य धनाऽर्जनेऽक्षमत्वं तत्र धनगृध्नूनां निवर्तना, संस्कृताऽऽध्यात्मिकविद्यासु तथात्वमाधुनिकानां राजसरंगिनां तु सुतरां पश्चपादत्वम् , तन्निरासाय संस्कृतभाषासु सर्वा अपि प्रणाल्यः कल्पनीयाः, व्योमभूमिसागरयानानां व्योमयन्त्रतन्त्रीयवाग्व्यवहाराणां राज्यदण्डन्यायालयसैन्यादिनीतिनियमानां शारीरौषधादिविज्ञभिषग्वराणां रासायनादिभौतिकविकारविकासानां महोद्यमानां सौधभवनमहाप्रासादसेवादिनिर्माणानां राजकीययावत्सत्ताकसमाजानां पत्रादिव्यवहाराणां मानवाश्रमाणां कलाकर्तव्योद्यमानामरण्योद्याननदीपर्वतादिसंसर्गिव्ययाऽऽयप्रभृतीनां च शिक्षणानामन्यभाषाभाषिलभ्यसमानतायाः संस्कृते परिवर्तनात् नियोगात् , साहित्यसर्जनाच्च भवत्युपार्जने साम्यमाधिक्यं चेति गृध्नूनां गृध्नानिवृत्त्या समभावनयाऽऽध्यात्मिकाऽभिरुच्या च संस्कृते पश्चपादत्वं निवर्तनमौदासीन्यं त्यागोऽनास्था चेति सर्वं विलीनं स्यात् , श्रीमतामभिनन्दनानि पुण्यानि पुण्यकराणि पुण्यविकासप्रदानि पुण्यधनार्जनसम्पादकानि संस्कृतयौवनपोषकाणि च भवन्त्वित्यर्थये ।

विद्यालयाः सर्वत्र संस्कृतेतरभाषोद्घोषव्याप्ताः, ते संस्कृतभाषोद्घोषव्याप्ताः कर्तव्याः, गोलमेजीयसभायाः कर्तव्यमिदं सबीजं स्याच्चेत् वर्षशतेन तन्मतं व्याप्तं भवेत् , विपुलविस्तारोऽन्यभाषावत् भवेत् , सर्वमपि व्यावहारिकं संस्कृतभाषाव्याप्तं त्वीश्वरकृतं स्यात् तदा भवेत् , अस्माभिस्त्वभिनन्दनीयमाशास्यं च प्रार्थनीयं चापि तथा भवत्विति । आदिपरम्पराभ्यो विज्ञायते यत् संस्कृतं व्यावहारिकं सदपि तज्ज्ञैस्तदा न संस्कृतत्वेन निभालितम् , अपभ्रंशमपि स्वीकृतम् , ततो भाषापरम्परा विच्छिन्ना, अनुकरणमिश्रानुकरणभ्रंशानुकरणनूतनकल्पनानुकरणाऽऽरण्यकसागरोपवेलाद्वीपादिकल्पितवाण्यनुकरणानि प्रवृद्धानि, इदानीं यावत् तथैव दृश्यन्ते, युगान्तरे वा संस्कृतमयं च जगद् भवेदपि, असंभवस्तु नास्त्येव, अस्मदभिनन्दनानि संभवे पुष्टिं कुर्वन्तु, वैज्ञानिकतत्त्वग्रथनं संस्कृते भावयन्तु, वर्तमानस्मृद्धजीवननिष्ठामूलानि संस्कृते दृढीकृतानि सम्पादयन्तु, साक्षात्सुखाऽध्यवसायिसर्वविधविधेयानि संकलयन्तु, आध्यात्मिकमिव भौतिकं लौकिकं व्यावहारिकं सर्वमपि संस्कृते आत्यन्तिकविकासमाप्तं भावयन्तु, राज्यानुकूलं धर्मस्वरूपं वर्धयन्तु ॥ धर्मोऽपि युगानुरूपं निजं युवस्वरूपं समासादयतु, अद्य स्वतन्त्रभारते संस्कृतस्य सर्वत्र वर्तनम् उचितस्थानदानं शिक्षाप्रबन्धरचनं सर्वथा समादरणं चेति भावयन्त्वभिनन्दनानि, एतेन प्राचीनाऽर्वाचीनयावद्विधस्मृद्धश्रियो विपुलतमाः प्राप्ताः स्युः, विश्वबन्धुत्वं भुजबलोपार्जितनिष्ठत्वं सुखशान्त्यादिमग्नत्वं पुरुषार्थसाफल्यकारित्वं चाऽभिनन्दनानि प्रकाशयन्तु ॥ सृष्टिप्रवाहे संस्कृतभाषया भारतादिदेशेषु महत्त्वपूर्णानि कार्याणि परम्परामूलकानि रक्षितानि कारितानि कार्यन्ते कारयिष्यन्ते चेति, तत् सर्वथा पोषणं प्राप्नुवत् निर्वर्त्यताम् , तदानीं तदानीमस्मत्पूर्वजैः प्रदत्ताः सन्देशा आयतावपि सत्याः शाश्वताश्चाऽधुना प्रवर्तन्ताम् । अत्र विज्ञानयुगे सुखसाधनबाहुल्येऽप्यान्तरविक्षेपाऽसंख्यत्वेऽनर्थावहसंघर्षप्रतीकारोपायाऽन्वेषणपूर्वकाऽऽत्मीयसुखकारकोद्यमोद्घाटकानि प्रमार्ग्यन्ताम् । दुःखनिदानं तृष्णा चोत्सार्यताम् । ऋग्यजुःसामाऽथर्वाणः पुराणेतिहाससंहिताः सूत्रभाष्यविवरणानि पित्र्यदैवभौतिकज्ञानानि देवर्षिब्रह्मर्षिमानवनागन-

क्षत्रादिविद्याश्च यन्त्रमन्त्रतन्त्राऽऽन्त्रविद्या अपि चाऽऽत्मविद्याफलरूपाः परतत्त्वप्रतिपत्तिपरायणाः शाश्वत-शान्तिप्रदा एभिरभिनन्दनैः सम्परिवर्त्यन्ताम्, विश्वसंघर्षमूलात्मकदोषा निवर्त्यन्ताम्, आत्मप्रत्ययेशो-पासनसम्यक्प्रत्ययस्नेहभक्त्याद्याः प्राविर्भाव्यन्ताम्, सत्संगलभ्यपरानिर्वृतिः प्रकृष्टतमा सम्पद्यताम्।

एकं विशिष्टात्मदर्शनं सर्वाऽनर्थनिवर्तकं भवदाशीर्भिः सम्यक्प्रवर्त्यताम्, वसुधाकुटुम्बमन्तृ-महोदारचरिताः स्नातका एतद्विद्यालयेषु प्राविर्भाव्यन्ताम्, भारतीयविद्याकुलपतिभिर्भारते बहवो विद्यालयाः संस्कृतवाङ्मयविकासार्थमुद्घाटिताः सन्ति, तत्र तत्र महत्त्वपूर्णानि संस्कृताऽपेक्षिताऽनुष्ठानाऽ-भ्यासा जायन्ते, शिक्षाप्रशिक्षाः प्रदीयन्ते, पुरातनाऽनुष्ठिताऽनुसन्धानानि प्रवर्त्यन्ते, वाङ्मयविद्यालयोऽत्र कुंकुमवापीनगर्यामपि प्रोद्घाटितो भवति सचाऽपेक्षितप्रपूर्णाऽभ्याससम्पत्तिविलसितो भविता, लेखनप्रवचन-पठनापाठनाद्या अपि छात्रादिषु प्रवृत्ता भवितारः, सर्वविद्यानामत्र प्रबन्धे सति लौकिकपारलौकिकोभय-फलप्रदः संविज्ञानयोगोऽपि भविता, कुंकुमवाप्यां सौराष्ट्रनगरीयो महान् विश्वविद्यालयो देशस्यकृते भूयसे मंगलाय मंगलफलाय च भवत्विति प्रार्थये परमेश्वरम्।

जगदिदं प्रायो निन्दकपरिपूरितम्, दिव्यव्यक्तिप्रशंसामप्यसहमानं विपरीतगतिकाऽऽचारं सुकटि-बद्धं सुलेखिनीबद्धं सुमासिकादिपत्रबद्धं सुपण्डितम्मन्यत्वबद्धं क्षुद्रमण्डूकीवत् बहुबलकृत् हस्तिनं प्रति ग्राम-सिंहवत् गरुडं प्रति काकवत् चेष्टायमानं स्वविज्ञत्वप्रशंसकम् अन्याऽनभिज्ञत्वाऽऽवेदकं समानानुपूर्वीकं कलावत्र दृश्यते प्रायः, तथाविधजनसन्तोषाय न स्यात् अभिनन्दनसमारोहः, तथाविधजनास्तु प्रवृद्धज्वलना एव स्थास्यन्ति, प्रसन्नहृदयास्तु वर्तमानानां योग्यानां भविष्यतां च कृते परमोपकारकराण्यभिनन्दनानीति प्रमीय प्रहृष्यन्ति, अभिनन्द्यस्याऽभ्युदयवत् अभिनन्दनप्रदातॄणामप्यभ्युदयो भगवदग्रेऽनिवारितः सम्पद्यते सम्पत्स्येत च, अभिनन्दनीयव्यक्तौ स्थितो भगवान् फलप्रदाताऽभिनन्दयितॄणामपि समाभ्युदयिकीं स्थितिं प्रवर्धयतीति प्रवर्धयिष्यतीति च। अभिनन्दनप्रदातारः सुरभारत्यनुग्रहवन्तः सुखिनो दिगन्तकीर्तय आत्म-श्रेयोमग्नाश्च भवन्त्विति भगवच्चरणयोः प्रार्थये।

उत्कर्षसिद्ध्यर्थमभ्यासः सर्वेषामानन्दाय जायते, अमत्सरोत्कर्षसिद्धिः स्पर्धयाऽपि भवति, स्वाऽभ्युदययत्ने स्पर्धा गुणः, अनयारीत्या जीवने उत्कर्षमापन्नस्य कृतेऽभिनन्दनानि वास्तविकाऽऽनन्दप्रदानि भवन्ति, आराधनाऽऽवरकभवने भगवदाराधनाऽपि अभिनन्दनप्रशस्तिगोचरा स्यादिति सतीनां विद्यानां पावनमंगलमाराधनारूपं विद्यालये प्रजायताम्, हवनादिमण्डपोऽपि प्रजायताम्, शारीरस्वास्थ्यार्थं क्रीडाव्यायामा योगासनादीनि चापि तान्यभिनन्दनानि विद्यालयक्षेत्रे स्मारयन्ति।

अथापि पण्डितेभ्यो विद्या अधीत्य पाण्डित्यमाप्तोऽपि नाऽहं वास्तविकं पाण्डित्यं मन्ये, मत्कृत-ग्रन्थानां तत्तत्प्रस्थानभेदभिन्नानां तत्तन्मतीयविषयविवेचकानां क्षतिरहितानां पर्यालोचकैः पण्डितैरद्याऽ-भिनन्दनानि दत्वा मम पाण्डित्यं प्रकाश्यते तद्बलेनाऽहमद्य तथाविधं मां मन्यमानो वर्ते, तृप्तिं विन्दामि, श्रीरामकृष्णपरमहंसशताऽब्दीयसम्मेलनमहोत्सवे श्रीराजकूटमहानगरे संस्कृतव्याख्यानोत्तरं 'काशीस्थोऽयं पण्डित' इति जनैः सम्बोधितोऽहमपि तथाविधं मां संविदितवान्, स एवेदानीमहं प्रकाण्डपण्डितानामभि-नन्दनान्यासाद्य तत्कोटिं प्रविश्य पूर्णकामः सन् भगवद्भक्तौ रतिं लभमानः साधुरेव भवामि प्रयाणे च भगवत्पदसेवार्थमभिनन्दनं प्रयाचे। विद्वत्कृपाकणभाग्

पण्डित-श्रीकृष्णवल्लभाचार्यस्वामिनारायणः, महामहोपाध्यायः,

वैष्णवविद्वत्सार्वभौम-दार्शनिकपञ्चानन-षड्दर्शनाचार्य-नव्यन्यायाचार्य-सांख्ययोगवेदान्तमीमांसातीर्थ-काव्यकुशलः, साहित्यमनीषी, दार्शनिकमार्तण्ड, तार्किकवाचस्पति, भारतभूषण, ENG. M. A. Ph. D., D. Phil, D. Litt., वाराणसी, वर्तमाने जीर्णदुर्गनिवासी, श्रीस्वामिनारायण-मन्दिरम्, भण्डारोपरिकक्षा, सौराष्ट्रः, महागुजरात, भारत॥

श्रीकृष्णश्वेतायन व्यास में श्रीकृष्णद्वैपायन-व्यास की सरस्वामणी

मनुभाई शाह (M. A., Ph. D., D. Phil)

सौराष्ट्र, कुंकावाव, महती.

१—पाँच हजार वर्ष पहले श्रीकृष्णद्वैपायन व्यास जी हुए, उन्होंने वेद विभाग किया, उपनिषदों के साररूप ब्रह्मसूत्र रचे, श्रीकृष्णश्वेतायन व्यास ने वर्तमान युग में वेदों के साररूप संस्कृत में छ हजार पृष्ठों में ब्रह्मरसायनभाष्य सवा दो हजार सूत्र सहित रचा, जो छप रहा है।

२—श्रीकृष्णद्वैपायन व्यास जी ने महाभारत व अठारह पुराण रचे, श्रीकृष्णश्वेतायन व्यास जी ने वर्तमान समय में एक लाख छब्बीस हजार श्लोकों में बड़ा भारी ब्रह्मलोक ईश्वरलोक देवर्षिपितृमानवादि लोकों का तथा सभी युगों की सृष्टियों का महासागर समान 'श्रीलक्ष्मीनाराणसंहिता' नामक महाग्रन्थ—बड़ा भारी इतिहास संस्कृत में रचा, जिसमें और भी अवतार चरित्र ज्योतिषचक्र, देवालयस्वरूप, प्रतिष्ठा-विधि, यज्ञों के स्वरूप, व्रतों के विधान, तीर्थों के विधान सृष्टि के क्रम नीतियाँ गीताएँ पातिव्रत्य चमत्कार योग विज्ञान समाधियाँ आदि के अंगी भगवद्भक्ति का विस्तार सुमूर्तरूप में साक्षादिव विलसित हैं। और भी संस्कृत आदि ५५ ग्रन्थ लिखे हैं।

३—श्रीकृष्णद्वैपायन व्यास जी ने पातञ्जल योग सूत्रों पर योगभाष्य लिखा है, श्रीकृष्णश्वेतायन व्यास जी ने वर्तमान समय में श्रीकृष्णवल्लभाचार्य-भाष्य लिखे हैं।

४—श्रीकृष्णद्वैपायन व्यास जी ने कई शिष्यों को विभिन्न विषय पढ़ाये थे, श्रीकृष्णश्वेतायन व्यास जी ने काशी जी में तथा अन्य स्थानों में भी कई शिष्यों को पुराण न्याय वैशेषिक वेदान्त मीमांसा सांख्य योग साहित्य अलंकार आदि शास्त्र पढ़ाये हैं, वर्तमान समय में कई विद्वान् श्रीकृष्णश्वेतायन जी के शिष्य अध्यापक हैं प्रवक्ताएँ हैं, कथाकार भी हैं, लाखों शिष्य प्रथम द्वितीय तृतीय चतुर्थ आश्रमी वैष्णव मन्त्र कण्ठीधर व स्नान सन्ध्या गायत्री नाम जप होम स्वाध्याय पूजन धर्म कर्म आदि व्रत में विद्यमान हैं, वे श्रीकृष्णश्वेतायन व्यास लिखित ग्रन्थों का पाठ स्तोत्र पाठ आदि करते हैं।

५—श्रीकृष्णद्वैपायन व्यास जी श्रीकाशी जी में गंगाजी के दूसरे तीर पर बदरीवन में विराजते थे, वर्तमान समय में भी वहाँ विद्वान् लोग दर्शनार्थ जाते हैं, चौमासे के समय में वह स्थान गंगाजी की बाढ़ से व्याप्त हो जाता है, श्रीकृष्णश्वेतायन व्यास जी गंगाजी के इस तीर पर श्री नागेश्वर महादेव जी के तीर्थरूप श्री नागेश्वर मठ में १५ पंद्रह वर्ष तक विराजमान रहे हैं, बाद में सौराष्ट्र देश में रैवताचल पर्वत की पश्चिम उपत्यका भूमि में बसा हुआ जूनागढ़ नगर के श्रीस्वामिनारायण मन्दिर में बसते हैं।

६—श्रीकृष्णद्वैपायन व्यास जी परमभागवत वैष्णव थे, भक्ति करते कराते थे, युधिष्ठिर आदि के भी उपदेष्टा थे, श्रीकृष्णश्वेतायन व्यास जी वर्तमान समय में समग्र भारत में जाहेर प्रवचनों द्वारा संस्कृत हिन्दी गूजराती आदि भाषाओं में उपदेश दे रहे हैं, १०८ से विशेष पारायण करके कई मुमुक्षुओं को वैष्णव बनाये, बनाते हैं, स्वयं सदा ग्रन्थ लेखन व भक्ति में निमग्न रहते हैं।

७— श्रीकृष्णद्वैपायन व्यास जी के पाँच हजार वर्ष जाने के बाद वर्तमान में बड़े भारी जीवन पर्यन्त लेखक महाकवि तत्त्वविज्ञानी सभी विद्याओं में तथा आध्यात्मिक चमत्कारों में प्रगल्भ यह श्रीकृष्ण-श्वेतायन व्यास जी हुए हैं, पूर्व व्यास जी की तरह वर्तमान व्यास जी सभी देशों में कुंकावाव-प्रतिष्ठित मूर्ति में तथा शास्त्र विद्याओं में तथा शिष्य हृदय में पूजाते हैं, इनका जन्मजयन्ती-महोत्सव धामधूम से भक्तसमुदायों में हो रहा है (सम्वत् १९६१ कार्तिक कृष्ण अष्टमी हिन्दी, आश्विन कृष्ण अष्टमी सौराष्ट्रीय दिन, प्रातः सूर्योदय पूर्व प्राकट्य समय है)।

८—श्रीकृष्णद्वैपायन व्यासजी की तरह श्रीकृष्णश्वेतायन व्यास जी की लेखिनी सतत रात्रिदिवस भारतीय फिलोसोफियों पर चलती ही रही हैं।

९—श्रीगौतममुनि ने न्यायशास्त्र तथा श्रीकाणादमुनि ने वैशेषिक शास्त्र रचा, इन शास्त्रों पर वात्स्यायनादि भाष्य वार्तिक तात्पर्यटीकाएँ, ऋषि महर्षि विद्वानों ने रची हैं, इनके अलावा स्वतन्त्र न्याय-लीलावती तत्त्वचिन्तामणि न्यायसिद्धान्त मुक्तावली न्यायकुसुमाञ्जलि आदि विशालकाय अति गहन ग्रन्थ भी बड़े बड़े विद्वान श्रीवल्लभचार्य मैथिल, श्रोगंगेशोपाध्याय श्रोविश्वनाथ न्याय पंचानन श्रीउदयनाचार्य आदिक ने लिखे हैं, उन पर दीधिति माथुरी प्रकाश गादाधरी जागदीशी दिनकरी प्रभा किरणावली आदि आदि विशाल गहन टीकाएँ भो लिखी गई हैं, ये सर्वत्र विभाग में परीक्षा में हैं, इनके क्रोडपत्र भी विद्वानों ने लिखे हैं, इन सभो प्राचीन-नवीन-न्याय वैशेषिक शास्त्रों में आचार्य तक के अभ्यास में काशी क्विन्स कालेज में फर्स्ट डिविजन फर्स्ट नम्बर पास करके वर्तमान-व्यास जो श्रोकृष्णश्वेतायन जो ने कई विद्यार्थिओं को पढ़ाये हैं, तथैव पढ़ाने में उपयोगो किरणावली किरण आदि टीकायें तथा मूल महाग्रन्थ तत्त्वप्रभावली, प्रमात्वविमर्श, ख्यातिविमर्श, जातिविमर्श प्रामाण्यप्रमाण रचना, आदि आदि न्यापशास्त्र में रचे हैं, जो परीक्षोपयोगी विद्यार्थी-समुपयोगी पंडितोपयोगो अध्यापन अध्ययन में उपकारक सभी संस्कृत विभागों में उपयुक्त प्रशस्त बन गये हैं।। इन वर्तमान व्यासजी की किरणावली नामक सभी शास्त्रों की टीकाएँ मुक्त कण्ठ से पडितों द्वारा सुप्रशंसापात्र हो रही हैं।

१०—कपिल जी की तरह सांख्यशास्त्र पर विशेषसांख्य विचार के भाष्य विज्ञान भिक्षुक की तरह तत्त्व चिन्तनसंभृत सांख्यकारिकाओं का स्वभाष्य तथा किरणावली तथा पतञ्जलि के योगदर्शन पर स्वभाष्य तथा भोजवृत्ति पर किरण तथा माठरभाष्य पर भी किरण तथा मीमांसा के अर्थसग्रह पर विशाल किरणावली तथा अंगत्वादि परिष्कार तथा यज्ञोय प्रकरणों के परिचय तथा सभी पदार्थों के साकारत्व विमर्श भी वर्तमान व्यासजो ने खूब खूब लिखे हैं, जो विद्याध्ययन के केन्द्रों में प्रचलित हैं, प्रसिद्ध भी हैं।

११—श्रीकृष्णद्वैपायन व्यास जी के वेदान्त दर्शन की तरह श्रीकृष्णश्वेतायन व्यास जी ने श्रीस्वामिनारायण दर्शन शास्त्र ससूत्र सकल्याणीवृत्तिक सातवाँ दर्शन शास्त्र रचा है इसमें सभी दर्शन तत्त्वो के पूर्वोत्तरपक्ष सिद्धान्तादि विवेचित किये हैं।।

१२—श्रीरामानुज सम्प्रदाय का ग्रन्थ यतीन्द्र दीपिका समान श्रीस्वामिनारायणवेदान्तसार तथा विशिष्टाद्वैतेऽपि विशिष्टब्रह्माऽद्वैतत्वग्रन्थ तथा तत्त्वमुक्ताकलाप के पर किरणावली विशाल टीका तथा तत्त्वमुक्ताकलाप के कोटिका ग्रन्थ तत्त्वप्रभावली विशिष्ट न्यायशास्त्र रूप में रचा गया है, श्रीकृष्णश्वेतायन व्यास का दार्शनिक शाब्दिक आनुमानिक वैज्ञानिक बड़े बड़े उपयोगो वाद इन ग्रन्थों में दिये हैं, अतिगहन फिलोसोफियाँ इन ग्रन्थों में हैं।

१३—श्रीरामानुजाचार्य श्रीमध्वाचार्य श्रीवल्लभाचार्य श्रीनिम्बार्काचार्य श्रीस्वामिनारायणाचार्य आदि आदि वैष्णव आचार्यों ने तथा अवतारों ने अपनी कृतियों में परब्रह्म पुरुषोत्तम की दिव्य मूर्ति ब्रह्मलोक में है वहीं भूमि पर श्रीकृष्ण श्रीराम श्रीकपिल श्रीदत्तात्रेय श्रीहरिकृष्ण श्रीसनकादिक आदि आदि आये हैं, यहाँ है वही वहाँ है, वहाँ है वही यहाँ है, वहाँ यहाँ एक है दिव्य है पारिमाण्डल्य दर्शन दर्शन करनेवाले की दृष्टि से विभिन्न होते हैं, यह 'सत्संगभाष्य-श्रीहरिस्वरूपनिर्णय' पर बड़ी युक्तियों तथा विभिन्न विप्रतिपत्तियों से सिद्ध किया है।

१४—सभी दर्शनों के लक्ष्य में भ्रान्ति स्थल में गहन विचार किया है, वह ख्यातिवाद एक नयी पद्धति का ग्रन्थ है, इन पर, ३३—ख्यातियाँ का एक नवीनतर ग्रन्थ श्रीकृष्णश्वेतायन व्यासजी ने बनाया है, जो नैयायिक वेदान्तीओं का मुख्य विषय है।

१५—और और भी साम्प्रदायिक कई ग्रन्थ पद्यों में तथा गद्य में भी श्रीकृष्णश्वेतायनव्यासने बनाये हैं जो छपे भी हैं।

१६—शब्द दो या अधिक अक्षरों का पद बोलते समय दूसरे तीसरे अक्षर बोलने की क्षण में पहला दूसरा अक्षर गायब हो जाता है, उच्चारण भी भिन्न स्थलों से होता है, अतः कोई भी शब्द एक क्षण में एक अधिकरण में एक स्वरूपें बन सकता ही नहीं, इस पूर्वपक्ष पर—

एक ही स्वरूप शब्द होने की सिद्धि विषयक श्रीकृष्णश्वेतायन व्यासजीने बहुत अच्छा विचार किया है—'भरत' नामक पद में भ, र, त, तीन क्षण में एक एक लय प्राप्त करता है, लेकिन, ब्रह्म एक है, विमर्श विज्ञान एक नित्यज्ञान है, वही बिन्दु एक है, वही नाद एक है, वही ध्वनि एक है व्यापक है नित्य है, उसकी सूक्ष्म स्थूल मन्द मध्यम उत्कट अवस्थाएँ स्थान, उत्पादक, प्रयोजक, प्रेरक, वेग, टक्कर लगना, निमित्त आदि पृथक् पदार्थ स्थूल के योग से वही कण्ठ प्राण का ध्वनि दो ओष्ठ के प्राण के स्फोट से भ, वही मूर्धा में योग से र, वही दन्तों के योग में त, श्रवण भेद की अवस्था सहित ग्रहण होता है, शब्द वही कंठ में ध्वनि से असुना गया, वही भ, र, त अवस्थाओं में सुना जाता है, इस प्रकार एक ही ध्वनि के बावन या इनसे भी अधिक अवस्थाओं की गिनती से व्यवहार में भिन्नविभिन्न शब्दशास्त्र शब्द व्यूह लगाया गया होने से समाधान एक ब्रह्मवादरूप एक शब्दवाद में समन्वित सुयुक्तिक है। 'शब्द ब्रह्मणि निष्णातः परं ब्रह्माऽधिगच्छति' यह उमदा विचार श्रीकृष्णश्वेतायनव्यासजीने कहीं कहीं किया है। यह भारतीय विद्वान् श्रीकृष्णश्वेतायनव्यासावतार जगत् को पहले दी हुई विद्या को ताजा करने के लिये ही प्रकटे हैं, एक मानव पढ़ कर इतना विशाल कार्य नहीं कर सकता, जितना को श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी स्वरूप में श्रीकृष्णश्वेतायनव्यासजी ने किया है। अतः भगवान् है।

निमन्त्रणपत्रिका

स्वामीश्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी वेष्णवविद्वत्सार्वभौम, महामहोपाध्याय
वैष्णवो में और विद्वानों में सार्वभौम

बडी-कुंकावाव-नगरी की भूमिपर देवानीक कुटुम्ब में पिताश्री गोपालकृष्ण के घर माताश्री कम्भरालक्ष्मी की कुक्षि में संवत् १९६१ के आश्विन कृष्ण अष्टमी शनिवार ता० २१।८।१९०५ के सबेरे सूर्योदय पहले जन्म प्राप्त करने वाले भगवान् श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजीने प्राथमिक छ गुजराती शिक्षण प्राप्त करके श्रीस्वामिनारायण सम्प्रदाय में द्वादश के वर्ष में दीक्षा लेके काशीजी में अभ्यास द्वारा सर्व दर्शन शास्त्र पुराणकाव्य इतिहास में पूर्णप्रज्ञता प्राप्त किया, उक्त पण्डितवर्य श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी की श्वेत संगमरमरप्रतिमा का अनावरणविधि संवत् २०३१ के आश्विनकृष्णाऽष्टमी ता० २८।१०।७५ मंगलवार के दिन प्रातः निर्धारित किया है। तथैव 'स्वामीश्रीकृष्णवल्लभाचार्यशिक्षणसंस्कारभवन' का खातमुहूर्त भी रखा है' उक्तविधि में पधारने को भावभरा आमन्त्रण है।

हिरजी वशराम ठुमर
गोरधन नारण ठुमर
गोविंद वेला वघासिया
काना हीरा काथरोटिया
देवशी धरमशी डोबरिया
जेराम राजा डोबरिया
हरजी गोविंद डोबरिया
नाथालाल जीवराज देवानी
पोपट गोपाल देवानी
विरजी कानजी देवानी
देवजी वशराम देवानी
रणछोड भोवान भेंसाणिया
नाथा भूरा गेवरीया
शंभु नारण मूलाणी
कुरजी नारण सावलिया
राम मेघजी बोरड
करशन सवजी दुधात
काबा कानजी आसोंदरिया
जीवा राजा रांक

वालजी मूलजी बाबरिया
बचूभाई भूरा देशाई
जीवराज हीरजी डोबरिया
नानजी कानजी भगत
भीमजी भगवान् देवाणी
आणंद भगवान् देवाणी
पोपट गोपाल देवाणी
लक्ष्मण मेंघजी पाघडाल
माधा प्रेमजी भुवा
लालजी गोविन्द गेवरिया
वल्लभ मूलजी दूधात
शंभु दुदा शेखडा
लवा कुरजी दूधात
मेघजी जेठा डोबरिया
छोटालाल माधवजी
बावालाल वशरामभाई
भगवानजी शामलाभाई
केशवलाल देसाभाई
हिम्मतलाल कानजी सोनी

भूपतलाल भिखालाल
प्रभुदास परसोत्तम पट्टनी
जीवराज भूरा बाबरिया
हीरजी करमशी बाबरिया
मणिलाल लक्ष्मण सागलाणी
जीवराज डुंगर लाखाणी
काला खीमा देशाई
गोविन्द डाया चोवटिया
मोहन हरजी कानाणी
कुरजी नथु वघासिया
भगवान् नथु वघासिया
नारण गोकल कुंजडिया
बचूभाई भोवान आंसोदरिया
कानजी भगवान् भुवा
रणछोड नथु भुवा
मोहन लाला चोबटिया
रामजी गोविन्द माथुकिया
नानजी गीगा चोवटिया
माधा जीवराज आंसोदरिया
जीवराज मावजी ठुमर
ठाकरशी मावजी ठुमर
मनसुखलाल नरभेराम वडोदरिया
अमृतलाल हरिलाल कामदार
सवजी गोविंद माथुकिया
खीमजी दुर्लभजी खंभोलिया
कानजी करशन टाढाणी
राम मावजी टाढाणी
गोवा पुना डोबरिया
जीवराज कल्याण माथुकिया
रामजीभाई परसोत्तमभाई
मनसुखलाल केशवलाल
जीवराज ठाकरशी गेवरिया
दादभाई भाणभाई वाला
धनजी हीरजीं बाबरिया
लक्ष्मण मूलजी देसाई
भवान् गोविन्द सोरठिया
शान्तिलाल बी पटनी
हरिभाई बेचर कापडिया
टपुभाई लक्ष्मण आंसोदरिया
नारायण पिताम्बर परमार
सन्तोकबेन शान्तिलाल पटनी
संतोकबेन हीरजीभाई डोबरिया
शान्ताबेन परसोत्तम पटनी
सरलाबेन पोपटलाल गेवरिया
परसोत्तम नानजी
जसाभाई राणिंगभाई
ननकुभाई राणिंगभाई
सुरगभाई उनडभाई
देसा वालेरा डव
काथड मामैया हुबल
देवराज रणछोड साकरिया
शामजी जसा सुवाल
विठल रणछोड मीस्त्री
हिमतलाल नारायणदास
बालाभाई हरिभाई
परसोत्तम देवराज
नरसिंह जीवराज आंबलिया
चन्दुलाल राघवर्जी भाई
देवचंदभाई वल्लभजी
मूलजीभाई वल्लभजीभाई
चांदभाई आदमजीभाई
शीवपरी लक्ष्मणपरी
माणेकलाल रामप्रसाद
छगनलाल मोहनलाल लाखाणी
टपु गोपाल मांडणका
इत्यादि नगरी समस्त

तथा

श्रीहरिशरणागतिमण्डल—
मुम्बई, पुना, नासिक, सुरत,
जामवंथली, धोराजी जूनागढ

तथा

हरिलाल जीवराज सोरठिया यज्ञभागी,

शिवलाल भगवानजी
शान्तिलाल ज० महेता
कान्तिलाल छगनलाल

रतिलाल वल्लभजीभाई स्वागतमन्त्री
महोत्सव समिति कुंकावाव

गिरधरलाल रामजी दोशी प्रमुख
केलवणी समिति कुंकावाव
लक्ष्मण भगवान् पटेल, प्रमुख
महोत्सव समिति
कुंकावाव नगरी
स्थल सौराष्ट्र में मोटी (महती) कुंकावाव

बगसरा रेल्वे
अमरेली रेल्वे जंक्शन
जेतलसर रेल्वे

श्रीकृष्णवल्लभाचार्यजी के संक्षिप्त सालवार वृत्तान्त

१ जन्म तारीख—२१।८।१९०५
जन्म संवत्—१९६१। आश्विन कृष्णाष्टमी शनिवार, सूर्योदय से पहले

२ देशी स्कूल में प्रवेश जूलाई १९११

३ श्वेत पार्षद दीक्षा नवम्बर १९१७

४ काषाय सन्तदीक्षा नवम्बर १९१९
महागुजरात, वडताल, कार्तिकशुक्ल एकादशी

५ संस्कृत प्राथमिक अभ्यास, जूनागढ, वडताल, बडौदा, संस्कृत कालेज, एप्रिल १९२३ तक।

६ वाराणसी संस्कृत अभ्यास १९२३ से अग्रे बनारस गवर्नमेन्ट संस्कृत कालेज में
न्यायमध्यम परीक्षा में उत्तीर्ण सन् १९२६।
नव्यन्यायशास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण सन् १९३०।
नव्यन्यायाचार्य परीक्षा उत्तीर्ण सन् १९३५।

७ कलकत्ता संस्कृत एसोसिएशन सांख्ययोगतीर्थ परीक्षा उत्तीर्ण सन् जून १९३४
वेदान्ततीर्थ परीक्षा उत्तीर्ण—नवेम्बर १९३५
मीमांसातीर्थ परीक्षा उत्तीर्ण नवेम्बर १९३७

८ काशी षड्दर्शनाचार्य—कोलेज, संवत् १९९०
काशी दार्शनिक पञ्चानन—टीकमाणी कोलेज, संवत् १९८६

९ जूनागढ नवाब राज्य तरफ से महामहोपाध्याय खिताब के लिये राजकोट रेसिडन्ट साहेबको पत्र ता० ७।३।४१

१० वाराणसेय—विद्वत्सन्मान वैष्णवविद्वत्सार्वभौम ता० ९।५।७०

११ जूनागढ मेट्रीक्युलेन, एन्ड बनारस क्विन्स कालेज एम् ए १९३५

१२ ग्वालियर स्टेट भोंसले सरकार से पारितोषिक ता० ५।८।४१

१३ महामहोपाध्याय डिक्लेर्ड १०।१२।७६

१४ भारतभूषण डिक्लेर्ड ६।६।७७

१५ पी० एच० डी० तार्किकवाचस्पतिगान्धिनगर—डि० २०।११।७८

१६ डी० फील, दार्शनिकमार्तण्ड—डि० २४।१२।७७

१७ डी० लिट् साहित्यमनीषी—डि० १३।१०।७७

५५ ग्रन्थलेखन समय

१८ संवत् १९९१ से २०३५ पर्यन्त ग्रन्थनाम
न्यायसिद्धान्तमुक्तावली-किरणावली
तर्कसंग्रहदीपिकानी-किरणावली

न्यायबोधिनीपदकृत्यटिप्पणी
तत्त्वप्रभावली विशिष्टं न्यायशास्त्रम्
सामान्यनिरुक्तिगादाधरीक्रोडपत्रम्
त्रयस्त्रिंशत्ख्यातिविमर्शः
सर्वसाकारत्वविमर्शः
सर्वसाक्षात्कारसूत्राणि
मीमांसा—अर्थसंग्रह—किरणावली
मीमांसा—अंगत्वादिपरिष्कारः
सांख्यकारिकाभाष्यम्
सांख्यतत्त्वकौमुदीकिरणावली
सांख्यकारिका—गौडपादभाष्य-किरणम्
योगसूत्रभाष्यम्
योगसूत्रभोजवृत्तिकिरणम्
वेदान्तः—श्रुतितात्पर्यनिर्णयः
चित्सुखीटिप्पनी
दर्शनतत्त्वसारः
विविधविप्रतिपत्तयः
वेदस्तुतिसरलार्थः
तत्त्वमुक्ताकलापपंचसर—किरणावली
कविकाव्यगौरवम्
हितोपदेश—मित्रलाभकिरणावली
जातिविमर्शः परिवर्तनविचारः
अखिलभूमण्डलीयसाम्प्रदायिकमुक्तिव्यवस्था
श्रीगुणातीतब्रह्मोपनिषत्
भक्तिरससरित्
पंचतत्त्वनिर्णयः
श्वेतायनस्मृति-धर्मशास्त्रम्
जनकसुलभासंवादः
श्रीलक्ष्मीनारायणसंहिता
श्रीगुणातीतोपदेशः
श्रीगोपालानन्दोपदेशः
श्रीस्वामिनारायणदर्शनं कल्याणीवृत्तिसहितम्
श्रीस्वामिनारायणवेदान्तसारः
विशिष्टब्रह्माऽद्वैतत्वविचारः
श्रीहरिवाक्यसुधासिन्धु—ब्रह्मरसायनभाष्यम्
सुधासिन्धुसारसन्दोहनम्

वचनामृतप्रामाण्यहेतवः
सुधासिन्धुसूत्राणि
श्रीहरिस्वरूपनिर्णय–सत्संगभाष्यम्
सत्संगिजीवनसारबोधिनी–पारायणी
शिक्षापत्री–किरणावली
अवताराऽवतारिपुराणादिवचनसंग्रहः
भगवद्भगवतीहनुमदादीनां स्तोत्राणि
वचनामृतहिन्दीभाषान्तरम
शिक्षापत्रीहिन्दीभाषान्तरम्
विद्वदभिनन्दनानि
भक्तों की अभ्यर्थनाएँ
प्रभुजी के वृत्तान्त
प्रत्यक्षमहिमापीयूष
शरणागतिस्पष्टार्थः
प्रकीर्णकमाहात्म्योपदेशादि
स्वीयप्रत्यभिनन्दनम्

इति

ओं श्रीहरिः शरणं मम